* ॐ श्रीपरमात्मने नमः *

गीताप्रेस, गोरखपुर

दुर्गति-नाशिनि दुर्गा जय जय, काल-विनाशिनि काली जय जय।
उमा-रमा-ब्रह्माणी जय जय, राधा-सीता-रुक्मिणि जय जय॥
साम्ब सदाशिव, साम्ब सदाशिव, साम्ब सदाशिव, जय शंकर।
हर हर शंकर दुखहर सुखकर अघ-तम-हर हर हर शंकर॥
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥
जय जय दुर्गा, जय मा तारा। जय गणेश जय शुभ-आगारा॥
जयति शिवाशिव जानकिराम। गौरीशंकर सीताराम॥
जय रघुनन्दन जय सियाराम। व्रज-गोपी-प्रिय राधेश्याम॥
रघुपति राघव राजाराम। पतितपावन सीताराम॥

(संस्करण २,१५,०००)

'गंगा ही परम गति हैं'

गङ्गैव परमो बन्धुर्गङ्गैव परमं सुखम्। गङ्गैव परमं वित्तं गङ्गैव परमा गतिः॥
गङ्गैव परमा मुक्तिर्गङ्गा सारतरेति ये। विभावयन्ति तेषां तु न दूरस्था कदाचन॥
गङ्गातीरं परित्यज्य योऽन्यत्र निवसेन्नरः। करस्थां संत्यजन्मुक्तिः सोऽन्वेषी नरकस्य तु॥
धन्यः स देशो यत्रास्ति गङ्गा त्रैलोक्यपावनी। गङ्गाहीनस्तु यो देशो न प्रदेशः स भण्यते॥
गङ्गातीरे वरं भिक्षा वरं प्राणवियोजनम्। अन्यत्र पृथिवीपत्वं न नरः प्राथयेत्क्वचित्॥
यस्मिन्देशे वसेदेको गङ्गाभक्तिपरो नरः। सोऽपि पुण्यतमो देशस्तत्र दानं महाफलम्॥
श्राद्धं च तर्पणं तत्र पितॄणां तृप्तिकारकम्। अनन्तफलदं ज्ञेयं जपहोमादिकं तथा॥
गङ्गा नाम परं सौख्यं गङ्गा नाम परं तपः। गङ्गेति संस्मरन्नित्यं स्य नास्ति यमाद्भयम्॥

'गङ्गा ही परम बन्धु हैं, गङ्गा ही परम सुख हैं, गङ्गा ही परम धन हैं, गङ्गा ही परम गति हैं, गङ्गा ही परम मुक्ति हैं और गङ्गा ही परम तत्त्व हैं' जो लोग ऐसी भावना करते हैं, गङ्गा उनसे कभी भी दूर नहीं रहती हैं। जो मनुष्य गङ्गाका तट छोड़कर अन्यत्र निवास करता है, वह मानो अपने हाथमें स्थित मुक्तिका त्याग करके नरककी खोज करता है। वह देश धन्य है, जहाँ तीनों लोकोंको पवित्र कर देनेवाली गङ्गा हैं। जो देश गङ्गासे रहित है, उसे देश नहीं कहा जा सकता। गङ्गाके तटपर रहते हुए भिक्षा श्रेष्ठ है तथा वहाँ प्राणान्त हो जाना भी श्रेयस्कर है। मनुष्यको दूसरे स्थानपर राजत्वके लिये कभी भी प्रार्थना नहीं करनी चाहिये। गङ्गाकी भक्तिमें तत्पर रहनेवाला एक भी मनुष्य जिस देशमें रहता है, वह देश भी परम पुण्यशाली है और वहाँपर दिया गया दान महान् फल देनेवाला होता है। वहाँपर किया गया श्राद्ध तथा तर्पण पितरोंको तृप्त करनेवाला होता है। साथ ही वहाँपर किये गये जप-होम आदिको अनन्त फल देनेवाला समझना चाहिये। गङ्गाका नाम-स्मरण परम आनन्द तथा गङ्गाका नामस्मरण परम तप है। जो मनुष्य गङ्गा—इस नामका नित्य स्मरण करता है, उसे यमराजका भय नहीं रहता। [श्रीमहाभागवतपुराण]

* कृपया नियम अन्तिम पृष्ठपर देखें।

वार्षिक शुल्क*
अजिल्द ₹ २००
सजिल्द ₹ २२०

जय पावक रवि चन्द्र जयति जय। सत्-चित्-आनँद भूमा जय जय॥
जय जय विश्वरूप हरि जय। जय हर अखिलात्मन् जय जय॥
जय विराट् जय जगत्पते। गौरीपति जय रमापते॥

पंचवर्षीय शुल्क*
अजिल्द ₹१०००
सजिल्द ₹११००

विदेशमें Air Mail सजिल्द शुल्क } वार्षिक US$ 45 (Rs.2700) पंचवर्षीय US$ 225 (Rs.13500) {Us Cheque Collection Charges 6$ Extra

संस्थापक—ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका
आदिसम्पादक—नित्यलीलालीन भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार
सम्पादक—राधेश्याम खेमका, सहसम्पादक—डॉ० प्रेमप्रकाश लक्कड़
केशोराम अग्रवालद्वारा गोविन्दभवन-कार्यालय के लिये गीताप्रेस, गोरखपुर से मुद्रित तथा प्रकाशित

website : www.gitapress.org | e-mail : kalyan@gitapress.org | ✆ (0551) 2334721

सदस्यता-शुल्क—व्यवस्थापक—'कल्याण-कार्यालय', पो० गीताप्रेस—२७३००५, गोरखपुर को भेजें।
Online सदस्यता-शुल्क भुगतानहेतु gitapress.org पर Online Magazine Subscription option को click करें।
अब 'कल्याण' के मासिक अङ्क kalyan-gitapress.org पर निःशुल्क पढ़ें।
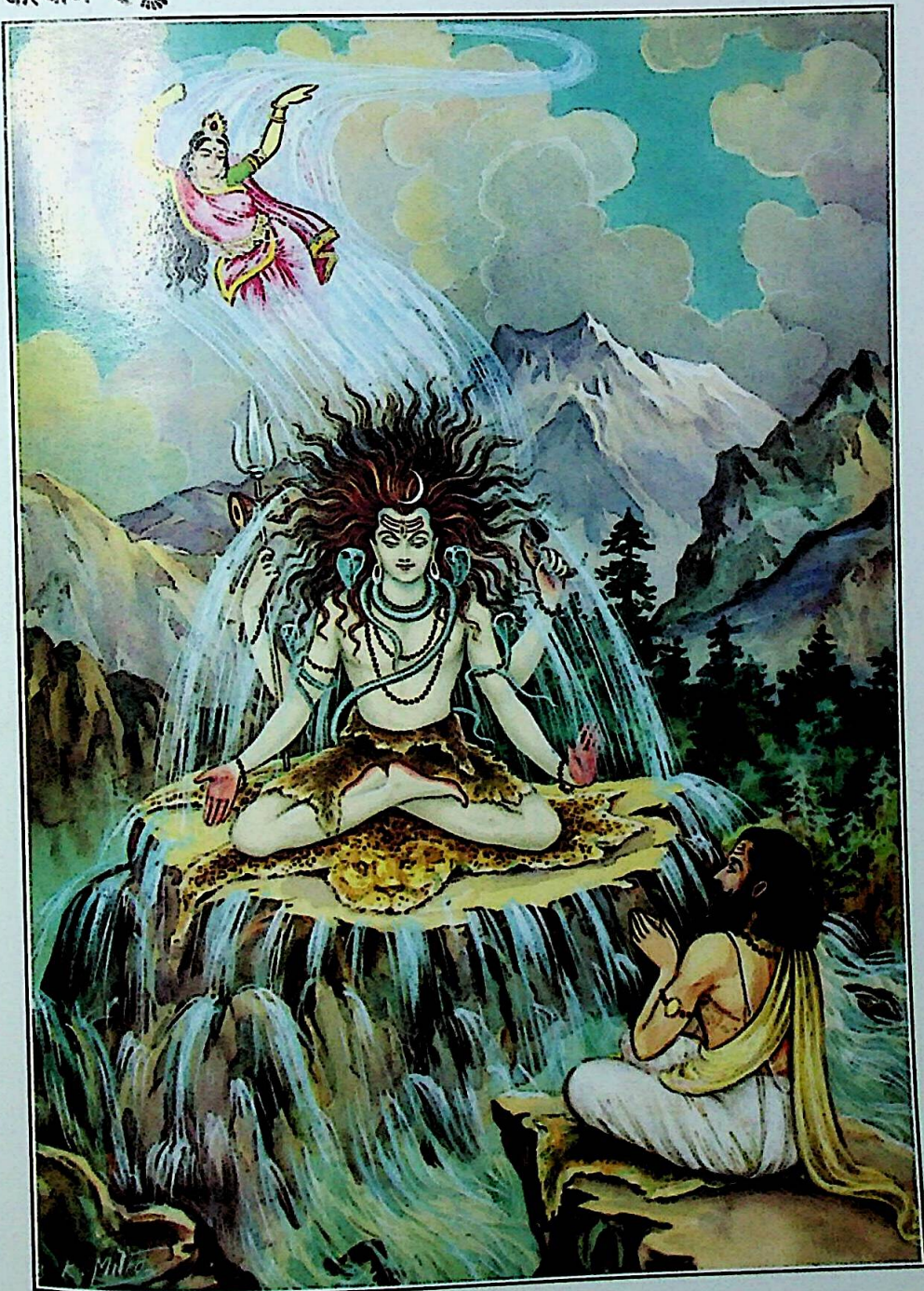
गंगा-अवतरण

पारम्परिक भारतीय लघु चित्रकलामें भगवती गंगाके स्वरूपका अंकन—१
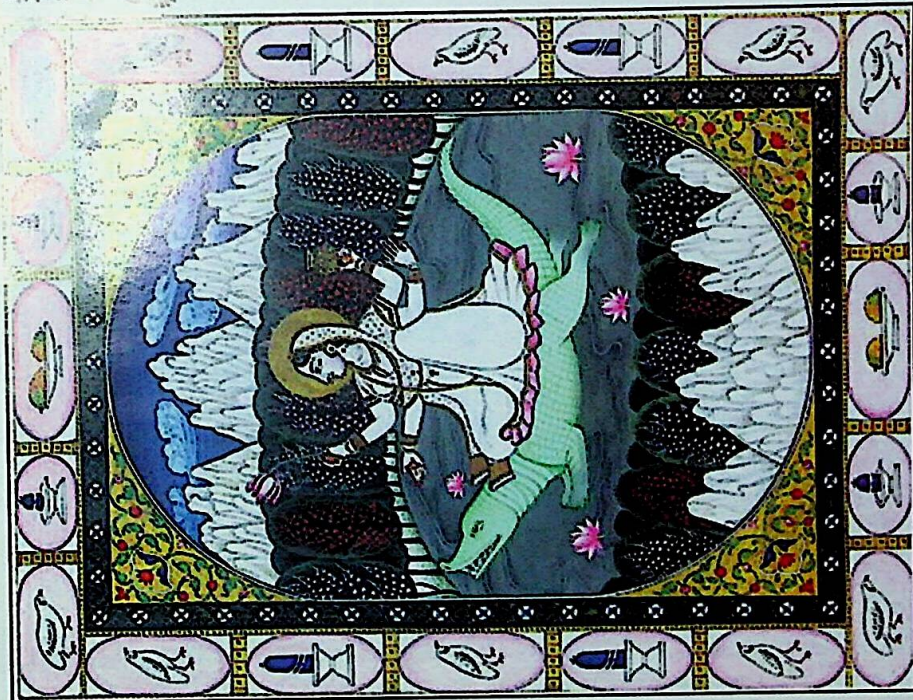
पारम्परिक भारतीय लघु चित्रकलामें भगवती गंगाके स्वरूपका अंकन—२
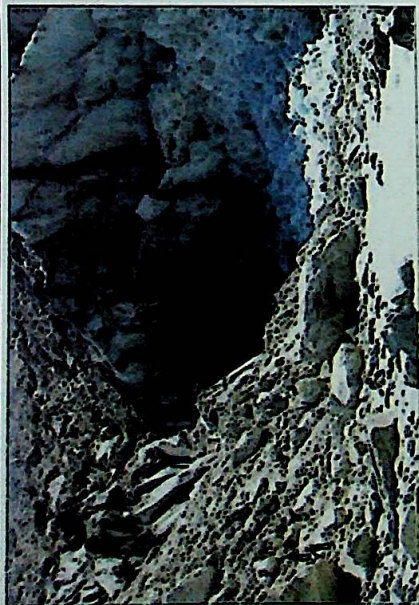
गंगाका उद्गम गोमुख
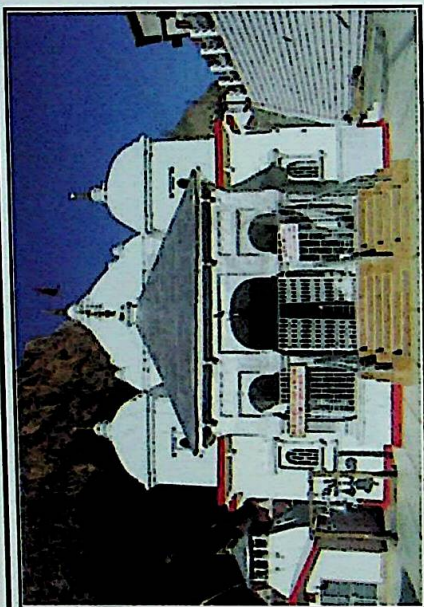
गंगोत्री मन्दिर

देवप्रयाग संगम

ऋषिकेशका गंगातट

हिमालय-क्षेत्रके गंगातीर्थ
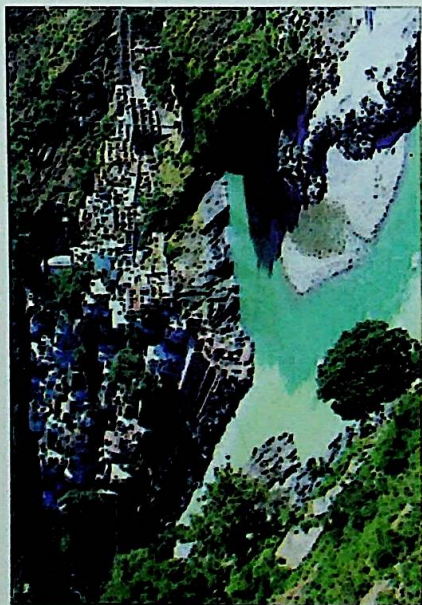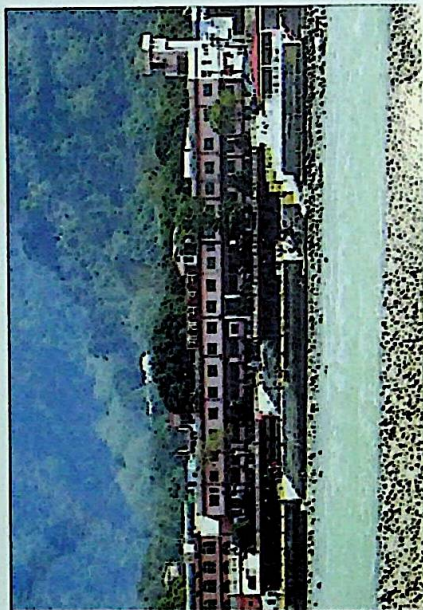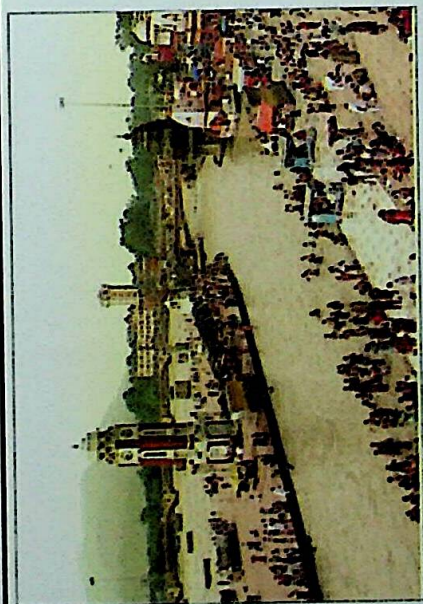
हरकी पैड़ी, हरिद्वार

तीर्थराज प्रयाग

दशाश्वमेध घाट, काशी
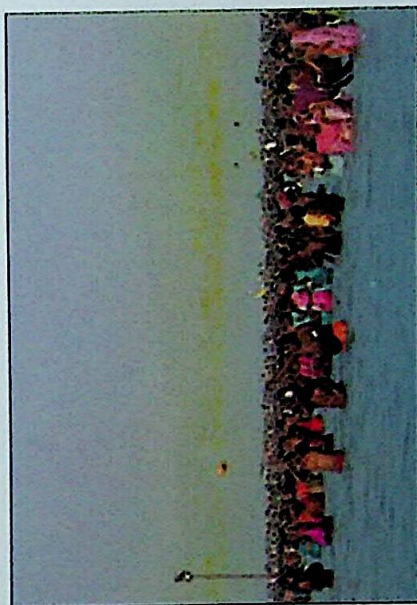
गंगासागर

गंगातटवर्ती तीर्थस्थल

देवर्षि नारद और गंगाजीद्वारा भीष्म और परशुरामको युद्धसे रोकना

पुत्रशोकसे व्याकुल गंगाजीको श्रीकृष्ण एवं व्यासजीद्वारा सान्त्वना

माँ गंगाद्वारा राजर्षि भगीरथका अनुगमन

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥

कल्याण

ॐ नमः शिवायै गङ्गायै शिवदायै नमो नमः। नमस्ते विष्णुरूपिण्यै ब्रह्ममूर्त्यै नमोऽस्तु ते॥
नमस्ते रुद्ररूपिण्यै शाङ्कर्यै ते नमो नमः। सर्वदेवस्वरूपिण्यै नमो भेषजमूर्तये॥

वर्ष ९०

गोरखपुर, सौर माघ, वि० सं० २०७२, श्रीकृष्ण-सं० ५२४१, जनवरी २०१६ ई०

संख्या १

पूर्ण संख्या १०७०

भागीरथी-वन्दना

जयति जय सुरसरी जगदखिल-पावनी।
विष्णु-पदकंज-मकरंद इव अम्बुवर वहसि, दुख दहसि, अघवृन्द-विद्राविनी॥ १॥
मिलित जलपात्र-अज युक्त-हरिचरणरज, विरज-वर-वारि त्रिपुरारि शिर-धामिनी।
जह्नु-कन्या धन्य, पुण्यकृत सगर-सुत, भूधरद्रोणि-विद्दरणि, बहुनामिनी॥ २॥
यक्ष, गंधर्व, मुनि, किन्नरोरग, दनुज, मनुज मज्जहिं सुकृत-पुंज युत-कामिनी।
स्वर्ग-सोपान, विज्ञान-ज्ञानप्रदे, मोह-मद-मदन-पाथोज-हिमयामिनी॥ ३॥
हरित गंभीर वानीर दुहुँ तीरवर, मध्य धारा विशद, विश्व अभिरामिनी।
नील-पर्यंक-कृत-शयन सर्पेश जनु, सहस सीसावली स्त्रोत सुर-स्वामिनी॥ ४॥
अमित-महिमा, अमितरूप, भूपावली-मुकुट-मनिवंद्य त्रैलोक पथगामिनी।
देहि रघुबीर-पद-प्रीति निर्भर मातु, दासतुलसी त्रासहरणि भवभामिनी॥ ५॥

[विनय-पत्रिका, पद १८]

'कल्याण' के सम्मान्य सदस्योंसे नम्र निवेदन

१-'कल्याण' के ९०वें वर्ष—सन् २०१६ का यह विशेषाङ्क *'गंगा-अङ्क'* आपलोगोंकी सेवामें प्रस्तुत है। इसमें ४८२ पृष्ठोंमें पाठ्य-सामग्री और ६ पृष्ठोंमें विषय-सूची आदि है। कई बहुरंगे एवं रेखाचित्र भी दिये गये हैं। डाकसे सभी ग्राहकोंको विशेषाङ्क-प्रेषणमें लगभग एक माहका समय लग जाता है।

२-वार्षिक सदस्यता-शुल्क प्रेषित करनेपर भी किसी कारणवश यदि विशेषाङ्क वी०पी०पी० द्वारा आपके पास पहुँच गया हो तो उसे डाकघरसे प्राप्त कर लेना चाहिये एवं प्रेषित की गयी राशिका पूरा विवरण (मनीऑर्डर पावतीसहित) उचित व्यवस्थाके लिये यहाँ भेज देना चाहिये अथवा उक्त वी०पी०पी० से किसी अन्य सज्जनको ग्राहक बनाकर उसकी सूचना यहाँ नये सदस्यके पूरे पतेसहित देनी चाहिये।

३-इस अङ्कके लिफाफे (कवर)-पर आपकी सदस्य-संख्या एवं पता छपा है, उसे कृपया जाँच लें तथा नोट कर लें। पत्र-व्यवहारमें सदस्य-संख्याका उल्लेख नितान्त आवश्यक है।

४-कल्याणके मासिक अङ्क सामान्य डाकसे भेजे जाते हैं। अब कल्याणके मासिक अङ्क निःशुल्क पढ़नेके लिये kalyan-gitapress.org पर उपलब्ध हैं।

५-*'कल्याण'* एवं *'गीताप्रेस-पुस्तक-विभाग'* की व्यवस्था अलग-अलग है। अतः पत्र तथा मनीऑर्डर आदि सम्बन्धित विभागको अलग-अलग भेजना चाहिये।

व्यवस्थापक—'कल्याण'-कार्यालय, पत्रालय—गीताप्रेस—२७३००५, जनपद—गोरखपुर, (उ०प्र०)

'कल्याण' के उपलब्ध पुराने विशेषाङ्क

कोड	विशेषाङ्क	मूल्य ₹
41	शक्ति-अङ्क	१५०
616	योगाङ्क-परिशिष्टसहित	२००
604	साधनाङ्क	२५०
1773	गो-अङ्क	१७०
44	संक्षिप्त पद्मपुराण	२५०
539	संक्षिप्त मार्कण्डेयपुराण	९०
1111	संक्षिप्त ब्रह्मपुराण	१२०
43	नारी-अङ्क	२४०
659	उपनिषद्-अङ्क	२००
279	सं० स्कन्दपुराण	३२५
40	भक्त-चरिताङ्क	२३०
1183	सं० नारदपुराण	२००
667	संतवाणी-अङ्क	१५०
587	सत्कथा-अङ्क	२००
574	संक्षिप्त योगवासिष्ठ	१६०
1133	सं० श्रीमद्देवीभागवत	२४०

कोड	विशेषाङ्क	मूल्य ₹
789	सं० शिवपुराण	२००
631	सं० ब्रह्मवैवर्तपुराण	२००
1135	भगवन्नाम-महिमा और प्रार्थना-अङ्क	१२०
572	परलोक-पुनर्जन्माङ्क	२००
517	गर्ग-संहिता	१५०
1113	नरसिंहपुराणम्-सानुवाद	१००
1362	अग्निपुराण (मूल संस्कृतका हिन्दी-अनुवाद)	२००
1432	वामनपुराण-सानुवाद	१२५
557	मत्स्यमहापुराण-सानुवाद	२७०
657	श्रीगणेश-अङ्क	१७०
42	हनुमान-अङ्क-परिशिष्टसहित	१५०
1361	सं० श्रीवाराहपुराण	१००
791	सूर्याङ्क	१३०
584	सं० भविष्यपुराण	१५०

कोड	विशेषाङ्क	मूल्य ₹
1131	कूर्मपुराण—सानुवाद	१४०
1044	वेद-कथाङ्क-परिशिष्टसहित	१७५
1132	धर्मशास्त्राङ्क	१५०
1189	सं० गरुडपुराण	१६०
1542	भगवत्प्रेम-अङ्क—अजिल्द	६५
1592	आरोग्य-अङ्क	२००
1610	महाभागवत (देवीपुराण)	१२०
1793	श्रीमद्देवीभागवताङ्क-पूर्वार्द्ध	१००
1842	श्रीमद्देवीभागवताङ्क-उत्तरार्ध	१००
1985	श्रीलिङ्गमहापुराणाङ्क-सानुवाद	२००
1947	भक्तमाल-अङ्क	१३०
1980	ज्योतिषतत्त्वांक	१३०
636	तीर्थाङ्क	२००
653	गोसेवा-अङ्क	१३०
1875	सेवा-अङ्क	१३०

सभी अङ्कोंपर डाक-व्यय ₹ ३० अतिरिक्त देय होगा। गीताप्रेस-पुस्तक-बिक्री-विभागसे प्राप्य हैं।

व्यवस्थापक—गीताप्रेस, पत्रालय—गीताप्रेस—२७३००५, जनपद—गोरखपुर, (उ०प्र०)

श्रीहरिः

'गङ्गा-अङ्क' की विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या

सत्साहित्यमें गंगा

लोकसंस्कृतिमें गंगा-दर्शन

विषय	पृष्ठ-संख्या

गंगोपासना

विषय	पृष्ठ-संख्या	विषय	पृष्ठ-संख्या

चित्र-सूची

(रंगीन चित्र)

(सादे चित्र)

स्मरण-स्तवन

(बॉर्डर: 'नमो गङ्गे' 'नमो गङ्गे' 'नमो गङ्गे' ...)

श्रुतिसरिता

इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति
शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या।
असिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तया-
र्जीकीये शृणुह्या सुषोमया॥

हे गंगे! हे यमुने! हे सरस्वति! हे शुतुद्रि! हे परुष्णि! असिक्नीसहित हे मरुद्वृधे! वितस्ता तथा सुषोमानदीसे समृद्ध हे आर्जीकीये! आप सभी सर्वदा स्तवनीय हैं। हे नदीस्वरूपा देवियो! मेरे द्वारा की जानेवाली स्तुतियोंका कृपया आप श्रवण करें। [ऋग्वेद]

या प्रवतो निवत उद्वत उदन्वतीरनुदकाश्च याः। ता अस्मभ्यं पयसा पिन्वमानाः शिवा देवीरशिपदा भवन्तु सर्वा नद्यो अशिमिदा भवन्तु॥

जो नदियाँ दुर्गम भूभागोंमें बहा करती हैं, जो भूमिके अन्तस्तलमें संचरण करती हैं, जिन नदियोंका प्रवाह पार्वत्य-प्रदेशोंके उच्चतम भूभागोंको आप्लावित करता है, जो नदियाँ नित्यसलिला हैं और जो अन्तः-सलिला प्रतीत होती हैं, वे दिव्यकान्तिमयी तथा अपने पीयूषोपम जलसे जगत्को आप्लावित करनेवाली सरिताएँ शिपद आदि विभिन्न रोगोंको दूर करती हुई सर्वदा हमें कल्याण तथा संरक्षण प्रदान करें। [ऋग्वेद]

सितासिते सरिते यत्र सङ्गथे
तत्राप्लुतासो दिवमुत्पतन्ति।
ये वै तन्वं विसृजन्ति धीरा-
स्ते जनासो अमृतत्वं भजन्ते॥

जिस तीर्थमें गंगा और यमुना—इन दोनों नदियोंका संगम हुआ है, उस तीर्थमें स्नान करनेवाले प्राणी देवलोककी प्राप्ति करते हैं और जो वहाँ शरीरका त्याग करते हैं, वे धीरपुरुष अमृतत्व अर्थात् मोक्षको प्राप्त करते हैं। [ऋक्परिशिष्ट]

हिमवतः प्र स्रवन्ति सिन्धौ समह सङ्गमः।
आपो ह मह्यं तद् देवीर्ददन् हृद्द्योतभेषजम्॥

हिममण्डित पर्वतशिखरोंसे द्रवित होती हुई अविरल शीतल जलधाराएँ सागरमें विलीन हो रही हैं। वे सतत गतिशील तथा शैत्यवाहिनी जलधाराएँ उपासकोंके अन्तस्तापका परिशमन करनेवाली ओषधियाँ प्रदान करें। [अथर्ववेद]

सिन्धुपत्नीः सिन्धुराज्ञीः सर्वा या नद्य स्थन।
दत्त नस्तस्य भेषजं तेना वो भुनजामहै॥

हे जलाधिदेवियो! आप सभी जलाधिपति महासिन्धुकी कान्ताएँ हैं, आप सन्तापतप्त लोकमानसके तापोपशमनार्थ निरन्तर गतिशील रहती हैं, आधि-व्याधिसे सन्तप्त हम उपासकोंको आप करुणावारिरूप ओषधियोंसे नैरुज्य प्रदान करें, जिससे आपके प्रीतिपात्र हम उपासक अन्न-पानादिका यथेष्ट उपभोग करनेमें समर्थ हो सकें। [अथर्ववेद]

हिरण्यवर्णाः शुचयः पावका
यासु जातः सविता यास्वग्निः।
या अग्निं गर्भं दधिरे सुवर्णा-
स्ता न आपः शं स्योना भवन्तु॥

मंगलमय, आह्लादक तथा स्वर्णिम कान्तिवाला यह जल स्वभावतः शुद्ध होनेसे स्नान-आचमन-पानादिके माध्यमसे उपासकोंको पवित्रता प्रदान करनेवाला है। यह जल सूर्य तथा अग्नि-जैसे विशोधकोंका भी परमकारण होनेसे पावनतम (पवित्रतम) है। ऐसा वह जगत्पावन, अग्निगर्भ वारि हम उपासकोंकी समस्त व्याधियोंका शमनकर परमशान्ति तथा सौख्य प्रदान करे। [अथर्ववेद]

श्रीगङ्गाजीके विविध ध्यान-स्वरूप

मकरवाहिनी श्रीगंगा

सितमकरनिषण्णां शुभ्रवर्णां त्रिनेत्रां
करधृतकलशोद्यत्सोत्पलामत्यभीष्टाम् ।
विधिहरिहररूपां सेन्दुकोटीरचूडां
कलितसितदुकूलां जाह्नवीं तां नमामि॥

श्वेत मकरपर विराजित, शुभ्रवर्णवाली, तीन नेत्रोंवाली, दो हाथोंमें भरे हुए कलश तथा दो हाथोंमें सुन्दर कमल धारण किये हुए, भक्तोंके लिये परम इष्ट; ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश तीनोंका रूप अर्थात् तीनोंके कार्य करनेवाली, मस्तकपर सुशोभित चन्द्रजटित मुकुटवाली तथा सुन्दर श्वेत वस्त्रोंसे विभूषित माँ गंगाको मैं प्रणाम करता हूँ।

देवनदी श्रीगंगा

ब्रह्माण्डं खण्डयन्ती हरशिरसि जटावल्लिमुल्लासयन्ती
स्वर्लोकादापतन्ती कनकगिरिगुहागण्डशैलात्स्खलन्ती।
क्षोणीपृष्ठे लुठन्ती दुरितचयचमूर्निर्भरं भर्त्सयन्ती
पाथोधिं पूरयन्ती सुरनगरसरित्पावनी नः पुनातु॥

ब्रह्माण्डका भेदनकर निकलनेवाली, महादेवजीकी जटा-लताको उल्लसित करनेवाली, स्वर्गलोकसे गिरनेवाली, सुमेरुकी गुफा और पर्वतमालासे अवतरित होनेवाली, पृथ्वीपर विहार करनेवाली, पापसमूहकी सेनाको कड़ी फटकार देनेवाली, समुद्रको भरनेवाली तथा देवपुरीकी पवित्र नदी गंगा हमें पवित्र करे।

[गंगाष्टक]

चतुर्भुजादेवी गंगा

चतुर्भुजां त्रिनेत्रां च सर्वावयवभूषिताम्।
रत्नकुम्भां सिताम्भोजां वरदामभयप्रदाम्॥
श्वेतवस्त्रपरीधानां मुक्तामणिविभूषिताम्।
सदा ध्यायेत् सुरूपां तां चन्द्रायुतसमप्रभाम्॥

श्रीगंगाजीकी चार भुजाएँ हैं। उनके तीन नेत्र हैं। उनके सम्पूर्ण अंग सुन्दर हैं तथा आभूषणोंसे सुशोभित हो रहे हैं। वे एक हाथमें [जलपूरित] रत्नघट, दूसरे हाथमें श्वेतपद्म, तीसरे हाथमें वरद मुद्रा एवं चौथेमें अभय मुद्रा धारण किये हैं। वे उज्ज्वल वस्त्र धारण करती हैं और मणि तथा मोतियोंसे सुशोभित हैं। उनमें हजारों चन्द्रमाओंकी ज्योति छिटक रही है। [भक्तको] सदा उनके इस प्रकारके सुन्दर रूपका ध्यान करना चाहिये। [भविष्यपुराण]

धर्मद्रवरूपा भगवती गंगा

साक्षाद्धर्मद्रवौघं मुररिपुचरणाम्भोजपीयूषसारं
दुःखस्याब्धेस्तरित्रं सुरदनुजनुतं स्वर्गसोपानमार्गम्।
सर्वांहोहारि वारि प्रवरगुणगणं भासि या संवहन्ती
तस्यै भागीरथि श्रीमति मुदितमना देवि कुर्वे नमस्ते॥

श्रीमती भागीरथी देवी! जो जलरूपमें परिणत साक्षात् धर्मकी राशि है, भगवान् विष्णुके चरणारविन्दोंसे प्रकट हुई सुधाका सार है, दुःखरूपी समुद्रसे पार होनेके लिये जहाज है तथा स्वर्गलोकमें जानेके लिये सीढ़ी है, जिसे देवता और दानव भी प्रणाम करते हैं, जो समस्त पापोंका संहार करनेवाला, उत्तम गुणसमूहसे युक्त और शोभासम्पन्न है, ऐसे जलको आप धारण करती हैं। मैं प्रसन्नचित्त होकर आपको नमस्कार करता हूँ। [संकलित]

भगवती भागीरथी

उत्फुल्लामलपुण्डरीकरुचिरा कृष्णेशविध्यात्मिका
कुम्भेष्टाभयतोयजानि दधती श्वेताम्बरालङ्कृता।
हृष्टास्या शशिशेखराखिलनदीशोणादिभिः सेविता
ध्येया पापविनाशिनी मकरगा भागीरथी साधकैः॥

जिनकी देहकान्ति खिले हुए स्वच्छ कमलके समान मनोहारिणी है, जो ब्रह्म-विष्णु-रुद्रस्वरूपिणी हैं, जिन्होंने दाहिने भुजयुगलमें वरमुद्रा तथा कमल और वाम भुजयुगलमें सुधाकलश तथा अभय मुद्राको धारण किया है, जो श्वेत वस्त्रोंसे अलंकृत हैं, जिनके मस्तकपर चन्द्रमा शोभायमान है तथा समस्त नदियाँ और शोण आदि महानद जिनकी सेवा कर रहे हैं, ऐसी प्रसन्न मुखवाली तथा मकरपर आरूढ़, पापविनाशिनी भगवती भागीरथीका साधकोंको ध्यान करना चाहिये।

[मन्त्रमहोदधि]

श्रीवाल्मीकिविरचित गङ्गाष्टक

मातः शैलसुतासपत्नि वसुधाशृङ्गारहारावलि
स्वर्गारोहणवैजयन्ति भवतीं भागीरथि प्रार्थये।
त्वत्तीरे वसतस्त्वदम्बु पिबतस्त्वद्वीचिषु प्रेङ्खत-
स्त्वन्नाम स्मरतस्त्वदर्पितदृशः स्यान्मे शरीरव्ययः॥ १॥
त्वत्तीरे तरुकोटरान्तरगतो गङ्गे विहङ्गो वरं
त्वन्नीरे नरकान्तकारिणि वरं मत्स्योऽथवा कच्छपः।
नैवान्यत्र मदान्धसिन्धुरघटासङ्घट्टघण्टारण-
त्कारत्रस्तसमस्तवैरिवनितालब्धस्तुतिर्भूपतिः॥ २॥
उक्षा पक्षी तुरग उरगः कोऽपि वा वारणो वा
वारीणः स्यां जननमरणक्लेशदुःखासहिष्णुः।
न त्वन्यत्र प्रविरलरणत्कङ्कणक्काणमिश्रं
वारस्त्रीभिश्चमरमरुता वीजितो भूमिपालः॥ ३॥
काकैर्निष्कुषितं श्वभिः कवलितं गोमायुभिर्लुण्ठितं
स्त्रोतोभिश्चलितं तटाम्बुलुलितं वीचीभिरान्दोलितम्।
दिव्यस्त्रीकरचारुचामरमरुत्संवीज्यमानः कदा
द्रक्ष्येऽहं परमेश्वरि त्रिपथगे भागीरथि स्वं वपुः॥ ४॥

पृथ्वीकी शृङ्गारमाला, पार्वतीजीकी सपत्नी और स्वर्गारोहणके लिये वैजयन्ती पताकारूपिणी हे माता भागीरथि! मैं तुमसे यह प्रार्थना करता हूँ कि तुम्हारे तटपर निवास करते हुए, तुम्हारे जलका पान करते हुए, तुम्हारी तरंगभंगीमें तरंगायमान होते हुए, तुम्हारा नामस्मरण करते हुए और तुम्हींमें दृष्टि लगाये हुए मेरा शरीरपात हो॥ १॥ हे गंगे! तुम्हारे तटवर्ती तरुवरके कोटरमें पक्षी होकर रहना अच्छा है तथा हे नरकनिवारिणि! तुम्हारे जलमें मत्स्य या कच्छप होकर जन्म लेना भी बहुत अच्छा है, किंतु दूसरी जगह मदमत्त गजराजोंके जमघटके घण्टारवसे भयभीत हुई शत्रुमहिलाओंसे स्तुत पृथ्वीपति भी होना अच्छा नहीं॥ २॥ हे मातः! मैं भले ही आपके आरपार रहनेवाला जन्म-मरणरूप क्लेशको सहन न करनेवाला कोई बैल, पक्षी, घोड़ा, सर्प अथवा हाथी हो जाऊँ, किंतु [आपसे दूर] किसी अन्य स्थानपर ऐसा राजा भी न होऊँ, जिसपर वारांगनाएँ मन्द-मन्द झनकारते हुए कंकणोंकी सुमधुर ध्वनिसे युक्त चमर डुला रही हों॥ ३॥ हे परमेश्वरि! हे त्रिपथगे! हे भागीरथि! [मरनेके अनन्तर] देवांगनाओंके करकमलोंमें सुशोभित सुन्दर चमरोंकी हवासे सेवित हुआ मैं अपने मृत शरीरको काकोंसे कुरेदा जाता हुआ, कुत्तोंसे भक्षित होता हुआ, गीदड़ोंसे लुण्ठित होता हुआ, तुम्हारे स्रोतमें पड़कर बहता हुआ, कभी किनारेके स्वल्प जलमें हिलता हुआ और फिर तरंगभंगियोंसे आन्दोलित होता हुआ भी क्या कभी देखूँगा?॥ ४॥

अभिनवबिसवल्ली पादपद्मस्य विष्णो-
मर्दनमथनमौलेर्मालतीपुष्पमाला ।
जयति जयपताका काप्यसौ मोक्षलक्ष्म्याः
क्षपितकलिकलङ्का जाह्नवी नः पुनातु॥ ५॥
एतत्तालतमालसालसरलव्यालोलवल्लीलता-
च्छन्नं सूर्यकरप्रतापरहितं शङ्खेन्दुकुन्दोज्ज्वलम्।
गन्धर्वामरसिद्धकिन्नरवधूत्तुङ्गस्तनास्फालितं
स्नानाय प्रतिवासरं भवतु मे गाङ्गं जलं निर्मलम्॥ ६॥
गाङ्गं वारि मनोहारि मुरारिचरणच्युतम्।
त्रिपुरारिशिरश्चारि पापहारि पुनातु माम्॥ ७॥
पापापहारि दुरितारि तरङ्गधारि
शैलप्रचारि गिरिराजगुहाविदारि।
झङ्कारकारि हरिपादरजोऽपहारि
गाङ्गं पुनातु सततं शुभकारि वारि॥ ८॥
गङ्गाष्टकं पठति यः प्रयतः प्रभाते वाल्मीकिना विरचितं शुभदं मनुष्यः।
प्रक्षाल्य गात्रकलिकल्मषपङ्कमाशु मोक्षं लभेत् पतति नैव नरो भवाब्धौ॥ ९॥

॥ इति श्रीमहर्षिवाल्मीकिविरचितं श्रीगङ्गाष्टकं सम्पूर्णम्॥

जो भगवान् विष्णुके चरणकमलका नूतनमृणाल (कमलनाल) है तथा कामारि त्रिपुरारिके ललाटकी मालती-माला है, वह मोक्षलक्ष्मीकी विलक्षण विजयपताका जयको प्राप्त हो। कलिकलंकको नष्ट करनेवाली, वह जाह्नवी हमें पवित्र करे॥ ५॥ जो ताल, तमाल, साल, सरल तथा चंचल वल्लरी और लताओंसे आच्छादित है, सूर्यकिरणोंके तापसे रहित है, शंख, कुन्द और चन्द्रके समान उज्ज्वल है तथा गन्धर्व, देवता, सिद्ध और किन्नरोंकी कामिनियोंके पीन पयोधरोंसे आस्फालित (टकराया हुआ) है, वह अत्यन्त निर्मल गंगाजल नित्यप्रति मेरे स्नानके लिये हो॥ ६॥ जो श्रीमुरारिके चरणोंसे उत्पन्न हुआ है, श्रीशंकरके सिरपर विराजमान है तथा सम्पूर्ण पापोंको हरण करनेवाला है, वह मनोहर गंगाजल मुझे पवित्र करे॥ ७॥ जो पापोंको हरण करनेवाला, दुष्कर्मोंका शत्रु, तरंगमय, शैल-खण्डोंपर बहनेवाला, पर्वतराज हिमालयकी गुहाओंको विदीर्ण करनेवाला, मधुर कलकल-ध्वनियुक्त और श्रीहरिकी चरणरजको धोनेवाला है, वह निरन्तर शुभकारी गंगाजल मुझे पवित्र करे॥ ८॥ जो पुरुष वाल्मीकिजीके रचे हुए इस कल्याणप्रद गंगाष्टकको प्रात:काल एकाग्रचित्तसे पढ़ता है, वह अपने शरीरके कलिकल्मषरूप कीचड़को धोकर शीघ्र ही मोक्ष प्राप्त करता है और फिर संसार-समुद्रमें नहीं गिरता॥ ९॥

॥ इस प्रकार श्रीमहर्षिवाल्मीकिविरचित श्रीगङ्गाष्टक सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीशङ्कराचार्यकृत गङ्गास्तुति

देवि सुरेश्वरि भगवति गङ्गे त्रिभुवनतारिणि तरलतरङ्गे।
शङ्करमौलिविहारिणि विमले मम मतिरास्तां तव पदकमले॥ १॥
भागीरथि सुखदायिनि मातस्तव जलमहिमा निगमे ख्यातः।
नाहं जाने तव महिमानं पाहि कृपामयि मामज्ञानम्॥ २॥
हरिपदपाद्यतरङ्गिणि गङ्गे हिमविधुमुक्ताधवलतरङ्गे।
दूरीकुरु मम दुष्कृतिभारं कुरु कृपया भवसागरपारम्॥ ३॥
तव जलममलं येन निपीतं परमपदं खलु तेन गृहीतम्।
मातर्गङ्गे त्वयि यो भक्तः किल तं द्रष्टुं न यमः शक्तः॥ ४॥
पतितोद्धारिणि जाह्नवि गङ्गे खण्डितगिरिवरमण्डितभङ्गे।
भीष्मजननि हे मुनिवरकन्ये पतितनिवारिणि त्रिभुवनधन्ये॥ ५॥
कल्पलतामिव फलदां लोके प्रणमति यस्त्वां न पतति शोके।
पारावारविहारिणि गङ्गे विमुखयुवतिकृततरलापाङ्गे॥ ६॥
तव चेन्मातः स्त्रोतःस्नातः पुनरपि जठरे सोऽपि न जातः।
नरकनिवारिणि जाह्नवि गङ्गे कलुषविनाशिनि महिमोत्तुङ्गे॥ ७॥

हे देवि गंगे! तुम देवगणकी ईश्वरी हो, हे भगवति! तुम त्रिभुवनको तारनेवाली, विमल और तरल तरंगमयी तथा शंकरके मस्तकपर विहार करनेवाली हो। हे मातः! तुम्हारे चरणकमलोंमें मेरी मति लगी रहे॥ १॥ हे भागीरथि! तुम सब प्राणियोंको सुख देती हो, हे मातः! वेद-शास्त्रमें तुम्हारे जलका माहात्म्य वर्णित है, मैं तुम्हारी महिमा कुछ नहीं जानता, हे दयामयि! मुझ अज्ञानीकी रक्षा करो॥ २॥ हे गंगे! तुम श्रीहरिके चरणोंकी चरणोदकमयी नदी हो, हे देवि! तुम्हारी तरंगें हिम, चंद्रमा और मोतीकी भाँति श्वेत हैं, तुम मेरे पापोंका भार दूर कर दो और कृपा करके मुझे भवसागरके पार उतारो॥ ३॥ हे देवि! जिसने तुम्हारा जल पी लिया, अवश्य ही उसने परमपद पा लिया, हे मातः गंगे! जो तुम्हारी भक्ति करता है, उसको यमराज नहीं देख सकते (अर्थात् तुम्हारे भक्तगण यमपुरीमें न जाकर वैकुंठमें जाते हैं)॥ ४॥ हे पतितजनोंका उद्धार करनेवाली जह्नुकुमारी गंगे! तुम्हारी तरंगें गिरिराज हिमालयको खंडित करके बहती हुई सुशोभित होती हैं, तुम भीष्मकी जननी और जह्नुमुनिकी कन्या हो, पतितपावनी होनेके कारण तुम त्रिभुवनमें धन्य हो॥ ५॥ हे मातः! तुम इस लोकमें कल्पलताकी भाँति फल प्रदान करनेवाली हो, तुम्हें जो प्रणाम करता है, वह कभी शोकमें नहीं पड़ता, हे गंगे! मानिनी वनिताके समान चंचल कटाक्षवाली तुम समुद्रके साथ विहार करती हो॥ ६॥ हे गंगे! जिसने तुम्हारे प्रवाहमें स्नान कर लिया, वह फिर मातृगर्भमें प्रवेश नहीं करता, हे जाह्नवि! तुम भक्तोंको नरकसे बचाती हो और उनके पापोंका नाश करती हो, तुम्हारा माहात्म्य अतीव उच्च है॥ ७॥

पुनरसदङ्गे पुण्यतरङ्गे जय जय जाह्नवि करुणापाङ्गे।
इन्द्रमुकुटमणिराजितचरणे सुखदे शुभदे भृत्यशरण्ये॥ ८ ॥
रोगं शोकं तापं पापं हर मे भगवति कुमतिकलापम्।
त्रिभुवनसारे वसुधाहारे त्वमसि गतिर्मम खलु संसारे॥ ९ ॥
अलकानन्दे परमानन्दे कुरु करुणां मयि कातरवन्द्ये।
तव तटनिकटे यस्य निवासः खलु वैकुण्ठे तस्य निवासः॥ १० ॥
वरमिह नीरे कमठो मीनः किं वा तीरे शरटः क्षीणः।
अथवा श्वपचो मलिनो दीनस्तव न हि दूरे नृपतिकुलीनः॥ ११ ॥
भो भुवनेश्वरि पुण्ये धन्ये देवि द्रवमयि मुनिवरकन्ये।
गङ्गास्तवमिमममलं नित्यं पठति नरो यः स जयति सत्यम्॥ १२ ॥
येषां हृदये गङ्गाभक्तिस्तेषां भवति सदा सुखमुक्तिः।
मधुराकान्तापज्झटिकाभिः परमानन्दकलितललिताभिः॥ १३ ॥
गङ्गास्तोत्रमिदं भवसारं वाञ्छितफलदं विमलं सारम्।
शङ्करसेवकशङ्कररचितं पठति सुखी स्तव इति च समाप्तः॥ १४॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं श्रीगङ्गास्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

हे करुणाकटाक्षवाली जह्नुपुत्री गंगे! मेरे अपावन अंगोंपर अपनी पावन तरंगोंसे युक्त हो उल्लसित होनेवाली, तुम्हारी जय हो! जय हो!! तुम्हारे चरण इन्द्रके मुकुटमणिसे प्रदीप्त हैं, तुम सबको सुख और शुभ देनेवाली हो और अपने सेवकको आश्रय प्रदान करती हो॥ ८॥ हे भगवति! तुम मेरे रोग, शोक, ताप, पाप और कुमति-कलापको हर लो, तुम त्रिभुवनकी सार और वसुधाका हार हो, हे देवि! इस संसारमें एकमात्र तुम्हीं मेरी गति हो॥ ९॥ हे दुखियोंकी वन्दनीया देवि गंगे! तुम अलकापुरीको आनन्द देनेवाली और परमानन्दमयी हो, तुम मुझपर कृपा करो, हे मातः! जो तुम्हारे तटके निकट वास करता है, वह मानो वैकुंठमें ही वास करता है॥ १०॥ हे देवि! तुम्हारे जलमें कच्छप या मीन बनकर रहना अच्छा है, तुम्हारे तीरपर दुबला-पतला गिरगिट (कृकलास) बनकर रहना अच्छा है या अति मलिन दीन चांडालकुलमें जन्म ग्रहणकर रहना अच्छा है, परंतु (तुमसे) दूर कुलीन नरपति होकर रहना भी अच्छा नहीं॥ ११॥ हे देवि! तुम त्रिभुवनकी ईश्वरी हो, तुम पावन और धन्य हो, जलमयी तथा मुनिवरकी कन्या हो। जो प्रतिदिन इस गंगास्तोत्रका पाठ करता है, वह निश्चय ही संसारमें जयलाभ कर सकता है॥ १२॥ जिनके हृदयमें गंगाके प्रति अचला भक्ति है, वे सदा ही आनन्द और मुक्तिलाभ करते हैं; यह स्तुति परमानंदमयी सुललित पदावलीसे युक्त, मधुर और कमनीय है॥ १३॥ इस असार-संसारमें उक्त गंगास्तोत्र ही निर्मल सारवान् पदार्थ है, यह भक्तोंको अभिलषित फल प्रदान करता है; शंकरके सेवक शंकराचार्यकृत इस स्तोत्रको जो पढ़ता है, वह सुखी होता है—इस प्रकार यह स्तोत्र समाप्त हुआ॥ १४॥

॥ इस प्रकार श्रीमच्छंकराचार्यविरचित श्रीगंगास्तोत्र संपूर्ण हुआ॥

श्रीतुलसीदासजीकी गंगा-प्रार्थना

जय जय भगीरथनन्दिनि, मुनि-चय चकोर-चन्दिनि, नर-नाग-बिबुध-बन्दिनि जय जह्नु बालिका।
बिस्नु-पद-सरोजजासि, ईस-सीसपर बिभासि, त्रिपथगासि, पुन्यरासि, पाप-छालिका॥ १॥
बिमल बिपुल बहसि बारि, सीतल त्रयताप-हारि, भँवर बर बिभंगतर तरंग-मालिका।
पुरजन पूजोपहार, सोभित ससि धवलधार, भंजन भव-भार, भक्ति-कल्पथालिका॥ २॥
निज तटबासी बिहंग, जल-थर-चर पसु-पतंग, कीट, जटिल तापस सब सरिस पालिका।
तुलसी तव तीर तीर सुमिरत रघुबंस-बीर, बिचरत मति देहि मोह-महिष-कालिका॥ ३॥

हे भगीरथनन्दिनी! तुम्हारी जय हो, जय हो। तुम मुनियोंके समूहरूपी चकोरोंके लिये चन्द्रिकारूप हो। मनुष्य, नाग और देवता तुम्हारी वन्दना करते हैं। हे जह्नुकी पुत्री! तुम्हारी जय हो। तुम भगवान् विष्णुके चरणकमलसे उत्पन्न हुई हो; शिवजीके मस्तकपर शोभा पाती हो; स्वर्ग, भूमि और पाताल—इन तीन मार्गोंसे तीन धाराओंमें होकर बहती हो। पुण्योंकी राशि और पापोंको धोनेवाली हो॥ १॥

तुम अगाध निर्मल जलको धारण किये हो, वह जल शीतल और तीनों तापोंको हरनेवाला है। तुम सुन्दर भँवर और अति चंचल तरंगोंकी माला धारण किये हो। नगर-निवासियोंने पूजाके समय जो सामग्रियाँ भेंट चढ़ायी हैं, उनसे तुम्हारी चन्द्रमाके समान धवल धारा शोभित हो रही है। वह धारा संसारके जन्म-मरणरूप भारको नाश करनेवाली तथा भक्तिरूपी कल्पवृक्षकी रक्षाके लिये थाल्हारूप है॥ २॥

तुम अपने तीरपर रहनेवाले पक्षी, जलचर, थलचर, पशु, पतंग, कीट और जटाधारी तपस्वी आदि सबका समानभावसे पालन करती हो। हे मोहरूपी महिषासुरको मारनेके लिये कालिकारूप गङ्गाजी! मुझ तुलसीदासको ऐसी बुद्धि दो कि जिससे वह श्रीरघुनाथजीका स्मरण करता हुआ तुम्हारे तीरपर विचरा करे॥ ३॥ [विनय-पत्रिका]

श्रीगंगाजीकी आरती

जय गंगा मैया-माँ जय सुरसरि मैया।
भव-वारिधि उद्धारिणि अतिहि सुदृढ़ नैया॥

हरि-पद-पद्म-प्रसूता विमल वारिधारा।
ब्रह्मद्रव भागीरथि शुचि पुण्यागारा॥
शंकर-जटा विहारिणि हारिणि त्रय-तापा।
सगर-पुत्र-गण-तारिणि, हरणि सकल पापा॥
'गंगा-गंगा' जो जन उच्चारत मुखसों।
दूर देशमें स्थित भी तुरत तरत सुखसों॥

मृतकी अस्थि तनिक तुव जल-धारा पावै।
सो जन पावन होकर परम धाम जावै॥
तव तटबासी तरुवर, जल-थल-चरप्राणी।
पक्षी-पशु-पतंग गति पावैं निर्वाणी॥
मातु! दयामयि कीजै दीननपर दाया।
प्रभु-पद-पद्म मिलाकर हरि लीजै माया॥

गंगा-गौरव

धर्मद्रवं ह्यपां बीजं वैकुण्ठचरणच्युतम् । धृतं मूर्ध्नि महेशेन यद्गाङ्गममलं जलम्॥
तद्ब्रह्मैव न सन्देहो निर्गुणं प्रकृतेः परम् । तेन किं समतां गच्छेदपि ब्रह्माण्डगोचरे॥

जो धर्मद्रव (धर्मका ही द्रवीभूत स्वरूप) है, जलका आदि कारण है, भगवान् विष्णुके चरणोंसे प्रकट हुआ है तथा जिसे भगवान् शंकरने अपने मस्तकपर धारण कर रखा है, वह गंगाजीका निर्मल जल प्रकृतिसे परे निर्गुण ब्रह्म ही है—इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है। अतः ब्रह्माण्डके भीतर ऐसी कौन-सी वस्तु है, जो गंगाजलकी समानता कर सके। [पद्मपुराण]

श्रीगंगाजीके नाम-कीर्तनका फल

गङ्गा गङ्गेति यो ब्रूयाद्योजनानां शतैरपि।
नरो न नरकं याति किं तया सदृशं भवेत्॥

जो सौ योजन दूरसे भी 'गंगा-गंगा' कहता है, वह मनुष्य नरकमें नहीं पड़ता; फिर गंगाजीके समान कौन हो सकता है? [पद्मपुराण]

गङ्गा गङ्गेति यो ब्रूयाद्योजनानां शतैरपि।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति॥

जो सैकड़ों योजन दूरसे भी 'गंगा-गंगा' कहता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो श्रीविष्णुलोकको प्राप्त होता है। [पद्मपुराण]

गङ्गा गङ्गेति यन्नाम सकृदप्युच्यते यदा।
तदैव पापनिर्मुक्तो ब्रह्मलोके महीयते॥

'गंगा-गंगा' इस नामका एक बार भी उच्चारण कर लेनेसे मनुष्य पापरहित होकर ब्रह्मलोकमें प्रतिष्ठा प्राप्त करता है। [बृहन्नारदीयपुराण]

श्रीगंगाजीके स्मरणका फल

उत्क्रामद्भिश्च यः प्राणैः प्रयतः शिष्टसम्मतः।
चिन्तयेन्मनसा गङ्गां स गतिं परमां लभेत्॥

जो साधु पुरुषोंद्वारा सम्मानित तथा संयतचित्त मनुष्य प्राण निकलते समय मन-ही-मन गंगाजीका स्मरण करता है, वह परम उत्तम गतिको प्राप्त कर लेता है। [महाभारत]

गङ्गेति स्मरणादेव क्षयं याति च पातकम्।
कीर्तनादतिपापानि दर्शनाद् गुरुकल्मषम्॥

गंगाजीके नामका स्मरण करनेमात्रसे पातक, कीर्तनसे अतिपातक और दर्शनसे भारी-से-भारी पाप (महापातक) भी नष्ट हो जाते हैं। [पद्मपुराण]

ये स्मरिष्यन्ति लोकेऽत्र जाह्नवीति सकृन्मुने।
न तेषां प्रभविष्यन्ति पापानि दुःखमेव वा॥

[गंगाजी जह्नुमुनिसे कहती हैं—] हे मुने! इस संसारमें जो लोग मेरा 'जाह्नवी' के नामसे एक बार भी स्मरण करेंगे; उन्हें पाप अथवा दुःख नहीं होंगे। [महाभागवत]

प्रातरुत्थाय यो गङ्गां हेलयापि नरः स्मरेत्।
न तस्याशुभभीतिस्तु विद्यते भुवनत्रये॥
प्रवर्तते गृहे सम्पद्विनश्यन्त्यापदः क्षणात्।
पापानि संक्षयं यान्ति जन्मान्तरकृतान्यपि॥
भवन्ति च सुपुण्यानि चाक्षयानि महामते।
दुःस्वप्नदर्शने वापि विपत्तावतिदुर्गमे।
स्मृत्वा गङ्गां सकृन्मर्त्यो मुच्यते नात्र संशयः॥

[श्रीमहादेवजी नारदजीसे कहते हैं—] जो मनुष्य प्रातःकाल उठकर अनिच्छासे भी गंगाका स्मरण कर लेता है, उसे तीनों लोकोंमें अमंगलका भय नहीं होता है। महामते! उसके घरमें सम्पदा आ जाती है, क्षण भरमें उसकी सभी विपत्तियाँ दूर हो जाती हैं। जन्म-जन्मान्तरमें किये गये पाप भी नष्ट हो जाते हैं तथा उसके पुण्य अक्षय हो जाते हैं। दुःस्वप्न देखनेपर, विपत्तिकालमें तथा अत्यन्त दुर्गम स्थानपर एक बार भी गंगाका स्मरण कर लेनेपर मनुष्य कष्टोंसे छुटकारा पा जाता है, इसमें सन्देह नहीं है। [महाभागवत]

न गङ्गास्मरणं यत्र दिने समुपजायते।
तद्दिनं दुर्दिनं ज्ञेयं मेघाच्छन्नं न दुर्दिनम्॥

जिस दिन गंगाका स्मरण नहीं किया जाता है, वही दिन दुर्दिन है। मेघाच्छन्न दिन दुर्दिन नहीं है। [महाभागवत]

गंगाको उद्देश्य करके यात्रा करनेका फल

गङ्गामुद्दिश्य यो गच्छेन्नरः प्रयतमानसः।
पदे पदेऽश्वमेधः स्याद्वाजपेयशतं तथा॥
नृत्यन्ति पितरः सर्वे गङ्गामुद्दिश्य गच्छताम्।
पापानि प्रपलायन्ते गर्हितान्यपि दूरतः॥
गङ्गामुद्दिश्य सङ्गच्छन् श्रान्तो यस्य जलं पिबेत्।
कूपवापीतडागानां तस्य भाग्यं महत्तरम्॥

[महादेवजी कहते हैं—] हे नारद! जो विशुद्धात्मा मनुष्य गंगा-स्नानको उद्देश्य करके यात्रा करता है, उसे पग-पगपर अश्वमेध तथा सैकड़ों वाजपेय यज्ञका फल प्राप्त होता है। गंगास्नानके निमित्त जानेवाले मनुष्यके सभी पितरगण प्रसन्न होकर नाचने लगते हैं और उसके महानिन्दनीय पाप भी दूरसे ही भाग जाते हैं। गंगाको उद्देश्य करके जानेवाला थका हुआ मनुष्य जिसके कुएँ, बावली या सरोवरका जल पी लेता है, उस मनुष्यका महान् भाग्य समझना चाहिये। [महाभागवत]

श्रीगंगाजीके दर्शनका फल

गङ्गादर्शनमात्रेण ब्रह्महापि नरः क्षणात्।
मुच्यते घोरपापेभ्यो मुने नास्त्यत्र संशयः॥
दर्शनात्कृतकृत्याश्च गङ्गायाः सर्वदेवताः।
ऋषयश्च महात्मानो मानवानां तु का कथा॥
सम्पर्केणापि यो गङ्गां सम्पश्यति महामते।
न सोऽपि यमदण्ड्यः स्यात्कृतपापसहस्रकः॥

[श्रीमहादेवजी नारदजीसे कहते हैं—] हे मुने! ब्रह्महत्या करनेवाला मनुष्य भी गंगाके दर्शनमात्रसे क्षणभरमें घोर पापोंसे मुक्त हो जाता है, इसमें संशय नहीं है। भगवती गंगाके दर्शनसे सभी देवता, ऋषिगण तथा महात्मा भी कृतकृत्य होते हैं, फिर मनुष्योंका क्या कहना? हे महामते! जो मनुष्य सम्पर्कसे भी भगवती गंगाका दर्शन प्राप्त कर लेता है, हजारों पाप करनेवाला होनेपर भी वह यमदण्डका भागी नहीं होता। [महाभागवत]

दूताः पश्यन्ति ये गङ्गां सम्पर्केणातिपावनीम्।
न ते कदाचिन्मे दण्ड्या अपि पापशतैर्युताः॥

[धर्मराज अपने दूतोंसे कहते हैं—] हे दूतो! जिन्हें दूसरोंके सम्पर्कसे अनायास अतिपावनी भगवती गंगाका दर्शन हो जाता है, वे सैकड़ों पापोंसे युक्त रहनेपर भी मेरे द्वारा कभी दण्डित नहीं किये जाते। [महाभागवत]

वाङ्मनःकर्मजैर्ग्रस्तः पापैरपि पुमानिह।
वीक्ष्य गङ्गां भवेत्पूतो अत्र मे नास्ति संशयः॥

मन, वाणी और क्रियाद्वारा होनेवाले पापोंसे ग्रस्त मनुष्य भी गंगाजीका दर्शन करनेमात्रसे पवित्र हो जाता है, इसमें मुझे संशय नहीं है। [महाभारत]

नारण्यैर्नेष्टविषयैर्न सुतैर्न धनागमैः।
तथा प्रसादो भवति गङ्गां वीक्ष्य यथा भवेत्॥
पूर्णमिन्दुं यथा दृष्ट्वा नृणां दृष्टिः प्रसीदति।
तथा त्रिपथगां दृष्ट्वा नृणां दृष्टिः प्रसीदति॥

गंगाजीके दर्शनसे [गंगाजीमें भक्ति रखनेवाले पुरुषको] जितनी प्रसन्नता होती है, उतनी वनके दर्शनोंसे, अभीष्ट विषयसे, पुत्रोंसे तथा धनकी प्राप्तिसे भी नहीं होती। जैसे पूर्ण चन्द्रमाका दर्शन करके मनुष्योंकी दृष्टि प्रसन्न हो जाती है, वैसे ही त्रिपथगा गंगाका दर्शन करके मनुष्योंके नेत्र आनन्दसे खिल उठते हैं। [महाभारत]

दर्शनात् स्पर्शनात् पानात्तथा गङ्गेति कीर्तनात्।
पुनाति पुण्यपुरुषान् शतशोऽथ सहस्रशः॥

जो मानव गंगाका दर्शन, स्पर्श, जलपान अथवा 'गङ्गा' इस नामका कीर्तन करता है, वह अपनी सैकड़ों-हजारों पीढ़ियोंके पुरुषोंको पवित्र कर देता है। [अग्नि०]

श्रीगंगाजीका दर्शन करानेका फल

इयं गङ्गेति नियतं प्रतिष्ठा गुहस्य रुक्मस्य च गर्भयोषा।
प्रातस्त्रिवर्गा घृतवहा विपाप्मा गङ्गावतीर्णा वियतो विश्वतोया॥

'ये गंगाजी हैं'—ऐसा कहकर जो दूसरे मनुष्योंको उनका दर्शन कराता है, उसके लिये भगवती भागीरथी सुनिश्चित प्रतिष्ठा (अक्षय पद प्रदान करनेवाली) हैं। वे कार्तिकेय और सुवर्णको अपने गर्भमें धारण करनेवाली, पवित्र जलकी धारा बहानेवाली और पाप दूर करनेवाली हैं। वे आकाशसे पृथ्वीपर उतरी हुई हैं। उनका जल सम्पूर्ण विश्वके लिये पीनेयोग्य है। उनमें प्रातःकाल स्नान करनेसे धर्म, अर्थ और काम—तीनों वर्गोंकी सिद्धि होती है। [महाभारत]

श्रीगंगाजीके स्पर्शका फल

गङ्गोर्मिभिरथो दिग्धः पुरुषं पवनो यदा।
स्पृशते सोऽस्य पाप्मानं सद्य एवापकर्षति॥

गंगाकी तरंगमालाओंसे भीगकर बहनेवाली वायु जब मनुष्यके शरीरका स्पर्श करती है, उसी समय वह उसके सारे पापोंको नष्ट कर देती है। [महाभारत]

सप्तावरान् सप्त परान् पितॄंस्तेभ्यश्च ये परे।
पुमांस्तारयते गङ्गां वीक्ष्य स्पृष्ट्वावगाह्य च॥

गंगाजीका दर्शन, उनके जलका स्पर्श तथा उस जलके भीतर स्नान करके मनुष्य सात पीढ़ी पहलेके पूर्वजोंका और सात पीढ़ी आगे होनेवाली संतानोंका तथा इनसे भी ऊपरके पितरों और संतानोंका उद्धार कर देता है। [महाभारत]

श्रीगंगाजीको प्रणाम करनेका फल

आगत्य प्रणमेद्देवीं यस्तु भक्त्या समाहितः।
शरीरं सार्थकं तस्य नृषु जन्म च सार्थकम्॥
धन्याश्च पितरस्तस्य स तु धन्यतमः स्मृतः।
न तस्य विद्यते पापं नापि मृत्युभयं तथा॥
अतुलं लभते सौख्यं परत्र च महामते।
गङ्गायां जायते मृत्युर्गङ्गास्मृतिपुरःसरः॥

जो मनुष्य गंगाजीके पास आ करके भक्तिपरायण होकर गंगादेवीको प्रणाम करता है, उसका शरीर तथा मानवजन्म सार्थक है। उसके पितर धन्य हैं और उसे तो धन्यतम कहा गया है। उसे पाप नहीं लगता और मृत्युका भी भय नहीं रह जाता। महामते! वह मनुष्य परलोकमें अतुलनीय सुख प्राप्त करता है, उसकी गंगामें मृत्यु होती है और आगे भी निरन्तर उसे गंगा-स्मरण बना रहता है। [महाभागवत]

श्रीगंगाजीके तटपर निवासका फल

तिष्ठेद् युगसहस्रं तु पदेनैकेन यः पुमान्।
मासमेकं तु गङ्गायां समौ स्यातां न वा समौ॥
लम्बतेऽवाक्शिरा यस्तु युगानामयुतं पुमान्।
तिष्ठेद् यथेष्टं यश्चापि गङ्गायां स विशिष्यते॥

जो पुरुष एक हजार युगोंतक एक पैरसे खड़ा होकर तपस्या करता है और जो एक मासतक गंगातटपर निवास करता है, वे दोनों समान हो सकते हैं अथवा यह भी सम्भव है कि समान न हों। जो मनुष्य दस हजार युगोंतक नीचे सिर करके वृक्षमें लटका रहे और जो इच्छानुसार गंगाजीके तटपर निवास करे, उन दोनोंमें गंगाजीके तटपर निवास करनेवाला ही श्रेष्ठ है। [महाभारत]

श्रीगंगाजीके सेवनका फल

तपसा ब्रह्मचर्येण यज्ञैस्त्यागेन वा पुनः।
गतिं तां न लभेज्जन्तुर्गङ्गां संसेव्य यां लभेत्॥

गंगाजीका सेवन करनेसे जीव जिस उत्तम गतिको प्राप्त करता है, उसे वह तपस्या, ब्रह्मचर्य, यज्ञ अथवा त्यागसे भी नहीं पा सकता। [महाभारत]

अलङ्कृतास्त्रयो लोकाः पथिभिर्विमलैस्त्रिभिः।
यस्तु तस्या जलं सेवेत् कृतकृत्यः पुमान्भवेत्॥

जिन्होंने तीन निर्मल मार्गोंद्वारा आकाश, पाताल तथा भूतल—इन तीन लोकोंको अलंकृत किया है, उन गंगाजीके जलका जो मनुष्य सेवन करेगा, वह कृतकृत्य हो जायगा। [महाभारत]

श्रीगंगाजीके शरण-ग्रहणका फल

ऋषिष्टुतां विष्णुपदीं पुराणां सुपुण्यतोयां मनसापि लोके।
सर्वात्मना जाह्नवीं ये प्रपन्नास्ते ब्रह्मणः सदनं सम्प्रयाताः॥

ऋषियोंद्वारा जिनकी स्तुति होती है, जो भगवान् विष्णुके चरणोंसे उत्पन्न, अत्यन्त प्राचीन तथा परम पावन जलसे भरी हुई हैं, उन गंगाजीकी जगत्में जो लोग मनके द्वारा भी सब प्रकारसे शरण लेते हैं, वे देहत्यागके पश्चात् ब्रह्मलोकमें जाते हैं। [महाभारत]

अप्रतिष्ठाश्च ये केचिदधर्मशरणाश्च ये।
तेषां प्रतिष्ठा गङ्गेह शरणं शर्म वर्म च॥

जगत्में जिनका कहीं आधार नहीं है तथा जिन्होंने धर्मकी शरण नहीं ली है, उनका आधार और उन्हें शरण देनेवाली श्रीगंगाजी ही हैं। वे उनका कल्याण करनेवाली तथा कवचकी भाँति उन्हें सुरक्षित रखनेवाली हैं। [महाभारत]

गंगाजलके पानका फल

यथा सुराणाममृतं पितॄणां च यथा स्वधा।
सुधा यथा च नागानां तथा गङ्गाजलं नृणाम्॥

जैसे देवताओंको अमृत, पितरोंको स्वधा और नागोंको सुधा तृप्त करती है, उसी प्रकार मनुष्योंके लिये गंगाजल ही पूर्ण तृप्तिका साधन है। [महाभारत]

यस्तु सूर्येण निष्टप्तं गाङ्गेयं पिबते जलम्।
गवां निर्हारनिर्मुक्ताद् यावकात् तद् विशिष्यते॥

जो मनुष्य सूर्यकी किरणोंसे तपे हुए गंगाजलका पान करता है, उसका वह जलपान गायके गोबरसे निकले हुए जौकी लप्सी खानेसे अधिक पवित्रकारक है। [महाभारत]

चान्द्रायणसहस्राच्च गङ्गाम्भःपानमुत्तमम्।
गङ्गां मासं तु संसेव्य सर्वयज्ञफलं लभेत्॥

[अग्निदेव कहते हैं—] एक हजार चान्द्रायणव्रतकी अपेक्षा गंगाजीके जलका पीना उत्तम है। एक मास गंगाजीका सेवन करनेवाला मनुष्य सब यज्ञोंका फल पाता है। [अग्निपुराण]

चिन्तामणिगुणाच्चापि गङ्गायास्तोयबिन्दवः।
विशिष्टा यत्प्रयच्छन्ति भक्तेभ्यो वाञ्छितं फलम्॥
गण्डूषमात्रतो भक्त्या सकृद् गङ्गाम्भसा नरः।
कामधेनुस्तनोद्भूतान् भुङ्क्ते दिव्यरसान्दिवि॥

चिन्तामणिके गुणोंसे भी बढ़कर गुणशाली गंगाजलके बिन्दु हैं, जो भक्तोंके मनोवांछित फलोंको विशेष रूपसे देनेवाले हैं। भक्तिपूर्वक एक कुल्ला गंगाजल पान कर लेनेपर मनुष्य मानो स्वर्गमें स्थित कामधेनुके स्तनोंसे निःसृत दिव्य रसोंका पान करता है। [बृहन्नारदीयपुराण]

सर्वाणि येषां गङ्गायास्तोयैः कृत्यानि सर्वदा।
देहं त्यक्त्वा नरास्ते तु मोदन्ते शिवसन्निधौ॥

जिन मनुष्योंके सब काम गंगाजलद्वारा सम्पन्न होते हैं, वे अपने इस नश्वर शरीरको छोड़नेके बाद शिवके समीप विराजमान होते हैं। [नारदपुराण]

देवाः सोमार्कसंस्थानि यथा शक्रादयो मुखैः।
अमृतान्युपभुञ्जन्ति तथा गङ्गाजलं नराः॥

जिस प्रकार इन्द्रादि प्रमुख देवता सोम तथा सूर्य-मण्डलमें विद्यमान अमृतरसका पान करते हैं, उसी प्रकार भक्त मनुष्य गंगाजलका पान करते हैं। [बृहन्नारदीयपु०]

कन्यादानैश्च विधिवद् भूमिदानैश्च भक्तितः।
अन्नदानैश्च गोदानैः स्वर्णदानादिभिस्तथा॥
रथाश्वगजदानैश्च यत्पुण्यं तु प्रकीर्तितम्।
ततः शतगुणं पुण्यं गङ्गाम्भश्चुलुकाशनात्॥

विधिपूर्वक अनेक कन्यादानोंके करनेसे, भक्तिपूर्वक भूमिदान करनेसे, अनेक बार अन्नदान, गोदान, स्वर्णदान आदि करनेसे तथा रथ-अश्व आदिके दानोंसे जो पुण्य कहा गया है, उससे शतगुणित अधिक पुण्य केवल चुल्लूभर गंगाजल पानसे होता है। [बृहन्नारदीयपुराण]

गंगास्नानका फल

[श्रीमहादेवजी नारदजीसे कहते हैं—] हे मुनिश्रेष्ठ! ब्रह्महत्या करनेवाला, गोवध करनेवाला, सुरापान करनेवाला तथा गुरुपत्नीगामी महापापी भी गंगामें स्नान कर लेनेपर महादेवी गंगाकी कृपासे घोर पापोंसे मुक्त हो जाता है। श्रेष्ठ भक्तिसे हीन मनुष्य भी बिना मन्त्र आदिके ही, ज्ञानपूर्वक अथवा अज्ञानपूर्वक मात्र एक बार गंगास्नान करके मुक्त हो जाता है। हे मुने! गंगातटपर भक्तियुक्त होकर विधिपूर्वक गंगाजलमें स्नान करनेसे मनुष्यको सात जन्मोंमें हो सकनेवाला अनन्त तथा अक्षय पुण्य प्राप्त होता है और उसे विपुल धन तथा परम सुखकी प्राप्ति होती है। वह नरश्रेष्ठ सभी पापोंसे मुक्त होकर परमपदको प्राप्त हो जाता है। यदि मनुष्य गंगाका स्मरण करते हुए अन्यत्र कहीं भी स्नान करता है तो वहाँ भी उसे गंगास्नानसे होनेवाले पुण्यके समान पुण्य प्राप्त होता है। हे मुनिश्रेष्ठ! जो मनुष्य प्रतिदिन प्रातःकाल गंगाके जलमें स्नान करता है, उस पुण्यात्माको साक्षात् दूसरे शिवके समान ही समझना चाहिये। उसके दर्शनसे पापी लोग पापसे मुक्त हो जाते हैं, इसमें सन्देह नहीं है। [महाभागवत]

स्नातानां शुचिभिस्तोयैर्गाङ्गेयैः प्रयतात्मनाम्।
व्युष्टिर्भवति या पुंसां न सा क्रतुशतैरपि॥

गंगाजीके पवित्र जलसे स्नान करके जिनका अन्तः-करण शुद्ध हो गया है, उन पुरुषोंके पुण्यकी जैसी वृद्धि होती है, वैसी सैकड़ों यज्ञ करनेसे भी नहीं हो सकती। [महाभारत]

श्रीगंगाजीकी बालू और मिट्टीके धारणका फल

जाह्नवीपुलिनोत्थाभिः सिकताभिः समुक्षितम्।
आत्मानं मन्यते लोको दिविष्ठमिव शोभितम्॥

गंगाजीके तटसे उड़े हुए बालुकाकणोंसे अभिषिक्त हुए अपने शरीरको ज्ञानी पुरुष स्वर्गलोकमें स्थित हुआ-सा शोभासम्पन्न मानता है। [महाभारत]

जाह्नवीतीरसम्भूतां मृदं मूर्ध्ना बिभर्ति यः।
बिभर्ति रूपं सोऽर्कस्य तमोनाशाय निर्मलम्॥

जो मनुष्य गंगाके तीरकी मिट्टी अपने मस्तकमें लगाता है, वह अज्ञानान्धकारका नाश करनेके लिये सूर्यके समान निर्मल स्वरूप धारण करता है। [महाभारत]

गंगाजलसे तर्पणका फल

य इच्छेत् सफलं जन्म जीवितं श्रुतमेव च।
स पितॄंस्तर्पयेद् गाङ्गमभिगम्य सुरांस्तथा॥

जो अपने जन्म, जीवन और वेदाध्ययनको सफल बनाना चाहता हो, वह गंगाजीके पास जाकर उनके जलसे देवताओं तथा पितरोंका तर्पण करे। [महाभारत]

जो लोग एकाग्रचित्त होकर गंगामें पितरोंका तर्पण करते हैं, उनके पितर निर्विकार ब्रह्मलोक पहुँच जाते हैं। गंगाजल उपलब्ध रहनेपर उसे छोड़कर अन्य जलसे पितरोंका तर्पण नहीं करना चाहिये। यदि कोई अज्ञान-वश ऐसा करता है, तो वह प्रायश्चित्तका भागी होता है। जो समाहित होकर गंगामें पितरोंका तर्पण करता है, उसे ही पुत्र कहा जाता है; अन्यको पुत्र नहीं कहा जाता। मनुष्यको अपने पितरोंकी तृप्तिके लिये गंगातीर्थमें जाकर श्राद्ध तथा तर्पण करना चाहिये अन्यथा वह नरकगामी होता है। गंगाको उद्देश्य करके जाते हुए मनुष्यको देखकर श्राद्धभोगकी इच्छा रखनेवाले उसके पितर प्रसन्न होकर हँसने और नाचने लगते हैं। गंगाके जलमें पकाया हुआ अन्न देवताओंको भी दुर्लभ है। उस अन्नसे श्राद्ध किये जानेपर पितरोंको संतृप्ति होती है। [महाभागवत]

श्रीगंगाजीमें पुरश्चरण, दान, ध्यान, जप, होमादिका फल

गङ्गायां तु पुरश्चर्यां कृत्वा पापविवर्जितः।
सिद्धमन्त्रो महाज्ञानी भवेद्वै साधकोत्तमः॥
दानं ध्यानं जपो होमोऽभ्यर्चनं श्राद्धतर्पणम्।
बहुपुण्यकरं प्रोक्तं गङ्गायां मुनिसत्तम॥

[महादेवजी नारदजीसे कहते हैं—] हे मुनिश्रेष्ठ! उत्तम साधक गंगामें पुरश्चरण करके पापसे रहित होकर मन्त्रसिद्ध तथा महाज्ञानी हो जाता है। गंगाके सान्निध्यमें किये गये दान, ध्यान, जप, होम, पूजन तथा श्राद्ध-तर्पण आदि महान् पुण्य-कारक कहे गये हैं। [महाभागवत]

गङ्गायां यो महादेवं बिल्वपत्रैः प्रपूजयेत्।
स कैवल्यमवाप्नोति कृतपापशतोऽपि चेत्॥

जो व्यक्ति भगवती गंगामें भगवान् शंकरका बिल्वपत्रोंसे पूजन करता है, सैकड़ों पाप करनेवाला होनेपर भी वह मुक्तिको प्राप्त कर लेता है। [महाभागवत]

गङ्गायां धर्मकर्माणि क्रियन्ते यानि कानि च।
अक्षयानि भवन्त्यस्य तानि सर्वाणि जैमिने॥

[महर्षि व्यासजी कहते हैं—] हे जैमिनि! गंगाजीमें जो कोई भी पुण्यकर्म किये जाते हैं, वे सभी अक्षय हो जाते हैं। [पद्मपुराण]

गंगामें देहत्यागका फल

गङ्गायां त्यजतां देहमहमाज्ञावशः स्वयम्।
ते नमस्याः सुरेन्द्राणां दण्डशङ्कास्ति तत्कुतः॥

[धर्मराज अपने दूतोंसे कहते हैं—] गंगामें देहत्याग करनेवाले प्राणियोंकी आज्ञाके मैं स्वयं अधीन हूँ। वे लोग इन्द्रादि देवताओंके लिये भी नमस्कारके योग्य हैं तो फिर मेरे द्वारा उन्हें दण्डित करनेकी शंका ही कहाँ है। [महाभागवत]

अनिच्छयापि गङ्गायां यद्देहपतनं भवेत्।
स विमुक्तोऽखिलैः पापैर्नरो नारायणो भवेत्॥

बिना इच्छाके भी यदि किसी व्यक्तिका गंगाजीमें देहपात हो जाय तो ऐसा मनुष्य सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त होकर नारायण हो जाता है। [पद्मपुराण]

श्रीगंगाजीमें अस्थिपातका फल

यावदस्थि मनुष्यस्य गङ्गातोयेषु तिष्ठति।
तावद्वर्षसहस्राणि स्वर्गलोके महीयते॥

मनुष्यकी हड्डी जितने समयतक गंगाजीके जलमें पड़ी रहती है, उतने हजार वर्षोंतक वह स्वर्गलोकमें प्रतिष्ठित होता है। [महाभारत]

नमामि गङ्गे तव पादपङ्कजम्

कहते हैं कि स्वर्गलोकमें देवगण यह गीत गाते हैं कि वे व्यक्ति धन्य हैं, जो भारतभूमिमें जन्म लेते हैं—

'गायन्ति देवाः किल गीतकानि
धन्यास्तु ते भारतभूमिभागे।'

यह गीत देवतागण क्यों गाते हैं? क्या यह भारतमें जन्म लेनेवालोंकी विशेषता है या इस देशकी? नहीं, यह विशेषता तो भारतभूमिकी है, जिस भूमिपर पतितपावनी, कलिमलहारिणी, जगदुद्धारिणी माँ सुरसरि गंगाका सान्निध्य सबको सुलभतासे प्राप्त होता है।

माँ गंगाका यह सान्निध्य इतना चमत्कारी है कि दर्शन-स्पर्श, स्नान-पान और कीर्तनमात्रसे जन्म-मरणके बन्धनसे तो सदा-सर्वदाके लिये मनुष्यको मुक्त कर ही देता है, उसकी सात पीढ़ियोंको भी पवित्रकर तार देता है—

पुनाति कीर्तिता पापं दृष्टा भद्रं प्रयच्छति।
अवगाढा च पीता च पुनात्यासप्तमं कुलम्॥

(महाभारत, वनपर्व ८५।९३)

'गंगा अपना नाम उच्चारण करनेवालेके पापोंका नाश करती हैं, दर्शन करनेवालोंका कल्याण करती हैं तथा स्नान-पान करनेवालोंकी सात पीढ़ियोंतकको पवित्र करती हैं।'

जिस पतितपावनी गंगाका उद्गम ही सगरपुत्रोंके उद्धारके लिये हुआ, भगीरथकी तपस्या तथा त्रिदेवोंकी कृपासे जो पृथ्वीपर प्रवाहित हुईं और जिस गंगाजलके स्पर्शमात्रसे सगरपुत्र पापमुक्त हुए, वे गंगा स्वयमेव परमतीर्थ हैं—

'सर्वतीर्थमयी गङ्गा सर्वदेवमयो हरिः।'

(नृसिंहपुराण)

गंगामें सभी तीर्थ समाहित हैं। भगवान् हरिमें सम्पूर्ण देवता समाहित हैं। जिस गंगाजलकी एक-एक बूँदमें और तरल तरंगोंके एक-एक शीतल कणमें तीर्थ विद्यमान हों, उसके तीर्थत्वका वर्णन शब्दोंमें कहाँतक किया जा सकता है। महाभारतके वनपर्वमें कहा है कि **'न गङ्गासदृशं तीर्थं न देवः केशवात् परः॥'** 'गंगाके समान कोई तीर्थ नहीं है तथा केशवसे परे कोई देव नहीं है।' भगवान् विष्णुके चरणकमलोंसे निःसृत, ब्रह्माके कमण्डलुमें समाहित, भगवान् शंकरकी जटाओंमें विलीन तथा भगीरथके अथक प्रयासोंसे प्राप्त चिन्तामणिके सदृश लोकपावनी भगवती गंगाका सेवन क्षणभरके लिये भी जो प्राप्त कर ले, वह धन्य है।

गंगाजीका प्रादुर्भाव

अपने शास्त्रोंमें गंगाजीके प्रादुर्भावकी विभिन्न कथाएँ प्राप्त होती हैं। श्रीमद्भागवत एवं अन्य पुराणोंके अनुसार यह कथा है कि प्रह्लादके पौत्र दैत्योंके राजा बलिने त्रैलोक्यपर विजय प्राप्त करनेके अनन्तर श्रीशुक्राचार्यजीके आचार्यत्वमें महायज्ञका आयोजन किया। इन्द्रादि देवता दैत्योंसे पराभूत होकर अत्यन्त त्रस्त थे। परमात्म-प्रभु भगवान् विष्णु वामनरूप धारणकर यज्ञमें पधारे और उन्होंने बलिसे तीन पग धरतीकी याचना की। बलिने वामनभगवान्का अत्यधिक स्वागत किया और शुक्राचार्यके मना करनेपर भी तत्काल तीन पग भूमि देनेका संकल्प कर लिया। वामनभगवान्ने एक पगसे भूलोक माप लिया तथा दूसरे पगसे स्वर्गलोक (देवलोक) नापने लगे। उसी समय ब्रह्माजीने भगवान्के चरण-कमलकी पाद्य, अर्घ्य आदिसे पूजा की तथा चरणकमलका

प्रक्षालनकर उस जलको अपने कमण्डलुमें भर लिया। यही जल ब्रह्माके कमण्डलुसे निकलकर गंगाजलके रूपमें भूतभावन भगवान् सदाशिवकी जटाओंमें समाहित हो गया। इस प्रकार भगवती गंगा ब्रह्मा-विष्णु-महेश—इन तीनों देवताओंकी प्रिया हैं, इनकी शक्तिसे समन्वित हैं।

भगवान् विष्णुके चरणोंसे निःसृत होनेके कारण भगवती गंगाको 'विष्णुपदी' कहते हैं।

गर्गसंहितामें गंगाजीकी एक दूसरी कथा भी है—एक अत्यन्त सुन्दर गन्धर्वनगर था। एक बार देवर्षि नारद अपनी वीणा बजाते हुए घूमते-फिरते उस गन्धर्व-नगरमें पहुँच गये। नगरकी सुन्दरता देखकर वे चमत्कृत थे। उस नगरमें जितने गन्धर्व थे, वे बहुत सुन्दर थे, परंतु सबके सब विकलांग थे। किसीका हाथ टूटा था, किसीका पैर टूटा था, किसीकी एक आँख फूटी थी। नारदजी यह सब देखकर अत्यधिक आश्चर्यचकित थे। वे इस प्रकारकी विकलांगताका कारण ढूँढ़नेकी चेष्टा करने लगे, पर वे जिससे भी पूछते, वह उनकी बातका उत्तर न देकर उनकी उपेक्षा करता था। एक वृद्ध गन्धर्वसे विशेष अनुनय-विनयकर इसका कारण पूछा तो वह वृद्ध द्रवीभूत होकर बोला कि कुछ समय पूर्व नारद नामका एक साधु वीणा लेकर इस नगरमें आया था। वीणावादनकी अनभिज्ञता होते हुए भी उसने यहाँ वीणा बजायी। उसका असंगत वीणावादन सुनकर वीणा-वादिनी भगवती शारदाने क्रोधवश इस गन्धर्वनगरके सभी जीवोंको विकलांग बना दिया। तबसे उस नारदका पता नहीं है। यह घटना सुनकर नारदजी अत्यन्त द्रवित हो गये, उन्होंने उस वृद्ध गन्धर्वसे पूछा—'अब इस गलतीके सुधारका उपाय क्या है?' उस वृद्धने कहा कि इसका उपाय एक ही है कि नारदजी वीणावादनकी शिक्षा ग्रहणकर यहाँ आयें और सुसंगतरूपसे वीणावादन करें तो यहाँकी विकलांगता दूर हो सकती है। नारदजी इस कार्यको करनेका निश्चयकर सदाशिव भगवान् शंकरके पास गये तथा उनको सारी घटना सुनाकर उपाय पूछा। शंकरभगवान्‌ने कहा कि संगीतकी शिक्षा वीणावादिनी भगवती शारदासे लेनेपर यह कार्य पूर्ण हो सकता है। नारदजीने भगवती शारदासे प्रार्थनाकर संगीतकी शिक्षा ग्रहण की। संगीतकलामें पारंगत हो जानेपर वे इसकी परीक्षाके लिये भगवान् विष्णुके पास गये और उनके समक्ष वीणावादन किया। देवर्षि नारदके वीणावादन और संगीतलहरीको सुनकर भगवान् विष्णु द्रवीभूत होकर जलरूपमें परिणत हो गये, जिसे तत्काल ब्रह्माजीने अपने कमण्डलुमें भर लिया। इस प्रकार गंगा भगवान् विष्णुके द्रवीभूत होनेके कारण ब्रह्मद्रवके रूपमें प्रकट हुईं और इसी नामसे प्रसिद्ध हुईं।

ब्रह्मद्रवकी और अन्य कथाएँ भी हैं, बृहद्धर्मपुराणके अनुसार भगवान् विष्णु शिवजीके ताण्डव नृत्य एवं सामगानसे आनन्दमग्नावस्थामें जलमय हो गये। उनके दाहिने पैरके अँगूठेसे जलधार बह निकली। जव ब्रह्माजीने यह देखा तो उन्होंने वह जल कमण्डलुमें भर लिया। वास्तवमें ये सब कथाएँ तो गंगाजीके स्वरूपकी हैं।

भूलोकमें भगवती गंगाके अवतरणकी एक विशेष कथा है। सूर्यवंशमें जहाँ मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् रामने जन्म लिया था, उनके पूर्वज थे महाराज सगर। वे चक्रवर्ती सम्राट् थे, उनकी केशिनी और सुमति नामकी दो रानियाँ थीं। केशिनीके पुत्रका नाम असमंजस था और सुमतिके साठ हजार पुत्र हुए। ये सभी उद्दण्ड और दुष्ट प्रकृतिके थे। असमंजसके एक पुत्रका नाम अंशुमान् था, यह अत्यन्त धार्मिक एवं देव-गुरुपूजक था। पुत्रोंसे दुखी होकर महाराज सगरने अपने पौत्र अंशुमान्‌को अपना उत्तराधिकारी बनाया।

एक बार महाराज सगरने अश्वमेधयज्ञका अनुष्ठान किया, उसके लिये घोड़ा छोड़ा, इन्द्रने अश्वमेधयज्ञके उस घोड़ेको चुराकर पातालमें ले जाकर कपिलमुनिके आश्रममें बाँध दिया। ध्यानावस्थित मुनि इससे अनभिज्ञ थे। सगरके साठ हजार अहंकारी पुत्रोंने पृथ्वीका कोना-कोना छान मारा, परंतु वे घोड़ेको न पा सके। अन्तमें वे खोजते-खोजते कपिलमुनिके आश्रममें जा पहुँचे। वहाँ घोड़ा बँधा देखकर वे क्रोधित हो कपिलमुनिको मारने दौड़े। तपस्यामें

बाधा पड़नेपर मुनिने अपनी आँखें खोलीं, उनके तेजसे सगरके साठ हजार पुत्र तत्काल भस्म हो गये।

गरुड़के द्वारा इस घटनाकी जानकारी मिलनेपर अंशुमान् कपिलमुनिके आश्रममें आये तथा उनकी स्तुति की। उनकी विनयसे प्रसन्न होकर कपिलमुनि बोले— अंशुमन्! घोड़ा ले जाओ और अपने पितामहका यज्ञ सम्पन्न कराओ। ये सगरपुत्र उद्दण्ड, अहंकारी और अधार्मिक थे। इनकी मुक्ति इनकी राखमें गंगाजीके स्पर्शसे ही हो सकती है। अंशुमान्ने घोड़ा ले जाकर अपने पितामह महाराज सगरका यज्ञ पूरा कराया। महाराज सगरके बाद अंशुमान् राजा बने, परंतु उन्हें अपने चाचाओंकी मुक्तिकी चिन्ता बनी रही। कुछ समय बाद अपने पुत्र दिलीपको राज्य सौंपकर वे वनमें चले गये तथा गंगाजीको स्वर्गसे पृथ्वीपर लानेके लिये तपस्या करने लगे और तपस्यामें ही उनका शरीरान्त हो गया। महाराज दिलीपने भी अपने पुत्र भगीरथको राज्यभार देकर स्वयं पिताके मार्गका अनुसरण किया, परंतु उन्हें भी पूर्ण सफलता नहीं मिली, उनका भी तपस्यामें शरीरान्त हो गया, वे भी गंगाजीको पृथ्वीपर न ला सके। महाराज दिलीपके बाद उनके पुत्र भगीरथने घोर तपस्या की। अन्तमें तीन पीढ़ियोंकी इस तपस्यासे प्रसन्न हो पितामह ब्रह्माने भगीरथको दर्शन देकर वर माँगनेको कहा। भगीरथने ब्रह्माजीसे उनके कमण्डलुमें निवास कर रही गंगाजीको पितरोंकी सद्गतिके लिये भूलोकमें भेजनेका वरदान माँगा। ब्रह्माजीने 'तथास्तु' कहकर स्वीकृति प्रदान कर दी। गंगाजीने भगीरथको पृथ्वीपर आनेका वचन प्रदान करते हुए कहा—'मेरा अत्यन्त तीव्र वेग होनेके कारण मैं पृथ्वीको पारकर पाताललोकमें चली जाऊँगी। भगवान् शिवजी ही मेरा वेग रोकनेकी शक्ति-सामर्थ्य रखते हैं। अत: वेग रोकनेके लिये पहले तुम उन्हें प्रसन्न करो।' गंगाजीकी आज्ञासे महाराज भगीरथने भगवान् शिवको प्रसन्न करनेके लिये घोर तप किया। उनके तपसे प्रसन्न होकर भगवान् शंकरने गंगाजीके वेगको रोक लेनेका भगीरथको आश्वासन दिया। शिवजीसे वरदान पाकर जब भगीरथने गंगाजीसे मृत्युलोकमें पदार्पण करनेकी प्रार्थना की तो गंगाजीने अपने वेगसे भगवान् शिवको भी पाताल ले चलनेका विचार किया। शिवजीने गंगाके अभिप्रायको समझ लिया, अतएव जब गंगाजी अत्यन्त प्रबल वेगसे उनके शीशपर गिरने लगीं तब शिवजीने अपनी योगशक्तिसे वेगको रोककर उन्हें जटाजूटमें विलीन कर लिया। चिरकालतक शिवजी वेगकी शान्तिके निमित्त गंगाजीको जटाजूटमें रोके रहे, पृथ्वीपर एक बूँद भी नहीं गिर सकी। इसी कारण गंगाका नाम 'हरमौलिविहारिणी' पड़ा।

जटाजूटमें ही गंगा-विलयके दृश्यसे व्याकुल होकर राजा भगीरथने पुन: शिवस्तुति की। शिवजी प्रसन्न हो गये और उन्होंने अपनी एक जटासे गंगाको धारारूपमें प्रवाहित कर दिया। इस प्रकार गंगाजी पृथ्वीकी ओर चलीं। अब आगे-आगे राजा भगीरथका रथ और पीछे-पीछे गंगाजी थीं। रास्तेमें पड़नेवाले विशाल वृक्षों और पर्वतोंको अपने प्रबल वेगसे गंगाजी बहाकर ले जा रही थीं। उसी मार्गमें उग्रतपा जह्नुमुनिका आश्रम था। वे यज्ञ कर रहे थे। उनके यज्ञकी सम्पूर्ण सामग्री, कमण्डलु, दण्ड आदि गंगाकी वेगवती धारामें बह चले। यह देख ऋषिने गंगाका पान कर लिया। कुछ दूर जानेपर भगीरथने पीछे मुड़कर देखा तो गंगाजीको न देख वे ऋषिके आश्रमपर आकर उनकी वन्दना करने लगे, प्रसन्न हो ऋषिने गंगाजीको अपनी पुत्री बनाकर दाहिने कानसे निकाल दिया।* इसीलिये देवी गंगा 'जाह्नवी' और 'जह्नुनन्दिनी' नामसे भी जानी जाती हैं। भगीरथकी तपस्यासे अवतरित होनेके कारण उन्हें 'भागीरथी' भी कहा जाता है।

इसके बाद भगवती भागीरथी गंगाजी मार्गको हरा-भरा एवं शस्य-श्यामल करते हुए अनेक तीर्थोंमें होती हुई कपिलमुनिके आश्रममें पहुँचीं, जहाँ महाराजा भगीरथके साठ हजार पूर्वज भस्मकी ढेरी बने पड़े थे।

* कुछ स्थलोंपर जह्नुमुनिद्वारा गंगाको अपनी जाँघसे निकालनेकी कथा भी मिलती है।

गंगाजलके स्पर्शसे वे सभी तत्काल दिव्यरूपधारी हो दिव्य लोकोंको चले गये।

आविर्भावकी तिथि

पुराणोंमें गंगाके आविर्भावकी विभिन्न रूपोंमें जैसे विभिन्न कथाएँ आयी हैं, वैसे ही उनके आविर्भावकी तिथि भी अनेक रूपोंमें मान्य है। मुख्य रूपसे ज्येष्ठमासके शुक्लपक्षकी दशमी तिथि 'गंगादशहरा' कहलाती है। यह धरतीपर गंगावतरणकी मुख्य तिथि मानी जाती है। इस दिन विशेष रूपसे गंगास्नान, गंगा-पूजन, दान तथा स्तोत्रपाठ आदि करनेका विशेष महत्त्व है। '**ॐ नमः शिवायै नारायण्यै दशहरायै गङ्गायै नमः॥**'—इस मन्त्रसे गंगाजीका पूजन एवं प्रार्थना करनी चाहिये। इस तिथिको गंगास्नान एवं गंगाके पूजनसे दस प्रकारके पापों* (तीन कायिक, चार वाचिक तथा तीन मानसिक)-का नाश होता है। इसलिये इसे दशहरा कहा गया है—

ज्येष्ठे मासि सिते पक्षे दशमी हस्तसंयुता।
हरते दश पापानि तस्माद् दशहरा स्मृता॥

(ब्रह्मपुराण)

ज्येष्ठमासके समान ही वैशाख शुक्ल तृतीयाको मध्याह्नकालमें भगवती गंगाका आविर्भाव हिमालयके गृहमें पुत्रीरूपमें हुआ था। इस आशयके वृहद्धर्मपुराणमें निम्न श्लोक प्राप्त होते हैं—

तृतीया नाम वैशाखे शुक्ला नाम्नाक्षया तिथिः।
हिमालयगृहे यत्र गङ्गा जाता चतुर्भुजा॥
वैशाखे मासि शुक्लायां तृतीयायां दिनार्धके।
बभूव देवी सा गङ्गा शुक्ला सत्ययुगाकृतिः॥

(वृहद्धर्मपुराण १५। २२, ४२। ४)

इसके अनुसार वैशाख शुक्ल तृतीया (अक्षय तृतीया) भी गंगाके आविर्भावकी मान्य तिथि है।

वैशाख शुक्ल सप्तमीको जह्नु-सप्तमी भी कहा जाता है, इसी दिन महर्षि जह्नुकी जंघासे भगवती गंगा प्रवाहित हुई थीं, इसलिये वे जह्नुसुता या जाह्नवी नामसे प्रसिद्ध हुईं। ब्रह्मपुराणके अनुसार वैशाख शुक्ल सप्तमीको गंगा स्नान एवं गंगापूजनका विशेष महत्त्व बताया गया है।

वास्तवमें स्वर्गसे धरापर पतितपावनी गंगाके अवतरणकी कथा बड़ी रोमांचकारी है। इस कथाने देशके पूरे जनमानस तथा प्राचीन एवं अर्वाचीन सम्पूर्ण साहित्यको प्रभावित किया है।

सत्साहित्यमें गंगादर्शन

अपौरुषेय वेदोंसे गंगाका बखान प्रारम्भ होता है, आर्ष स्वर मुखरित हो उठते हैं—'**इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमम्**……।' (ऋग्वेद १०। ७५। ५)

इस मन्त्रमें गंगाका नाम सर्वप्रथम दिया गया है। गंगा आदि इन प्रमुख नदियोंके कारण ही प्राचीन भारतको 'सप्त-सिन्धु' कहा गया। पुराणोंमें गंगाके स्वरूपकी गरिमा एवं भव्यताका विशद वर्णन है। अग्निपुराणमें गंगाको स्वर्गदायिनी कहा गया है—'**गङ्गा सर्वत्र नाकदा**।' नारदपुराणमें एक आख्यान मिलता है, जिसके अनुसार भगवती गंगा मुक्तिदायिनी हैं। पद्मपुराण, मार्कण्डेयपुराण एवं श्रीमद्भागवतमें गंगावतरणका वर्णन विस्तारसे प्राप्त होता है। आदिकवि वाल्मीकिने रामायणमें गंगाजीके सौन्दर्यका बड़ा सुन्दर वर्णन किया है, वाल्मीकिने गंगाष्टककी रचना भी की है—

गाङ्गं वारि मनोहारि मुरारिचरणच्युतम्।
त्रिपुरारिशिरश्चारि पापहारि पुनातु माम्॥

इस श्लोकमें गंगामाताको मनोहारी, मुरारि-चरणामृत कहकर वन्दना की गयी है। महाभारतके अनुसार गंगा शापके कारण शान्तनुकी पत्नी बनती हैं। भीष्ममाता गंगा

---

* **अदत्तानामुपादानं हिंसा चैवाविधानतः। परदारोपसेवा च शारीरं त्रिविधं स्मृतम्॥**
पारुष्यमनृतं चैव पैशून्यं चापि सर्वशः। असम्बद्धप्रलापश्च वाङ्मयं स्याच्चतुर्विधम्॥
परद्रव्येष्वभिध्यानं मनसानिष्टचिन्तनम्। वितथाभिनिवेशश्च त्रिविधं कर्म मानसम्॥ (मनु० १२। ७, ६, ५)

अर्थात् बिना दिये हुए दूसरेकी वस्तु लेना, शास्त्रवर्जित हिंसा करना तथा परस्त्रीगमन करना—तीन प्रकारके शारीरिक (कायिक) पाप हैं। कटु बोलना, झूठ बोलना, परोक्षमें किसीका दोष कहना तथा निष्प्रयोजन बातें करना वाचिक पाप हैं और दूसरेके द्रव्यको अन्यायसे लेनेका विचार करना, मनसे दूसरेका अनिष्ट चिन्तन करना तथा नास्तिक बुद्धि रखना मानसिक पाप हैं।

महाभारतमें देवीरूपमें प्रकट होती हैं, वे भीष्मकी रक्षा करती हैं, इसके साथ ही भीष्मप्रतिज्ञाकी ओर इंगित करते हुए भीष्मको कर्तव्य-पथपर अग्रसर रहनेकी सतत प्रेरणा देती हैं। महाभारतके अनुसार गंगासे बढ़कर कोई तीर्थ नहीं है—'**न गङ्गासमं तीर्थम्।**' श्रीमद्भगवद्गीतामें भी भगवान् कृष्णने गंगाजीको अपना स्वरूप बताया है—'**स्रोतसामस्मि जाह्नवी।**'

महाकवि कालिदासका गंगावर्णन तो अद्वितीय है। रघुवंश एवं मेघदूतमें गंगाके मनमोहक तथा सरस चित्र प्रस्तुत किये गये हैं। नैषध, उत्तररामचरित, मुद्राराक्षस आदि प्रसिद्ध संस्कृत काव्य-नाटक ग्रन्थोंमें भी गंगाके सौन्दर्य एवं महिमाका विशद वर्णन है। संस्कृत-साहित्यमें गंगाकी महिमा एवं प्रार्थनाके अनेक स्तोत्र उपलब्ध हैं। पूज्यपाद शंकराचार्यजीने गंगाजीकी प्रसन्नता प्राप्त करनेके लिये कई गंगाष्टकोंकी रचना की और देवी गंगासे प्रसन्नताहेतु प्रार्थना की—'**तरलतरङ्गे देवि गङ्गे प्रसीद।**' पण्डितराज जगन्नाथका पाण्डित्यपूर्ण कवित्व भी गंगाके चरणोंमें गंगालहरीके रूपमें समर्पित है। संस्कृत-साहित्यमें गंगालहरी श्रेष्ठतम रचना होनेके कारण कविकी अमर कृति बन गयी। इसी प्रकार पद्माकरने पण्डितराजकी भाँति ब्रजभाषामें गंगालहरीकी रचना की। महाकवि जयदेव, सूर, तुलसी, रसखान, मतिराम, मीर, शेख, रत्नाकर, भारतेन्दु आदि हिन्दीके श्रेष्ठ कवियोंने अपने काव्योंमें गंगाकी महिमाका विशिष्ट वर्णनकर स्वयंको पवित्र किया। यहाँतक कि मुसलिम कवि अब्दुल रहीम खानखानाने संस्कृतमें गंगास्तोत्रकी रचनाकर गंगाके प्रति अपार श्रद्धाका परिचय दिया है।

मुसलमान कवियोंकी ही नहीं, मुसलिम शासकोंकी भी गंगामें अटूट श्रद्धा रही है। इन लोगोंने भी गंगाजलको अमृत माना है और अपने निजी प्रयोगमें गंगाजलका ही उपयोग किया है।

गंगाजलका वैशिष्ट्य

गंगाजलका यह विशेष गुण है कि यह पर्युषित अर्थात् बासी नहीं होता। इस जलकी विशेषता है कि इसे किसी पात्रमें दीर्घकालतक रखनेपर भी यह विकृत नहीं होता है। इस जलमें रोगाणुओंको नष्ट करनेकी विशिष्ट क्षमता है। निरन्तर इसके पान करते रहने तथा इसके स्वच्छ जलमें स्नान करनेसे कई प्रकारके असाध्य रोग भी ठीक हो जाते हैं। भैषज्य ग्रन्थोंमें गंगाजलके गुणोंको उल्लिखित करते हुए उसे शीतल, सुस्वादु, स्वच्छ, अत्यन्त रुचिकर, पथ्य, पकानेयोग्य, पाचन-शक्ति बढ़ानेवाला, सर्वपापहारी, प्यासको शान्त करनेवाला तथा मोहनाशक, क्षुधा एवं बुद्धिवर्धक बताया गया है।* शरीरके जर्जर तथा व्याधिग्रस्त होनेकी स्थितिमें इस जलकी ओषधिरूपमें मान्यता है—

शरीरे जर्जरीभूते व्याधिग्रस्ते कलेवरे।
औषधं जाह्नवीतोयं वैद्यो नारायणो हरिः॥

अर्थात् गंगाका जल ओषधिस्वरूप तथा साक्षात् नारायण ही वैद्यका रूप हैं।

पतितपावनी गंगा

भवके जीवोंको भवसागरसे पार करनेकी अद्भुत शक्ति भी गंगामें भरी पड़ी है। तापत्रयविनाशिनी गंगा मोक्षदायिनी भी हैं, इनके दर्शन, स्पर्श, पान, नामोच्चारण तथा स्मरणमात्रसे ही प्राणी सर्वपापोंसे तत्काल मुक्त हो जाते हैं। दैहिक, दैविक और भौतिक ताप तत्क्षण उपशमको प्राप्त होते हैं—

दर्शनात् स्पर्शनात् पानात् तथा गङ्गेति कीर्तनात्।
स्मरणादेव गङ्गायाः सद्यः पापात् प्रमुच्यते॥

दुराचार, असत्यभाषण, अभक्ष्य-भक्षण, अस्पृश्य-स्पर्शसे होनेवाले तथा ज्ञाताज्ञात-अवस्थामें किये गये समस्त पातक भी गंगास्नानमात्रसे तत्काल नष्ट हो जाते हैं—

अनाचारोद्भवं पापमवाच्यादिकृतं च यत्।
अभक्ष्यभक्षजं दोषं दोषमस्पर्शजं तथा॥
ज्ञाताज्ञातकृतं नित्यमिन्द्रियैर्जनितं च यत्।
तत्सर्वं नाशमायाति गङ्गास्नानेन तत्क्षणात्॥

(ब्रह्मपुराण)

* शीतं स्वादु स्वच्छमत्यन्तरूच्यं पथ्यं पाक्यं पाचनं पापहारि। तृष्णामोहध्वंसनं दीपनं च प्रज्ञां धत्ते वारि भागीरथीयम्॥

गंगा-सेवनकी शास्त्रीय विधि एवं गंगामें निषिद्ध कर्म

अपने शास्त्रोंमें गंगा-सेवनकी भी विधिका वर्णन है। जो शास्त्रोंकी विधिसे गंगाका सेवन करता है, उसे ही सम्पूर्ण लाभ मिलते हैं।

जो मनुष्य अपनी सद्गति चाहता है, उसे पाप-बुद्धिका आश्रय छोड़कर गंगामें अवगाहन करना चाहिये—

पापबुद्धिं परित्यज्य गङ्गायां लोकमातरि।
स्नानं कुरुत हे लोका यदि सद्गतिमिच्छथ॥

(पद्मपुराण ७।९।१५७)

शास्त्रोंमें एक सिद्धान्त है कि 'देवो भूत्वा देवं यजेत्' 'देवता बनकर ही देवताकी पूजा करनी चाहिये।' इसका तात्पर्य है कि आसुरी-वृत्तियोंसे दूर और दैवीगुणोंसे युक्त होकर जो गंगाका सेवन करता है, उसे ही पूरा लाभ मिलता है। अपने शास्त्रोंमें तो यहाँतक लिखा है कि गंगास्नानके लिये जाते समय असत्य-भाषण, पाखण्ड, संग, कलह, परनिन्दा, लोभ, गर्व, क्रोध और मत्सर आदि मनोमालिन्यका पूर्णरूपसे त्याग करना चाहिये। स्नान करनेके समय यह भावना बननी चाहिये कि हम साक्षात् नारायणके चरण-कमलोंसे निःसृत अमृतमय ब्रह्मद्रवमें अवगाहन कर रहे हैं। इस प्रकारकी निर्मल भावनासे समृद्ध होकर संयत स्नान करनेवाला व्यक्ति गंगामें देहादि भी नहीं मलता, अपने परिधानका जल भी गंगामें नहीं डालता। ऋषि-महर्षियोंने तो स्पष्ट निर्देश किया है कि गंगाके तटको मूत्र, पुरीष, श्लेष्मा, निष्ठीवन, दूषिका, अश्रु अथवा मलसे दूषित करनेवाला पातकी होता है; यहाँतक कि दन्त-धावन तथा वस्त्र-प्रक्षालन आदि भी वर्जित हैं—

मूत्रं वाथ पुरीषं वा गङ्गातीरे करोति यः।
न दृष्टा निष्कृतिस्तस्य कल्पकोटिशतैरपि॥
श्लेष्माणं वापि निष्ठीवं दूषिकां वाऽश्रु वा मलम्।
गङ्गातीरे त्यजेद् यस्तु स नूनं नारकी भवेत्॥
परिधेयाम्बराम्बूनि गङ्गास्रोतसि न त्यजेत्॥
न दन्तधावनं कुर्याद् गङ्गागर्भे विचक्षणः।
कुर्याच्चेन्मोहतः पुण्यं न गङ्गास्नानजं लभेत्॥

(पद्मपुराण ७।८।८-९, ७।९।४४-४५)

गंगाजीके सन्निकट पहुँचनेपर स्नानार्थीको अपने मनमें यह भाव बनाना चाहिये—'मैंने जन्म-जन्मान्तरमें जो थोड़े या अधिक पाप किये हैं, वे भगवती गंगाके प्रसादसे निश्चित रूपसे नष्ट हो जायँगे।'

जन्मजन्मार्जितं पापं स्वल्पं वा यदि वा बहु।
गङ्गादेवीप्रसादेन सर्वं मे यास्यति क्षयम्॥

इसके साथ ही गंगामाताका दर्शनकर निम्नोक्त मन्त्रका उच्चारण करना चाहिये—

अद्य मे सफलं जन्म जीवितं च सुजीवितम्।
साक्षाद् ब्रह्मस्वरूपां त्वामपश्यमिति चक्षुषा॥

'हे देवि! आज मेरा जन्म लेना सफल हो गया, मेरा जीवन सार्थक हो गया; क्योंकि मैंने आज ब्रह्मस्वरूपिणी आपका अपने नेत्रोंसे साक्षात् दर्शन कर लिया।' इस प्रकार प्रार्थना करते हुए भक्तिभावसमन्वित होकर भगवती जाह्नवीको भूमिपर दण्डवत् रूपमें प्रणाम करना चाहिये। तदनन्तर गंगास्नानका संकल्प मानसिक अथवा वाचिक रूपसे कर लेना चाहिये। पुनः निम्नरूपमें गंगाजीकी प्रार्थना करे—

विष्णुपादाब्जसम्भूते गङ्गे त्रिपथगामिनि।
ब्रह्मद्रवेति विख्याते पापं मे हर जाह्नवि॥

भगवान् विष्णुके चरणारविन्दसे निःसृत होकर ब्रह्मद्रवके रूपमें विख्यात त्रिपथगामिनी भगवती गंगा मेरे पापोंको हरण करनेकी कृपा करें।

गंगाजलको पैरोंद्वारा स्पर्श करनेकी विवशताके लिये निम्न मन्त्रसे क्षमा-प्रार्थना भी करे—

गङ्गे देवि जगद्धात्रि पादाभ्यां सलिलं तव।
स्पृशामीत्यपराधं मे प्रसन्ना क्षन्तुमर्हसि॥

हे जगद्धात्रि देवि गंगे! मेरे पैरोंसे आपके पावन जलको स्पर्श करनेका जो अपराध हो रहा है, उसे आप प्रसन्नतापूर्वक क्षमा कर दें।

गंगारजका माहात्म्य

गंगाके रज (मिट्टी)-की भी बड़ी महिमा है, इसके प्रयोगसे शरीरके चर्मसम्बन्धी कई रोग समाप्त होते हैं तथा शरीरमें एक प्रकारकी आभा—स्वच्छताका अनुभव होता है। जो मनुष्य गंगाके तीरकी मिट्टी अपने मस्तकपर तिलकके रूपमें लगाता है, वह अज्ञानान्धकारका नाश करनेके लिये सूर्यके समान निर्मल स्वरूप धारण करता है—

जाह्नवीतीरसम्भूतां मृदं मूर्ध्ना बिभर्ति यः।
बिभर्ति रूपं सोऽर्कस्य तमोनाशाय निर्मलम्॥

(महाभारत)

गंगास्नानके पूर्व गंगारजको निम्नोक्त मन्त्रद्वारा प्रार्थना करते हुए अपने माथे तथा शरीरपर लेपनकर स्नान करना चाहिये—

अश्वक्रान्ते रथक्रान्ते विष्णुक्रान्ते वसुन्धरे।
मृत्तिके हर मे पापं यन्मया दुष्कृतं कृतम्॥

गंगास्नानकी विधि

स्नानकी भी बड़ी सूक्ष्म विधि है। स्नान करते समय शरीरको बिना मले मूसलकी तरह गंगामें अवगाहन करे और यह भावना बनाये कि अमृतरूपमें ब्रह्मद्रवके द्वारा परमात्मप्रभुसे साक्षात् हार्दिक सम्मिलन प्राप्त हो रहा है। गंगास्नानके अनन्तर शरीर पोंछना नहीं चाहिये। शरीरसे जो जल गिरता है, वह अन्य योनियोंमें गये हुए पितरोंको प्राप्त होता है। शरीर पोंछनेपर वे पितर उस जलसे वंचित हो जानेके कारण दुखी होकर शाप देते हैं। अस्वस्थता आदि किसी कारणवश तत्काल शरीर पोंछना आवश्यक हो तो गीले गमछेसे ही पोंछना चाहिये। उससे निचोड़ा हुआ जल भी पितरोंको प्राप्त होता है।

सामान्यतः सब लोगोंको प्रतिदिन गंगास्नानका अवसर प्राप्त नहीं हो पाता। अपने शास्त्रोंमें यह भी व्यवस्था है कि पतितपावनी गंगाका स्मरण करते हुए उनके नामोंका उच्चारण कर लिया जाय तो उसे गंगास्नानका फल प्राप्त हो जाता है। आचारप्रकाश नामक ग्रन्थमें गंगाजीके द्वादश नामोंकी चर्चा की गयी है, जिसका किसी भी स्थानमें स्नानके समय नित्यप्रति स्मरण करनेसे उस जलमें गंगाजीका वास हो जाता है—

नन्दिनी नलिनी सीता मालती च महापगा।
विष्णुपादाब्जसम्भूता गङ्गा त्रिपथगामिनी॥
भागीरथी भोगवती जाह्नवी त्रिदशेश्वरी।
द्वादशैतानि नामानि यत्र यत्र जलाशये॥
स्नानोद्यतः स्मरेन्नित्यं तत्र तत्र वसाम्यहम्॥

(आचारप्रकाश)

गंगातट, गंगागर्भ, गंगातीर तथा गंगाक्षेत्र

गंगाकी तो इतनी महिमा है कि गंगाके सन्निकट शरीर-त्याग होनेपर साक्षात् वैकुण्ठकी प्राप्ति होती है। अपने शास्त्रोंमें गंगाक्षेत्रके चार विभाग माने गये हैं—गंगातट, गंगागर्भ, गंगातीर तथा गंगाक्षेत्र। प्रवाहसे लेकर चार हाथकी भूमि गंगातट होती है। गंगाप्रवाहसे १०० हाथतक गंगागर्भ माना गया है। गंगागर्भसे १५० हाथतक गंगातीर माना जाता है। गंगातीरसे २ कोसतकका स्थान गंगाक्षेत्र कहा गया है।

गंगाक्षेत्रमें करणीय और वर्जित कृत्य

गंगाके सन्निकट ये क्षेत्र विशेष पुण्यप्रद हैं। यहाँ दीक्षा, देवपूजा, गायत्री आदि जप, श्राद्ध, तर्पण, परोपकार, दान, स्तोत्रपाठ आदि पुण्यकर्म विशेष फलदायक हैं। ये धर्म-कर्म अक्षय हो जाते हैं—

गङ्गायां धर्मकर्माणि क्रियन्ते यानि कानि च।
अक्षयानि भवन्त्यस्य तानि सर्वाणि जैमिने॥

(पद्मपुराण)

इसके साथ ही इस क्षेत्रमें हिंसा, द्वेष, कलह, असत्यभाषण, प्रतिग्रह, अशास्त्रीय वचन, परान्न-भोजन, परद्रव्यग्रहण, शोक-मोह, नास्तिकता, भिक्षा, लोभ-लालच, पापवृत्ति, चपलता-परिहास आदि पापकर्मोंका फल भी अत्यन्त भयावह होता है। अतः विशेषकर गंगाके सन्निकट रहनेवाले व्यक्तिको निरन्तर विशेष सावधान रहनेकी आवश्यकता है।

गंगापान तथा नामस्मरणकी विशेष महिमा

जन्म-मरणके बन्धनसे मुक्त होनेके लिये गंगाकी विशेष महिमा है। अन्तिम समयमें गंगाका एक बिन्दु जल पीनेपर भी परमपदकी प्राप्ति होती है—

> गंगाम्भः शीकरं यस्तु सम्मितं सर्षपस्य च।
> प्राप्नोति मृत्युकाले तु स गच्छेत् परमं पदम्॥
>
> (पद्मपुराण क्रियायोगसारखण्ड ७१।७२)

गंगाक्षेत्रमें शरीर-विसर्जनका तो विशेष महत्त्व है ही, परंतु यदि किसी कारणवश गंगाका सान्निध्य न प्राप्त हो सके तो गंगाकी इतनी महिमा है कि सौ योजन दूरसे भी मृत्युशय्यापर पड़ा व्यक्ति पतितपावनी गंगाका स्मरण करते हुए गंगाका नाम उच्चारण कर ले तो वह सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त होकर विष्णुलोकमें पहुँच जाता है—

> गङ्गा गङ्गेति यो ब्रूयाद् योजनानां शतैरपि।
> मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति॥

दूर देशमें मरनेवाले व्यक्तिकी अस्थियोंका विसर्जन गंगामें कर दिया जाय तो उस जीवको उत्तम लोक प्राप्त होते हैं। इसके लिये काशी, प्रयाग और हरिद्वार आदि स्थान विशेष प्रशस्त एवं महत्त्वपूर्ण माने गये हैं।

मनुष्यकी हड्डी जितने समयतक गंगाजीके जलमें पड़ी रहती है, उतने हजार वर्षोंतक वह स्वर्गलोकमें प्रतिष्ठित होता है—

> यावदस्थि मनुष्यस्य गङ्गातोयेषु तिष्ठति।
> तावद्वर्षसहस्राणि स्वर्गलोके महीयते॥
>
> (महाभारत)

गंगाके सन्निकट तर्पण-श्राद्ध करनेपर पितरोंको अत्यधिक प्रसन्नता होती है और वे विशेष रूपमें आशीर्वाद प्रदान करते हैं।

पितरोंका उद्गार

व्यासजी बताते हैं कि गंगास्नानके लिये यात्रा करनेवाले अपने पुत्रको देखकर स्वर्गमें स्थित उसके पितर प्रसन्नतापूर्वक उसकी प्रशंसा करते हुए परस्पर वार्तालाप करते हैं कि हम सबने सद्गति प्राप्तिके लिये पूर्वकालमें जो पुण्यकर्म किये थे, उनके फल निश्चय ही अब अक्षय हो जायँगे; क्योंकि हमारे कुलमें ऐसा पुत्र हुआ है, जो गंगाजीमें परम आस्थावान् है। इस सत्पुत्रके द्वारा गंगाजलसे तर्पित हुए हम पितृगण निश्चय ही उस परम धामको प्राप्त करेंगे, जो देवताओंके लिये भी दुर्लभ है। आज भगवती गंगाकी सन्निधिमें हमारे निमित्त यह सत्पुत्र विविध पदार्थों (दुग्ध, जल, फल, अन्न, वस्त्र, शय्या, ताम्बूल, वाहन आदि)-का दान करेगा, जिससे सर्वदा हमें इन पदार्थोंकी प्राप्ति होती रहेगी। इसी प्रकार अनेक प्रकारके दुःखोंसे संतप्त, नरकमें स्थित पितर भी गंगास्नानके लिये जाते हुए अपने पुत्रको देखकर परस्पर चर्चा करते हैं कि हम लोगोंने नारकीय यातना देनेवाले जो कर्म किये थे, वे सभी आज इस सत्पुत्रके कृपाप्रसादसे विनष्ट हो जायँगे तथा हम सभी पितर नरकोंकी असह्य यातनाओंसे मुक्त होकर पुत्रके अनुभावसे परमगतिको प्राप्त करेंगे।*

गंगाके प्रति हमारा दायित्व

आध्यात्मिकरूपमें गंगा जितनी पवित्र, निर्मल, स्वच्छ और पतितपावनी हैं, अपने ऋषि-महर्षियोंने भौतिकरूपसे भी गंगाको उतना ही स्वच्छ, निर्मल और

---

* स्वर्गस्थाः पितरः सर्वे गच्छन्तं जाह्नवीतटे।
सन्दृश्य हृष्टाः शंसन्ति वदन्त इति जैमिने। यत्पुण्यं कृतमस्माभिः सद्गतिप्राप्तये पुरा॥
भविष्यत्यक्षयं तच्च यतः पुत्रोऽयमीदृशः। अनेन गाङ्गैः सलिलैर्वयं सम्प्रति तर्पिताः॥
यास्यामः परमं धाम दुर्लभं यत्सुरैरपि। गङ्गायां यानि द्रव्याणि दास्यत्यस्माकमात्मजः॥
अस्मभ्यं तानि सर्वाणि भविष्यन्त्यक्षयाणि वै। नरकस्थाश्च पितरः सर्वदुःखसमन्विताः॥
वदन्तीति सुतं दृष्ट्वा गच्छन्तं जाह्नवीतटम्। कृतानि यानि पापानि नरकक्लेशदानि वै॥
यास्यन्ति संक्षयं तानि पुत्रस्याऽपि प्रसादतः। विमुक्ता नरकक्लेशैर्वयं सर्वे सुदुःसहैः॥
अथ पुत्रप्रसादेन यास्यामः परमां गतिम्। (पद्मपुराण)

पवित्र रखनेका कर्तव्य-निर्देश किया है।

आजकल कितने लोग गंगास्नान तो करते हैं, पर गंगाको स्वच्छ, निर्मल और पवित्र रखनेका कर्तव्य-पालन नहीं करते। कितने लोग मल-मूत्र, श्लेष्मा, निष्ठीवनका निक्षेप भी गंगामें करनेमें संकोच नहीं करते। समष्टिरूपसे आज गंगामें प्रदूषणकी एक बहुत बड़ी समस्या है, जिसके लिये जनताके साथ-साथ सरकार भी कम जिम्मेदार नहीं है।

गंगामें प्रदूषणका मूल कारण हमारी भोगवादी प्रवृत्ति ही है। भोगोंके अधिकाधिक साधन जुटाना ही आज मनुष्यका लक्ष्य बन गया है। वास्तविक आनन्दकी स्थिति तो वहाँ है, जहाँ हम सुख-शान्ति और समृद्धिको प्राप्त करते हुए सन्तोषकी ओर बढ़ते हैं। पर आज तो मानव क्षणिक समृद्धिके लिये अपने सुख और शान्तिका बलिदान कर देता है। इसी रूपमें अपने तुच्छ स्वार्थकी पूर्तिके लिये मानव अमृतरूप गंगाजलपर कृत्रिम प्रहार करनेमें संकोच नहीं करता। औद्योगिक संस्थानों एवं सरकारद्वारा गंगाकी नैसर्गिक धाराको नहर और बाँध बाँधकर मोड़नेका प्रयास किया जाता है। दूसरी तरफ शहरोंका सीवर, गन्दे नाले और उद्योगोंसे निकलनेवाले घातक रसायन सम्मिलित रूपसे उनके अस्तित्वको मिटानेके लिये तत्पर हैं।

यद्यपि वर्तमान सरकार गंगाके प्रदूषणके निवारणके लिये प्रयासरत है और इसके लिये योजनाएँ भी बनायी जा रही हैं, परंतु यह कार्य कबतक पूरा होगा और सरकारको इसमें कितनी सफलता मिलेगी—यह कहा नहीं जा सकता। सरकारको पिछली योजनाओंमें हुई भूलोंसे सीख लेते हुए पर्यावरणविदों, गंगासंरक्षणके कार्यसे जुड़े व्यक्तियों तथा संगठनोंसे व्यापक विचार-विमर्श करते हुए व्यावहारिक योजनाएँ बनानी चाहिये। इसके साथ ही देशकी जनताको अपना कर्तव्य समझकर गंगाको मातृवत् समादर देते हुए उन्हें संरक्षित तथा प्रदूषणमुक्त करनेहेतु पूर्ण सहयोग करना चाहिये।

पॉलीथीन, प्लास्टिकके दोने-प्लेटें, विभिन्न संस्कारोंके निमित्तसे उतारे गये केश, पुष्प, निष्प्रयोज्य पदार्थ, विभिन्न उत्सवोंके समय निर्मित होनेवाली प्लास्टर ऑफ पेरिस एवं केमिकल रंगोंसे रँगी मूर्तियोंका विसर्जन, अधजले शवोंका प्रवाह तथा डीजल इंजनसे चलनेवाली मोटर बोटोंका परिचालन पूर्णतः प्रतिबन्धित करते हुए; कपड़े धोने तथा स्नानके दौरान शैम्पू, साबुन, तेल-उबटन आदिके प्रयोगपर रोक लगायी जाय। गंगाके समीपवर्ती क्षेत्रोंमें स्थापित फैक्ट्रियोंको यथासम्भव अन्यत्र स्थापित किया जाय। सीवर, गन्दे नालों तथा कारखानोंसे निकलनेवाले हानिकारक द्रव्यको किसी भी स्थितिमें गंगामें न गिरने दिया जाय। औसत जल-प्रवाह निरन्तर प्रवाहित होते रहनेकी व्यवस्था सुनिश्चित की जाय। 'गंगा प्रिजरवेशन एक्ट' सरकारद्वारा बनाया जाय तथा सख्तीसे उसका पालन कराया जाय। इसके साथ ही गंगामें किसी भी प्रकारके प्रदूषण फैलानेको अक्षम्य अपराधकी श्रेणीमें सम्मलित करते हुए, ऐसे कृत्योंमें संलिप्त पाये जानेपर कठोर दण्डके प्रावधान हों।

बिजली-उत्पादनके लिये गंगामें बड़े-बड़े बाँध बाँधना सर्वथा अनुचित है। इन बाँधोंके स्थानपर वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों—सौर ऊर्जा, बायो गैस, पवन ऊर्जाको प्राप्त करनेके लिये अनुसन्धान होना चाहिये। भारतके अधिकांश हिस्सोंमें पूरे वर्ष सूर्यदेवकी कृपा बनी रहती है, जिससे यहाँ सौर ऊर्जाको उत्पादित किये जानेकी बहुत गुंजाइश है। गंगाके अस्तित्वकी उपेक्षाकर केवल विद्युत्-उत्पादनकी ओर ध्यान केन्द्रित करना कितना उचित है? वास्तविक तथ्य तो यह है कि विद्युत्के लिये अन्य विकल्प हो सकते हैं, पर गंगाका कोई विकल्प नहीं हो सकता।

गंगाजलका वैज्ञानिक परीक्षण

भौतिक विज्ञानके परीक्षणसे भी यह बात सिद्ध हो चुकी है कि गंगाजल एक अद्भुत वस्तु है और शुद्ध गंगाजल पाना बहुत बड़ा सौभाग्य है। अभी कुछ समय पूर्व ही 'यूनेस्को' से आये एक वैज्ञानिक दलने हरिद्वारके निकट गंगाके पानीका परीक्षण करके यह बताया कि जिस स्थानमें पानीकी धारामें मुर्दे, हड्डियाँ आदि दूषित वस्तुएँ बह रही हैं, वहीं कुछ फुट नीचेका गंगाजल पूर्ण शुद्ध है। मैकग्रिल यूनीवर्सिटीके एक प्रोफेसरने प्रायः तीन दशक पूर्व अपने

प्रयोगोंसे यह बताया था कि गंगाजलमें हैजेके कीटाणु ३-४ घंटेमें स्वत: समाप्त हो जाते हैं। इसी तरह ब्रिटिश मासिक पत्रिका 'गुडहेल्थ' ने लिखा है कि टेम्स नदीका रखा हुआ पानी दूषित हो गया, पर गंगाजल वैसा ही ताजा निकला। एक यूरोपियन फिजीशियन हाकिंसने गंगाके पानीमें अनेक दोषनाशक तत्त्वोंकी विवेचना की है तथा यह प्रमाणित किया है कि गंगामें ऐसे बैक्टीरिया और रसायन होते हैं, जो उसमें मिलनेवाले प्रदूषण और रोगकारी तत्त्वोंको व्यर्थ कर देते हैं। इसमें पर्याप्त आक्सीजन भी है। जो व्यक्ति प्रतिदिन नियमपूर्वक गंगास्नान करता है, वह प्राय: कभी अस्वस्थ नहीं होता। यह एक अनुभवकी बात है, जिसका प्रयोग कोई भी करके देख सकता है।

अध्यात्मपथ और गंगा

भौतिक जगत्‌के लिये गंगा एक भौतिक साधन हो सकती हैं, पर इस देशकी संततिके लिये ये एक महान् आध्यात्मिक साधन हैं। गंगापर आश्रित मनुष्य केवल भौतिक रह ही नहीं सकता। उसकी बुद्धि, विचार, विवेक ऊर्ध्वगामी बनेंगे। उसमें वैश्विक भावना प्रविष्ट होगी। गंगोदक-सेवनसे उसकी भावनाएँ प्रासादिक बनेंगी। इसलिये कोटि-कोटि भारतीयोंके लिये गंगा माता हैं, धरित्रीके समान पोषक और अपकर्मोंसे ऊपर उठानेवाली एवं परमेश्वररूपमें कैवल्य एवं मोक्षप्रदात्री भी हैं।

सन्तप्रवर गोस्वामी तुलसीदासजीने कहा है कि माँ गंगामें ही यह क्षमता है, जो सबका हित करती हैं। इसीलिये गोस्वामीजी महाराजने सबका हित करनेवाली रामकथाकी सुरसरि भगवती भागीरथीसे ही उपमा प्रदान की—*'सुरसरि सम सब कहँ हित होई।'*

अपने शास्त्रोंमें गंगाको विष्णुका अमृतद्रव और शिवकी साक्षात् तोयरूपा मूर्ति बताया गया है—

ममैव सा परा मूर्तिस्तोयरूपा शिवात्मिका।
ब्रह्माण्डानामनेकेषामाधारः प्रकृतिः परा॥
(स्क०पु० ४।२७।७)

गंगाको कई नामोंसे पुकारा जाता है। ये विष्णुके चरणसे निकली हैं इसलिये 'विष्णुपदी', भगीरथकी तपस्यासे उतरी हैं इसलिये 'भागीरथी', जह्नुकी कृपासे मुक्त हुई हैं इसलिये 'जाह्नवी' और पृथ्वीपर उतरी हैं इसलिये 'गंगा' कहलाती हैं। महाभारतके वनपर्वमें कहा गया है कि गंगाके सात प्रकार हैं—'एषा गङ्गा सप्तविधा'। मत्स्यपुराण और वायुपुराणमें इनकी सात धाराएँ बतायी गयी हैं। वाल्मीकिरामायणमें इन्हें स्वर्ग, मर्त्य और पाताल तीनों लोकोंमें बहनेवाली होनेके कारण 'त्रिपथगा' और विष्णुधर्मोत्तरपुराणमें 'त्रैलोक्यव्यापिनी' कहा गया है। इसी प्रकार विष्णुके चरणसे निकलने, ब्रह्माके कमण्डलुमें रहने और शिवकी जटामें प्रवाहित होनेसे ये गंगा 'त्रिपथगा' हुईं, इसीलिये इनका नाम 'सुरसरि' हुआ।

हम भारतवासियोंका यह पुनीत कर्तव्य है कि आध्यात्मिकरूपसे परमपवित्र, पतितपावनी, कलिमलहारिणी, जगदुद्धारिणी माँ गंगाके चरणकमलोंपर श्रद्धावनत होकर अपने प्रमाद और त्रुटियोंके लिये क्षमायाचना करते हुए, भविष्यमें गंगाको स्थूल-प्रदूषणसे मुक्त करनेके लिये पूर्ण कटिबद्ध हो जायँ। समष्टिरूपमें इसके लिये एक भावनात्मक आन्दोलन भी चलाना चाहिये। किसी भाँतिकी गन्दगी किसी तरहसे भी गंगामें प्रवाहित न हो सके, इसके लिये पूर्ण प्रयत्नशील होना चाहिये। आज देशके प्रत्येक नागरिक, समाज और सरकारका यह उत्तरदायित्व है कि जलको प्रदूषित न होने दें, ताकि भविष्यमें हम स्वच्छ गंगाजलके लिये कहीं तरस न जायँ। तभी इसका समाधान हो सकेगा।

अन्तमें हम माँ गंगासे यह प्रार्थना करते हैं कि वे हमारे पापोंका विनाशकर हमें शक्ति और प्रेरणा प्रदान करें—

विष्णुपादाब्जसम्भूते गङ्गे त्रिपथगामिनि।
ब्रह्मद्रवेति विख्याते पापं मे हर जाह्नवि॥

माँ गंगे! भगवान् विष्णुके चरणोंसे उद्भूत होनेके कारण आप अत्यन्त पवित्र हैं, तीनों लोकोंमें गमन करनेके कारण त्रिपथगामिनी कहलाती हैं; साथ ही ब्रह्मद्रवके नामसे भी विख्यात हैं। अत: हे माँ! हमारे सम्पूर्ण पापोंका विनाशकर रक्षा करें।

—राधेश्याम खेमका

प्रसाद
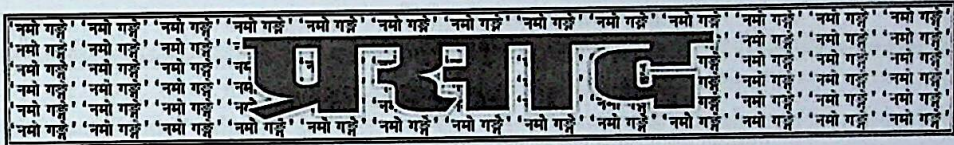
ब्रह्मलीन श्रीउड़ियाबाबाजी महाराजकी गंगा-निष्ठा

✿ गंगाजल, तत्त्ववेत्ता गुरु, गीता, रामायण, अमरबेल, कमलपुष्प और मुरली—ये सात वस्तुएँ भारतवर्षमें ही होती हैं और कहीं नहीं होतीं।

✿ भारतवर्षमें तीन चीजें सबसे श्रेष्ठ हैं—गंगा, गीता, गायत्री।

✿ बहुत-से लोग गंगास्नान करने तो जाते हैं, किंतु वे न तो भगवान्‌का भजन-कीर्तन करते हैं और न सन्त-महात्माओंके दर्शन ही करते हैं। कोई ताश खेलता है, कोई चौपड़ खेलता है और कोई सिगरेट पीता है। ऐसे गंगास्नानसे कोई विशेष लाभ नहीं।

✿ गंगाजीका माहात्म्य बहुत विचित्र है। एक बारकी बात है, गंगाजीने भगीरथसे कहा—'राजन्! मैं पुण्यकी सदा प्यासी रहती हूँ, कलियुगमें पापकी प्रधानता रहेगी तो बताइये मैं क्या करूँगी?' भगीरथने कहा—'तुम्हारे दिव्य तटपर घोर कलियुगमें भी विरक्त, विद्वान्, भक्त और तत्त्वदर्शी विचरण करते रहेंगे। इससे तुम्हारा तट सदैव पवित्र रहेगा। वे तुममें स्नान करेंगे, इससे तुम पवित्र रहोगी।'

✿ प्राचीनकालमें महात्मा लोग सदैव गंगाके किनारे-किनारे विचरण करते थे।

✿ सम्पूर्ण नदियोंका जल गंगाजीमें मिलकर गंगारूप हो जाता है। इसी प्रकार भगवान्‌को निवेदन करनेसे सम्पूर्ण पदार्थ पवित्र हो जाते हैं।

✿ गंगा पापोंका नाश करती हैं।

✿ काशी, वृन्दावन, गंगा, यमुना आदि सब मुक्तिके धाम हैं।

✿ देवता, वेद, गुरु, मन्त्र, तीर्थ, ओषधि और महात्मा—ये सब श्रद्धासे फल देते हैं, तर्कसे नहीं।

✿ श्रद्धापूर्वक विधिवत् तीर्थभ्रमण करनेसे चित्तशुद्धि होती है। तीर्थोंमें कुभावका उदय होनेसे पापका संग्रह होता है।

✿ किसी भी तीर्थमें रहा जाय, किंतु यदि श्रीभगवान्‌का गुणानुवाद और भगवच्चिन्तन न हो तो कल्याण होना असम्भव है।

श्रीगंगाजीकी महिमा

पवित्राणां पवित्रं या मङ्गलानां च मङ्गलम्। महेश्वरशिरोभ्रष्टा सर्वपापहरा शुभा॥
गङ्गा गङ्गेति यो ब्रूयाद् योजनानां शतैरपि। मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति॥
स्नानात् पानाच्च जाह्नव्यां पितॄणां तर्पणात्तथा। महापातकवृन्दानि क्षयं यान्ति दिने दिने॥
तपोभिर्बहुभिर्यज्ञैर्व्रतैर्नानाविधैस्तथा। पुरुदानैर्गतिर्या च गङ्गां संसेव्य तां लभेत्॥
पुनाति कीर्तिता पापं दृष्टा भद्रं प्रयच्छति। अवगाढा च पीता च पुनात्यासप्तमं कुलम्॥

भगवान् शंकरके मस्तकसे होकर निकली हुई गंगा सब पापोंको हरनेवाली और शुभकारिणी हैं। वे पवित्रोंको भी पवित्र करनेवाली और मंगलमय पदार्थोंके लिये भी मंगलकारिणी हैं। जो सैकड़ों योजन दूरसे भी 'गंगा-गंगा' ऐसा कहता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो विष्णुलोकको प्राप्त होता है। गंगाजीमें स्नान, जलका पान और उससे पितरोंका तर्पण करनेसे महापातकोंकी राशिका प्रतिदिन क्षय होता रहता है। तपस्या, बहुत-से यज्ञ, नाना प्रकारके व्रत तथा पुष्कल दान करनेसे जो गति प्राप्त होती है, गंगाजीका सेवन करनेसे मनुष्य उसी गतिको पा लेता है। गंगाजी नाम लेनेमात्रसे पापोंको धो देती हैं, दर्शन करनेपर कल्याण प्रदान करती हैं तथा स्नान करने और जल पीनेपर सात पीढ़ियोंतकको पवित्र कर देती हैं। [पद्मपुराण]

श्रीभागीरथी (गंगा)-स्नान-व्रत

(ब्रह्मलीन जगद्गुरु शंकराचार्य ज्योतिष्पीठाधीश्वर स्वामी श्रीकृष्णबोधाश्रमजी महाराज)

मनुष्योंके वे पद सफल हैं, जो गंगातटाभिमुख रखे जाते हैं। वे श्रोत्र सफल हैं, जो गंगाप्रवाहपातका श्रवण करते हैं। वह जिह्वा सफल है, जो श्रीगंगाके स्वादु जलका पान करती है। वे नेत्र जो श्रीगंगाके चारुतरंगदर्शी हैं, सफल हैं। वह ललाट सफल है, जिसपर श्रीगंगारज शोभित है, वे कर सफल हैं, जिनसे श्रीगंगातटस्थ हो श्रीहरिका पूजन किया जाता है; वह शरीर जो निर्मल गंगाजलमें स्नान करता है, सफल है।

श्रीवेदव्यासजी अपने शिष्य जैमिनिके प्रति कहने लगे—'हे जैमिने! जिस समय कोई पुण्यात्मा श्रीगंगातटपर स्नानके लिये प्रस्तुत होता है तो उसके स्वर्गस्थ पितर प्रफुल्लितहृदय होकर प्रशंसा करते हुए श्लोक पढ़ते हैं, जिसका अर्थ है—अहो! हमने पूर्वमें कोई सद्गति-प्राप्त्यर्थ ऐसा पुण्य किया है कि हमारे वंशमें ऐसा पुत्र हुआ, जो श्रीगंगोदकसे हमको तृप्तकर सुदुर्लभ परमधामकी प्राप्ति करायेगा। यह मेरा बेटा जो द्रव्य हमको संकल्प-पूर्वक प्रदान करेगा, वह सब अक्षय फलप्रद होगा।'

नरकस्थ जो पितर सर्वदुःखसमन्वित हैं, वे श्रीगंगातटाभिमुख अपने वंशजको देखकर यह आशा करते हैं कि हमने नरकक्लेशप्रद जो पाप किये थे, वे इस पुत्रके प्रसादसे क्षय हो जायँगे। अहो, हम दुःसह नरकक्लेशसे आज मुक्त होकर परमगति लाभ करेंगे। जो हतभाग्य श्रीगंगाकी यात्राके निमित्त प्रयाण करके भी मोहवश गृहको लौट आता है, उसके पितर निराश होकर अतिखिन्न मनसे शाप देते हैं।

श्रीगंगादि-तीर्थयात्रामें आमिष, मैथुन, दोला, अश्व, गज, छाता, जूता, असद्भाषण, पाखंड, जनसंसर्ग, द्विर्भोजन, कलह, परनिंदा, लोभ, गर्व, मत्सर, अतिहास्य और शोक त्याज्य हैं। मार्गजनित श्रमोत्पन्न दुःखको हृदयमें न लाये। गृहके शय्या-सुखका स्मरण न करे। भूमिशायी हुआ भी अपनेको पर्यंकशायी-सा अनुभव करे। मार्गमें सर्वपापक्षयकारक श्रीगंगाके दिव्य नाम तथा माहात्म्यका कथन करता हुआ गमन करे। यदि चलता हुआ श्रांत हो तो यह प्रार्थना करे—

गङ्गे देवि जगन्मातर्देहि संदर्शनं मम।

यदि मार्गमें यह भावना न होगी तो पूर्ण फलका भागी नहीं हो सकता। त्याज्य भावना यह है कि 'यहाँ हमारे पर्यंक, पत्नी, सुहृद्गण, गृह, धन-धान्यादि वस्तुओंकी क्या दशा होगी? हम गृहसुख त्यागकर किस संकटमें पड़ गये, न जाने कितने दिनोंमें घर पहुँचेंगे—ऐसी चिंताको त्यागकर श्रीहरिके भक्त-मंडलके साथ यात्रा करता हुआ प्रसन्नचित्तसे भावना करे—

गङ्गे गन्तुं मया तीरे यात्रेयं विहिता तव।
निर्विघ्नां सिद्धिमाप्नोमि त्वत्प्रसादात्सरिद्वरे॥

गमन न अति वेगसे और न अति मंद हो। श्रीगंगा आदि तीर्थयात्रामें अन्य कामासक्त न हो, नहीं तो यात्राका आधा पुण्य नष्ट हो जाता है।

इस प्रकार परम प्रेमनिमग्न हुआ जब श्रीगंगातटपर पहुँचे तब श्रीगंगाके दर्शनसे तृप्त होकर सहर्ष यह भाव प्रकट करे—

अद्य मे सफलं जन्म जीवितं च सुजीवितम्।
साक्षाद् ब्रह्मस्वरूपां त्वामपश्यमिति चक्षुषा॥
देवि त्वद्दर्शनादेव महापातकिनो मम।
विनष्टमभवत्पापं जन्मकोटिसमुद्भवम्॥

तदनंतर साष्टांग दंडवत् प्रणाम करे और प्रवाहके निकट स्थित हो श्रीगंगोदकको भक्तिभावसे मस्तकपर धारण करे। स्नानपूर्व प्रवाहके निकट ही श्रद्धांजलिपुरस्सर प्रेमभावसे यह प्रार्थना करे—

गङ्गे देवि जगद्धात्रि पादाभ्यां सलिलं तव।
स्पृशामीत्यपराधं मे प्रसन्ना क्षन्तुमर्हसि॥
स्वर्गारोहणसोपानं त्वदीयमुदकं शुभे।
अतः स्पृशामि पादाभ्यां गङ्गे देवि नमो नमः॥

तब श्रीगंगे-श्रीगंगे नामामृतका उच्चारण करता हुआ, स्नानार्थ जलमें प्रवेशकर श्रीगंगाकर्दमका यह वाक्य कहता हुआ शरीरपर लेपन करे—

त्वत्कर्दमैरतिस्निग्धैः सर्वपापप्रणाशनैः।
मया संलिप्यते गात्रं मातर्मे हर पातकम्॥

तब वक्ष्यमाण मंत्रसे गोता लगाकर स्नान करे—

विष्णुपादाब्जसम्भूते गङ्गे त्रिपथगामिनी।
धर्मद्रवेति विख्याता पापं मे हर जाह्नवि॥
विष्णुपादप्रसूतासि वैष्णवी विष्णुपूजिता।
त्राहि मामेनसस्तस्मादाजन्ममरणान्तिकात्॥
श्रद्धया धर्मसम्पूर्णे श्रीमता रजसा च ते।
अमृतेन महादेवि भागीरथि पुनीहि माम्॥
त्रिभिः श्लोकवरैरेभिर्यैः स्नायाजाह्नवीजले।
जन्मकोटिकृतात्पापान्मुच्यते नात्र संशयः॥

यथेष्ट स्नानकर बाहर निकलकर धौतवस्त्र इतनी दूर उतारे कि निचोड़ा हुआ जल स्रोतमें न जाय, गंगाकी मिट्टीसे अंगोंपर तिलक धारण करे, संध्या-वंदन-गायत्रीजप करके शास्त्रोक्त विधिसे तर्पण करे।

गाङ्गैयैरुदकैर्यस्तु कुरुते पितृतर्पणम्।
पितरस्तस्य तृप्यन्ति वर्षकोटिशतावधि॥
गङ्गायां कुरुते यस्तु पितृश्राद्धं द्विजोत्तम।
पितरस्तस्य तिष्ठन्ति सन्तुष्टास्त्रिदशालयम्॥

यथाशक्ति दान दे। निश्चिन्त मनसे श्रीगंगाजीका पूजन करे। श्रीसदाशिवोपदिष्ट श्रीगंगाजीका जप तथा षोडशोपचारविधिसे पूजनके लिये यह मूल मंत्र है—

ॐ नमो गङ्गायै विश्वरूपिण्यै नारायण्यै नमो नमः।

श्रीगंगाजीका प्रेमपूर्वक पूजन तथा मूलमंत्र जपकर दिव्यस्तोत्रद्वारा स्तुति करे। दिवस व्यतीत होनेपर गंगातटसे दूर स्थित होकर रात्रिमें सहर्ष जागरण करे। यदि निराहार रहनेकी शक्ति न हो तो एक समय पयोव्रत फलाहार सेवन करे। अन्नका और द्विर्भोजनका परित्याग तो अवश्य ही करे।

प्रात:काल उसी प्रकार शौच, स्नान, संध्या, तर्पण, पूजनसे निवृत्त होकर तीर्थपुरोहितको भोजन तथा दक्षिणासे संतुष्ट करके आशीर्वाद ग्रहण करे। श्रीगंगाजीसे बद्धांजलि-पुरस्सर यह प्रार्थना करे—

अर्चनं जागरं चैव यत्कृतं पुरतस्तव।
अच्छिद्रमस्तु तत्सर्वं त्वत्प्रसादात्सरिद्वरे॥

इस प्रकार जो श्रद्धालु एक बार भी श्रीगंगाजीमें स्नान करता है, वह श्रीविष्णुलोकमें रहकर परम ज्ञान प्राप्तकर कैवल्यपदमें प्रवेश करता है।

तीर्थस्नायीके निमित्त विशेष वक्तव्य

तीर्थप्रवाहसे चार हस्त भूमिके अधिष्ठातृदेव नारायण हैं, अन्य कोई नहीं। अतः उनके साक्षित्वमें कंठगत प्राण होनेपर भी प्रतिग्रह न ग्रहण करे। भाद्रपदमासमें शुक्ल चतुर्दशीके दिन तीर्थका जल यावत्पर्यंत भूमिको आवृत करता है, वह गर्भ माना जाता है। किसी आचार्यका यह भी मत है कि १५० हाथ भूमितक गर्भ है, उसके बाद तीर मानना चाहिये। तीरसे दो-दो कोस दोनों ओर क्षेत्र होता है, भूमि त्यागकर क्षेत्रमें वास करना चाहिये। अतः प्रवाहसे १५० हाथ भूमि त्याग करके क्षेत्रमें वास करे। कारण यह है कि जो मनुष्य १५० हाथ तीर्थभूमिके अंतर्गत मल, मूत्र, कफ, थूक, नेत्रका मल, अश्रु, उच्छिष्ट वस्तु त्यागता है, वह निश्चय ही तीर्थके साक्षित्वमें पापयुक्त होकर परलोकमें नरकगामी होता है। श्रीगंगातटस्थ होकर जो मूढ़ पापाचरण करता है, उसका पाप अक्षय हो अन्य तीर्थमें भी शान्त नहीं हो सकता। श्रीगंगागर्भमें दंतधावन न करे, यदि मोहवश ऐसा करता है तो श्रीगंगास्नानजन्य पुण्य नहीं होता। अतः प्रभातमें उठकर दंतधावन, शौचादि क्रिया गंगागर्भसे दूर अन्य स्थलमें करे।

श्रद्धालुजनके लिये उचित है कि श्रीगंगादि तीर्थपर पापाचरणको प्रयत्नपूर्वक त्यागकर मनोवाक्कर्मसे धर्मसंग्रह करे, जिससे ऐहिकामुष्मिक अभ्युदय हो।

[प्रेषक—प्रो० श्रीबिहारीलालजी टांटिया]

महाभाग राजर्षि भगीरथ

(ब्रह्मलीन धर्मसम्राट् स्वामी श्रीकरपात्रीजी महाराज)

एक बारकी बात है, राजर्षि भगीरथने महात्मा त्रितलसे प्रश्न किया—भगवन्! सारशून्य सांसारिक वृत्तिरूप अरण्यमें भ्रमण करते-करते खिन्न हो गया हूँ, इसका अन्त कैसे हो? कृपाकर कहें। महात्मा त्रितलने कहा—सर्वविभेदशून्य, साम्यभावसे विराजमान, पूर्ण ब्रह्म परमात्माके ज्ञेय-बोधसे ही सर्वदु:ख क्षीण होगा और सब ग्रन्थियाँ टूट जायँगी। शुद्ध ज्ञानस्वरूप परमात्मा ही ज्ञेय है। वह सर्वगत, नित्य और आदि-अन्तसे रहित है। भगीरथने कहा—भगवन्! चिन्मय, निर्गुण, निर्मल, शान्त परमात्मा ही सब कुछ है, देहादि इतर पदार्थ कुछ नहीं है—यह मैं जानता हूँ, परंतु स्फुट प्रतिपत्ति नहीं होती। सर्वविक्षेपशून्य विज्ञप्तिमात्रसे कैसे सम्पन्न होऊँ? यह बतलाएँ। त्रितलने राजा भगीरथको एतदर्थ अनासक्ति, एकान्तवास आदि ज्ञान-साधनोंका उपदेश देकर अन्तमें अहंभाव मिटानेके लिये सर्वत्यागका उपदेश किया—राजन्! तीव्र प्रयत्नसे भोगवासना, लज्जादि त्यागकर परम अकिंचन और सर्वैषणाशून्य होकर शत्रुओंके घरमें भिक्षाटन करते हुए राजत्वादि विशेषणोंसे मुक्त होकर, निरहंकार हो अहर्निश ब्रह्माभ्यास करो।

महात्माका उपदेश सुनकर राजाने अग्निष्टोमयज्ञ किया और उसीके व्याजसे सम्पूर्ण राज्यसम्पत्ति लुटा दी। हाथी, घोड़ा, रथ, रत्न—सभी तीन दिनोंमें ही समाप्त कर दिया। राज्य भी सीमावर्ती शत्रुको दे दिया और तृष्णाके समान सब छोड़कर बैठ गये। जब शत्रुने राजमहलपर भी अधिकार करना चाहा, तब उसे भी छोड़ आप गाँवोंमें कहीं दूर भिक्षाचर्या करते हुए ब्रह्माभ्यासमें निमग्न हो गये।

यदृच्छया भ्रमण करते-करते एक बार आप कभी अपने पुरमें भिक्षाके लिये पहुँच गये। वहाँ मन्त्रियों एवं पौरोंने आपको देखा और आदरसे सबने भिक्षा दी। आपने अपने शत्रु राजाके यहाँसे भी भिक्षा ले ली। सब बड़े ही विषादमें थे। भगीरथकी दीनदशा समझकर सभी चिन्तित और दुखी हो रहे थे। शत्रु राजाने कहा—भगवन्! आप कृपाकर अपना राज्य लें, परंतु परमविरक्त भगीरथने भिक्षाके अतिरिक्त कुछ भी नहीं लिया। वे कई दिनोंतक उसी पुरमें रहे, पश्चात् कहीं चले गये।

कहीं उनके गुरु त्रितल मिले। दोनों प्रशान्त भिक्षु ब्रह्मविचारमें परम साम्यभावको प्राप्त हो रहे थे। वे देहधारणको एक विनोदमात्र समझ रहे थे। तपस्या, त्याग और विचारके प्रभावसे सिद्धों और देवताओंने अष्टविध ऐश्वर्य आदि भी अर्पण किया। किंतु जर्जर तृणके समान उन्होंने सबकी उपेक्षा कर दी।

प्रारब्धवशात् वे ही कभी किसी अन्य राज्यमें गये। वहाँका पुत्रहीन राजा मर गया था, मन्त्रियोंने इन्हें उत्तम लक्षणोंसे युक्त देखकर गद्दीपर बिठा दिया। इधर भगीरथके राज्यका अधिकारी राजा भी मर गया। मन्त्रियोंने प्रार्थना करके वह भी राज्य भगीरथको ही अर्पण कर दिया। इस

तरह भगीरथ फिर अखण्ड भूमण्डलके शासक हो गये, परंतु अब उनका राज्य करना केवल लीलामात्र था। अहंकार, मोह आदिकी सत्ता मिट चुकी थी।

पश्चात् पितरोंके उद्धारके लिये पुन: राज्य छोड़कर घोर तपस्या करके ब्रह्मा, शंकर और जह्नुमुनिको प्रसन्न करके उसी तत्त्ववित् राजर्षिने गंगाको भू-मण्डलपर प्रवाहित कराया—यह कथा पुराणोंमें प्रसिद्ध है।

गंगा भारतीय संस्कृतिकी प्रतीक

(योगिराज श्रीदेवराहा बाबाजी महाराज)

गायत्रीकी भाँति गंगाका रहस्य भी बड़ा गम्भीर है। मूल रूपमें गंगा और गायत्री एक ही हैं। जितना क्षेत्र गायत्रीका है, उतना ही गंगाका। इसी भावको स्पष्ट करनेके लिये गंगाकी तीन धाराएँ मानी गयी हैं— पाताल गंगा, भागीरथी गंगा और आकाश गंगा। पृथ्वी तत्त्वसे जो शक्ति प्राप्य है, वह पाताल गंगा है, जलीय तत्त्वसे वही शक्ति भागीरथी है और तेज तत्त्वसे वही आकाश गंगा है। जिस प्रकार गायत्री त्रिपक्ष है, उसी प्रकार गंगा भी त्रिधारा हैं। ऋग्वेदमें 'आप:' को अन्तरिक्षका देवता कहा गया है। अग्नि अथवा तेज तत्त्व जलमें रहनेवाला है। अग्निका जन्म ही जलसे बताया गया है। जलका मूल तत्त्व पार्थिव है, जो 'भेषजमय' है और जिससे मनुष्यको जीविका भी प्राप्त होती है। इस प्रकार 'आप:' के तीन रूप हो जाते हैं। ये ही गंगाके तीन रूप हैं।

यद्यपि वेदोंमें गंगाके अतिरिक्त अन्य नदियोंका भी वर्णन है—जैसे सिन्धु, सरस्वती आदि, किंतु उन्हें संस्कृतिका प्रतीक न मानकर गंगाको ही संस्कृतिका प्रतीक माना जाता है। इसका रहस्य उक्त नदियों और गंगाके उद्‌गम और वेदमें प्राप्त उनके वर्णनसे विदित हो सकता है।

ऋग्वेदके एक मन्त्रमें गंगा तथा अन्य नदियोंका इस प्रकार उल्लेख हुआ है—

इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या।
असिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तयाऽऽर्जीकीये शृणुह्या सुषोमया॥

पुराणोंमें भारतवर्षकी प्रमुख नदियोंका विस्तृत विवेचन मिलता है। प्रत्येक नदीका अपना धार्मिक और सांस्कृतिक महत्त्व है, परंतु गंगाका महत्त्व सर्वव्यापी है। उत्तरसे दक्षिण और पूरबसे पश्चिम—सम्पूर्ण देशमें गंगाका महत्त्व स्वीकार किया जाता है। भारतीय संस्कृतिका सर्वाधिक विवेचन और विश्लेषण महाभारतमें हुआ है। इसीलिये महाभारतको हिन्दू धर्म और संस्कृतिका विश्वकोश कहा जाता है। महाभारतके अनुशासनपर्वके २६वें अध्यायमें भारतवर्षके तीर्थोंका ही अधिक माहात्म्य बताया गया है। २६वें अध्यायमें गंगाकी विशेष रूपसे प्रशंसा की गयी है। वे देश, वे जनपद, वे आश्रम, वे पर्वत वास्तवमें धन्य हैं, जो गंगाके तटवर्ती हैं, गंगाजलकी प्रशंसामें यहाँतक कह दिया गया है कि उसके सेवनसे जन्म-जन्मान्तरके पाप नष्ट हो जाते हैं और यदि संसारमें गंगा न रहे तो जगत्‌का अस्तित्व ही व्यर्थ है—

वर्णाश्रमा यथा सर्वे धर्मज्ञानविवर्जिताः।
क्रतवश्च यथासोमास्तथा गङ्गां विना जगत्॥
यथा हीनं नभोऽर्केण भूः शैलैः खं च वायुना।
तथा देशा दिशश्चैव गङ्गाहीना न संशयः॥
(महा०अनु० २६। ३५-३६)

गंगाके जलके लिये यहाँतक कह दिया गया है कि जिस प्रकार देवताओंके लिये अमृत, पितरोंके लिये स्वधा तथा नागोंके लिये सुधा है, उसी प्रकार मनुष्यके लिये गंगाजल है। गंगातटकी बालूका भी बड़ा महत्त्व है। उसके सेवनसे अनेक रोगोंकी शान्ति होती है। सम्पूर्ण अध्यायमें गंगाका बड़ा सुन्दर और भव्य वर्णन हुआ है। महाभारतमें गंगाको अश्विनी, बृहती, विश्वरूपा कहा गया है, जो सब प्रकारकी ऋद्धि-सिद्धि देनेवाली है। सहस्ररश्मि सूर्यका भी गंगासे सम्बन्ध बताया गया है। गम्भीरतासे विचार किया जाय तो ज्ञात होगा कि सूर्यकी किरणोंको भी वेदमें नदियोंके नामसे अभिहित किया गया है। सूर्यको दस किरणवाला बताया है— 'रश्मिभिर्दशभिः।' सूर्यकी किरणोंमें एक किरणका नाम कपिल है, शेष नौ किरणोंका सम्बन्ध नौ नदियोंसे है। सूर्यकी किरणोंमें सात किरणें पृथ्वीपर व्यक्त होती हैं। वे सात किरणें ही सात नदियाँ हैं। सूर्यकी किरणें त्रिवृत्त कही गयी हैं 'त्रिवृत्तं सप्ततन्तून्।' किरणोंके तीन रूप हैं—अप्, जल और अग्नि। अप् आकाश

तत्त्व है। आकाशमें व्याप्त वायु तत्त्व है। इस वायुके द्वारा अप् तत्त्व तेज रूपमें परिवर्तित होता है और फिर वही तेज जलस्वरूप बन जाता है। इसीलिये गंगाको त्रिपथगा कहा है। गंगाके जितने भी विशेषण हैं, सब सार्थक और वैज्ञानिक हैं। महाभारतमें गंगाको ऊर्जावती और मधुमती कहा गया है। साथ ही यह भी कहा गया है कि गंगाकी ख्याति नक्षत्रलोक, द्युलोक और पृथिवीलोकमें है—

ख्यातिर्यस्याः खं दिवं गां च नित्यं
पुरा दिशो विदिशश्चावतस्थे।

(अनुशा० २६। ८७)

इसी प्रकार गंगाको घृतवहा, विश्वतोया और रुक्मगर्भा कहा गया है। महाभारतकार गंगाकी प्रशंसामें अनेक विशेषणोंका प्रयोग करते हुए नहीं थकते। गंगा तीनों लोकोंकी माता हैं।

जैसे—

उस्रां पुष्टां मिषतीं विश्वतभोज्यामिरावतीं धारिणीं भूधराणाम्।
शिष्टाश्रयाममृतां ब्रह्मकान्तां गङ्गां श्रयेदात्मवान्सिद्धिकामः॥

(अनुशा० २६। ९५)

गंगाकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें पुराणोंमें अनेक कथाएँ आती हैं। सभी कथाओंका प्रतीकात्मक महत्त्व है। ब्राह्मी, नारायणी, वैष्णवी, माहेश्वरी, जाह्नवी, भागीरथी आदि विशेषणोंके अन्तरालमें सृष्टिकी उत्पत्ति और विकासका रहस्य है। ये सब विशेषण गंगाके माध्यमसे भारतीय संस्कृतिके प्रतीक हैं। एक श्लोक कितना सुन्दर है, जिसमें चन्द्र और सूर्य दोनोंका ही सम्बन्ध गंगासे बताया गया है—

नारायणादक्षयात्पूर्वजाता विष्णोः पादाच्छिशुमाराद् ध्रुवाच्च।
सोमात् सूर्यान्मेरुरूपाच्च विष्णोः समागता शिवमूर्ध्नो हिमाद्रिम्॥

विष्णुकी शक्ति सूर्य, चन्द्र आदि विभिन्न देवोंके रूपमें ही तो अभिव्यक्त हुई है। अथर्ववेद कहता है—

यस्मिन् भूमिरन्तरिक्षं द्यौर्यस्मिन्नध्याहिता।
यत्राग्निश्चन्द्रमाः सूर्यो वातस्तिष्ठन्त्यर्पिताः।
स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः॥

(अथर्व० १०। ७। १२)

विष्णुके सम्बन्धसे ही गंगाको विष्णुपदी कहा गया है। अमरकोशमें गंगाके नाम इस प्रकार हैं—

गङ्गा विष्णुपदी जह्नुतनया सुरनिम्नगा।
भागीरथी त्रिपथगा त्रिस्रोता भीष्मसूरपि॥

(अमर० १। १०। ३१)

वेद विश्वका विज्ञान है, मानव शरीर ब्रह्माण्डका लघुतम रूप है और संस्कृति वेदका आचार है। इसीलिये सप्त किरणों, सप्त नदियों और सप्त ऋषियोंकी सत्ता शरीरमें ही बतायी गयी है। यजुर्वेदमें लिखा है—

सप्त ऋषयः प्रतिहिताः शरीरे सप्त रक्षन्ति सदमप्रमादम्।
सप्तापः स्वपतो लोकमीयुस्तत्रो जागृतो अस्वप्नजौ सत्रसदौ च देवौ॥

(यजु० ३४। ५५)

हठयोगमें भी पिंगला नाड़ीको सूर्य नाड़ी तथा गंगा कहा गया है और इड़ा नाड़ीको चन्द्र नाड़ी कहा गया है। पिंगला नाड़ीमें ही प्राणवायुका संचार होता है। प्राणतत्त्व ही गंगातत्त्व है। गंगाके जलमें प्राणतत्त्व विद्यमान होनेके कारण ही वह कभी विकृत नहीं होता और केवल गंगाजलमें ही ऐसी जीवनदायिनी शक्ति है, जो मनुष्यको बहुत दिनोंतक जीवित रख सके। गंगाजलका परीक्षण विज्ञानकी प्रयोगशालाओंमें भी हो चुका है। भारतीय और पाश्चात्य विद्वानोंने गंगाजलके प्राणतत्त्वकी भूरि-भूरि प्रशंसा की है।

उपयोगिताकी दृष्टिसे गंगाका जो महत्त्व है, वह किसीसे छिपा नहीं है। भारतवर्ष कृषिप्रधान देश है और गंगा उसके लिये अमृतस्वरूपा हैं। जिन्होंने गंगाके सम्पूर्ण प्रवाहके तटवर्ती प्रदेशोंको देखा है, वे ही उसके भौतिक और आध्यात्मिक महत्त्वका सही मूल्यांकन कर सकते हैं। गंगाके प्रवाहके समान ही भारतीय संस्कृतिका प्रवाह अजस्र, अबाध और शाश्वत है। [दिव्य दर्शन] [प्रेषक—श्रीमदनजी शर्मा शास्त्री]

स्त्रोतसामस्मि जाह्नवी

(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)

गीतामें भगवान्ने जाह्नवी (गंगा)-को अपना स्वरूप बतलाया है—स्त्रोतसामस्मि जाह्नवी ॥ (गीता १०। ३१)

अर्थात् नदियोंमें मैं श्रीभागीरथी गंगाजी हूँ।

अब प्रश्न यह उठता है नदियोंमें जाह्नवी (गंगा)-को अपना स्वरूप बतलानेका भगवान्का क्या अभिप्राय है? तो जाह्नवी अर्थात् श्रीभागीरथी गंगाजी समस्त नदियोंमें परमश्रेष्ठ हैं; ये श्रीभगवान्के चरणोदकसे उत्पन्न, परम पवित्र हैं।[1] पुराण और इतिहासोंमें इनका बड़ा भारी माहात्म्य बतलाया गया है।

इसके अतिरिक्त यह बात भी है कि एक बार भगवान् विष्णु स्वयं ही द्रवरूप होकर बहने लगे थे और ब्रह्माजीके कमण्डलुमें जाकर गंगारूप हो गये थे। इस प्रकार साक्षात् ब्रह्मद्रव होनेके कारण भी गंगाजीका अत्यन्त माहात्म्य है।[2] इसीलिये भगवान्ने गंगाको अपना स्वरूप बतलाया है।

शास्त्रोंमें गंगा आदि तीर्थोंकी अनेक प्रकारकी महिमा मिलती है। महाभारतमें पुलस्त्य ऋषिने कहा है—

> पुष्करे तु कुरुक्षेत्रे गङ्गायां मगधेषु च।
> स्नात्वा तारयते जन्तुः सप्त सप्तावरांस्तथा॥
> (वनपर्व ८५। ९२)

'पुष्करराज, कुरुक्षेत्र, गंगा और मगधदेशीय तीर्थोंमें स्नान करनेवाला मनुष्य अपनी सात-सात पीढ़ियोंका उद्धार कर देता है।'

> पुनाति कीर्तिता पापं दृष्टा भद्रं प्रयच्छति।
> अवगाढा च पीता च पुनात्यासप्तमं कुलम्॥
> (वनपर्व ८५। ९३)

१-धातुः कमण्डलुजलं तदुरुक्रमस्य पादावनेजनपवित्रतया नरेन्द्र। स्वर्धुन्यभून्नभसि सा पतती निमार्ष्टि लोकत्रयं भगवतो विशदेव कीर्तिः॥ (श्रीमद्भा० ८। २१। ४)

'हे राजन्! वह ब्रह्माजीके कमण्डलुका जल, भगवान्के चरणोंको धोनेसे पवित्रतम होकर स्वर्ग-गंगा (मन्दाकिनी) हो गया। वह गंगा भगवान्की निर्मल कीर्तिके समान आकाशसे पृथ्वीपर गिरकर अबतक तीनों लोकोंको पवित्र कर रही हैं।'

> न ह्येतत्परमाश्चर्यं स्वर्धुन्या यदिहोदितम्। अनन्तचरणाम्भोजप्रसूताया भवच्छिदः॥
> सन्निवेश्य मनो यस्मिञ्छ्रद्धया मुनयोऽमलाः। त्रैगुण्यं दुस्त्यजं हित्वा सद्यो यातास्तदात्मताम्॥
> (श्रीमद्भा० ९। ९। १४-१५)

'जिन अनन्त भगवान्के चरण-कमलोंमें श्रद्धापूर्वक भलीभाँति चित्तको लगाकर निर्मलहृदय मुनिगण तुरंत ही दुस्त्यज त्रिगुणोंके प्रपंचको त्यागकर उनके स्वरूप बन गये हैं, उन्हीं चरण-कमलोंसे उत्पन्न हुई, भव-बन्धनको काटनेवाली भगवती गंगाजीका जो माहात्म्य यहाँ बतलाया गया है, इसमें कोई बड़े आश्चर्यकी बात नहीं है।'

२-जगज्जननी महेश्वरी दक्षकन्या सतीके देहत्याग करनेपर जब भगवान् शिव तप करने लगे, तब देवताओंने जगन्माताकी स्तुति की। महेश्वरी प्रकट हुईं। देवताओंने पुनः शंकरजीको वरण करनेके लिये उनसे प्रार्थना की। देवीने कहा—'मैं दो रूपोंमें सुमेरुकन्या मेनकाके गर्भसे शैलराज हिमालयके घर प्रकट होऊँगी।' तदनन्तर वे पहले गंगारूपमें प्रकट हुईं। देवता उनकी स्तुति करते हुए उन्हें देवलोकमें ले गये। वहाँ वे मूर्तिमती हो शंकरजीके साथ दिव्य कैलासधामको पधार गयीं और ब्रह्माजीकी प्रार्थनापर अन्तर्धानांशसे अर्थात् निराकाररूपसे उनके कमण्डलुमें स्थित हो गयीं (अन्तर्धानांशभागेन स्थिता ब्रह्मकमण्डलौ)। ब्रह्माजी कमण्डलुमें उन्हें ब्रह्मलोक ले गये। तदनन्तर एक बार भगवान् शंकरजी गंगाजीसहित वैकुण्ठमें पधारे। वहाँ भगवान् विष्णुके अनुरोध करनेपर उन्होंने गान किया। वे जो रागिनी गाते, वही मूर्तिमती होकर प्रकट हो जाती। वे 'श्री' रागिनी गाने लगे, तब वे भी प्रकट हो गयीं। उस रागिनीसे मुग्ध होकर रसमय भगवान् नारायण स्वयं रसरूप होकर बह गये। ब्रह्माजीने सोचा—'ब्रह्मसे उत्पन्न संगीत ब्रह्ममय है और स्वयं ब्रह्म हरि भी इस समय द्रवीभूत हो गये हैं; अतएव ब्रह्ममयी गंगाजी इन्हें संवरण कर लें।' यह विचारकर उन्होंने ब्रह्मद्रवसे कमण्डलुका स्पर्श कराया। स्पर्श होते ही सारा जल गंगाजीमें मिल गया और निराकारा गंगाजी जलमयी हो गयीं। ब्रह्माजी फिर ब्रह्मलोकमें चले गये। इसके बाद जब भगवान् विष्णुने वामन-अवतारमें अपने सात्त्विक पादसे समस्त द्युलोकको नाप लिया, तब ब्रह्माजीने कमण्डलुके उसी जलसे भगवच्चरणको स्नान कराया। कमण्डलुका जल प्रदान करते ही वह चरण वहीं स्थिर हो गया और भगवान्के अन्तर्धान होनेपर भी उनका दिव्यचरण वहीं स्वर्ग-गंगाके साथ रह गया। उसीसे उत्पन्न गंगाजीको महान् तप करके भगीरथजी अपने पूर्वपुरुषोंका उद्धार करनेके लिये इस लोकमें लाये। यहाँ भी श्रीशंकरजीने ही उनको मस्तकमें धारण किया। गंगाजीके माहात्म्यकी यह बड़ी ही सुन्दर, उपदेशप्रद और विचित्र कथा है, इसे विस्तारपूर्वक बृहद्धर्मपुराण मध्य खण्डके बारहवें अध्यायसे अट्ठाईसवें अध्यायतक पढ़ना चाहिये।

'गंगा अपना नाम उच्चारण करनेवालेके पापोंका नाश करती है, दर्शन करनेवालेका कल्याण करती है और स्नान-पान करनेवालेकी सात पीढ़ियोंतकको पवित्र करती है।'

ऐसे-ऐसे वचनोंको लोग अर्थवाद और रोचक मानने लगते हैं, किंतु इनको रोचक एवं अर्थवाद न मानकर यथार्थ ही समझना चाहिये। इनका फल यदि पूरा देखनेमें न आता हो तो उसका कारण हमारे पूर्वसंचित पाप, वर्तमान नास्तिक वातावरण है।

अतएव कुसंगसे बचकर तीर्थोंमें श्रद्धा-प्रेम रखते हुए सावधानीके साथ उपर्युक्त नियमोंका भलीभाँति पालन करके तीर्थोंसे लाभ उठाना चाहिये। यदि इन नियमोंके पालनमें कहीं कुछ कमी भी रह जाय तो इतना हर्ज नहीं, परंतु चलते-फिरते, उठते-बैठते, खाते-पीते, सोते-जागते, भगवान्‌के नामका जप तथा गुण, प्रभाव और लीलाके सहित उनके स्वरूपका ध्यान तो सदा-सर्वदा निरन्तर ही करनेकी चेष्टा करनी चाहिये।

गाङ्गं पुनातु सततम्

(स्वामी श्रीओंकारानन्दजी महाराज, आदिबदरी)

भस्मको मानवरूपमें परिवर्तित कर देनेवाली माँ गंगा! नवतिसहस्र (नब्बे हजार) वर्षोंसे भी अधिककी चार पीढ़ियोंके पुरुषार्थका अद्भुत उपादान भगवती गंगाके रूपमें इस भारत-भूमिको प्राप्त हुआ है।

गंगाको पृथ्वीपर लानेका अभूतपूर्व उद्योग, अपरिमित श्रम और घोर तपस्याका पर्यायवाची 'भगीरथ-प्रयास' कहा जाने लगा।

वाल्मीकिरामायण (१।४१।२६)-के प्रमाणानुसार महाराज सगर तीस हजार वर्ष राज्य करके स्वर्ग सिधारे और अपने जीवनकालमें महर्षि कपिलके कोपभाजन भस्मसात् पुत्रोंका गंगा-जलसे तर्पण न कर सके—

त्रिंशद्वर्षसहस्राणि राज्यं कृत्वा दिवं गतः॥

सगरके पुत्र अंशुमान्‌ने बत्तीस हजार वर्षतक तप करके शरीरका परित्याग कर दिया, पर वे भी गंगाको लानेमें सफल न हुए—

द्वात्रिंशच्छतसाहस्त्रं वर्षाणि सुमहायशाः।
तपोवनगतो राजा स्वर्गं लेभे तपोधनः॥

(वा०रा० १।४२।४)

अंशुमान्‌के पुत्र नरशार्दूल दिलीप भी तीस हजार वर्षतक राज्य करके पितरोंके उद्धारमें असमर्थ रहे—

त्रिंशद्वर्षसहस्राणि राजा राज्यमकारयत्॥

(वा०रा० १।४२।८)

दिलीप-पुत्र महाराज भगीरथने एक हजार वर्षतक अंगुष्ठके अग्रभागपर खड़े होकर घोर तपस्या करके गंगाको पृथ्वीपर लानेमें सफलता प्राप्त की।

महर्षि वेदव्यासने तो अपने महाभारत-ग्रन्थमें सम्राट् भगीरथको गंगाका पिता घोषितकर उन्हें उच्चतर सम्मानसे विभूषित किया है।

अभिमन्युकी मृत्युसे विह्वल एवं शोकातुर हो विलाप करते हुए धर्मराज युधिष्ठिरको सान्त्वना-प्रसंगमें व्यासजीने अनेक त्यागवीर, दयावीर, ज्ञानवीर, दानवीर एवं रणधीर महापुरुषोंके आख्यान सुनाये। इसी प्रसंगमें भगीरथ-चरित्रका वर्णन करते समय उन्होंने कहा—

भगीरथं यजमानमैक्ष्वाकुं भूरिदक्षिणम्।
गङ्गा समुद्रगा देवी वव्रे पितरमीश्वरम्॥

(महा०, द्रोण० ६०।८)

यज्ञ करते समय भूयसी दक्षिणा देनेवाले इक्ष्वाकुवंशी ऐश्वर्यशाली राजा भगीरथको समुद्रगामिनी गंगादेवीने अपना पिता मान लिया था। इस प्रकार भगीरथकी पुत्री होनेसे गंगाजी 'भागीरथी' कहलायीं और उनके ऊरुपर बैठनेके कारण 'उर्वशी' नामसे प्रसिद्ध हुईं। राजाके पुत्री भावको प्राप्त होकर उनका नरकसे त्राण करनेके कारण वे उस समय पुत्रभावको भी प्राप्त हुईं—

तथा भागीरथी गङ्गा उर्वशी चाभवत् पुरा।
दुहितत्वं गता राज्ञः पुत्रत्वमगमत् तदा॥

(महा० द्रोण० ६०।६)

उन्हीं राजा भगीरथने गंगाके दोनों किनारोंपर सोनेकी

ईंटोंके घाट बनवाये थे और विपुल मात्रामें दान दिया था।

प्राचीन महर्षियोंद्वारा गंगा-गौरव-गान

भारतीय वाङ्मयमें कलिमलनाशिनी गंगाकी अपार महिमा है। प्राचीन मनीषियोंने इससे प्रभावित होकर अपनी भाव-पुष्पांजलियाँ विभिन्न स्वरूपोंमें प्रस्तुतकर स्वयंको कृतकृत्य किया है। व्यासरचित प्रायः अनेक ग्रंथोंमें गंगाकी प्रशस्तिका वर्णन पाया जाता है।

श्रीमद्भागवत-महापुराणमें तो भगवान् वेदव्यास अपना विचित्र दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं। गंगा भगीरथसे प्रश्न करती हैं—'भगीरथ! मेरे पृथ्वीपर न आनेके कुछ कारणोंमेंसे एक यह भी है कि लोग मुझमें स्नानकर अपने पाप प्रक्षालित करेंगे, पर उस पापको मैं कहाँ धोऊँगी ?'—

किं चाहं न भुवं यास्ये नरा मय्यामृजन्त्यघम्।
मृजामि तदघं कुत्र राजंस्तत्र विचिन्त्यताम्॥
(९।९।५)

जैसा महत्त्वपूर्ण प्रश्न था, वैसा ही महाराज भगीरथद्वारा गूढ़ प्रत्युत्तर भी दिया गया—

साधवो न्यासिनः शान्ता ब्रह्मिष्ठा लोकपावनाः।
हरन्त्यघं तेऽङ्गसङ्गात् तेष्वास्ते ह्यघभिद्धरिः॥
(९।९।६)

'माता! जिन साधु पुरुषोंने कामनाओंका संन्यास कर दिया है, जो शान्त, ब्रह्मनिष्ठ, परोपकारी हैं, वे अपने अंगस्पर्शसे तुम्हारे पापोंको नष्ट कर देंगे; क्योंकि अघासुर-मर्दन भगवान् सर्वदा उनमें निवास करते हैं।'

तमसाके तीरपर निवास करनेवाले महर्षि वाल्मीकिकी गंगाष्टक-स्वरलहरी गंग-तरंगकी भाँति मन-वाणीको भी पुनीत भावनाओंसे झंकृत कर देती है—

पापापहारि दुरितारि तरङ्गधारि
शैलप्रचारि गिरिराजगुहाविदारि।
झङ्कारकारि हरिपादरजोऽपहारि
गाङ्गं पुनातु सततं शुभकारि वारि॥

महाकवि कालिदासकृत 'गंगाष्टकम्'का पाठ करनेसे ऐसा लगता है, मानो गंगाका अमृत-तुल्य जल तन-मनको पवित्र कर रहा है—

विष्णोः संगतिकारिणी हरजटाजूटाटवीचारिणी
प्रायश्चित्तनिवारिणी जलकणैः पुण्यौघविस्तारिणी।
भूभृत्कन्दरदारिणी निजजले मज्जज्जनोत्तारिणी
श्रेयःस्वर्गविहारिणी विजयते गंगा मनोहारिणी॥

आदर्श राजपुरुष और यशस्वी संन्यासी-जीवनकी भूमिकाका निर्वहन करनेवाले योगिराज भर्तृहरिने देशका व्यापक भ्रमण किया, परंतु वे गंगा-किनारे बिताये गये उन स्वर्णिम दिनोंको नहीं भूल पाये, जब गंगा-तटपर पद्मासीन ध्यानस्थ-मुद्रामें बैठे उनके शरीरसे वृद्ध मृग निःशंक होकर अपनी खुजलाहट मिटाते रहे—

गङ्गातीरे हिमगिरिशिलाबद्धपद्मासनस्य
ब्रह्मध्यानाभ्यसनविधिना योगनिद्रां गतस्य।
किं तैर्भाव्यं मम सुदिवसैर्यत्र ते निर्विशङ्काः
कण्डूयन्ते जरठहरिणाः स्वाङ्गमङ्गे मदीये॥

आद्यगुरु भगवत्पाद शंकराचार्यजी महाराज कल्मषनाशिनी भगवती श्रीभागीरथीके भूतलपर अवतीर्ण होनेकी घटनाको मानवजीवनको सार्थक बनानेहेतु सर्वोत्तम उपलब्धिके रूपमें स्वीकार करते हैं। 'गङ्गाजललव-कणिका पीता'—इसी सिद्धान्तकी पुष्टि करता है।

आदावादिपितामहस्य नियमव्यापारपात्रे जलं
पश्चात्पन्नगशायिनो भगवतः पादोदकं पावनम्।
भूयः शम्भुजटाविभूषणमणिर्जह्नोर्महर्षेरियं
कन्या कल्मषनाशिनी भगवती भागीरथी दृश्यते॥
(गंगाष्टक)

सन्त-शिरोमणि तुलसीदासजीकी गंगाके प्रति लिखी

भाव-पुष्पांजलियोंको देखकर तो ऐसा ही लगता है कि ये महापुरुष तो गंगाको पूर्णरूपेण समर्पित थे। वे तो जीवनसे मुक्त होनेकी भी कामना न करते हुए बार-बार श्रीरघुनाथजीका दास होकर गंगा-किनारे रहनेको ही जीवन-साफल्य मानते हैं—

बारि तिहारो निहारि मुरारि भएँ परसें पद पाप लहौंगो।
ईसु ह्वै सीस धरौं पै डरौं, प्रभुकी समताँ बड़े दोष दहौंगो॥
बरु बारहिं बार सरीर धरौं, रघुबीरको ह्वै तव तीर रहौंगो।
भागीरथी! बिनवौं कर जोरि, बहोरि न खोरि लगै सो कहौंगो॥
(कवितावली, उ० १४७)

जगदम्बा गंगाके प्रति अपने भावोंकी चरमोत्कर्षिताका भव्यतम समर्पण भला और इससे बढ़कर क्या हो सकता है—

गंग सकल मुद मंगल मूला। सब सुख करनि हरनि सब सूला॥

व्यंग्यकलाप्रवीण युवराज अंगदके मुखसे बाबा तुलसीदासजीने गंगाके विषयमें जो कुछ कहलाया है, वह तो उन लोगोंके मुखपर करारी चोट है, जो गंगाको मात्र नदी मानते हैं—

राम मनुज कस रे सठ बंगा। धन्वी कामु नदी पुनि गंगा॥

वे अपने रामचरितमानसग्रन्थके अन्तमें यहाँतक कहते हैं कि यह भारतदेश धन्यवादका पात्र इसलिये है कि यहाँ गंगा-जैसी पावन देवसरिताका निवास है—

'धन्य देस सो जहँ सुरसरी।'

गंगा-प्रदूषण—समूचे भारतको धन्य बना देनेवाली देवी गंगाको प्रदूषण-मुक्त कर देनेकी बात विशेष जोर-शोरसे एक नारेके रूपमें सुनी जा रही है। गंगाके प्रति धार्मिक आस्थाके पुरातन भाव पुनः भारतीय जनमानसमें प्रस्थापित किये बिना गंगा-प्रदूषणकी योजनाएँ विफल ही रहेंगी।

शासन आज जिस प्रदूषणके प्रति चिन्तित है, हमारे महर्षि तो हजारों वर्षपूर्व इस विषयके प्रति जागरूक थे और उन्होंने तो अपने ग्रन्थोंमें सरिताओंमें कुल्ला करने-जैसी छोटी-सी अपवित्रताको भी गम्भीर अपराध घोषित किया है, जिसके लिये कठोरतम दण्ड (नरक-यातना)-की व्यवस्थाका विधान है। यदि शासन आज भी प्राचीन भारतीय संस्कृतिके महर्षियोंद्वारा निर्णीत व्यवस्थाओंको जन-जीवनमें उतारनेका परिश्रमसाध्य कार्य करनेका योजनाबद्ध ढंग अपना सके तो गंगा-प्रदूषणकी समस्या सुलझ सकती है।

मुगल शासक और गंगाजल—निःसन्देह अनेक यायावर मुसलमान शासकोंने वैदिक संस्कृतिपर कुठाराघात करनेका कुचक्र चलाया, पर ऐतिहासिक तथ्य है कि गंगाजलके प्रति ये लोग भी विनयावनत रहे। अफ्रीकी यात्री इब्नबतूता लिखता है—'सुल्तान मुहम्मद तुगलकके लिये गंगाजल बराबर दौलताबाद जाया करता था।' अबुलफजलने 'आईने अकबरी' में इस बातका उल्लेख किया है कि 'बादशाह अकबर गंगाजलको अमृत समझता था। घरमें, यात्रामें वह गंगाजलको ही पीता था।' फ्रांसीसी यात्री बर्नियरने लिखा है—'दिल्ली और आगरामें औरंगजेबके लिये खाने-पीनेकी सामग्रीके साथ गंगाजल भी रहता था। स्वयं बादशाह ही नहीं, दरबारके अन्य लोग भी गंगाजलका प्रयोग करते थे।'

पाश्चात्य जगत् और गंगाजल—सन् १९३१ ई० में प्रख्यात जल-विशेषज्ञ डॉ० एफ० कोहिमान भारत आये। उन्होंने गंगाजलकी परीक्षा की। विख्यात फ्रांसीसी डॉ० डी० हरेल और अमेरिकाके एक प्रसिद्ध लेखक मार्कट वेवने गंगाजलपर शोधका कार्य किया। सन् १९२४ ई० में बर्लिनके प्रसिद्ध डॉ० जे० ओलिवरने भी गंगाजलपर अन्वेषण किया।

इंटरनेशनल मेडिकल जरनलमें भी गंगाजलपर पाश्चात्य वैज्ञानिकोंके लेख हैं। इन सभीका मिला-जुला निर्णय है कि गंगाजल अत्यन्त स्वच्छ और पवित्र है। इसमें रक्त बढ़ाने तथा कीटाणु-नाश करनेकी अद्भुत क्षमता है। संक्रामक रोगोंको नाश करनेकी शक्ति तथा जीवनीशक्ति बढ़ाने-हेतु पर्याप्त विटामिन गंगाजलमें

विद्यमान है।

एवरेस्ट-विजेता और गंगा-एवरेस्ट-विजेता एडमण्ड हिलेरी 'सागरसे आकाश' नामक अपने अभियानपर ऋषिकेशसे चला। सत्तर हार्सपावरसे अधिक शक्तिशाली उसकी यन्त्र-चालित मोटरबोट नन्दप्रयागके पास आकर अलकनन्दामें लाख प्रयत्नोंके बाद भी बढ़ नहीं पायी। दिनांक २८ सितम्बर १९७७ ई० को लेखक उस स्थलपर था। मैंने जब एडमण्ड हिलेरीसे पूछा—'गंगाके विषयमें आपका क्या विचार है?' तब किसी हारे हुए जुआरीकी तरह अत्यन्त दीनभावसे गंगाकी ओर अपना हैट उतारते हुए उसने कहा—'गंगा एक नदी नहीं है।'

रुड़की विश्वविद्यालयमें गंगाजलपर कुछ प्रयोग हुए थे, जिनका निष्कर्ष था कि गंगाजलमें बैक्टीरिया (रोगाणु) मारनेकी शक्ति अन्य जलोंसे अधिक है। डॉ० के०एल० रावने अपनी पुस्तक 'भारतके जल-साधन' में लिखा है कि गंगाजलमें बैक्टीरियोफेंज (जीवाणु-भक्ष) अधिकतासे पाये जाते हैं, इसलिये वे बैक्टीरियाको खाकर गंगाजलको कभी दूषित नहीं होने देते।

मृत्युशय्यापर पड़े मनुष्यके मुखमें गंगाजल डालनेका विधान आजका नहीं है, यह अपमृत्युसे बचाता है,
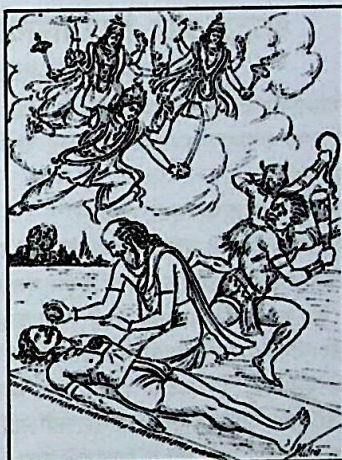
वैज्ञानिकोंसे बहुत पूर्व ही हमारा वैद्यकशास्त्र इस सुधातुल्य गंगाजलके विषयमें लिख चुका है—'स्वादु पाकरसं शीतं द्विदोषशमनं तथा। पवित्रमपि पथ्यं च गङ्गावारि मनोहरम्॥' अर्थात् 'मनोहर गंगाजल स्वादिष्ट, पाकरसयुक्त, शीतल, द्विदोषका शामक, पवित्र तथा पथ्यस्वरूप है।'

जिस गंगाके विषयमें वेदने 'इमं मे गङ्गे०' तथा भगवान् श्रीकृष्णने 'स्त्रोतसामस्मि जाह्नवी' कहा है, उस महिमामयी माँके विषयमें भला क्या कहा जा सकता है!

उनका सहज सुगम उद्धार

(श्रीमती शिवानी मिश्रा, एम०ए०, बी०एड०)

जय नन्दिनि, नलिनी, सीता, जय मलापहा, मालती ललाम।
विष्णुपादाब्जसम्भूता जय, गंगा, त्रिपथगा अभिराम॥
भागीरथी, भोगवती जय, त्रिदशेश्वरी, जाह्नवी प्रणाम।
रटो 'शिवानी' नित्य नियम से, माँ गंगा के बारह नाम॥
भागीरथ के श्रम का प्रतिफल, सगर सुवन का मुक्ति द्वार।
जह्नुमुनि की सुता जाह्नवि, बन मन्दाकिनि मध्यम धार॥
युग-युग से कलिमल धोती माँ! पाप ताप दुष्कर्म बिसार।
जय गंगे, जय गंगे गाते, उनका सहज सुगम उद्धार॥
गात्र मात्र धोती सरिताएँ, किंतु सुरसरी कृत्य महान।
स्नान-पान-जप-ध्यान-स्मरण से, तनमन स्वस्थ पुनीत प्रमान॥
जटाशंकरी-देवपगा रट, आकर्षित शिव हरि भगवान।
जय गंगे! जय गंगे! रव सुन, भगते भूत प्रेत बलवान॥

शक्ति स्वरूपा, भुक्ति मुक्तिदा, अघ तम नाशक जग आधार।
हंसो-प्रणव-दिव्य ज्योति माँ, कारण एक तत्त्व निर्धार॥
पावन परम पुंज मति-रति तुम, व्यापक सूक्ष्म और विस्तार।
महिमा गान न कर सकते कछु, वन्दन नमन करो स्वीकार॥
गंग तरंग उमंग भरे नित, मेटे जन्मान्तर के पाप।
विधि-हरि-हर की सहज शुभाशिष, अंशुमान तप परम प्रताप॥
सगुण स्वरूप अम्ब का भू पर, भीष्म जननि नाशक संताप।
जय गंगे! मृत्युंजय-सुखकर, भोग मोक्ष का अनुपम जाप॥
कलश-पात्र, मानस-तीरथ में, इड़ा पिंगला सी रहती।
श्वासोच्छ्वास तरंग अंग में, शोणित अनिल सदा बहती॥
हम कुपुत्र सन्तान, मात! तुम, अज्ञानी लख सब सहती।
'सुखी 'शिवानी' आनन्दित हो रहो', धार कल-कल कहती॥

श्रद्धा और विश्वासके साथ गंगास्नानका वास्तविक फल

(नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)

गंगास्नानसे पापोंका अशेष नाश होना बतलाया गया है; परंतु नित्य गंगास्नान करनेवाले लोग भी पापमें प्रवृत्त होते देखे जाते हैं।

श्रद्धापर एक दृष्टान्त

एक समय शिवजी महाराज पार्वतीके साथ हरिद्वारमें घूम रहे थे। पार्वतीने देखा कि सहस्रों मनुष्य गंगामें नहा-नहाकर 'हर-हर' करते चले जा रहे हैं; परंतु प्रायः सभी दुखी और पापपरायण हैं। पार्वतीने बड़े आश्चर्यके साथ शिवजीसे पूछा कि 'हे देवदेव! गंगामें इतनी बार स्नान करनेपर भी इनके पाप और दुःखोंका नाश क्यों नहीं हुआ? क्या गंगामें सामर्थ्य नहीं रही?' शिवजीने कहा—'प्रिये! गंगामें तो वही सामर्थ्य है; परंतु इन लोगोंने पापनाशिनी गंगामें स्नान ही नहीं किया है तब इन्हें लाभ कैसे हो?' पार्वतीने साश्चर्य कहा कि 'स्नान कैसे नहीं किया? सभी तो नहा-नहाकर आ रहे हैं? अभीतक इनके शरीर भी नहीं सूखे हैं।' शिवजीने कहा—'ये केवल जलमें डुबकी लगाकर आ रहे हैं। तुम्हें कल इसका रहस्य समझाऊँगा।'

दूसरे दिन बड़े जोरकी बरसात होने लगी। गलियाँ कीचड़से भर गयीं। एक चौड़े रास्तेमें एक गहरा गड्ढा था, चारों ओर लपटीला कीचड़ भर रहा था। शिवजीने लीलासे ही वृद्ध-रूप धारण कर लिया और दीन-विवशकी तरह गड्ढेमें जाकर ऐसे पड़ गये, जैसे कोई मनुष्य चलता-चलता गड्ढेमें गिर पड़ा हो और निकलनेकी चेष्टा करनेपर भी न निकल सकता हो।

पार्वतीको यह समझाकर गड्ढेके पास बैठा दिया कि 'देखो! तुम, लोगोंको सुना-सुनाकर यों पुकारती रहो कि मेरे वृद्ध पति अकस्मात् गड्ढेमें गिर पड़े हैं, कोई पुण्यात्मा इन्हें निकालकर इनके प्राण बचाये और मुझ असहायकी सहायता करे।' शिवजीने यह और समझा दिया कि जब कोई गड्ढेमेंसे मुझे निकालनेको तैयार हो तब इतना और कह देना कि 'भाई! मेरे पति सर्वथा निष्पाप हैं, इन्हें वही छुए जो स्वयं निष्पाप हो, यदि आप निष्पाप हैं तो इनके हाथ लगाइये, नहीं तो हाथ लगाते ही आप भस्म हो जायँगे।' पार्वती 'तथास्तु' कहकर गड्ढेके किनारे बैठ गयीं और आने-जानेवालोंको सुना-सुनाकर शिवजीकी सिखायी हुई बात कहने लगीं। गंगामें नहाकर लोगोंके दल-के-दल आ रहे हैं। सुन्दरी युवतीको यों बैठी देखकर कइयोंके मनमें पाप आया, कई लोक-लज्जासे डरे तो कइयोंको कुछ धर्मका भय हुआ, कई कानूनसे डरे। कुछ लोगोंने तो पार्वतीको यह भी सुना दिया कि मरने दे बुड्ढेको। क्यों उसके लिये रोती है? आगे और कुछ दयालु सच्चरित्र पुरुष थे, उन्होंने करुणावश हो युवतीके पतिको निकालना चाहा; परंतु पार्वतीके वचन सुनकर वे भी रुक गये। उन्होंने सोचा कि हम गंगामें नहाकर आये हैं तो क्या हुआ, पापी तो हैं ही, कहीं होम करते हाथ न जल जायँ। बूढ़ेको निकालने जाकर इस स्त्रीके कथनानुसार हम स्वयं भस्म न हो जायँ। सुतरां किसीका साहस नहीं हुआ। सैकड़ों आये, सैकड़ोंने पूछा और चले गये। सन्ध्या हो चली। शिवजीने कहा—'पार्वती! देखा, आया कोई गंगामें नहानेवाला?'

थोड़ी देर बाद एक जवान हाथमें लोटा लिये हर-हर करता हुआ निकला, पार्वतीने उसे भी वही बात कही। युवकका हृदय करुणासे भर आया। उसने शिवजीको निकालनेकी तैयारी की। पार्वतीने रोककर कहा कि 'भाई! यदि तुम सर्वथा निष्पाप नहीं होओगे तो मेरे पतिको छूते ही जल जाओगे।' उसने उसी समय बिना किसी संकोचके दृढ़ निश्चयके साथ पार्वतीसे कहा कि 'माता! मेरे निष्पाप होनेमें तुझे सन्देह क्यों होता है? देखती नहीं मैं अभी गंगा नहाकर आया हूँ। भला, गंगामें गोता लगानेके बाद भी कभी पाप रहते हैं? तेरे पतिको निकालता हूँ।' युवकने लपककर बूढ़ेको ऊपर उठा लिया। शिव-पार्वतीने उसे अधिकारी समझकर अपना असली स्वरूप प्रकटकर उसे दर्शन देकर कृतार्थ किया! शिवजीने पार्वतीसे कहा कि 'इतने लोगोंमेंसे इस एकने ही गंगास्नान किया है।' इसी दृष्टान्तके अनुसार जो लोग बिना श्रद्धा और विश्वासके केवल दम्भके लिये गंगास्नान करते हैं, उन्हें वास्तविक फल नहीं मिलता; परंतु इसका यह मतलब नहीं कि गंगास्नान व्यर्थ जाता है।

श्रीगंगाजी ज्ञानस्वरूपा हैं

(गोलोकवासी परम भागवत संत श्रीरामचन्द्र केशव डोंगरेजी महाराज)

सितासिते सरिते यत्र सङ्गथे
तत्राप्लुतासो दिवमुत्पतन्ति।
ये वै तन्वं विसृजन्ति धीरा-
स्ते जनासो अमृतत्वं भजन्ते॥

'सितासिते सरिते यत्र सङ्गथे।' सिता अर्थात् श्रीगंगाजी और असिता अर्थात् श्रीयमुनाजी। दोनोंका मधुर संगम हुआ है—जहाँ ज्ञान और भक्तिका मधुर मिलन है। ज्ञानी होना बहुत कठिन नहीं, प्रभुप्रेमी होना कठिन है। भक्तिके बिना ज्ञान लँगड़ा है और ज्ञान-वैराग्यके बिना भक्ति अन्धी है। ज्ञानका अनुभव वैराग्य और भक्ति बगैर होता नहीं। भक्ति बगैर ज्ञान शब्दमय बने तो इससे जीवको लाभ होता नहीं। ज्ञानसे आँख उघड़ती है। ज्ञानसे हृदय विशाल बनता है और भक्तिसे हृदय कोमल बनता है। ज्ञान त्यागकी भावना लाता है और भक्ति समर्पणकी।

कितने ही भक्ति तो करते हैं, परंतु जब दुःख आता है तब करते हैं। सम्पत्तिमें—सुखमें वे भक्ति करते नहीं। यदि उनका ज्ञान परिपूर्ण हो तो वे सुखमें भी भक्ति करने लगें। ज्ञान और भक्ति—ये दोनों हों तो जीव परमात्माके चरणोंमें जा सकता है।

कितने ही ज्ञानी ऐसा मानते हैं कि हमको भक्तिकी जरूरत नहीं। वे भक्तिका तिरस्कार करते हैं। कितने ही, भक्त मानते हैं कि हमको ज्ञान-वैराग्यकी जरूरत नहीं। इन दोनोंमेंसे कोई भी विचार उचित नहीं। भक्ति ज्ञान-वैराग्यके बगैर रोती है। भक्ति ज्ञान-वैराग्यके साथ आये तो ही दृढ़ बनती है। ज्ञान-वैराग्य बिना भक्ति कच्ची है। वैसे ही ज्ञान भक्ति बिना हो तो उसमें अभिमान आता है और अभिमानके कारण ज्ञानीका पतन होता है। ज्ञान भक्तिके साथ आये तो नम्रता लाता है।

ब्रह्मज्ञान हुआ हो—परमात्माका ज्ञान हुआ हो, परंतु परमात्माके स्वरूपमें प्रीति न हो तो परमात्माका अनुभव होता नहीं। सच्चा ज्ञानी वह है, जो परमात्माके साथ प्रेम करता है। गीताजीमें भगवान्‌ने आज्ञा की है।

'श्रद्धावान्भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः।'

ज्ञानीको भी भक्तिकी जरूरत है। ज्ञान भक्तिसे ही परिपूर्ण होता है। ज्ञानी प्रभुप्रेमी होना ही चाहिये। प्रभु-प्रेमके बिना ज्ञान शुष्क है। ईश्वरका ज्ञान हो, परंतु ईश्वरके साथ प्रेम न हो तबतक ज्ञान सफल होता नहीं। ज्ञान मिले पीछे भी परमात्माके साथ प्रेम करना पड़ेगा। रामायणमें एक जगह वसिष्ठजीने कहा है—

सो सुखु करमु धरमु जरि जाऊ। जहँ न राम पद पंकज भाऊ॥
जोगु कुजोगु ग्यानु अग्यानू। जहँ नहिं राम पेम परधानू॥

राम-प्रेम बिना वैराग्य वैराग्य नहीं। राम-प्रेम बिना ज्ञान अज्ञान है। जीवका सोलह आना प्रेम मुझमें है, ऐसा विश्वास होनेके बाद ही प्रभु मायाका परदा हटाते हैं। जिसकी आँखमें प्रभु-दर्शनके लिये आँसू नहीं, जिसके हृदयमें परमात्माकी झाँकीके लिये आतुरता नहीं, उसका ज्ञान किस कामका? केवल ज्ञानसे नहीं, प्रभुके प्रति प्रेममें हृदय पिघले तो ही हृदयकी शुद्धि होती है।

इसी प्रकार भक्ति ज्ञानके साथ न हो तो ईश्वरके व्यापक स्वरूपका अनुभव होता नहीं। ईश्वर ऐसी वस्तु नहीं कि एक ठिकाने रहे। एक ही ठिकाने ईश्वरको निहारे, वह अधम वैष्णव है। जहाँ-जहाँ नजर जाय, वहाँ जिसको ईश्वर दीखें, वही महान् वैष्णव है। भक्ति ज्ञानरहित होगी तो ईश्वरके दर्शन एकमें ही होंगे, सर्वत्र नहीं होंगे। अकेली भक्तिसे तो घरके गोपालजीमें अथवा जो मूर्ति होगी, उसमें ही भगवान् दीखेंगे, दूसरेमें नहीं दीखेंगे परंतु, उसको ज्ञानका साथ मिले तो भगवान् सर्वत्र दीखेंगे।

केवल सगुणका साक्षात्कार करे, इससे मन शुद्ध होता नहीं। साक्षात्कारसे मनकी चंचलता जाती नहीं। सगुणका प्रेम और निर्गुणका अनुभव एक साथ होना चाहिये। निर्गुणका अनुभव और सगुणका प्रेम हो तब मायाका बन्धन टूटता है। सगुण और निर्गुण भक्ति हो तभी जीवका कल्याण होता है। भक्तिको ज्ञानकी अपेक्षा है और ज्ञानको भक्तिकी। श्रीगंगाजी ज्ञानस्वरूपा हैं। श्रीयमुनाजी भक्तिका स्वरूप हैं। 'सितासिते' किसी समय प्रयागराज जाओ तो ध्यान रखकर दर्शन करना। श्रीगंगाजी गौर हैं, श्रीयमुनाजी श्याम हैं। प्रत्यक्ष दीखती हैं। 'सरिते यत्र सङ्गथे।' यहाँ सरस्वती गुप्त हैं। [तत्त्वार्थ-रामायण]

स्रोतसामस्मि जाह्नवी

(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज)

स्रोतसामस्मि जाह्नवी ॥

(गीता १०।३१)

अर्थात् नदियोंमें गंगाजी मैं हूँ।

प्रवाहरूपसे बहनेवाले जितने भी नद, नदी, नाले, झरने हैं, उन सबमें गंगाजी श्रेष्ठ हैं। ये भगवान्‌की खास चरणोदक हैं। गंगाजी अपने दर्शन, स्पर्श आदिसे दुनियाका उद्धार करनेवाली हैं। मरे हुए मनुष्योंकी अस्थियाँ गंगाजीमें डालनेसे उनकी सद्‌गति हो जाती है। इसलिये भगवान्‌ने इनको अपनी विभूति बताया है।

वास्तवमें इन विभूतियोंकी मुख्यता न मानकर भगवान्‌की ही मुख्यता माननी चाहिये। कारण कि इन सबमें जो विशेषता—महत्ता देखनेमें आती है, वह भगवान्‌से ही आयी है।

सत्रहवें श्लोकमें अर्जुनके दो प्रश्न थे—पहला, भगवान्‌को जाननेका (मैं आपको कैसे जानूँ?) और दूसरा, जाननेके उपायका (किन-किन भावोंमें मैं आपका चिन्तन करूँ?)। इन दोनोंमेंसे उपाय तो है—विभूतियोंमें भगवान्‌का चिन्तन करना और उस चिन्तनका फल (परिणाम) होगा—सब विभूतियोंके मूलमें भगवान्‌को तत्त्वसे जानना। जैसे, शस्त्रधारियोंमें श्रीरामको और वृष्णियोंमें वासुदेव (अपने)-को भगवान्‌ने अपनी विभूति बताया। यह तो उस समुदायमें विभूतिरूपसे श्रीरामका और वासुदेवका चिन्तन करनेके लिये बताया और उनके चिन्तनका फल होगा—श्रीरामको और वासुदेवको तत्त्वसे भगवान् जान जाना। यह चिन्तन करना और भगवान्‌को तत्त्वसे जानना सभी विभूतियोंके विषयमें समझना चाहिये।

संसारमें जहाँ-कहीं भी जो कुछ विशेषता, विलक्षणता, सुन्दरता दीखती है, उसको वस्तु-व्यक्तिकी माननेसे फँसावट होती है अर्थात् मनुष्य उस विशेषता आदिको संसारकी मानकर उसमें फँस जाता है। इसलिये भगवान्‌ने यहाँ मनुष्यमात्रके लिये यह बताया है कि तुमलोग उस विशेषता सुन्दरता आदिको वस्तु-व्यक्तिकी मत मानो, प्रत्युत मेरी और मेरेसे ही आयी हुई मानो। ऐसा मानकर मेरा चिन्तन करोगे तो तुम्हारा संसारका चिन्तन तो छूट जायगा और उस जगह मैं आ जाऊँगा। इसका परिणाम यह होगा कि तुमलोग मेरेको तत्त्वसे जान जाओगे। मेरेको तत्त्वसे जाननेपर मेरेमें तुम्हारी दृढ़ भक्ति हो जायगी।

भगवान्‌ने गीताके दसवें अध्यायके बीसवें श्लोकसे लेकर उनतालिसवें श्लोकतक जितनी विभूतियाँ कही हैं, उनमें प्राय: 'अस्मि' (मैं हूँ) पदका प्रयोग किया है। 'अस्मि' (मैं हूँ) पदका प्रयोग करनेका तात्पर्य विभूतियोंके मूल तत्त्वका लक्ष्य करानेमें है कि इन सब विभूतियोंके मूलमें मैं ही हूँ। कारण कि सत्रहवें श्लोकमें अर्जुनने पूछा था कि मैं आपको कैसे जानूँ, तो भगवान्‌ने 'अस्मि' का प्रयोग करके सब विभूतियोंमें अपनेको जाननेकी बात कही।

गीतामें भगवान्‌ने अपनी जिन मुख्य-मुख्य विभूतियोंका वर्णन किया है, उन सबमें जो कुछ भी विशेषता देखनेमें आती है, वह सब भगवान्‌को लेकर ही है। अत: संसारमें जहाँ-कहीं किंचिन्मात्र भी विशेषता दिखायी दे, उस विशेषताको लेकर साधकको स्वत: भगवान्‌का चिन्तन करना चाहिये। संसारकी विशेषताको माननेसे जहाँ संसारका चिन्तन होता है, वहाँ उस विशेषताको भगवान्‌की ही माननेसे वह चिन्तन भगवान्‌के चिन्तनमें परिणत हो जायगा अर्थात् वहाँ भगवान्‌का चिन्तन होने लगेगा।

साधकको चाहिये कि गीतामें जिन विभूतियोंका वर्णन हुआ है, वे विभूतियाँ किन कारणोंसे मुख्य हैं? इनमें क्या-क्या विलक्षणताएँ हैं? इनके विषयमें किस-किस ग्रन्थमें क्या-क्या लिखा है? इस तरफ वृत्ति न लगाकर ऐसा विचार करे कि इनका मूल क्या है? ये कहाँसे प्रकट हुई हैं? इस तरह अपनी वृत्तियोंका प्रवाह इन विभूतियोंकी तरफ न होकर इनके मूल भगवान्‌की तरफ ही होना चाहिये। मनुष्यकी वृत्तियोंका प्रवाह अपनी तरफ करनेके लिये ही भगवान्‌ने विभूतियोंका वर्णन किया है।

मानसमें गंगा-कथा

(प०पू० दण्डी स्वामी श्रीप्रज्ञानानन्दजी सरस्वती)

मानसमें जगत्पावनी भागीरथी श्रीगंगाजीकी कथा अथसे इतितक है। इसमें गंगा, सुरसरिता अथवा इस अर्थके द्योतक शब्दोंका उल्लेख कुल मिलाकर पचपन स्थानोंपर है। उन सब वचनोंको एकत्र करनेपर ऐसा दीख पड़ा कि लगभग तीस वचन मिलाकर गंगाके आविर्भावसे लेकर सागरसे मिलनेतककी सब कथा इनमें है। परंतु मानसमें जिस क्रमसे ये वचन हैं, उस क्रमसे लेनेपर यह कथा तैयार नहीं हो सकती। बल्कि इतिहास-क्रमके अनुसार क्रम लेनेसे सब कथा सुसंगत तैयार होती है। वही कथा आगे दी जाती है।

१—*'गाधिसूनु सब कथा सुनाई। जेहि प्रकार सुरसरि महि आई॥'* (१।२१२।२) इसका प्रथम चरण ही यहाँ लेना है। विश्वामित्रजीने गंगावतरणकी कथा राम-लक्ष्मणसे कही ऐसा जो उल्लेख किया है, उसकी सत्यता मानसमें अनेक स्थलोंपर होनेवाले उल्लेखोंसे दिखायी गयी है। विश्वामित्र ही गंगाका सारा इतिहास सुना रहे हैं, ऐसा समझना चाहिये।

२—*'जेहिं पद सुरसरिता परम पुनीता प्रगट भई…।'* (रा०च०मा० १।२११।छं० ४) वे पद कौनसे हैं, जिनसे सुरसरिता प्रकट हुईं और किस तरह प्रकट हुईं, वह देखें—

३—*'बलि बाँधत प्रभु बाढ़ेउ सो तनु बरनि न जाइ।'* (४।२९) जो प्रभु बलिको बाँधनेके लिये बढ़े, उनके श्रीचरणोंसे वे प्रकट हुईं। वे प्रभु कौन हैं—

(क) 'शचीपतिप्रियानुजं॥' (३।छं० ४।१२) शचीपति इन्द्रके प्रिय करनेवाले अनुज जो वामनावतार प्रभु हैं, उनके चरणोंसे प्रकट हुईं।

(ख) *'जेहिं जगु किय तिहु पगहु ते थोरा॥'* (२।१०१।४) जिनके तीन पगके लिये विश्व भी अधूरा ठहरा, इन श्रीवामन प्रभुके चरणोंसे प्रकट हुईं। कहाँ और चरणके किस भागसे प्रकट हुईं, इसका वर्णन देखें—

४—*'नख निर्गता मुनि बंदिता त्रैलोक पावनि सुरसरी॥'* (७।१३।छं० ४) ब्रह्मलोकमें पहुँचे हुए प्रभुचरणके दाहिने अँगूठेका प्रक्षालन मुनि ब्रह्मदेवने किया और उस चरणामृतको ब्रह्मदेवने वन्दन किया। ऐसा यह गंगाके प्राकट्यका इतिहास है।

५—जिनके पदनखसे गंगाका आविर्भाव हुआ, वे ही प्रभु राम, दशरथनन्दन। *'पद नख निरखि देवसरि हरषी। सुनि प्रभु बचन मोहँ मति करषी॥'* (२।१०१।५)। जिस पदनखसे गंगाका प्राकट्य हुआ, वह पदनख गंगाने निहारकर देखा। तब अपने जनकका दर्शन हुआ और अब कुछ सेवा करनेका मौका मिलेगा, ऐसा सोचकर गंगाजीको हर्ष हुआ। सुरसरि-गंगा-देवसरि।

६—ब्रह्मलोकसे निकलकर प्रथम गंगा कहाँ अवतीर्ण हुईं? (१।२११।छं० ४) *'सिव सीस धरी।'* उन्हें शिवजीने पहले अपने मस्तकपर धारण किया। प्रभुचरणामृत जानकर अपने मस्तकपर धारण किया। 'स्फुरन्मौलि कल्लोलिनी चारु गंगा' (७।१०८।छं० ६)। गंगा बहुत सुन्दर हैं, इसीलिये शिवजीने उन्हें अपने मस्तकपर रखा है—शिवजीके अंकमें बैठी हुई पार्वतीजीसे जब यह दृश्य देखा नहीं गया, तब शिवजीने क्या युक्ति (शक्ल)-की, देखिये—(क) *'जटा मुकुट सुरसरित सिर'* (१।१०६) उसे मस्तकपर ही अपने जटामुकुटमें छिपा लिया।

जिस प्रकार देवी गंगाजी पृथ्वीलोकमें अवतरित हुईं *'जेहि प्रकार सुरसरि महि आई॥'* (१।२१२।२)। वह प्रसंग भी अवलोकनीय है—

७—*'भूप भगीरथ सुरसरि आनी। सुमिरत सकल सुमंगल खानी॥'* (२।२०९।७)

हे राम! तुम्हारे ही पूर्वज भूपति भगीरथ उन्हें प्रथम पृथ्वीतलपर लाये। पृथ्वीतलपर कहाँ प्रकट हुईं, वह भी सुनिये।

८—*'हिमगिरि गुहा एक अति पावनि।'* (१।१२५।१) *'बह समीप सुरसरी सुहावनि॥'*

९—उस पर्वतमेंसे सुन्दर वनोंके बीचमेंसे वह बहती हैं—*'निरखि सैल सरि बिपिन बिभागा। भयउ रमापति पद अनुरागा॥'* (१।१२५।३) वह दृश्य देखनेपर भगवद्भक्तोंका मन भगवत्प्रेममें डूब जाता है।

१०—*'सुरसरि धार नाउँ मंदाकिनि।'* (२।१३२।६) हिमालयसे बहती हुई गंगासे मन्दाकिनी, अलकनन्दा, शेष-गंगा, स्वर्णगंगा, रामगंगा, व्यासगंगा इत्यादि नदियाँ मिल जाती हैं।

११—आगे प्रयागमें गंगासे यमुना मिलती हैं और वह तीर्थराज हुआ है।

मुद मंगलमय संत समाजू। जो जग जंगम तीरथराजू॥
राम भक्ति जहँ सुरसरि धारा। सरसइ ब्रह्म बिचार प्रचारा॥
बिधि निषेधमय कलिमल हरनी । करम कथा रबिनंदनि बरनी॥
हरि हर कथा बिराजति बेनी।
बटु बिस्वास अचल.........।

(१।२।७—११)

इस प्रकार गंगासे भानुनन्दिनी—रविकन्या—यमुना मिलीं, सरस्वती मिलीं और वहाँ त्रिवेणी हो गयी तथा वहाँ अक्षय (अचल)-वट भी है।

'सुरसरि सरसइ दिनकर कन्या।' (२।१३८।४)। इस प्रकार तीर्थराज प्रयाग महिमामण्डित हुआ।

१२—अव गंगा-यमुनाके जलका वर्णन और थोड़ा प्रयाग-महिमा सुनिये—

सबिधि सितासित नीर नहाने। दिए दान महिसुर सनमाने॥
देखत स्यामल धवल हलोरे। पुलकि सरीर भरत कर जोरे॥

(२।२०४।४-५)

सेवहिं सुकृती साधु सुचि पावहिं सब मनकाम।
बंदी बेद पुरान गन कहहिं बिमल गुन ग्राम॥

(२।१०५)

१३—प्रयागसे आगे बढ़नेपर जगपावनी गंगासे कौन-सी बड़ी नदियाँ मिलती हैं, यह देखें—*'सरजू नाम सुमंगल मूला।' 'नदी पुनीत सुमानस नंदिनि।'* (१।३९।१२-१३) *'सुरसरितहि जाई। मिली''''सरजु सुहाई॥'* (१।४०।१) *'मिलेउ महानदु सोन सुहावन॥'* (१।४०।२)। वहाँ (पटना शहरके पास) महानद सोन मिलता है।

१४—*'त्रिबिध ताप त्रासक तिमुहानी। राम सरूप सिंधु समुहानी॥'* (१।४०।४) त्रितापोंको हरण करनेवाली गंगाजी आगे जाकर सागरसे मिलती हैं।

१५—*'गंग अवनि थल तीनि बड़ेरे।'* (२।२८७।४) गंगाजीने तीन स्थानोंको विशेष प्रसिद्ध किया है। उनमें सबसे प्रमुख तीर्थराज प्रयागका वर्णन इसके पहले ही किया जा चुका है। जहाँ गंगाजी हिमालयसे निकलकर आगे बढ़ती हैं, वे हरिद्वार—कनखल—मायापुरी और सागरसे मिलती हैं, वह तीसरा गंगासागर-संगम *'सरित सिंधु संगम'* (२।३०२।६) है।

इस प्रकार गंगाजीकी मूल उत्पत्तिसे लेकर सागरसे मिलनेतककी कथा संक्षेपमें कही गयी है। अब जगत्पावनी गंगाजीकी थोड़ी-सी महिमा बतायी जाती है, वह सुनिये। यह वर्णन मानसके वचनोंके आधारपर ही किया गया है।

श्रीभागीरथी-महिमा—

१—गंगाजल ब्रह्ममय (ब्रह्मद्रव) है।

करहिं प्रनाम नगर नर नारी। मुदित ब्रह्ममय बारि निहारी॥
करि मज्जनु मागहिं कर जोरी।

(२।१९७।५-६)

गंगाजीका जल ब्रह्ममय (ब्रह्मद्रव) है और वह वारि विविध पापोंका अपवारण (निवारण) करनेवाला है।

२—गंगा-यमुनाका प्रवाह अखण्ड होता है।

अचल होउ अहिवातु तुम्हारा। जब लगि गंग जमुन जल धारा॥

(२।६९।८)

३—गंगाजीके मस्तकपर—पृष्ठभागपर सदा तरंगें आती-जाती रहती हैं, इसीलिये वह नयनमनोहर

दिखती हैं।

'स्फुरन्मौलि कल्लोलिनी चारु गंगा।'

(७।१०८।छं० ६)

चवँर जमुन अरु गंग तरंगा। देखि होहिं दुख दारिद भंगा॥

(२।१०५।८)

४—

सुरसरि सम सब कहँ हित होई॥

गंग सकल मुद मंगल मूला। सब सुख करनि हरनि सब सूला॥

(१।१४।९, २।८७।४)

५—

भरत कहेउ सुरसरि तव रेनू। सकल सुखद सेवक सुरधेनू॥

(२।१९७।७)

६—गंगा एवं वेदों तथा पुराणादिपर विश्वास, श्रद्धा रखनेवाले लोग गंगामाताकी पूजा, प्रार्थना, मनौती आदि मनाते हैं। भरतने प्रार्थना—याचना की है—

जोरि पानि बर मागउँ एहू। सीय राम पद सहज सनेहू॥

(२।१९७।८)

(क) सीताजीने भी प्रार्थना करके मनौती की है—

सियँ सुरसरिहि कहेउ कर जोरी। मातु मनोरथ पुरउबि मोरी॥
पति देवर सँग कुसल बहोरी। आइ करौं जेहिं पूजा तोरी॥

(२।१०३।२-३)

(ख) श्रीरघुनाथजीने स्नान करके वहाँसे चलते समय गंगाजीको प्रणाम किया है—

'"'प्रभु नाइ सुरसरिहि माथ।' (२।१०४)।

(ग) लंकासे लौटते समय पुष्पक-विमानसे उतारकर सीताजीने इस प्रकार मनौती पूरी की है—

तब सीताँ पूजी सुरसरी। बहु प्रकार पुनि चरनन्हि परी॥

(६।१२१।८)

७—*'धन्य देस सो जहँ सुरसरी।'* (७।१२७।५)

८—वेदोंने स्वयं आकर राज्याभिषेकके समय स्तुति की, उसमें कहा है—*'नख निर्गता मुनि बंदिता त्रैलोक पावनि सुरसरी।'* (७।१३।छं० ४)

९—गंगाजी भी आकाशवाणीकी तरह जलवाणीसे आशीर्वाद देती हैं—

'भइ तब बिमल बारि बर बानी॥' (२।१०३।४)

स्नान-विज्ञान एवं गंगाजलकी विशेषता

(स्वामी श्रीशंकरानन्दजी सरस्वती)

मनुष्यके शरीरमें ९ छिद्र होते हैं। वे रातमें शयन करनेसे अपवित्र हो जाते हैं। अतः प्रातःस्नान अवश्य करना चाहिये। तीर्थमें स्नान करना हो तो शौचवाला कपड़ा बदल देना चाहिये। भरसक नित्य स्नानादिके बाद ही तीर्थ-स्नान करना चाहिये; क्योंकि वह प्रशस्त तथा पुण्यजनक भी होता है।

यदि गंगामें स्नान करे तो निम्नांकित मन्त्रसे गंगाजीकी प्रार्थना करे—

विष्णुपादार्घसम्भूते गङ्गे त्रिपथगामिनि।
धर्मद्रवीति विख्याते पापं मे हर जाह्नवि॥
गङ्गा गङ्गेति यो ब्रूयाद् योजनानां शतैरपि।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति॥

(पद्मपुराण ६०।६, ७८)

स्नान-विमर्श—'ष्णा-शौचे' धातुसे निष्पन्न होनेवाले 'स्नान' शब्दका अर्थ ही शुचिता है। स्नानसे शरीर और मन पवित्र होते हैं। हमारे शरीरमें जो पसीना होता है, उसका जलीय अंश तो भाप बनकर उड़ जाता है और पार्थिव अंश मैल बनकर जम जाता है। यदि नित्य स्नान करके उसे धोया न जाय तो शरीरमें मैलकी एक तह जम जायगी, जिससे रोमकूपके छिद्र बन्द हो जायँगे। इसका परिणाम यह होगा कि भीतरका मल तथा दूषित वायु बाहर न निकल पायेगी, जिससे शरीरमें दुर्गन्ध और अनेक रोगोंकी उत्पत्ति हो जायगी। अतः स्नान ऐसी विधिसे करना चाहिये, जिससे मैल अच्छी तरह छूट जाय। इसके लिये २-४ लोटा जल्दीसे पानी डाल लेना पर्याप्त नहीं, किंतु पर्याप्त जल

लेकर शरीरको खूब रगड़कर पानीसे धोना चाहिये। यह कार्य अधिक जलवाले तालाब तथा बावड़ीमें और सबसे अच्छा बहते हुए जलवाली नदियोंमें होता है; क्योंकि नदीमें हमारे शरीरसे निकलता हुआ मैल बहता जाता है और उसकी जगह नया स्वच्छ जल आता जाता है। इसीलिये धर्मशास्त्रोंमें गृहकी अपेक्षा तालाब, तालाबकी अपेक्षा नदी और नदीकी अपेक्षा गंगादि पवित्र जलवाली नदियोंमें स्नानको उत्तम माना है।

गंगाकी पवित्रता—शास्त्रोंमें गंगादि नदियोंकी पवित्रताका जो कथन है, वह अन्धविश्वासमात्र नहीं है। इस गये-बीते युगमें भी गंगाके जलकी पवित्रताको अपने अनेकों वैज्ञानिक परीक्षणोंद्वारा परीक्षितकर भौतिक विज्ञानवादियोंने भी मुक्तकण्ठसे स्वीकार किया है। वैज्ञानिकोंने अति स्वच्छ गंगोत्रीके जलका तथा अनेकों नदी-नाले, गन्दे मल-मूत्रके पनालेवाले अति अस्वच्छ वाराणसी, कलकत्तेके गंगाजलका भी परीक्षण करके बताया है कि गंगाजलमें रोगके कीटाणुओंको डालनेपर वे दूसरे जलोंकी तरह वृद्धिको प्राप्त नहीं होते, प्रत्युत बहुत शीघ्र मर जाते हैं। वर्षों रखे रहनेपर भी गंगाजलमें कीड़े नहीं पड़ते। इसीलिये श्रद्धापूर्वक उसे लाकर घरमें रखते हैं और पूजा आदि कार्योंमें तथा मृत्युकालमें मरते हुए प्राणीके मुखमें डालते हैं। गंगाजलमें कीड़े न पड़नेका गुण केवल गंगाजलत्वके कारण ही नहीं है, किंतु गंगाजीके पवित्र क्षेत्रका भी प्रभाव उसमें कारण होता है। (क्योंकि गंगाजीसे निकली नहरोंके विशुद्ध जलमें तो कीड़े पड़ जाते हैं, परंतु गंगाक्षेत्रमें बहती गंगाजीके अशुद्ध जलमें भी कीड़े नहीं पड़ते!)

शास्त्रोंमें माहात्म्य—दूसरी नदियोंके जलकी भाँति गंगाजल वर्षा-ऋतुमें दूषित नहीं होता। प्रवाहमेंसे निकाला हुआ गंगाजल बासी, ठण्डा, गरम या अस्पृश्य आदिसे छू जानेपर भी दूषित नहीं होता। गंगाजीमें रात्रिमें भी स्नान करनेसे दोष नहीं होता। घरमें लाकर गंगाजलसे स्नान करनेपर भी अश्वमेध यज्ञका फल प्राप्त होता है। यह माहात्म्य सर्वत्र शास्त्रोंमें निर्दिष्ट है।

स्नानविधि—सर्वप्रथम सिरमें जल डालना चाहिये; इससे सिर आदिकी गर्मी पैरोंसे निकल जाती है। इसके विपरीत पैरोंमें प्रथम जल डालनेसे पैर आदि अंगोंकी गर्मी मस्तिष्क (सिर)-में पहुँचकर हानि पहुँचाती है। यही कारण है कि गंगा आदि जलाशयोंपर पहुँचकर प्रथम सिरमें जल धारण करके प्रणाम करनेका शास्त्रोंमें विधान किया है। ऐसा करनेसे भौतिक विज्ञानानुसार उक्त लाभ तो होता ही है, किंतु आधिदैविक विज्ञानानुसार वरुण देवता तथा गंगा आदि देवियोंका आदर भी होता है। नदियोंमें जिधरसे प्रवाह आ रहा हो उधर मुख करके स्नान करना चाहिये तथा बावड़ी, तालाब आदिमें सूर्यकी ओर मुख करके स्नान करना चाहिये। स्नान करते समय जलका स्पर्श पाते ही वाणी प्रफुल्लित हो जाती है, उसका सदुपयोग भगवन्नाम-कीर्तन, स्तोत्र-पाठ आदिद्वारा करना चाहिये। मनोविज्ञानानुसार गंगादि पवित्र तीर्थोंके साथ मानसिक सम्बन्ध स्थापित करनेके लिये और आधिदैवविज्ञानानुसार साधारण जलको भी पवित्र जल बनानेके लिये निम्न श्लोक बोलना चाहिये—

गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु॥

स्नान-निषेध—बीमारीमें, भोजन करनेके बाद, अजीर्णमें, १० बजेसे ३ बजेतक रात्रिमें स्नान करनेसे शारीरिक हानि होती है। बहुत वस्त्रोंको पहने हुए स्नान करनेसे शरीरमर्दनमें बाधा होती है। अलंकार-आभूषण धारण करके स्नान करनेसे आभूषणोंकी क्षति होती है। नग्न होकर नहाना निर्लज्जताका द्योतक तो होता ही है, जलदेवताका निरादर भी होता है। इन सब कारणोंसे शास्त्रोंमें उस प्रकार स्नान करनेका निषेध किया है।

नातुरो न भुक्त्वा नाजीर्णे न बहुवाससा न नग्नो नाश्नन् नालंकृतो न सस्त्रजो न निशायाम्॥

(लघुहारीत)

श्रीगंगादेवी

(स्वामी श्रीविज्ञानहंसजी)

त्वं हि त्रिपथगे देवि ब्रह्मलोकसमक्षमे।
सा त्वां देवि नमस्यामि प्रशंसामि च शोभने॥

यह बात विज्ञान-सिद्ध है कि जड़ वस्तुओंमें जितनी शक्तियाँ देखनेमें आती हैं, वे सब दैवी शक्तिका ही स्थूल पदार्थके आश्रयसे विकासमात्र हैं; क्योंकि प्रत्येक जड़ वस्तुमें कार्यकारिणी शक्ति तभी हो सकती है, जब उसकी संचालक कोई चेतन-शक्ति हो; क्योंकि प्रत्येक जड़-शक्ति चेतन-शक्तिका सहारा पाकर ही सब प्रकारका कार्य करती है।

जल, वायु, अग्नि आदिमें जो कुछ शक्ति है, वह कभी काम न कर सकती, यदि उसको चलानेवाली उसकी अधिष्ठातृ चेतन-शक्ति न होती। चेतन-शक्तिके अधिष्ठातृत्वसे ही जड़-शक्तियोंका कार्य हुआ करता है, इसलिये वह देव और देवी शब्दसे व्यवहृत होती है।

गंगाजलके भीतर भी चैतन्यरूपा श्रीगंगादेवी यदि विराजमान न होतीं तो इनके स्पर्शमात्रसे राजा सगरके साठ हजार पुत्र तर न जाते, इनके दर्शनस्पर्शमात्रसे अनन्त जीवोंका कल्याण न हुआ होता, इनकी इतनी महिमा न गायी गयी होती, यहाँतक कि इनके दर्शनके लिये हजारों कोससे इतनी जनता न दौड़ती होती।

संसारमें शक्तिकी ही पूजा हुआ करती है, देहकी नहीं। आज श्रीगंगाजीपर अतत्त्वज्ञोंद्वारा आक्षेप, निन्दा आदि होते रहनेपर भी जो लाखों करोड़ों मनुष्य श्रीगंगाजीका नाम सुनते ही भक्ति-भावसे आकर्षित होते हैं और इनके जलमें स्नान करके अपनी आत्माको पवित्र हुआ मानते हैं, यह भी यदि श्रीगंगाजलमें श्रीगंगादेवी विराजमान न होतीं तो कभी न होता। यह सब श्रीगंगादेवीकी महिमाका ही परिचय है।

सामान्य पर्वपर अत्यन्त कष्ट सहन करके काशी, प्रयाग, हरिद्वार आदि स्थानोंमें जाकर स्नान करके समस्त पापनाश और मुक्तिपद प्राप्त करनेकी आशा रखते हैं।

गंगाजलमें श्रीगंगादेवीके रहनेसे ही गंगाजलमें कई तरहकी शरीरको आरोग्य करनेवाली स्थूल शक्तियाँ और मन तथा आत्माको पवित्र करनेवाली सूक्ष्म शक्तियाँ विद्यमान हैं।

श्रीगंगाजलमें जो अद्भुत स्थूल शक्ति विद्यमान है, उसको इतने दिनोंके बाद पश्चिमी विद्वानोंने कुछ-कुछ निर्णय करके सबकी आँखें खोल दी हैं।

दुर्भाग्यका विषय है कि नवीन रोशनीवाले लोग जो पहले अपने पूज्य ऋषियोंकी बातको नहीं मानते थे, वे ही आज पश्चिमी विज्ञानवेत्ताओंके मुखसे सुनकर उसे मानने लगे हैं। जबतक विज्ञानवेत्ताओंने गंगाजलके विषयमें कुछ निर्णय नहीं किया था, तबतक अँगरेजी विद्याका अभिमान करनेवाले लोग समझते थे कि गंगाजल और कुआँका जल बराबर ही है। अब उनको पता लगा है कि गंगाजल, गंगाकी मिट्टी और गंगाकी वायुमें शरीरको पुष्ट एवं आरोग्य करनेकी अपूर्व शक्ति विद्यमान है।

बड़े-बड़े विज्ञानवेत्ताओंने कह दिया है कि गंगाजलमें शरीरकी शक्ति बढ़ानेकी अपूर्व क्षमता है। रोगसे मुक्त होनेपर दुर्बल मनुष्यको डॉक्टरी 'टॉनिक' पीनेकी कोई जरूरत नहीं है। केवल गंगाजल पीने और गंगा-स्नान करनेसे ही शरीरमें पूर्ण बल प्राप्त हो सकता है। गंगाजल पीनेसे अजीर्ण रोगमें अजीर्ण ज्वर नष्ट होता है। गंगाकी मिट्टी लगानेसे चर्म रोगमें आराम होता है। गंगाके जलमें नहानेसे मस्तकके समस्त रोग अच्छे होते हैं।

विज्ञानवेत्ताओंने यह भी दिखलाया है कि कुएँ और तालाब वगैरहके जल दो ही चार दिनमें खराब हो जाते हैं—पीनेलायक नहीं रहते। गंगाजल चाहे कितने ही दिनोंतक रखा रहे, वह खराब नहीं होता; वैसा ही स्वादिष्ट और पीनेयोग्य बना रहता है।

प्लेग, हैजा, मलेरिया आदि कठिन-कठिन संक्रामक रोग खराब स्थान और खराब जलसे ही उत्पन्न होते हैं; परंतु परीक्षा करके देखा गया है कि गंगाजलमें कभी किसी रोगका कीट पैदा नहीं होता, बल्कि गंगाजलमें रोगके कीट लाकर छोड़नेसे वे भी मर जाते हैं।

गंगाजलमें इस प्रकारकी अपूर्व शक्ति है, इसीलिये महर्षियोंने गंगाजलकी इतनी स्तुति की है—

शरीरे जर्जरीभूते व्याधिग्रस्ते कलेवरे।
औषधं जाह्नवीतोयं वैद्यो नारायणो हरिः॥

इस शक्तिकी मूलभूता श्रीगंगादेवी चैतन्यस्वरूपिणी प्रसिद्ध हैं, जिनकी महिमासे ग्रन्थ-के-ग्रन्थ भरे हुए हैं।

गंगाके स्पर्शसे, यहाँतक कि स्मरणसे भी पाप-राशि नष्ट होती है। श्रीगंगाकी जो दैवी-शक्ति मन्दाकिनी-रूपसे दिव्य लोकमें व्यापक थी, उसको ही भक्त भगीरथने अपनी तपस्या और भक्तिके बलसे मर्त्यलोकमें गंगादेवीरूपसे प्रकट कर दिया।

श्रीगंगाजीकी उत्पत्तिके विषयमें कहीं विष्णुजीसे उत्पन्न होना और कहीं शिवजीके मस्तक एवं जटा और कहीं हिमालयपर्वतसे उत्पन्न होनेका जो वर्णन मिलता है, वह सब श्रीगंगादेवीके आधिभौतिक, आधिदैविक एवं आध्यात्मिक भावके वर्णन हैं।

हिमालयपर्वतसे श्रीगंगाजीका निकलना आधिभौतिक भावका वर्णन है। शिवजीके मस्तकसे श्रीगंगाजीका निकलना आधिभौतिक एवं आधिदैविक दोनों भावोंका वर्णन है। श्रीविष्णुके द्रवरूप होनेपर प्रकट होना इसमें अध्यात्म स्वरूपका वर्णन है।

ऋषिलोग पाश्चात्य-विद्या-प्रेमियोंकी-सी दृष्टि-सम्पन्न होते तो प्रत्येक वस्तुको केवल स्थूल भावसे ही निश्चयकर उसके सूक्ष्म और आध्यात्मिक भावको उड़ा देते। यदि गंगाजीको दूसरे जलाशयोंकी तरह जलाशय-मात्र ही समझते तो केवल हिमालयसे ही उनकी उत्पत्ति बतलाते, परंतु ऋषिलोग तो आस्तिक थे, सभी वस्तुओंमें तीन-तीन भाव देखते थे, इसलिये श्रीगंगाजीको केवल जलाशय न समझकर वे उनको देवी समझते थे। श्रीगंगाजीमें दैवी-शक्तिका प्रकाश श्रीशिवजीके आश्रयसे हुआ था; क्योंकि शिवजी महाशक्तिके पति हैं, इसलिये दैवी-शक्तिके आधार हैं। उनके मस्तकसे निकली हुई श्रीगंगाजीमें अनन्त दैवी-शक्तियाँ भरी हैं, जिससे श्रीगंगाजी त्रिलोक-तारिणी, पतितपावनी हैं।

जिनके स्पर्शसे सगर-वंशके शापग्रस्त मनुष्योंका उद्धार हो गया था, वही महान् देवता शिवजीके मस्तकसे दैवी गंगा प्रकट होनेका रहस्य है। ऋग्वेद (१०।७५।५)-में और कात्यायनश्रौतसूत्र, शतपथ ब्राह्मणमें एवं रामायण, महाभारत तथा पुराण-ग्रन्थोंमें श्रीगंगाजीकी अलौकिक महिमा गायी गयी है।

स्वर्गसे उतरनेपर श्रीगंगाजी शिवजीकी जटामें अटक गयीं, भगीरथके फिर तप करनेपर बिन्दु-सरोवरमें आ गिरीं। बिन्दु-सरोवरसे श्रीगंगाजीकी सात धाराएँ निकलीं। ह्लादिनी, पावनी और नलिनी नामकी तीन धारा पूर्वको, वंक्षु, सीता और सिन्धु तीन धाराएँ पश्चिमको चली गयीं। एक धारा भगीरथ-प्रदर्शित मार्गमें चली जिसका नाम भागीरथी है। भागीरथीने ही सागरमें जाकर सगर-वंशका उद्धार किया।

दर्शनात् स्पर्शनात् पानात्तथा गङ्गेति कीर्तनात्।
स्मरणादेव गङ्गायाः सद्यः पापात्प्रमुच्यते॥

श्रीगंगाजीके दर्शन, स्पर्श, पान तथा गंगा—ऐसा नाम-कीर्तन करनेसे तत्काल ही मनुष्य पापोंसे छूट जाता है।

जाह्नवीतीरसम्भूतां मृदं मूर्ध्ना बिभर्ति यः।
बिभर्ति रूपं सोऽर्कस्य तमोनाशाय केवलम्॥

गंगा-तीरकी मिट्टीको जिसने शिरपर धारण किया, उसने अपने करोड़ों कुलोंका उद्धार कर दिया। अज्ञान-तमोनाशके लिये उसने सूर्यदेवको शिरपर धारण कर लिया।

चान्द्रायणसहस्राणां यत्कृतं परिकीर्तितम्।
ततः शतगुणं पुण्यं गङ्गागण्डूषतो भवेत्॥

सहस्र बार चान्द्रायण व्रत करनेसे जो पुण्य होता है, गंगाजलका गण्डूष लेनेसे उसका शतगुण होता है।

संक्रान्तिषु व्यतीपाते ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः।
पुष्ये स्नात्वा तु गङ्गायां कुलकोटिं समुद्धरेत्॥

चन्द्र-सूर्य-ग्रहणके समय जिसने गंगा-स्नान किया, उसने अपने करोड़ों कुलोंका उद्धार कर दिया। उसने सभी तीर्थोंमें स्नानका पुण्य ले लिया। उसको पृथिवी घूमनेकी क्या आवश्यकता है?

गङ्गातीरे सदा लिङ्गं बिल्वपत्रैश्च ये नराः।
पूजयिष्यन्ति सम्प्रीतास्तेऽपवर्गस्य भाजनम्॥

गंगातटपर बिल्वपत्रसे जो शिव-पूजन करता है,

उसको मोक्षका अधिकार मिलता है।

यज्ञो दानं तपो जप्यं श्राद्धञ्च सुरपूजनम्।
गङ्गायां तु कृतं नित्यं कोटिकोटिगुणं भवेत्॥

यज्ञ, दान, तप, जप, देव-पूजा, तर्पण, श्राद्ध गंगातटपर किये जानेसे करोड़ों गुना फल उत्पन्न करता है। इस तरह श्रुति, स्मृति और पुराणोंमें भी गंगाजीकी भूरि-भूरि महिमा मिलती है।

शास्त्रोंमें लिखा हुआ है कि श्रीगंगाजीपर पहुँचनेपर ये तेरह बातें न करनी चाहिये—

गङ्गां पुण्यजलां प्राप्य त्रयोदश विवर्जयेत्।
शौचमाचमनञ्चैव निर्माल्यं मलघर्षणम्॥
गात्रसंवाहनं क्रीडां प्रतिग्रहमथो रतिम्।
अन्यतीर्थरतिञ्चैव अन्यतीर्थप्रशंसनम्॥
वस्त्रत्यागमथाघातं सन्तारञ्च विशेषतः।

पुण्यतोया श्रीगंगाजीमें मल-मूत्र-त्याग, मुख धोना, दंत-धावन, कुल्ली आदि करना, पूजाके फूल-निर्माल्य फेकना, मल-संघर्षण या बदनको मलना नहीं चाहिये। जलक्रीड़ा अर्थात् स्त्री-पुरुषोंकी रति-क्रीड़ा, बुढ़वामंगल आदि विलासिताजनक क्रीड़ा नहीं करनी चाहिये। इसी प्रकार दान-ग्रहण भी नहीं करना चाहिये। गंगाजीके प्रति अभक्ति और अन्य तीर्थकी प्रशंसा नहीं करनी चाहिये। पहने हुए वस्त्रको छोड़ना, जलपर आघात करना या तैरना नहीं चाहिये।

नाभ्यंगितः प्रविशेच्च गङ्गायां न मलार्दितः।
न जल्पन्न मृषा वीक्षन्न वदन्ननृतं नरः॥

बदनमें तेल मलकर या मैले बदन होकर गंगामें प्रवेश नहीं करना चाहिये। वृथा बकवाद, मिथ्या भाषण या इधर-उधर ताकना तथा कुदृष्टि नहीं करना चाहिये। (दुःखका विषय है कि फजूल बकवाद, हँसी-दिल्लगी आदिका स्थान खासकर काशी-जैसे स्थानमें हो गया है।)

काशीखण्डके २७वें अध्यायमें गंगाके माहात्म्यका बड़े विस्तारसे वर्णन पाया जाता है। उपसंहार-स्वरूप यहाँ उसका संक्षेप दिया जाता है—

श्रीमहादेवजी भगवान् विष्णुसे कहते हैं—हे विष्णो! वह जन समस्त तीर्थोंमें स्नान कर चुका, सब यज्ञोंमें दीक्षित हो गया और सम्पूर्ण व्रतोंको पूर्ण कर चुका जो एक गंगाका सेवन करता है। जो कोई गंगासेवी है, वह सकल तपस्याओंके आचरण, समस्त प्रकारके दान और निखिल योगाभ्यासके नियमोंको प्राप्त हो चुका है। जो गंगास्नायी है, वह मनुष्य समस्त वर्णाश्रम, वेदाध्यायी और शास्त्रार्थ-पारगामी लोगोंसे विशेष माननीय है। मन, वचन और शरीरके बहुविध दोषोंसे दुष्ट भी पुरुष इस लोकमें केवल गंगाके दर्शनसे ही पवित्र हो जाता है, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं।

सत्ययुगमें सर्वत्र ही तीर्थ थे, त्रेतामें केवल पुष्कर ही तीर्थ था, द्वापरमें कुरुक्षेत्रमात्र तीर्थ था और कलियुगमें एक गंगा ही तीर्थ है।

हे हरे! मनुष्य पूर्वजन्मके अभ्यास तथा वासनाके कारण और मेरी परमानुकम्पासे गंगातटमें निवास पाता है।

सत्ययुगमें मोक्षका कारण ध्यान ही था; त्रेतामें ध्यान और तप, ये दोनों ही कारण थे; द्वापरमें ध्यान, तप, यज्ञ—ये तीनों कारण होते थे और कलियुगमें केवल गंगा ही मोक्षका कारण है। जो कोई मरणपर्यन्त गंगा-तीरका त्याग नहीं करता, वह जन वेदान्तवेत्ता योगी और सदा ब्रह्मचारी है। कलिकालमें पापमय हृदय, परद्रव्य-परायणचित्त, विधिहीन क्रियाओंवाले लोगोंकी बिना गंगाके गति नहीं है। गंगा-गंगा इस प्रकारके जप करनेसे दरिद्रता, कालकर्णी (अलक्ष्मी), दुःस्वप्न, दुश्चिन्ता निकट नहीं आ सकती। हे विष्णो! सदा सर्व जगत्‌की हितकारिणी गंगा—भावानुसार—समग्र भूतोंको ऐहिक और पारलौकिक फल देती हैं। हे हरे! कलिमें यज्ञ, दान, तपस्या, योग, जप, नियम और यम इत्यादि गंगा-सेवनके सहस्रांश फलको भी नहीं प्राप्त कर सकते।

अष्टांग-योग, तपस्या और यज्ञोंसे कौन काम? केवल गंगा-तीरपरका वास ही ब्रह्मज्ञानका कारण होता है। गोविन्द! यदि गंगासे दूर स्थित भी कोई व्यक्ति गंगा-माहात्म्यका विज्ञ हो तो उसपर भी गंगा प्रसन्न होती हैं। [गीता-धर्म]

श्रीगङ्गाष्टकम्

(आदि सुमेरुपीठाधीश्वर जगद्गुरु शङ्कराचार्य ब्रह्मलीन स्वामी श्रीमहेश्वरानन्दसरस्वतीजी)

श्रीमत्पर्वतराजपुत्रि महिते मान्ये वदान्योत्तमे
गण्यास्ते गणकैर्गुणा गणनया पारेपरार्धं स्थिताः।
अप्यादित्यसुरेज्यदैत्यगुरुभिर्गङ्गे गिरीशाङ्गने
के वा तत्र वयं वराकनिवहोत्तंसैः सहाध्यायिनः॥ १॥

श्रीपर्वतराजकुमारि पूज्ये, मान्ये, सर्वश्रेष्ठ दानशीले, शिववल्लभे, हे गंगे! सूर्य, बृहस्पति, शुक्राचार्य-जैसे आद्य ज्योतिषियोंके द्वारा भी संख्यातीत आपके गुण जब गिने नहीं जा सकते, तब हम-जैसे वराकमण्डल-मूर्धन्योंकी क्या गणना? अर्थात् हम आपकी गुण-गणना (स्तुति)-में समर्थ नहीं हो सकते॥ १॥

गौरीप्रेमपरप्रमोदपरितः पूर्णे परब्रह्मणः
श्रीकृष्णस्य गलन्मधुद्रवरसप्राग्भारसम्भाविते।
विश्वोद्धारपरायणे परशिवेऽकम्पानुकम्पोत्सवे
ब्रह्मोपेन्द्रमहेन्द्रवन्दितपदे तुभ्यं सहस्रं नमः॥ २॥

गौरीके प्रेमरूप उत्कृष्ट आमोदसे परिपूर्ण, परब्रह्म श्रीकृष्ण ही पिघलकर मधुर रसरूपसे आपके प्रवाह-रूपमें प्रकट हैं अतएव अतिशय सम्मानित, विश्वके उद्धारमें परायण, पराशक्ति, निष्कम्प अनुकम्पा-प्रदानमें उत्सवयुक्त और ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र आदिके द्वारा वन्दितचरण हे गंगे! आपको सहस्रों बार नमस्कार है॥ २॥

गङ्गे तुङ्गतरङ्गभङ्गसुभगे भाग्योदयाधायिनि
क्षोणीध्रक्षितिपालमौलिकलितालङ्कारहारोज्ज्वले।
विन्दूद्वर्षणसक्षणाञ्चितचलद्वीचीचयोदञ्चिते
मातर्जाह्नवि जायतां जनुरिदं त्वत्पादपद्मार्पणम्॥ ३॥

गंगे! ऊँची तरंगोंकी रचनासे सुन्दर, भक्तोंके भाग्योदयका नवनिर्माण करनेवाली, पर्वतराज हिमालयके शिरमें धारित मुक्तामालाके समान उज्ज्वल, पर्वतकी शिलाओंके संघर्षसे होनेवाले विन्दुओंके उद्वर्षणमें सोत्साह संलग्न अतएव मनोरम, प्रतिक्षण चलती हुई तरंगोंके समूहसे सुशोभित, हे मातः! जाह्नवि! यह मेरा जन्म आपके पादपद्मोंमें अर्पित हो॥ ३॥

किं वायं रसनिर्भरोऽमृतझरो ब्राह्मः प्रकाशः स्फुटः
किं वासौ ललिता त्रिलोककलिता पुण्योज्ज्वलश्रीः शुभाः।
आहोस्वित् पयसां निधिः किमपरो लावण्यपूरोल्लसन्
सोल्लासं विलसन्ति नस्त्वयि शिवेऽनल्पाविकल्पालयः॥ ४॥

हे शिवे! यह आपका प्रवाह क्या रसपरिपूर्ण, सतत अमृतवर्षी, विशद परब्रह्मप्रकाश है? अथवा त्रैलोक्यकी पुंजीभूत, सुन्दर, मंगलमयी धर्मकी निर्मल श्री है? या पवित्र श्रृंगारलक्ष्मी है? अथवा अनन्त लावण्यसे लसित यह दूसरा क्षीर-समुद्र है? इस प्रकार आपका दर्शन होनेपर आपमें हम लोगोंकी अनेक संशय कोटियाँ सोल्लास विलसित होती हैं॥ ४॥

मातर्जाह्नवि निर्जराप्लुतसुधासारोज्ज्वलाम्भोभरे
मज्जन्मत्तमतङ्गजे मुनिमनोहंसैकशान्तिप्रदे।
धन्यास्ते तरवो लतावलिलसत्सौभाग्यसम्मांसला
ये नित्यं भवदीयवीचिनिचयैः संस्नान्ति तीरोद्गताः॥ ५॥

देवताओंके द्वारा स्नात, अमृतके समान श्रेष्ठ उज्ज्वल जलराशिसे परिपूर्ण, मदमत्त गजराजोंकी जलक्रीड़ासे मनोरम और मुनियोंके मनोहंसको एकमात्र शान्ति प्रदान करनेवाली हे मातः जाह्नवि! लतावलयालङ्कृत अतएव सौभाग्योल्लसित वे वृक्ष धन्य हैं, जो आपके तीरपर उछलनेवाली आपकी तरंगमालाओंमें निरन्तर स्नान करते हैं॥ ५॥

येषामुद्गतकोटिजन्मसुकृतैरुद्वेलितैर्निर्भरम्
निष्पूता मतिरुज्ज्वलाच्छजलधौ पूरे पयःफेनिले।
संलग्ना जननि प्रपन्नशरणाधानैकदीक्षाव्रते
श्रीमत्याः प्रभवन्ति ते ध्रुवमहो सन्मुक्तये भूतये॥ ६॥

जिनकी अतिपवित्र उज्ज्वला बुद्धि कोटिजन्मके किये गये फलप्रदानोन्मुख पुण्यों के प्रभावसे आपके स्वच्छ जलराशिपूर्ण पयःफेनिल प्रवाहमें अति अनुरागप्रवण है, हे प्रपन्नोंकी रक्षाका व्रत धारण करनेवाली जननि! वे अवश्य ही आपकी कृपासे मुख्य मुक्ति (कैवल्य)

और सभी अभ्युदय प्राप्त करनेमें समर्थ होते हैं ॥ ६ ॥

रे रे तुन्दिल मोह मा व्रज सखे सन्त्यज्य मां दूरतः
किं रे पातकपर्वत द्रुतगतिः पश्चात्पदो जायसे।
आश्चर्यं सुहृदः पलायनपराः कामादयः सत्त्वरा
यान्त्वेते सुचिराय मां कलयते गङ्गा मनोहारिणी ॥ ७ ॥

रे तुन्दिल (अत्यन्त प्रबल) सखे मोह! मेरा परित्याग कर दूर मत जाओ। रे पातकपर्वत (पातकोंके पहाड़)-के आगे चल, आगे चलनेका स्वभाव छोड़कर तीव्र गतिसे पीछेकी ओर क्यों लौट रहे हो? हमारे सदाके मित्र! काम, क्रोध आदि बड़े वेगसे हमें छोड़कर भाग रहे हैं, यह आश्चर्य है! ये सभी सदाके लिये चले जायँ, क्योंकि मनोहारिणी भगवती गंगा हमारे कल्याणके लिये दत्तावधान हैं ॥ ७ ॥

किं कुर्वे न विभाति निश्चितमिदं किं गम्यतां सादरम्
गङ्गास्नानपरायणं वरयते नारायणो मां भृशम्।
ब्रह्मा प्रार्थयते सुरेश्वरविभुः स्वर्गाय मां वाञ्छति
श्रेयो मे शिवदं परात्परमिदं गङ्गाजलं जन्यताम् ॥ ८ ॥

इस समय मैं क्या करूँ, कुछ निश्चित नहीं होता कि मैं सादर किधर जाऊँ; क्योंकि गंगास्नानमें निरन्तर संलग्न मुझे श्रीनारायण अति आदरसे वरण कर रहे हैं, ब्रह्मा सत्यलोकके लिये मेरी प्रार्थना कर रहे हैं और सुरराज मुझे स्वर्ग ले जानेके लिये इच्छुक हैं। वस्तुगत्या तो सर्वश्रेष्ठ परब्रह्मस्वरूप यह गंगाजल ही मेरे लिये भूतभावन सदाशिवका प्रापक हो ॥ ८ ॥

श्रीजाह्नवीचरणपङ्कजरेणुगन्धि
स्तोत्राष्टकं पठति नित्यमनन्यचेताः।
आचार्यशङ्करपदेन महेश्वरेण
प्रोद्भावितं भवति तस्य समस्तसिद्धिः ॥ ९ ॥

श्रीगंगाके चरणपंकजके परागसे सुगन्धित, शंकराचार्य श्रीमहेश्वरानन्द सरस्वतीजी महाराजके द्वारा विरचित इस गंगाष्टकका अनन्यचेता होकर जो प्रतिदिन पाठ करता है, उसके सभी मनोरथ सिद्ध होते हैं ॥ ९ ॥

॥ इति श्रीमदूर्ध्वाम्नायकाशीपीठाधीश्वरशङ्कराचार्य स्वामी श्रीमहेश्वरानन्दसरस्वतीपादविरचितं गङ्गाष्टकं सम्पूर्णम् ॥

गंगाजल राशि सुहावन

[राग मधुवन्ती—ताल-त्रिताल]

गंगाजल राशि सुहावन।
धवल धार श्रुतिसार ब्रह्म द्रव, देव दनुज नर पावन ॥ १ ॥
धरणीहार पछार पापदल, यम भट सैन्य भगावन।
काल व्याल कलिकाल करालित, दुख दारिद्र नसावन ॥ २ ॥
दक्षिण स्वर्ग वाम निःश्रेयस, मुनिमन नाच नचावन।
पान अमृत रस बरस शान्ति सुख, जपतप योग बढ़ावन ॥ ३ ॥
औषध प्रबल असाध्य व्याधिगण, हरिपद कमल नहावन।
गिरिजा कुटिल कटाक्ष विलोकित, शिव शिरजटा चढ़ावन ॥ ४ ॥
ऋद्धि सिद्धि प्रद मंगल मंजुल, दिव्य दृष्टि बरसावन।
परबस दरस महेश्वर कारण, भाल कुरेख मिटावन ॥ ५ ॥
चक्रवर्ति आनन्द इन्द्र पद, त्याग बुद्धि सरसावन।
ब्रह्मा विष्णु विमोहन शिव पद, प्रेमाम्बुधि उमगावन ॥ ६ ॥

—स्वामी श्रीमहेश्वरानन्दजीसरस्वती

पतितपावनी माता गंगा

(गोलोकवासी भक्त श्रीरामशरणदासजी)

पतितपाविनी, कलिमलहारिणी, सर्वतीर्थमयी भगवती श्रीगंगाजी महारानी धर्मप्राण भारतकी अद्भुत दिव्य विशेषताओंमेंसे एक हैं। माँ गंगाका पावन जल साक्षात् ब्रह्मद्रव है। अनादिकालसे बड़े-बड़े देवी-देवता, संत-मुनि-ऋषि तथा अवतार माँ गंगाकी उपासना-प्रार्थनाकर अपना जीवन धन्य करते रहे हैं।

श्रीभगीरथजीकी घोर तपस्यासे प्रसन्न होकर भगवती श्रीगंगाजी भगवान् विष्णुके चरणोंसे आविर्भूत होकर आशुतोष शंकरकी जटाओंमें होती हुई पवित्र भारतभूमिको युगों-युगोंसे शस्यश्यामला बना रही हैं।

भगवती गंगाके आविर्भावकी अभिव्यक्ति शास्त्रोंमें निम्न प्रकार की गयी है—

दशम्यां शुक्लपक्षे तु ज्येष्ठे मासे बुधेऽहनि।
अवतीर्णा यतः स्वर्गाद्धस्तर्क्षे च सरिद्वरा॥
हरते दश पापानि तस्माद्दशहरा स्मृता।

ज्येष्ठ मासके शुक्लपक्षकी दशमीको हस्त नक्षत्रमें गंगा स्वर्गसे भूमिपर आविर्भूत हुई थीं। इस दिन स्नानादि शुभ कर्मका आचरण करनेसे चूँकि मनुष्यके दशविध पापोंका विनाश हो जाता है, अतः यह तिथि 'दशहरा' के नामसे प्रसिद्ध है।

गंगा केवल साधारण नदीमात्र नहीं अपितु भारतीय संस्कृतिकी ज्वलन्त प्रतीक हैं। भगवती गंगाकी पावन महत्तासे तमाम वेद, शास्त्र, उपनिषद्, पुराण, रामायण भरे पड़े हैं। ऋग्वेदमें लिखा है—

'इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुद्रि।'
(ऋग्वेद १०।७५।५)

पद्मपुराणमें कहा गया है—

तिस्रः कोट्योऽर्धकोटी च तीर्थानां वायुरब्रवीत्।
दिवि भूम्यन्तरिक्षे च तानि ते सन्ति जाह्नवि॥
सर्वदेवमयो विष्णुर्गङ्गा विष्णुमयी यतः।
गङ्गेति स्मरणादेव क्षयं याति च पातकम्।
कीर्तनादतिपापानि दर्शनाद् गुरुकल्मषम्॥
स्नानात्पानाच्च जाह्नव्यां पितॄणां तर्पणात्तथा।
महापातकवृन्दानि क्षयं यान्ति दिने दिने॥

हे गङ्गे! वायुने पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्युलोकमें साढ़े तीन करोड़ तीर्थ बताये हैं, वे सब आपमें वास करते हैं। भगवान् विष्णु सर्वदेवस्वरूप हैं और गंगा विष्णुरूप हैं, इसलिये गंगाके स्मरणमात्रसे सब पाप क्षीण हो जाते हैं। गंगाका कीर्तन करनेसे गुरुतर पाप तथा स्नान और पितृतर्पण करनेसे दिन-दिन महापातकोंके समूह नष्ट होते हैं।

अन्यत्र कहा गया है—कलियुगमें साधना-तपस्या तथा भक्ति करना बहुत दूभर कार्य बताया गया है। कलियुगमें वातावरण दूषित हो जानेके कारण तपस्या तथा ध्यानमें मन लगाना आसान नहीं है। ऐसी स्थितिमें धर्मशास्त्रोंमें कलियुगमें भगवन्नाम-संकीर्तन तथा गंगास्नानको ही कल्याणका एकमात्र साधन निरूपित किया गया है।

बृहन्नारदीय पुराणमें लिखा है—

कृते तु सर्वतीर्थानि त्रेतायां पुष्करं परम्।
द्वापरे तु कुरुक्षेत्रं कलौ गङ्गा विशिष्यते॥
कलौ तु सर्वतीर्थानि स्वं स्वं वीर्यं स्वभावतः।
गङ्गायां प्रतिमुञ्चन्ति सा तु देवी न कुत्रचित्॥

सतयुगमें सभी तीर्थोंका प्रभाव रहता है। त्रेतामें पुष्करका विशेष माहात्म्य हो जाता है। द्वापरमें कुरुक्षेत्रका और कलियुगमें गंगाजीका विशेष माहात्म्य है। कलियुगको आया देख सभी तीर्थ स्वाभाविक रूपसे ही अपनी-अपनी सामर्थ्य गंगाजीमें विसर्जित कर देते हैं, पर गंगाजी अपना सामर्थ्य कहीं नहीं छोड़तीं।

बृहन्नारदीय पुराणमें विधिवत् गंगा-स्नानका यह माहात्म्य बताया गया है—

महापातकसंयुक्तो युक्तो वा सर्वपातकैः।
गङ्गास्नानेन विधिवन्मुच्यते सर्वपातकैः॥

किसीको सब पाप लगे हों, महापातक भी क्यों न हो, शास्त्रीय परम्परा तथा नियमसे गंगास्नान करनेसे सब दूर हो जाते हैं। माँ गंगाके तटपर रहकर किये जानेवाले तमाम पुनीत कार्योंका फल कोटि-कोटि गुणित होकर मिलता है।

पद्मपुराणके सृष्टिखण्डमें कहा गया है—

यज्ञो दानं तपो जप्यं श्राद्धञ्च सुरपूजनम्।
गङ्गायां तु कृतं नित्यं कोटिकोटिगुणम्भवेत्॥

यज्ञ, दान, तप, जप, श्राद्ध, देवपूजन—जो-जो भी

कर्म गंगाजीके तटपर किये जाते हैं, सब कोटि-कोटि गुणित हो जाते हैं।

यहाँ यह भी ध्यान रखना चाहिये कि गंगातटपर किया गया पाप भी कोटि-कोटि गुणा होकर नरकका मार्ग प्रशस्त करता है। अतः गंगातटपर बहुत मर्यादा तथा सादगीके साथ रहनेकी आवश्यकता है।

गंगा माँ भुक्ति और मुक्ति दोनों प्रदान करनेवाली हैं। गंगाके पावन तटपर रहकर संयमके साथ शास्त्रानुसार पूजा-अर्चना करनेसे मन स्वतः भक्तिकी ओर उन्मुख होने लगता है।

पद्मपुराणमें कहा गया है—

भुक्तिमुक्तिप्रदा गङ्गा सुखमोक्षाग्रतः स्थिता।
अनेकजन्मसङ्घातपापं पुंसां विनश्यति॥

गंगाजी भुक्ति और मुक्ति दोनों देती हैं। स्वर्ग और मोक्ष प्राप्त करानेवाले साधनोंमें गंगाजी अग्रगण्य हैं। गंगा-सेवनसे पुरुषोंके अनेक जन्मोंके संचित पाप नष्ट हो जाते हैं।

महर्षि वाल्मीकिजी महाराजने श्रीगंगाजीसे अपनी मनोकामना इन शब्दोंमें व्यक्त की थी—

मातः शैलसुतासपत्नि वसुधाशृङ्गारहारावलि
स्वर्गारोहणवैजयन्ति भवतीं भागीरथि प्रार्थये।
त्वत्तीरे वसतस्त्वदम्बु पिबतस्त्वद्वीचिषु प्रेङ्खत-
स्त्वन्नाम स्मरतस्त्वदर्पितदृशः स्यान्मे शरीरव्ययः॥

अर्थात् पृथ्वीकी शृंगारमाला, पार्वतीजीकी सपत्नी और स्वर्गारोहणके लिये वैजयन्तीपताकारूपिणी हे भागीरथि! मैं आपसे यह प्रार्थना करता हूँ कि तुम्हारे तटपर निवास करते हुए, तुम्हारा नाम स्मरण करते हुए मेरा शरीरपात हो।

गोस्वामी तुलसीदासजी महाराजने भी 'श्रीरामचरित-मानस' में पग-पगपर माँ भागीरथी गंगाके महत्त्वपर प्रकाश डाला है। गोस्वामीजी महाराज 'दोहावली' में लिखते हैं—

कलि पाषंड प्रचार प्रबल पाप पावँर पतित।
तुलसी उभय अधार राम नाम सुरसरि सलिल॥

तुलसीदासजी कहते हैं कि कलियुगमें पाखण्ड प्रबलरूपसे सामने आता है। सब ओर नीच और पतित, आचारभ्रष्ट, कर्तव्यविमुख लोग ही दिखायी देते हैं। इस विषम स्थितिसे उद्धारके, आत्मकल्याणके दो ही मार्ग हैं—उपाय हैं। एक श्रीरामनामका जप तथा दूसरा सुरसरि श्रीगंगाजीका पवित्र जल; जिसमें स्नान करने, पीने तथा गंगातटपर यथासम्भव निवास करनेसे आत्मकल्याणका मार्ग प्रशस्त होता है।

भारत ही नहीं, पूरे संसारके हिन्दूकी यह कामना होती है कि वह जीवनमें कम-से-कम एक बार माँ गंगाकी गोदमें बैठकर गोते लगा ले तथा उसके जलका पानकर अपना जीवन सार्थक कर ले। गंगा माँको 'सुरसरि' कहा गया है। इसीलिये हिन्दूकी आकांक्षा होती है कि मृत्युके समय गंगामाँका जल तथा तुलसी उसके मुखमें डाला जाय। मृत्युके बाद उसकी अस्थियाँ माँ भागीरथीके पावन जलमें विसर्जित की जायँ।

विज्ञान भी नतमस्तक

धर्मशास्त्र तो गंगाकी महत्ता प्रतिपादित करते ही हैं, विज्ञानने भी गंगाजलको कीटाणुनाशक 'दिव्यातिदिव्य जल' स्वीकार किया है।

अँगरेजोंके शासनकालमें प्रख्यात अँगरेज वैज्ञानिक मि० हैनबरी हैकिंस युक्तप्रान्त तथा मध्यप्रान्तकी सरकारोंके रसायनपरीक्षक थे। उन्होंने वैज्ञानिक विधिसे गंगाजलका परीक्षणकर यह सिद्ध किया था कि गंगाजलमें हैजेके कीटाणुओंको नष्ट करनेकी प्रबल क्षमता विद्यमान है। उन्होंने काशी जाकर गंगाजलका परीक्षण किया। उन्होंने

लिखा—'काशीके गन्दे नालोंका जो जल गंगामें गिरता है, उसमें हैजेके करोड़ों कीट होते हैं, किंतु गंगाजलमें मिलनेके कुछ समय पश्चात् ही ये कीट नष्ट हो जाते हैं।'

उन्होंने गन्दे नालेके पानीको कुएँमें भी छोड़ा तथा उसका परीक्षणकर पाया कि हैजे आदि रोगोंके कीटाणु बढ़कर कई गुना हो गये। दोनोंकी तुलनाके बाद उन्होंने लिखा—

हिन्दूलोग गंगाजलको जो इतना पवित्र और गंगाको देवी मानते हैं, इसके भीतर कुछ तत्त्व हैं। स्वेदज कीट-विज्ञानका पता प्राचीनकालके हिन्दुओंको कैसे लगा? क्या प्राचीनकालमें भी भारतमें ऐसे विज्ञानविद् पण्डित थे? हमें मालूम होता है जिस समय समस्त संसार असभ्यताके अन्धकूपमें डूबा हुआ था, उस समय हिन्दू जातिकी सभ्यता पराकाष्ठापर पहुँची हुई थी।

गंगाजलके गुणोंके बारेमें वैद्यकशास्त्रमें इस प्रकार लिखा है—

गाङ्गं वारि सुधासमं बहुगुणं पुण्यं सदायुष्करम्
सर्वव्याधिविनाशनं बलकरं वृष्यं पवित्रं परम्।
हृद्यं दीपनपाचनं सुरुचिमन्मिष्टं सुपथ्यं लघु
स्वान्तःध्वान्तनिवारि बुद्धिजननं दोषत्रयघ्नं वरम्॥

अर्थात् गंगाका जल अमृतके तुल्य, बहुगुणयुक्त पवित्र, उत्तम, आयु बढ़ानेवाला, सर्वरोगनाशक, बल-वीर्यवर्द्धक, परम पवित्र, हृदयको हितकर, दीपन, पाचन, रुचिकारक, मीठा, उत्तम पथ्य और लघु होता है तथा भीतरी दोषोंका नाशक, बुद्धिवर्धक, तीनों दोषोंका नाश करनेवाला, सब जलोंमें श्रेष्ठ है।

इसके अतिरिक्त यह भी कहा गया है कि—

शरीरे जर्जरीभूते व्याधिग्रस्ते कलेवरे।
औषधं जाह्नवीतोयं वैद्यो नारायणो हरिः॥

(पाण्डवगीता ७४)

इस व्याधिग्रस्त शरीरके जर्जर होनेपर श्रीगंगाजीका जल औषध है तथा भगवान् नारायण वैद्यके रूपमें कल्याणकारी हैं। [प्रेषक—श्रीधर्मेन्द्रजी गोयल]

पतितपावनी गंगा

(श्रीवेणीरामजी त्रिपाठी 'श्रीमाली')

कौन 'मुकुर' इस पुण्यधामका भारतमें—
आया, जिसका रंग-रूप न्यारा है ऐसा,
अवलोकन कर जिसमें जग निज बिंबरूपका—
तन क्या, भीतरका मन भी है विमल बनाता।
किस पयोधिने जन्म दिया है इसको—
किस घनमें उद्भूत अरे यह विद्युन्माला।
सगुण रूप आकाश मध्यमें किस सुधांशुकी,
उतर पड़ी है अमर ज्योत्स्ना, अवनीतलमें।
जिसमें मज्जन करनेपर नर क्या! किन्नर क्या!
देवयोनिकी प्राप्ति सिद्ध करके हैं रहते।
हरिपादांबुजका मधु द्रव अथवा यह ऐसा,
जिसके अगणित बिंदु सिमिट जलराशि बन गये।
कल्पलता यह व्रती भगीरथके शुचि तपकी
नृपति-कल्पनाका भूतलमें सुभग कल्पतरु।
किंवा शिवकी जटाजूटका आश्रय लेकर—
द्रवित हुआ पीयूष सुरोंका अमरतत्व यह।

जह्नु नृपतिकी कृपादृष्टिका नव प्रकाश यह—
सुयश-पताका जैसी वाराणसी क्षेत्रमें।
चमक रही है इंदुखण्ड-सी, शूर-कीर्ति-सी—
दमक रही है गंध लिये यह त्रिविध मनोहर॥
जिसमें वे त्रयताप स्वयं आकर लय होते।
प्रलय सदृश मच जाता, यमका लोक काँपता।
देख रही है शताब्दियोंसे बिंब पुरीका—
चल नयनोंसे चंचल आँचलकी छायासे।
कितने प्रस्तर खंड, और झंझाके झोंके,
टकराकर हो गये ध्वस्त, अस्तित्व हीन वे—
किंतु न यह असिधार कभी कुंठित हो पायी।
सधवाओं-हित नवल वधू शृंगार-हीरसी—
विरहवती विधवाके हित शीतलतादायिनि!
जरठ रोग संभूत-हेतु जो सरस रसायन।
मरणमार्गमें खड़ा माँगता भीख मुक्तिकी—
जिसके, है क्या वही त्रिपथगा पुण्यतमा यह।

गंगा-यात्रा

[सन्त श्रीगयाप्रसादजीकी गंगाचर्या]

सन्त श्रीगयाप्रसादजी व्रजकी एक महान् विभूति थे, साथ ही आध्यात्मिक जगत्के प्रेरणास्रोत भी थे। वे वीतराग भावमें स्थित रहकर अपने आराध्यकी क्रीडाभूमि व्रजमें निरन्तर साधनामें संलग्न रहे। भगवत्पथके पथिकोंके लिये उनका जीवनदर्शन सर्वदा ही अनुकरणीय है। साधुता, सदाचार और सहज भावसे भगवद्भजन आपकी नित्यचर्याके प्रधान अंग थे। आपका प्रारम्भिक जीवन हाथरसमें व्यतीत हुआ। उन दिनों आप गंगास्नानके लिये यथासमय जाया करते थे, आपकी जन्मस्थली पतितपावनी श्रीगंगाजीके किनारेपर ही स्थित थी। आपकी गंगाजीके प्रति अचल निष्ठा थी। जबसे आपने होश सँभाला था, तभीसे प्रतिदिन श्रीगंगाजलका सेवन प्रारम्भ कर दिया था, जो जीवनपर्यन्त चलता रहा। श्रीतुलसी महारानीकी सेवा-परिक्रमा भी आप बड़ी ही निष्ठाके साथ नित्य ही किया करते थे। आप अपने भालपर गिरिराज तलहटीके कुण्डोंकी रज तथा श्रीगंगारजका ही तिलक लगाते थे।

प्रथम तो आप अकेले ही गंगास्नानको जाया करते थे, जब आपके प्रेमी स्नेहियोंको यह पता चला तो सभीने आपके साथ चलनेकी प्रार्थना की। प्रार्थना स्वीकारते समय आपने सभीसे कहा कि भाइयो! हमारे साथ जो पैदल गंगास्नानके लिये चलेगा, उसे ये नियम पूरी तौरसे पालन करने पड़ेंगे—

* मार्गमें कोई भी परचर्चा या परनिन्दा अथवा किसी भी प्रकारका संसारी चिन्तन और संसारी चर्चा नहीं करेगा।

* अत्यन्त आवश्यकता पड़नेपर किंचित् शब्द ही बोलेगा, वह भी अपने साथियोंसे ही, बाहरके किसी भी व्यक्तिसे नहीं।

* एक-एक पग श्रीभगवन्नामके साथ ही उठेगा भले ही सामूहिक रूपसे कीर्तन हो या अकेले नाम-जप, जिसको जो अच्छा लगे, वही कर ले।

* पूरी यात्राके बीच कोई भी किसी प्रकारसे क्रोध नहीं करेगा।

* कोई भी असत्य-भाषण नहीं करेगा। सब सत्य, मृदु, हितकर और प्रिय भाषण ही करेंगे।

* मार्गमें चलते समय कोई भी इधर-उधर नहीं देखेगा। पूर्ण संयमित दृष्टिसे केवल आगेका मार्ग देखकर ही चलना होगा।

* परदोषदर्शन कोई भी नहीं करेगा।

* सभी लोग निर्धारित समयपर एक साथ ही अपना-अपना भोजन करेंगे, आगे-पीछे नहीं। कोई भी एक-दूसरेसे अचार या साग-सब्जीतक नहीं लेगा-देगा तथा कोई भी बार-बार नहीं खायेगा।

* कोई भी रजोगुणी रंग-बिरंगे चमकीले वस्त्र पहनकर नहीं चलेगा। एकदम सादा, नित्य घरमें पहने जानेवाले वस्त्र ही पहनकर चलना होगा।

* यात्राकी थकानसे शरीर शिथिल होनेपर भी कोई यह नहीं कहेगा कि मैं थक गया हूँ। प्रत्येक परिस्थितिको साहसके साथ सहन करना होगा, भले ही वह शारीरिक अथवा मानसिक हो।

आपने गृहस्थ जीवनमें ही महातपस्वी-जैसा जीवन जीकर दिखाया। सम्वत् १९९६ (सन् १९३९)-की श्रावण अधिकमासकी शुक्ला एकादशीके दिन आप अपनी बारहवर्षीया सुपुत्री शान्ति, देवदत्त ब्रह्मचारी और श्रीप्रेमचन्दजीके साथ दण्डवती परिक्रमाके विचारसे श्रीगोवर्धनधाम पधारे। परिक्रमाके उपरान्त जब आप श्रीलक्ष्मीनारायण मन्दिरकी छतके ऊपर खड़े होकर गिरिराजकी छटा निहार रहे थे, उसी समय अपने प्राणाधार श्रीश्यामसुन्दरकी बालमनोहर मूर्तिके दर्शन पाकर आप निहाल हो गये और आपने निश्चय कर लिया कि गोवर्धन छोड़कर वापस हाथरस नहीं जाना है। आपने अपने कुर्तेकी

जेबमेंसे एक रुपया छः आना निकाला, जो वापस हाथरस जानेके लिये रखा था, अपने साथी श्रीप्रेमचन्दजीको देकर कहा कि अब आप लोग बेटी शान्तिको लेकर हाथरस चले जाओ, मैं तो अब वापस नहीं जाऊँगा। ऐसा कहते हुए उन्होंने अपनी धोतीको फाड़कर दो टुकड़े कर लिये, एक कमरमें अचला बनाकर पहन लिया, दूसरेको उत्तरीयके रूपमें धारण कर लिया और फिर सदैवके लिये गोवर्धनवासी हो गये। [श्रीकृष्णदास]

'जय माँ गंगे'

(श्रीशरदजी अग्रवाल, एम०ए०)

कलिमलहारिणि भवभयतारिणि।
मकरवाहिनी जय माँ गंगे॥
भोगदायिनी मोक्षदायिनी।
दुःखनिवारिणि जय माँ गंगे॥
किया भगीरथने तप भारी। प्रगटीं विष्णुपदी महतारी॥
शिवने धार जटामें धारी। फिर उतरीं भू, माँ कल्याणी॥
राजा सगरसुतोंको तारा। कपिलशापसे उन्हें उबारा॥

× × × ×

तटपर राम-लखन-सिय आये। केवट नाव बैठ हरषाये॥
कुरुकुल-तिलक भीष्मकी माता। जो थे शस्त्र-शास्त्रके ज्ञाता॥
ऋषि संतों-भक्तोंकी प्यारी। युग-युगसे माँ कीर्ति तुम्हारी॥
मायापुरी प्रयाग और काशी। गंगातट-स्थित अविनाशी॥

× × × ×

कलकल बहती शीतल धारा। गोमुखसे चल सिंधु अपारा॥
औषधरूप सुधा जलधारा। अनुमोदित मत वैद्यकद्वारा॥
मधुर स्वरों संग बहती लहरें। नाचें सतत कभी ना ठहरें॥
देख मिले सुख, दुःख ना रहता। चौड़े पाट सतत जल बहता॥

× × × ×

भेद बिना पापी अपनातीं। अगणित कोटि पाप मिटातीं॥
काटो पाप-सकल माँ हारा। नहीं किसीका और सहारा॥
माँ गंगे मुझको अपनाओ। जनम-मरणसे पार लगाओ॥
कलिमलहारिणि भवभयतारिणि।
मकरवाहिनी जय माँ गंगे॥
गोमुख से चल गंगासागर। बहती गंगा निर्मल धारा॥
उधर हिमालय की चोटी है। इधर है गहरा सिंधु अपारा॥
पर्वत-पर्वत घाटी-घाटी। मैदानों में पन्थ निराला॥

× × × ×

त्रिपथगामिनी सुरसरि गंगा। विष्णुपदी हे जह्नुकन्या॥
देवनदी मन्दाकिनी माता। कोई नाम हृदय जब आता॥
तत्क्षण कलुष सकल मिटाता। पावन अन्तरमन हो जाता॥
गंगा-गंगा जो नित कहता। पाता वह आशीष तुम्हारा॥

गोमुख माँ के घर से चलकर। जातीं तुम पिय-सिंधु अपारा॥
कितनी सखियाँ नदियाँ बनकर। लेती हैं संग साथ तुम्हारा॥
तटवर्ती सारे तीरथ मिल। वंदन करते नित्य तुम्हारा॥
नगर नगर नित पूजित वंदित। शृंगारित माँ रूप तुम्हारा॥

× × × ×

प्रतिक्षण प्रतिपल प्रेरक मिलता। जन-जन को संदेश तुम्हारा॥
कलुष बहाओ पाप मिटाओ। नवजीवन का गीत बनाओ॥
भूलो पिछले नगर-घाट सब। ध्यान रहे बस सिंधु अपारा॥
कलिमलहारिणि भवभयतारिणि।
मकरवाहिनी जय माँ गंगे॥
माँ गंगा की निर्मल काया। कर दर्शन हर मन हरषाया॥
वेगवती गंगा की धारा। हिलती लहरें छुए किनारा॥
सतत बहे अपार जलराशि। हिम शिखरों से, होकर काशी॥

× × × ×

प्रात-समय चहुँदिश धुधियारा। शुद्ध पवन अरु शांत किनारा॥
तट पर केवल भगत तुम्हारे। भाँति भाँति के वचन उचारें॥
पड़ती सूरज की जब किरणें। लहरें चमकें-दमकें तल पे॥
जल में मछली करती क्रीडा। हर्षित होकर हरती पीड़ा॥

× × × ×

सनन-सनन जब बहें हवायें। कितनी लहरें तब इठलायें॥
उठतीं जब उत्ताल तरंगे। लगता वसन उड़े सतरंगे॥
देख तुम्हें बजती मन-वीणा। छूकर चरण मिटे हर पीड़ा॥
गोता लेकर मन नहीं भरता। रोम रोम पर हर्षित करता॥

× × × ×

गंगातट की सोंधी सुगन्धी। छूती चित की हर एक संधी॥
शीतल-शीतल गंगा का जल। पावन करता सबका तन मन॥
गंगाजल की महिमा अनुपम। मरते दम मिल जाय ये जल॥
कलिमलहारिणि भवभयतारिणि।
मकरवाहिनी जय माँ गंगे॥
भोगदायिनी मोक्षदायिनी।
दुःखनिवारिणि जय माँ गंगे॥

ब्रह्मद्रवमयी गंगा

(आचार्य पं० श्रीबलदेवजी उपाध्याय)

'ब्रह्मद्रवेति विख्याता पापं मे हर जाह्नवि।'

—इस प्रख्यात श्लोकमें गंगा 'ब्रह्मद्रव' के नामसे विख्यात मानी गयी है। इस शब्दके अर्थकी किंचित् मीमांसा यहाँ प्रस्तुत है।

जल मानवके लिये ही नहीं, प्रत्युत चेतन-अचेतन सब प्रकारके जीवोंके लिये नितान्त उपयोगी पदार्थ है। इसी उपयोगिताके कारण तो जल 'जीवन' की आख्या रखता है (जीवनं भुवनं जलम्)। सूखते हुए पौधोंको जलसे सींचनेपर हरा-भरा होते हुए किसने नहीं देखा है ? परंतु आश्चर्य होता है उस रेल-इंजनके व्यवहारपर, जो जलसे आप्यायित होनेपर ही अपना कार्य चारुतया सम्पादित करता है। फलतः जल मशीनके लिये भी उतना ही उपयोगी है, जितना मानवके लिये। तथ्य यह है कि जल सृष्टिका आधार है। इसके विषयमें वेद तथा पुराणमें प्रभूत ज्ञातव्य तथा ध्यातव्य सामग्री संचित है।

जलकी चार अवस्थाएँ वेदमें स्पष्टतः अंकित हैं । ऐतरेय उपनिषद्*का कथन है कि आत्माने जिस आप्-तत्त्वको उत्पन्न किया, वह चार लोकोंमें चार नामोंसे चार अवस्थाओंमें व्याप्त है। इन अवस्थाओंसे विभेद धारण करनेवाले जलके चार नाम हैं—(१) अम्भः, (२) मरीचि, (३) मर तथा (४) आपः। इन चारोंने चार लोकों को क्रमशः व्याप्त कर रखा है—(१) द्युलोक, (२) अंतरिक्ष, (३) पृथ्वी, (४) पृथ्वीके अधःस्थ लोक। इन सबमें अम्भस् अत्यंत रसात्मक तत्त्वका द्योतक है और वह सूर्यलोक (दिव्)-से ऊर्ध्व प्रदेशमें—'महः, जनः, तपः, सत्यम्' आदि लोकोंमें व्याप्त होनेवाला जल है। यही है—'दिव्या आपः'। अंतरिक्षलोकमें व्याप्त होनेवाला जल मरीचि नामसे व्यवहृत होता है। पृथ्वीके उत्पादनमें समर्थ होनेवाला जल मर तथा पृथ्वीके खोदनेसे निकलनेवाला जल आपः शब्दसे व्यवहृत किया जाता है। इन चारोंमें अम्भः ही मूल जल-तत्त्व है, जो विशुद्ध रसात्मक होता है। अन्य जल अन्य तत्त्वोंके मिश्रणसे उत्पन्न होते हैं। इसे ही वेदान्त पंचीकृतकी संज्ञा देता है।

ध्यान देनेकी बात है कि आप्में दो तत्त्वोंका आधार है—सोम तथा अग्निका। 'एतद्विषयक' मन्त्र है—

अप्सु मे सोमो अब्रवीदन्तर्विश्वानि भेषजाः।
अग्निं च विश्वशम्भुवमापश्च विश्वभेषजीः॥

(ऋग्वेद १। २३। २०)

यहाँ यह मन्त्र अनुष्टुप्में है, परंतु ऋग्वेद (१०। ९। ६) तथा अथर्ववेद (१। ६। २)-में यह मन्त्र त्रिपदा गायत्रीके रूपमें निर्दिष्ट है। फलतः वहाँ चतुर्थ चरणका अभाव है। मन्त्रका आशय है कि 'जलके भीतर स्थिर सोमने कहा कि जलके भीतर समस्त भेषज विद्यमान हैं तथा विश्वका कल्याण करनेवाला अग्नि भी वहाँ स्थित है। इसीलिये जलका नाम 'विश्वभेषजी'—समस्त औषधोंका निकेतन मानते हैं।' जलके भीतर सोम-तत्त्वकी सत्ताका यहाँ स्पष्ट उल्लेख है। अन्य मन्त्रों (ऋक्० ७। ४९। ४)-में अग्निके प्रवेशका भी स्पष्ट संकेत मिलता है—

यासु राजा वरुणो यासु सोमो
विश्वे देवा यासूर्जं मदन्ति।
वैश्वानरो यास्वग्निः प्रविष्ट-
स्ता आपो देवीरिह मामवन्तु॥

अन्य एक मन्त्रमें 'आप्' को अग्निको उत्पन्न करनेवाला माता कहा गया है—

तमोषधीर्दधिरे गर्भमृत्वियं तमापो अग्निं जनयन्त मातरः॥ (ऋग्वेद १०। ९१। ६)

जलमें सोम तथा अग्नि—इन दोनों तत्त्वोंके निवासका स्वारस्य विचारणीय है। यह समस्त विश्व ही 'अग्नीषोमात्मक' है—अग्नि तथा सोमके मिश्रणसे सम्भूत। सोम है—उत्पादक तत्त्व तथा अग्नि है—शोषक तत्त्व। विज्ञानकी भाषामें सोम है—धनात्मक विद्युत् (पाजिटिव इलेक्ट्रिसिटी) तथा अग्नि है—ऋणात्मक विद्युत् (निगेटिव इलेक्ट्रिसिटी)। दोनों प्रकारके विद्युतोंके परस्पर सहयोग, आघात-प्रतिघातसे ही जगत्की सृष्टि होती है। जगत्का मूल उत्पादन जल ही तो है (अप एव ससर्जादौ—मनु)। फलतः उस मूल तत्त्वमें जगत्के

* 'स इमाँल्लोकानसृजत। अम्भो मरीचीर्मरमापोऽदोऽम्भः परेण दिवं द्यौः प्रतिष्ठा अंतरिक्षं मरीचयः पृथिवी मरो, या अधस्तात् ता आपः।' (ऐतरेय उपनिषद् १। २)

उत्पादक तत्त्वोंका अस्तित्व होना नितान्त उचित तथा वैज्ञानिक है। सोमके साहचर्यसे अग्नि शोषक न होकर पोषक है। इसीलिये लोक-जीवनमें तथा धार्मिक कर्मकाण्डके सम्पादनमें जलकी इतनी महत्ता है।

जलके त्रिविध भेद हैं—(१) दिव्या आपः, (२) आन्तरिक्षा आपः, (३) पार्थिवी आपः।

'या दिव्या आपः पयसा सम्बभूवुः
या आन्तरिक्षा उत पार्थिवीर्याः॥'

इसीका निर्देश अथर्वण श्रुतिमें भी है (४। २८। ५) जलका प्रथम प्रकार है—दिव्यरूप अर्थात् द्युलोकमें होनेवाला जल। एक बात समझनेकी है कि सूक्ष्मरूप जलकी संज्ञा है—आप् या अम्भः। यह शुद्ध रसरूप द्रव है। वह स्थूल रूपमें जल बन जाता है। इससे यह विश्वमें सर्वतः व्याप्त है। इसीलिये **'सर्वमापोमयं जगत्'** का यही तात्पर्य है। इसके दृष्टान्त वैदिक मन्त्रोंमें उपलब्ध होते हैं। एक मन्त्र कहता है कि 'चन्द्रमा अप्के भीतर आकाशमें दौड़ता है—**चन्द्रमा अप्स्वन्तरा सुपर्णो धावते दिवि।'** जिससे चन्द्रमाके लोकमें 'आप्' की सत्ता अनुमानित है। अन्य मन्त्र बतलाता है कि 'सूर्यके समीप तथा सूर्यके साथ अप् विद्यमान है'—

अमूर्या उप सूर्ये याभिर्वा सूर्यः सह। ता नो हिन्वन्त्वध्वरम्।
(ऋग्वेद १। २३। १७)

जिससे सूर्यके पास जलकी सत्ताका स्पष्ट वैदिक प्रमाण मिलता है। सूर्य जब चमकने लगता है, तब 'अप्' अपना स्थान छोड़नेके लिये बाध्य होता है; क्योंकि उसका प्रखर सूर्य-रश्मियोंसे संघर्ष होने लगता है और वह वहाँसे हटकर ध्रुवलोककी दिशामें प्रस्थान करता है। उस लोकमें सूर्यकी किरणें मन्द रहती हैं और इसलिये वहाँ आप् जमा होता चलता है और अत्यन्त घनीभूत होनेके कारण वह स्थूल जलका रूप धारण कर लेता है। गुरु होनेसे आप् वायुमण्डलमें अधिक टिक नहीं सकता और बाध्य होकर वह स्थूल जलकी धाराके रूपमें प्रवाहित हो जाता है। यही है—दिव्य जलकी धारा—गंगाका प्रवाह।

पुराणोंमें वर्णित है कि ध्रुवके ऊपरसे सुमेरु पर्वतपर गंगाका जल गिरता है। विष्णुपुराण (द्वितीय अंश, अध्याय ८)-में विष्णुका तृतीय पद 'ध्रुवलोक' बतलाया गया है, जो लोकोंका आधारभूत है तथा वृष्टिका कारण है। वहींसे गंगा प्रवाहित होती है।

वामपादाम्बुजाङ्गुष्ठनखस्त्रोतोविनिर्गताम्।
विष्णोर्बिभर्ति यां भक्त्या शिरसाहर्निशं ध्रुवः॥
(१११)

आशय है कि 'विष्णुभगवान्के वाम चरण-कमलके अँगूठेके नखरूप स्रोतसे निकली हुई उन गंगाजीको ध्रुव दिन-रात अपने मस्तकपर धारण करता है।'

इसका आधिदैविक तात्पर्य बतलाते समय महामहोपाध्याय श्रीगिरिधरशर्मा चतुर्वेदीजीने लिखा है कि 'प्रातःकालका सूर्य ही 'वामन' कहा जाता है। उसके नखों (अर्थात् किरणों)-के अग्रभागने जहाँ विवर बनाया है, वहाँसे यह जलधारा गिरती है।' जो भी व्याख्या हो, ध्रुवलोकमें गंगाका उदय होता है। वहाँसे सुमेरुपर गिरती है और वहाँसे शिवके जटाजूटमें वह युगोंतक घूमा करती है। इस दृश्यका साक्षात्कार आज भी किया जा सकता है। भगवान् शंकरका एक नाम **'व्योमकेश'** (आकाशरूपी केशवाला) है। इसी आकाशपर द्वितीयाका चन्द्रमा चमकता है, जो शिवके मस्तकपर विराजमान बताया जाता है। रातके समय आकाशमें दूधकी धाराके समान करोड़ों ताराओंका जो पुंज दृष्टिगोचर होता है, वही तो 'आकाशगंगा' है और वह आज भी व्योमकेशके सिरपर अपनी दुग्धमयी शुभ्रधारासे दिगन्तको विद्योतित करती प्रवाहित होती है। वहाँ युगोंतक विचरण करनेके बाद भक्तोंके कल्याणार्थ भगवती गंगाका प्रादुर्भाव इस भारतवर्षमें होता है।

इस प्रकार दिव्य जलकी धारा होनेके कारण गंगाजीको 'ब्रह्मद्रव' (नीराकार ब्रह्म) मानना नितान्त उपयुक्त है। इसीलिये गंगामें स्नानकी इतनी महिमा है। भारतीय आर्य जहाँ भी गये और अपना उपनिवेश बनाया, वहाँके मुख्य जलस्रोतको उन्होंने गंगाके नामसे अभिहित किया। थाईलैण्ड (स्याम)-की मुख्य नदीका 'मेकांग' नामकरण इसी तथ्यका द्योतक है। 'मेकांग' का अर्थ है 'माई गंगा' (मे=माई, कांग=गांग=गंगा)। इस प्रकार गंगा माईकी प्रशस्त स्तुति भारतवर्षके ही हिन्दू नहीं करते, प्रत्युत थाईलैण्डके बौद्ध भिक्षु भी 'मेकांग' को 'माई गंगा' के नामसे पुकारकर गंगाके प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं। तथास्तु

नराकारं भजन्त्येके निराकारं तथापरे।
संसारभयसन्त्रस्ता नीराकारमुपास्महे॥

श्रीगंगा और यमुनाका जल

(पं० श्रीगंगाशंकरजी मिश्र, एम०ए०)

गंगाजलकी महिमा

गंगाजलकी महिमाका कहना ही क्या है, उसके स्पर्शमात्रसे बड़े-बड़े पाप दूर हो जाते हैं। उसके स्वास्थ्यसम्बन्धी गुणोंका भी प्राचीनकालसे उल्लेख मिलता है। चरकने, जिनका काल आधुनिक विद्वानोंद्वारा आजसे लगभग दो हजार वर्ष पहले माना जाता है, लिखा है हिमालयसे निकलनेवाले जल पथ्य हैं—'**हिमवत्प्रभवाः पथ्याः।**' (चरक० सूत्र० २७। २०९) इसमें विशेषरूपसे गंगाजलका ही संकेत है; क्योंकि इस वचनके आगे ही आता है—'**पुण्या देवर्षिसेविताः।**' वाग्भटकृत 'अष्टांगहृदय' में, जिसका निर्माणकाल ईसवी सन्‌की आठवीं या नवीं शताब्दी माना जाता है, इसको स्पष्ट किया गया है—

हिमवन्मलयोद्भूताः पथ्यास्ता एव च स्थिराः।

चक्रपाणिदत्तने भी, जो सन् १०६० के लगभग हुए, लिखा है कि हिमालयसे निकलनेके कारण गंगाजल पथ्य है—

यथोक्तलक्षणहिमालयभवत्वादेव गाङ्गं पथ्यम्।

भण्डारकर ओरियंटल इंस्टीट्यूट, पूनामें अठारहवीं शताब्दीका एक हस्तलिखित ग्रन्थ है—'भोजनकुतूहल'; उसमें कहा गया है कि गंगाजल श्वेत, स्वादु, स्वच्छ, अत्यन्त रुचिकर, पथ्य, भोजन पकानेयोग्य, पाचनशक्ति बढ़ानेवाला, सब पापोंको हरनेवाला, प्यासको शान्त तथा मोहको नष्ट करनेवाला, क्षुधा और बुद्धिको बढ़ानेवाला होता है—

शीतं स्वादु स्वच्छमत्यन्तरुच्यं
पथ्यं पाक्यं पाचनं पापहारि।
तृष्णामोहध्वंसनं दीपनं च
प्रज्ञां धत्ते वारि भागीरथीयम्॥

इस तरह गंगाजलका स्वास्थ्यसम्बन्धी गुणोंपर बराबर अपने यहाँ जोर दिया गया है। इन्हीं गुणोंपर मुग्ध होकर विदेशियों और अहिन्दुओंको भी इसे अपनाना पड़ा।

इब्नबतूताने सन् १३२५—५४ में अफरीका तथा एशियाके कई देशोंकी यात्रा की थी। वह भारत भी आया था। वह अपने यात्रा-वर्णनमें लिखता है कि सुलतान मुहम्मद-तुगलकके लिये गंगाजल बराबर दौलताबाद जाया करता था। इसके वहाँ पहुँचानेमें ४० दिन लग जाते थे (गिब्सकृत अंग्रेजी अनुवाद पृ० १८३)। मुगलबादशाह अकबरको तो गंगाजलसे बड़ा ही प्रेम था। अबुलफजल अपने 'आईने अकबरी' में लिखता है कि 'बादशाह गंगाजलको 'अमृत' समझते हैं और उसका बराबर प्रबन्ध रखनेके लिये उन्होंने योग्य व्यक्तियोंको नियुक्त कर रखा है। घरमें या यात्रामें वे गंगाजल ही पीते हैं। कुछ विश्वासपात्र लोग गंगातटपर इसीलिये नियुक्त रहते हैं कि वे घड़ोंमें गंगाजल भराकर और उसपर मुहर लगाकर बराबर भेजते रहें। जब बादशाह सलामत राजधानी आगरा या फतेहपुर सीकरीमें रहते हैं, तब गंगाजल सोरोंसे आता है और जब पंजाब जाते हैं, तब हरिद्वारसे। खाना पकानेके लिये वर्षाजल या यमुनाजल, जिसमें थोड़ा गंगाजल मिला दिया जाता है, काममें लाया जाता है।' अकबरके धार्मिक विचार दूसरे प्रकारके थे, इसलिये उन्हें यदि गंगाजलमें श्रद्धा हो तो कोई आश्चर्य नहीं। पर सबसे मजेकी बात तो यह है कि कट्टर मुसलमान औरंगजेबका भी काम बिना गंगाजलके न चलता था! फ्रांसीसी यात्री बर्नियर, जो भारतमें सन् १६५६—६८ तक रहा था और जो शाहजादा दाराशिकोहका चिकित्सक था, अपने 'यात्राविवरण' में लिखता है कि 'दिल्ली और आगरामें औरंगजेबके लिये खाने-पीनेकी सामग्रीके साथ गंगाजल भी रहता था। यात्रामें भी इसका प्रबन्ध रहता था। स्वयं बादशाह ही नहीं, दरबारके अन्य लोग भी गंगाजलका व्यवहार करते थे। बर्नियर लिखता है कि ऊँटोंपर लदकर यह बराबर साथ रहता था। प्रतिदिन सबेरे नाश्तेके साथ उसको भी एक सुराही गंगाजल भेजा जाता था। यात्रामें मेवा, फल, मिठाई, गंगाजल, उसको

ठण्डा करनेके लिये शोरा और पान बराबर रहते थे।'

फ्रांसीसी यात्री टैवर्नियरने भी, जो उन्हीं दिनों भारत आया था, लिखता है कि इसके स्वास्थ्यसम्बन्धी गुणोंको देखकर मुसलमान नवाब इसका बराबर व्यवहार करते थे। कप्तान एडवर्ड मूर, जो ब्रिटिश सेनामें था और जिसने टीपू सुलतानके साथ युद्धमें भाग लिया था, लिखता है कि सबन्नर (शाहनवर)-के नवाब केवल गंगाजल ही पीते थे। इसको लानेके लिये कई ऊँट तथा 'आबदार' रहते थे (नैरेटिव पृ० २४८)। श्रीगुलामहुसेनने अपने बंगालके इतिहास 'रियाजु-स-सलातीन' में लिखा है कि मधुरता, स्वाद और हलकेपनमें गंगाजलके बराबर कोई दूसरा जल नहीं है, कितने ही दिनोंतक रखे रहनेपर भी यह बिगड़ता नहीं। 'श्रीवेंकटेश्वर ओरियण्टल इंस्टीट्यूट' 'तिरुपति' की पत्रिका (अनाल्स)-के खंड १ भाग ३ (सितम्बर १९४०)-में पूनाके श्रीगोडका 'मुसलमान शासकोंद्वारा गंगाजलके व्यवहार' पर एक अच्छा लेख है। किसी भावसे सही, गंगाजलके व्यवहारसे अहिन्दुओंका भी हित ही हुआ होगा।

टैवर्नियरके यात्रा-विवरणसे यह भी पता लगता है कि उन दिनों हिन्दुओंमें विवाहके अवसरपर भोजनके पश्चात् अतिथियोंको गंगाजल पिलानेकी चाल थी। इसके लिये बड़ी-बड़ी दूरसे गंगाजल मँगाया जाता था। जो जितना अमीर होता था, उतना ही अधिक गंगाजल पिलाता था। दूरसे गंगाजल मँगानेमें खर्च भी बहुत पड़ता था। टैवर्नियरका कहना है कि शादियोंमें कभी-कभी इसपर दो-तीन हजार रुपयेतक खर्च हो जाते थे। पेशवाओंके लिये बहँगियों (कावड़ी)-में रखकर गंगाजल पूना जाया करता था। मराठी पुस्तक 'पेशवाईच्या सावलींत' (पूना १९३७)-से पता लगता है कि काशीसे पूना ले जानेके लिये एक बँहगी गंगाजलका खर्च २० रुपया और पूनासे श्रीरामेश्वरम् ले जानेके लिये ४० रुपया पड़ता था, जो बहुत नहीं कहा जा सकता। गढ़मुक्तेश्वर तथा हरिद्वारसे भी पेशवाओंके लिये गंगोदक जाता था। श्रीबाजीराव पेशवाको बतलाया गया था, गंगाजलके सेवनसे ऋण-मुक्त हो जायँगे—'श्रीतीर्थसेवन करून महाराज चिकर्त-परिहार हावा।' मरते समय गंगोदक देनेकी चाल तो सुदूर दक्षिणमें भी थी। विजयनगरके राजा कृष्णरायको, जब वे सन् १५२५ में मृतप्राय थे, गंगोदक दिया गया और वे अच्छे हो गये (विजयनगर, थर्ड डायनेस्टी १९३५)। भूटानयुद्धका अंत होनेपर तिब्बतके तूशीलामाने वारेन हेस्टिंग्जके पास एक दूत भेजकर गंगातटपर कुछ भूमि माँगी और वहाँपर एक मठ तथा मन्दिर बनवाया; क्योंकि 'गंगा हिन्दुओंके लिये ही नहीं, बौद्धोंके लिये भी पुनीत है।' यह मठ और भूमि जो 'भोटबागान' के नामसे प्रसिद्ध है, तूशीलामाने श्रीपूर्णगिरिको दान की।

यदि कोई गंगाका इतिहास लिखे, जैसा कि श्रीलुडविगने नील नदीका लिखा है, तो कितना रोचक हो?

गंगा-यमुनाके गुण

ऊपर यह दिखलाया गया है कि स्वास्थ्यकी दृष्टिसे पहले अहिन्दू भी गंगाजलको कितना अधिक व्यवहारमें लाया करते थे। इधर श्रीगंगा तथा यमुना दोनोंके जलोंके स्वास्थ्य-सम्बन्धी गुणोंका कुछ और पता लगा है। विज्ञानाचार्य श्रीहैनबरी हैंकिन किसी समय युक्तप्रान्त तथा मध्यप्रान्तकी सरकारोंके 'रसायन-परीक्षक' (केमिकल एकजामिनर) थे। आपने 'पासचर इंस्टीट्यूट' की फ्रांसीसी पत्रिकामें सन् १८९६ में एक लेख लिखा था। उसका अंग्रेजी अनुवाद राँचीसे निकलनेवाले 'मैन इन इण्डिया' नामक त्रैमासिक पत्र, जिल्द १८, अंक २-३ (अप्रैल-सितंबर, १९३८)-में प्रकाशित हुआ था। उस लेखका सार यहाँ दिया जा रहा है। श्रीहैंकिनसाहब लिखते हैं कि 'श्रीगंगा तथा यमुनाको हिन्दू जैसा पवित्र समझते हैं, वह सभीको ज्ञात है। विदेशियोंको और बहुत-से अंग्रेजी-शिक्षाप्राप्त हिन्दुओंको उनकी यह श्रद्धा अविवेकपूर्ण जँचती है। जब किसी बड़े नगरके समीप इनके गन्दे और मटीले जलोंमें हजारों लोगोंको नहाते और पशुओं तथा कपड़ोंको धोते हुए कोई देखता है, जब वह यह याद करता है कि प्राय: अधजली लाशें इसमें फेंक दी जाती हैं, तब उसके लिये यह सोचना स्वाभाविक ही है कि इन नदियोंका जल पीना कितना

खतरनाक है और हिन्दुओंमें इनके प्रति जो श्रद्धाभक्ति है, वह उनके शुद्धतासम्बन्धी नियमोंके अज्ञानका प्रमाण है।' हैजाके अधिक प्रकोपका अभीतक यूरोपीय विद्वान् यह एक कारण मानते रहे हैं। उनकी रायमें यह रोग गंगाद्वारा फैलाया जाता है; क्योंकि उसका जल इसके कीटाणुओंका घर है। परंतु हालकी वैज्ञानिक खोजने यह प्रत्यक्ष कर दिया है कि गंगा तथा यमुनाका जल अन्य नदियोंके जलसे कहीं अधिक शुद्ध है।

अणुवीक्षणयन्त्र (माइक्रोस्कोप)-द्वारा साधारण परीक्षणसे यह स्पष्ट हो जाता है कि इन नदियों तथा यूरोपीय नदियोंके जलोंमें कितना अन्तर है। यूरोपीय नदियोंके जलोंमें कितनी ही सड़ी तथा हरी घासें मिलती हैं, मृत तथा जीवित जन्तुओंकी संख्या भी कम नहीं दिखायी देती। परंतु गंगा तथा यमुनाके जलोंमें ऐसी वस्तुएँ बहुत कम पायी जाती हैं; जो दिखायी भी देती हैं, वे प्रायः घाटीके पास या बड़े शहरोंसे आगे बढ़कर। बालू या अभ्र (माइका)-के कणोंसे प्रायः इनके जलोंमें मैलापन दिखायी देता है। सन् १८९४ में जो 'इण्डियन मेडिकल कांग्रेस' हुई थी, उसमें पढ़े गये 'ऑन दि माइक्रोब्स ऑफ इण्डियन रिवर्स' (भारतीय नदियोंके कीटाणु) शीर्षक लेखमें यह दिखलाया गया है कि गंगा-यमुनाके जलोंमें जलीय घास-फूस और जन्तु बहुत कम पाये जाते हैं और सूक्ष्म परीक्षा करनेसे कीटाणुओंसे इनका जल शुद्ध होनेके कई कारण जान पड़ते हैं। यूरोपकी तरह इन नदियोंमें गन्दे पानीके बड़े-बड़े नाले नहीं गिरते। बड़े-बड़े शहरोंमें अवश्य ऐसे कुछ नाले बन गये हैं, परंतु तब भी उनकी संख्या अभी कम है। इसी तरह यूरोपकी अपेक्षा इनके तटोंपर अधिक कल-कारखाने नहीं हैं, जिनका रासायनिक पदार्थोंसे मिला हुआ जल इनके जलोंको गन्दा करता हो। इनके जलोंकी रक्षाका एक और कारण है। इनके प्रायः दोनों तटोंके इधर-उधर मील या दो मील ऊसर जमीन पड़ी रहती है, जिनमें बड़े-बड़े कगारे होनेके कारण आबादी बहुत कम रहती है। आगरासे बारह मील नीचेतक केवल दो गाँव यमुनाके तटपर हैं। ऊपरकी तरफ २३ मीलकी दूरीमें केवल तीन गाँव हैं। इनमेंसे प्रत्येककी आबादी ५०० से अधिक नहीं है। इन नदियोंको जो गन्दगी प्राप्त होती है, वह इन सब ऊसरोंमें अवशोषित हो जाती है। ये दोनों नदियाँ बालूकी तलहटियोंमें बहती हैं। सालमें कई महीने कड़ी धूप और खुली हवासे भी इनका जल शुद्ध होता रहता है। यूरोपकी नदियोंका जल वर्षाके जलसे आता है, परंतु इन नदियोंको हिमालयसे जल निरन्तर मिलता रहता है, जो स्वभावतः शुद्ध होता है।

गरमीके दिनोंमें आगरासे ५ मील पहले यमुना-जलके एक घन सेंटीमीटरमें ७५-७६ कीटाणु देखे गये। आगरासे कुछ ही दूरपर इनकी संख्या ७००-७५० मिली और नगरके बीच यह संख्या बढ़कर २५,००० तक पहुँच गयी। परंतु वहाँसे साढ़े १२ मीलकी दूरीपर यह संख्या घटकर १३० से ८० रह गयी। इससे स्पष्ट है कि जलमें स्वतः शुद्ध करनेकी शक्ति है। हैजेके सम्बन्धमें प्रायः कहा जाता है कि यह बंगालसे ऊपरकी तरफ चलता है, नीचेकी ओर कभी नहीं गया। यदि हैजा पानीके बहावके साथ फैलता है, तो फिर यह कैसे सम्भव है? इन नदियोंके तटपर जब किसी मेलेमें हैजा फैलता है, तब वह नीचेकी ओरके गाँवोंमें क्यों नहीं पहुँचता? उत्तरमें यह नहीं कहा जा सकता कि इसके कीटाणु जलतक नहीं पहुँचते। यह ठीक है कि प्रायः हिन्दू इन नदियोंके बिलकुल तटपर मल-त्याग नहीं करते, परंतु कपड़ा धोने और नहानेसे जलमें कीटाणुओंका प्रवेश हो ही जाता है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि हैजेके रोगियोंके शव इन नदियोंमें फेंके जाते हैं। कहीं तो लाशें अधजली होती हैं और कहीं वैसे ही फेंक दी जाती हैं। इस दृष्टिसे इन दोनों नदियोंके जलोंकी रासायनिक परीक्षा की गयी, जिससे पता लगा कि इनके जलमें कुछ ऐसे तत्त्व हैं, जिनमें हैजेके कीटाणुओंको नष्ट कर देनेकी शक्ति है। पहली परीक्षामें जल आधे घंटेतक गरम किया गया। फिर गंगा, यमुना तथा आगरेके नलके पानीको बराबर मात्रामें लेकर नलियोंमें भरा गया और उनमें कीटाणु छोड़े गये। परिणाम इस प्रकार हुआ—यमुना-जलमें १२,५०० कीटाणु ४८ घण्टेमें

५००० ही रह गये, नलके पानीमें १४,००० कीटाणु उतने ही कालमें १५,००० हो गये और गंगाजलमें १०,००० के ११,००० हो गये। इसके बाद गंगाजल तथा कुआँजलको बिना गरम किये हुए, केवल अच्छी तरह छान (फिल्टर)-कर परीक्षा की गयी, तो फल इस प्रकार हुआ—गंगाजलमें ५,५०० कीटाणु तीन घण्टेमें ही साफ हो गये और कुआँजलमें ८,५०० के ४९ घण्टेमें १५,००० हो गये। इससे यह सिद्ध हुआ कि गंगाजलको गरम करनेसे उसमें कीटाणुओंको नष्ट करनेकी शक्ति जाती रहती है। इसीलिये गंगाजलको गरम करना दोष माना जाता है। यमुनाजलमें भी यह बात पायी गयी; दो ही घण्टोंमें ४,२०० कीटाणु सब-के-सब नष्ट हो गये। परीक्षा करनेपर यह भी पता लगा कि यदि जलको नलियोंमें भरकर बिलकुल बन्द करके गरम किया जाता है तो फिर जलकी कृमिनाशक शक्ति नष्ट नहीं होती। इन जलोंकी, वर्षा छोड़कर प्रायः सभी ऋतुओंमें, परीक्षा की गयी और उनमें यही बात पायी गयी। गरमीके दिनोंमें यमुनाका जल प्रायः दिल्लीके पास नहरमें जमा हो जाता है। उसका फाटक भी बन्द कर दिया गया; तब भी देखा गया कि उस जलकी कृमिनाशक शक्ति सर्वथा नष्ट नहीं हुई। इससे यह पता लगता है कि हिमालयसे बर्फ गलनेपर जलमें जो शक्ति होती है, वह बादमें भी बहुत कुछ बनी रहती है, नदीके बहावमें वह बराबर बढ़ती जाती है। गंगाजलमें भी यही बात देखी गयी है। आगेसे ऊपर और नीचेके जल तथा ऐसे जलकी भी, जिसमें मुर्दे फेंके जाते हैं, परीक्षा की गयी। इससे देखा गया कि यमुना-जलमें आगराके ऊपर १,२०० कीटाणु घण्टेभरमें २०० ही रह गये और दो घण्टेमें बिलकुल नष्ट हो गये। नीचेकी ओर १,५०० कीटाणु घण्टेभरमें ही खतम हो गये। एक फेंके हुए मुर्देके पासके पानीमें १,५०० कीटाणु घण्टेभरमें ५० रह गये और दूसरे घण्टेमें एकदम नष्ट हो गये। परंतु कूपजल गरम करनेपर देखा गया कि १,२०० कीटाणु बढ़ते-बढ़ते २१ घण्टेमें ३,००० और ४५ घण्टेमें १६,००० तक बढ़ गये। इस परीक्षासे यह भी स्पष्ट होता है कि गन्दगीसे भी इन जलोंकी कृमिनाशक शक्ति सर्वथा नष्ट नहीं होती। इन जलोंके गुणोंको देखकर यह उचित जान पड़ता है कि मेलोंके अवसरपर हैजा रोकनेके लिये यह आज्ञा निकाल देनी चाहिये कि कुँओंका जल बिलकुल बन्द करके केवल इन नदियोंका ही जल पिया जाय।

आस्तिक हिन्दुओंका तो विश्वास है कि श्रीगंगा-यमुनाका जल मन तथा शरीर दोनोंके मलका हरण करता है। पर यह बात नवशिक्षितोंकी ही समझमें नहीं आती। उन्हें तो स्वास्थ्यके लिये विदेशी 'मिनरल वाटर' चाहिये। क्या ही अच्छा होता यदि भारतीय वैज्ञानिक भी इस ओर ध्यान देते।

गंगाके उद्गार

(पाण्डेय पं० श्रीरामनारायणदत्तजी शास्त्री 'राम')

(१)

चली साथ भगीरथके जबसे
निज नाथसे ज्यों ही विलग्न हुई मैं।
जटा-जूटमें बाँधी गयी हरके
गिरके गिरिकूटमें नग्न हुई मैं॥
अटकी तटकी धरामें, भवमें
भटकी सब ओरसे भग्न हुई मैं।
सुख-शान्ति समीप न आयी कभी
दुख और अशान्तिमें मग्न हुई मैं॥

(२)

चढ़ा शीश गिरीशने मान दिया
वह दान महान् न भाया कभी।
गिरिराजने मोदसे गोद लिया
मनमें वहाँ मोद न पाया कभी॥
लिया प्यारसे अंचलमें धराने
वह भी नहीं रंच सुहाया कभी।
मिलने चली नागरसे अपने
मुझे सागरने न लुभाया कभी॥

आशीर्वाद

गंगाका महत्त्व

(अनन्तश्रीविभूषित दक्षिणाम्नायस्थ श्रृंगेरीशारदापीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीभारतीतीर्थजी महाराज)

हमारे पवित्र भारतदेशमें कई नदियाँ बहती हैं। उनमें गंगा सर्वश्रेष्ठ मानी जाती है। वह देवलोकसे आयी है, इसीलिये उसे देवनदी कहते हैं। गंगावतरणकथा श्रीमद्रामायणमें विस्तृत रूपसे प्रतिपादित है। राजा भगीरथकी कठोर तपस्याके फलस्वरूप गंगा भूलोकमें आयी है, इसीलिये उसे भागीरथी कहते हैं। वह महानदी है।

महानदीके बारेमें शास्त्रोंमें कहा गया है कि 'गिरिप्रभवा समुद्रगामिनी महानदी।' अर्थात् जो पहाड़से उगती है और समुद्रमें मिलती है, वही महानदी है। यह लक्षण गंगादि महानदियोंमें है; क्योंकि उनका उद्‌गम पहाड़ोंमेंसे होता है और वे सागरमें मिलती हैं।

ऐसी महानदियोंके बारेमें तैत्तिरीय श्रुतिमें कहा गया है—

नदीव प्रभवात् काचित् अक्षय्यात् स्यन्दते यथा।
तां नद्योऽभिसमायन्ति सोरुस्सती न निवर्तते॥

इसका सायणाचार्यने यों भाष्य लिखा है कि 'उत्पत्तिप्रदेशः प्रभवः। स च निरन्तरजलोत्पत्तिदर्शनादक्षय्यः। तस्मादक्षय्यात् प्रभवादुत्पन्ना महानदी स्यन्दते प्रवहति। तां महानदीं अन्याः क्षुद्रा नद्यः अभिसमायन्ति आभिमुख्येन संयोगं प्राप्नुवन्ति। सा च महानदी बहुक्षुद्रनदीमेलनात् उरुः विस्तीर्णा सती न निवर्तते कदाचिदपि न शुष्यन्ति किंतु निरन्तरं प्रवहति।'

तात्पर्य यह है कि महानदियोंका उद्‌गमस्थान सदा जलवाला ही होता है और कई उपनदियाँ महानदीमें मिलती हैं। इसलिये वह कदापि सूखती नहीं। ऐसी प्रभावशाली महानदियोंमें गंगा सर्वप्रथम है। उसकी स्तुति करते हुए भगवान् आद्यशंकराचार्य कहते हैं—

भगवति तव तीरे नीरमात्राशनोऽहं
विगतविषयतृष्णः कृष्णमाराधयामि।
सकलकलुषभङ्गे स्वर्गसोपानसङ्गे
तरलतरतरङ्गे देवि गङ्गे प्रसीद॥

अर्थात् गंगाजलके सेवनसे मन परिशुद्ध होता है और भगवान्‌पर भक्ति बढ़ती है। इसलिये वह सभीके लिये सर्वथा सेवनीय है।

गंगा केवल जलरूपमें ही नहीं, किंतु देवतारूपमें भी है। उस रूपका ध्यान शास्त्रोंमें यों कहा गया है—

सितमकरनिषण्णां शुभ्रवर्णां त्रिनेत्रां
करधृतकलशोद्यत्सोत्पलाभीत्यभीष्टाम्।
विधिहरिहररूपां सेन्दुकोटीरजुष्टां
कलितसितदुकूलां जाह्नवीं तां नमामि॥

अर्थात् वह त्रिमूर्ति-स्वरूपिणी है। शुद्ध दुकूल पहनी है। उसके चार हस्तोंमें अमृतकलश, उत्पल, अभय और वरद मुद्रा हैं। सिरपर चन्द्रकला है। मकरपर बैठी है। ऐसे रूपकी उपासनासे गंगाकी कृपा प्राप्त होती है।

महाभारतमें गंगा भीष्मकी माँके रूपमें दर्शन देती हैं। परशुरामसे युद्ध करते वक्त जब भीष्म चेतनाविहीन होते हैं, तब गंगा वहाँ आकर अपने पुत्रको उपचार करके चेतना देती हैं। वहाँ मातृवात्सल्य कैसे होता है, उसका प्रत्यक्ष उदाहरण मिलता है।

जीवनमें एक बार भी यदि कोई गंगास्नान किया हो, तब ही उसका जीवन सार्थक होता है। इसीको—

कृतगङ्गोदकस्नानं श्रुतभारतसत्कथम्।
अर्चिताच्युतपादाब्जं दिनं कल्पशताद्वरम्॥

—इस श्लोकमें कहे हैं।

भगवान् शंकराचार्यजी कहते हैं कि—

भगवद्गीता किञ्चिदधीता गङ्गाजललवकणिका पीता।
सकृदपि येन मुरारिसमर्चा क्रियते तस्य यमेन न चर्चा॥

अर्थात् गीतापाठ, गंगाजलसेवन और भगवत्पूजन करनेवालोंको यमयातना नहीं होगी।

ऐसी महिमसम्पन्ना गंगाको सभी आस्तिक भक्तिसे सेवन करके श्रेय प्राप्त करें।

'औषधं जाह्नवीतोयम्'

(अनन्तश्रीविभूषित ज्योतिष्पीठाधीश्वर एवं श्रीद्वारकाशारदापीठाधीश्वर जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्रीस्वरूपानन्दसरस्वतीजी महाराज)

'जह्नु' प्रकृतिके साथ 'अण्' पूर्वक स्त्रीलिंगके ङीप् प्रत्यय करनेपर 'जाह्नवी' शब्द निष्पन्न होता है, जिसका अर्थ है 'जह्नु' राजाकी पुत्री। यह गंगा नदीका पर्यायवाची शब्द है; क्योंकि 'सुहोत्र' के पुत्र राजा जह्नुने इसे पुत्रीके रूपमें गोद लिया था। इस सन्दर्भमें एक कथा है कि जब राजा भगीरथ स्वर्गसे गंगाको पृथ्वीपर लाये, उस समय भागीरथीने अपने उच्छल प्रवाहके द्वारा राजा जह्नुकी यज्ञभूमिको जलमें डुबो दिया। इसपर जह्नुको क्रोध आया और उन्होंने गंगाको पी लिया, किंतु पुनः देवों, ऋषियोंकी प्रार्थना एवं भगीरथके तपके परिणामस्वरूप इसे जह्नुने अपने कानोंद्वारा बाहर निकालनेकी स्वीकृति दी। फलतः यह जाह्नवीके नामसे प्रख्यात हुई।

इसी प्रकार 'गम्' धातुके साथ 'गन्' पूर्वक 'टाप्' प्रत्यय करनेसे निष्पन्न 'गंगा' शब्द भारतकी पवित्रतम नदीके रूपमें जानी जाती हैं, जो अपने प्रवाहसे भारतवर्षको पवित्र करती हुई अत्यन्त पूज्य नदीके रूपमें मानी जाती हैं। इसके अतिरिक्त हिमवान्की ज्येष्ठ पुत्रीके रूपमें भी यह स्वीकार की गयी हैं, जिसे ब्रह्माके शापके कारण पृथ्वीपर आना पड़ा था। ये महाराज शान्तनुकी पत्नीके रूपमें आठ वसुओंकी माता बनीं, जिसमें 'भीष्म' सबसे कनिष्ठ थे। अन्य शास्त्रीय उल्लेखोंके अनुसार आप महाराज भगीरथके द्वारा पृथ्वीपर लायी गयीं, जिससे उनके पितर मुक्ति पा सके। एतावता आपकी एक धारा भागीरथी कहलायी। कहना न होगा कि गंगा नगराज हिमालयके जिस स्थानसे प्रकट होकर आगे बढ़ती हैं, उस स्थानको 'गोमुख' के नामसे जाना जाता है। इसके अतिरिक्त भारतवर्षके उस समतल भूभागको हरिद्वार या 'गंगाद्वार' कहते हैं, जहाँसे वह मैदानी भागमें अपने व्यापक प्रवाहके साथ आगे बढ़कर बहुविध स्थानोंको तीर्थ बनाती हुई गंगासागरके लिये प्रस्थान करती हैं।

भारतीय सनातन चिन्तनमें इस नदीका नाम अत्यन्त आदरसे लिया जाता है, यहाँतक कि इस परम्पराके मान्य त्रिदेवों अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु और महेशके साथ इसका सम्बन्ध है। इनमेंसे यह किसीके कमण्डलु, चरण और सिरके जटाजूटसे जुड़ी है तो कहीं तपःपूत महामनीषियोंको जन्म-मरणके बन्धनसे मुक्त करती हैं, इसीलिये एक ओर जहाँ महर्षि वाल्मीकि कहते हैं कि—

मातः शैलसुतासपत्नि वसुधाशृङ्गारहारावलि
स्वर्गारोहणवैजयन्ति भवतीं भागीरथि प्रार्थये।
त्वत्तीरे वसतस्त्वदम्बु पिबतस्त्वद्वीचिषु प्रेङ्खत-
स्त्वन्नाम स्मरतस्त्वदर्पितदृशः स्यान्मे शरीरव्ययः॥

वहीं वे स्वयंको पवित्र करनेकी उनसे प्रार्थना भी करते हैं, यथा—

अभिनवबिसवल्ली पादपद्मस्य विष्णो-
र्मदनमथनमौलेर्मालतीपुष्पमाला ।
जयति जयपताका काप्यसौ मोक्षलक्ष्म्याः
क्षपितकलिकलङ्का जाह्नवी नः पुनातु॥

यह प्रत्येक प्रकारके रोगोंकी ओषधि है; क्योंकि इसके मार्ग, गोत्र, गति और स्वरूप विलक्षण हैं। भगवान् शङ्कराचार्य आपके स्वरूपका वर्णन करते हुए कहते हैं कि—

भगवति भवलीलामौलिमाले तवाम्भः-
कणमणुपरिमाणं प्राणिनो ये स्पृशन्ति।
अमरनगरनारीचामरग्राहिणीनां
विगतकलिकलङ्कातङ्कमङ्के लुठन्ति॥
मज्जन्मातङ्गकुम्भच्युतमदमदिरामोदमत्तालिजालं
स्नानैः सिद्धाङ्गनानां कुचयुगविगलत् कुङ्कुमासङ्गपिङ्गम्।
सायंप्रातर्मुनीनां कुशकुसुमचयैश्छन्नतीरस्थनीरं
पायान्नो गाङ्गमम्भः करिकलभकराक्रान्तरंहस्तरङ्गम्॥

भगवान् शंकराचार्य भगवती गंगाका मार्ग और भूगोल बताते हुए कहते हैं कि—

ब्रह्माण्डं खण्डयन्ती हरशिरसि जटावल्लिमुल्लासयन्ती
स्वर्लोकादापतन्ती कनकगिरिगुहागण्डशैलात् स्खलन्ती।
क्षोणीपृष्ठे लुठन्ती दुरितचयचमूर्निर्भरं भर्त्सयन्ती
पाथोधिं पूरयन्ती सुरनगरसरित्पावनी नः पुनातु॥

इस प्रकार भारतीयताकी पहचानरूपिणी गंगा देशकी अखण्डता, संस्कारशीलता किंवा स्वर्गकी सीढ़ी है। गंगाका महत्त्व मात्र इसी बातसे समझा जा सकता है कि संसारके सबसे प्राचीन, सम्मान्य, प्रामाणिक एवं पवित्र ग्रन्थ ऋग्वेदमें भी इसका उल्लेख तीन स्थानोंपर बीजरूपमें प्राप्त होता है। यथा—

अधि बृबुः पणीनां वर्षिष्ठे मूर्धन्नस्थात्। उरुः कक्षो न गाङ्ग्यः॥

इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या। असिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तयार्जीकीये शृणुह्या सुषोमया॥

ये वै तन्वं विसृजन्ति धीरास्ते जनासो अमृतत्वं भजन्ते।

इस प्रकार आरण्यक, ब्राह्मण और उपनिषदादि वाङ्मयमें गंगाके महत्त्वको पदे-पदे स्वीकार किया गया है। धर्मप्राण देश भारतवर्षमें सभी व्रतों, पर्वों, साधनाओं, पूजा-पाठ एवं धार्मिक कार्योंमें गंगाजलका सदुपयोग किया जाता है। इस सरिताके जलमें ऐसी विशेषताएँ हैं, जो ढेर सारे रोगोंका शमन करती हैं। यह जल मौलिक रूपसे बहुत वर्षोंतक रखे जानेके बावजूद अपना गुण-धर्म नहीं छोड़ता। यद्यपि आज हमने अपने अपकर्मों, स्वार्थों और असावधानियोंके द्वारा उसे भी दूषित कर दिया है, किंतु आज भी गंगोत्री वगैरह स्थानोंसे गृहीत जल उसी प्रकार पूर्ववत् पवित्र है, निर्दोष है। इसीलिये महर्षि वाल्मीकि, भगवान् शंकराचार्य, कवि कालिदास और पण्डितराज जगन्नाथसे लेकर आजतक भारतीय मनीषा इसकी अनवरत आराधना कर रही है। संस्कृत वाङ्मयके ख्यातिलब्ध कवि कालिदास कहते हैं कि—

नमो जह्नुकन्ये न मन्ये त्वदन्यैर्निसर्गेन्दुचिह्नादिभिर्लोकभर्तुः।
अतोऽहं नतोऽहं सतो गौरतोये वसिष्ठादिभिर्गीयमानाभिधेये॥

× × ×

इदं यः पठेदष्टकं जह्नुपुत्र्यास्त्रिकालं कृतं कालिदासेन रम्यम्।
समायास्यतीन्द्रादिभिर्गीयमानं पदं कैशवं शैशवं नो लभेत् सः॥

मनीषियोंके अनुसार गंगाकी आराधनासे मनुष्यके आधिभौतिक, आधिदैविक एवं आध्यात्मिक त्रिविध दुःख दूर हो जाते हैं। इसका जल ओषधिस्वरूप है। प्राचीनकालमें ऋषिगण गंगाके तटपर रहकर जप-तप करते रहते थे। इसीलिये उनका शारीरिक स्वास्थ्य उत्तम रहता था, वे मानसिक रूपसे सन्तुलित, आस्थावान्, श्रद्धालु और आस्तिक होते थे तथा अनवरत शास्त्राध्ययनमें प्रवृत्त रहते थे; क्योंकि यह मुरारिचरणच्युता त्रिपुरारिशिरश्चारिणी गिरिराजगुहाविदारिणी तरंगधारिणी पापापहारिणी हैं। इनमें स्नान करनेसे मनुष्यके सभी कलिकल्मष न केवल धुल जाते हैं, प्रत्युत वह श्रद्धालु व्यक्ति भवसागरसे पार होकर मुक्तिकी प्राप्ति कर लेता है। इससे ब्रह्महत्यादि सभी पाप समाप्त हो जाते हैं। अतुलनीय मेधाके धनिकोंका मानना है कि गंगामाता जिसपर प्रसन्न हो जाती हैं, उसकी सभी कामनाएँ सफल हो जाती हैं। इसीलिये आचार्य अपनी इच्छा व्यक्त करते हुए कहते हैं कि—

हे भगवती! यदि मात्र आपका जल पीकर, आपके तटपर रहकर, तृष्णारहित होकर आपका दर्शन करके जीवन व्यतीत करना हो, तो वह भी हमें स्वीकार है। आपका कहना है कि मृत्युके समय आपका स्मरण यदि हमें बना रहता है तो हम अपना सौभाग्य मानेंगे और उसे जीवनका उत्सव समझेंगे—

मातः शाम्भवि शम्भुसङ्गमिलिते मौलौ निधायाञ्जलिं
त्वत्तीरे वपुषोऽवसानसमये नारायणांऽघ्रिद्वयम्।
सानन्दं स्मरतो भविष्यति मम प्राणप्रयाणोत्सवे
भूयाद् भक्तिरविच्युता हरिहराद्वैतात्मिका शाश्वती॥

(श्रीशंकराचार्यकृत गंगाष्टक)

सनातन भारतीय चिन्तनसरणि गंगाको नरक-निवारिणी और सार्वकालिक दुःखापहारिणी मानती है। वह महापुरुष भीष्मकी जननी, पतितोद्धारिणी, त्रिभुवनवन्द्या, पारावारविहारिणी, त्रैलोक्यतारिणी, शंकरमौलिविहारिणी एवं तरलतरंगिणी हैं। विद्वानोंका मानना है कि—

'तव तटनिकटे यस्य निवासः खलु वैकुण्ठे तस्य निवासः॥'

अर्थात् आपके तटका निवासी साक्षात् वैकुण्ठवासी है, इसलिये आपकी शरणमें रहनेवाले मत्स्य, कच्छप, मलिन, दीन प्राणी और श्वपचप्रभृति सभी श्लाघ्य हैं; क्योंकि मनुष्यके बल और आयुको आपका जल पुष्ट करता है। कल्किपुराणकार तो यहाँतक कहते हैं कि—हे माता! कब ऐसा अवसर आयेगा, जब शान्तिपूर्वक मैं आपके तटपर निवास, आपके जलमें स्नान, आपके नामोंका नित्य स्मरण, आपसे सम्बद्ध कथाओंका आलाप, आपका दर्शन और आपकी सेवा करते हुए आपकी स्तुतिपूर्वक अपने पातकोंको नष्ट करते हुए शान्त हो सकूँगा—

त्वत्तीरे वसतिस्तवामलजलस्नानं तव प्रेक्षणं
त्वन्नामस्मरणं तवोदयकथासँल्लापनं पावनम्।
गङ्गे मे तव सेवनैकनिपुणोऽप्यानन्दितश्चादृतः
स्तुत्वा चोद्गतपातको भुवि कदा शान्तश्चरिष्याम्यहम्॥

(कल्किपुराण)

भारतीय विचारधारामें गंगाके प्रति राष्ट्रके हृदयमें इतनी गहरी आस्था है कि वह सभी नदियोंको गंगा शब्दसे ही अभिहित करते हैं, वह चाहे ब्रह्मपुत्र, कावेरी, नर्मदा और गोदावरी हो अथवा उसकी सहायक सरिताएँ यमुना, सरयू, गण्डकी, कुआनों और राप्ती अथवा अन्य कोई हों। सभीमें गंगाकी पवित्रता और महिमाके भावसे भावित होकर भक्त उसके निर्मल जलमें स्नानकर अपने जीवनको धन्य बनाता है। सम्भवतः इसीलिये भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रके मुखारविन्दसे निःसृत पीयूषवाग्धारा श्रीमद्भगवद्गीताके माहात्म्यमें गीताके ज्ञान-प्रवाहको भी गंगासदृश स्वीकार किया गया है—'गीतागङ्गोदकं पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते।'

वैदिक वाङ्मयके उपबृंहितस्वरूप पुराणोंमें पदे-पदे गंगासम्बन्धी बहुविध चिन्तनों, व्रतों, तीर्थों एवं तत्तटवर्ती वनसम्पत्तिका सविस्तार वर्णन प्राप्त होता है। मुगलों, तुगलकों, गुलामों, खिलजियों, लोदियों एवं अन्य यवनशासकोंकी दिनचर्यामें भी गंगाजलका उपयोग होता था। आईने अकबरी आदि ग्रन्थों एवं ऐतिहासिक साक्ष्योंके आधारपर कहा जा सकता है कि अकबर, शाहजहाँ और औरंगजेब आदि अपने लिये गंगाजलका सतत प्रबन्ध रखते थे तथा इस परम्पराका अनुपालन परवर्ती आंग्ल शासकोंने भी किया। गंगाके गुणोंको ध्यानमें रखते हुए ढेर सारे विद्वान् आज भी गंगातटपर रहकर जीवन व्यतीत करना समुचित मानते हैं, यथा—

चना चबेना गंग जल जो पुरवै करतार।
काशी कबहुँ न छोड़िए विश्वनाथ दरबार॥

ध्यातव्य है कि विश्वका सबसे विशाल तीर्थ कुम्भ प्रत्येक १२ वर्षों बाद तीर्थराज प्रयागमें आयोजित होता है, जो गंगा-यमुनाके संगमपर स्थित है। यहींपर भगवान् रामने ऋषिवर भरद्वाजके आश्रममें निवास किया था।

मानव-जीवनके द्विविध दुःखों, चाहे वे लौकिक हों अथवा पारलौकिक—उनकी निवृत्तिमें गंगाका महत्त्वपूर्ण योगदान है। स्वच्छता, स्वास्थ्य, मनकी एकाग्रता, चित्तकी पवित्रता, गंगाके माध्यमसे शिव-विष्णु एवं ब्रह्माका ध्यान, गंगाकी परोपकारिता, शीतलता, पावनता, शुद्धि, अविरलता, गतिशीलताप्रभृति गुण मनुष्यको विशुद्ध बना देते हैं और वह आपसी ईर्ष्या-द्वेष, संकीर्णता, भिन्नता आदिको दूर कर देते हैं। भूत-प्रेतपिशाचादि बाधाएँ तो उसके भक्तको स्पर्श ही नहीं करतीं; क्योंकि भूतपिशाचकी बाधाओंको दूर करनेवाले वक्रतुण्ड गणेश हैं, उनके पिता भगवान् शंकर गंगाके सान्निध्यमें ही

सतत होते हैं। सर्पदंशके कारण अकालमृत्युके शिकार महाराज परीक्षित्ने श्रीमद्भागवतमहापुराणका श्रवण गंगातटपर ही किया था। इसलिये यमराज भी गंगामातासे सतत डरता रहता है; क्योंकि अनेक जन्मोंका पातकी भी गंगास्नानसे पापमुक्त हो जाता है। अर्थात् उसे पातकजन्य दण्ड प्राप्त नहीं हो पाता। यथा—

पूँछेहु रघुपति कथा प्रसंगा। सकल लोक जग पावनि गंगा॥

(रा०च०मा० १।११२।७)

भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रने गीतामें स्वयंको गंगास्वरूप स्वीकार किया है—

पवनः पवतामस्मि रामः शस्त्रभृतामहम्।
झषाणां मकरश्चास्मि स्रोतसामस्मि जाह्नवी॥

(१०।३१)

यह तथ्य किसी भी सुविज्ञ भारतवासीसे अविदित नहीं है कि मानवजीवनकी रक्षासे सम्बद्ध सभी ओषधियाँ अधिकांशतः वन्य और पर्वतीय प्रदेशोंमें पायी जाती हैं और खासकर लंकाके समरमें लक्ष्मणजी और महाभारतमें चेतनाशून्य अर्जुनकी प्राणरक्षा पर्वतीय ओषधियोंसे ही हुई थी। इन ओषधियोंकी दृष्टिसे हिमालयका क्षेत्र चिरकालसे अत्यन्त प्रसिद्ध रहा है। ऐसी स्थितिमें नगराज हिमालयके गोमुखसे उद्भूत जाह्नवी जब मैदानी प्रदेशोंमें आती हैं, तो हजारों फीटकी ऊँचाईसे उतरती हुई अनेकानेक वन्य किंवा पर्वतीय ओषधियाँ अपने जलके साथ सम्मिश्रित करके लाती हैं, जिसमें ढेर सारे जीवनप्रद रसायनोंका भी सम्मिश्रण होता है। जैसे—सर्पगन्धा, ब्राह्मी, जटामांसी, अश्वगन्धा, कालमेघ, कुटज, कस्तूरी भिण्डी, वच, शतावर, सनाय, घृतकुमारी, अपराजिता, कलिहार, गुड़मार, ईस्सरमूल, गिलोय, लाजवन्ती, प्रियंगु, गोखरू, श्यामा तुलसी आदि; जिनके कारण गंगाजल स्वयं ओषधि बन जाता था और कभी सड़ता नहीं था।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अमृतवाहिनी, पुण्यतोया भगवती जाह्नवी जीव-जगत्के सर्वविध दुःखोंके उपशमनकी आधारशिला हैं। इनके द्वारा सर्वविध दुःखोंका विनाश हो जाता है, इसलिये प्रत्येक भारतीय इसे राष्ट्रकी प्राणशक्ति मानता है, साथ ही इसका धार्मिक, दार्शनिक एवं सांस्कृतिक महत्त्व भी है। यहाँका प्रत्येक देशवासी मृत्युके समय तुलसीदल और गंगाजल पीकर अपने जीवनको धन्य और स्वयंको मोक्षका अधिकारी मानता है। इसलिये प्रायः सभी पुराणों और उपपुराणोंमें गंगाकी आराधना सविस्तार देखी जा सकती है। यह देशके लिये प्रकृतिका वरदान है, जिसमें सार्वभौमिकता, सार्वजनीयता और उपकारका भाव लबालब भरा हुआ है। इसमें स्नान करनेवालोंको तीनों देवोंकी कृपा और उनका आशीर्वाद साक्षात् प्राप्त होता है। यह वेदोंकी सारभूता, भगवद्रूपा, अमृतद्रवरूपा, नीराकार ब्रह्म, पवित्रताकी परिभाषा, किंवा महात्माओंके तपका मूर्तिमान् पुण्य है।

भारत सरकारने इसे सन् २००८ ई० में 'राष्ट्रिय नदी' तो घोषित कर दिया है, किंतु सभीको शुद्ध करनेवाली सर्वविध ओषधिरूपा गंगा स्वयं भयंकर प्रदूषणका शिकार बन गयी हैं। इसमें अहर्निश विष घोला जा रहा है, बाँध बनाकर गंगाकी अविरलताको बाधित किया जा रहा है, जो बहुत ही दुःखदायी, दुष्परिणामी है। यद्यपि गंगाकी प्रदूषणमुक्तिके लिये हम सभी प्रयत्नशील हैं, किंतु मात्र इतना ही पर्याप्त नहीं है। इसके लिये जन-जनमें जागृति होनी चाहिये।

हम भगवान् द्वारकाधीश एवं भगवान् चन्द्रमौलीश्वरसे प्रार्थना करते हैं कि वे हम सभीको ऐसी शक्ति दें कि हम लोग माँ गंगाके आँचलको पुनः पवित्र बना सकें। गंगा अपना पूर्वरूप पुनः प्राप्त कर सकें और हम सभी पुनः यह गा सकें कि—

गाङ्गं वारि मनोहारि मुरारिचरणच्युतम्।
त्रिपुरारिशिरश्चारि पापहारि पुनातु माम्॥

श्रीगंगाजीको विकृत करनेवाली गतिविधियाँ निरस्त हों

(अनन्तश्रीविभूषित जगद्गुरु शंकराचार्य पुरीपीठाधीश्वर स्वामी श्रीनिश्चलानन्दसरस्वतीजी महाराज)

श्रीगंगा, यमुना, सरस्वती ब्रह्मलोक और सौरमण्डलसे अभिव्यक्त भारतमें सुलभ दिव्य जलधाराएँ हैं। इनका सम्बन्ध भूमण्डलके अधोभागमें स्थित लोकोंतक है। आधिभौतिक धरातलपर जहाँ इनका अद्भुत महत्त्व है, वहाँ आध्यात्मिक धरातलपर देहगत इडा, पिंगला और सुषुम्णा नाड़ियोंकी दृष्टिसे अनुपम महत्त्व है एवं सोम, सूर्य और अग्नि तद्वत् ब्रह्मा, विष्णु और शिव-संज्ञक अधिदैव-दृष्टिसे इनका अद्भुत महत्त्व है। त्रिभुवनको आप्लावित तथा आह्लादित करनेवाली नदियोंकी रानी गंगाजीको सनातन शास्त्रोंमें 'त्रिपथगा' कहा गया है। जिस प्रकार मानव-जीवनके मध्यस्थान नाभिमण्डलमें गुम्फित नाड़ियाँ इडा, पिंगला, सुषुम्णा आदि शरीरके अधः, मध्य और ऊर्ध्वभागको आप्लावित तथा आह्लादित करती हैं तथा इनमें आहार-विहार आदि असंयमके कारण प्राप्त विकृतिकी दशामें ये आपादमस्तक शरीरको दूषित तथा वेदनायुक्त बना देती हैं, उसी प्रकार श्रीगंगा, यमुना, सरस्वतीमें योजनाबद्ध और प्रमादसुलभ विकृति आ जानेपर भूर्भुवःस्वः-संज्ञक त्रिभुवनको ये वेदनायुक्त तथा विकृत बना देती हैं। जिस प्रकार माताके गर्भस्थ शिशुका भरण-पोषण उसके नाभिमण्डलसे संलग्न नालके द्वारा सुनिश्चित है, उसी प्रकार ब्रह्माण्डगत स्थावर-जंगम प्राणियोंका पोषण श्रीगंगादि नदियोंके द्वारा सम्भव है। विश्वमें सुलभ अन्य जलधाराओंका संलग्न स्रोत श्रीगंगाजी हैं, इनमें विकृति तथा इनके विलोपसे विश्वस्तरपर अन्य समस्त जलधाराओंमें विकृति तथा उनका विलोप दार्शनिक, वैज्ञानिक और व्यावहारिक धरातलपर सुनिश्चित है। वेदादिशास्त्रसम्मत सनातन-शासनप्रणालीमें ऊर्जाके स्रोत पृथ्वी, पानी, प्रकाश और पवन तथा इनके आश्रय गगनको सुसंस्कृत, सुव्यवस्थित तथा सुरक्षित करने तथा रखनेकी विधा और प्रथा सुलभ थी, जबकि वर्तमान दिशाहीन यान्त्रिक शासनतन्त्रमें इन्हें विकृत, कुपित तथा विलुप्त अर्थात् अवरुद्ध करनेकी विधा और परिपाटी सुलभ है।

धर्म और मोक्षके संस्थान सरस्वती, गंगा और यमुनाका उपयोग जबतक धर्म और मोक्षका संस्थान समझकर किया जाता था, तबतक इनसे अवान्तर फलरूप अर्थ और कामकी समुपलब्धि भी पर्याप्त होती थी। जबसे इन्हें केवल अर्थ और कामकी धाराके रूपमें मानकर तदर्थ इनका उपयोग प्रारम्भ किया गया है, तबसे इनका मौलिक स्वरूप विलुप्त होने लगा है तथा स्थावर-जंगम प्राणियोंके लिये इनका विकृत स्वरूप अत्यन्त घातक सिद्ध हो रहा है। सरस्वतीकी धारा मेधा, यमुनाकी धारा ऊर्जा और गंगाकी धारा समृद्धि तथा शान्तिप्रधान है। सरस्वतीके विलोपसे मेधाशक्तिका विलोप परिलक्षित है। यमुनाकी विकृति और विलोपसे ऊर्जा-शक्तिका विलोप सुनिश्चित है तथा गंगाकी विकृति और विलोपसे असमृद्धि और अशान्ति सुनिश्चित है।

ध्यान रहे, सनातन-आर्य-वैदिक मनीषियोंके द्वारा चिरपरीक्षित और प्रयुक्त कृषि, जलसंसाधनादि विधाओं तथा प्रथाओंका तिरस्कारकर आधुनिक कोई भी विधा तथा प्रथा परिणाममें हितकर सिद्ध हो, यह सर्वथा असम्भव है।

अस्मिँल्लोकेऽथवामुष्मिन्मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः।
दृष्टा योगाः प्रयुक्ताश्च पुंसां श्रेयःप्रसिद्धये॥
तानातिष्ठति यः सम्यगुपायान् पूर्वदर्शितान्।
अवरः श्रद्धयोपेत उपेयान् विन्दतेऽञ्जसा॥
ताननादृत्य योऽविद्वानर्थानारभते स्वयम्।
तस्य व्यभिचरन्त्यर्था आरब्धाश्च पुनः पुनः॥

(श्रीमद्भा० ४। १८। ३—५)

उत्तराखण्डमें १६ एवं १७ जून, २०१३ को जो प्रलयंकर प्राकृत प्रकोप हुआ, उसके हेतुओंपर आधिभौतिक, आध्यात्मिक और आधिदैविक त्रिविध दृष्टिकोणसे विचार अपेक्षित है। उदाहरणस्वरूप 'रूप' अधिभूत है, नेत्र अध्यात्म है तथा सौरादि आलोक अधिदैव है। तीनोंकी सहभागितासे रूप-दर्शन सम्भव है। उसी प्रकार किसी भी घटनाके मूलमें तीनों हेतुओंकी विद्यमानता निश्चित है।

गीतामें किसी कर्म या घटनाके मूलमें अधिष्ठान (अधिकरण, आश्रय) कर्ता, विविध करणोपकरण, करणोपकरणगत विविध पृथक्-पृथक् चेष्टा और दैव (देवता तथा प्रारब्ध)-संज्ञक पाँच हेतुओंका वर्णन हुआ है—

अधिष्ठानं तथा कर्ता करणं च पृथग्विधम्।
विविधाश्च पृथक्चेष्टा दैवं चैवात्र पञ्चमम्॥

(गीता १८। १४)

उदाहरणार्थ—रेल-दुर्घटनाके कारणको समझनेके लिये पटरीगत त्रुटि, चालककी गतिविधि, ब्रेक तथा सिग्नल आदि विविध करण और उनके प्रयोगकी विधा और कोहरा, आँधी, वर्षा आदि दैवसंस्थान एवं यात्रियोंके प्रारब्धका प्रामाणिक विश्लेषण अपेक्षित है।

उक्त दृष्टिसे विचार करनेपर उत्तराखण्डकी भीषण घटनाके मूलमें हिमालयको चतुर्दिक् मार्ग तथा सुरंगादिके माध्यमसे विकृत तथा दुर्बल बनाना, जलधाराको सिंचाई, विद्युत् उत्पादनादि विविध परियोजनाओंके नामपर कृत्रिम मार्ग देकर नहररूपमें परिणत करना, मन्दाकिनी, अलकनन्दादिमें दिव्यताको सन्निहित करनेवाली वनस्पतियों तथा भीषण बाढ़का रूप धारण करनेसे जलकर्षण एवं वर्षणके द्वारा क्षेत्रको बचाने तथा दिव्य वायु एवं वृष्टिसे सम्पन्न रखनेवाले वृक्षोंका उच्छेद है। तद्वत् तटवर्ती तीर्थोंका विलोपकर परमाणु तथा विद्युत्-संस्थानोंके सदृश ऊर्जाकेन्द्र वैदिक एवं तान्त्रिक विधासे प्रतिष्ठित देवी-देवताओंका तिरस्कार और सनातन मानविन्दु श्रीगंगादिके प्रति आस्थान्वित होते हुए भी इनके विकृत तथा विलुप्त करनेकी परियोजनाओंका विरोध न करनेवाले क्षेत्रीय व्यक्ति, पर्यटक तथा तीर्थयात्री एवं दिशाहीन व्यापार एवं शासनतन्त्र है।

उत्तराखण्डके श्रीनगर-गढ़वाल क्षेत्रमें चिरकालसे प्रतिष्ठित तथा पूजित धारीदेवीको मूल संस्थानसे पृथक्कर अन्यत्र ले जाना परमेश्वरकी शक्ति, प्रकृतिके परिकर पृथ्वी, पानी, प्रकाश तथा पवनकृत प्रकोपका प्रमुख कारण है।

ऐसी घटनाके चपेटमें आकर निकट भविष्यमें उत्तराखण्डसे लेकर गंगासागरतकका क्षेत्र विलुप्तप्राय न हो, इसके लिये आवश्यक है कि उत्तराखण्डमें क्रियान्वित टिहरी बाँधसहित अन्य विद्युत्, बाँध, सुरंग और नहर-परियोजनाएँ वैज्ञानिक विधाका आलम्बन लेकर ध्वस्त हों तथा भविष्यमें सम्भावित परियोजनाएँ सर्वथा निरस्त हों। तद्वत्, गोमुख, गंगोत्रीसे लेकर श्रीगंगासागरतक श्रीगंगाजीकी निर्बाधता (अविरलता) और निर्मलताके लिये घातक अर्थात् उन्हें विकृत तथा विलुप्त करनेवाली समस्त गतिविधियाँ सर्वथा निरस्त हों।

मंगोलियामें अभी भी गंगाजलकी पारम्परिक मान्यता

भारतमें तो जन-जनकी गंगाके प्रति अपार श्रद्धाके हम सभी साक्षी हैं, परंतु कम लोग जानते हैं कि सुदूर उत्तरमें स्थित मंगोलिया नामक देशमें घर-घरमें गंगाजलको सौभाग्यका चिह्न मानकर आदरसे रखा जाता है। इतना ही नहीं विभिन्न धार्मिक आयोजनोंमें प्रयोग किया आता है। वहाँ गंगाजलको पवित्र एवं अत्यन्त शुभ मानते हैं। जब कोई मंगोलियावासी भारतकी यात्रापर आता है तो वहाँके निवासी उससे भारतसे पवित्र गंगाजल लानेके लिये आग्रह करना नहीं भूलते। मंगोलियाकी ९० प्रतिशत जनसंख्या बौद्धमतकी अनुयायी है तथा बुद्धके देशके रूपमें भारतके प्रति उनके हृदयमें विशेष सम्मान है।

गंगाके प्रति मंगोलियावासियोंकी श्रद्धा बड़ी गहरी है। किंवदन्ती है कि बहुत पहले एक व्यक्ति भारतसे मंगोलियामें अपने पैतृक स्थान दारिगंगा लौटा तथा अपने साथ भारतसे लाये गंगाजलको उसने रेगिस्तानमें डाल दिया, जिसने वहाँ झीलका रूप ले लिया। आज भी मंगोलियावासी उस झीलको पवित्र मानते हैं तथा उसके दर्शनके लिये जाते हैं।

कुछ मंगोलियावासी वहाँकी तुलनदीको श्रद्धावश गंगा भी कहते हैं। ये सभी बातें मंगोलियावासियोंकी गंगाके प्रति अगाध श्रद्धाको ही प्रकट करती हैं।

श्रीगंगाजीका पावन स्वरूप

(अनन्तश्रीविभूषित जगद्गुरु श्रीनिम्बार्काचार्यपीठाधीश्वर श्रीराधासर्वेश्वरशरणदेवाचार्य श्री 'श्रीजी' महाराज)

भारतवर्षमें गंगा, यमुना, नर्मदा, क्षिप्रा, गोदावरी, सरस्वती, चन्द्रभागा, चर्मण्वती, वेत्रवती, पार्वती, फल्गु, कृष्णा, कावेरीप्रभृति विविध पुण्यसलिला सरिताएँ अनवरत प्रवाहित हैं। उनमें गंगा-यमुनाकी विशेषता सर्वाधिक प्रसिद्ध है और उसमें भी श्रीगंगाजीका महत्त्व अनुपम है। यह निम्न वचन इनकी विशेषताका निर्देश कर रहा है—

गङ्गा गङ्गेति यो ब्रूयाद् योजनानां शतैरपि।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति॥

अर्थात् शत-शतयोजनसे 'गंगा' इतने शब्दके उच्चारण-मात्रसे ही प्राणीके जन्म-जन्मान्तरोंके पातकोंका क्षय हो जाता है और वह भगवद्धामकी प्राप्ति करता है।

एवंविध स्वकीय प्रणीत 'भारत-भारती-वैभव' एवं 'श्रीस्तवरत्नाञ्जलि'से कतिपय श्लोकोंका उद्धरण देना उचित समझते हैं।

भूतेशशोभितहिमालयराजमानां
श्रीधामभारतधरातलरम्यमाणाम्।
स्वाम्बुप्रदानदुरितक्षयकारिणीञ्च
गङ्गां भजे प्रतिदिनं करुणावतारम्॥
(भा०भा०वै० पृ० ४४ श्लोक ६२)

आशुतोष भगवान् शिवसे अति रमणीय हिमालयकी दिव्य पर्वत-श्रेणियोंमें प्रवाहित होती हुई तथा परम कमनीय भारतकी पावनतम धराको समलंकृत करती हुई और अपने निर्मल अमृतरूपी जलसे समस्त पातकोंका ध्वंस करनेवाली कृपामयी श्रीगंगाजीका नित्यप्रति भजन-सेवन करते हैं।

श्रीजाह्नवीं सफलतापहरां वरिष्ठां
श्रीकृष्णभक्तिमतिदां भवमुक्तिकर्त्रीम्।
धाराप्रवाहशुभनादरसप्रदात्रीं
गङ्गां नमाम्यहरहोऽपरिमेयशोभाम्॥
(भा०भा०वै० पृ० ४४ श्लोक ६३)

समस्त पाप एवं तापोंका शमन करनेवाली, परमश्रेष्ठ तथा भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रकी दिव्य भक्तिसे सद्बुद्धि प्रदान करनेवाली एवं जगत्के बन्धनसे निवारण करनेवाली और अपने निर्मल धाराप्रवाहके शुभ कलरवसे आनन्द देनेवाली अनुपम शोभायुक्त जह्नुसुता श्रीगंगाजीको प्रतिदिन नमन करते हैं।

ऋषितापसभक्तिसमुल्लसितां सततं मुनिवृन्दगिरोच्चरिताम्।
सुरकिन्नरसाधुजनैः प्रणुतां भज मानस विष्णुपदीं नितराम्॥
(श्रीस्तवरत्नाञ्जलिः श्रीगंगामहिमाष्टकम् १४४।४)

हे मानस! ऋषिजनोंकी तप:साधना एवं भक्तिसे प्रसन्नतायुक्त, सदा मुनिजनोंके समुदायको वाणीद्वारा भगवती भागीरथी श्रीगंगे! हे गंगे! इस प्रकार कही गयी सुर, किन्नर तथा मुनिजनोंद्वारा पूजित विष्णुपदी श्रीगंगाजीका तुम निरन्तर स्मरण करो।

भवभीषणशोकविपत्तिहरां भवसागरमग्नजनोद्धरणाम्।
व्रजमोहनकृष्णपदाब्जरतां भज मानस विष्णुपदीं नितराम्॥
(श्रीस्तवरत्नाञ्जलिः श्रीगंगामहिमाष्टकम् १४६।८)

हे चित्त! भवार्णवके भीषण शोक एवं व्याधियोंका शमन करनेवाली, जागतिक महासागरमें आबद्ध जनोंका उद्धार करनेवाली, व्रजविहारी श्रीकृष्णभगवान्के पदारविन्दोंमें सतत निवास करनेवाली श्रीगंगाजीका निरन्तर ध्यान करो।

वस्तुतः श्रीगंगाजीकी लोकोत्तर महिमा है। इसके अनेक उदाहरण हैं। जैसे—प्रत्यक्षमें जो अनुभव किया, उसका यहाँ उल्लेख कर रहे हैं। अखिल भारतवर्षीय श्रीनिम्बार्काचार्यपीठ, निम्बार्कतीर्थ (सलेमाबाद)-के निकटवर्ती पींगलोदके निवासी श्रीमदनगोपालजी शर्मा दाधीच वि०सं० २०१० में प्रयाग कुम्भमें हमारे साथमें थे, वे कण्डू (खुजली)-की व्याधिसे पीड़ित थे। हमने सहजमें उनसे कहा—'श्रीगंगाजीमें स्नान करने तो जाते ही हैं, वहाँपर स्नान करते समय गंगाजीकी रजका शरीरपर आलेपन करें।' उन्होंने ऐसा ही किया, आश्चर्य है कि एक दिनमें ही उनकी कण्डू (खुजली)-का निवारण हो गया!

हमारे पास गंगाजल था, अपने आचार्यपीठके कुएँमें कृमि उत्पन्न हो गये। गंगाजलको उसमें छोड़ा, एक सप्ताहके मध्य एक भी कृमि नहीं रहा। यथार्थमें गंगाजलमें अनन्त शक्ति है, ये भगवती भागीरथी अपनी उत्ताल तरंगोंसे प्रवाहित होती हुई प्राणिमात्रका मंगल करती हैं।

माँ गंगा : स्नानमहिमा एवं पालनीय नियम

(दण्डी स्वामी श्रीमहेश्वरानन्द सरस्वतीजी महाराज, पुराणाचार्य)

भारतीय संस्कृतिमें गंगा, गीता, गणेश, गायत्री एवं गौ—इन पंच गकारोंका विशेष महत्त्व है। ये सनातन धर्म तथा हिन्दू संस्कृतिके पंचप्राण हैं।

पाँच माताएँ होती हैं—

जननी जन्मभूमिश्च जाह्नवी वेदमातरः।
सुरभिश्चेति विज्ञेयाः पञ्चैता मातरः स्मृताः॥

गर्भमें नौ मासपर्यन्त धारणकर भीषण कष्ट सहकर जन्म देनेवाली तथा दुग्धरूपमें अपना वात्सल्यस्रोत उड़ेलकर लाड़-प्यारद्वारा पालन-पोषण करनेवाली जननी प्रथम माता है, यही शिशुकी प्रथम गुरु भी होती है। जननीके दुग्धपानद्वारा छः माहपर्यन्त ही पोषण होता है, उसके बाद जो अन्न, वस्त्र, औषधि, जल तथा आश्रय प्रदान करती है, वह जन्मभूमि दूसरी माता है। देह तथा अन्तःकरणके सम्पूर्ण मल-कालुष्यका विनिर्मोचन स्नानादिसे कराकर हर प्रकृतिके पुत्रसे स्वाभाविक स्नेह करनेवाली जगज्जननी जाह्नवी गंगा तीसरी माता हैं। भगवत्-सामीप्यादिकी योग्यता प्रदान करती हैं; क्योंकि भगवान्‌का श्रीरामचरितमानसमें कथन है—

निर्मल मन जन सो मोहि पावा। मोहि कपट छल छिद्र न भावा॥

वेद चौथी माता है। जैसे माँके द्वारा ही पिताका ज्ञान होता है, वैसे ही प्रत्यक्ष तथा अनुमानद्वारा भी जिस जगत्पिता जगदीश्वरका ज्ञान नहीं होता है, उसका भी जो ज्ञान कराती है, वह वेदमाता है। पाँचवीं गौमाता है, जो बाल, वृद्ध, जवान, योगी तथा रोगी इत्यादिका जीवनपर्यन्त अपने दुग्धद्वारा पोषण करती है। गो सर्वदेवस्वरूपिणी है, इसके पूजनमात्रसे सभी देवताओंके पूजनका फल प्राप्त हो जाता है। इसके पंचगव्यप्राशन (दूध, दही, गोमूत्र, गोमय और घी)-से अस्थि-मांसादिमें व्याप्त भक्ष्य-अभक्ष्य पदार्थोंके खानेका दोष भी समाप्त हो जाता है। शास्त्रोंमें पंचगव्यप्राशनका मन्त्र आया है—

यत्त्वगस्थिगतं पापं देहे तिष्ठति मामके।
प्राशनात् पञ्चगव्यस्य सर्वं नश्यतु तत्क्षणात्॥

पंच गकारों एवं पंचमाताओंमें श्रेष्ठ माँ गंगा भौतिक दृष्टिसे नदीस्वरूपिणी होते हुए भी सर्वतीर्थ-स्वरूपिणी हैं तथा आध्यात्मिक दृष्टिमें मोक्षप्रदात्री हैं। गीता पुस्तकमात्र न होकर सम्पूर्ण वेदोपनिषद्, शास्त्रों, पुराणों तथा स्मृति इत्यादि सम्पूर्ण हिन्दू-सनातन धर्मका साररूपमें उपदेशप्रदात्री सर्वशास्त्रस्वरूपा हैं। महाभारतका यह श्लोक प्रसिद्ध ही है—

सर्वशास्त्रमयी गीता सर्वदेवमयो हरिः।
सर्वतीर्थमयी गङ्गा सर्ववेदमयो मनुः॥

(महा० भीष्मपर्व ४३। २)

श्रीमद्भगवद्गीता सर्वशास्त्रमयी है, भगवान् श्रीहरि सर्वदेवमय हैं, गंगा सर्वतीर्थमयी है तथा मनुस्मृति सर्ववेदमयी है। पापहारिणी पुण्यसलिला गंगामें स्नानोपरान्त किये गये सत्कर्मोंका करोड़ों गुना फल होता है। यज्ञ, दान, तपस्या, जप, श्राद्ध तथा देवपूजनादि गंगास्नानके बाद विशेष फलप्रदायक होते हैं—

यज्ञो दानं तपो जप्यं श्राद्धञ्च सुरपूजनम्।
गङ्गायां तु कृतं नित्यं कोटिकोटिगुणम्भवेत्॥

(पद्मपुराण)

स्नानमें प्रयुक्त जलके अनुसार ही स्नानका फल मिलता है। घरमें गर्म जलसे स्नान करनेका जितना फल होता है, उससे दोगुना फल ठण्डे जलसे स्नान करनेपर मिलता है। तालाबमें स्नान करनेपर शीतल स्नानसे दूना, नदीस्नान करनेपर चौगुना, सरस्वती इत्यादि महानदियोंमें स्नान करनेपर सौ गुना फल मिलता है। महानदी संगममें उससे भी चौगुना, गंगास्नानमें हजार गुना, गंगास्नानके फलसे सौ गुना फल गंगा-यमुना संगमके स्नानका होता है, अतः कहीं भी स्नान करे प्रयागका स्मरण कर लेना चाहिये, यही फल समुद्रमें स्नान करनेका होता है। सूर्यके मकरराशिमें स्थित होनेपर यही स्नान एक बार करनेपर छः वर्षोंके स्नानके बराबर फल देता है—

तप्तेन वारिणा स्नानं यद्गृहे क्रियते नरैः।
षडब्दं फलदं तद्धि मकरस्थे दिवाकरे॥
(धर्मसिन्धु)

इसीलिये प्रयागमें माघस्नानका विशेष महत्त्व है। आजकल देर रात्रितक टेलीविजन देखने तथा देर सूर्योदयपर्यन्त शयन करनेका दुष्परिणाम हमें ब्रह्ममुहूर्तमें बिस्तर त्यागकर प्रातःकालीन शुद्ध प्राणवायुकी प्राप्ति एवं स्नानके उत्तम पुण्यफलसे वंचित कर रहा है। माघमें स्नानकालका वर्णन किया गया है—

उत्तमं तु सनक्षत्रं लुप्ततारं च मध्यमम्।
सवितर्युदिते भूप ततो हीनं प्रकीर्तितम्॥
(धर्मसिन्धु)

आकाशमें तारोंके रहते किया हुआ स्नान उत्तम होता है, तारोंके लुप्त हो जानेपर किया हुआ स्नान मध्यम स्नान तथा सूर्योदयके बाद किया हुआ स्नान अधम स्नान कहलाता है। प्रयागमें त्रिवेणी-स्नान करनेकी बड़ी महिमा है—

सितासिते तु यत्स्नानं माघमासे युधिष्ठिर।
न तेषां पुनरावृत्तिः कल्पकोटिशतैरपि॥
कुरुक्षेत्रसमा गङ्गा यत्र कुत्रावगाहिता।
तस्माद् दशगुणा विन्ध्ये काश्यां शतगुणा ततः॥
काश्याः शतगुणा प्रोक्ता गङ्गा यमुनयान्विता।
सहस्त्रगुणिता सापि माघे पश्चिमवाहिनी॥

हे युधिष्ठिर! माघके महीनेमें श्याम-श्वेत वर्णवाले त्रिवेणी-संगममें जो स्नान करता है, उसका सौ करोड़ कल्पोंमें भी पुनर्जन्म नहीं होता है। गंगामें कहीं भी स्नान करे कुरुक्षेत्रमें स्नान करनेके समान फलकी प्राप्ति होती है। उससे दशगुणा विन्ध्यक्षेत्रमें स्नान करनेपर गंगा फल देती हैं, काशीमें गंगास्नानका सौ गुना फल होता है। काशी-स्नानसे सौ गुना गंगा-यमुना-संगम स्नानका फल होता है। संगमक्षेत्रमें भी माघमासमें गंगा यदि पश्चिमवाहिनी हों तो उसमें स्नान करनेपर हजार गुना फल प्राप्त होता है। महाकवि कालिदासने तीर्थराज प्रयागकी महिमा वर्णित करते हुए कहा है—

समुद्रपत्न्योर्जलसन्निपाते पूतात्मनामत्र किलाभिषेकात्।
तत्त्वावबोधेन विनाऽपि भूयस्तनुत्यजां नास्ति शरीरबन्धः॥

समुद्रपत्नियों (गंगा, यमुना तथा सरस्वती)-के जलसंगम स्थानपर पवित्र आत्माओंके स्नान करनेपर निश्चय ही तत्त्वज्ञानके बिना भी शरीर त्यागनेपर शरीरका बन्धन पुनः प्राप्त नहीं होता है अर्थात् जन्म-मरणका चक्र छूट जाता है।

धर्मसिन्धुमें प्रयागमें माघमास व्यतीत करनेवाले साधकोंके पालनीय नियमोंका वर्णन किया गया है, कल्याणार्थ यहाँ लिख रहा हूँ—

भूमौ शयीत होतव्यमाज्यं तिलसमन्वितम्।
हविष्यं ब्रह्मचर्यं च माघमासे महाफलम्॥
न वह्निं सेवयेत्स्नातो ह्यस्नातोऽपि वरानने।
होमार्थं सेवयेद्वह्निं शीतार्थं न कदाचन॥
अहन्यहनि दातव्यास्तिलाः शर्करयान्विताः।
त्रयो भागास्तिलानां च शर्करायाश्चतुर्थकः॥

भूमि-शयन, ब्रह्मचर्य-पालन, हविष्य-भक्षण तथा तिलयुक्त हवन-सामग्रीसे हवन करनेका अधिक फल होता है। माघमासमें चाहे स्नान किये हों या न किये हों, अग्नि नहीं तापना चाहिये। अग्नि हवन करनेके निमित्त प्रयोग करे, शीतनिवारणार्थ नहीं। प्रतिदिन शक्कर मिले तिल जिसमें तीन भाग तिल एवं एक भाग शक्कर हो दान करना चाहिये—

माघे यत्नेन संत्याज्यं मूलकं मदिरोपमम्।
पितॄणां देवतानां च मूलकं नैव दापयेत्॥

माघमासमें मूलीको मदिराकी भाँति पूर्णतः त्याग दे तथा देव एवं पितृकार्यमें भी मूली न दे।

प्रयागमें ईंधन, कम्बल, वस्त्र, जूते, तेल, घी, रुई भरी रजाई, स्वर्ण तथा अन्नादिका दान विशेष फल देते हैं।

तिलस्नायी तिलोद्वर्ती तिलहोमी तिलोदकी।
तिलभुक् तिलदाता च षट् तिलाः पापनाशनाः॥

तिलसे स्नान, तिलसे उबटन, तिलसे हवन, तिल मिला जल चढ़ाना, तिल खाना एवं तिलका दान

करना—ये षट्तिला (छः प्रकारसे तिलोंका प्रयोग) पापोंका नाश करनेवाला है।

सम्पूर्ण तीर्थोंकी जननी गंगा सात रूपोंसे भारत भूमिको पावन करती हैं—

गङ्गा गोदावरी चैव कावेरी ताम्रपर्णिका।
सिन्धुश्च सरयू रेवा सप्तगङ्गाः प्रकीर्तिताः॥

(शिवपुराण, विद्येश्वरसंहिता १५।४-५)

गंगा, गोदावरी, कावेरी, ताम्रपर्णी, सिन्धु, सरयू तथा नर्मदा—ये सात गंगाएँ कहलाती हैं। इनमेंसे किसीमें भी स्नान करनेवालोंको ये तेरह कर्म नहीं करने चाहिये—

गङ्गां पुण्यजलां प्राप्य त्रयोदश विवर्जयेत्।
शौचमाचमनं चैव निर्माल्यं मलघर्षणम्॥
गात्रसंवाहनं क्रीडा प्रतिग्रहमथो रतिम्।
अन्यतीर्थरतिं चैव अन्यतीर्थप्रशंसनम्॥
वस्त्रत्यागमथाघातं सन्तारं च विशेषतः।

गंगाजीके पवित्र जलमें तेरह कार्य नहीं करना चाहिये—शौच, कुल्ला, निर्माल्य फेंकना, मल छुड़ाना, शरीर संवाहन, खेल, दान लेना, विहार, अन्य तीर्थसे प्रेम, दूसरे तीर्थकी प्रशंसा, वस्त्रत्याग, हाथ-पैरोंसे जलमें आघात करके तैरना।

इसी प्रकार तेल मलकर प्रवेश करना, गन्दगी फेंकना, व्यर्थ वार्तालाप, किसीपर कुदृष्टि डालना तथा मिथ्या-भाषणका मनुष्यको त्याग कर देना चाहिये—

नाभ्यङ्गितः प्रविशेच्च गङ्गायां न मलार्दितः॥
न जल्पन्न मृषा वीक्षन्न वदन्ननृतं नरः।

'तरणात् तीर्थम्' जो भवसागरसे तारते हैं, वे तीर्थ कहलाते हैं। जिन पुण्यस्थलोंमें जलकी प्रधानता होती है, वे तीर्थ कहलाते हैं तथा जिनमें स्थानकी प्रधानता होती है, वे क्षेत्र कहलाते हैं। तीर्थोंमें जैसे पुण्य कई गुना फल देते हैं, वैसे ही पाप भी कई गुना बढ़कर फल देते हैं—

तीर्थक्षेत्रे कृतं पापं बहुधा ऋद्धिमृच्छति।
पुण्यक्षेत्रे निवासे हि पापमण्वपि नाचरेत्॥

तीर्थक्षेत्रमें किये हुए पाप बहुत अधिक बढ़ते हैं, अतः पुण्यमय तीर्थक्षेत्रमें निवास करनेवालेको अणुके बराबर (थोड़ा-से-थोड़ा) भी पाप नहीं करना चाहिये। भविष्य-पुराणमें भीष्म पितामहने युधिष्ठिरको तथा श्रीमद्देवीभागवतमें महर्षि च्यवनने भक्त प्रह्लादको उपदेश दिया है—

मनोवाक्कायशुद्धानां राजंस्तीर्थं पदे पदे।
तथा मलिनचित्तानां गङ्गापि कीकटाधिका॥

(भविष्यपुराण, देवीभागवत ४।८।२८)

जिसने हिंसा, चोरी तथा व्यभिचारका त्याग करके शरीरको शुद्ध कर लिया। निन्दा, चुगली, कठोर वचन तथा निरर्थक वार्तालापका त्यागकर वाणीको शुद्ध कर लिया तथा परधनहरण, दूसरोंका अनिष्ट एवं अपनी श्रेष्ठताके अहंकारको त्यागकर मनको शुद्ध कर लिया, उसके पद-पदमें तीर्थ है। मलिन अन्तःकरणवालोंके लिये तो गंगा भी कीकटादि (मगध)-से भी अधिक है।

जिसके हाथ, पैर और मन इत्यादि शास्त्रप्रतिपादित ईश्वरीय आज्ञाओंका पालन करते हुए संयमित रहते हैं अर्थात् सत्कर्मोंको करते हुए पापकर्मोंसे बचे रहते हैं, उसकी प्राप्त विद्या सार्थक होती है, उसे साधना—तपस्याका पूर्णफल प्राप्त होता है, उसकी ही यशकीर्ति फैलती है तथा तीर्थयात्राका फल उसीको प्राप्त होता है।

परिधेयाम्बराम्बूनि गङ्गास्रोतसि न त्यजेत्।
न दन्तधावनं कुर्याद् गङ्गागर्भे विचक्षणः॥
कुर्याच्चेन्मोहतः पुण्यं न गङ्गास्नानजं लभेत्॥
प्रभातेऽन्यत्र तां कृत्वा दन्तकाष्ठादिकक्रियाम्।
रात्रिवासं परित्यज्य गङ्गायां स्नानमाचरेत्॥

(पद्मपुराण)

वस्त्रोंको गंगाधारमें न निचोड़ें। समझदार लोगोंको गंगागर्भ (बरसातमें जहाँतक जल भरता है)-में दाँत साफ नहीं करना चाहिये। प्रभातकालमें दातून इत्यादि क्रियाएँ अन्यत्र करके रात्रिमें पहने हुए कपड़ोंका त्यागकर (सम्भव हो तो स्नान करनेके बाद) गंगामें स्नान करे। यदि मोहवश कोई दन्तधावनादि करता है तो उसे गंगास्नानके पुण्यफल की प्राप्ति नहीं होती है।

माँ गंगाका हम भारतीयोंके जीवन एवं मरण दोनोंसे घनिष्ठ सम्बन्ध है। जीवित व्यक्तिके स्नान करनेपर पाप-ताप-निवृत्ति करनेवाली गंगा उनके तटपर शवदाह करने तथा अस्थिसंचय करके गंगामें विसर्जन करनेपर मोक्ष प्रदान करती हैं। गरुडपुराणमें निम्नलिखितको मरणकालमें मुक्तिप्रदायक बताया गया है—

एकादशीव्रतं गीता गङ्गाम्बु तुलसीदलम्।
विष्णोः पादाम्बु नामानि मरणे मुक्तिदानि च॥

(गरुडपुराण-सारोद्धार ८। २६)

अर्थात् एकादशीका व्रत, गीतापाठ, गंगाजल, तुलसीदल, विष्णुचरणोदक एवं भगवन्नाम मरणकालमें मुक्तिप्रदायक है। अतः मरणासन्न व्यक्तिको गीताका श्रवण कराते हुए उसके मुखमें तुलसीदल, गंगाजल एवं शालग्राम या विष्णुका चरणोदक डालकर उसके समीप भगवन्नाम-संकीर्तन करना चाहिये।

जगन्माता गंगामें स्नान करनेवालेको अपने दोष-दुर्गुणों तथा पापमयी बुद्धिको त्यागकर स्नान करनेपर सद्गति मिलती है—

पापबुद्धिं परित्यज्य गङ्गायां लोकमातरि।
स्नानं कुरुथ हे लोका यदि सद्गतिमिच्छथ॥

(पद्मपुराण)

हितैषिणी-वात्सल्यमयी माँकी भाँति गंगामाता भी अपने सभी पुत्रोंको दिव्य सद्गुणसम्पन्न तथा निष्पाप बनाकर परमात्माकी गोदमें बिठाना चाहती हैं।

जय गंगे माँ तरल तरंगे

(डॉ० श्रीअनन्तरामजी मिश्र 'अनन्त')

दरस-परस हो स्मरण या कि मज्जन माँ! तेरा सुन्दर
सबका फल है सुखद एक से एक निरन्तर बढ़कर।
आस्थाओंके दीपोत्सव तुझसे स्नेहिल रहते हैं
संस्कृति के सन्दर्भ-सिन्धु ज्वारिल-ज्वारिल रहते हैं॥

विष्णु-चरण प्रभविष्णु न होते, यदि तू प्रकट न होती
ब्रह्म-कमंडलु छूँछा बजता, वसुधा गौरव खोती।
रुद्र, रुद्र ही रहते, तो शंकर न कभी बन पाते
अगर नहीं तुझको सादर अपने शिर पर बिठलाते॥

हर-ललाट के नयनानल का विप्लव गहरा होता
अगर न उसके ऊपर तेरा शीतल पहरा होता।
शिव-भालस्थ दूज विधु की वक्रता न वन्दित होती
यदि न ऊर्मियों से तेरी वह सन्तत छन्दित होती॥

सदा निरानन है, प्रतिबिम्बित-चन्द्रमुखी रहती है
श्रवणहीन तू श्रवणवती है, अचरण-चरणवती है।
वागिन्द्रिय-विहीन व्याख्यात्री, अंकरहित धात्री है
अकर करमयी, प्राणिमात्र को चतुर्वर्ग-दात्री है॥

तू नीरावतार है मातः! निराकार सत्ता का
परब्रह्म विगलित तुझमें गुण निर्गुण गुणवत्ता का।
योग-योग्य साधक को उज्ज्वल श्रेय-दृष्टि देती तू
भोग चाहने वाले को माँ! प्रेय-सृष्टि देती तू॥

गीता, गायत्री अरु तुलसी, तुझसे धन्य धरा है
अम्बुमयी चिन्मूर्ति शम्भु की, भारत भक्ति भरा है।
नहीं हिमालय ही माँ! तेरा अभिनन्दन करता है
वीतराग विन्ध्याचल भी झुककर वन्दन करता है॥

मैया! शरद-जुन्हैया-सी तेरी विशुभ्र धारा है
विश्ववन्द्य व्यक्तित्व, सचल मानो ठाकुरद्वारा है।
श्रेष्ठ पवित्र न मैंने जग में और कहीं कुछ पाया
इसीलिये तेरा जल लेकर तुझ पर अम्ब! चढ़ाया॥

अमरपयस्विनि! पुत्रों को पयपान कराया तूने
जीजाबाई बनी, सुतों को शिवा बनाया तूने।
कुछ अपने वात्सल्यामृत के कण मुझको भी दे दे
हे क्षणदे! जीवनोन्नयन के क्षण मुझको भी दे दे॥

गंगाका तीर्थत्व एवं माहात्म्य

(पूज्य संत श्रीहरिहरजी महाराज दिवेगाँवकर)

माता गंगाकी महिमा तो अपरम्पार है। पृथ्वीका सबसे दिव्य तीर्थ माता गंगा ही हैं। गंगाका बाह्यरूप तो विशाल, विलक्षण और विलोभनीय है ही, उसी तरह गंगाके तटोंकी ऊँचाई और तटोंकी महिमा भी वेदोंमें वर्णित है, यथा—

अधिबृबुः पणीनां वर्षिष्ठे मूर्धन्नस्थात्। उरुः कक्षो न गाङ्ग्यः॥ (ऋग्वेद ६।४५।३१)

अर्थात्—गंगाके ऊँचे-ऊँचे तटोंकी तरह प्राणियोंके बीच ऊँचे स्थानपर बृबुने अधिष्ठान किया था।

इस मन्त्रके भाष्यमें सायणाचार्य कहते हैं—

अधिष्ठितोऽभूद् गांग्यः गङ्गायाः कूले उन्नते भवः कक्षोन कक्ष इव उरुविस्तीर्णः सन् जातितो हीनोति दातृत्वात् सर्वत्र श्रेष्ठो भवतीत्यर्थः॥

अर्थात् तुलनामें गंगा और गंगातटोंकी महिमा वर्णित है। गंगा ऐसा तीर्थ है, जहाँ पहुँचे तो हम भवसागर तर जायँ। माता गंगाका अखण्डित प्रवाह देखकर परमात्माके अखण्ड सच्चिदानन्द परब्रह्मरूपकी प्रतीति होती है। गंगाका अविरल प्रवाह साधकके ध्यानकी वृत्तिकी अविरलता और साधनाकी अखण्डता दर्शाता है। गंगाके प्रवाहकी ध्वनि हर्ष उत्पन्न करती है। इस ध्वनिका क्या अर्थ है, यह तो ऋषि, मुनि माता गंगासे पूछते हैं। ऐसा वर्णन तो ऋग्वेदमें भी आया है—

एता अर्षन्त्यललाभवन्तीर्ऋतावरीरिव संक्रोशमानाः।
एता वि पृच्छ किमिदं भनन्ति कमापो अद्रिं परिधिं रुजन्ति॥
(४।१८।६)

माता गंगा स्वर्गसे उतर आयी हैं। ऐसा कहते हैं कि पृथ्वीपर जितना भी जल है; अथवा नदियाँ हैं, वह सभी इन्द्रने स्थापित की हैं।

ऋग्वेदमें यह विषय इस प्रकार प्रतिपादित है—

उत सिन्धुं विबाल्यं वितस्थानामधि क्षमि। परि ष्ठा इन्द्र मायया॥ (४।३०।१२)

परंतु माता गंगा तो स्वयं प्रसन्न होकर उद्धार करनेके लिये पृथ्वीपर उतर आयी हैं। अर्थात् यह माता गंगाकी विशेष महिमा है।

राजा अंशुमान्‌से लेकरके भगीरथतकके तपश्चर्या करनेके पश्चात् ही गंगाका अवतरण हुआ है।

जब माता गंगा भगीरथपर प्रसन्न होकर प्रकट हुईं तो माताने भगीरथसे पूछा 'मैं तुम्हें वर देने आयी हूँ; क्या वर माँगना चाहते हो?' तब भगीरथने कहा—'मेरे पूर्वजोंके उद्धारहेतु आप पृथ्वीपर पधारिये।' तब माताने कहा—'मेरा वेग कौन सहेगा? नहीं तो मैं पृथ्वीको फाड़के रसातलमें चली जाऊँगी।' तब भगीरथने तप करके भगवान् शंकरको प्रसन्न किया और उन्होंने अपने मस्तकपर माता गंगाको धारण किया। यथा—

धारयिष्यति ते वेगं रुद्रस्त्वात्मा शरीरिणाम्।
यस्मिन्नोतमिदं प्रोतं विश्वं शाटीव तन्तुषु॥
इत्युक्त्वा स नृपो देवं तपसातोषयच्छिवम्।
कालेनाल्पीयसा राजंस्तस्येशः समतुष्यत॥
(श्रीमद्भा० ९।९।७-८)

गंगाकी महिमा इतनी कैसे? ऐसा आश्चर्य करनेकी जरूरत नहीं है; क्योंकि वह तो साक्षात् भगवान्‌के श्रीचरणोंसे प्रकट हुई हैं।

न ह्येतत् परमाश्चर्यं स्वर्धुन्या यदिहोदितम्।
अनन्तचरणाम्भोजप्रसूताया भवच्छिदः॥
(श्रीमद्भा० ९।९।१४)

उस अनन्तके चरणोंसे प्रकट होनेके कारण माता गंगाकी महिमा भी अनन्त ही है। माता गंगाके पुराणोंमें चार रूप कहे गये हैं—

१. सीता, २. अलकनन्दा, ३. चक्षु, ४. भद्रा। गंगामें स्नान करनेमात्रसे सभी पाप नष्ट हो जाते हैं। इतना ही नहीं 'गंगा, गंगा' ऐसा उच्चारण करनेमात्रसे भी पाप नष्ट हो जाते हैं—

गङ्गा गङ्गेति यैर्नाम योजनानां शतेष्वपि।
स्थितैरुच्चारितं हन्ति पापं जन्मत्रयार्जितम्॥
(श्रीविष्णुपुराण २।९।१२१)

अग्निपुराणमें एक सौ दसवें अध्यायमें गंगाकी महिमाका वर्णन किया गया है। ऐसा वर्णन है कि हमें गंगाका सदा सेवन करना चाहिये। गंगासेवनसे हमें भोग और मोक्ष दोनों प्राप्त होते हैं और उत्तम गतिकी कामना

करनेवालोंको गंगा ही सर्वोत्तम गति हैं।

गंगा तीर्थरूपिणी हैं। सभी तीर्थ गंगामें निवास करते हैं। तीर्थोंमें दो तीर्थोंको तीर्थराज बताया गया है। १. प्रयागराज, २. पुष्करराज। प्रयागमें तीन कुण्ड हैं। उनके बीचमें गंगा सब तीर्थोंको साथ लिये बड़े वेगसे बहती हैं। कोटि तीर्थोंका पुण्य केवल गंगासेवनसे मिलता है।

गंगातटपर प्रयाग, वाराणसी, हरिद्वार, ऋषिकेश, कर्णप्रयाग आदि अनेकों तीर्थ और अनेकों पवित्र नगर हैं।

गंगा सर्वत्र सुलभ और तीन जगह दुर्लभ मानी गयी हैं—१. गंगाद्वार, २. प्रयाग, ३. गंगासागर-संगम।

जहाँ गंगामें प्रयाग तीर्थ है, वहाँ साठ करोड़ दस हजार तीर्थोंका निवास है।

गंगातटपर अनेकों साधु, मुनि, ऋषि, तत्त्वविद् निवास करते हैं। तीर्थोंमें जानेका कारण ही यह है कि इन सन्तोंके भी दर्शन हों। ऐसा कहा गया है कि—

तीर्थे तीर्थे निर्मलं ब्रह्मवृन्दम्।
वृन्दे वृन्दे तत्त्वचिन्तानुवादः।
वादे वादे जायते तत्त्वबोधः॥

अन्ततः जीवको तत्त्वबोध होकर परम मुक्ति प्राप्त हो जाय और जन्म-मृत्युरूप इस संसार-चक्रसे छुटकारा हो जाय, यही गंगा-तीर्थ-यात्राका उद्देश्य है।

गंगा केवल परमात्माके चरणोंसे उत्पन्न हुई है; इतना ही इसका महत्त्व नहीं है अपितु गंगा साक्षात् परमात्माकी विभूति हैं। गीतामें भगवान् कहते हैं—'स्रोतसामस्मि जाह्नवी॥' (१०।३१)

इसीलिये माता गंगा साक्षात् परमात्मरूपा है। गंगाको सुरसरि कहा गया है। गंगा साक्षात् ब्रह्मद्रव हैं।

वनवास जाते समय माता सीता भी माता गंगाकी स्तुति और प्रार्थना करती हैं—

सियँ सुरसरिहि कहेउ कर जोरी। मातु मनोरथ पुरउबि मोरी॥
(रा०च०मा० २।१०३।२)

गंगाका समुद्रके साथ ऐक्य हो जाना क्या है?

जीव जो द्वैतको सत्य मानकर भेदयुक्त मायाके आभासको सत्य मानकर अनेकों क्लेशोंको प्राप्त हो रहा है, वह अपने स्व-स्वरूपको जानकर अभेदरूपमें प्रतिष्ठित हो जाय तो अद्वैतके परम आनन्दकी प्राप्ति हो जाय। जो कि नित्य प्राप्त ही है। यह जीव-ब्रह्म-ऐक्य ही प्रतीकरूपसे गंगाका समुद्रसे ऐक्य है।

तुका ऋणे गंगा-सागर संगमी।
अवध्या झाल्या उर्मी एकमय॥

गंगा अमृततुल्य है

एक समय अकबरने अपने दरबारियोंसे पूछा—बताओ, किस नदीका पानी सबसे अच्छा है? सभी दरबारियोंने एकमतसे उत्तर दिया—गंगा मैयाका पानी सबसे अच्छा होता है, लेकिन बीरबलने कोई जवाब नहीं दिया। उसे मौन देखकर अकबर बोले—बीरबल, तुम चुप हो? बीरबल बोले—बादशाह हुजूर! पानी यमुना नदीका अच्छा होता है। बीरबलका उत्तर सुनकर बादशाहको बड़ी हैरानी हुई और बोले कि तुमने ऐसा किस आधारपर कहा, जबकि धर्मग्रन्थोंमें तो गंगाजीका जल ही सबसे शुद्ध तथा पवित्र बताया गया है। बीरबलने कहा—हुजूर! मैं भला पानीकी तुलना 'अमृत' से कैसे कर सकता हूँ, 'गंगाजीमें बहनेवाला पानी केवल पानी नहीं अपितु 'अमृत' है, उसकी तुलना पानीसे नहीं की जा सकती, साक्षात् भगवान्‌के श्रीचरणोंसे उसका अवतरण हुआ है। ये साक्षात् भगवत्स्वरूपा हैं।

बादशाह अकबर और सभी दरबारी निरुत्तर हो गये और उन्हें मानना पड़ा कि बीरबल सत्य कह रहा है। गंगाजी साक्षात् भगवान्‌का स्वरूप हैं। इनकी तुलना किसी भी जलसे नहीं की जा सकती। इनके दर्शनमात्रसे अनेकानेक जन्म-जन्मान्तरके पापोंसे मुक्ति मिलती है। गंगा मैया तो साक्षात् अमृततुल्य हैं। [प्रेषक—प्रेमप्रकाशी संत मोनूराम]

संकटापन्न हिमालय और गंगा

(स्वामी श्रीविवेकानन्दजी सरस्वती, कुलाध्यक्ष)

अथर्ववेदमें एक मन्त्र है—'सं सं स्त्रवन्तु नद्यः सं वाताः सं पतत्रिणः।' (१९।१।१) अर्थात् नदियाँ सम्यक् रूपसे प्रवहमान रहें। वायुदेव अनुकूल होकर प्रवाहित रहें। पक्षी भी स्वाभाविक रूपसे उड़ते रहें। तात्पर्य यह है कि प्रकृतिनिर्मित समस्त वस्तुएँ अपने प्राकृतिक रूपमें ही रहें, तभी वे मनुष्यके लिये सुखदायी रहेंगी। परंतु विडम्बना यह है कि तथाकथित वैज्ञानिक विकास और भोगवादी संस्कृतिके चलते हम प्रकृतिका दोहन करते जा रहे हैं, जो हमें विकासकी ओर नहीं, अपितु महाभयंकर विनाशकी ओर ले जा रहा है। हिमालय और गंगा—जो हमारी संस्कृतिके मानदण्ड हैं, वे भी आज इस तथाकथित विकासरूपी विनाशकी अन्धी दौड़में सुरक्षित नहीं बचे हैं, जबकि हिमालयके विनाशका अर्थ है—सम्पूर्ण आर्यावर्तकी संस्कृति, सभ्यता, परम्परा एवं वहाँके जनसामान्यके जनजीवनका विनाश। भारत ही नहीं, अपितु विश्वके समस्त भूगर्भशास्त्रियों एवं मूर्धन्य पर्यावरणविदोंने अनावश्यक रूपसे हिमालयके साथ छेड़-छाड़ करनेको समस्त उत्तराखण्ड ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण भारतके विनाशके लिये खुली चुनौतीके रूपमें स्वीकार किया है; क्योंकि हिमालय एक संवेदनशील पर्वत है। इसकी विशेषता, महत्ता एवं उपयोगिता विश्वके अन्य पर्वतोंसे अधिक है; क्योंकि इसपर अनेक जीवनदायी वृक्ष-वनस्पति, औषधियाँ तो प्राप्त होती ही हैं, जलका विशाल स्रोत भागीरथी गंगाके रूपमें भी हमें उपलब्ध होता है। यमुनाको छोड़कर उत्तराखण्डकी समस्त नदियोंका मिलन गंगामें उत्तराखण्डकी भूमिमें ही होता है। जो इतना संवेदनशील पर्वत हो, उसपर गंगा-जैसी नदीको रोककर अनेक बाँध बनाना तथा उसके समस्त प्राकृतिक मार्गोंको अवरुद्धकर सुरंगमेंसे निकालना एक भयंकर विनाशकारी प्राकृतिक आपदाको निमन्त्रण देना ही है। सुरंगोंके निर्माणमें जितनी बारूद एवं विस्फोटक सामग्रीका प्रयोग होता है, उससे हिमालयपर रहनेवाले सामान्य जीव-जन्तुसे लेकर हिमालयके पुत्र मनुष्योंपर इतना विनाशकारी प्रभाव पड़ रहा है कि वहाँका पर्यावरण दूषित हो जायगा और जापानके नागाशाकी तथा हिरोशिमा-जैसी भयावह स्थिति उत्पन्न हो जायगी। ऐसी परिस्थितिमें पर्वतपुत्र हिमालयवासियोंको अपनी जन्मभूमिका परित्याग करनेके लिये या उसी दूषित वातावरणमें रहकर जीवन नष्ट करनेके लिये विवश होना पड़ेगा। हमारी सरकारें अपनी अदूरदर्शिताके कारण इस भयावह सत्यको न स्वयं समझती हैं और न जनताको समझने देती हैं। यह तो वैसी ही बात मालूम पड़ती है, जैसे कि कोई व्यक्ति सोनेके अण्डोंके लोभमें प्रतिदिन एक सोनेका अण्डा देनेवाली मुर्गीको मार डाले और मारनेके पश्चात् पछताये तथा अन्ततोगत्वा हाथ मलता रह जाय। गंगा-जैसी विशाल, सदानीरा, सतत प्रवहमान नदीको केवल तुच्छ लाभ (विद्युत्-उत्पादन)-के वशीभूत होकर प्रदेशवासियों एवं देशवासियोंको मिथ्या विकासका स्वप्न दिखाकर (जो वास्तवमें विनाश है) सरकार उनसे छल कर रही है।

टिहरी बाँधकी योजनाकी पोल तो खुल चुकी है, जिसके सम्बन्धमें महान् लाभोंका स्वप्न दिखाकर स्थानीय जनता एवं प्रदेशवासियोंको धोखा दिया गया था। वैज्ञानिकोंके द्वारा इस बाँधके निर्माणकी योजनाको अस्वीकार किये जानेपर भी विदेशी ऋण प्राप्त करनेके लोभमें जब इसका निर्माण अपनी हठधर्मिताके कारण सरकारने प्रारम्भ किया, तब अनेक दूरदर्शी व्यक्तियोंने बाँध-निर्माणकी हानिको दरशाते हुए अनेक लेख लिखे तथा वहाँ जाकर उस स्थलका निरीक्षण भी किया। वहाँके निवासियोंको क्रूरतापूर्वक उजाड़ दिया गया, बिना उनकी कुछ व्यवस्था किये दर-दर भटकनेके लिये उनको विवश किया गया तथा आजतक भी उन निर्वासित पर्वतपुत्र हिमालयवासियोंके पुनर्वासकी कोई समुचित व्यवस्था नहीं की गयी। बाँधकी चपेटमें

आनेवाले भू-भागोंमें अनेक प्रकारकी दुर्लभ एवं दिव्य ओषधियोंका विनाश तो हुआ ही, वहाँका पर्यावरण भी भयंकर रूपसे प्रभावित हुआ। स्थानीय लोगोंका तो कहना है कि टिहरी बाँधसे पहले तथा सुरंगोंमें गंगाको डालनेसे पूर्व यहाँ कोहरा नहीं पड़ता था। यहाँतक कि हम कोहरेके विषयमें अपरिचित-से थे। अब प्रातः ९-१० बजेतक और कभी-कभी तो सम्पूर्ण दिवस ही पश्चिमी उत्तरप्रदेश एवं पंजाब, हरियाणाकी भाँति यहाँ कोहरा पड़ता है। जहाँ प्रातःकाल जनवरी, फरवरीके महीनेमें भी सुन्दर सुहावनी धूप खिलती थी, वहीं अब दिनभर कोहरा छाया रहता है, जिससे वहाँकी वृक्ष-वनस्पतियाँ, जो टिहरी बाँधके जलागारमें नहीं आयी थीं अर्थात् उसकी सीमासे बच गयी थीं, वे भी दुष्प्रभावित हो रही हैं।

सरकारका दायित्व राष्ट्र एवं राष्ट्रीय जनताकी सुरक्षाका होता है। अन्ततः विश्वके किसी भी संविधानके द्वारा किसी भी सरकारको वहाँके निवासियोंके ऊपर अत्यन्त नृशंस अत्याचार करनेका अधिकार नहीं, परंतु विडम्बना है कि यह सब कुछ अकल्पनीय अत्याचार राजतन्त्रमें नहीं, अपितु प्रजातन्त्रमें—विश्वके सबसे बड़े लोकतन्त्र कहे जानेवाले भारतमें हुआ और हो रहा है। अनेक वर्ष हो गये, जिस कुण्डको बरसाती जलसे भरनेकी योजना बतायी गयी एवं जनताको झूठा आश्वासन दिया गया, वह कुण्ड मार्च, अप्रैल, मईमें आश्वासनके विरुद्ध उस जलसे भरा जाने लगा, जिससे कृषक अपना खेत सींचते थे, उनके सामने समस्या हुई और हाहाकार मचा। सुना जाता है कि जितने जलसे वह टिहरी बाँधका विशाल सरोवर भरा जा सकता था, उससे अधिक जल उसमें आ चुका है, किंतु वह आज भी अपूर्ण है। विशेषज्ञों एवं प्रत्यक्षदर्शियोंके अनुसार जल दोनों ओरकी पहाड़ियोंके नीचे जा रहा है और अब तो पार्श्ववर्ती पहाड़ियाँ नीचे धँसने लगी हैं तथा उनमें दरार भी आ गयी है। ये सारे ही लक्षण हिमालयके विनाशकी सूचना दे रहे हैं, किंतु प्रजातान्त्रिक कही जानेवाली सरकारके कानपर जूँ भी रेंगती हुई दिखायी नहीं देती। सरकार दृष्टिहीन और मूक बनी हुई है। ऐसा प्रतीत होता है कि वह किसी विदेशी षड्यन्त्रकी कठपुतली बनी हुई है; अन्यथा यह सब देखते, जानते हुए तो उसपर तत्काल प्रतिबन्ध लगा देना चाहिये था। जब उस भयानक कुकृत्यको रोकनेके लिये सरकारपर प्रभाव डाला जाता है, तो वहाँसे जो उत्तर आता है, वह किसी स्वस्थ मस्तिष्कका परिचायक नहीं होता। उस उत्तरको आप भी यदि पढ़ेंगे तो रोना और हँसना दोनों ही आपको आयेगा। वह उत्तर इस प्रकार है कि इस कार्यपर बहुत अधिक रुपया व्यय किया जा चुका है, इसलिये इसे अब रोकना उचित नहीं। इस मूर्खतापूर्ण उत्तरको सुनकर आश्चर्य तो होता ही है; साथ ही बौद्धिक दिवालियेपनका भी आभास होता है। इस अवसरपर सरकारसे यह पूछा जा सकता है कि कोई वस्तु आप अपने हितके लिये सेवनार्थ क्रय करके ले आयें; किंतु घर लानेके पश्चात् ज्ञात हुआ कि यह हमारे लिये पथ्यकारी नहीं, अपितु विनाशकारी है और वह एक प्रकारसे विष है, तो क्या आप उस वस्तुका सेवन अवश्य करेंगे, यह कहकर कि इसके खरीदनेमें बहुत पैसा लग चुका है ? यदि नहीं, तो टिहरी बाँधपर बहुत पैसा व्यय हो चुका है, आपका यह तर्क सर्वथा निराधार और मूर्खतापूर्ण है। वास्तविकता यह है कि इस बाँध तथा अन्य बाँधोंके निर्माणकी योजना प्रकृतिके कोपको आमन्त्रित करनेवाली है। यह गंगाका विनाश अत्यन्त हानिकारक सिद्ध होगा।

यही नहीं, इस प्रकारसे गंगाके विनाशके साथ ही उत्तराखण्ड एवं हिमालयका विनाशकर हिन्द महासागर एवं अरब सागरसे उठनेवाले मानसूनको रोककर समस्त उत्तर भारत, पूर्वोत्तर प्रदेश तथा पश्चिमी प्रदेश; यहाँतक कि सम्पूर्ण भारतको मानसून-वृष्टिके द्वारा हरा-भरा बनानेवाले तथा जीवनप्रदाता हिमालयका विनाश करनेवाले लोग भयंकर राष्ट्रघातक कहे जा

सकते हैं; क्योंकि हिमालयके विनाशसे भारतका पूर्ण भू-भाग मरुभूमिमें परिणत हो जायगा। अपनी सन्तानोंके जीवनकी रक्षा एवं विश्व-पर्यावरणकी सुरक्षाके लिये हिमालयकी प्राणभूत गंगाका विनाश करना अक्षम्य अपराध है। भारतके सभी राष्ट्रभक्तों, मानवताके पुजारियों; विशेष करके उत्तराखण्डके निवासियों (हिमालयपुत्रों)-का यह दायित्व बनता है कि वे गंगाको प्राकृतिक रूपमें ही बहने दें तथा उस प्राकृतिक रूपमें प्रवहमान स्थितिमें जो कुछ अपना लाभ या विकास हो सकता है, उसे करें। गंगा बचेगी तो हिमालय बचेगा और हिमालय बचेगा तो भारत बचेगा। गंगाका विनाश हिमालयका विनाश है और हिमालयका विनाश आर्यावर्त राष्ट्रका विनाश है और तब हम यह कैसे कह पायेंगे कि हमारे देशकी उत्तर दिशामें पर्वतराज हिमालय है, जो पृथ्वीके मानदण्ड-सदृश है—

अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः।
पूर्वापरौ तोयनिधीवगाह्य स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः॥

(कु० सं० १।१)

अतः पृथिवीके इस मानदण्डकी रक्षा करना हम सभीका धर्म एवं पुण्यकर्म है।[प्रेषक—श्रीअमित कुमार त्रेहन]

सम्पूर्ण पापोंके नाशका उपाय

चान्द्रायणसहस्त्रं तु यश्चरेत्कायशोधनम्।
पिबेद्यश्चापि गङ्गाम्भः समौ स्यातां न वा समौ॥

'अपने पापोंकी शुद्धिके लिये एक हजार चान्द्रायण व्रत किये जायँ तो भी वे गंगाजलपानके पुण्यके समान नहीं होते अर्थात् एक हजार चान्द्रायण व्रतसे भी बढ़कर गंगाजल पीनेकी विशेष महिमा है।'

भवन्ति निर्विषाः सर्पा यथा तार्क्ष्यस्य दर्शनात्।
गङ्गाया दर्शनात्तद्वत् सर्वपापैः प्रमुच्यते॥

'जैसे गरुडको देखते ही सभी सर्प भाग जाते हैं, ऐसे ही गंगाजीके दर्शनमात्रसे मनुष्य सभी पापोंसे छूट जाता है।'

स्नानमात्रेण गङ्गायां पापं ब्रह्मवधोद्भवम्।
दुराधर्षं कथं याति चिन्तयेद् यो वदेदपि॥
तस्याहं प्रददे पापं ब्रह्मकोटिवधोद्भवम्।
स्तुतिवादमिमं मत्वा कुम्भीपाकेषु जायते॥
आकल्पं नरकं भुक्त्वा ततो जायेत गर्दभः।

'यदि कोई मनुष्य गंगाके स्नानमात्रसे कोई ब्रह्महत्यादि पापोंसे कैसे छूट सकता है?'—इस प्रकार वाणीसे बोल देता है अथवा चिन्तन भी कर लेता है तो उसको करोड़ ब्रह्महत्याका पाप लगता है। गंगाकी महिमाको अर्थवाद मानकर इस प्रकार शंका करनेके फलस्वरूप वह कल्पपर्यन्त कुम्भीपाक नरकको भोगकर फिर गधेकी योनिको प्राप्त करता है।

पापानां पापहन्तृत्वं स्वर्गमोक्षैकहेतुता।
स्वभाव एव गङ्गायाः शैत्ये शीतरुचिर्यथा॥

'जैसे शीतकालमें स्वाभाविक ही शीत लगता है, वैसे ही गंगासे स्वाभाविक ही पापोंका नाश तथा स्वर्ग और मोक्षकी प्राप्ति होती है।'

न गङ्गासदृशं तीर्थं न देवः केशवात्परः।
......................इत्येवमाह पितामहः॥

'गंगासे बढ़कर कोई तीर्थ नहीं है और भगवान् केशवसे बढ़कर कोई देव नहीं है—ऐसा पितामह भीष्मजीने कहा है।'

सर्वं कृतयुगे तीर्थं त्रेतायां पुष्करं स्मृतम्।
द्वापरे तु कुरुक्षेत्रं कलौ गङ्गैव केवलम्॥

'सत्ययुगमें सब तीर्थ समान थे। त्रेतायुगमें पुष्करराजकी प्रधानता थी। द्वापरमें कुरुक्षेत्रकी प्रधानता थी। कलियुगमें तो केवल गंगाजीकी ही प्रधानता है।'

येनाकार्यशतं कृत्वा कृतं गङ्गैव सेवनम्।
तत्सर्वं तस्य गङ्गाम्भो दहत्यग्निरिवेन्धनम्॥

'जिसने पहले सैकड़ों पाप कर लिये, पर शेष जीवनमें वह गंगाजीका ही सेवन करता है, उसके सभी पाप अग्निमें काठकी तरह भस्म हो जाते हैं।'

(प्रायश्चित्तेन्दुशेखर)

[संकलनकर्ता—नागौरवाले पं० श्रीनरसीजी महाराज]

'नास्ति गङ्गासमं पुण्यम्'

(ब्रह्मचारी श्रीत्र्यम्बकेश्वर चैतन्यजी)

'गंगा' शब्दका उच्चारण होते ही हृदयमें दृढ़ विश्वासका भाव जाग्रत् होता है कि भगवान्‌का जलस्वरूपात्मक विग्रह प्रत्यक्ष होकर मुक्तिपथका प्रदर्शक है। अब क्या चिन्ता? भगीरथरथखातावच्छिन्न अविरल निर्मल प्रवाहरूपा ब्रह्मद्रवा भगवती माँ गंगाकी महिमाका वर्णन शब्दोंद्वारा सम्भव ही नहीं। जैसे कोई छोटा-सा बालक आकाशकी अनन्तताका विस्तार बतानेके लिये अपने दोनों लघु-लघु हाथोंको फैलाकर समझाना चाहे! बस, ऐसा ही कुछ प्रयास (शास्त्रोंसे, सन्तोंसे, भक्तोंसे प्राप्त प्रसादीके बलपर) ये लेखनी करने जा रही है।

भरोसा बनीं पुष्पदन्ताचार्यकृत महिम्नःस्तोत्रकी ये पंक्तियाँ—

महिम्नः पारं ते परमविदुषो यद्यसदृशी।
स्तुतिर्ब्रह्मादीनामपि तदवसन्नास्त्वयि गिरः॥
(महिम्नःस्तोत्र १)

महिम्नःस्तोत्रमें भगवान् शिवको सम्बोधित करते हुए जो भाव हैं, वही भाव यहाँ माँ गंगाको सम्बोधित करके कहे जा रहे हैं—

'हे मातः गङ्गे! ते महिम्नः परं पारं।'

आपकी दिव्यातिदिव्य लोकोत्तर महिमाके अन्तिम छोरकी इयत्ता न जाननेवाले मेरे-जैसे अज्ञानी जीवकी स्तुति (अविदुषः स्तुति) यदि आपके स्तरकी नहीं है। यदि 'ते महिम्नः' असदृशी फिर तो तत् ब्रह्मादि देवऋषिगणोंकी वाणी भी आपकी उदारतामयी महिमाको व्यक्त करनेमें अक्षम ही है। 'ब्रह्मादीनामपि गिरः त्वयि अवसन्ना एव' और यदि कहें कि सभी स्तुति अपनी मतिके अनुसार होनेसे ठीक ही हैं, 'अथ स्वमति परिणामावधि गृणन् सर्वः अवाच्यः' तब तो मेरी बात बन गयी; क्योंकि मैं भी अपनी बुद्धिके अनुसार ही यह प्रयास कर रहा हूँ।

'मम अपि एषः परिकरः निरपवादः।'

उपनिषद्-परम्पराके प्रथम भाष्यकार, सनातनधर्मीय मूल सिद्धान्तोंके निकषायमाण आचार्य, भक्त्यर्थ कल्पित द्वैतसे अद्वैतका दिव्य भव्य साम्राज्य दिखानेवाले, विविध कुमतोंके आतंकसे वेदमतको निरातंक करनेवाले, बाल दिवाकरके समान समुदित हो नास्तिकतान्धकाराश्रयी घोर निराशा-निशाको प्रवचन किरणोंद्वारा नष्ट कर देनेवाले, शास्त्रार्थ-संगरोंमें प्रमत्त दिग्गजोंके अवैदिक मत और मतिरूप गण्डमण्डलोंका भेदन करनेमें निर्भीक निर्भ्रान्त पंचाननके समान आदि जगद्गुरु भगवान् शंकराचार्यजी माँ गंगाके अनन्य आराधक हैं। वे अपने निर्मल विपुल साहित्यमें शतधा माँ गंगाकी महिमासे द्रवितचित्त हो कहते हैं—

भगवद्गीता किञ्चिदधीता गङ्गाजललवकणिका पीता।
सकृदपि यस्य मुरारिसमर्चा तस्य यमः किं कुरुते चर्चाम्॥
(चर्पटपंजरिका ५)

अर्थात् जिसने थोड़ा भी गीताजीको पढ़ा हो, एक कण भी गंगाजल पान किया हो, एक बार भी नारायणोपासना की हो, उसकी चर्चा यमराजके यहाँ हो सकती है क्या? अर्थात् यमराज उसकी चर्चा नहीं कर सकते, वे तो अर्चा ही कर सकते हैं।

भगवति तव तीरे नीरमात्राशनोऽहं
विगतविषयतृष्णः कृष्णमाराधयामि।
सकलकलुषभङ्गे स्वर्गसोपानसङ्गे
तरलतरतरङ्गे देवि गङ्गे प्रसीद॥
(श्रीगंगाष्टकम् १)

भगवान् शंकराचार्य भावुक होकर कहते हैं—हे माँ गङ्गे! आपके पावन पुलिनप्रान्तमें केवल अमृतोपम जलपान करके, सर्वविध विषय-वासनाजन्य तृष्णासे रहित हो कृष्णाराधन करूँ। सकल कल्मषनाशिनी, स्वर्गारोहण-वैजयन्तीसदृश सोपानरूपे कलकल कल्लोल करती चंचल तरंगोंवाली माँ गंगे! आप मुझपर प्रसन्न हो जायँ।

आदिकवि वाल्मीकिजी महाराज माँ गंगाके चरणारविन्दमें सविनय प्रार्थना करते हुए कहते हैं। हे माँ गंगे! आपके तटपर रहता हुआ, अमृतोपम जलपान करता हुआ, आपकी चंचल तरंगोंसे दोलायमान होता

हुआ, आपका पावन गंगा नाम स्मरण करता हुआ, निरन्तर आपको ही निहारता हुआ ही इस देहको त्यागूँ।

त्वत्तीरे वसतस्त्वदम्बु पिबतस्त्वद्वीचिषु प्रेङ्खत-
स्त्वन्नाम स्मरतस्त्वदर्पितदृशः स्यान्मे शरीरव्ययः॥

चक्रवर्ती सम्राट् बननेकी अपेक्षा आपके तटवर्ती वृक्षके कोटरका पक्षी बनना; आपकी गोदमें मछली, कछुआ बनकर रहना; बैल, हाथी, घोड़ा, सर्प बनकर आपकी कृपाछायामें रहना ही श्रेष्ठ मानता हूँ।

हे माँ! देहत्यागानन्तर मेरा शरीर आपके पावन जलमें पड़ा हो। काकसमूह उसे चोंच मार रहा हो, कुत्तोंद्वारा खाया जा रहा हो, गीदड़ोंसे खींचा जाता हो, आपकी तरंगरूपी बाहोंमें झूलता हुआ, कभी इस किनारे कभी उस किनारे प्रवाहपतित इस देहको कब देखूँगा?

श्रीवेदव्यासजीकी सकल लोकहितसाधिका लेखनी भगवती गंगाके विषयमें भाव व्यक्त करती है कि गंगा-स्नानकी भावनासे आनेवाले व्यक्तिको पद-पदपर राजसूय और अश्वमेधयज्ञ करनेका फल प्राप्त होता है—

यस्यां स्नानार्थं च आगच्छतः पुंसः पदे पदे अश्वमेधराजसूयादीनां फलं न दुर्लभमिति॥

(श्रीमद्भा० ५।१७।९)

चौदह भुवनोंमें माँ गंगाके जैसी उदार, पतितपावनी, शरणागतवत्सला, मुक्तिप्रदायिनी कोई सत्ता नहीं है। वेद-प्रतिपाद्य यावत् देवगण हैं, सभी जप, तप, व्रत, यज्ञ, दान, धर्म करनेवालोंको तारते हैं, परंतु माता गंगा तो माँ हैं ना। अतः पुण्य-पाप, ज्ञान-अज्ञान, सुजाति-कुजाति, नर-पशु, भक्त-अभक्तका भेद किये बिना ही तार देती हैं।

हमने सन्तोंके मुखारविन्दसे सुना है कि एक बार श्रीदेवर्षि नारदजी माँ गंगाके पास गये और बोले—'माँ! पुण्यात्मा पुण्यके बलसे, ज्ञानी ज्ञानके बलसे, भक्त भक्तिके सहारे, दानी दानकी नौकासे, विरक्त विरक्तिके प्रभावसे, योगी योगद्वारा स्वयं ही तर जाते हैं। इसमें किसी देवताकी कृपाकी क्या आवश्यकता है? कोई पतितोंको—अधमोंको तारे तो जानें।' माँ गंगाने कहा—'पुत्र नारद! यदि कोई प्राणी श्रद्धापूर्वक मेरे तटपर रहे, विधिपूर्वक नित्य स्नान करे, पूजन करे तो वह पुण्यात्मा तर जायगा। ये मेरा वचन है। श्रीनारदजी महाराज चहक उठे और विनोदपूर्ण शिकायतके साथ बोले—'माँ! आपने भी और देवों-जैसा धन्धा चला दिया, कि पूजापाठ करो, जप-तप करो तब तारेंगे। फिर आपमें अन्य देवोंमें क्या भेद?' माँ गंगा हँसते हुए बोलीं कि हे नारद! कोई बात नहीं, जो व्यक्ति स्नान भी कर लेगा तब भी तर जायगा। श्रीनारदजी बोले—'माँ! यदि कोई व्यक्ति अशक्त है, रुग्ण है, स्नान नहीं कर सकता, अश्रद्धालु है, तब क्या आप उसे पार न करोगी?' माँ गंगाने कहा—'हे नारद! यदि वह जलपान भी कर ले जलस्पर्श कर ले, तब भी पार हो जायगा।'

'तव जलममलं येन निपीतं परमपदं खलु तेन गृहीतम्।'

श्रीनारदजीने पुनः प्रश्न किया—'माँ! यदि कोई अभागा जीव जलपान एवं जलस्पर्श न कर सके तो क्या आप न तारोगी?' माँ गंगा बोलीं—'वत्स नारद! वह व्यक्ति मेरा दर्शनमात्र कर ले, नमन कर लेगा तो भी तर जायगा।'

'कुतो वीचीर्वीचिस्तव यदि गता लोचनपथम्।'
'प्रणमति यस्त्वां न पतति शोके॥'

श्रीनारदजी बोले—'माँ! मान लीजिये, वह पुण्यहीन जीव निर्धनता अथवा अज्ञानतावश आपकी महिमाको न जाननेके कारण आपके दर्शन न कर सका तो क्या आपकी कृपासे वह वंचित रह जायगा? माँ गंगा बोलीं—'तात नारद! वह भी तर सकता है। यदि केवल गंगा-गंगा इस नाममन्त्रका जप कर ले तो।'

गङ्गा गङ्गेति यो ब्रूयाद् योजनानां शतैरपि।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति॥

(पद्मपुराण)

सैकड़ों योजन दूर भी हो परंतु गंगा नाम जप लेगा तो पापमुक्त हो वैकुण्ठलोक जायगा। श्रीनारदजी तो आज कुछ नवीन कौतुक करनेपर उतारू थे, बोले—'हे माँ! यदि कोई प्राणी आपका नाम न ले सका और मर गया तो क्या उसको ना तारोगी? माँ गंगा गम्भीर हो गयीं। बोलीं—'प्रिय नारद! सम्भव है कि वह भी तर जाय, परंतु यदि उसका अन्तिम संस्कार

गंगातटपर हो।' श्रीनारदजी बोले—'हे माँ! यदि अन्तिम संस्कार गंगातटपर न हो सका तो क्या न तारोगी?'

माँ गंगा बोलीं—'देवर्षे! तर जायगा, परंतु उसके अस्थि-पुष्प गंगाजलमें विसर्जित किये जायँ तो।'

सज्जनो! ब्रह्मद्रवा माँ गंगा मुक्तिका सार्वजनिक खुला भण्डारा है। सैकड़ों नहीं, हजारों वर्षोंके उपरान्त भी देहका कोई विकृतांशतक गंगाजीमें पहुँच जाता है, तब भी जीव सदा-सदाके लिये विमुक्त हो जाता है। प्रत्येक आस्तिक सनातनी हिन्दूकी आकांक्षा होती है कि कथमपि गंगा माँके द्वारतक (जीतेजी अथवा मृत्युके अनन्तर) मैं पहुँच जाऊँ।

भगवती भागीरथी माँ गंगाके पावन कीर्तिध्वजको सगरपुत्र आज भी चौदह भुवनमें फहरा रहे हैं। उन सगर-पुत्रोंने तो गंगा-स्नानकी कौन कहे, गंगाके विषयमें सोचातक न होगा। भगीरथके तप:प्रभावसे माँ गंगा आयीं तथा सगर-पुत्रोंकी भस्मस्थलीको आप्लावित किया। जैसे ही उनकी भस्मका गंगाजी स्पर्श करतीं, वह दिव्यात्मा मुक्त हो स्वर्गमें पहुँच जाता।

यज्जलस्पर्शमात्रेण ब्रह्मदण्डहता अपि।
सगरात्मजा दिवञ्जग्मुः केवलं देहभस्मभिः॥

(श्रीमद्भा० ९।९।१२)

प्रात:कालीन अरुणोदयकी पवित्र वेलामें, माँ गंगाके सुरम्य तटप्रान्तका मनोरम वातावरण, स्नानार्थ आते-जाते सहस्रों पुण्यात्मा नर-नारी, परस्पर अठखेलियाँ करती माँ गंगाकी तरल तरंगोंको देखकर श्रीनारदजी भी ठिठक गये। गंगाजलमें राजकुलकी माताएँ स्नान कर रही थीं कि अचानक सैकड़ों विमान कोलाहल करते आकाशमें मँडराने लगे। श्रीनारदजी यह दृश्य देखकर चकित हो उठे। माँ गंगाकी कृपा-करुणासमन्वित महिमाको जानकर उनका हृदय भर आया, आँखोंसे आनन्दके अश्रु झलक उठे। किसी भक्तने पूछा—बाबाजी! अचानक विमानोंका आना, आपका खुश होना, फिर रोना, कभी आकाशकी ओर देखना, स्नान करती माताओंको देखना। ये सब क्या है?

श्रीनारदजी बोले—भाई! ये जो माताएँ स्नान कर रही हैं, इनके वक्ष:प्रान्तपर चन्दन-लेपनमें कस्तूरी (मृगमद) है। वह कस्तूरी जिन मृगोंकी है, आज वे सभी मृग विमानोंमें बैठकर नन्दन वनमें विचरण करने जा रहे हैं।

प्रभाते स्नान्तीनां नृपतिरमणीनां कुचतटीं
गतो यावन्मातर्मिलति तव तोयैर्मृगमदः।
मृगास्तावद् वैमानिकशतसहस्त्रैः परिवृता
विशन्ति स्वच्छन्दं विमलवपुषो नन्दनवनम्॥

(गंगालहरी ७)

इन मृगोंने कौन-सा जप-तप किया, जो आज मुक्त हो गये। कहते हैं कि इनके शरीरका एक अंश कस्तूरीका कोई कण भी चन्दनके बहाने गंगाजीतक पहुँच गया, तब भी मृग मुक्त हो गये।

ऐसी गंगा माँके जैसा अन्य कौन उदार मुक्तिदाता देवता है? एक सन्त तो निश्चिन्त होकर गंगा-किनारे चादर तानकर सोते रहते। कोई कहता बाबा भजन किया करो। तो वे कहते ऐ भाई! मेरी माँकी नजर मुझपर है। जबतक माँकी दृष्टिमें हूँ, सुरक्षित हूँ। संसारकी साधारण माँ भी अपने बालकको सब विपदाओंसे बचाकर उसका लालन-पालन करती है, तब मेरी गंगा माँ मेरा कुछ बिगड़ते देखकर चुप रहेगी क्या? भैया! बालक माँका भजन करें ना करें, परंतु माँ ही ऐसी है कि वह अपने बालकको सदा संकल्प-बलसे सुरक्षा देती है।

पण्डितराज जगन्नाथद्वारा रचित ५२ श्लोकात्मक गंगालहरीके विषयमें प्रसिद्ध है कि अन्तिम दिन जगन्नाथजी एक-एक श्लोक पाठ करते रोते जाते और माँ गंगाजी एक-एक सीढ़ी चढ़ती जातीं। जैसे ही अन्तिम श्लोक पूरा हुआ, माँ गंगा जगन्नाथजीको गोदमें लेकर पुन: नीचे उतर गयीं। ये सत्य घटना काशीजीकी है।

निवेदन—गंगा माँ तो अपना दायित्व निभाती ही है। अब आवश्यकता है कि हम उठकर खड़े हों और गंगा माँकी सेवाहेतु कृतसंकल्प होकर संगठित प्रयास करें। गन्दगी न तो करें न किसीको करने दें।

[क] गंगा-माहात्म्य

गंगाकी अमर गाथा : देशकी सांस्कृतिक संजीवनी

(म० म० देवर्षि श्रीकलानाथजी शास्त्री)

गंगा—यह नाम सुनते ही इस देशके जनमानसमें अमृतके सोते फूटने लगते हैं। न जाने कितनी सहस्राब्दियोंसे यह नदी इस देशकी संस्कृतिका प्रतीक रही है। इसने इस देशको पहचान भी दी है, गरिमा भी। जिस प्रकार यह हमारे धर्मका सर्वस्व है, उसी प्रकार आर्थिक समृद्धि और काव्य-सौन्दर्यकी प्रेरणाका भी स्रोत है। गंगा, गीता, गायत्री, गोविन्द और गौ—ये पाँच सनातन आर्यधर्मके मूल आधार कहे जाते हैं। इस देशकी चेतनाको जितनी गहराईसे इस नदीने सराबोर किया है, उतना शायद ही किसी देवी-देवताने किया हो। इस देशको इसके नामसे ही पहचाना जाता है—जिस देशमें गंगा बहती है, वह देश है यह। इस प्रकारकी पहचान देनेवाले ऐसे बहुत कम नाम हैं। इस नदीने करोड़ों भारतीयोंको देवीके रूपमें, गंगामैयाके रूपमें, तीर्थोंकी जननीके रूपमें, जन्मसे लेकर मृत्युतक अपनी उपस्थितिके एहसाससे उपकृत किया है और देशको एक भावनाके सूत्रमें पिरो दिया है। देशवासियों और विदेशियोंने भी इसके कीटाणुरहित जलके वैज्ञानिक महत्त्वको पहचाना है, सभी धर्मोंके व्यक्तियोंने, मुगल बादशाहोंतकने इसके जलके स्वादको अलौकिक तृप्तिदायक माना है। कोई नहीं जानता, कितने हजार वर्षोंसे यह इसी तरह प्रतिदिन हिमगिरिसे निकलकर देशके पूरे वक्षःस्थलपर विहार करती हुई सुदूर पूर्वमें जाकर समुद्रसे मिलती रही है। वैसे भूगर्भशास्त्री कहते हैं कि ब्रह्माण्डके इतिहासमें हिमालय पर्वत अन्य कुछ पर्वतों (जैसे विन्ध्याचल आदि)-की अपेक्षा नया है, किंतु इस देशके इतिहासमें तो लाखों वर्षोंसे हिमालयने ही प्राण फूँके हैं। इसकी पुत्री गंगाको इस देशने जितनी श्रद्धा दी है, किसी देशने अपनी किसी नदीको नहीं दी होगी। वैसे यह विश्वकी बड़ी नदियोंमेंसे एक है। निरे भौगोलिक दृष्टिकोणसे देखा जाय तो अमेरिकाकी मिसूरी मिसीसिपी और मिस्रकी नील नदी गंगासे ढाई गुनी बड़ी हैं, चीनकी आंगजे और यूरोपकी डैन्यूब इससे लगभग दुगुनी हैं, पर इसकी महिमा अपरम्पार है, अन्य नदियाँ इसके पासंगमें भी नहीं हैं। इसकी कुल लम्बाई २९०० किलोमीटर है। हिमालयके नन्दादेवी, एवरेस्ट, कंचनजंगा आदि सर्वोच्च शिखरोंसे निकलकर देशके बहुत बड़े भू-भागको नहलाती हुई यह बंगालकी खाड़ीमें गिरती है।

वैज्ञानिक, आर्थिक, धार्मिक और भौगोलिक दृष्टिसे अनेक कारण ऐसे बन गये हैं, जिन्होंने इसे यह अतुलनीय महत्त्व दे दिया है। प्रथम तो भारतकी बीसियों नदियाँ इसमें जाकर मिलती हैं, छोटी-छोटी उन स्थानीय एवं बरसाती नदियोंकी संख्याका तो अन्त ही नहीं है, जो इसकी गोदमें समा जाती हैं। यही कारण है कि अन्तमें जाकर बरसातके बाद बाढ़के दिनोंमें इसके जलका अपवाह (प्रवाह) विश्वमें सर्वाधिक वेगवान् हो जाता है। यह १८ लाख घन फुट पानीका डिस्चार्ज प्रति सेकेण्ड करती है, जो विश्वमें सर्वाधिक माना जाता है। ४३२४८० वर्ग मीलका क्षेत्रफल इसका अपवाह-क्षेत्र है। दूसरे, भारतकी प्रायः सारी संस्कृति इसके किनारे ही पनपी है, अनेक बड़े शहर इसके किनारे बसे हैं, सैकड़ों तीर्थ इसके कारण इसके चारों ओर बने हैं, सैकड़ों कवियोंने इससे प्रेरणा ली है और अनेक इतिहासपुरुषोंने इसे श्रद्धा दी है। ये सब कारण मिलकर इसे अलौकिक नदी बना देते हैं। परम्पराने इसे देवनदी, स्वर्गकी नदी माना है। इसका एक कारण यह भी है कि यह कहाँसे आती है और कहाँ जाती है, यह किसीने नहीं देखा। गंगोत्रीके

१३८०० फुट ऊँचे जिस हिमनदसे यह निकलती है, वह बहुत दूरसे बर्फका पहाड़-जैसा दिखायी देता है, उसकी गुहाओंमेंसे अनेक धाराओंमें इसका जन्म होता है, जो अदृश्य ही रहता है। इसी प्रकार बंगालकी खाड़ीमें सैकड़ों धाराओंमें बँटकर यह समुद्रसे मिलती है और लगभग ६० मीलतक चिकनी बालुकामें फैले पठारके बीचसे होकर अदृश्य रूपमें यह समुद्रमें गिरती है। गंगासागर-संगम तीर्थ अवश्य बन गया है, पर उसका वास्तविक संगम कोई देख नहीं पाता।

गंगावतरण

इस देशके इतिहासके प्रारम्भसे ही इसका उल्लेख पाया जाता है। ऋग्वेद (१०।७५।५) गंगा, यमुना, सरस्वती, शतद्रु (सतलज), पयोष्णी (रावी), असिक्नी (चिनाब), वितस्ता (व्यास या वेध), मरुद्वृधा (संगम), आर्जीकीया (झेलम या व्यास), सुषोमा (सिन्धु)—इन नदियोंका उल्लेख करता है और उनकी स्तुति करता है। गंगाको वैदिक साहित्यने प्रमुख महत्त्व दिया है। तैत्तिरीय आरण्यक तो गंगाके तटपर ही लिखा गया माना जाता है। पुराणोंने इसे देवीका रूप देकर इसके चरित्रमें इतनी गरिमा और व्यापकता ला दी कि सारा देश इसकी पावनताकी शीतल छायामें पुलकित हो गया। स्वर्गसे धरापर इसके अवतरणकी कथा बड़ी रोमांचकारी है। हजारों वर्षों पूर्व अपने पूर्वजोंके उद्धारके लिये राजा भगीरथ इसे स्वर्गसे धरतीपर लाये थे, किंतु इसी बहाने सारा देश पवित्र हो गया, धन्य हो गया। तभी तो गंगाको भागीरथी एवं इसे भगीरथ-प्रयत्न कहा गया, जो आजतक मुहावरा बना हुआ है। हिमालयके ऊँचे हिमशिखर शिवके जटाजूट ही तो हैं, जहाँसे अनेक धाराओंमें हिमनदों (ग्लेशियर)-से पिघलकर गंगा उतरती है। बीचमें पहाड़ोंकी गहराईमें वह विलीन-सी दिखलायी देती है और फिर एक ओर भागीरथी और दूसरी ओर जाह्नवी नामकी शाखाओंके रूपमें दिखलायी पड़ती है। एक दूसरे शिखरसे बहनेवाली अलकनन्दाकी धारासे देवप्रयागमें मिलकर यह गंगा बनती है। वहाँसे लेकर बंगालतक अनेक नदियाँ इसमें मिलती जाती हैं। यमुना उनमें प्रमुख है, उसमें भी चम्बल और बेतवा आदि अनेक नदियाँ मिलती हैं। यह यमुना प्रयागमें आकर गंगासे मिलती है। इसके अतिरिक्त घाघरा (जिसे परम्परा सरयू मानती है), गण्डक, कोसी, गोमती, रामगंगा आदि नदियाँ उत्तरसे आकर इसमें मिलती हैं और केन, दामोदर, सोन आदि दक्षिणसे। बादमें ब्रह्मपुत्र भी इससे मिल जाती है। बंगालमें इसकी एक शाखा पद्मानदीके रूपमें चली जाती है। फिर यह अनेक धाराओंमें लम्बे क्षेत्रमें होकर समुद्रसे मिलती है।

गंगावतरणकी कथाने देशके पूरे साहित्यको प्रभावित किया है। इसीसे इसे पतितपावनी और देवीका रूप मिला। पुराणोंने इसे ब्रह्मा, विष्णु, महेश—तीनों देवताओंसे जोड़ दिया। वैष्णव यह मानते हैं कि यह विष्णुके चरण धोनेवाली है और यह उनके चरणोंसे ही निकलती है। विष्णु (सूर्य)-के पद (मार्ग)-में होनेके कारण आकाशको विष्णुपद कहा जाता है। उससे निकली होनेके कारण इसे शब्दशः विष्णुके चरणसे निकली माना गया। वैसे गंगोत्री (ग्लेशियर)-के ऊपरका एक बड़ा पर्वत नारायण पर्वत कहा जाता है, जहाँसे गंगा निकलती है। इस दृष्टिसे विष्णुके चरणोंसे निकलकर वह शिवके जटाजूटमें गिरती है। अतः वैष्णवों और शैवों दोनोंकी वह प्रिय है। पुराणोंने इसे ब्रह्माके कमण्डलुका जल भी बता दिया। यह तीनोंकी प्रिय हो गयी। तभी तो इसके किनारे बसे तीर्थ सभी देवताओंके तीर्थ हो गये। हरिद्वारको हरि (विष्णु)-का द्वार कहकर वैष्णवोंने और हर (शिव)-का द्वार कहकर शैवोंने महत्त्व दिया।

प्राचीन साहित्यमें गंगा

हमारी संस्कृतिके सम्पूर्ण इतिहासमें गंगाका गौरव गुथा हुआ है। श्रीरामचन्द्रजी वनमें जाते हुए जब गंगाके किनारे पहुँचते हैं तो श्रीसीताजी बड़ी भक्तिसे गंगाजीकी पूजा करती हैं। यहींका तो प्रसंग है, जब केवट उनके पैर धोकर उन्हें गंगा पार कराता है। लंकासे लौटनेके बाद रामके राज्याभिषेकके अनन्तर जब सीता गर्भवती होती हैं तो राम उनसे पूछते हैं कि उनकी इच्छा क्या है? उनकी यही कामना होती है कि मैं गंगाके तीरपर बसे तपोवनों

और रमणीय स्थानोंका दर्शन करूँ। दुर्भाग्य यह होता है कि लोकापवादके कारण रामको उन्हें छोड़ना भी पड़ता है तो इसी गंगाके किनारे जहाँ वे लव-कुशको जन्म देती हैं। राम सुदूर दक्षिणमें रामेश्वरम्‌में शिवलिंगकी स्थापना करते हैं। इसपर सुदूर उत्तरसे आज भी गंगोत्रीका जल लाकर चढ़ाया जाता है, जो भावनात्मक रूपसे उत्तर और दक्षिण भारतको एक करता है और राष्ट्रकी एकताको मजबूत करता है। महाभारत तो पूरी तरह गंगाके चारों ओर लिखा गया उपाख्यान ही है। इस उपाख्यानका क्षेत्र गंगा-यमुनाका दोआबा है। इसमें गंगाकी जो महिमा बतायी गयी है, उसने सारे देशको भक्तिके रससे सराबोर कर दिया। महाभारतने स्पष्ट घोषित किया है—**'न गङ्गासदृशं तीर्थम्।'** (गंगाजीके सदृश कोई तीर्थ नहीं है) विष्णुपुराणने घोषित किया कि सहस्रयोजन दूरसे भी गंगाका नाम लेनेपर मनुष्य पवित्र हो जाता है। पुराणों और महाकाव्योंकी इसी परम्पराका यह प्रताप है कि इस देशकी समस्त भाषाओंका साहित्य गंगाकी गरिमाकी शीतलतामें पगा हुआ है।

संस्कृतमें हजारों वर्षोंसे गंगाकी स्तुतिमें स्तोत्र लिखे जाते रहे हैं। पुराणों और उपाख्यानोंमें विभिन्न देवताओंद्वारा की गयी गंगा-स्तुतियोंके अतिरिक्त भक्तोंद्वारा प्रात:काल प्रतिदिन पढ़े जानेवाले बहुत-से स्तोत्र देश भरमें विख्यात हैं। वाल्मीकिरचित गंगाष्टक, शंकराचार्य-रचित गंगाष्टक, काशीपंचक और मणिकर्णिकाष्टक भक्तोंद्वारा पढ़े जाते हैं। महाकवि जयदेवने गीतिशैलीमें जो गंगा-स्तुति लिखी वह भी साहित्यमें प्रसिद्ध है। कालिदासने तो गंगाके उद्गमसे लेकर जहाँ वह समुद्रमें मिलती है, वहाँतक उसका अनुसरण विभिन्न प्रसंगोंमें किया है और स्थान-स्थानपर उसकी विभिन्न मुद्राओंका वर्णन किया है। मैथिलकोकिल विद्यापतिने संस्कृतमें 'गंगावाक्यावली' में तो गंगाकी स्तुति लिखी ही, मैथिली भाषामें भी अनेक पद गंगाकी भक्तिके लिखे।

गंगाका सर्वोत्कृष्ट स्तोत्र है पीयूष-लहरी, जो गंगा-लहरीके नामसे सारे देशमें उसी श्रद्धासे गाया जाता है, इसके रचयिता पण्डितराज जगन्नाथ हैं। ब्रज भाषाके प्रसिद्ध कवि पद्माकरकी लिखी गंगालहरी भी प्रसिद्ध है। उद्धवशतकके प्रसिद्ध लेखक जगन्नाथदास रत्नाकरद्वारा लिखित गंगावतरण भी ब्रजभाषामें प्रसिद्ध है। बीकानेर राजवंशके प्रसिद्ध कवि पृथ्वीराज (पथिक), महावीर प्रसाद द्विवेदी, आधुनिक युगके ब्रजभाषाके कवि अखिलेश त्रिवेदी (सीतापुर) आदि अनेक कवियोंने गंगालहरियाँ लिखी हैं।

मुसलिम विद्वान् अब्दुर्रहीम खानखाना (रहीमके नामसे प्रसिद्ध)-ने संस्कृतमें आठ पद्योंमें गंगाष्टक लिखा।

देशकी तीर्थचेतना—गंगा

हमारे धर्मके सभी सम्प्रदायोंकी गंगापर भक्ति समान रूपसे स्थिर है, इसका स्पष्ट प्रमाण श्रीमद्भागवत है, जो कृष्णभक्तिका प्रमुख आधार ग्रन्थ है। इसमें कृष्णकी प्रिया यमुनाके प्रति तो श्रद्धा व्यक्त की ही गयी है, किंतु गंगाको ब्रह्माके कमण्डलुका जल और विष्णुके चरण धोनेवाली दिव्य नदी मानकर उसके प्रति भी इसने अभूतपूर्व भक्ति दिखलायी है। तभी तो वल्लभाचार्य-जैसे भक्तिमार्गके आचार्योंने जो कृष्णके बालरूपके और उनकी प्रिया यमुनाके उपासक थे, गंगाके प्रति अद्भुत श्रद्धा दिखायी है। आन्ध्रमें जन्मे वल्लभाचार्यने अपना शरीर गंगास्नान करते समय छोड़कर देवलोक प्राप्त किया।

यह इस देशकी हजारों वर्ष पुरानी मान्यता है कि गंगामें शरीरका विसर्जन होनेसे और उसके किनारे या प्रवाहमें मृत्यु होनेसे तुरंत मुक्ति मिलती है।

इस देशमें तीर्थ चेतनाकी प्रतीक गंगाके किनारे सैकड़ों तीर्थ बन गये। १०५०० फुट ऊँचाईपर बने गंगोत्री मन्दिरसे लेकर देवप्रयाग, कर्णप्रयाग आदि अनेक प्रयाग, ऋषिकेश, हरिद्वार, कनखल, शुकताल, गढ़मुक्तेश्वर (जहाँ बूढ़ी गंगाका संगम होता है) सोरों, अहार, कर्णशिला, बिठूर, शृंगवेरपुर, प्रयाग, काशी, मुंगेर, पटना, बक्सर, अजगैबीनाथ, वटेश्वर (विक्रमशिला) दक्षिणेश्वर, बैलूरमठ, गंगासागरतकके तीर्थोंको इसीने महिमा प्रदान की है।

सिंचाई और अन्य प्रकारोंसे आर्थिक समृद्धिमें इसका योगदान इतिहासमें स्मरणीय रहेगा। इससे देशवासियोंने

दो विशाल नहरें निकाली हैं जो हरिद्वारसे लेकर हजारों एकड़के भू-भागको सींचती हैं। अपर गंगा केनाल (जो १३० वर्ष पूर्व निकाली गयी थी) और लोअर गंगा केनाल। यह उत्तर पश्चिमी और मध्यवर्ती भारतके लिये वरदान सिद्ध हुई है। इसके किनारे हजारों वर्षोंसे इसीकी दी हुई आर्थिक समृद्धिपर जीनेवाले सैकड़ों शहर बस गये, जिनमें कानपुर और कलकत्ता भी शामिल हैं। एक नगर, एक तीर्थ और देशकी सांस्कृतिक राजधानी—सभी रूपोंमें काशीकी महिमा तो गंगाके कारण ही है। इसे देशका सर्वाधिक प्राचीन नगर माना जाता है। विराट् धार्मिक मेलोंमें अग्रणी कुम्भ मेले जिन चार तीर्थोंपर लगते हैं, उनमें प्रयाग और हरिद्वार दो तीर्थ गंगातटके ही हैं, शेष दो हैं उज्जैन और नासिक। गंगा किनारेवाले मेलोंमें गढ़मुक्तेश्वरका मेला, मकर-संक्रान्तिपर लगनेवाला गंगासागरका मेला, मौनी अमावस्यापर लगनेवाला प्रयागका मेला आदि भी सुविदित हैं। गंगामें कार्तिक स्नान; माघ स्नान, वैशाख स्नान आदि सभीका महत्त्व है। कोई ऐसा पर्व नहीं, जिसपर लोग गंगास्नान न करने आते हों।

जन-जीवनमें गंगा

हजारों वर्षोंकी इस परम्पराने गंगाको तीर्थ चेतनाका मूर्तिमान् प्रतीक बना दिया है। जो नगर और गाँव इसके किनारे बसे हुए हैं, उनके लिये तो यह जीवन-प्राण ही है, जो इससे हजारों मील दूर हैं, उनके प्राणोंमें भी इसका प्रेम इतना रचा-बसा है कि जन्मसे मरणतक गंगा उनकी साँस-साँसमें सांस्कृतिक धड़कनके रूपमें गूँजती रहती है। सुदूर दक्षिणमें, पश्चिममें, देशके किसी भी कोनेमें, कहीं भी, कोई किसी भी तीर्थकी यात्रा करके आये, उसकी सफलता तबतक नहीं होती जबतक अपने घर वापस लौटकर वह गंगाका पूजन नहीं कर लेता। यदि उसने गंगामें स्नान किया है तो वह वहाँसे गंगाजलकी शीशी भरकर लाता है, वापस लौटकर उसकी पूजा करता है। उसकी शीशियाँ सबमें बाँटता है, तभी उसकी यात्रा पूरी होती है, तीर्थ चेतना सन्तुष्ट होती है। इस अवसरपर जो भोजन कराया जाता है, उसका नाम ही गंगाभोज पड़ गया है। राजस्थान-जैसे ग्रामीण अंचलोंमें इसे 'गंगोज' कहा जाता है। ऐसे गंगोज हर गाँवमें एक महोत्सवके रूपमें आज भी देखे जा सकते हैं। कहते हैं, ऐसे गंगा-भोजोंके समय गंगाजली सामने रखकर भक्तिभावसे जब स्तोत्र गाये जाते हैं तो पात्रके बाहरतक गंगा उफन आती हैं। सारे देशमें जन्मसे मरणतक जीवनके तारमें गंगाका स्वर बोलता है। राजस्थान-जैसे सुदूरवर्ती प्रान्तोंमें भी हजारों वर्ष पुरानी यह परम्परा जीवित है कि बच्चा जन्मता है तो उसकी माता प्रसूति-स्नानके बाद गंगाका पूजन करती है, जिसे 'गंगापूजी' कहा जाता है। प्रतिदिन स्नान करते समय आस्तिक लोग गंगाका नाम लेकर पवित्रताका अनुभव करते हैं। मृत्युसे पूर्व मुखमें गंगाजल अवश्य दिया जाता है। देहपातके बाद यदि शव इतनी दूरसे ले जाकर गंगामें नहीं बहाया जा सके तो कम-से-कम अस्थियाँ या भस्म कहीं भी जाकर गंगामें विसर्जित की जाती हैं। कुछ वर्षों पूर्वतक धर्म और पुण्यकी प्रतीक इसी गंगाके नामसे अदालतोंमें शपथ दिलायी जाती थी, गंगाजलीपर हाथ रखकर कोई झूठ नहीं बोल सकता था, जन-सामान्यमें गंगाजीके प्रति आज भी ऐसी ही आस्था है। इस प्रकार सारे देशकी सांस्कृतिक परम्पराका प्रतीक बन गयी है यह दिव्य नदी।

यह बहुत पुरानी मान्यता है कि गंगाका जल इतना कीटाणु-रहित और शुद्ध है कि महीनोंतक बल्कि वर्षोंतक बर्तनमें या शीशीमें बन्द रखनेपर भी इसमें कीटाणु पैदा नहीं होते। वैज्ञानिकोंने प्रयोगोंद्वारा इस तथ्यको सिद्ध भी किया है।

इस प्रकार धार्मिक, सांस्कृतिक, वैज्ञानिक सभी दृष्टिकोणोंसे इस नदीने इस देशमें जो स्थान प्राप्त किया है, वह विश्वके इतिहासमें अभूतपूर्व है। इतिहासके प्रायः सभी राजाओं, रजवाड़ों और रईसोंने गंगातटपर घाट बनाकर, मन्दिर बनाकर, दान देकर इसके प्रति अपनी जो श्रद्धा व्यक्त की, वह आज भी प्रेरणा देती है। ऐसी है इस दिव्य नदीकी पुण्य गाथा—ऐसी ही है इसकी पावन प्रेरणा, जिसके सामने यह देश भी नतमस्तक है, इतिहास भी और युगों-युगोंका जनमानस भी।

भगवती गंगाके लिये लोकपावन आचार

(प्रो० श्रीयुत श्रीकिशोरजी मिश्र)

भगवती गंगाका आद्य स्तवन ऋग्वेदसंहिता (१०।७५।५)-में स्पष्टतः प्राप्त होता है—

'इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति
शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या।'

गंगाके अनुग्रहभाजन गांग्यका भी उल्लेख ऋग्वेद (६।४५।३१)-में है। शतपथब्राह्मण (१३।५।४।११)-में गंगा-यमुनाके तटका प्रसंग है तथा तैत्तिरीयारण्यक (२।२०)-में गंगातटके निवासको संस्काराधायकके रूपमें माना गया है। ऋग्वेदकी अन्यशाखीय संहिताओंमें— **'सितासिते सरिते यत्र सङ्गथे'** तथा **'यत्र गङ्गा च यमुना च'** आदि मन्त्रोंके द्वारा गंगासंगमका माहात्म्य भी निर्दिष्ट है। ये मन्त्र अन्यशाखीय होनेकी दृष्टिसे ऋक्परिशिष्टमें उपदिष्ट हैं।

वाराणसीमें गंगा-वरणा-संगमका संकेत **'वारिदं वारयातै वरणावत्यामधि।'** (शौनकसंहिता ४।७।१)-द्वारा अथर्ववेदमें उपलब्ध है। वरणावती एक पृथक् नदी है, यह पाश्चात्य मनीषी राथका मत है, किंतु विदेशी विद्वान् लुडविगने इसे गंगाका पर्याय नाम माना है, परंतु दोनोंके ही विचार अपूर्ण हैं।

वस्तुतः वरणा एक पृथक् नदी है। वरणावती कोई अलग नदी नहीं है, अपितु वरणा नदीसे संगमित होनेवाली गंगाका यह अभिधान है। यह नाम वाराणसीमें वरणायुक्त गंगामें ही अन्वर्थ होता है।

अतः वाराणसीके गंगाप्रवाहका विशेष महत्त्व इस अथर्ववेदसंहिताके मन्त्रमें संकेतित है। वरणावतीका उल्लेख पैप्पलाद संहिता (अथर्ववेद)-में भी है, यह इतिहासकारोंका अभिप्राय है।

काशी एवं प्रयागादि संगमतीर्थोंमें गंगाका विशेष माहात्म्य होनेपर भी लोकपावनी गंगा त्रिलोकीको पवित्र करती हैं।

भगवती गंगाका दूसरा नाम त्रिपथगा है। आकाश, पृथिवी तथा पाताल—तीनों लोकोंमें गमन करनेसे गंगाका त्रिपथगा नाम पड़ा है। जैसा कि शास्त्रवचन है—

गङ्गा त्रिपथगा नाम दिव्या भागीरथीति च।
त्रीन् पथो भावयन्तीति तस्मात् त्रिपथगा स्मृता॥

(वाल्मीकिरामायण, बालकाण्ड ४४।६)

गंगा तीनों लोकोंके समस्त पापोंको विनाश करनेका सामर्थ्य रखती है। यही कारण है कि देवताओंने भी त्रिभुवनकी हितकामनासे तथा देवकार्यकी चिकीर्षासे गिरिराज हिमालयसे गंगाको प्रार्थनापूर्वक माँगा।

पौराणिक आख्यानसे विदित होता है कि हिमालयकी गंगा और उमा दो कन्याएँ थीं। जिनमें गंगा ज्येष्ठ थीं। महाराज भगीरथकी तपस्यासे प्रसन्न होकर वह अतिवेगसे पृथिवीपर आयीं तथा पृथिवी लोकको पवित्र करती हुई गंगाने पातालमें भी सगरके पुत्रोंका उद्धार किया।

गंगा अति वेगवती हैं, अतः भगीरथकी प्रार्थनापर भगवान् शंकरने गंगाके वेगको धारण किया तथा सात धाराओंमें पुनः विभाजित कर दिया। उन्हीं सात धाराओंमेंसे एक धारा भगीरथके दिव्य रथके पीछे अतिवेगसे चलने लगी। जैसा कि शास्त्रमें कहा गया है—

ततो हैमवती ज्येष्ठा सर्वलोकनमस्कृता।
तदा सातिमहद्रूपं कृत्वा वेगं च दुःसहम्॥
आकाशादपतद् राम शिवे शिवशिरस्युत।
विससर्ज ततो गङ्गां हरो बिन्दुःसरः प्रति।
तस्यां विसृज्यमानायां सप्त स्रोतांसि जज्ञिरे॥
ह्लादिनी पावनी चैव नलिनी च तथैव च।
सप्तमी चान्वगात् तासां भगीरथरथं तदा।
भगीरथोऽपि राजर्षिर्दिव्यं स्यन्दनमास्थितः।
प्रायादग्रे महातेजा गङ्गा तं चाप्यनुव्रजत्।
गमनाच्छङ्करशिरस्ततो धरणिमागता॥

(वा० रा० १।४३।४-५, ११-१२, १४-१५)

जलप्रवाह ही गंगा

गंगाका जलप्रवाह ही लोकपावन है। अतः

प्रवाहको रोकना गंगाके त्रिलोक-पावनत्वको बाधित करना होगा। गंगामें जो पापनाशक क्षमता है, वह अखण्ड जल-प्रवाहके कारण ही है। दर्शन-शास्त्रोंमें बहुत जगह उदाहरणके रूपमें यह बात कही गयी है कि भगीरथके रथके पथपर बहनेवाला जलप्रवाह ही गंगा है।* यदि गंगाका जलप्रवाह कृत्रिम साधनोंसे बदल दिया जाता है तो गंगाजलकी शास्त्रीय मर्यादा बाधित होती है। महाभारत तथा श्रीमद्भागवत आदि भारतीय सद्ग्रन्थोंमें गंगाका वेग अवरुद्ध न होनेका प्रमाण प्राप्त होता है। जैसा कि कहा गया है—

पुण्या पुण्यतमैर्जुष्टा गङ्गा भागीरथी शुभा।
प्लवन्तीव प्रवेगेन ह्रदे चन्द्रमसः शुभे॥

(महाभारत, भीष्मपर्व ६।२९)

तथा—'अलकनन्दा दक्षिणेन ब्रह्मसदनाद् बहूनि गिरिकूटान्यतिक्रम्य हेमकूटाद्धैमकूटानि अतिरभसतर-रंहसा लुण्ठयन्ती भारतमभिवर्षम्"।' (श्रीमद्भा० ५।१७।९)

श्रीमद्भागवतके नवम स्कन्धके नवम अध्यायमें गंगावतरणकी कथा मिलती है। तदनुसार भगीरथकी तपस्यासे प्रसन्न होकर भगवती गंगाने स्वर्गलोकसे मर्त्यलोकमें चलना तो स्वीकार किया, परंतु यह भी कहा कि जिस समय मैं स्वर्गसे पृथिवीपर आऊँगी, उस समय मेरे वेगको कोई धारण करनेवाला होना चाहिये। ऐसा न होनेपर मैं पृथिवीको फोड़कर रसातलमें प्रवेश कर जाऊँगी—

कोऽपि धारयिता वेगं पतन्त्या मे महीतले।
अन्यथा भूतलं भित्त्वा नृप यास्ये रसातलम्॥

(श्रीमद्भा० ९।९।४)

इसपर भगीरथने प्रार्थना की कि भगवान् रुद्र, जो समस्त प्राणियोंके आत्मा हैं तथा जिनमें सारा विश्व वस्त्रमें सूत्रकी तरह ओतप्रोत है, वे ही आपके वेगको धारण करेंगे—

धारयिष्यति ते वेगं रुद्रस्त्वात्मा शरीरिणाम्।
यस्मिन्नोतमिदं प्रोतं विश्वं शाटीव तन्तुषु॥

उसके बाद भगीरथके दिव्य एवं अतिवेगसे चलनेवाले रथके पीछे-पीछे गंगाका भू-भागपर अवतरण हुआ। जैसा कि कहा गया है—

रथेन वायुवेगेन प्रयान्तमनुधावती।
देशान् पुनन्ती निर्दग्धानासिञ्चत् सगरात्मजान्॥

(श्रीमद्भा० ९।९।११)

काशीतक गंगाकी धारा रोकना अशास्त्रीय

शास्त्रोंमें वर्णित है कि काशीतक गंगाकी पूरी धारा ही आनी चाहिये। काशी-केदारमाहात्म्यके चौदहवें अध्यायमें कहा गया है कि शिवजीसे आज्ञा प्राप्तकर गंगा जब भगीरथके रथके पीछे चलने लगीं तो शिवजीने निर्देश दिया कि हे गंगा! तुम काशीमें केदारेश्वर, मर्णिकर्णिका तथा विश्वेश्वर तीर्थोंमें जाओ—

तेनोपदिष्टा मत्क्षेत्रं गच्छ प्राङ् मर्णिकर्णिकाम्।
तत्र केदारनाथोऽहं लिङ्गरूपी वसामि हि॥
तत्र मत्सेवया गौरीतीर्थस्य च निषेवणात्।
भूत्वा निरागसी पश्चाद् विश्वेशं मर्णिकर्णिकाम्॥

तथा—

सेव विश्वेशपादाब्जं तत्र त्वं सकला वस।
स्तोकांशेनोदधिं गच्छ पितॄंस्तारय भूपतेः॥

(४८—५०)

अर्थात् काशीमें तुम सम्पूर्ण ही जाकर रहोगी और काशीके बाद थोड़े अंशसे समुद्रकी ओर जाकर भगीरथके पितरोंका उद्धार करो।

गंगाजल पीने तथा स्पर्श करनेका धार्मिक महत्त्व

मृत्युके समय यदि चाण्डालके द्वारा भी मुखमें गंगाजल पिलाया जाय तो वह मुमूर्षु व्यक्ति मुक्ति प्राप्त करता है, यह बृहद्धर्मपुराणका वचन है—

* भगीरथरथपथखातावच्छिन्नचलज्जलप्रवाहो गङ्गा।

चाण्डालेनापि यस्यास्ये न्यस्येद् गङ्गाजलं परम्।
सोऽपि मुक्तिं लभेन्मर्त्यः किमु पुत्रादिना द्विज॥
(बृ०ध०पु० ५६।७१)

पद्मपुराणके क्रियायोगसारखण्डमें मुमूर्षुके मुखमें एक बिन्दु भी गंगाजल पिलानेपर उसे परम पदकी प्राप्ति बतलायी गयी है—

गङ्गाम्भः शीकरं यस्तु सम्मितं सर्षपस्य च।
प्राप्नोति मृत्युकाले तु स गच्छेत् परमं पदम्॥
(७१।१२)

भक्तिपूर्वक गंगाजलके स्पर्शसे ही पापमुक्ति भी पद्मपुराणमें वर्णित है—

ये भक्तिभावेन सरिद्वरायाः
स्पृशन्ति पाथः कणिकामपीह।
ते यान्ति नूनं पदमच्युतस्य
पापैर्विमुक्ताः सकलैर्महोग्रैः॥
(क्रि० यो० ख० ७।१२८)

यदि गंगाजलका स्पर्श न कर सके तो सैकड़ों योजन दूरसे ही भक्तिपूर्वक गंगाको पुकारनेवाला भी पापोंसे मुक्त हो जाता है—

गङ्गा गङ्गेति यो ब्रूयाद् योजनानां शतैरपि।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति॥

गंगातटपर अधिकार मानना धर्मविरुद्ध

भारतीय धर्मशास्त्रके अनुसार गंगाके क्षेत्रके चार विभाग माने गये हैं। गंगातट, गंगागर्भ, गंगातीर तथा गंगाक्षेत्र।

१. गंगातट—प्रवाहसे लेकर चार हाथतककी भूमि गंगातट होती है तथा इसका स्वामित्व भगवान् नारायणका ही है। अन्य शासकद्वारा उसका स्वामित्व मानना शास्त्रविरुद्ध है—

प्रवाहमवधिं कृत्वा यावद् हस्तचतुष्टयम्।
अत्र नारायणः स्वामी नान्यः स्वामी कदाचन॥
(बृ० ध० पु० ५४।३१)

इस तटभूमिको नारायणक्षेत्र कहा गया है। इसमें दान लेना, साक्षात् दान देना, दूसरेकी क्षति करना आदि कर्म वर्जित हैं—

अत्र किञ्चिन्न गृह्णीयात् प्राणैः कण्ठगतैरपि।
तत्र किञ्चिन्न दद्याच्च साक्षात् पात्राय पुण्यवान्॥
प्रतिग्रहस्याभावे हि दानाभावो हि कल्प्यते।
परक्षतिकरं कार्यं गङ्गायां नोपयुज्यते॥
अत्र प्रतिग्रहे राजन् विक्रीता जाह्नवी भवेत्॥
(बृ० ध० पु० ५४।३२—३४)

इस नारायणक्षेत्रमें कुछ विशेष कर्म करनेका विधान है। दीक्षा, देवपूजा, गायत्री आदि जप, श्राद्ध, तर्पण, परोपकार, द्रव्योत्सर्ग, स्तोत्रपाठ, मौन आदि गंगातटमें विशेष फलदायक होते हैं। इस क्षेत्रमें अपशब्दभाषण निषिद्ध है तथा आत्मशुद्धिकी भावनासे ही जल पीना विहित है। बृहद्धर्मपुराणमें कहा है—

नारायणक्षेत्रमध्ये कर्तव्यञ्च निरूप्यते।
दीक्षां च देवपूजां च जपं गंगातटे चरेत्॥
शुष्कवासः पिधायापि सावित्रीजपमाचरेत्।
श्राद्धञ्च तर्पणं चैव परोपकारकर्म च॥
द्रव्योत्सर्गमिष्टदेवसम्प्रीतिकरणं तथा।
पात्रोद्देशञ्च मनसा त्यक्तद्रव्यस्य दापने॥
स्तवपाठं च मौनं च नीचालापविवर्जनम्।
केवलं वारिपानं च कर्तव्यं ब्रह्मभावतः॥
एतानि किल कर्माणि क्षेत्रे नारायणे चरेत्।
(५४।६०—६४)

इससे स्पष्ट है कि गंगाजलको किसी अन्य लौकिक स्वार्थके लिये उपयोगमें लानेका निषेध किया गया है तथा गंगाकी मिट्टीका भी शिवमूर्ति-निर्माण आदि शास्त्रीय कार्योंके अतिरिक्त लौकिक कार्यके लिये खोदनेपर दोष होता है। बृहद्धर्मपुराणमें ही उपदिष्ट है कि—

शिवार्थे मृत्तिकादानं खनित्वा मितमाहरेत्।
गङ्गागर्भविदारस्य न दोषस्तत्र कश्चन॥
(बृ० ध० पु० ५७।४०)

अतः गंगातटको खोदकर उसके जलको स्वार्थके लिये उपयोग करनेकी योजना हिन्दू-धर्मके विरुद्ध है।

गंगाकी स्वच्छताहेतु अन्य कर्तव्य

२-गंगागर्भ—गंगाके प्रवाहसे सौ हाथतक गंगागर्भ माना गया है। इसके अन्तर्गत हिंसा, द्वेष, कलह, असत्यभाषण, प्रतिग्रह, अशास्त्रीयवचन, परान्नभोजन, परद्रव्यग्रहण, शोक, मोह, नास्तिकता, भिक्षा, लालच, पापवृत्ति, चपलता, परिहास आदि नहीं करना चाहिये—

शतहस्तं प्रवाहाद् हि गर्भक्षेत्रमिहोच्यते।
निरूप्यते तत्र वर्ज्यं सावधानमनाः शृणु॥
हिंसां द्वेषं च कलहं मिथ्यावाक्यं प्रतिग्रहम्।
स्थानास्थानविकल्पं च अशास्त्रवचनं तथा॥
परान्नभोजनं चैव परद्रव्योपभोजनम्।
शोकं मोहं दुःखचित्तं नास्तिक्यं पापचित्तताम्॥
भिक्षां लिप्सां च चापल्यं परिहासं च वर्जयेत्।
जलान्तरस्पर्शनं च गर्भक्षेत्रे विवर्जयेत्॥

(बृ० ध० पु० ५४। ४८—५१)

(३-४) गंगातीर तथा गंगाक्षेत्र—गंगागर्भके बाद गंगातीरकी सीमा मानी गयी है। भाद्रपद कृष्णा चतुर्दशीके दिन नदीका जल जहाँतक पहुँचता है, वहाँतक गर्भ माननेके बाद वहाँसे डेढ सौ हाथतक गंगातीर माना जाता है। गंगातीरसे एक गव्यूति (दो कोस)-तकका स्थान गंगाक्षेत्र कहा गया है। गंगातीरका स्थान समस्त पापोंसे रहित माना गया है—

भाद्रकृष्णाचतुर्दश्यां यावदाक्रमते जलम्।
तावद् गर्भं विजानीयात् तदूर्ध्वं तीरमुच्यते॥
सार्द्धहस्तशतं यावद् गंगातीरमिति स्मृतम्।
तीराद् गव्यूतिमात्रं च परितः क्षेत्रमुच्यते॥
तीरक्षेत्रमिदं प्रोक्तं सर्वपापविवर्जितम्॥

(बृ० ध० पु० ५४। ४५—४७)

इस गंगातीर स्थानमें भी असत्यभाषण, प्रतिग्रह, लौकिकचर्चा, क्रय-विक्रय, कपड़े धोना, शरीरसे मैल छुड़ाना, कटुवाक्य, शस्त्राघात, परपीड़ा, परद्रव्योपयोग, बिना जाने बोलना, पैर धोना, कुल्ला करना, दूसरे तीर्थजलकी प्रशंसा, जूठन गिराना, लकड़ीसे जलताड़न, तेल-उबटन आदि लगाकर स्नान करना, शपथ लेना, स्वच्छन्द पैर पटकना, शोक, मोह, दुःख, नास्तिकता, पापविचार, विषयलोलुपता आदि कर्म वर्जित हैं—

मिथ्यावाक्यं प्रतिग्राहो दानं साक्षाद् ग्रहीतरि।
अपारमार्थिकं वाक्यं जैमिने क्रयविक्रयौ॥
वस्त्रस्य क्षालनं चैव स्वगात्रमलकर्षणम्।
कटुवाक्यं शस्त्रपातं परपीडाकरं हि यत्॥
परद्रव्येण पूजां च ग्राम्यधर्मं च भोजनम्।
अशास्त्रकथनं चैव अज्ञात्वा कथनं तथा॥
विना तिलं तर्पणं च पादक्षालनमेव च।
अपानवायुनिस्सारं निष्ठीवनमथापि वा॥
अन्यतीर्थप्रशंसां च जलान्तरप्रशंसनम्।
उच्छिष्टक्षेपणं चैव दण्डसन्ताडनं तथा॥
अभ्यक्तोऽपि न च स्नायाद् गङ्गायां देवमातरि।
अभ्यङ्गो द्विविधो वारिसन्तारोऽथ शिरोऽवधि॥
तैलावगाहः पादान्तः शिरोनिःक्षिप्ततैलतः।
गङ्गायां शपथं नैव प्राणान्तेऽपि समाचरेत्॥
स्वच्छन्दपादनिःक्षेपं स्थानास्थानविकल्पना।
एकवासोऽनेकवासोऽप्यकुशस्वर्णरूप्यकम् ॥
स्नानं चापि न वै कुर्याद् आलस्यं च तथाविधम्।
शोकं मोहं दुःखचित्तं नास्तिक्यं पापचिन्तनम्॥
लिप्सां च विषयादीनां गङ्गातीरेषु नाचरेत्॥

(बृ० ध० पु० ५४। ३६—४५, द्र० ५२—५४)

गंगातीरमें अवस्थित होकर गंगाजलसे समस्त देव-पितृपूजा आदि कार्य अनुष्ठित करना पुण्यप्रद है तथा गंगातीर अथवा गंगाकी दिशामें भी मूत्रपुरीषादिका त्याग करना अत्यन्त पापजनक होता है—

गङ्गाजलेनोद्धृतेन कुर्यात् सर्वां जलक्रियाम्।
गङ्गातीरस्थितो यस्तु नान्यद् वारि स्पृशेद् यदि॥
ध्रुवं तेन प्रतिज्ञातं ब्रह्माहमिति नान्यथा।
सर्वासु देवपूजासु पितृपूजासु चैव हि॥
महातीर्थे हि गङ्गायां क्षताशौचं न विद्यते।
त्यक्तुं मूत्रपुरीषादि गङ्गातीरं विवर्जयेत्॥

गङ्गाजुष्टदिशं चैव त्यक्तुं मूत्रमलादिकम्।
न व्रजेन्नाचरेच्चैव कदापि द्विजपुंगव॥
या याः सन्निहिता भूम्यस्तास्ताः पुण्यतमाः स्मृताः।
पापपुण्यक्रियाणाञ्च तथैव ददते फलम्॥

(बृ० ध० पु० ५४।५५—५९)

उपर्युक्त वचनोंसे यह भी ज्ञात होता है कि गंगाकी स्वाभाविक धारासे संयुक्त सम्पृक्त भूमि पुण्यतम मानी गयी है। अतः गंगाकी धाराको अवरुद्ध करनेपर उन-उन भूमियों, स्थानोंकी शास्त्रोक्त पुण्यप्रदता बाधित होती है। वस्तुतः अत्यन्त प्राचीन कालसे ही भारतीय संस्कृतिमें नदीके जलकी धाराको रोकना अत्यन्त गर्हित तथा आसुरी वृत्तिका कार्य माना गया है। भारतीय संस्कृतिके आद्य धर्मग्रन्थ वेदोंमें इसकी निन्दा की गयी है।

गंगाके जलावरोधकी अधार्मिकता

ऋग्वेदमें इन्द्रसूक्तकी एक आख्यायिकासे यह ज्ञात होता है कि वृत्रने गंगा आदि नदियोंके प्रवाहको रोक दिया था; क्योंकि गंगाजलके प्रवाहमय होनेसे देवताओंके यागादि सत्कर्म अनुष्ठान सम्पन्न होते थे। वृत्रद्वारा गंगा आदि सप्तनदियोंको रोक देनेसे समस्त विश्व व्याकुल होने लगा। तब इन्द्रने वृत्रको मारकर अवरुद्ध नदियोंके प्रवाहको पुनः यथास्थान प्रवाहित किया। ऋग्वेदके द्वितीय मण्डलके १२वें सूक्तमें इस आख्यायिकाका संकेत है—

'यो हत्वाहिमरिणात् सप्त सिन्धून्।'

(ऋग्वेद २।१२।३)

'अवासृजत् सर्तवे सप्त सिन्धून्।'

(ऋग्वेद २।१२।१२)

इसका भाष्यकार सायणाचार्यने मन्त्र-भाष्यमें **'गङ्गायमुनाद्या मुख्या नदीः अरिणात्'** यह अर्थ किया है। इससे यह धार्मिक नियम स्पष्ट होता है कि गंगामें जलप्रवाहको यथावत् बनाये रखना विश्वकल्याणके लिये आवश्यक है तथा उसको रोकना पापका कारण है और दण्डनीय अपराध है। हिन्दू-धर्मके पद्मपुराणादि ग्रन्थोंमें जहाँ विराट् पुरुषका वर्णन किया गया है, वहाँपर गंगा आदि नदियोंको विराट् पुरुषकी रक्तसंचालिका नाड़ी बतलाया गया है। नाड़ीरूपी नदियोंके प्रवाहमय होनेसे ही विश्वपर्यावरण स्थिर एवं स्वस्थ रह सकता है अन्यथा नदियोंके प्रवाहको यदि रोका गया तो विश्वात्मा परमेश्वरके जागतिक स्वरूपमें विकार उत्पन्न होगा, जो सम्पूर्ण विश्वके लिये कष्टकारक एवं विध्वंसक होगा, यह भारतीय धर्मदृष्टि है।

वेदोंके द्वारा प्रतिपादित यज्ञकर्म जैसे अदृष्ट स्वर्गादिपुण्यफलके प्रदाता होते हैं, वैसे ही गंगा नदी सामान्य नदी नहीं है। अपितु त्रिलोकपावनी पुण्यसलिला होनेसे अदृष्ट पुण्यको प्रदान करनेवाली है। इसमें स्नान, तर्पण, श्राद्ध एवं पिण्ड-विसर्जन आदि श्रुति-स्मृति-प्रतिपादित कर्म तभी सार्थक हो सकेंगे, जब इसकी जलधारा गोमुखसे लेकर गंगासागरतक अखण्ड एवं अनवच्छिन्न बनी रहे अन्यथा गंगाके आधिदैविक स्वरूपपर आघात हो जायगा तथा उसमें अदृष्टोत्पादन क्षमता भी बाधित हो जायगी। श्रीविश्वनाथ पंचानन भट्टाचार्यने कारिकावलीमें स्पष्ट रूपसे कहा है—

धर्माधर्मावदृष्टं स्याद्धर्मः स्वर्गादिसाधनम्।
गङ्गास्नानादियागादिव्यापारः स तु कीर्तितः॥

(श्लोक १६२)

अर्थात गंगास्नान अदृष्ट धर्मप्रद है।

पण्डितराज जगन्नाथने भी गंगालहरीमें **'स्खलन्ती स्वर्लोकादवनितलशोकापहृतये'** आदि मंगलमय श्लोकोंसे समस्त वसुधातलके प्राणियोंके शोकविनाशके लिये ही गंगाका अवतरण वर्णित किया है।

इस प्रकार उपर्युक्त अनेक सन्दर्भोंसे स्पष्ट है कि वैदिक सनातन संस्कृतिमें गंगाका स्वरूप प्रवाहमय जलराशिके रूपमें वर्णित है। इसकी प्रवहमानता ही गंगाके उदात्त गुण एवं अदृष्टपुण्योत्पादक गुणका हेतु है। अतः गंगाके प्रवाहमय स्वरूपको कथमपि विकृत नहीं किया जाना चाहिये।

सोमरस है गंगाजल

(डॉ० श्रीभगवतीप्रसादजी पुरोहित)

सोम एक दिव्य तेज:पुंज है। ऋग्वेदमें कहा गया है—

'दिवि सोमो अधि श्रितः।' (ऋग्वेद १०।८५।१)

अर्थात् शरीरको पुष्टि देनेवाला यह सोमरस चमकते हुए उच्चभागसे तेजस्वीरूपमें अन्तरिक्षसे स्रवित होता है। ऐसे सोमकी वैदिक ऋषि प्रार्थना करते हैं—

स नो हरीणां पत इन्दो देवप्सरस्तमः। सखेव सख्ये नर्यो रुचे भव॥ (ऋग्वेद ९।१०५।५)

अर्थात् आकाशसे यह सोम पृथ्वीमें पर्वतोंके ऊपर औषधियों एवं जलोंमें (जो जलकण औषधीय पादपोंके ऊपर जमा रहते हैं।) स्थित हो गया।

त्वं च सोम नो वशो जीवातुं न मरामहे। प्रियस्तोत्रो वनस्पतिः॥ (ऋग्वेद १।९१।६)

अर्थात् यह मनुष्यके दीर्घ जीवनके लिये प्रशंसनीय औषधिरूप है। जिसकी अनुकूलतासे मनुष्य आरोग्य प्राप्त करता है—

जनयन्रोचना दिवो जनयन्नप्सु सूर्यम्। वसानो गा अपो हरिः॥ (ऋग्वेद ९।४२।१)

वेदमें सोमको औषधियोंका राजा **'सोमो ओषधीनां राजा'** कहा गया है। सोमका पर्यायवाची चन्द्रमा है, वास्तवमें सोम और चन्द्रमा एक ही हैं। सृष्टि-सृजनके लिये प्रजापति महर्षि अत्रिने ब्रह्मका ध्यान किया तो ब्रह्मलोकसे एक तेज:पुंजका आविर्भाव हुआ, जिसे दसों दिशाओंने गर्भके रूपमें धारण किया, लेकिन वे पूरे तेजको धारण नहीं कर पाये, उसका कुछ भाग वनस्पतियोंपर गिरा, जिससे वनस्पतियोंमें सोमत्वका सृजन हुआ। इसलिये चन्द्रमाको सोम और सोमको चन्द्रमा भी कहते हैं। यही कारण है कि औषधियोंको (सोमको) निकालते वक्त नक्षत्रोंका बहुत ध्यान रखा जाता था; क्योंकि नक्षत्रोंका अधिपति चन्द्रमा है और चन्द्रमाको एक मासके अन्दर २७ नक्षत्रोंके साथ सहवास करना होता है, जब चन्द्रमा जिस नक्षत्रमें होता है तब उस नक्षत्रसे सम्बन्धित वनस्पतिमें सोमत्वका सृजन होता है और उसी नक्षत्रमें निकाले जानेपर उस वनस्पतिमें सोमत्व रहता है अन्यथा नहीं। वेदोंमें कहा गया है—

उदीची दिक् सोमोऽधिपतिः। (अथर्ववेद ३।२७।४)

अर्थात् सोम उत्तर दिशाके अधिपति हैं तथा सोमको पृथ्वीके नाभिस्थलपर स्थित पर्वतों (मेरु जो कि गंगाकी धाराओंका उद्गम है)-का निवासी बतलाया गया है। यही बात सामवेदमें भी कही गयी है।

स सप्त धीतिभिर्हितो नद्यो अजिन्वदद्रुहः। या एकमक्षि वावृधुः॥ (ऋग्वेद ९।९।४)

अर्थात् धारण शक्तियोंसे सुरक्षित द्रोहरहित सोम (प्रकृति) सप्त प्रवाहों अथवा नदियोंको आनन्दित करता है। जो (सप्त नदियाँ) इस क्षीण न होनेवाले सोमको संवर्धित करती हैं। इस प्रकार जलरूप और औषधिरूप सोम एक-दूसरेको पुष्ट करता है अर्थात् वनस्पतिके औषधीय तत्त्व जलका शोधन करते हैं और जल वनस्पतिका पोषण करते हुए औषधीय तत्त्वोंको बढ़ाता है। सोम औषधियाँ मुख्यरूपसे सोमकूट पर्वतपर उगती हैं और सोमकूट पर्वत केदारक्षेत्रमें स्थित है। (केदारखण्ड ३७।६) यह सोम मुख्यतया औषधियोंमें रहता है—

या ओषधयः सोमराज्ञीर्बह्वीः शतविचक्षणाः। (अथर्ववेद ६।९६।१)

जो सैकड़ों प्रकारकी औषधियाँ हैं, उनमें सोमका निवास है। सामवेद (५।१।७, ९) तथा—

प्र सोमासो विपश्चितोऽपो नयन्त ऊर्मयः। वनानि महिषा इव॥ (सामवेद २।६।१)

जलाशयोंमें जिस प्रकार लहरें समाहित होती हैं, उसी प्रकार यह ज्ञानवर्धक सोमरस जलके साथ मिल जाता है। जिसमें यह मेधावर्धक विशिष्ट ज्ञानसम्पन्न दिन उषा एवं द्युलोकका ज्ञाता तन्त्रिकाओंमें चेतनाका

संचार करनेवाला और विद्वानोंके लिये उपयोगी होता है। (साम० ३।५।८) तथा—

हिमवतः प्र स्रवन्ति सिन्धौ समह संगमः। आपो ह मह्यं तद् देवीर्ददन् हृद्द्योतभेषजम्॥ (अथर्ववेद ६।२४।१)

हिमाच्छादित पर्वतोंकी जो सोमरूपी जलधाराएँ बहती हुई समुद्रकी ओर प्रस्थान करती हैं, वे रोगनाशक अमृतमय औषधीय जलधाराएँ हृदयको शान्ति प्रदान करनेवाली होती हैं। ऐसी जलधाराओंका वैदिक ऋषि आवाहन करते हैं—

सस्रुषीस्तदपसो दिवा नक्तं च सस्रुषीः। वरेण्यक्रतुरहमपो देवीरुप ह्वये॥

ओता आपः कर्मण्या मुञ्चन्त्वितः प्रणीतये। सद्यः कृण्वन्त्वेतवे॥ (अथर्ववेद ६।२३।१-२)

अर्थात् हम श्रेष्ठ कर्म करनेवाले लोग निरन्तर गतिमान् जलधाराओंमें प्रवाहित दिव्य आपः (मूल तत्त्व जल अथवा सोम)-का आवाहन करते हैं। ये सर्वत्र व्याप्त निरन्तर गतिमान् जलधाराओंकी क्रिया-शक्ति उत्पन्न करके हमें इनसे (रोगों अथवा हीनतासे) मुक्त करें, हम शीघ्र प्रगति करें और—

शं नो भवन्त्वप ओषधयः शिवाः। (अथर्ववेद २।३।६)

कल्याणकारी औषधियाँ, गुणयुक्त जल हमारे लिये पापक्षयकारी और कल्याणकारी सिद्ध हों।

इस प्रकार सोमयुक्त जलसे आरोग्यकी प्रार्थना की गयी है।

सिन्धुपत्नीः सिन्धुराज्ञीः सर्वा या नद्य स्थन। दत्त नस्तस्य भेषजं तेना वो भुनजामहै॥ (अथर्ववेद ६।२४।३)

अर्थात् आप सिन्धु (गंगा)-की पत्नियाँ हैं, सिन्धु आपका सम्राट् है, हे निरन्तर बहती जलधाराओ! आप हमें पीड़ासे मुक्त करें और आरोग्य प्रदान करें, जिससे हम अन्न, बल आदिका उपभोग कर सकें। यहाँ सिन्धुका अर्थ समुद्रसे है। आर्य लोग गंगाको सिन्धु कहते थे; क्योंकि सिन्धुका अर्थ समुद्र होता है। वैदिक कालमें गंगामें अथाह जल था और इसी जलाधिक्यके कारण गंगाको सिन्धु कहते थे। इसकी सात अन्य शाखाएँ हैं, इन शाखाओंमें भी अत्यधिक जल था, अतः इन्हें भी आर्य लोग सिन्धुका ही दर्जा देते थे। इसलिये उत्तराखण्डको सप्तसिन्धु भी कहा जाता था।

न त्वा तरन्त्योषधयो बाह्याः पर्वतीया उत॥ (अथर्ववेद १९।४४।६)

पर्वतोंसे भिन्न स्थानोंपर उत्पन्न होनेवाली औषधियाँ कम लाभप्रद होती हैं। इसलिये वैदिक ऋषि हिमालयकी इन औषधियोंकी स्तुति करते हैं—

मधुमतीरोषधीर्द्याव आपो मधुमन्नो भवत्वन्तरिक्षम्। (अथर्ववेद २०।१४३।८)

वनौषधियाँ हमारे लिये मधुरतासे पूर्ण हों तथा द्युलोक, अन्तरिक्ष और जल हमारे लिये मधुर हों। छान्दोग्योपनिषद् (१।१।२)-में आया है—

एषां भूतानां पृथिवी रसः पृथिव्या आपो रसोऽपामोषधयो रसः॥

अर्थात् इन चराचर प्राणियोंका पृथिवी रस, उत्पत्ति, स्थिति और लयका स्थान है। पृथ्वीका रस जल है और जलका रस औषधियाँ हैं; क्योंकि जल औषधियोंका ही परिणाम है। हिमालयमें जल विभिन्न जड़ी-बूटियोंमें समाकर निःसृत होता है, इसलिये औषधियुक्त जल ही गंगाजल है।

हिमालयमें अत्यधिक प्रभावकारी औषधियाँ उत्पन्न होती हैं। जिनसे कुष्ठरोग-जैसी असाध्य बीमारियाँ भी दूर हो जाती हैं। कुष्ठतक्मनाशन सूक्त-(अथर्व० ५।४)-में इसका व्यापक वर्णन आया है। ऐसे औषधीय तत्त्वोंसे निःसृत होनेवाले गंगाजलमें जब व्यक्ति स्नान करते हैं तो उनके कुष्ठ-जैसे जघन्य रोग भी दूर हो जाते हैं। ऐसा अमृतोपम जल ही सोमरस है। यह सोमयुक्त जल दिव्य प्रभावोंवाला भी है। सुरक्षा सूक्तमें आया है कि—

अपस्त ओषधीमतीर्ऋच्छन्तु। ये माघायव एतस्या

दिशोऽभिदासात्॥ (अथर्ववेद १९।१८।६)

जो शत्रु किसी भी दिशासे आकर हमारा विनाश करना चाहते हैं, वे इस औषधिमय जलसे विनष्ट हों। इसलिये हर पूजा-पाठ एवं अनुष्ठानमें सोमयुक्त गंगाजलका प्रयोग किया जाता है। इसलिये भी सोमरस है गंगाजल। यजुर्वेदमें उल्लेख आया है कि—

सं वपामि समाप ओषधीभिः समोषधयो रसेन। सꣳ रेवतीर्जगतीभिः पृच्यन्ता ꣳ सं मधुमतीर्मधुमतीभिः पृच्यन्ताम्॥ (यजुर्वेद १।२१)

अर्थात् सोम औषधियोंको जल प्राप्त हो, वे रससे पुष्ट हों, गुणसम्पन्न सोमकी औषधियाँ प्रवहमान जलमें मिलें। मधुरतायुक्त तत्त्व परस्पर मिल जायँ। इस प्रकार पर्वतोंकी औषधियोंसे निःसृत होकर जो रस आता है, वह सोमरस ही गंगाजल है।

भारतीय संस्कृतिकी अमर-धार गंगा

(श्रीगौरीशंकरजी गुप्त)

भगवती जह्नुनन्दिनी गंगाकी महिमा अपार है। विभिन्न पुण्य नदियोंके माहात्म्य भिन्न-भिन्न पुराणोंमें पाये जाते हैं, परंतु भगवती गंगाकी महिमा वेदोंमें, विशेषतः ऋग्वेदमें पायी जाती है। गंगाकी महिमा कितनी अधिक है, इसीसे इसका अनुमान लगाया जा सकता है। काशीक्षेत्र, जिसे भगवान् विश्वनाथने अपनी राजधानी बनाया तथा जिसकी महिमा बृहज्जाबालोपनिषद् आदि उपनिषद् ग्रन्थोंमें पायी जाती है, उस काशी नगरीका गौरव भगवती गंगाके सान्निध्यसे लोकातीत हो गया है।

काशी-परिसर-वाहिनी इसी गंगाके तटपर अनादि कालसे प्रायः सभी प्रसिद्ध ऋषि-मुनियोंने घोर तपस्याएँ कीं। इसी गंगाके दशाश्वमेध घाटपर स्वयं ब्रह्माने दस अश्वमेध यज्ञ किये, जिनका वर्णन पुराणोंमें पाया जाता है।

ऐतिहासिक कालमें भी भगवान् शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, मध्वाचार्य, वल्लभाचार्य आदि सम्प्रदाय-प्रवर्तक महात्माओंने अपने-अपने सम्प्रदायोंका प्रवर्तन इसी पुण्य नगरी काशीके गंगातटोंपर बैठकर किया।

गंगावतरण

'बृहद्धर्मपुराण' के अनुसार भगवान् विष्णु शिवजीके ताण्डव नृत्य एवं सामगानसे आनन्दमग्नावस्थामें जलमय हो गये। उनके दाहिने पैरके अँगूठेसे जल-धारा बह निकली। जब ब्रह्माजीने यह देखा तो उन्होंने उस जलको अपने कमण्डलुमें भर लिया। विष्णु-चरणसे उत्पन्न हुई यही धारा गंगाके नामसे प्रसिद्ध है।

चिरकालके पश्चात् जब कपिलमुनिके शापसे राजा सगरके साठ हजार पुत्र भस्म हो गये, तब अनुनय-विनय करनेपर मुनिवरने उनके उद्धारका उपाय राजाको बताते हुए कहा कि यदि गंगाजी मृत्युलोकमें आयें तो उनके पावन जलसे उन सबका सहज ही उद्धार हो सकता है। मृत्युलोकमें गंगाजीको लानेके हेतु राजा सगर और उनके वंशजोंने घोर तप किया, किंतु सफलता नहीं मिली। अन्ततोगत्वा राजा भगीरथने अपने घोर तपद्वारा ब्रह्माजीको प्रसन्न करके उनसे उनके कमण्डलुमें निवास कर रही गंगाजीको पितरोंकी सद्गतिके लिये भू-लोकमें भेजनेका वरदान माँगा। ब्रह्माजीने 'तथास्तु' कहकर स्वीकृति प्रदान कर दी। गंगाजीने भगीरथको पृथ्वीपर आनेका वचन प्रदान करते हुए कहा कि 'मेरा अत्यन्त तीव्र वेग होनेके कारण मैं पृथ्वीको पारकर पाताललोकमें चली जाऊँगी। भगवान् शिवजी ही मेरा वेग रोकनेकी शक्ति-सामर्थ्य रखते हैं। अतः वेग रोकनेके लिये तुम पहले उन्हें प्रसन्न करो, वे अपने मस्तक बलसे रोक सकते हैं।'

वेगं तु मम दुर्धार्यं पतन्त्या गगनाद् भुवम्।
न शक्तस्त्रिषु लोकेषु कश्चिद्धारयितुं नृप॥
अन्यत्र विबुधश्रेष्ठान्नीलकण्ठान्महेश्वरात्।
तं तोषय महाबाहो तपसा वरदं हरम्॥
स तु मां प्रच्युतां देवः शिरसा धारयिष्यति।

गंगाजीकी आज्ञासे महाराज भगीरथ भगवान् शिवको प्रसन्न करनेके अभिप्रायसे कैलास पर्वतपर जाकर घोर तप करने लगे। उनके तपसे शिवजी प्रसन्न हुए और वरदानस्वरूप गंगाजीके वेगको रोक लेनेका उन्होंने वचन दिया। शिवजीसे वरदान पाकर जब भगीरथने गंगाजीसे मृत्युलोकमें पदार्पण करनेके लिये प्रार्थना की तो गंगाजीने अपने वेगसे भगवान् शिवको भी पाताल ले चलनेका विचार किया। शिवजीने गंगाके अभिप्रायको समझ लिया और जब गंगाजी अत्यन्त प्रबल वेगसे उनके शीशपर गिरीं तब शिवजीने योगशक्तिसे वेगको रोककर जटाजूटमें उन्हें विलीन कर दिया। चिरकालतक शिवजी वेगकी शान्तिके निमित्त गंगाजीको जटाजूटमें ही रोके रहे, पृथ्वीपर एक भी बूँद नहीं गिर सकी। 'हरमौलि-विहारिणी' गंगाका नाम इसी कारण पड़ा।

जटा-जूटमें ही गंगा-विलयनके दृश्यसे व्याकुल होकर राजा भगीरथने पुनः शिवस्तुति की। शिवजी प्रसन्न हो गये और उन्होंने गंगाकी एक बूँद छोड़ दी जो 'बिन्दु-सरोवर' के नामसे विख्यात है। नगराज हिमालयकी 'गोमुखी' नामक विशाल कन्दराके भीतरसे होकर आर्यावर्त भारतकी भूमिमें गंगाजीने भगीरथके बताये मार्गसे प्रवेश किया।

गंगावतरणका दृश्य

मार्गमें राजा भगीरथके पीछे-पीछे गंगाजी चल रही थीं। रास्तेमें पड़नेवाले विशाल वृक्षों और पर्वतोंको अपने प्रबल वेगसे गंगाजी बहाकर ले जा रही थीं। उसी मार्गमें उग्रतपा जह्नुमुनिका आश्रम पड़ा। वे यज्ञ कर रहे थे। उनके यज्ञकी सम्पूर्ण सामग्री गंगाजीकी वेगवती धारामें बह चली। इससे मुनि जह्नु अत्यन्त क्रुद्ध हुए और अपने तपोबलसे उन्होंने गंगाजीको अपनी गोदमें समा लिया। जब भगीरथने मुनिवरसे काफी अनुनय-विनय की तो उन्होंने अपने जानु-देशद्वारा गंगाजीको पुनः प्रकट किया। इसी कारण 'जाह्नवी' और 'जह्नुनन्दिनी' भी गंगाजीके नाम हैं।

तत्पश्चात् गंगाजी अनेक तीर्थोंमें होती हुई पुण्य मही भारतवर्षको पवित्र करती हुई अन्तमें गंगासागर तीर्थमें जा मिलीं। यहींपर राजा सगरके साठ हजार पुत्र भस्मीभूत हुए थे।

महाराज भगीरथद्वारा पृथ्वीलोकमें लानेके कारण ही गंगा 'भागीरथी' कही जाती हैं। गंगातटके पर्वतोंपर सभी स्थान तीर्थ हैं। पहाड़से उतरकर गंगाजीकी परम पावन धारा जिस समय मायापुरी क्षेत्रमें प्रकट हुई, उस समय उस स्थानका नाम गंगाद्वार पड़ा, जो आजकल हरिद्वार या हरद्वारके नामसे प्रसिद्ध है। 'गोमुख' से लेकर गंगासागर तक इसके किनारे अनेक तीर्थ हैं, किंतु मनोहर अभूतपूर्व दृश्यकी दृष्टिसे हरिद्वार अपना सानी नहीं रखता।

गंगास्नानका धार्मिक महत्त्व

पुण्यतोया गंगाका अनिर्वचनीय माहात्म्य है। भवके जीवोंको भवसागरसे पार करनेकी अद्भुत शक्ति गंगामें भरी पड़ी है। तापत्रयविनाशिनी गंगा मोक्षदायिनी भी हैं। इनके दर्शन, स्पर्श, पान, नामोच्चारण तथा स्मरणमात्रसे ही प्राणी सर्वपापोंसे तत्काल मुक्त हो जाते हैं। दैहिक, दैविक और भौतिक ताप तत्क्षण उपशमको प्राप्त होते हैं।

दर्शनात् स्पर्शनात् पानात् तथा गङ्गेति कीर्तनात्।
स्मरणादेव गङ्गायाः सद्यः पापात् प्रमुच्यते॥

गंगास्नानकी महिमा सचमुच विलक्षण ही प्रतीत होती है। भव-बन्धनादि संकटोंसे तो निवृत्तिका यह अत्यन्त सुगम साधन है। सिंह-दर्शनसे जिस प्रकार मृग भागते हैं, उसी प्रकार गंगातटवासी तथा श्रद्धा-भक्ति-पूर्वक गंगामें अवगाहनका आनन्द लूटनेवाले प्राणीसे पाप भी डरकर भाग जाते हैं। भावार्थ यह कि वह वैकुण्ठधामवासी होता है।

धन्य वह जगदम्बा, जिसका भव-कूपमें पड़ी हुई अपनी संतानोंपर अटूट प्रेम स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। प्राकृत माताएँ गोदसे कूपमें गिरी हुई अपनी संतानोंको देखकर कुएँके ऊपर ही आक्रन्दन करती हैं, परंतु कुएँमें बालकके साथ कूदतीं नहीं। परम करुणामयी जगन्माता

गंगा भवकूपमें गिरे हुए अपने बालकोंको देख, ऊर्ध्वलोकसे तत्काल कूद पड़ीं, उन्होंने आघातकी तनिक भी परवाह नहीं की।

दुराचार, असत्यभाषण अभक्ष्य-भक्षण, अस्पृश्य स्पर्शसे होनेवाले तथा ज्ञाताज्ञात-अवस्थामें किये गये समस्त पातक भी गंगास्नानमात्रसे तत्क्षण नष्ट हो जाते हैं।

अनाचारोद्भवं पापमवाच्यादिकृतं च यत्।
अभक्ष्यभक्षजं दोषं दोषमस्पर्शजं तथा॥
ज्ञाताज्ञातकृतं नित्यमिन्द्रियैर्जनितं च यत्।
तत्सर्वं नाशमायाति गङ्गास्नानेन तत्क्षणात्॥

(ब्रह्मपुराण)

जितने क्षणोंतक मानवकी अस्थियाँ गंगाजलमें रहती हैं, उतने सहस्र वर्षोंतक वह स्वर्गलोकमें सानन्द निवास करता है। मृतककी अस्थियोंको गंगाजलमें प्रवाहित करनेका यही प्रयोजन है।

यावदस्थि मनुष्यस्य गङ्गातोयेषु तिष्ठति।
तावद्वर्षसहस्राणि स्वर्गलोके महीयते॥

(स्कन्दपुराण)

सहस्र योजन अर्थात् चार सहस्र क्रोश (कोस)-की दूरीपर रहनेवाले पापी मनुष्य भी गंगा-स्मरणसे परमपदको प्राप्त होते हैं।

योजनानां सहस्रेषु यो गङ्गां स्मरते नरः।
अपि दुष्कृतकर्मासौ लभते परमं पदम्॥

इस संसारके समस्त प्राणियोंके चित्त तापत्रयसे बारम्बार अभिघातको प्राप्त होते हैं। यदि वे उन दुःखोंसे मुक्ति एवं सद्‌गतिकी कामना करते हैं तो उनके लिये भगवती गंगाके समान सद्‌गति देनेवाला अन्य कोई सुलभ साधन नहीं है।

भूतानामिह सर्वेषां दुःखोपहतचेतसाम्।
गतिमन्वेषमाणानां न गङ्गासदृशी गतिः॥

चतुर्मुखसम्पन्न ब्रह्माजी भी गंगास्नानके माहात्म्यका वर्णन नहीं कर सकते, मानवकी तो बात ही क्या है!

गङ्गायां स्नानमाहात्म्यं नालं वक्तुं चतुर्मुखः।

कवियोंकी गंगा

प्रायः सभी प्राचीन एवं अर्वाचीन कवियोंने गंगाकी महिमाका गुण-गानकर अपनी आत्माको शान्ति प्रदान की है। महर्षि वाल्मीकिकी गंगा-स्तुति, पण्डितराज जगन्नाथकृत 'गंगालहरी', कविवर पद्माकररचित 'गंगा-महिमा' एवं आधुनिक हिन्दी-साहित्यके जन्मदाता भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र-लिखित गंगाकी झाँकी महत्त्वपूर्ण हैं। भारतेन्दुजीके हृदयाह्लादक कुछ छन्द नीचे उद्धृत किये जाते हैं—

नव उज्ज्वल जलधार हार हीरक-सी सोहति।
बिच-बिच छहरति बूँद मध्य मुक्तामनि पोहति॥
लोल लहर लहि पवन एक पे इक इमि आवत।
जिमि नर-गन-मन विविध मनोरथ करत मिटावत॥
सुभग स्वर्ग-सोपान सरिस सबके मन भावत।
दरसन-मज्जन-पान त्रिविध भय दूर मिटावत॥
श्रीहरि-पद-नख-चन्द्रकान्त-मणि द्रवित सुधारस।
ब्रह्म कमण्डल मण्डन, भव-खण्डन सुर सरबस॥
शिव-सिर-मालतिमाल, भगीरथ नृपति-पुन्यफल।
ऐरावत गज गिरि-पति हिमनग कण्ठहार कल॥
सगर-सुवन सठसहस परस जल मात्र उधारन।
अगनित धारारूप धारि सागर संचारन॥
कासी कहँ प्रिय जानि ललकि भेंट्यो जग धाई।
सपनेहूँ नहिं तजी रही अंकम लपटाई॥
कहूँ बँधे नव घाट उच्च गिरिवर सम सोहत।
कहुँ छतरी, कहुँ मढ़ी, बढ़ी मन मोहत-जोहत॥
धवल धाम चहुँ ओर फरहरत धुजा पताका।
घहरत घण्टा धुनि धमकत धौंसा करि साका॥
मधुरी नौबत बजत, कहूँ नारी नर गावत।
वेद पढ़त कहुँ द्विज, कहुँ जोगी ध्यान लगावत॥
कहुँ सुन्दरी नहात नीर कर जुगल उछारत।
जुग अम्बुज मिलि मुक्तगुच्छ मनु सुच्छ निकारत॥
धोवति सुन्दरि बदन करन अति ही छबि पावत।
बारिध नाते ससि कलंक मनु कमल मिटावत॥
सुन्दरि ससि मुख नीर मध्य इमि सुन्दर सोहत।
कमल बेलि लहलही नवल कुसुमन मन मोहत॥

दीठि जहीं जहँ जात रहत तितहीं ठहराई।
गंगा छबि हरिचंद कछू बरनी नहिं जाई॥

आरोग्यप्रदायिनी गंगा

हमारे प्राचीन ऋषियोंने गंगाको 'सुधा' कहा है। सुधा शब्दका विवेचन करनेपर प्रतीत होता है कि सुधा उसी परम उपयोगी वस्तुकी संज्ञा है, जिसे मानव सुखपूर्वक ग्रहण करे अथवा व्यवहारमें लाये। प्राणियोंकी प्रकृति, मन और आत्माके सर्वथा अनुकूल होनेके कारण इसकी 'सुधा' संज्ञा सर्वथा सार्थक है; क्योंकि मानव-शरीरके लिये परम पथ्य एवं प्रकृतिके यह अनुकूल है।

आयुर्वेदके मतानुसार गंगाजल शीतल, स्वच्छ, स्वादु, अत्यन्त रोचक, पथ्य, पाचक, पवित्र, तृष्णा एवं मोहनाशक, जठराग्नि तथा बुद्धिवर्धक है।

शीतं स्वच्छं स्वादु अतिरोचकं पथ्यं पाचकं पावनं तृष्णामोहघ्नं दीपनं प्रज्ञाकरं च।—राजनिघण्टु

गंगास्नानका वैज्ञानिक महत्त्व

यों तो किसी भी जलमें मनुष्य स्नान कर सकता है, किंतु सम्पूर्ण रात्रिभर मोह-जननी निद्राकी गोदमें पड़े रहने तथा नाना प्रकारके सुख-दुःखमय स्वप्नोंको देखनेके पश्चात् अपनी चित्तवृत्तिको वशीभूत न रख सकनेके कारण ही प्रातः गंगास्नानका विधान है। स्नानके अनेकानेक गुण होनेपर भी यदि केवल गंगामें अवगाहनका सुयोग प्राप्त हो तो मल-मोह-नाशिनी, बुद्धिवर्धिनी तथा जठराग्निको दीप्त करनेकी गंगाकी अनुपम प्रतिभा एवं शक्तिका सहज ही अनुभव हो सकता है।

वैज्ञानिक दृष्टिमें गंगाजल

स्नानका स्वाभाविक गुण गंगाजलमें विद्यमान है। यदि आप स्नान न भी करें, केवल पीनेमें प्रयोग करें तो भी स्नानके गुण आपके शरीरमें उत्पन्न हो जायँगे। गंगाजल मानव-स्वास्थ्यके हेतु परमोपयोगी एवं आरोग्यदायक है। स्वच्छ, रोचक एवं स्वादु होनेके कारण ही मानव रसना इसे सुगमतासे ग्रहण कर लेती है। शीतल तथा तृष्णा एवं मोहनाशक होनेके कारण ही गंगोदक शारीरिक रक्त-गतिको अधिक उत्तेजित करनेमें समर्थ होता है।

हिमालयकी धातुओं, मणियों तथा दिव्य औषधियोंके मिश्रणसे लम्बी धारामें प्रवाहित होनेके कारण गंगाजल विषनाशक, पुष्टिकर तथा आरोग्यदायक है; क्योंकि लम्बे प्रवाहके कारण गंगाजल अत्यधिक गुणमय हो जाता है। सारांश यह कि जलतत्त्वके सर्व गुण गंगाजलमें पूर्णतया विद्यमान हैं। गंगाजल वस्तुतः अमृत है।

वर्षाऋतु और गंगाजल

वर्षाऋतुमें नदियोंके जलका प्रयोग वर्जित है, किंतु गंगाको छोड़कर। यद्यपि 'वर्जयित्वा सुरापगाम्' ऐसा आदेश है, परंतु अन्य ऋतुओंकी अपेक्षा वर्षामें गंगाजल भी कुछ गुरु, वायुवर्धक एवं मन्दाग्निकारक हो जाता है। अतः व्यवहार करनेके पूर्व उसे निर्मली आदिसे स्वच्छ कर लेना चाहिये! वर्षाऋतुमें अन्य प्रकारके जलप्रयोगसे कुष्ठादि रक्तदोष, चित्तविभ्रम तथा मन्दाग्नि-प्रभृति व्याधियाँ उत्पन्न हो जाती हैं, किंतु गंगाजलमें इतने अधिक गुण विद्यमान हैं कि वर्षाऋतुके कारण जल दूषित होनेपर भी चित्तविभ्रमके रोगी केवल गंगास्नान-मात्रसे रोगमुक्त हो जाते हैं।

भारतीय नदियोंकी विशेषताएँ

भारतकी सभी नदियोंमें भिन्न-भिन्न विशेषताएँ हैं। प्रयाग-संगमपर गंगा-यमुनाके परस्पर मिलनके साथ ही दोनों धाराओंकी दो दिशाओंमें विभक्तता स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। दुग्ध एवं जलकी भाँति मिलकर जलमें एकरूपता नहीं होने पायी है। गंगाजलमें स्वच्छता है तो यमुनाजलमें श्यामलता। इसी प्रकार गंगोत्तरीकी अपनी महत्त्वपूर्ण रासायनिक एवं वैज्ञानिक विशेषता है। गंगोत्तरीके जलमें अग्निमें तप्त करके छोड़ी जानेवाली कोई भी धातु ठण्डी पड़ जायगी। जल नहीं सूख सकता, तौल भी कम नहीं होगी। साधारण जलमें गरम धातु छोड़नेसे अवश्य ही जल सूखेगा। गंगोत्तरीकी यह एक विलक्षणतायुक्त विशेषता है। कभी भी इसकी परीक्षा की जा सकती है। [परमानन्द]

मूर्त शक्ति गंगा माता

(डॉ० श्रीअनन्तजी मिश्र)

सुधांशुकृतशेखरां स्मितमुखीं तुषारप्रभां
सकुम्भवरवारिजाभयकरां वलक्षाम्बराम्।
नदीनदनिषेवितां मकरवाहनारोहिणीं
भये महति सोदरे नतिमुपेत्य गङ्गां श्रये॥

पण्डितराज जगन्नाथ लिखते हैं कि 'हमने एक अद्भुत चमत्कारभरा दृश्य देखा कि यमराजका नगर सूना-सूना पड़ गया है, कहीं कोई कोलाहल, चीत्कार सुनायी नहीं देता। यमराजके दूत इधर-उधर खोजते हुए दौड़ रहे हैं कि कहीं कोई मृतक हाथ लगे। दूसरी ओर स्वर्गलोकका मार्ग विमानोंकी रेल-पेल और भीड़से भरकर सँकरा हो गया है। आखिर यह अनहोनी बात कैसे हो रही है? हो न हो, माँ गंगे! जबसे तुम्हारी कल्याणकारिणी महिमा, पतित-पावनी कथा भूमण्डलपर फैली है, तभीसे ऐसा अद्भुत होने लगा है।'

पण्डितराज यह बतलाना चाहते हैं कि जब महिमामयी गंगाका नाम और प्रभाव ही एक भी मृतकको यमलोक नहीं जाने देता; विमानोंमें बैठाकर सीधे स्वर्गका टिकट कटवा रहा है तो फिर साक्षात् मूर्तिमती गंगाका सान्निध्य, स्पर्श, पवित्र जलमें उन्मज्जन-निमज्जन, जलका प्राशन, प्रणाम और पूजनका जिनको सौभाग्य प्राप्त होता हो, उनके पुण्य और स्वर्गलाभकी बात ही क्या है! सचमुच ही भगवती गंगाकी महिमा अपार है। जिन्हें किसी प्रकारसे भी मुक्ति सुलभ नहीं, उन निराश, पामर, कुपात्र, घोर पापीजनोंके समस्त कलुषको धोनेकी अपार शक्ति यदि किसीमें है तो वह प्रत्यक्ष मूर्त शक्ति भगवती गंगामें ही है।

पृथ्वीलोक, भरतखण्डमें गंगा दो प्रवाहोंमें प्रवाहित हो रही हैं। एक—विन्ध्य-पर्वतके उस पारकी गंगा, जिसे 'गोदावरी' कहा जाता है। इन्हें कुछ लोग 'गौतमी गंगा' भी कहते हैं; क्योंकि गौतम ऋषिने भगवान् शंकरसे प्रार्थना करके इन्हें पृथ्वीपर आनेका अनुरोध किया था। दूसरी—विन्ध्यपर्वतके इस पार हिमालयसमुद्भूता भागीरथी गंगा, जिनकी स्थिति उत्तर भारतमें है। महाराज सगरके पुत्र भगीरथकी कठोर तपस्यासे प्रसन्न होकर संसारके दीनों, कुपात्रों, घोर पापियोंके परम हित और कल्याणकी दृष्टिसे तथा भगीरथद्वारा अपने पूर्वज सगरके साठ हजार पुत्रोंके उद्धार-हेतु इनका अवतरण धराधामपर हुआ। दोनों ही गंगाओंको दो तपस्वियों—गौतम और भगीरथके तपसे संतुष्ट—प्रसन्न होकर चन्द्रचूड भगवान् शिवने उन्हें अपने जटाजूटमें चिर-आश्रय प्रदानकर धन्य किया।

गंगा भगवान् विष्णुका चरणोदक हैं। वे श्रीहरिके चरणकमलोंसे आविर्भूत होकर आशुतोष शंकरके जटाजूटमें अवस्थित हैं। पश्चात् वहाँसे निकलकर स्वर्ग, पृथ्वी, पाताल—तीनों लोकोंमें तीन धाराओंमें प्रवाहित होती हुई देव, दानव, मानव और नाग-किन्नर आदि सभीका कल्याण करनेके लिये सदावर्त खोले हुए सतत सन्नद्ध हैं। वास्तवमें विचार करके देखा जाय तो भगवद्-चरणारविन्दोंकी उत्पत्तिमूलकता ही भगवतीको भेद-भावोंसे मुक्त, निरपेक्ष रखते हुए समान रूपसे सबके कल्याणका महान् हेतु सिद्ध करती है। गंगाकी कथा, गंगाकी महिमा, भक्ति-शक्तिकी ही कथा और महिमा है।

गंगादेवीके यहाँ कोई पूर्वाग्रह या शर्त नहीं है। किसी भी प्रकारसे, किसी भी अवस्थामें, किसी भी तरहका पापी-से-पापी व्यक्ति या जीव उनका दर्शन, स्पर्श और परम पावन जलमें स्नान तथा पान करके पवित्र और शुद्ध होता है, इसमें सन्देह नहीं है। पण्डितराज जगन्नाथ भगवती गंगाकी स्तुति करते हुए एक स्थानपर लिखते हैं—

प्रभाते स्नान्तीनां नृपतिरमणीनां कुचतटी-
गतो यावन्मातर्मिलति तव तोयैर्मृगमदः।
मृगास्तावद् वैमानिकशतसहस्रैः परिवृता
विशन्ति स्वच्छन्दं विमलवपुषो नन्दनवनम्॥

'माँ गंगे! प्रातःस्नान करते समय नृप-रमणियोंके वक्षपर अंकित मृग-मद (कस्तूरी)-का ज्यों ही तुम्हारे जलसे संस्पर्श होता है, त्यों ही उस कस्तूरीके आकर मृग हजारों विमानवाहकोंके साथ दिव्य-देह धारणकर नन्दनवनमें प्रवेश कर जाते हैं।' क्या मृगोंकी यह मुक्ति कविके मुक्त चिन्तनमें गंगाकी अमोघ मुक्तिदात्रीशक्तिका प्रमाण नहीं है? गंगाका उद्‌गम वस्तुतः भगवान्‌की विगलित करुणाका ही अवतरण है। प्रतीत होता है मानो भगवती महाशक्तिमें निहित वात्सल्यस्नेहसम्पृक्त अजस्र करुणा-जलधारा ही गंगाके रूपमें साकार हुई है, जो मानवमात्रके लिये अमूल्य वरदान है।

भगवती गंगा शक्तिरूपा हैं। शक्तिमें उत्पत्ति, स्थिति, (पालन) और संहार करनेकी शक्ति होती है। ये लोकोत्तर शक्तियाँ इनमें भी हैं। स्कन्दपुराण (काशीखण्ड)-में गंगाकी स्तुतिमें 'उत्पत्ति-स्थिति-संहारकारिणी, उपरिचारिणी' आदि विशेषण दिये गये हैं। अन्यत्र भी गंगाकी महिमा, शक्ति-देवीकी महिमाका पर्याय बताया गया है। इससे प्रमाणित है कि गंगा और शक्तिरूपा अन्य देवियोंमें तत्त्वतः भेद नहीं है। ब्रह्मकान्ता भगवती गंगाका शक्तित्व उनकी भुक्ति-मुक्ति-भक्तिप्रदायिनी परमाशक्तिमें सदैव जीवन्त और जाग्रत् है। श्रीभगवान्‌के चरणारविन्दोंका अतुलित परम प्रेममय प्रताप त्रैलोक्यको पवित्र करनेके लिये पवित्रतम जलधाराओंके रूपोंमें प्रकट हुआ है। यह वास्तवमें भगवान्‌की दिव्य भक्ति-शक्तिका ही प्राकट्य है।

देवीभागवतके अनुसार गंगा विष्णुपदी, विष्णुस्वरूपा हैं। भारत-भू-खण्डमें उनके पदार्पणका हेतु सरस्वतीका शाप है। नारदजीके प्रश्न करनेपर भगवान् नारायण सगरके पुत्रोंकी चर्चा करते हैं और कपिलके शापसे राख हो जानेके बाद उनकी मुक्तिहेतु गंगाके अवतरणके सन्दर्भमें भगीरथके प्रयत्नका उल्लेख करते हैं। भगवान् श्रीकृष्णके आदेशसे ही गंगाको भारतवर्षमें आना पड़ा, इसका उल्लेख भी वहाँ किया गया है। स्वयं श्रीभगवान्‌ने व्यवस्था दी है कि 'भारतवर्षमें मनुष्योंद्वारा उपार्जित करोड़ों जन्मोंके पाप गंगाकी वायुके स्पर्शमात्रसे नष्ट हो जायँगे। इतना ही नहीं, गंगाकी धारामें यदि किसीकी अस्थिका एक टुकड़ा भी पड़ जायगा तो जबतक उसके जलमें अस्थिका अधिवास रहेगा, उतने कालतक उससे सम्बन्धित जीव वैकुण्ठपदका अधिकारी बना रहेगा।'

गंगाके स्वरूपका जो वर्णन श्रीमद्देवीभागवतमें प्राप्त होता है, उससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि शास्त्र गंगाको 'शक्ति'का ही पर्याय मानते हैं। उनकी उत्पत्ति-कथाका उल्लेख इस रूपमें हुआ है—एक बार भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र कार्तिककी पूर्णिमाके अवसरपर रास-महोत्सव मना रहे थे। रासमण्डलमें श्रीकृष्ण विराजमान थे। इस अवसरपर श्रीहरिकी प्रसन्नता-प्राप्ति-हेतु भगवती सरस्वती प्रकट हुईं और उन्होंने अपनी दिव्य वीणासे समस्त वातावरणको झंकृतकर रस-विभोर कर दिया। प्रसन्न होकर सभी प्रधान देवी-देवताओंने उन्हें पुरस्कृत किया। उसी समय ब्रह्माकी प्रेरणासे भगवान् शंकरने श्रीकृष्ण-विषयक काव्य रचकर सुनाना आरम्भ किया। उस काव्यके अद्भुत प्रभावसे सभी देवता मूर्च्छित-से हो गये। वहाँ देखा गया कि रास-मण्डलका सम्पूर्ण स्थल जलसे आप्लावित हो गया है और श्रीराधा तथा श्रीकृष्ण अदृश्य हैं। ब्रह्माजीने ध्यान किया तो भविष्यवाणी हुई—'मैं सर्वात्मा श्रीकृष्ण और मेरी निज स्वरूपाशक्ति राधा—दोनोंने ही भक्तोंपर अनुग्रह करनेके लिये यह जलमय विग्रह धारण कर लिया है।' इस प्रकार गंगा श्रीभगवान् और उनकी अभिन्न स्वरूपाशक्तिका द्रवमय (जलमय) स्वरूप हैं। इस प्रकार वे शक्ति और शक्तिमान्‌की मिश्रित मूर्त-शक्ति हैं।

इसीलिये गंगाको भगवान्‌की जलमयी शक्ति और पृथ्वीको क्षमामयी शक्ति कहा जा सकता है। गंगा भी भगवान्‌की प्रकृतियोंमेंसे एक हैं, उनका प्राकट्य साक्षात् श्रीहरिके श्रीविग्रहसे ही हुआ है, अतः उनमें तथा भगवान्‌में भेद-बुद्धि रखना सर्वथा अनुचित और निंदनीय है।

देवीभागवतके अनुसार प्रकृतिकी मूलशक्ति

गणेशजननी आदि प्रमुख पंचशक्तियोंकी अंशभूता शक्तियोंके प्रधान अंशसे गंगाका आविर्भाव वर्णित है। इस प्रकार माता गंगा एक 'शक्ति'-स्वरूपा सिद्ध होती हैं। कारण, दर्शनकारोंका सिद्धान्त है कि उपादान-कारणके गुण कार्यमें आते हैं। अतएव निर्विकार आदिकी अंशभूता गंगाकी शक्तिरूपता सुप्रमाणित है।

गंगाकी महिमाका तो कहना ही क्या, वाल्मीकि, व्यास प्रभृति भारतके महामनीषी कवियोंकी सुपरम्परासे लेकर आजतक गंगाके विषयमें सहस्रों सुललित पवित्र स्तोत्र रचे गये हैं और सर्वत्र गंगाकी अतुलनीय महिमा और करुणाका निर्मल सुयश (स्तवन) प्राप्त होता है। गंगाके किनारेके महान् तीर्थ, उसके तटोंपर स्थित महान् ऋषियोंके आश्रम तथा उसके जलमें निहित अपार गुणवत्ताएँ गंगाको विशिष्ट नदी ही नहीं, पवित्रतम कल्याणदात्री देवीके रूपमें मान्यता प्रदान करती हैं। सनातन हिन्दू-मनीषा तो यही मानती है कि गंगा हमारी और सबकी माँ हैं, जो गोमाताकी भाँति हमारे परम कल्याणके उद्देश्यसे ही हरि-प्रेरणावश भूमंडलपर अवतरण लेकर सर्वसुलभ हुई हैं।

वास्तवमें गंगा गोलोक या विष्णुलोकमें भगवान् श्रीहरिकी ही एक स्वरूपा शक्ति हैं। पृथ्वीपर उनके अवतरणके अनेक कारण पुराणोंमें कथित हैं। प्राय: वे सब कारण पुराणोंके कथा-प्रसंगोंसे पूर्णतया तादात्म्ययुक्त हैं। उनमें परस्पर अन्तर है, पर वे चाहे भगीरथजीके कारण हों या देवताओंके अथवा सरस्वतीके—सभी एक दूसरेसे सम्बद्ध हैं। **'य: कल्प: स कल्पपूर्व:'**—इस सूत्रमें सबका सामंजस्य हो जाता है। उसकी यहाँ विशेष चर्चा करनेका न तो उद्देश्य है और न प्रासंगिक आवश्यकता। शास्त्रोंसे प्रमाणित सत्य यह है कि जैसे अन्य देवियाँ शक्तिस्वरूपा हैं, उसी प्रकार माता गंगा भी साक्षात् श्री-शक्तिस्वरूपा हैं और उनकी आराधना, उपासनाका फल भी वही है, जो भगवती शक्तिके अन्य स्वरूपोंकी आराधना और उपासनासे प्राप्त होता है। गंगाके साथ एक विशेषता अधिक है कि इस देवीका

स्वरूप इस कलिकालमें भी पूर्णतया प्रत्यक्ष और सर्वसुलभ है।

हिंदू-सनातनपरम्परामें गंगाकी महिमा सर्वविदित है। आस्तिकजन इन्हें अशरण-शरण्या, मुक्तिदायिनी, परम-कारुण्यमयी और तीर्थोंकी जननीके रूपमें जानते और मानते हैं। भारतवर्षमें गंगाकी उपस्थिति कोटि-कोटि भारतीयोंकी धन्यताका प्रतीक है। गंगा, गीता, गायत्री, गणपति, गौरी और गोपालके पुण्य-स्मरणमात्रसे हिन्दू-मन सर्वथा पवित्र, मंगलमय और कल्याणकारी भावोंसे भर जाता है। कहा जाता है कि जो मानव इनका प्रात: स्मरण करते हैं, वे संसारके समस्त बन्धनोंसे मुक्त हो जाते हैं। लोकमें ऐसी उक्ति प्रचलित है—

गंगा, गीता, गायत्री, गणपति गौरि गुपाल।
प्रातकाल जो नर भजैं, ते न परैं भव-जाल॥

देवीभागवतमें श्रीगंगाका जो ध्यान वर्णित है वह इस प्रकार है—भगवान् नारायण कहते हैं—'नारद! इनका ध्यान सम्पूर्ण पापोंको नष्ट कर देता है। गंगाका वर्ण श्वेत कमलके समान स्वच्छ है। वे समस्त पापोंका उच्छेद कर देती हैं। पूर्णतम परब्रह्म भगवान् श्रीकृष्णके श्रीविग्रहसे इनका प्राकट्य हुआ है। ये परम साध्वी उन्हींके समान सुयोग्य हैं। चिन्मय वस्त्र इनकी शोभा बढ़ाते हैं। रत्नाभूषणोंसे विभूषित एवं शरत्पूर्णिमाके सैकड़ों चन्द्रमाओंके समान शीतल प्रकाशवाली इन देवीके तरुण मुखपर मुस्कान खेलती रहती है। तारुण्यकी साक्षात् देवी भगवती गंगाके शीशपर अलकावलि सुशोभित है। मालतीके पुष्पोंसे इनकी शोभा निरन्तर बढ़ती रहती है। इनके ललाटपर अर्धचन्द्राकार चन्दन लगा है और ऊपर सिन्दूरकी बेंदी है। दोनों मनोहर अधरोष्ठ पक्व बिम्बफलकी भाँति अरुण हैं। मनोरम दंतपंक्तियोंके कारण इनकी शोभा अतुलनीय है। श्रीफलके समान स्तनोंसे विभूषित, भूपद्मके समान चरणोंवाली, मकरवाहिनी भगवती गंगाका सौंदर्य अतीव दिव्य है। उनका यह ध्यान भुक्ति-मुक्ति प्रदान करनेमें सर्वथा समर्थ है। भगवती गंगाकी मूर्तिका विधिवत् षोडशोपचार पूजन

करनेवाला व्यक्ति सभी पापोंसे मुक्त हो जाता है। वह इस जीवनमें सुख पाकर बादमें हरिचरणोंकी भक्ति और मुक्ति प्राप्त कर लेता है।'

गंगा, गायत्री, गौ—ये तीन शक्तियाँ आर्ष-धर्मकी आधार-भित्तियाँ हैं। इनके बिना भागवत-धर्मका पूर्ण निर्वाह सम्भव नहीं। गंगा तुलसीकी भाँति वैष्णवोंके लिये मातृस्वरूपा हैं और सबके लिये परम-पावनी मुक्तिदात्री महाशक्ति। गंगाके किनारे किये गये यज्ञ, जप, तप, दान, होम आदिका अनन्तगुना फल होता है—ऐसा शास्त्र स्वीकार करते हैं। गंगा भारतवर्षके लिये मात्र एक पवित्र नदी ही नहीं, अपितु वे सब प्रकारसे प्राणोंसे बढ़कर हैं। भक्ति और मुक्तिकी योग्यता उत्पन्न करनेमें गंगाके प्रभावका कोई विकल्प नहीं है। भगवती गंगाका माहात्म्य और प्रताप महान् है। वे दुर्लभ-से-दुर्लभ गति प्रदान करनेमें सहज ही समर्थ हैं। तभी तो पण्डितराज जगन्नाथ कहते हैं—

महादानैर्ध्यानैर्बहुविधविधानैरपि च यत्
न लभ्यं घोराभिः सुविमलतपोराशिभिरपि।
अचिन्त्यं तद्विष्णोः पदमखिलसाधारणतया
ददाना केनासि त्वमिह तुलनीया कथय नः॥

'महान् दान, ध्यान, अनेक प्रकारके साधन, अनेक प्रकारके कष्टकारक तप आदिसे भी जो विष्णुपद दुर्लभ है, उसे जो गंगा साधारण-से-साधारण जनको भी अपनी कृपाशक्तिसे प्रदान करती हैं, उनकी तुलना भला, अन्य किसीसे कैसे की जा सकती है?' लोक-परलोक-निर्मात्री ऐसी गंगामाताको सश्रद्ध शत-शत बार नमन!

गंगा एवं उसके अन्य अभिधानोंका नामकरण

(डॉ० श्रीशरद् चन्द्रजी पेंढारकर)

भारतीय संस्कृतिकी प्रतीक गंगा नदी हर भारतीयके रोम-रोममें, श्वास-प्रश्वासमें विराजमान है। ऐसा शायद ही कोई भारतीय होगा, जिसके चित्तमें गंगाका नाम-स्मरण करनेपर भक्तिकी तरंगें-हिलोरें न उठती हों। जितनी श्रद्धा, भक्ति एवं आस्था इस नदीके प्रति है, विश्वकी किसी भी नदीके प्रति ऐसे भक्तिभाव जाग्रत् नहीं होते हैं। पतितपावनी, कलिमलहारिणी, मोक्षदायिनी आदि विभूषणोंसे मण्डित इस नदीका स्थान पुण्यतोया नदियोंमें सर्वोपरि है। तीनों लोकोंमें पूजनीय इस नदीका उद्गम उत्तराखण्डके प० कुमाऊँ क्षेत्रमें टेहरी गढ़वाल जिलेमें समुद्रसतहसे लगभग ७०१६ मीटर ऊँचाईपर स्थित गंगोत्री हिमनदसे २९ कि०मी० दूरीपर गोमुखसे हुआ।

उद्गम-स्थलपर गंगाका प्रवाह बहुत ही छोटा है, किंतु आगे वह तीव्रतर होता जाता है। अनेक छोटी-बड़ी नदियोंको अपनेमें समाहित करके तटवर्ती अनेक शहरोंको पावन करती हुई लगभग २५२५ कि०मी० की यात्रा तय करके वह स्वयंको गंगासागर-स्थलमें बंगालकी खाड़ीमें विलीन कर देती है।

नामोंका औचित्य

नदियोंके नाम उनके विशिष्ट शब्दगत अर्थ एवं गुणधर्मको लेकर प्रवृत्त होते हैं। इस सम्बन्धमें प्रसिद्ध पाश्चात्य विद्वान् मैक्समूलरके विचार मननीय हैं। उनका कथन है—'वैदिक सूक्तोंमें तथा नदियोंसे सम्बन्धित ऋचाओंमें चर्चित नदियोंको फिर वे छोटी हों या बड़ी अलग-अलग नाम दिये गये। सभी प्रदेशोंके निवासी यह अनुभव करते थे कि अपने उद्गम-स्रोतसे लेकर अन्ततक नदीका कोई-न-कोई नामकरण किया जाना चाहिये।' इसे नदियोंके नामकरणका आधार कहा जा सकता है।

नामकरण—स्कन्दपुराण (काशी० पूर्वार्ध २९वाँ अध्याय) एवं वराहपुराण (१४४वाँ अध्याय)-में गंगाके एक सहस्र नाम दिये गये हैं, किंतु उनमेंसे कुछ ही प्रचलित हैं। इन नामोंके बारेमें कहा गया है कि जो

व्यक्ति इन्हें भक्तिपूर्वक पढ़ता है, उसके ब्रह्महत्या आदि पाप नष्ट हो जाते हैं। महाभारत (अनु० पर्व २६। ८४-८५)-में उल्लिखित गंगाके नाम एवं विशेषण उसके गुह्य आध्यात्मिक रूपके द्योतक हैं। आइये, गंगानदीके प्रचलित कुछ नामोंके नामकरणकी पृष्ठभूमि एवं व्युत्पत्तिलब्ध अर्थ जाननेका प्रयास करें—

गंगा—गंगाके प्रति भारतीयोंकी पूज्य भावना होनेसे 'गंगा' शब्द 'नदीमात्र' का पर्याय बन गया है। कई नदियोंके नामोंमें निहित 'गंगा' शब्द 'नदीमात्र' का निदर्शक है। इससे निश्चय ही उस नदीकी प्रतिष्ठा बढ़ती है। ऐसे कुछ नाम हैं—रामगंगा, ऋषिगंगा, कालीगंगा, धौलगंगा, बाणगंगा, दूधगंगा, पिण्डरगंगा आदि।

गंगाकी प्रकृति है—सदा गमन करना, गतिशील बने रहना। 'गंगा' शब्द गमनार्थक गम् धातुमें औणादिक गन् व टाप् प्रत्यय लगनेसे बनता है। इसकी कई व्याख्याएँ हैं—**'गमयतीति गङ्गा'** या **'गाङ्गता इति गङ्गा'** (जो गमनशील रहती है, वह 'गंगा' है।) **'गां पृथ्वीं गता इति गङ्गा'** या **'गम् अव्ययं स्वर्गं गमयतीति गङ्गा'** (जो पृथ्वीपर आती है या जो स्वर्गकी ओर ले जाती है (तारती है), वह 'गंगा' है। इसी अर्थवाली एक अन्य व्याख्या है—**'गम्यते प्राप्यते मोक्षार्थिभिरिति गङ्गा।'** (जहाँ मुमुक्षु मृत्युकी प्राप्तिकी इच्छासे जाते हैं, वह 'गंगा' है।) इसके कुछ अन्य निर्वचन हैं—**'गमयति भगवत्पदमिति'** या **'गम्यते प्राप्यते'** (जो (स्नानादिद्वारा) भगवत्प्राप्तिकी ओर ले जाती है।) तथा **'गमयति प्राणिनम् विशिष्टस्थानमिति'** (प्राणियोंको विशिष्ट स्थानमें जो पहुँचाती है।)

भागीरथी—राजा भगीरथद्वारा गंगाको स्वर्गसे भूलोकमें लानेके कारण उसे यह अभिधान प्राप्त हुआ (देवीभाग० ९। ६। ५१)। महाभारत (वन० १०९। १८)-में भगीरथको गंगाका पिता सम्बोधित किया गया है—**'दुहितृत्वे च नृपतिर्गङ्गाम्।'** 'भगीरथ' शब्दमें अण् एवं टाप् प्रत्यय लगकर 'भागीरथी' शब्द निष्पन्न हुआ। इसकी व्याख्याएँ हैं—**'भगीरथस्य इयम्'** तथा **'भगीरथेन आनीता तत्सम्बन्धिनी वा।'**

जाह्नवी—जिस प्रकार राजा भगीरथके कारण गंगाको 'भागीरथी' की संज्ञा प्राप्त हुई, उसी प्रकार जह्नु मुनिकी अपत्य मानी जानेसे गंगा 'जाह्नवी' नामसे ख्यात हुई। पौराणिक कथाके अनुसार गंगा नदी जब राजा भगीरथके रथके पीछे-पीछे आ रही थी तो रास्तेमें जह्नु मुनिका आश्रम पड़ा। नदीके तेज प्रवाहने मुनिकी यज्ञभूमिको क्षतिग्रस्त कर डाला। इससे तपस्यारत मुनिका ध्यान भंग हो गया। मारे क्रोधके उन्होंने गंगाका प्राशन किया। भगीरथद्वारा उन्हें गंगाके सुरलोकसे भूलोकमें लानेका प्रयोजन बताने एवं अनुनय-विनय करनेपर उनका क्रोध शान्त हुआ। उनके द्वारा जंघासे गंगाको बाहर निकालनेपर वह पुनः बहने लगी। मुनिद्वारा आश्रय देनेसे गंगा पुत्रीके समान हुई —**'दुहितृत्वेन जाह्नवीम्'** (वायुपुराण ९१। ५५) और 'जाह्नवी' कहलायी। **'जह्नोरपत्यम्'** विग्रहकर 'जह्नु' शब्दसे 'अण्' प्रत्ययके योगसे 'जाह्नवी' शब्दकी निष्पत्ति होती है। 'हा' (छोड़ना) धातुसे 'नु' प्रत्यय, द्वित्व तथा अन्तलोप करनेपर 'जह्नु' शब्द निर्मित हुआ। इसकी व्याख्या है—**'जनान् संहारसमये अपह्नुते।'** यानी संहारके समय जनों (प्राणियों)-का अपह्नव (दूर ले जाने या परमपदमें पहुँचाने)-के कारण मुनि 'जह्नु' कहलाये। इसकी एक अन्य व्याख्या है—**'जं जनं ह्नुते तिरोभावं नयति इति जह्नुः।'**

विष्णुपदी—'विष्णुपदी' शब्द 'विष्णु' और 'पदी' इन दो शब्दोंका संयुक्त रूप है, जिसका शाब्दिक अर्थ है—विष्णुके पदसे निकलनेवाली। श्रीमद्भागवत-महापुराण (पंचम स्कन्ध)-में वर्णित एक कथाके अनुसार वामनावतारमें श्रीविष्णुने वटु वामनके रूपमें राजा बलिसे तीन पग भूमि देनेका वचन लेकर एक पगको जब अन्तरिक्षमें रखा, तो पादक्षेपसे ब्रह्माण्डमें विवर (छिद्र) होकर जलधारा बह निकली, जो बादमें 'विष्णुपदी' कहलायी। एक किंवदन्ती है कि ब्रह्माके कमण्डलुसे

निकला जल जब विष्णुदेवके पद (पैर)-के पास पहुँचा, तो पदसे नदीकी जो धारा बहने लगी, उसे 'विष्णुपदी' नाम मिला। इसकी तीन व्याख्याएँ हैं—'**पादाङ्गुष्ठादुदिता विष्णुपदी**', '**विष्णुपादेन देवी विश्वशिरःस्थिता**' और '**विष्णुपादाब्जसम्भूता**।' 'विष्णु' शब्दके निर्माणमें विष् धातु (व्याप्त या विस्तारित होना)-में नुक् प्रत्ययका योग है। इसकी व्याख्या है—'**वेवेष्टि इति**।' 'वि' पूर्वक 'अश्' धातु (अन्तर्भेद करना)-में नुण् प्रत्यय लगकर इस शब्दके बननेका अनुमान है। पृथ्वीलोक, द्युलोक और अन्तरिक्ष इन तीन लोकोंमें व्याप्त होनेके कारण वे 'विष्णु' कहलाये। पद् धातु (जाना, हिलना-डुलना)-में ङीप प्रत्ययके योगसे बने 'पदी' शब्दका 'विष्णु' शब्दसे मेल होनेसे 'विष्णुपदी' शब्दका निर्माण हुआ। इसका निर्वचन है—'**विष्णुरूपा हि सा गंगा लोकविस्तारकारिणी**।'

अलकनन्दा—गंगाका यह एक आद्य प्रवाह है। वायुपुराण (४१।१८)-में गंगाकी चार धाराओंमें एक धाराके रूपमें इसका उल्लेख मिलता है, किंतु यह एक स्वतन्त्र नदी भी है, जिसका उद्भव अलकापुरी पर्वतपर सतोपथके हिमनदोंसे होता है।

गंगाके 'अलकनन्दा' नाम पड़नेका सम्बन्ध राजा भगीरथद्वारा गंगाको इस लोकमें लानेके प्रसंगसे है। भगीरथकी कठोर तपस्यासे प्रसन्न हो भगवान् शंकरने अपनी जटाके अलक (केश)-की लटको जब खोला, तो उसमेंसे जलकी धारा बहकर राजाका अनुगमन करने लगी। 'अलकनन्दा' में निहित 'अलक' शब्द इसी तथ्यकी ओर इंगित करता है। 'अलक' शब्दके मूलमें अल् धातु (भूषित करना) है। इसी धातुसे आभूषण वाची 'अलंकार' शब्द भी बना है। अल् धातुमें क्वुन् एवं अक् प्रत्ययका मेल होकर व्युत्पन्न 'अलक' शब्दने केश या बाल अर्थ ग्रहण किया। 'नन्दा' शब्दका अर्थ है—आनन्द देनेवाली। 'आनन्दित करना' अर्थवाची 'नन्द्' धातुमें अच् एवं टाप् प्रत्यय जुड़कर 'नन्दा' शब्द सिद्ध हुआ। इसका निर्वचन है—'**अलति नन्दयति च अलकनन्दा**।'

मन्दाकिनी—'मन्दाकिनी' नामकी एक अन्य नदी भी है, किंतु मूलतः वह पुण्यतोया गंगाकी धारा है। यह पहले स्वर्गमें थी। (वायुपुराण अ० ४२) स्कन्द-पुराण (काशीखण्ड)-में 'गंगादशहरा' स्तोत्रमें तथा रघुवंश (१३।४८)-में गंगाके लिये 'मन्दाकिनी' नाम प्रयुक्त है।

'मन्दाकिनी' नाम इसके मन्द-मन्द बहनेका परिचायक है। कालिदासने 'रघुवंश' में इसे '**स्तिमित-प्रवाहा**' बताया है। नदीका मन्दाकिनी नाम इसके मन्द बहनेका द्योतक है। मन्द् धातुमें अकच् प्रत्यय लगनेपर यह 'धीमी बहनेवाली' होनेका बोध कराती है। इसका निर्वचन है—'**मन्दम् अकितुं शीलमस्याः**' (मन्द गतिसे बहना जिसकी प्रवृत्ति है।) समतल भूभागमें मन्द गतिसे बहनेके कारण इसका यह नाम पड़ा। इसकी एक अन्य व्याख्या है—'**मन्दाकिनी मन्दानि स्रोतांसि सन्ति यस्याः इति मन्दाकिनी**।'

हरिप्रिया—पौराणिक ग्रन्थोंमें गंगाका भगवान् विष्णुकी पत्नीके रूपमें उल्लेख मिलता है। गंगाका 'हरिप्रिया' नाम उनकी प्रिय पत्नी होनेका परिचायक है। 'हरि' भगवान् विष्णुका एक अन्य नाम है। यह शब्द हरण करना अर्थवाली 'हृ' धातुमें इन् प्रत्यय करके बनता है। दूसरोंका मन हरनेवाला 'हरि' हुआ। 'प्री' धातु (तृप्त करना)-में 'क' के जुड़नेसे तैयार शब्द 'प्रिय' ने जिसके प्रति अधिक प्रीति या प्रेम हो, यह अर्थ ग्रहण किया। इस शब्दमें स्त्रीवाची 'टाप्' प्रत्यय लगनेसे 'प्रिया' शब्द सिद्ध हुआ।

त्रिपथगा—'त्रिपथगा' शब्दका अर्थ है—तीन पथोंकी ओर गमन करनेवाली। वाल्मीकि रामायण (१।४४।६)-में आता है कि राजा भगीरथ गंगाको तीन धाराओंमें बहनेको कहते हैं। वे यह भी कहते हैं कि इससे तुम 'त्रिपथगा' नाम पाओगी—'**गङ्गा त्रिपथगा नाम दिव्या भागीरथीति च। त्रीन् पथो भावयन्तीति तस्मात् त्रिपथगा स्मृता**॥' रघुवंशमें इसका उल्लेख

'त्रिस्रोता' रूपमें मिलता है। पद्मपुराण (उत्तर० अध्याय २२)-के अनुसार भगवान् शंकर जटा खोलकर गंगाको तीन धाराओंमें प्रवाहित कराते हैं; तदनुसार ये तीन धाराएँ स्वर्गलोक, पाताल और मर्त्यलोकमें जाती हैं। स्वर्गलोकमें वह 'स्वर्गङ्गा', मर्त्यलोकमें 'भागीरथी' और पाताललोकमें 'पातालगंगा' कहलायी। इन लोकोंमें वह क्रमशः देवताओं, मानवों एवं नागोंको तारती है—'**क्षितौ तारयते मर्त्यान् नागांस्तारयतेऽप्यधः। दिवि तारयते देवान् तेन त्रिपथगा स्मृताः।**'

'त्रिपथगा' शब्दकी रचना त्रि+पथ+गाके रूपमें होती है। 'त्रि' का अर्थ है—तीन और 'पथ' का अर्थ है—रास्ता। यह शब्द 'पथ्' धातु जिसका अर्थ रास्ता तय करना होता है में घञर्थे 'क' लगनेसे बनता है। 'गा' शब्द 'गम्' धातु (जाना)-से व्युत्पन्न है। उसका अर्थ है—'जानेवाली।' इस तरह तीन मार्गों—तीन लोकोंकी ओर जानेसे यह नाम सार्थक कहा जा सकता है।

'त्रिस्रोता' का अर्थ भी लगभग वही है। इस शब्दके मूलमें 'स्रु' धातु है, जिसका अर्थ है—बहना। इसमें विस्तार करना अर्थवाली तन् धातु और 'तीन' अर्थवाले 'त्रि' शब्दका योग होकर 'त्रिस्रोता' शब्द तैयार हुआ।

सुरसरि—स्वर्गलोकमें देवताओंका वास है। इस लोकमें गंगाके प्रवाहित होनेसे उसे 'सुरसरि' एवं 'स्वर्गङ्गा' ये नाम प्राप्त हुए। 'सुरसरि' 'सुरसरिता' का संक्षिप्त रूप है, जिसका अर्थ है—सुरों यानी देवताओंकी सरिता या स्वर्गकी नदी। 'श्रीरामचरितमानस' में इस शब्दका प्रयोग देखनेको मिलता है। कविवर तुलसीदासजीने कीर्ति, ऐश्वर्य एवं कविताको 'सुरसरि' के समान श्रेष्ठ एवं उपयोगी बताया है—

कीरति भनिति भूति भलि सोई। सुरसरि सम सब कहँ हित होई॥

(रा०च०मा० १।१४।९)

'सरिता' शब्द गत्यादि अर्थवाली 'सृ' धातुमें 'इति' के मेलसे बनता है, जिसने पहले 'बहता हुआ' और बादमें 'नदी' अर्थ ग्रहण किया। 'रा' धातु (देना)-में सुन्दर या अच्छी रीतिसे अर्थवाची 'सु' जुड़कर 'सुर' शब्द निर्मित होता है। इसकी व्याख्या है—'**सुष्ठु राति ददाति अभीष्टम् इति**' (जो उत्तम रीतिसे अभीष्टको प्रदान करे।) देवता प्रसन्न होनेपर भक्तोंकी मनोकामना पूरी करते हैं। इस कारण उनके लिये 'सुर' शब्द प्रयुक्त हुआ।

'स्वर्गङ्गा' नाम गंगाके स्वर्गकी नदी होनेका बोध कराता है। यह शब्द 'स्वर्ग' और 'गंगा' के परस्पर मेल होनेसे बनता है। भाषाशास्त्रके एक नियमके अनुसार जब दो वर्ण समीप आयें, तो उनमेंसे एकका लोप हो जाता है। यहाँ 'ग' वर्णकी द्विरुक्ति होनेसे एक 'ग' का लोप होकर 'स्वर्गगंगा' का 'स्वर्गंगा' हो गया। 'स्वर्ग' शब्दकी रचना 'जाना' अर्थवाची 'ऋ' धातुमें शोभनार्थक सुपूर्वक घञ् प्रत्ययके योगसे होती है। एक दूसरी व्युत्पत्तिके अनुसार 'स्वृ' धातु (गान करना)-में 'विच्' प्रत्यय जुड़कर 'स्वर्ग' शब्द निर्मित होता है। इसकी व्याख्या है—'**स्वृयते स्वर्यते गीयते च इति स्वर्गः**' या '**स्वरितं गायते इति स्वर्गः।**' यानी जिस स्थानपर गान (या ध्वनियुक्त गान) होता है, वह स्वर्ग है। स्वर्गमें ऋचाओं सूक्तोंद्वारा देवताओंका प्रशस्ति-गान होनेसे 'स्वर्ग' कहना सार्थक ही होगा।

पातालगंगा—त्रिभुवनोंमें अन्तिम पाताललोक है, जहाँ नागोंका वास है। यहाँ गंगानदीके बहनेसे उसे 'पातालगंगा' की संज्ञा प्राप्त हुई। '**पतन्ति अस्मिन् दुष्क्रियावन्तः अधर्मेण वा**' विग्रहकर पत् धातु (गिरना)-में आलञ् प्रत्यय जुड़कर 'पाताल' शब्द सिद्ध हुआ। '**पादस्य तले इति पातालः**'—ऐसा इसका निर्वचन है। इस आधारपर जहाँ पापी, दुराचारी आदि अधर्म कृत्य करनेसे गिरते हैं, या जो पैरोंके तलकी भूमि है, वह पाताल है। 'पाद' एवं 'तल' इन दो शब्दोंके मेलसे बने 'पाताल' शब्दकी उत्पत्तिमें वही नियम लागू होता है, जो 'स्वर्गंगा' शब्दकी निर्मितिमें हुआ। यहाँ 'द' और 'त' एक ही वर्गके वर्ण होनेसे 'द' का लोप हुआ है।

पद्मा—ब्रह्मवैवर्तपुराण (प्रकृतिखण्ड)-में वर्णित एक कथाके अनुसार जब गंगा, सरस्वती और लक्ष्मीमें परस्पर कलह हुआ तो उन्होंने एक-दूसरेको शाप दिया। तब भगवान् विष्णुने गंगासे कहा—'तुम अपनी कलाके अंशसे भारतमें जाकर 'पद्मावती' नदी एवं तुलसीके वृक्षके रूपमें विराजमान हो जाओ। कलिके पाँच सहस्र वर्ष व्यतीत होनेपर तीनोंका उद्धार होगा। पश्चिम बंगालमें गंगाका एक स्रोत 'पद्मा' नामसे अभिहित है।'

पद्मा शब्दके निर्माणमें कमलार्थी 'पद्म' शब्दमें स्त्रीवाची प्रत्यय टाप्‌का योग है। नदीमें कमलके फूल उत्पन्न होनेसे वह 'पद्मा' कहलायी—इस तथ्यको भी नकारा नहीं जा सकता।

मेघना—प० बंगालमें फरीदपुरके बाद बहनेपर पद्मा 'मेघना' नाम धारण करती है और नोआखालीके पास बंगाल सागरमें गिरती है।

मिह् धातु (वर्षा करना या बरसना)-में अच् प्रत्ययका योग पाकर बादलवाची 'मेघ' शब्द बना। मेघ+णिच्+टाप्‌के रूपमें 'मेघना' शब्द निष्पन्न हुआ। जलकणोंका हवामें वाष्पीकरण होकर मेघ बनता है। मेघद्वारा की गयी वर्षासे नदी बनती है। इस तथ्यके कारण गंगा 'मेघना' नामसे व्यवहृत हुई।

हुगली—प० बंगालमें जालंगी एवं भागीरथीकी संयुक्त धारा 'हुगली' नाम धारण करती है। कहा जाता है कि मुगल बादशाहोंके द्वारा सोलहवीं सदीमें बंगालमें पुर्तगालियोंको व्यापार करनेकी अनुमति देनेके बाद उन्होंने एक चर्च बनाया। ईसाइयोंके इस प्रार्थना-मन्दिरके पास 'होगला' नामक घास बहुतायतसे पैदा होती थी। वहाँसे जब भागीरथी बहने लगी, तो लोगोंने होगला घासपरसे बहती हुई नदीका नाम 'हुगली' रखा, जो आज भी प्रयुक्त है। कोलकाता इसी नदीके किनारे बसा है। नदीके एक तटपर हुगली शहर बसा है, जिसका नामकरण इस नदीके नामपर हुआ है। वैसे धार्मिक कोलकातावासी इसे 'गंगा' ही कहते हैं।

ऐसी इस पुण्यसलिला गंगाकी महिमा अगाध है, अपार है। विभिन्न धर्मग्रन्थोंने उसे अतिशय पूजनीय बताकर एवं लोकपावनी, जगन्माता तथा लोकमाताके रूपमें उसका अभिमण्डनकर समस्त नदियोंमें अग्रस्थान दिया है।

मोक्षदायिनी माँ गंगा

(वाचस्पति डॉ० श्रीदिव्यचेतनजी ब्रह्मचारी, व्याकरणाचार्य, वेदान्ताचार्य, एम०ए० (संस्कृत))

सत् तत्त्व एक है, उसकी अभिव्यक्ति प्रकारभेदसे असंख्य है। सूक्ष्म वस्तुकी धारणा स्थूल बुद्धिद्वारा एक सीमातक ही स्वीकृत है और यदि अन्तःकरण मलिन हो तो फिर साक्षात् ईश्वरकी महिमाका वर्णन भी अव्यवहित रूपसे पूर्णतया व्यक्तिको परिवर्तित नहीं कर पाता; क्योंकि तब व्यक्ति स्वयं ही उनके महत्त्वको स्वीकार नहीं कर रहा होता है।

भगवती श्रुति कहती हैं—'यमेवैष वृणुते तेन लभ्यः' जब वह स्वयं उस आत्मतत्त्वको स्वीकार करता है, उसका वरण करता है, तभी ईश्वरीय गुण उसमें प्रकट होते हैं, अन्यथा नहीं। आबाल, वृद्ध, वनिता शायद ही इस भारतभूमिमें ऐसा कोई होगा, जो गंगाजी अथवा उनकी महिमासे अपरिचित होगा। तो पुनः उसीका वर्णन पीसेको पीसनेके समान नया क्या उत्पन्न करेगा! वस्तुतः किसीकी यथार्थ महिमाका वर्णन या मण्डन स्वयंके ही स्थूल-सूक्ष्म स्वरूपको विभूषित करता है। साथ ही ऐसा कोई विषय नहीं, जिसे भगवान् व्यासकी लेखनीने न छुआ हो। वेद-शास्त्रादि ग्रन्थोंमें प्रायः सर्वत्र भगवती गंगाकी महत्ता, श्रेष्ठता एवं उनकी पूज्यताका उदात्त चित्रण चित्रित मिलता है।

वर्ण्य-विषयकी श्रेष्ठता एवं व्यापकता उस वस्तुकी विशेषताको और भी विशिष्ट बना देती है, साथ ही

उससे सम्बन्ध रखनेवाले देश, काल, व्यक्ति एवं वस्तु स्वयमेव सबसे अलग, सबसे विशेष नजर आने लगते हैं।

केवल भारतवर्षमें ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण विश्व-ब्रह्माण्डमें अतिविशिष्ट वस्तुओंकी प्रथम पंक्तिमें जिनका वर्णन आता है, उनमेंसे एक हैं—विष्णुपादप्रसूता, ब्रह्मकमण्डलुविराजिता, शंकरजटाविहारिणी, सरिद्वरा मोक्षप्रदायिनी भगवती माँ गंगा।

यह सबको पता है कि 'गंगा' का विकल्प इस धराधाममें अन्य दूसरा कुछ भी नहीं, किंतु भौतिकताकी अन्धी दौड़में मनुष्य अन्तमें कहाँ जाकर स्थिर होगा? शायद तब इस प्रश्न एवं इसके उत्तर दोनोंकी ही आवश्यकता नहीं रह जायगी; क्योंकि तबतक सब कुछ समाप्त हो चुका होगा।

किसीकी गुण-प्रशंसाका श्रवण मनुष्यको उसके प्रति अनुरागवान् बनाता है। अनुराग निरतिशय प्रेमका वाचक है, प्रेमका स्वरूप एवं फल दोनों अनिर्वाच्य हैं तथापि शास्त्र इसके तीन प्रकट फल भी दिखाता है—अमरता, कृतकृत्यता एवं सिद्धता।

भगवती गंगा जो वस्तुतः अव्यक्त, अनिर्वचनीय, सत्, सर्वव्यापक, चेतन तत्त्वके व्यक्त, मूर्त एवं ब्रह्मद्रव रूपसे शास्त्रमें वर्णित हैं—श्रद्धाके साथ सेवन किये जानेपर उपर्युक्त तीनों फलोंको प्रदान करती हैं, जो कि मनुष्य-जीवनकी वास्तविकता है, जिसे मनुष्य सच्चे मनसे चाहता भी है।

शास्त्रोंसे एवं महापुरुषोंके अनुभवसे गंगाकी जो इतनी अधिक महिमा प्रणीत हुई है, वह भी निर्हेतुक न होकर सहैतुक ही है।

यह सिद्धान्त है कि वस्तु शक्ति, ज्ञानकी अपेक्षा किये बिना ही स्वफलका प्रत्यक्ष दर्शन कराती है। जैसे अग्निकी दाहकता एवं प्रकाशकता। ज्ञानी-अज्ञानी सभीके लिये यह अग्निशक्ति समान रूपसे अपनी गुण-शक्तिको कार्यान्वित करती है।

गंगामें अथवा उसके तीर, गर्भ या क्षेत्रमें प्राण उत्सर्ग करनेवाला चाहे वेदज्ञ हो अथवा म्लेच्छ—मोक्षका अधिकारी होता है।

विशेष बात तो यह है कि इस फलकी प्राप्ति ज्ञानाभाव एवं अनुरागाभाव दोनों ही अवस्थामें सिद्ध हो जाती है और यह तो बिलकुल प्रत्यक्ष देखा जाता है कि जब कोई श्रद्धालु गंगाजीमें स्नान करता है, तब उसी क्षण वह अपनी आत्मामें एक अपूर्व शान्ति एवं आह्लादका अनुभव करता है।

'तत्त्वज्ञान' जो कि अद्वैत वेदान्तमें चरम एवं परम लक्ष्यके रूपमें स्वीकृत है—इसके लिये भी पाथेयस्वरूप गीतोक्त श्रद्धा, सेवा, समर्पण, तत्परता, जितेन्द्रियता एवं जिज्ञासाका होना आवश्यक माना जाता है। इसी प्रकार विवेकचूडामणि आदि ग्रन्थोंमें इहामुत्र फलभोगविराग, नित्यानित्यविवेकादि षट्सम्पत्तिके रूपमें साधन-धन अपरिहार्य भूमिकाके रूपमें वर्णित है, परंतु गंगा सेवन, जिसको न केवल काशीमें, अपितु सारे संसारके सार-रूपसे शास्त्रोंमें स्वीकार किया गया है, उपर्युक्त 'तत्त्वज्ञान' को देनेवाला है; क्योंकि 'गंगा' साक्षात् ब्रह्मद्रवरूप और ज्ञानस्वरूप ही हैं। यहाँ तो भौतिक जड़-बुद्धिसम्पन्न प्राणियोंके लिये इसके इस रूपकी कल्पना व्यावहारिक सत्को लेकर व्याख्यात है।

साक्षात् कृतधर्मा ऋषियों एवं तदनुगामी सत्पुरुषों तथा विद्वानोंने मनुष्यके कल्याणार्थ बारम्बार जो इसके गुणोंका बखान किया है, इसका कारण यह है कि संसारासक्त प्राणी किसी प्रकार स्वके प्रति संवेदनशील हो, अपने वास्तविक स्वरूपको समझ सके, इसकी महत्ताको हृदयसे स्वीकारकर अपने कल्याणके लिये ठीक-ठीक यत्न कर सके, क्योंकि भगवती गंगाका आगमन भगीरथके पूर्वजोंके कल्याणके लिये ही मुख्य रूपसे हुआ था, इसके आनुषंगिक कारण चाहे कुछ भी हों।

आज अधिकांश लोग गंगाके प्रति इस संवेदनासे या तो शून्य हैं, अथवा न जानते हैं, न मानते हैं और न किसी समझदारकी बात ही सुनते हैं। यदि सुनते होते तो आज इसमें मल-मूत्र, रासायनिक द्रव्य, रक्त स्वयं तो गिराते ही नहीं, बल्कि गिरानेवालेको भी युक्ति-कौशलसे

रोकनेका प्रयास करते और यह समस्या भी बहुत पुरानी नहीं है, यह तो जबसे भारतकी धर्मप्राण जनताने अपनी संस्कृतिका आँचल छोड़कर पाश्चात्य सुख-भोगोंको ही अपने जीवनका एकमात्र लक्ष्य मान लिया, तभीसे अपनी संस्कृति और इसके संस्कारोंकी उपेक्षा होने लगी।

पाश्चात्य संस्कृति पाश्चात्योंकी आबोहवा या मानसिकताके अनुकूल हो सकती है, हमारे लिये तो यह हानिकर ही है। हमारे यहाँ भावकी प्रधानता है तो वहाँ द्रव्यकी, यहाँ धर्मकी प्रधानता है तो वहाँ धनकी। हम 'गंगा' को 'माँ' कहते हैं, इसकी पूजा करते हैं तो वे इसे औषधीय गुणोंवाले जलके अतिरिक्त और कुछ नहीं मानते।

इसका सम्बन्ध हमारे लिये सर्वविध कल्याणसे है तो उनके लिये यह केवल सैर-सपाटेके लिये है। स्नान करते तो कदाचित् ही कोई विदेशी किसीको दीख जाय। वहीं श्रावण एवं भाद्रपदके मटमैले जलमें भी सादर अवगाहन करते किसी भारतीयको शायद ही कभी संकोच होता हो।

शास्त्रकारोंने गंगाजल-पानके तीन फल कहे हैं—अस्वाभाविक मृत्युका हरण, समस्त व्याधियोंका नाश एवं पुनर्जन्मका अभाव अर्थात् परम कल्याण। 'शास्त्र' ऋषियोंके अनुभवका सार है। श्रुत्युपदिष्ट समस्त आदेश, उपदेश, तदनुगामी अन्यान्य शास्त्र-समुदाय केवल पाण्डित्य-प्रदर्शन या परस्पर विवादके लिये नहीं है, बल्कि अपने अधिकारके अनुरूप तदनुसार चलकर अनुभवके शिखरपर आरूढ़ होनेके लिये है।

मात्र शास्त्रोंको रट लेने अथवा उनपर परस्पर विवाद करनेसे शायद ही आजतक किसीका कल्याण हुआ है।

भगवत्पाद श्रीशंकराचार्यजी महाराज अध्ययनका पर्यवसान अनुभूतिमें मानते हैं—'**अविज्ञाते परे तत्त्वे शास्त्राधीतिस्तु निष्फला**' (विवेकचूडामणि)। मात्र '**तत्त्वमस्यादि**' महावाक्योंके स्मरण अथवा आवृत्तिसे अविद्याका निरास कभी सम्भव नहीं है, इसके लिये तो आवश्यक है श्रवणादिद्वारा असम्भावनादि प्रतिबन्धकोंको दूर करना, किंतु विष्णुपादोदक गंगाजलके स्नान-पान-दर्शनसे अथवा उसके तीरमें प्राण त्यागनेमात्रसे उपर्युक्त फल प्राप्त हो जाता है।

अतीन्द्रिय धर्मादिकों अथवा परोक्ष स्वर्गादिका प्रत्यक्ष साक्षात्कार योगीसे इतर सामान्य व्यक्तियोंके लिये अगम्य है, इनका प्रत्यक्षीकरण तो सामान्य जनोंको एकमात्र शास्त्रद्वारा ही सम्भव है।

सितासिते सरिते यत्र सङ्गथे तत्राप्लुतासो दिवमुत्पतन्ति। ये वै तन्वं विसृजन्ति धीरास्ते जनासो अमृतत्वं भजन्ते॥ (ऋक्परिशिष्ट)

गंगा एवं यमुनाके संगममें स्नान करनेवाला व्यक्ति स्वर्गको चला जाता है और जो वहाँ प्राणोंका उत्सर्ग करता है, वह अमृतत्वका अधिकारी हो जाता है। विशेष बात तो यह है कि यदि गंगास्नानादिसे शास्त्र-निर्दिष्ट मोक्षबोधक लक्षण किसी व्यक्तिके जीवनमें प्रत्यक्ष दिखता है तो फिर संशयका अवकाश ही कहाँ रह जाता है? भाई! वह तो गंगादर्शन कर आये। अच्छा, गंगाजल तो लाया होगा। सबको गंगाजलकी आचमनी दे रहे हैं। मुझे तो एक लोटा चाहिये, एक चम्मचसे मेरे इतने सारे पाप····। लो तुम्हें तो एक लोटा भरके ही देना पड़ेगा। अरे! उसके तो 'प्राण' कपार फोड़के निकले।

जो एकमात्र योगियोंद्वारा ही प्राप्य है, ऐसी दुर्लभ मुक्ति मात्र गंगाजलके पान करनेसे हो जाती है।

भगवती गंगाके नामोंमें भी उपर्युक्त तीनों फलोंकी प्राप्तिका संकेत स्पष्ट रूपसे मिलता है। पुनर्जन्म-अभावबोधक नामोंमें—ॐकाररूपिणी, अविद्याजालशमनी, कर्मबन्धविभेदिनी, परब्रह्मप्रकाशिनी, ब्रह्मविद्यातरंगिणी, मोक्षदा, रागद्वेषविनाशिनी आदि।

अकालमृत्यु दूर करनेवाले नामोंमें—दीर्घायुःकारिणी, अभीष्टार्थसिद्धिदा आदि एवं व्याधिनाशक नामोंमें आरोग्यदा, आलस्यघ्नी, ओषधीक्षेत्रम्, महौषधम् आदि नाम स्पष्ट रूपसे गंगाकी अन्वर्थताका बोध कराते हैं। अतः माँ गंगा तीनों फलोंको प्रसूत करनेमें पूर्ण समर्थ हैं।

वास्तवमें 'तत्त्वमस्यादि' महावाक्योंका जो लक्ष्यार्थ है, वही गंगाके परब्रह्मप्रकाशिनी, ब्रह्मविद्यातरंगिणी आदि नामोंका भी है।

देवताओं एवं ऋषियोंका यह स्वभाव होता है कि वे वस्तुका परोक्षवर्णन ही पसन्द करते हैं, प्रत्यक्ष नहीं।

एक ही चरम एवं परम शक्तिका शिव-शक्ति, ब्रह्मा, विष्णु, गंगा, गणेश आदि भिन्न-भिन्न नाम-रूपोंद्वारा चिन्तन एवं वही वर्णनका विषय होता है, अतः प्रतीतिविषयक अनेकत्वमें एकत्वकी अवधारणा एवं एकमें अखिल प्रपंचका विलयकर मात्र अधिष्ठान सत्ताका शेषत्व स्वसे अभिन्न रूपमें अनुभव भगवती गंगासे प्राप्त अपरोक्ष ज्ञानद्वारा सहज ही शक्य है—हो भी क्यों न, करुणा एवं ममतामयी माँ जो हैं हम सबकी, किंतु विवेकका अनादर करनेके कारण अपनेको मात्र शरीरधारी मनुष्य माननेवालोंको यह अनुभव हो कैसे? अतः अन्तःकरणकी शुद्धिपूर्वक विवेककी जागृतिहेतु सर्वप्रथम गंगाजीके भौतिक-दैविक स्वरूपकी उपासना आवश्यक है। उपासनाका स्वरूप गंगा नामका बारम्बार सतत स्मरण करना, गंगा-गर्भ, गंगातीर, गंगाक्षेत्र आदिमें वास करना, गंगाजलका पान एवं उनमें अवगाहन करना, गंगा-मृत्तिकाको शरीरमें धारण करना, उनमें श्रद्धा-भक्ति रखना, उनकी यथाशक्ति पूजा करना आदि है। गंगाजीकी उपासनाका फल महाभारतमें कहते हैं—'ते भवन्ति शिवा विप्रा ये वै गंगामुपाश्रिताः' शिवत्वकी प्राप्ति। जीवका इससे बढ़कर पारमार्थिक लाभ और क्या हो सकता है?

गंगाक्षेत्रमें प्राणोंको त्यागनेका फल भी अलौकिक ही है—

'अत्र......ये मृतास्तेऽपुनर्भवाः।' (ब्रह्माण्ड०)

श्रुति-प्रतिपादित फलकी प्राप्ति केवल गंगाक्षेत्रमें प्राण त्यागनेमात्रसे प्राप्त हो जाती है। यदि कोई उनके समीप केवल वास कर ले तो भी प्राणी उपर्युक्त फलका अधिकारी हो जाता है—

किमष्टाङ्गेन योगेन किं तपोभिः किमध्वरैः।
वास एव हि गङ्गायां ब्रह्मज्ञानस्य कारणम्॥
(नारदपुराण)

गंगाजीके नमस्कारका फल भी अपुनर्भव है—

प्रणमेत्प्रातरुत्थाय गङ्गां पुण्यजलां शुभाम्।
यस्तु धर्मार्थकामानां तथा मोक्षस्य भाजनम्॥

क्यों मिलता है गंगा-उपासकको कैवल्य मोक्ष? क्योंकि 'गङ्गायां मरणान्मुक्तिर्नात्र कार्या विचारणा।'

कर्णे तत् परमं ब्रह्म ददामि मामकं पदम्।
(स्कन्दपुराण)

गंगाजीकी इस अलौकिक महिमाको श्रद्धा-विश्वासपूर्वक स्वीकार करना चाहिये एवं कल्याणका भागी होना चाहिये।

श्रद्धा-भक्तिमयी एवं ज्ञान-विज्ञानरूपिणी हमारी गंगा

(श्रीअशोकजी जोषी, एम० ए०, बी० एड०)

भर्तृहरि ने अपने वैराग्यशतकमें कहा—

गङ्गातीरे हिमगिरिशिलाबद्धपद्मासनस्य
ब्रह्मध्यानाभ्यसनविधिना योगनिद्रां गतस्य।
किं तैर्भाव्यं मम सुदिवसैर्यत्र ते निर्विशङ्काः
कण्डूयन्ते जरठहरिणाः स्वाङ्गमङ्गे मदीये॥

गंगाके तटपर, हिमालय पर्वतकी शिलापर जब मैं पद्मासनमें बैठा ब्रह्मध्यानका नित्यका अभ्यास विधिवत् करते हुए योगनिद्रामें लीन बन जाऊँ और निःशंक, निर्भय वृद्ध मृगगण मेरे निकट मँडराते एवं यदा-कदा अपने अंग मेरी अविचल मूर्तिवत् कायाके संग घर्षण करते हुए सुख पायेंगे; अविचल ध्यानसिद्धिके मेरे ऐसे अच्छे दिन कब आयेंगे?

भर्तृहरि-जैसे ज्ञानी-विरागी ही गंगातटपर स्थिर समाधि चाहते हैं—ऐसी बात नहीं; जनसाधारणकी भी यही अन्तिम आकांक्षा देखी गयी है कि वह भक्तिभावसे कभी गंगास्नान, गंगाजलपान करके जीवनको सफल

कर ले। गुजराती-राजस्थानीकी मिली-जुली भाषामें लोकगीतकी ये पंक्तियाँ ज्ञान-विरागसे नहीं, श्रद्धा-भक्तिसे परिपूर्ण हैं—

मनखा अवतार पायो, गंगा नहीं नाह्यो जीवड़ा,
व्यर्थ बितायो अवतार थारो,
चेतीजा चेतीने तुं हाड़कां भींजाड जीवड़ा,
थने चेतवे पवितर गंगा मायजी!
अड़सठ तीरथ कीथा पण अंदरनुं तेज ना आव्युं,
जीवतर सुधर्युं ना जीवड़ा,
चेतीजा चेतीने तुं मांयलो भींजाड़ जीवड़ा,
थने चेतवे पवितर गंगा माय जी!

'हे जीव! तुझे पवित्र गंगामैया सचेत कर रही हैं। मनुष्य देह पानेपर भी अबतक गंगास्नान नहीं किया, तेरा अवतार व्यर्थ गया, अब भी चेत, जीते जी अपनी हड्डियोंको उस पवित्र गंगामें डुबोकर भींगी कर ले। सभी अड़सठ तीरथ भटकनेपर भी यदि संयम-नियमसे साध्य आत्मतेज भीतरसे प्रकाशित ना हुआ, तेरी जीवनचर्यामें कोई सुधार-बदलाव न आया तो भटकनेसे क्या पाया? हे जीव! तुझे पवित्र गंगामैया सचेत कर रही हैं।'

गंगाके प्रति लोगोंमें ऐसा आकर्षण है कि प्रतिकूलताएँ होते हुए भी, उनकी श्रद्धा-भक्ति उन्हें रोक नहीं सकती एवं उन्मादके स्तरपर पहुँच जाती है। यात्रियोंकी बस बदरीनाथसे आ रही थी, देवप्रयागमें भगीरथके स्टेच्यूके सामने रात्रि-विश्राम हुआ। लोग बससे उतरे एवं भागीरथी-अलकनन्दाकी तूफानी संगमस्थलीपर दौड़ पड़े। कोई नियम-कानून उनके उन्मादको न रोक सका। वहाँ चेतावनी होते हुए भी एवं रात्रिमें स्नान वर्ज्य होनेपर भी, श्रद्धा-भक्तिने एक न सुनी। सुदृढ़ लौह श्रृंखलाओंके बन्धनोंका उल्लंघन करते हुए कुछ लोग उस तूफानी जलमें कूदे, शेष कुछने तटपर बैठकर ही सही, पर इस देवस्थलीपर संगम-स्नान अवश्य किया। गंगाके ज्ञान-विज्ञान पक्षके पक्षधर हम भी उस भक्ति-उन्मादमें थे ही।

ऐसा भी होता है कि ज्ञानीके तर्क उसे रुकावट कर देते हैं और श्रद्धा-भक्तिसे पूर्ण अज्ञानीका आत्मबल उसे बेरोक-टोक पार उतार देता है।

गंगाके प्रति जितना आकर्षण श्रद्धा-भक्तिवालोंको है, उतना ही आकर्षण ज्ञानी-विज्ञानी प्रकृतिके लोगोंको भी है। जहाँ श्रद्धा पक्षवाले ज्येष्ठ शुक्ल दशमी, गंगा दशहराको अपनी गंगामैयाका अवतरण मानते हैं, वहीं ज्ञान-विज्ञान पक्षवाले उसी दिन अपनी ज्ञान-विज्ञानरूपा ऋतम्भरा प्रज्ञा गायत्री गंगाका सर्वप्रथम शिवशीर्षपर अवतरण मानते हैं। दो पक्ष, तथ्य एक ही। समझदारके लिये भक्ति एवं ज्ञानके बीच अति सूक्ष्म भेद ही रह पाता है।

भक्त हो या ज्ञानी, दोनों गंगाजलको अपने घरोंमें चिरकालतक संचित रखना और हो सके तो नित्य उसका पान करना चाहते हैं; क्योंकि विज्ञानसिद्ध बात है कि अकेली गंगामें ही 'प्लाज्मा' नामक तत्त्व है, जो तन-मनकी कई बीमारियोंके कीटाणुओंको नष्ट करनेमें सक्षम हैं। पर यह 'प्लाज्मा' तत्त्व विशुद्ध गंगाजलमें ही अधिक सबल होता है। इसीलिये लोग गंगोत्री-गोमुखसे विशुद्ध-पवित्र गंगाजल लाते हैं। श्रद्धापूर्वक या तो ज्ञान-विज्ञानपूर्वक इस पवित्र जलको रखना एवं उपयोगमें लेना अवश्य चाहते हैं। शोध-संशोधन-रिसर्चहेतु विदेशी विज्ञानी भी गंगाजलका अध्ययन करने यहाँ दौड़े आते हैं।

गंगाजल ब्रह्मद्रव जो है—गंगा-माहात्म्यके विषयमें पुराने एवं अद्यतन ग्रन्थ बहुत कुछ बताते रहे हैं, जैसे कि श्रद्धापक्षकी गंगाके विषयमें कथा है कि देवलोकमें नारायणके चरणसे प्रकट होकर सुरसरिता गंगा बह रही है। उसीके एक हिस्सेको भगीरथके तपने हमारी धरतीपर उतारा है, जिसे सर्वप्रथम शिवजीने अपने मस्तकपर धारण किया है। शिवकी जटाओंमें उलझकर लुप्त होनेके बाद उसकी धारा फव्वारेकी तरह शिव-शीर्षसे फूटती है, जो कि गोमुख-गंगोत्रीमें देखी जाती है। इन प्रसंगोंके दर्शन अनमोल हैं, पर दर्शनका सही अर्थ है तत्त्वज्ञान-फिलोसोफी, सो तत्त्वज्ञानियों एवं

विज्ञानियोंने जाँच-परखकर कहा है कि कैलासके उन्नत शिखरको ही शिवका शीर्ष कह लें, हिमालयकी सघन झाड़ियों-पहाड़ियों-घाटियोंको ही शिवका जटाजूट समझें तो ऊपरसे उतरे वैज्ञानिक द्रवको वर्षोंतक इनमें लुप्त हो जाना, बादमें सँकरी जगहोंमें फव्वारेकी तरह उभरकर फूट पड़ना सहज ही है। पर ये ज्ञानी-विज्ञानी भी इसे श्रेष्ठ जल अवश्य मानते हैं, धरापर अन्यत्र न मिलनेवाला अलभ्य भी समझते हैं। क्यों?

ऊँचाइयोंपर वैज्ञानिक प्रक्रियासे बनता यह दुर्लभ जल कई वर्षोंसे लगातार गंगाके रूपमें बह रहा है। यह जल असलमें है क्या? जलका मूलरूप जलतत्त्व है, इस जलतत्त्वमें संयोगसे दो वायुओंका मिलन हुआ होता है। एक तो है प्राणवायु, उसमें दुगुनी मात्रामें वाष्पीकृत वायु मिलती रहती है, यह प्रक्रिया निरन्तर होती रहनेसे ऊँचाइयोंपर, दोनों वायु द्रवित होते रहते हैं, जो कि पवित्र-विशुद्ध जलरूप लिये सूक्ष्म धाराओंके रूपमें कैलास-शिखरपर टपकता हुआ, झाड़ियों-घाटियोंको भरता हुआ, पुनः यथावसर यथास्थानसे प्रकट होकर नदीरूपमें बहता है। श्रद्धालुओंका, ब्रह्मरूप नारायणके चरणसे आया हुआ 'ब्रह्मद्रव' यही है, 'अमृत' यही है। विज्ञान भले ही इसे सूत्र H_2O या डिस्टिल वॉटर आदि कह ले। दो पक्ष होते हुए भी तथ्य; वह भी प्रमाण और प्रयोगसे सिद्ध किया हुआ तथ्य एक ही है। ज्ञान-भक्तिका, विज्ञान-अध्यात्मका इससे नैसर्गिक समन्वय कर सकते हैं। अगले दिनों इन दोनोंका संगम होना ही है एवं अनर्थों-अनौचित्यों-अधर्मोंको इसी समन्वित सम्बलसे हारना ही है। पापोंको धोती रहनेवाली गंगा जब इस युगकर्ममें भी बढ़-चढ़कर निमित्त बनेगी, अनर्थों-अनौचित्यों-अधर्मोंको भी अपने तेजोमय तेज प्रपातमें धो डालेगी, तो उसका प्रवाह सार्थ-सिद्धि-सफलताकी सीमाको छू लेगा। मरणासन्न भी कहता है—'**औषधं जाह्नवीतोयं वैद्यो नारायणो हरिः।**' यही ब्रह्मद्रव है। जिसकी एक बूँद मरणोन्मुखकी अन्तिम समयकी मनोवृत्तिको हिलाकर ब्रह्मलक्षी बना देनेकी सामर्थ्य रखती है।

तीर्थोंकी दुर्दशा—जैसे तीर्थजलकी ये गंगा-यमुना मैली नालियाँ बनकर, दिव्यताके स्थानपर बीमारियाँ फैला रही हैं, वैसे ही हमारी अन्य नदियोंकी, हमारे अन्यान्य तीर्थस्थानोंकी भी यही दुर्दशा सर्वविदित है।

न केवल यात्रियोंकी भीड़ने, तीर्थस्थानोंके हाट-बाजारोंने भी, उनके मालिकोंकी इमारतोंने भी बड़े-से-बड़े तीर्थक्षेत्रको सँकरा-संकीर्ण-छोटा कर दिया है। तीर्थोंमें अधिकांश लोग यात्रियोंपर निर्वाह पानेवाले ही होते हैं। उनकी भीड़ भी वहाँ कम नहीं, अधिक ही रहती है। इतने सारे स्थायी एवं आते-जाते लोगोंके कारण जलवायु आदिका प्रदूषण तो फैलता ही है। तीर्थक्षेत्र शान्तिका नहीं, रोगोंका स्थल बन जाता है, जहाँ जानेवालोंको घुटन-सी प्रतीत होने लगती है।

तीर्थयात्राके नामपर धन-दोहन करनेवालोंने तीर्थ-यात्रियोंकी सुविधाके नामपर पर्वतीय क्षेत्रोंमें भी जंगल कटवाये एवं भवन खड़े किये हैं। झाड़ियाँ-पहाड़ियाँ नष्ट हो जानेसे, जब जलका आवेग—आगमन जोरोंसे होता है, तो वह रोके नहीं रुकता। जिस ओर जंगल कटे, मैदान बने होते हैं, उसी ओर बहाव एक साथ चल पड़ता है। फलतः केदारघाटी, कश्मीरघाटी-जैसे विनाशक दृश्य प्रत्यक्ष होते रहते हैं। आजकी भोगवादी भौतिकी प्रगतिका दुष्परिणाम तीर्थोंकी दुर्दशाके रूपमें भी सामने आ ही जाता है। ऋषियोंकी शान्त तपःस्थलियाँ, मनोरंजनके सामानोंसे दूषित होती हैं, तो यह प्रकोप भी होना ही है। तीर्थमें ही यह होगा, तो शेष स्थानोंमें अतिरेक होगा।

शहरोंके गटर, कारखानोंका तैलीय कीचड़, शौचालयों-होटलों-धर्मशालाओंकी गन्दी नालियाँ नदियोंमें ही पड़ती रहेंगी तो तीर्थोंकी दुर्दशा तो होगी ही। ध्वनि-प्रदूषण भी तीर्थोंकी शान्तिको मिटाता ही है। कहाँतक वर्णन करें?

उपाय—बात तीर्थोंकी हो, नदियोंकी हो, हिमालयकी हो, बड़ों-बुजुर्गोंकी हो या फिर गंगामैयाकी एवं गंगा-जैसी हमारी माताओं-बहनों-बेटियोंकी हो; अगर इनकी

दुर्दशा हुई है, हो रही है तो निश्चित ही लोग पथभ्रष्ट, धर्मभ्रष्ट, कर्तव्यच्युत या विवेकभ्रष्ट हुए हैं। दुर्दशा करनेवालोंके लिये नियम-कानून एवं दण्ड-विधान तो हैं, पर उनका अमलीकरण शिथिल है। सर्वत्र अविवेक छाया हुआ है।

गंगाकी सफाई हो जानेपर गन्दगी फिर उसीमें उँड़ेली जाती रहेगी। विवेक जगानेके लिये दण्ड-विधान सख्त होने चाहिये। जंगल काटने एवं विनाशक दृश्य देख लेने सरल हैं, नये जंगल उगाना, टूटी व्यवस्था खड़ी करना कठिन है।

लोगोंके पापोंको धोती रहनेवाली गंगाको प्रतीक्षा है ऐसे पुण्यशीलों की, जो गंगामें पाप धोने नहीं, पुण्य अर्पण करने आते हैं। विवेक जगाकर न केवल बाहरी गन्दगीको, अपितु भीतरी भ्रष्टताओंको भी हटाना-मिटाना पड़ेगा। कानून एवं सदाचार-धर्म दोनों सख्ती नहीं बरतेंगे तो प्रकृति व्यवस्थाके प्रकोप तो होने ही हैं। गंगाके संग-संग अपनी नियतिको हम भी सँभाल सकते हैं। 'खुदकी खबरदारीसे ही खल्ककी है खबरदारी।'

गंगातत्त्वदर्शन

(एकराट् पं० श्रीश्यामजीतजी दुबे 'आथर्वण')

आप् (जल)-ब्रह्मकी अधिष्ठात्री शक्ति, ब्रह्मलोककी अन्यतम अप्सरा, अष्टवसुओंकी गर्भधात्री, ऐक्ष्वाकु महाभिषकी प्रेयसी, प्रतीपकी पुत्रवधू, शान्तनुकी पत्नी, भीष्मकी जननी, शिवजटाजूटवासिनी, विष्णुपादजात, ब्रह्मद्रवरूपिणी, लोकपावनी, त्रिपथगामिनी, वारितनधारिणी, पितरोद्धारिणी गंगामाताके निकट निवास करते हुए नित्य उनकी छविका अवलोकन करते हुए, तत्तटीय भूमिपर विचरण करते हुए, देवसरिता गंगाकी गवेषणाका आनन्द लेते हुए इसके तत्त्वचिन्तनमें स्वचित्तकी आहुति देता हूँ। देवजन इसकी सुगन्धको ग्रहण करें।

गंगा माँ, गंगा माता, गंगा मैयाके सम्बोधनोंसे सम्मानित, अमला, अनाथवत्सला, अनाथनाथा, असुदा, आरोग्यदा, अचिन्त्य-अक्षुण्णशक्ति, ओंकाररूपिणी, आश्चर्यमूर्ति, क्षेमदा, ग्रहपीडाहरा, ऋतम्भरा, शुभावती, शोभावती, इष्टदात्री, आलस्यघ्नी, आप्यायिनी, उत्पत्ति-स्थितिसंहारकारिणी, अनन्तनाम्नी गंगाको हम प्रणाम करते हैं।

गंगा नदी हैं, नारी हैं, देवी हैं, इसके अतिरिक्त शब्द हैं। गंगा शब्दकी व्युत्पत्ति दो धातुओं गम् और गै के योगसे हुई है। गम् गतौ प्राप्तौ गच्छति+क्विप्+गै शब्दे गायति+डा=गंगा। गच्छतीति गायतीति गंगा। गच्छति गायति गंगेति। जो सर्वत्र गमन करे, सबको प्राप्त हो तथा जिससे शब्द उत्पन्न हो, वह गंगा है। इस प्रकार गंगामें दो गुणधर्म हैं—गति और शब्द। अर्थात् गंगामें गतिब्रह्म तथा शब्दब्रह्मका सतत वास रहता है। जिस किसी भी प्रवाहमें ये दो तत्त्व सदा रहते हों, वह गंगा है। इन दो गुणोंसे युक्त हर प्रवाह गंगा है। 'गंगा' शब्द स्त्रीलिंग है। नदी स्त्रीलिंग है। देव स्त्रीलिंग है। देवता स्त्रीलिंग है। अप्सरा स्त्रीलिंग है। धारा स्त्रीलिंग है, परंतु गति पुंलिंग है। शब्द पुंलिंग है। भाव यह निकला कि गंगा पुंस्तत्त्व नदी है—कृच्छ्र, कठोर, क्रूर, कुटिल। प्रकृतिसे यह स्त्रीतत्त्वसम्पन्न है—कोमल, शीतल, चंचल, उर्वर। वारिवपुषा प्रकट देवता गंगा, घोषयुक्ता गतिधरा गंगा, संतसेविता मुनिवन्दिता गंगा कूटस्थ-परिवर्तनशीला—गंगाको देखते ही मन प्रसन्न हो जाता है—'प्रसादो भवति गङ्गां वीक्ष्य।' (अनुशासनपर्व २६।७६)

गंगाके दर्शनसे जो प्रसन्नता मिलती है, उससे सभी अनिष्ट तत्काल दूर हो जाते हैं। भीष्मका वचन है—

गङ्गादर्शनजा प्रीतिः व्यसनान्यपकर्षति।

(महा० अनु० पर्व २६।५७)

गंगाके दर्शनमात्रसे समस्त पापमय विचार भाग जाते हैं।

'गङ्गाया दर्शनात् सर्वपापैः प्रमुच्यते।'

(महा० अनु० पर्व २६।४४)

गंगामाताके दर्शनका यह फल है तो स्नानके फलकी क्या आवश्यकता? जैसे क्रोधसे तपका, कामसे बुद्धिका, अन्यायसे लक्ष्मीका, अभिमानसे विद्याका, कुटिलता और छलसे धर्मका नाश होता है, उसी प्रकार गंगाके दर्शनमात्रसे दुर्भाग्यका नाश होता है। जैसे बिना इच्छाके ही स्पर्श करनेपर आग जला देती है, उसी प्रकार अनिच्छासे भी स्वजलमें स्नान करनेवालेके पाप-समूहको गंगाजी भस्म कर देती हैं। इतना ही नहीं, गंगाके स्मरणमात्रसे पापोंका क्षय होता है। भगवान् शिव कहते हैं—

यः स्मरेत् सततं गङ्गां स हि मुच्येत बन्धनात्।

(स्कन्दपुराण, का०पू० २७। ३७)

गंगाके दर्शन, स्मरण, स्नानकी महत्ताका आख्यान सर्वविदित है। हम जिस गंगाके सान्निध्यमें रहते हैं, वह पार्थिव है। यह हिमालयके उत्तुंग शिखरसे प्रकट होकर, नीचेको उतरती हुई, धरतीका दीर्णन एवं सिंचन करती हुई, टेढ़ी-मेढ़ी चलती हुई, पूर्वके समुद्रमें जाकर समा जाती है। वर्षाकालीन गंगा भीषण, उच्छल तरंगमयी, मटमैले जलसे पूरित दोनों किनारोंको आलिंगन देती हुई आगे बढ़ती है। शीतकालीन गंगा दोनों किनारोंको छोड़कर बीचसे बहती हुई निर्मल जलसे लसित, मर्यादित, वेगपूर्वक आगे भागती है। ग्रीष्मकालीन गंगा सैकतशय्यापर शान्त-क्लान्त हो मन्द गतिसे चलती हुई मटमैली, किंतु भद्र लगती है। प्रयागमें रहते हुए गंगाके इन तीनों रूपोंका अवलोकन लोग करते हैं। प्राचीन कालमें हिमालयके स्वर्णशिखरसे निकलकर गंगा सात धाराओंमें विभक्त हो समुद्रमें जाकर मिल गयी हैं—

पुरा हिमवतश्चैषा हेमशृंगाद् विनिस्सृता।
गङ्गा गत्वा समुद्राम्भः सप्तधा समपद्यत॥

(महा०, आदिपर्व १६८। १९)

देवलोकमें गंगाको 'अलकनन्दा' नामसे जाना जाता है। पितृलोकमें गंगाको 'वैतरणी' कहते हैं। मनुष्यलोकमें इस पुण्यतोया नदीका नाम 'गंगा' है। यह कृष्णद्वैपायन व्यासजीका वचन है।

गंगामें ध्वनि होती रहती है—कल-कल, हर-हर, छर-छर, छल-छल। गंगा सतत बहती है, रुकती नहीं। गंगा रुक गयी तो गंगा नहीं। गंगा निःशब्द हुई तो कैसी गंगा? वेगवती शब्दवती गंगाका उग्ररूप दर्शनीय है, आह्लाद्य है, भव्य है। पार्थिव गंगाका यह रूप महावृष्टि होनेपर दिखता है। भागती-दौड़ती नृत्य करती अट्टहास करती गंगाका भयंकर रूप चित्तको खींचता है। ग्रीष्म ऋतुमें मन्थर चलती शब्दहीन निर्बल क्षीण गंगाका रूप अनाह्लाद्य एवं अभव्य होता है। फिर भी, गंगा तो गंगा ही है, माँ है। माँके समस्त रूपोंको प्रणाम करता हूँ। गंगा प्राणदायिनी-प्राणघातिनी है। गंगा भयकारिणी-भयहारिणी है। मकरवाहिनी सागरगामिनी गंगाके घोषश्रवण एवं गतिदर्शनमें चरैवेतिका सन्देश है।

गंगावतरणके सम्बन्धमें जो कथाएँ हैं, वे रहस्यपूर्ण, सत्य, अतर्क्य एवं सावरण (गोपनीय) हैं। कथापर कुतर्क न किया जाय, उसी रूपमें मान लिया जाय अथवा तर्कसंगत करके देखा जाय तथा प्रत्यक्ष एवं अनुभवकी उपेक्षा भी न की जाय। गंगाके सम्बन्धमें जो कथा है, उसका सारांश है—पहले भूलोकमें गंगाका अभाव था। कपिलमुनिके शापसे भस्मीभूत हुए सगरके पुत्रोंके उद्धारके लिये उन्हींके वंशज भगीरथ गंगाको ब्रह्मलोकसे धरतीपर लाये। एक दूसरी मान्यताके अनुसार भगीरथसे कई पीढ़ियों पहले त्रिशंकुपुत्र हरिश्चन्द्र काशीमें एक डोमके सेवक होकर गंगातटपर शवदाह किया करते थे। इसका अर्थ हुआ—भगीरथसे पहले भी भूमिपर गंगाका अस्तित्व था। इस विरोधाभासका समाधान कैसे हो? यह विचार्य है। वैदिक (व्यापक) दृष्टिके अभावमें पौराणिक सत्यको न समझकर, भ्रममें रहते हुए गंगाकथाका कथन-श्रवण करते हुए, उसे आत्मसात् किये बिना अपने प्रति अपनेद्वारा किया गया अपराध है। हम यहाँ शास्त्रका सम्मान करते हुए गंगाके प्रादुर्भावकी कथाका प्रत्यक्षीकरण कर रहे हैं। भगीरथ कोई नृपतिमात्र नहीं हैं तथा गंगा कोई नहर (राजवहा) नहीं है, जिसे खोदकर बनाया—बनवाया गया हो। दैवीजलकी तीक्ष्ण

धाराका नाम गंगा है। भगीरथ नाम सहस्त्ररश्मि सूर्यका है। यह कैसे? भा भाति चमकना+ड=भ—चमक। गम् गच्छति चलना+ड=ग—गति। भ+ग=भग—चमकने और चलनेवाला सूर्यमण्डल। भग+इण्=भगी—गतिमान् एवं देदीप्यमान सूर्य। रथ गतौ रथ्यति+अच्=रथ—रश्मि, किरण। भगी+रथ=किरणवान् सूर्य, चण्डसूर्य, तप्यमान सूर्य, तेजस्वी तपस्यारत तपः शील देवता सूर्य। सूर्यरश्मियोंद्वारा अवशोषित पार्थिव जल वाष्परूप होकर मेघ (पर्जन्य) नामसे अन्तरिक्षमें रहता हुआ वायुके वेगसे चलायमान रहता है। यह घोष (मेघगर्जन) करता हुआ अन्तरिक्षकी गंगा कहलाता है। यही वर्षाके रूपमें धरतीपर उतरनेके बाद प्रवहमान एवं शब्दायमान होनेसे पार्थिव गंगा कहलाता है। यह हिमके रूपमें हिमालयमें संचित होनेके अनन्तर पिघलकर धाराके रूपमें नीचे उतरता है तो गंगाका जन्म होता है, प्राकट्य या अवतरण होता है। अतएव गंगा हिमालयकी पुत्री हुई। वाक्य है—'**गंगा हिमवतो ज्येष्ठा दुहिता भरतर्षभ।**' (रामायण १।४१।१९) विश्वामित्रजीने रामको सम्बोधित करते हुए यह वचन कहा था। हिमवतः=हिमालयात्। ज्येष्ठा=श्रेष्ठा, अग्रजा। दुहिता=दुह् बहिष्करणे+क्त+टाप्। भीतरसे निकलकर बाहर आयी हुई, आविर्भूता पुत्री। पर्वतसे निकलनेके कारण गंगाका नाम पार्वती है। प्राणियोंका पोषण-रक्षण करनेसे भी इसे पार्वती कहते हैं। पृ पृणाति पृणोति पिपर्ति प्रियते+णिच्+अतच्+ ङीष्=पार्वती गंगा। शान्त निर्जन नग्न वनस्पतिविहीन हिमालयका उत्तुंग शिखर ही शिव है। हिमाच्छादित शृंगोंके अधोभागपर फैली वनस्पतियाँ शिवकी जटाएँ हैं। इनमें प्रवहमान जल गंगा—पार्वती है, जिसे हिमनद (शीतल प्रवाह) कहते हैं। हिमके रूपमें यह अवरोधित जल, चण्ड सूर्यकी किरणोंसे पिघलकर एक बड़े प्रवाहका रूप लेता है, जो चण्ड घोष करता हुआ चट्टानोंसे टकराता हुआ, धरतीको प्रक्षालित करता हुआ गंगा नामसे आगे बढ़ता है तथा समुद्रमें पहुँचकर विरामको प्राप्त होता है।

पौराणिक कथानकके अनुसार भगवान् विष्णुके चरणोंकी धोवनका नाम गंगा है। वामनभगवान्ने भूलोकके नापनेके बाद दूसरा पैर जब स्वर्गलोकतक फैलाया तो ब्रह्माजीने उनके चरण धोकर उस जलको अपने कमण्डलुमें रख लिया। यह पवित्र जल गंगा कहलाया। इस जलको लानेके लिये भगीरथ-प्रयास हुआ। कमण्डलु=वर्षाकारक मेघ। वामनभगवान्= आदित्यमण्डल, जो कि वर्तुल लघु है। विष्णुपाद (चरण)=सूर्यरश्मियाँ, जो द्युलोकसे भूलोक चलकर आती हैं। ब्रह्मा=सूर्य। कथन है—

एष ब्रह्मा च विष्णुश्च शिवः स्कन्दः प्रजापतिः।

(वा०रा० ६।१०५।८, आदित्यहृदय)

सूर्य ही ब्रह्मा हैं, विष्णु हैं, शिव हैं, स्कन्द हैं, प्रजापति हैं। गंगाकी उत्पत्ति एवं प्राकट्यका हेतु यही सूर्य है। पद् गतौ पद्यते+अच्=पद। चर् गतौ चरति+ ल्युट्=चरण। सूर्यरश्मियाँ शाश्वत गतिसे युक्त होनेके कारण विष्णुपद/विष्णुचरण हैं। वाष्परूप अदृश्य गंगा सूर्यकी किरणोंमें रहती है। वाष्परूप दृश्य गंगा मेघोंमें वर्तती है। वर्षाकी बूँदोंमें रहती है। वर्षाकी बूँदोंके रूपमें दिव्य गंगा भूमिपर उतरती है। हिमरूपमें यही गंगा पर्वत-शिखरपर विराजती है। द्रवरूप यही गंगा औषधियों-वनस्पतियोंका आलिंगन करती हुई पर्वतोंमें प्रवाहित होती है। मोटी धाराके रूपमें यह गंगा पहाड़से नीचे उतरती है और विशाल भूभागकी यात्रा करती हुई समुद्रमें लीन हो जाती है। समुद्रसे पुनः वडवानलद्वारा वाष्प बनकर सूर्यकी रश्मियोंमें विश्राम लेती है। यह चक्रिल गंगा हमें नित्य तृप्त करती है। इसके सम्मुख हम सतत नतमस्तक हैं।

अप्सरारूपा गंगा ब्रह्मलोकवासिनी सरिताओंकी अधिष्ठात्री देवी हैं। अप्सरा अप् निष्पन्न शब्द है। जलयुक्त होकर प्रवाहित होनेसे अप्सरा है। यह अप्सरा नदी है। जल=रस। रस=आनन्द। आपमयी रसमयी गंगाको हमारा सादर प्रणाम।

गंगाके दो स्वरूप हैं—आन्तरिक्ष गंगा, भौम गंगा। आन्तरिक्ष गंगाका जल आसुत होनेसे शिवाम्बु कहलाता

है। यही जल नीचे भूमिपर गिरकर ढाबर होनेसे अमृत कहलाता है, क्योंकि इसमें धरतीके धूल-कण होते हैं और धरती हमारी माता है। इस प्रकार भौमगंगा मातृत्वपूर्ण है। आन्तरिक्ष गंगामें गड़गड़ाहटका शब्द एवं विद्युत्की चमक होती है। भौम गंगासे घरघराहट की ध्वनि तथा जलीय दीप्ति होती है। दोनों गंगाओंका जल वरेण्य एवं पापभंजक है। **एतयोः अद्भ्यो नमः।** गंगाके किनारेके नगरोंकी जनसंख्या बढ़ने, लोगोंके मलमूत्रके गंगामें मिलने तथा गंगाके नैसर्गिक जलको अवरुद्ध करनेसे गंगाकी धारा क्षीण, दुर्बल, मलिन, कलुषित होकर भी श्रद्धावानोंके लिये आदरणीय है। गंगाके अमृतमें दूषित गरलके मिलनेसे मनमें खिन्नता होती है तो भी गंगाके भावामृतकी दिव्यतामें कोई कमी नहीं आयी है। गंगा ठीक वैसे ही है जैसे कि लोग हैं। 'जैसे को तैसा' के अनुसार गंगा लोगोंके अनुरूप है। यही गंगाका देवत्व है। गुणात्मक दृष्टिसे गंगाके तीन स्वरूप हैं। वर्तमानमें जो गंगा धरतीपर प्रवाहित हो रही है, इसके दोनों किनारोंका मलिन मन्द प्रवाह जल तामसी गंगा है। मध्यमें तीव्रगतिसे बहनेवाली धारा राजसी गंगा है। मध्यमें भूतलपर सुमन्द धारा सात्त्विक है, जो जिसे उपलब्ध हो, वह उसे ग्रहण करे। गंगामें देहकी मैल धोना वर्जित है, वस्त्र निचोड़ना भी वर्जित है। सवस्त्र एक डुबकी लगाकर 'मूसलवत्' बाहर निकल आना उत्तम गंगा-स्नान है। अनन्य मातृभाव होनेपर पैरसे गंगाजलका स्पर्श निषिद्ध है।

नाद (ध्वनि)-युक्त होनेसे गंगा नदी है। नार (जल)-युक्त होनेसे गंगा नारी है। गंगा अपने उद्गम-स्थान हिमालयसे निकलनेके बाद अपना विस्तार-प्रसार-फैलाव करती जाती है। इसलिये स्तृ स्तृणोति विस्तारे+क्विप्=स्त्री दीर्घत्वम् है। सहेन त्रीन् गुणान् त्रिगुणात्मिका होनेसे भी स्त्री है। उद्गमसे अस्तपर्यन्त समस्त भूमिका मापन करनेसे यह मा (मा माति मापने+क्विप्) है। दिव्य गुणोंसे सम्पन्न होनेके कारण गंगा देवी है। तीन दिशाओं (अधो, ऊर्ध्व, तिर्यक्) में गमन करनेसे यह त्रिपथगा है। चट्टानोंसे टकरानेके बाद गंगाका जल उछलता एवं बिखरता है। स्कन्दति, स्कन्दयति उछाल उत्पन्न करनेसे यह स्कन्दमाता है। धारावती होनेसे गंगा राधा (वर्णविपर्यय) है। अपनी समस्त कामनाओंको जला देनेवाली सकाम स्त्रीका नाम राधा (राध्नोति सकलान् कामान्) है। गंगा मात्र एक नदी नहीं है, शक्ति है, सत्ता है। दुष्ट दुर्मुख दुश्शील विधर्मी गंगाके प्रति सम्मानका भाव नहीं रखते, परंतु जो गंगाकी दिव्य जैविक शक्तिसे परिचित हैं, वे गंगाके प्रभावके समक्ष झुकते हैं। अलीगढ़में एक ब्राह्मण हरिद्विवेदीके वंशमें अबसे शताधिक वर्ष पूर्व एक गृहस्थ महात्मा थे। उनके कमण्डलुमें गंगा नित्य विराजती थीं। अलीगढ़के तत्कालीन अँगरेज जिलाधीशने इस तथ्यका परीक्षण किया। उन्होंने अपने हाथसे हस्ताक्षरयुक्त पत्र लिखकर अपने अर्दलीद्वारा उसे गंगामें फेंकवा दिया। उन्होंने देखा कि उनका वह पत्र उन महात्माके कमण्डलुके जलमें वर्तमान है। ऐसे दृष्टान्तोंसे गंगाकी शक्तिके प्रति व्यक्तिका विश्वास पुष्ट होता है। ब्रह्मतत्त्वका द्रवीभूतरूप गंगा माँ सुरदुर्लभ होकर भी मनुष्यसुलभ हैं। गंगासेवीजन कितने भाग्यशाली हैं!

जो गंगा हमारे बाहर हैं, वहीं हमारे भीतर भी हैं। वेदका मन्त्र है—

यदन्तरं तद् बाह्यं यद् बाह्यं तदन्तरम्।

(अथर्ववेद २। ३०। ४)

यद्=तद्=ब्रह्म=गंगा=स्त्री=प्रकृति। हमारे शरीरके भीतर रक्तिम गंगा हैं। हृदय समुद्र है। समुद्र=अन्तरिक्ष—निघण्टु १। ३। हृदयसे रक्त धमनीद्वारा पूरे शरीरमें जाता है। पूरे शरीरका रक्त शिराद्वारा हृदयमें आता है। इनमें गति एवं शब्द दोनों है। इसलिये ये गंगा हैं। हृदयमें स्पन्दन धक्-धक् शब्द होता है। शिराओं और धमनियोंमें यही शब्द स्पर्शसे सुनायी पड़ता है। महाधमनी एवं महाशिरा—ये दो गांगप्रवाह हैं। शुद्ध रक्तवाही शिरा स्वर्गकी गंगा है। अशुद्ध रक्तवाही धमनी धरतीकी गंगा है। इन दोनों गंगाओंका उद्गम एवं आश्रय हृदयसमुद्र (विष्णुवासस्थान) है। गंगाकी ये धाराएँ टेढ़ी-मेढ़ी गतिसे प्रवाहित होती हुई सम्पूर्ण शरीर एवं इसके

अंगांगोंका पोषण करती हैं। इसके अतिरिक्त देहमें अनेक छोटे-छोटे प्रवाह रसस्रावी ग्रन्थियोंमेंसे होते हैं, जो अन्ततः रक्तमें ही परिसमाप्त होते हैं। ये सब मुख्य गंगाकी सहायक धाराएँ हैं। हमारे शरीरमें रक्तपरिवाह गंगाकी भाँति श्वास-प्रश्वासकी सूक्ष्म वाष्पीभूत गंगा जन्मसे ही नित्य प्रवाहित होती रहती है। इसका प्रवाह नासिकासे फुफ्फुसपर्यन्त सतत बना रहता है। यह प्राणगंगा है। इसमें गति और ध्वनि दोनों हैं। सोते समय लोग खर्राटे भरते हैं। यह श्वसन शब्द आर्द्रीभूत श्वास-प्रवाहको गंगाकी संज्ञा प्रदान करता है। फुफ्फुस आकाश है। नासिका घ्राणसंस्थान होनेसे भूमिपटल है। इन दोनोंके बीचके प्रवाहको गंगा कहा जायगा। योगशास्त्रमें वाम नासाछिद्रका प्रवाह गंगा है, दक्षिण नासाछिद्रका प्रवाह यमुना है। इन दोनों प्रवाहोंका मिलन नासामूल भृकुटिस्थान है। दोनोंका सम्मिलित प्रवाह सुषुम्णा है, जो आगे चलकर पुनः दो भागोंमें विभक्त होकर वाम एवं दक्षिण फुफ्फुसके आकाशमें स्थान पाता है। दोनों संयुक्त प्रवाहोंका नाम मुक्तिगंगा (गोलोककी गंगा) है। इस गंगामें जो डुबकी लगाते—ध्यान करते हैं, वे गोलोक, ज्ञानलोक, प्रकाशलोक, सूर्यलोक, ब्रह्मलोकमें स्थान पाते हैं। ऐसे योगीजनोंको हमारा नमस्कार।

देहके बाहर विराट् पुरुष वा प्रकृतिमें दो सशब्द प्रवाह हैं—प्रकाश-अन्धकार, दिवस-रात्रि। इनमेंसे प्रातःकाल सित (गंगा) है तथा सायंकाल असित (यमुना) है। इनमेंसे एक प्रकाशके प्रवाहका जन्मदाता है तो दूसरा अन्धकारके प्रवाहका जनक। प्रातः एवं सायं दोनों संध्याओंमें पक्षियोंका कलरव होता है। इसलिये इसे गंगा मानना पड़ेगा। सन्ध्याकर्म (सप्राणायाम गायत्री जप)-का यह अनिवार्य तथा प्रशस्त काल है। सितासित गंगायमुनीय प्रवाहके सम्बन्धमें यह मन्त्र है—

सितासिते सरिते यत्र सङ्गथे
तत्राप्लुतासो दिवमुत्पतन्ति।
ये वै तन्वं विसृजन्ति धीराः
ते जनासो अमृतत्वं भजन्ते॥

(ऋग्वेद १०।७५। परिशिष्टगतमन्त्र सित=श्वेत। असित=अश्वेत कृष्ण। संगथे=संगमे। अप्लुतासः=विमान। अमृतत्वम्=आनन्दम्)

सितासिते (द्वे) सरिते यत्र सङ्गथे=सित (दिन प्रकाश ज्ञानगंगा इडा) तथा असित (रात्रि अन्धकार अज्ञान यमुना पिंगला) दो धाराओंका जहाँ मिलन होता है—दिवागंगा-निशागंगाका संयोग होता है।

तत्र अप्लुतासः दिवम् उत्पतन्ति=वहाँ (उसमें) डूबे हुए (ध्यानस्थ, शान्तचित्त)-को दिन (ज्योति)-का प्राकट्य (दर्शन) होता है।

ये वै तन्वम् विसृजन्ति धीराः=वे जो निश्चय ही विद्वान् हैं तथा अपनी बुद्धिको व्यापक (सूक्ष्म) बनाते हैं।

ते जनासः अमृतत्वं भजन्ते=वे धीरजन अमृतत्व (आनन्द, आह्लाद, मोक्ष, परमशान्ति) प्राप्त करते हैं।

प्रकाशकी धारा आती है, अन्धकारकी धारा जाती है, प्रातःकाल होता है, प्रकृतिमें जंगम शब्द (पक्षियोंका चहचहाना) होता है। पुनः जब प्रकाशकी धारा जाती है, अन्धकारकी धारा आती है, सायंकाल होता है, प्रकृति शब्दायमान (खगध्वनि) होती है। इस प्रकार कालकी गति एवं प्राकृतिक रवके कारण दो गंगाओंका जन्म होता है—'प्रातर्गंगा, सायंगंगा'। इन दोनों गंगाओंमें डुबकी लगाने—सन्ध्या गायत्री करने—ध्यान करनेसे आनन्दकी प्राप्ति होती है। ज्ञान जाग्रतावस्था है, अज्ञान सुप्तावस्था। जीवनमें ज्ञानगंगाकी जितनी आवश्यकता है, उतनी ही अज्ञानगंगाकी। ज्ञानगंगाका प्रवाह राजसिक है, अज्ञानगंगाकी धारा तामसिक है। इन दोनों धाराओंका विपरिमिलन (किंचित् ठहराव) सात्त्विक है। अखिल विश्व राजसिक एवं तामसिक सुखमें डूबा रहता है, किंतु धीरजन अपने चित्तको सात्त्विक सुखमें लीन करते हैं। यह सात्त्विक सुख अमृत (अविनश्वर) है। अन्धकारमें रहते हुए जब हमें प्रकाश दीखता है तो अतीव आनन्द मिलता है। धूपमें रहते झुलसते हुए जब हमें छाया (अन्धकार) मिलती है, तो हमें अमित आनन्द होता है।

यह आनन्द दो विरुद्ध धाराओंके मिलनका फल है। यह वैसे ही है जैसे दो विपरीत लिंगों—स्त्री एवं पुरुषके संगमसे जन्य आनन्द। परंतु यह आनन्द नश्वर है, सितासितके संगमका आनन्द शाश्वत है। गंगा आनन्दकी मूर्ति है। अस्यै नमः।

गंगाके जाह्नवी नाम पड़नेके सम्बन्धमें एक कथा है—

राजा सुहोत्रके पुत्र राजर्षि जह्नुकी यज्ञशालाको गम्यमान गंगाने अपने वेगसे मिटा दिया। इससे कुपित हो जह्नुने गंगाको पी लिया। पुनः भगीरथके प्रार्थना करनेपर गंगाको उगल दिया और गंगा आगे बढ़ती हुई समुद्रसे जा मिलीं। तबसे गंगाका नाम जाह्नवी पड़ा। इस कथाके भावबोधमें निहित सत्य कुछ और हैं। गंगाको न कोई निगल सकता है, न ही गंगा किसीकी पुत्री या पत्नी हैं। गंगासे और गंगामें सभी हैं। हा त्यागे जहाति+नु=जह्नु (आकारलोपः द्वित्वं च)। जह्नुका अर्थ है—त्यागशील, नित्य त्यागी, अपरिग्रही, परिव्राट् सूर्य। सूर्य अपनी किरणोंसे भूजलका अवशोषणकर वर्षारूपमें उसे उगल देता है। यह गंगोत्पत्तिकी नित्य कथा है। जह्नु+अज्=जाह्नवी। शक्तिरूपा गंगाकी नित्यता एवं सर्वोपरिता बनाये रखनेके लिये ऐसी आर्ष ऊहा अनिवार्य है। गति और गीतसे युक्त, गौरतनु, गौरवमयी गंगाकी गवेषणा करते हुए इस निष्कर्षपर पहुँचा हूँ कि गंगाजी कलियुगकी आरोग्यदा ओषधि हैं, सर्वसंस्तुत सर्वपोषक सर्वाश्रया देवी हैं, दीन-दुखियोंकी माता हैं, भयभीत जनोंकी त्राता हैं तथा हम सभीकी चेतना हैं। गंगाके दर्शनसे चित्तवृत्तियाँ विरामताको प्राप्त होती हैं और यह भाव उठता है—

गङ्गे यत् ते तपः तेनाऽहं तपस्वी भूयासम्।
गङ्गे यत् ते तेजः तेनाऽहं तेजस्वी भूयासम्।
गङ्गे यत् ते ओजः तेनाऽहं ओजस्वी भूयासम्।
गङ्गे यत् ते वर्चः तेनाऽहं वर्चस्वी भूयासम्।
गङ्गे यत् ते ऋचः तेनाऽहं अर्चस्वी भूयासम्।
गङ्गे यत् ते महः तेनाऽहं महस्वी भूयासम्।
नमामि गङ्गे तव पादपद्मम्।
भवामि गङ्गे तव हृद्यपुत्रः।

'गंग सकल मुद मंगल मूला'

(श्रीकुलदीपजी उप्रेती)

भारतकी सांस्कृतिक विरासतको अक्षुण्ण रखनेवाले प्रमुख आधार-स्तम्भोंमें भगवत्पदी गंगाका स्थान महत्त्वपूर्ण है। मानवी कायाके लिये हृदयकी तरह आर्यावर्तके लिये गंगाकी महत्ता है। मनुष्यके सामाजिक, आर्थिक एवं आध्यात्मिक उन्नयनमें सुरसरिताके अप्रतिम अवदानको दृष्टिगत रखते हुए मनीषियोंने उन्हें मातृगौरव प्रदान किया।

वैदिक वाङ्मयमें पुण्यसलिलाका गौरवगान हुआ है। विश्व साहित्यके प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेदके प्रसिद्ध नदीसूक्त 'इमं मे गङ्गे' में वे सभी नदियोंमें अग्रणी स्थानपर हैं। निरुक्तभाष्यकी व्याख्याके अनुसार वे प्राणियोंको विशिष्ट स्थान में पहुँचाती हैं—'गमयति या प्राणिनो विशिष्टस्थानमिति गङ्गा।' इसलिये उन्हें 'गंगा' कहा जाता है। पौराणिक साहित्यमें अनेक स्थानोंपर उनका महिमामण्डन हुआ है। नरसिंहपुराणमें गंगाजीकी महिमाको उद्घाटित करते हुए उन्हें तीर्थमयी कहा गया है—'सर्वतीर्थमयी गङ्गा सर्वदेवमयो हरिः। सर्वशास्त्रमयी गीता सर्वधर्मो दयापरः॥' (नरसिंहपुराण ६६।४१) नारदपुराणमें गंगाके समान नदी न होनेका उल्लेख प्राप्त होता है—'नास्ति गङ्गासमा नदी॥' (नारदपुराण पूर्व० ६।६०) भगवान् श्रीकृष्णने अपनी विभूतियोंमें शुमार करके 'स्रोतसामस्मि जाह्नवी' कहकर उन्हें गौरवान्वित किया है।

पुण्यतोया जाह्नवीका अवतरण सकल संसारके

कल्याणहेतु हुआ है। गंगाजीके दर्शन, स्मरण, जलपान और स्नानसे अपरिमित लाभ प्राप्त होते हैं। धर्मग्रन्थ इसकी पुष्टि करते हुए कहते हैं—**'पुनाति कीर्तिता पापं दृष्टा भद्रं प्रयच्छति। अवगाढा च पीता च पुनात्यासप्तमं कुलम्॥'** (महा०ती०या०प० ८५। ९३) गंगा अपना नाम उच्चारण करनेवालेके पापोंका नाश करती हैं, दर्शन करनेवालेका कल्याण करती हैं और स्नान-पान करनेवालेकी सात पीढ़ियोंतकको पवित्र करती हैं। यहाँतक कि जहाँ-जहाँ, जिन-जिन क्षेत्रोंमें उनकी गति होती है, वे सभी क्षेत्र उनके प्रभावसे सिद्धक्षेत्र-तपोवन बन जाते हैं—**'यत्र गङ्गा महाराज स देशस्तत् तपोवनम्। सिद्धिक्षेत्रं च तज्ज्ञेयं गङ्गातीरसमाश्रितम्॥'** (महा० तीर्थ० ८५। ९७)

कलिकालमें भागीरथीकी विशेष महिमा बतायी गयी है। महाभारतके अनुसार सत्ययुगमें सभी तीर्थ फलदायक होते हैं। त्रेतामें पुष्कर तीर्थ, द्वापरमें कुरुक्षेत्र तथा कलियुगमें गंगाकी विशिष्ट महिमा है—**'सर्वं कृतयुगे पुण्यं त्रेतायां पुष्करं स्मृतम्। द्वापरेऽपि कुरुक्षेत्रं गङ्गा कलियुगे स्मृता॥'** (महा०तीर्थ० ८५। ९०) गंगाजीके सेवनसे अर्जित पुण्योंका उदय होता है—**'विशेषात्कलिकाले च गङ्गा मोक्षप्रदा नृणाम्। कृच्छ्राच्च क्षीणसत्त्वानामनन्तः पुण्य-सम्भवः॥'** (पद्मपु० सृ० ६०। १२३) इस त्रिलोकीमें त्रिदेवस्वरूपिणी गंगाजीके सदृश फलदायी और कल्याणकारी कोई नहीं, वे भोग और मोक्षप्रदायक हैं, ऐसी शास्त्रीय मान्यता है—**'ब्रह्मविष्णुशिवदेवरूपिणी सर्वयज्ञफलदा शिवप्रदा। सर्वदानजपभोगमोक्षदा गङ्गया नहि समं जगत्त्रये॥'** (काशी-रह० २१। ४२)

पुराणोंके अतिरिक्त संस्कृतके अन्य ग्रन्थोंमें भी गंगाजीका यथेष्ट गुणगान हुआ है। आदिकवि वाल्मीकि, भगवत्पाद शंकराचार्य, महर्षि वेदव्यास, महाकवि कालिदास, महाराज भर्तृहरि, पण्डितराज जगन्नाथ इत्यादिने पुण्यश्लोका गंगाका यशोगानकर अपनी लेखनीको धन्य किया। देवभूमि हिमालयकी गोदमें अवस्थित कूर्मांचलके सुविख्यात कवि लोकरत्न पन्त (गुमानी) द्वारा देववाणीमें रचित 'गाङ्गप्रबन्धम्' (गंगार्याशतक) नामक रचनाके सौ पदोंमें सलिलश्रेष्ठा गंगाकी महिमाको सविस्तार निरूपित किया गया है, वह गंगानुरागियोंके लिये अध्ययनीय है।

राष्ट्रभाषा हिन्दीके अनेक लब्धप्रतिष्ठ कवियोंने भी अपनी कृतियोंमें गंगाजीकी महिमाका व्यापक गुणगान किया है। सूर, तुलसी, कबीर, जायसी, सेनापति, पद्माकर, विद्यापति, जगन्नाथदास 'रत्नाकर', भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, जयशंकर प्रसाद, अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' एवं सुमित्रानन्दन पन्त इत्यादिने अपनी रचनाओंमें विष्णुपदीकी महत्ताका विशद वर्णन किया है। हिन्दी कवियोंमें कलिपावनावतार गोस्वामी तुलसीदासजीने देवनदी भगवती भागीरथीके माहात्म्यको जिस प्रकार सरल तथा सरस भाषामें अपने ग्रन्थोंमें वर्णित किया, हिन्दी साहित्यमें अन्यत्र ऐसी अभिव्यक्ति अप्राप्य है।

हमारे धर्मशास्त्रोंमें गंगाजीकी उत्पत्तिविषयक कथाओंकी बहुतायत है। शास्त्रोंमें वर्णित प्रसंगोंके आधारपर संक्षेपमें कहा जा सकता है कि गंगाजी ब्रह्मा-विष्णु-महेश—इन तीनों प्रधान देवताओंकी शक्तियोंसे समन्वित हैं। गंगावतरणसे सम्बन्धित कथा-प्रसंगोंकी भी पुराणों तथा अन्य धार्मिक ग्रन्थोंमें प्रचुरता है। सम्पूर्ण वृत्तान्तमें न जाकर साररूपमें इतना उल्लेख समुपयुक्त है कि परम प्रतापी इक्ष्वाकुवंशकी चार पीढ़ियोंके प्रबल साधना-पुरुषार्थके सुफलसे भवतारिणी गंगाजीका इस धरापर प्रादुर्भाव हुआ। महाराजा सगर, अंशुमान् तथा दिलीप गंगावतरणहेतु दीर्घावधितक तप करते हुए प्रयत्नसिद्धिके बिना परलोकगामी होते रहे। उनकी चौथी पीढ़ीके राजा भगीरथद्वारा एक हजार वर्षोंतक कठोर तपस्या किये जानेके फलस्वरूप ज्येष्ठ शुक्ल दशमीको भूलोकमें गंगाजीका अवतरण हुआ। उनके पुण्यप्रतापसे इस धराके प्राणियोंका विविध प्रकारसे कल्याण होनेके साथ ही कपिलमुनिके शापसे राख हुए सगरपुत्रोंको

मुक्ति मिली। तबसे गंगाजीकी विमल कीर्तिके साथ-साथ उनका सुयश भी समस्त लोक-लोकान्तरोंमें प्रसरित होकर प्रवर्धमान है।

मृत्युके उपरान्त अन्तिम संस्कार गंगातटके समीप किये जाने अथवा ऐसा संयोग न हो पानेपर पार्थिव देहके भस्मावशेषका कुछ अंश मुक्तिलाभके लिये पतितपावनी भागीरथीमें प्रवाहित करनेकी चाह अगणित व्यक्तियोंके मनमें रहती है। कई लोग मौखिक रूपसे तो कुछ लिखित ढंगसे इसे व्यक्त करते रहे हैं। भारतके प्रथम प्रधानमन्त्री जवाहरलाल नेहरूने भी अपनी वसीयतमें देहावसानके पश्चात् गंगाजीमें अस्थिप्रवाह किये जानेकी इच्छा जाहिर की थी। उन्होंने अपनी मृत्यु (देश अथवा विदेश कहीं भी होनेपर) शरीरका दाह-संस्कार वहीं सम्पन्न करनेके बाद अस्थियोंको इलाहाबाद भेजकर मुट्ठीभर भस्मको गंगामें प्रवाहित करनेका उल्लेख अपनी वसीयतमें किया है—When I die, I should like my body to be cremated. If I die in a foreign country, my body should be cremated there and my ashes sent to Allahabad. A small handful of these ashes should be thrown into the Ganga and the major portion of them disposed of in the manner indicated below. No part of these ashes should be retained or preserved.

वसीयतको समापनकी ओर बढ़ाते हुए इस महान् सांस्कृतिक विरासतके प्रति श्रद्धांजलिके रूपमें अपनी भस्मीभूत देहकी मुट्ठीभर भस्मको भारतके पद पखारनेवाले समुद्रमें मिल जानेके लिये इलाहाबादकी गंगामें प्रवाहित किये जाने हेतु उन्होंने अनुरोधपूर्वक लिखा है—And as witness of this desire of mine and as my last homage to India's cultural inheritance, I am making this request that a handful of my ashes be thrown into the Ganga at Allahabad to be carried to the great ocean that washes India's shore. 'पण्डित नेहरूने गंगाको भारतीय संस्कृति और सभ्यताका प्रतीक मानते हुए इस वसीयतनामेमें जो भाव अभिव्यक्त किये हैं, वे पठनीय हैं।

उपर्युक्त विहित विवेचनका आशय यह नहीं है कि गंगाजी केवल हिन्दू धर्मावलम्बियोंके लिये ही वरेण्य हैं अथवा वे सिर्फ उनके लिये ही कल्याणकारी हैं।

हिन्दुओंके अलावा अन्य मतावलम्बी भी सुरसरिताकी महत्तासे प्रभावित होकर उनके प्रति आस्थावान् रहे हैं। सम्राट् अकबरके नवरत्नोंमेंसे एक अब्दुर्रहीम 'खानखाना' ने गंगाजीको भवतारक माना है। उन्होंने विष्णुपदीका वन्दन करते हुए उद्धारके समय विष्णुरूप न बनाकर शिवस्वरूप बनानेके लिये प्रार्थना की है—*'अच्युत चरन तरंगिनी शिव सिर मालति माल। हरि न बनायो सुरसरि कीजौ इंदव भाल॥'* अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त शहनाई-वादक भारतरत्न उस्ताद बिस्मिल्ला खाँकी गंगाजीके प्रति अगाध निष्ठा थी। बनारसके गंगातटपर वे कई घण्टोंतक भावपूर्वक शहनाई-वादन किया करते थे। उनके अनुसार इससे गंगामैया प्रसन्न होती हैं। जब वह गंगाजीको समर्पित 'गंगा दुआरे बधइया बाजे' की धुन अपनी शहनाईमें छेड़ते तो उपस्थित श्रोता भाव-विभोर हो जाते थे। गंगाजीकी महत्ताके बाबत उनके द्वारा व्यक्त किये गये भावोद्गार मननीय हैं।

भक्तिकालकी कृष्णाश्रयी शाखाके प्रमुख कवि सैयद इब्राहिम 'रसखान' ने गंगाजलको संजीवनीके समान लाभकारी बताते हुए कहा—*'बैद की औषध खाउँ कछू न करौं व्रत-संजम री! सुनु मोसे। तेरोइ पानि पियौं 'रसखानि' संजीवन लाभ लहौं सुख तोसे॥'* मुसलिम सल्तनतके दौरान अधिकांश शासक गंगाजल प्रयुक्त करते थे। बर्नियर, इब्नबतूता आदि यायावरोंके संस्मरणों तथा अबुल फजल, एडवर्ड मूर इत्यादिकी रचनाओंमें ऐसा वर्णन मिलता है। पाश्चात्य जगत्के अनेक जलविज्ञानियों एवं चिकित्सा-शास्त्रियोंने समय-समयपर गंगाजलको विभिन्न पहलुओंसे जाँचा-परखा। इन परीक्षणोंके परिणामोंसे गंगाजलके स्वास्थ्यकर, जीवनशक्तिवर्द्धक होनेकी प्राचीन भारतीय मान्यताएँ पुष्ट

हुई हैं। इस जलमें संक्रामक बीमारियों, उदरविकारों तथा चर्मरोगोंको नष्ट करनेकी अद्भुत सामर्थ्य पायी गयी।

प्राज्ञ पुरुषोंद्वारा गंगाजीको भेषजमूर्ति, सर्वव्याधियोंके लिये उत्तम ओषधि बताते हुए नमन किया गया है—**'सर्वदेवस्वरूपिण्यै नमो भेषजमूर्तये। सर्वस्य सर्वव्याधीनां भिषक्श्रेष्ठ्यै नमोऽस्तु ते॥'** भैषज्य ग्रन्थोंमें गंगाजलके गुणोंको उल्लिखित करते हुए उसे शीतल, सुस्वादु, स्वच्छ, अत्यन्त रुचिकर, पथ्य, पकानेयोग्य, पाचन शक्ति बढ़ानेवाला, सर्वपापहारी, प्यासको शान्त करनेवाला तथा मोहनाशक, क्षुधा और बुद्धिवर्द्धक बताया गया है—**'शीतं स्वादु स्वच्छमत्यन्तरुच्यं पथ्यं पाक्यं पाचनं पापहारि। तृष्णामोहध्वंसनं दीपनं च प्रज्ञां धत्ते वारि भागीरथीयम्॥'** शरीरके जर्जर तथा व्याधिग्रस्त होनेकी स्थितिमें इस जलको भेषज कहा गया है—**'शरीरे जर्जरीभूते व्याधिग्रस्ते कलेवरे। औषधं जाह्नवीतोयं वैद्यो नारायणो हरिः॥'** पण्डितराज जगन्नाथने सत्य ही कहा है कि जो विवेकरहित हैं, अन्धे, पंगु, जन्मसे बहरे, गूँगे हैं, जिनमें किसी भूत-प्रेतका आवेश हो गया है, जिनके पापोंसे छुटकारेके सभी मार्ग रुक गये हैं। देवताओंने भी सदाके लिये जिनका परित्याग कर दिया है और जो नरकमें गिरने जा रहे हैं—ऐसे पतित प्राणियोंके रक्षार्थ माँ गंगा परम ओषधिरूप हैं—**'जडानन्धान् पङ्गून् प्रकृतिबधिरानुक्तिविकलान् ग्रहग्रस्तानस्ताखिलदुरितनिस्तारसरणीन्। निलिम्पैर्निर्मुक्तानपि च निरयान्तर्निपततो नरानम्ब त्रातुं त्वमिह परमं भेषजमसि॥'** (गंगालहरी १५)

गंगाकी कहानी भारतकी कहानी है। भारतका भूत, वर्तमान तथा भविष्य अभिन्नरूपेण गंगासे जुड़ा हुआ है। गंगातट भारतके वैभवशाली इतिहासके साक्षी रहे हैं। इन तटोंपर अनेकों संस्कृतियोंने जन्म लिया। अट्ठासी हजार ऋषियोंके ज्ञानसत्रोंका शुभारम्भ इसी भू-भागमें हुआ। धर्मसूत्रों, वैदिक ऋचाओं, पुराणों, उपनिषदों, भैषज्य ग्रन्थोंके साथ ही शिल्प, गीत-संगीत, नृत्य-नाट्यका प्रणयन और ऋषि-मुनियोंकी साधना-उपासनाका पल्लवन-फलन भी यहीं हुआ। **'वसुधैव कुटुम्बकम्' 'सर्वे भवन्तु सुखिनः ·····'** इत्यादि वैश्विक कल्याणके स्वर सर्वप्रथम इन घाटियोंसे सारे संसारमें प्रस्फुटित हुए। योग और आयुर्वेदका जन्म इन्हीं पुण्यक्षेत्रोंमें हुआ। पावन गंगोदकको अँजुरीमें लेकर यहाँ अनेकों देशप्रेमी स्वराजप्राप्तिहेतु कटिबद्ध हुए। कुल मिलाकर कहा जाय तो आदिमानवसे महामानव बननेके साधन-सूत्र पहले-पहल यहीं सीखने-समझनेको मिले।

अतीतमें वैभवसे परिपूर्ण गंगा हमारे कलुषित चिन्तन, श्रद्धाभावके तिरोधान, अनियोजित नियोजन तथा अतिशय दोहनके कारण इस दौरतक पहुँचते-पहुँचते चौतरफा दबावोंसे घिरकर बुरे दौरसे गुजर रही हैं। एक ओर बड़े-बड़े बाँध उन्हें लीलनेको तैयार हैं, वहीं दूसरी तरफ शहरोंका सीवर, गन्दे नाले और उद्योगोंसे निकलनेवाले घातक रसायन सम्मिलित रूपसे उनके अस्तित्वको मटियामेट करनेको आमादा हैं। गंगाके प्रदूषण और इसके निवारणका विषय यद्यपि पर्यावरणविशेषज्ञों तथा जलविज्ञानियोंका है तथापि प्रसंगवश इतना जरूर कहा जा सकता है कि सरकारको पिछली योजनाओंमें हुई भूलोंसे सीख लेते हुए पर्यावरणविदों, गंगा-संरक्षणके कार्यसे जुड़े व्यक्तियों तथा संगठनोंसे व्यापक विचार-विमर्श करते हुए व्यावहारिक योजनाएँ बनानी चाहिये। इसके अतिरिक्त वैयक्तिक स्तरपर भी सभी देशवासियोंद्वारा गंगाको मातृवत् समादर देकर उन्हें संरक्षित तथा प्रदूषण-मुक्त करनेहेतु प्रयास करने चाहिये।

फौरी तौरपर पॉलिथीन, प्लास्टिकके दोने-प्लेटें, विविध संस्कारोंके लिये उतारे गये केश, पुष्प, निष्प्रयोज्य पदार्थ, विभिन्न उत्सवोंके दौरान निर्मित होनेवाली प्लास्टर ऑफ पेरिस इत्यादिकी मूर्तियों एवं शवोंका विसर्जन, अधजले शवोंका बहाव तथा डीजलसे चलनेवाली मोटरबोटोंका परिचालन पूर्णतया प्रतिबन्धित करते हुए कपड़े धोने, स्नानके दौरान शैम्पू, साबुन, तेल-उबटन आदिके प्रयोगपर रोक लगायी जाय। गंगाके समीपवर्ती

क्षेत्रोंमें स्थापित फैक्ट्रियोंको यथासम्भव अन्यत्र स्थापित किया जाय। सीवर, गन्दे नालों तथा कारखानोंसे निकलनेवाले हानिकारक द्रवको किसी भी स्थितिमें गंगामें न गिरने दिया जाय। औसत जल-प्रवाह हरदम बरकरार रखे जानेकी व्यवस्था सुनिश्चित की जाय। 'गंगा प्रिजरवेशन एक्ट' बने तथा सख्तीसे उसका पालन किया जाय। गंगामें किसी भी प्रकारके प्रदूषण फैलानेको अक्षम्य अपराधकी श्रेणीमें सम्मिलित करते हुए ऐसे कृत्योंमें संलिप्त पाये जानेपर कठोर दण्डके प्रावधान हों। गंगाको राष्ट्रीय नदी घोषित कर देना ही पर्याप्त नहीं है। गंगाको राष्ट्रीय स्वरूप प्रदान किया जाना इससे अधिक जरूरी है।

इसके साथ-साथ देवसरिता गंगाको संरक्षित करनेके अभियानमें देवतात्मा हिमालयको भी साझा किया जाना चाहिये। कार्बन उत्सर्जन, ग्रीन हाउस गैसोंके बढ़ते प्रभावसे ग्लेशियर सिकुड़ते जा रहे हैं। गंगा और हिमालयके संरक्षणहेतु व्यष्टिगत और समष्टिगत स्तरपर नये सिरेसे चिन्तन-मननके ठोस उपाय किये जाने आवश्यक हैं। इसके अलावा टिकाऊ विकास (Sustanable Development) की वैश्विक अवधारणाके विपरीत माने जा रहे बड़े बाँधोंके स्थानपर वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों—सौर ऊर्जा, बॉयो गैस, पवन ऊर्जाको बढ़ावा देनेकी नीतियाँ बनें। नदीके बहाववाली (रन ऑफ रीवर) परियोजनाओंसे बिजली पैदा की जाय। यहाँ उल्लेख्य है कि पश्चिमी देशोंसे भारतकी जलवायुमें काफी भिन्नता है। भारतके अधिकांश हिस्सोंमें बारहों मास सूर्यदेवकी अनुकम्पा बरसती है, जिससे यहाँ सौर ऊर्जाको उत्पादित किये जानेकी बहुत अधिक गुंजाइश है। गंगाके अस्तित्वको ताखमें रखकर केवल विद्युत्-उत्पादनकी ओर ध्यान केन्द्रित करना चन्दनके वनको नष्टकर उससे कोयला बनाने-जैसी विचारमूढ़ता है। स्मरणीय तथ्य है कि विद्युत्के लिये अन्य विकल्प तलाशे जा सकते हैं, लेकिन गंगाका कोई विकल्प नहीं खोजा जा सकता।

ध्यातव्य है कि आजसे लगभग डेढ़ सौ वर्ष पूर्व इंग्लैण्डमें टेम्स नदीकी तत्कालीन गन्दगी और दुर्गन्धके कारण कई बार ब्रिटेनकी पार्लियामेन्ट स्थगित करनी पड़ी थी। एक समय बॉयोलॉजिकली मृत घोषित 'टेम्स' विश्वकी निर्मल नदियोंमें शुमार होकर सैलानियोंके आकर्षणका केन्द्र बन चुकी है। सन् १९४७-७७ ई० के कालखण्डमें सीवरका गन्दा नाला समझी जानेवाली अमरीकी 'हडसन' नदी मछुवारोंके अथक प्रयासोंसे इतनी निर्मल हो चुकी है कि बिना शोधित किये वह न्यूयार्कवासियोंको जलापूर्ति कर रही है। देश-विदेशमें हुए ऐसे अनेकों सत्प्रयासोंसे सीख लेकर पुरातन ज्ञान तथा अधुनातन विज्ञानके समन्वयसे गंगाको भारतकी सबसे निर्मल नदी बनाया जा सकता है, जो देशकी अन्य नदियोंके लिये भी सार्थक उदाहरण होगा।

यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं है कि भारतका वैभव, उसकी सम्पन्नता गंगापर अवलम्बित है। गंगाके बिना भारत अकिंचित्कर हो जायगा। उनके न रहनेसे राष्ट्र एवं राष्ट्रगान अधूरा रह जायगा, वैदिक-पौराणिक सन्दर्भ अपूर्ण हो जायेंगे। गंगासे प्रत्यक्षतः जुड़ी देशकी आधी आबादीका भविष्य अन्धकारमय तथा जीवन संकटापन्न हो जायगा और करोड़ों लोग आधिदैविक-आध्यात्मिक अधिगमोंसे वंचित रह जायेंगे। पितरोंको तर्पण, देवोंको अर्पण, अतृप्त आत्माओंको तृप्तिलाभ पुण्यसलिलाके बिना कैसे मिल सकेगा? कुँआरियाँ अपने मांगल्यके लिये मनौतियाँ किससे माँगेंगी? नव-दम्पती गंगापुजैया हेतु कहाँ जायँगे? सुहागिनें अपने अखण्ड सौभाग्यहेतु निहोरा किससे करेंगी? पैरोडी गीत—*'गंगा मैयामें जबतक ये पानी रहे, मेरे ललना तेरी जिन्दगानी रहे'*-का गायनकर अपने लाड़लेके सुमंगल और दीर्घायुष्यके लिये माताएँ मन्नतें किससे करेंगी? अस्तु, भारतीय परम्पराओंकी संवाहक गंगाको बचाना एवं निर्मल बनाना सर्वाधिक आवश्यक है। समयकी इस पुकारको अनसुना नहीं किया जाना चाहिये।

गंगा पतितपावनी

(डॉ० श्रीराजलक्ष्मीजी वर्मा)

गंगाका नाम भारतीय संस्कृतिसे इतने अविभाज्य रूपसे जुड़ा है कि उसके बिना भारतीय संस्कृतिकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। गंगा मात्र एक नदी नहीं है, उसने एक मूल्यका रूप ग्रहण कर लिया है—पवित्रता, आध्यात्मिकता और तपस्याका एक मूल्य!

गंगाके इस महत्त्वके अनेक कारण हैं। गंगोत्रीसे लेकर सुन्दरवनतकका विशाल भूभाग गंगाकी गोदमें पला है; आर्योंकी विशाल संस्कृतिका विकास गंगाके आश्रयमें ही हुआ है। इसीके तटपर वाजपेय और सोमयागोंके बृहत् आयोजन हुए तथा इसीकी पवित्र छायामें विराट् वैदिक धर्मकी संस्थापना हुई। प्राचीन कालसे ही गंगा आर्यजातिके जीवनके सभी पक्षोंसे इतने घनिष्ठ रूपसे सम्बद्ध रही है कि धीरे-धीरे आर्य संस्कृतिमें उन्हें देवीका पद प्राप्त हो गया और परवर्ती धार्मिक चेतनाका तो वे पर्याय ही बन गयीं। 'गङ्गे तव दर्शनान्मुक्तिः'—कहकर उनका जयघोष किया गया।

गंगाके अनेक रूप हैं। आधिभौतिक स्तरपर यह इस कृषिप्रधान देशकी एक सदानीरा नदी है; आधिदैविक स्तरपर यह पवित्रता और पुण्यकी अधिष्ठात्री देवी है तथा आध्यात्मिक स्तरपर ऊर्ध्वगामी चेतना, ज्ञान और मोक्षका प्रतीक है।

गंगाका अपना इतिहास भी कम रोचक नहीं है। गंगाका अवतरण ही परोपकार और पापनाशके लिये हुआ है। महाराज भगीरथने अपने अभिशप्त पूर्वजों—सगरपुत्रोंकी मुक्तिके लिये घोर तपस्या की और उनकी तपस्यासे प्रसन्न होकर देवलोकसे गंगा इस पृथिवीपर अवतरित हुईं। इस पृथिवीपर उनका प्रवाह सँभालनेकी क्षमता किसीमें नहीं थी, अतः स्वयं देवाधिदेव शंकर अपनी जटाएँ खोलकर खड़े हो गये और गंगा स्वर्गसे उतरकर हिमालयपर विराजमान शंकरकी जटाओंमें समा गयीं। फिर भगवान् शिवके जटाजूटसे बाहर आकर वे हिमालयसे नीचे उतरीं और भगीरथके रथके पीछे-पीछे चलते हुए वहाँ पहुँचीं, जहाँ सगरपुत्रोंके अवशेष पड़े हुए थे। अपने प्रवाहमें समेटकर गंगाने उन्हें मुक्ति प्रदान की।

स्वर्गसे उतरनेके कारण गंगाको 'सुरनदी', 'विबुधतटिनी', 'सुरसरि' आदि नामोंसे पुकारा गया। जह्नु ऋषिकी दाहिनी जाँघपरसे बहनेके कारण उनकी पुत्री-तुल्य हो जानेसे उन्हें 'जाह्नवी' कहा गया और भगीरथकी तपस्यासे प्रसन्न होकर धरापर अवतीर्ण होनेके कारण 'भागीरथी'। यही गंगा आठ वसुओंकी प्रार्थनापर उन्हें तारनेके कारण महाराज शान्तनुकी पत्नी बनीं और आठ पुत्रोंको जन्म दिया, महापराक्रमी भीष्म जिनमेंसे एक थे। भगवान् शिवके मस्तकपर सर्वदा विराजमान रहनेके कारण गंगा भगवती पार्वतीकी सपत्नी कहलायीं तथा हिमालयसे निकलनेके कारण हिमवान्की पुत्री। वाल्मीकि रामायणमें भी हिमालयकी दो पुत्रियोंका वर्णन है—बड़ी गंगा हैं और छोटी उमा।

अपने मौलिक रूपमें गंगा शब्द नदी-सामान्यका ही वाचक था, किंतु कालान्तरमें गंगाकी महिमाके कारण यह भागीरथीके अर्थमें ही रूढ़ हो गया। भागीरथीकी सबसे बड़ी विशेषता है कि वह अनेक नदियोंका जल अपनेमें समेटकर आगे बढ़ती है। चाहे यमुना हो या सरस्वती; चाहे मन्दाकिनी हो या अलकनन्दा; चाहे गोमती हो या सरयू—सब अपनी अथाह जलराशि इसे समर्पित कर देती हैं और यह गंगा इन सबको अपनेमें समेटकर भारतके एक विशाल भूभागको ही नहीं, अपितु भारतकी मानसिकताको भी सींचती चलती है।

हमारी आध्यात्मिक परम्परा गंगाको ब्रह्मस्वरूपिणी मानती है। गंगाका जल 'ब्रह्मद्रव' कहलाता है, अर्थात् विश्वके कल्याणके लिये ब्रह्म ही मानो द्रवीभूत होकर, सर्वजन-सुलभ होकर पृथिवीपर बह रहा है। गंगाकी यह आध्यात्मिक धारणा और उसका यह दैवी स्वरूप इतना प्रबल और इतना गरिमाशाली है कि उसके आगे

गंगाका भौतिक सरित्स्वरूप नास्ति-कल्प हो गया है, ओझल हो गया है।

गंगाका यह विराट् व्यक्तित्व स्वाभाविक था कि साहित्यमें भी प्रतिबिम्बित होता। इस लेखमें हम विशेष रूपसे संस्कृत साहित्यमें प्राप्त इनके कुछ रमणीय चित्रोंपर दृष्टि डालेंगे। संस्कृत कवियोंकी गंगाके प्रति बड़ी ही आदरपूर्ण दृष्टि रही है और उन्होंने उसे मात्र एक नदी न मानकर दिव्य, ब्रह्मरूपिणी मातृशक्तिके रूपमें स्थापित किया है।

संस्कृतमें प्राप्त गंगाकी स्तुतियोंमें पण्डितराज जगन्नाथकी 'गंगालहरी' अत्यन्त प्रसिद्ध है। गंगाकी इस ब्रह्मरूपताका वर्णन करते हुए जगन्नाथ लिखते हैं—

न यत् साक्षाद् वेदैरपि गलितभेदैरवसितं
न यस्मिञ्जीवानां प्रसरति मनोवागवसरः।
निराकारं नित्यं निजमहिमनिर्वासिततमो
विशुद्धं यत्तत्त्वं सुरतटिनि तत्त्वं न विषयः॥

देवि गंगे! अभेदका प्रतिपादन करनेवाले वेद भी जिस तत्त्वका साक्षात् रूपसे पता नहीं लगा सके; जहाँ जीवोंकी वाणी तो क्या, मन भी नहीं पहुँचता; जो अपने प्रकाशसे संसारके समस्त अज्ञान-अन्धकारका विनाश कर देता है। देवि, तुम वही निराकार विशुद्ध द्रष्टारूप ब्रह्म-तत्त्व हो, इन्द्रियोंका विषय कदापि नहीं।

पण्डितराजकी श्रद्धा इतनेसे ही सन्तुष्ट नहीं होती; वे आत्मविह्वल होकर कहते चले जाते हैं—गंगे! तुम सभी धर्मोंकी निधि हो, तीर्थोंमें प्रधान हो, त्रिलोकीका निर्मल परिधान हो, नये-नये आनन्दोंका सृजन करनेवाली हो। बुद्धिवादियोंके हृदयको भी तृप्त करनेवाली हो और अविवेकियोंसे गुप्त रहनेवाली हो। माँ! सुख-सौभाग्यको देनेवाला तुम्हारा यह जलमय शरीर हमारे सभी तापोंको दूर करे—

निधानं धर्माणां किमपि च विधानं नवमुदां
प्रधानं तीर्थानाममलपरिधानं त्रिजगतः।
समाधानं बुद्धेरथ खलु तिरोधानमधियां
श्रियामाधानं नः परिहरतु तापं तव वपुः॥

गंगाकी देवरूपताकी प्रतिष्ठा अत्यन्त प्राचीन है। वाल्मीकीय रामायण और अध्यात्मरामायण दोनोंमें ही गंगा असीम शक्तिसम्पन्न, करुणामयी मातृशक्तिके ही रूपमें वर्णित हैं। वनवासके समय गंगा पार करते समय सीताजी गंगाकी अर्चना करते हुए सकुशल लौटनेके लिये प्रार्थना करती हैं, जिसका वर्णन अध्यात्मरामायणमें इस प्रकार है—

गङ्गामध्ये गता गङ्गां प्रार्थयामास जानकी।
देवि गङ्गे नमस्तुभ्यं निवृत्ता वनवासतः॥
रामेण सहिताहं त्वां लक्ष्मणेन च पूजये।
इत्युक्त्वा परकूलं तौ शनैरुत्तीर्य जग्मतुः॥

रामकथापर ही आधारित मुरारिकविके 'अनर्घ-राघवम्' नामक नाटकमें भी गंगाकी बड़ी कल्पनापूर्ण स्तुति की गयी है। सप्तम अंकमें श्रीराम सीताजीको भगवती भागीरथीको प्रणाम करनेका निर्देश करते हुए कहते हैं—

देवस्याम्बुजसम्भवस्य भवनादम्भोधिमागामुका,
सेयं मौलिविभूषणं भगवतो भर्गस्य भागीरथी।
उद्यातानपहाय विग्रहमिह स्त्रोतःप्रतीपानपि,
स्त्रोतस्तीव्रतरत्वरा गमयति द्राग्ब्रह्मलोकं जनान्॥

कमलयोनि ब्रह्माके स्थानसे सागरकी ओर आती हुई, भगवान् शिवके मस्तककी शोभा, ये वही भागीरथी हैं, जो अपने समीप शरीर छोड़नेवाले ऊर्ध्वगामी प्राणियोंको प्रवाहके विपरीत गति धारण करनेपर भी अपने त्वरित प्रवाहके कारण शीघ्रतासे ब्रह्मलोक पहुँचा देती हैं।

इस श्लोकको व्यंजना बड़ी ही चमत्कारपूर्ण है। सामान्यतः कोई अपने विपरीत आचरण करनेवाले व्यक्तिके प्रति सदय नहीं होता। यह गंगाकी ही उदारता है कि उनका प्रवाह अधोगामी है और उनके समीप प्राण त्यागकर मुक्तिलाभ करनेवाले प्राणियोंकी गति ऊर्ध्वगामी है, तो भी गंगा उन्हें उनके गन्तव्यतक पहुँचा देती हैं।

इस महिमामय रूपके अतिरिक्त गंगाका एक नायिकारूप भी है, जिसे आधार बनाकर कवियोंने अनेक

ललित कल्पनाएँ की हैं। भगवती गंगा सदैव भगवान् शिवके मस्तकपर विराजमान रहती हैं। वे शंकरको इतनी प्रिय हैं कि वे पार्वतीजीकी इच्छाके विरुद्ध भी उन्हें सदैव साथ रखते हैं। संस्कृतके भावप्रवण और कल्पनाशील कवियोंने प्रायः गंगाका चित्रण पार्वतीकी सपत्नीके रूपमें किया है। शिवके बायें अंगमें पार्वती और दायें अंगमें गंगा निवास करती हैं। दोनों ही स्त्रियाँ परस्पर एक-दूसरेसे क्षुब्ध रहा करती हैं। 'अनर्घराघवम्' में ही मुरारिने लिखा है—भगवान् शंकरके मस्तकका संकीर्ण प्रदेश जिनके साथ गौरीने आधा बाँट लिया है, उन 'दुगुनी गम्भीर' भागीरथीको प्रणाम है—

गौरी-विभज्यमानार्ध-संकीर्ण-हर-मूर्द्धनि,
अम्ब, द्विगुण-गम्भीरे भागीरथि नमोऽस्तु ते।

सामान्यतः जहाँ किसी नदीका पाट सँकरा होता है, वहाँ वह दुगुनी गम्भीर हो जाती है, किंतु यहाँ व्यंजना है कि चूँकि पार्वतीने शिवके आधे अंगपर अधिकार कर रखा है, अतः दुःख और क्षोभसे गंगा और भी गम्भीर हो उठी हैं।

पण्डितराज जगन्नाथने भी इसी आशयका एक अत्यन्त भावपूर्ण और गम्भीर श्लोक लिखा है, जिसका आशय है कि हे माँ! अलौकिक प्रेमके कारण भवानीका आधा अंग जिनसे जुड़ा है, उन्हीं अर्द्धनारीश्वर शंकरके दाहिनी ओर स्थित जटाजूटसे उछलकर, उनके बायीं ओर स्थित पार्वतीके सुसज्जित सीमन्तमें जब तुम्हारी लहरें उल्लासपूर्वक क्रीड़ा करती हैं, तो शिवकी अर्द्धांगिनीके नेत्र ईर्ष्याजनित क्रोधसे फड़क उठते हैं और वे सुकोमल कान्तिवाले अपने हाथोंसे तुम्हारी लहरोंको दूर हटा देती हैं। माँ! तुम्हारी उन चंचल लहरोंकी जय हो।

कपर्दादुल्लस्य प्रणयमिलदर्धाङ्गयुवतेः
पुरारेः प्रेङ्खन्त्यो मृदुलतरसीमन्तसरणौ।
भवान्या सापत्न्यस्फुरितनयनं कोमलरुचा
करेणोत्क्षिप्तास्ते जननि विजयन्तां लहरयः॥

इस प्रकार संस्कृत-साहित्यमें हिमालयकी ज्येष्ठ पुत्री गंगा और कनिष्ठ पुत्री पार्वतीकी पारस्परिक ईर्ष्याकी बड़ी रसपूर्ण चर्चा है।

जिस प्रकार पार्वतीके साथ भागीरथीका सम्बन्ध है, उसी प्रकार एक अन्यके साथ भी उनका सम्बन्ध विश्वविख्यात है और वे हैं सूर्यतनया यमुना। श्यामवर्णा सूर्यपुत्री यमुना प्रयागमें गंगासे गले मिलती हैं और यह संगम सभी नदियोंके संगमसे कहीं अधिक पवित्र तथा पुण्यप्रद माना गया है। इसी संगमके कारण प्रयागको तीर्थराजकी उपाधि मिली और इसी संगमके तटपर ब्रह्माके द्वारा सौ यज्ञ किये जानेके कारण इस संगम क्षेत्रका नाम प्रयाग पड़ा।

संस्कृत-साहित्यमें इस संगमका सर्वाधिक सुन्दर वर्णन महाकवि कालिदासने अपने महाकाव्य 'रघुवंशम्' में किया है। यह गंगाके भौतिक रूपका अत्यन्त रमणीय चित्र है। भगवान् राम रावणका वध करके पुष्पक विमानसे अयोध्या लौट रहे हैं। मार्गमें सीताजीको संगम दिखलाते हुए वे कहते हैं कि हे सुन्दरांगि! देखो, यमुनाकी तरंगोंसे मिश्रित यह गंगाका प्रवाह कितना सुशोभित हो रहा है। कहीं गंगाकी धारा ऐसी लगती है, जैसे कान्तिसे दमकती हुई इन्द्रनील मणियोंसे युक्त मोतियोंका हार हो, या बीच-बीचमें जिसमें नीलकमल गूँथे गये हों, ऐसी सफेद कमलोंकी माला हो। कहीं ऐसा लगता है जैसे नीलहंसोंसे युक्त मानसरोवरके प्रेमी राजहंसोंका समूह हो, तो कहीं जैसे बीच-बीचमें कालागरुकी चित्रकारीसे युक्त पृथिवीके शरीरपर चन्दनसे किया गया अनुलेपन हो।

गंगाकी धवलधार और यमुनाकी नीलिमाका इतना ही वर्णन करके कालिदासका सौन्दर्यप्रेमी हृदय तृप्त नहीं होता। उनकी कल्पना कोमलसे कोमलतर होती चली जाती है—'यमुनाकी नीलघटासे ओतप्रोत गंगाकी धवलिमा ऐसी लगती है, जैसे छायामें छिपे अन्धकारसे चित्र-विचित्र हुई चन्द्रमाकी चाँदनी हो, या जिनमें बीच-बीचसे नीला आकाश झाँक रहा है, ऐसे शरद्-ऋतुके शुभ्र बादलोंका समूह हो। अन्तमें शिवप्रिया गंगाके आधार भगवान् शिवका स्मरण करते हुए कालिदास

कहते हैं कि 'यमुनाकी तरंगोंसे आलिंगित गंगाका प्रवाह, जिसपर कृष्ण सर्प लिपटे हों, ऐसे भगवान् शंकरकी भस्माभिषिक्त देहकी भाँति प्रतीत होता है'—

क्वचित्प्रभा चान्द्रमसी तमोभिश्छायाविलीनैः शबलीकृतेव।
अन्यत्र शुभ्रा शरदभ्रलेखा रन्ध्रेष्विवालक्ष्यनभःप्रदेशा॥
क्वचिच्च कृष्णोरगभूषणेव भस्माङ्गरागा तनुरीश्वरस्य।
पश्यानवद्यांगि विभाति गङ्गा भिन्नप्रवाहा यमुनातरङ्गैः॥

(रघुवंश १३।५६-५७)

गंगाके व्यक्तित्वकी चर्चा अपूर्ण रहेगी यदि सरस्वतीका उल्लेख नहीं होगा। प्रयागमें यमुनाके अतिरिक्त सरस्वती नदीका भी गंगासे संगम होता है। सरस्वती भारतवर्षकी प्राचीन और अत्यन्त महिमामयी नदियोंमेंसे एक है। ऋग्वेदमें इसकी चर्चा बड़े आदरपूर्वक की गयी है तथा इसे आरोग्यकारिणी और पापोंको नष्ट करनेवाली कहा गया है। गंगाकी भाँति यह भी देशके एक बड़े भूभागको सींचती थी, अतः इसे सस्यप्रदायिनी और उर्वरा-शक्ति देनेवाली भी कहा गया है। प्रयागमें गंगा, यमुना और सरस्वतीका संगम 'त्रिवेणी' के नामसे विख्यात है। इस संगमसे सरस्वती लुप्त हो जाती है और गंगाकी धवलिमा तथा यमुनाकी नीलिमा ही दृष्टिगोचर होती है। इच्छा, ज्ञान और क्रियाके संगमकी भाँति गंगा, यमुना और सरस्वतीका यह संगम विशेष वन्दनीय है।

वस्तुतः गंगाका व्यक्तित्व इतना विराट् है कि यहाँ उसके सभी रूपोंका आकलन सम्भव नहीं है। गंगा केवल इस देशकी नदी नहीं है; वह निर्मात्री है इस देशकी संस्कृतिकी, साक्षी है इसके इतिहासकी। गंगा नाम है एक आस्थाका, एक भावनाका, एक जीवनमूल्यका। युगों-युगोंसे गंगा इस देशके जनमानसमें इस तरहसे रच-बस गयी है कि उसके धर्म, उसके मनोविज्ञान, उसके साहित्य और उसकी कलाका अविभाज्य अंग बन चुकी है, इस सीमातक कि भारतको गंगाके बिना समझा ही नहीं जा सकता। [विवेक-ज्योति]

'सुरसरि सम सब कहँ हित होई'

(महामहोपाध्याय डॉ० श्रीकैलाशनाथजी द्विवेदी, डी० लिट०)

'न मानुषाच्छ्रेष्ठतरं हि किञ्चित्'—अर्थात् मानवसे श्रेष्ठ इस संसारमें कुछ भी नहीं है। इसकी वह श्रेष्ठता इसके शील, विवेक, दया, दान, परोपकार, धर्मादि सद्गुणोंके कारण प्राणियोंमें प्रतिष्ठापित है। गोस्वामी तुलसीदासजीने 'श्रीरामचरितमानस' के बालकाण्डके अन्तर्गत प्रस्तावनामें इसी उत्कृष्ट लोकहितकारी मानवीय प्रवृत्तिको काव्यप्रयोजनमूलक मानकर इसे रेखांकित करते हुए ठीक ही कहा है—

कीरति भनिति भूति भलि सोई। सुरसरि सम सब कहँ हित होई॥

(रा०च०मा० १।१४।९)

आचार्य मम्मटने काव्य-प्रयोजनके अन्तर्गत जिन प्रमुख प्रारम्भिक उपादानोंको काव्यप्रकाशमें उल्लिखित किया, उनमें—**'काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये...'** अर्थात् कीर्ति-ऐश्वर्य लाभ और अमंगलनाश प्रमुख हैं। बिना कीर्तिके मनुष्य मृतवत् है। कीर्तिवान् व्यक्ति ही जीवित है—**'कीर्तिर्यस्य स जीवति।'** श्रीमद्भगवद्गीताके अनुसार सम्मानित व्यक्तिकी अपकीर्ति मरणसे भी बढ़कर है—**'सम्भावितस्य चाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते॥'** (गीता २।३४)

मानवकी कीर्ति उसके श्रेष्ठ गुणों और आदर्शोंके कार्यान्वयन एवं उद्देश्योंके सफल होनेपर समाजमें स्वतः प्रस्फुरित होती है—जैसे मकरन्दसुवासित सुमनोंकी सुरभि। मर्यादापुरुषोत्तम श्रीराम-सा लोकानुरंजक राजा कीर्तिशाली होकर जनपूजित होता है, जबकि परनारी-अपहर्ता, साधु-सन्तोंको पीड़ित करनेवाला, वेद-शास्त्रज्ञ रावण-सा प्रतापी नरेश अपकीर्ति पाकर लोकनिन्दित बनता है और तभी सरस मधुर कान्तासमान उपदेशमें कहा जाता है—**'रामादिवद् वर्तितव्यं न रावणादिवत्'** अर्थात् रामके समान आचरण करो, रावणके समान नहीं।

वस्तुतः यशस्वी महापुरुषोंका जीवनमें प्रतिदिन

पुण्यस्मरण प्रेरणादायक, मंगलमय एवं परम हितकारी होता है। ऐसे कीर्तिशाली पुण्यात्मा महामानवोंको मनीषियोंने 'पुण्यश्लोक' पुकारा है, जिनमें कोसलाधीश श्रीराम, निषधाधिपति नल, धर्मराज युधिष्ठिर आदि पुरुषार्थी पुरुषसिंह चिरस्मरणीय हैं। इनकी यशश्चन्द्रिका कभी क्षीण नहीं होती, अपितु अखिल लोक-आह्लादक और कल्याणकारिणी बनी रहती है। यशस्वी नररत्नोंका पावन जीवनचरित मंगलकारी और पापनाशक तो होता ही है, सबकी सफलताका मूलाधार भी बनकर सर्वहितकारी होता है।

भद्र भणितिका तात्पर्य है—हृदयके भीतरसे निकली सीधी-सादी, भोली-भाली भाषा या बोली जो रामबाणके समान बड़ी प्रभावी होती है। इसमें बुद्धिविलास, वक्रता अथवा विदग्धताका स्थान ही कहाँ?

गुरु-समान परम हितकारी लोकोक्तियों अथवा जनसामान्यमें प्रचलित सूक्तियों—सुभाषितों, संतोंकी वाणीका रामबाणसदृश औषधीय अचूक प्रभाव किसने नहीं परखा? आदिकवि महर्षिने—'**सुलभाः पुरुषा राजन् सततं प्रियवादिनः। अप्रियस्य च पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः**'—तथा महाकवि भारविने इस तथ्यको हृदयंगम कर '**हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः**' कहा, जिसे लोकमानसने हितकारी मानकर सुना, समझा और सराहा भी।

आज अल्पज्ञ होकर भी बहुज्ञ बने लोग ऊटपटाँग बकते तो रहते हैं, किंतु किसीकी कल्याणकारिणी भद्रभणितिको सुनते नहीं। अभद्र कर्णकटु बकवाससे बचनेके लिये लोक हितकारिणी भणितिको सुननेके लिये ही तो वैदिक ऋषिने देवोंसे प्रार्थना की थी—'**भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाः**…।'

आजके तथाकथित नागर सभ्योंने सीधी-सादी वाच्यार्थ प्रधान 'ग्राम्य गिरा' को नकारकर ध्वनिप्रधान व्यंग्यार्थको महत्त्व दिया है, किंतु जिस ग्राम्य गिरा (बोली)-में भगवान् श्रीराम-सीताकी अमर कीर्ति वर्णित हो, वह कामधेनु-सी सबको दुग्धामृत पान करानेवाली परमकल्याणकारिणी ही है। गोस्वामी तुलसीदासजीने इस सन्दर्भमें सत्य ही कहा है—

स्याम सुरभि पय बिसद अति गुनद करहिं सब पान।
गिरा ग्राम्य सिय राम जस गावहिं सुनहिं सुजान॥

(रा०च०मा० १। १०ख)

वस्तुतः प्रभु कीर्तिमय प्रसादगुणयुक्त, निर्मल, सरस काव्यात्मक भणिति भद्रजनोंसे समादृत होती है। इसे सुनकर शत्रु भी स्वाभाविक शत्रुता छोड़ देता है, जीवनमें मंगल पथ प्रशस्त होता है—

सरल कबित कीरति बिमल सोइ आदरहिं सुजान।
सहज बयर बिसराइ रिपु जो सुनि करहिं बखान॥

(रा०च०मा० १। १४क)

इसके विपरीत कटु व्यंग्य—बाण-भणिति कितनी अहितकारिणी, विद्वेषभावको सम्पुष्टकर शत्रुतावर्द्धिनी है कि द्रौपदीकी एक तीक्ष्ण व्यंग्योक्ति महाभारतके मूलमें कौरवोंके महाविनाश और पाण्डवोंकी अनेक विपत्तियोंका कारण बनी।

भूतिसे तात्पर्य है—समाजमें न्यायोपार्जित धन-धान्य, वस्त्रादि भौतिक संसाधनोंकी समृद्धि। तप-त्यागमूलक लोकहितकारिणी भूति ही विभूतिरूपमें पावनता, स्वच्छता और धवलता धारण करती है अन्यथा श्मशानकी कलुषित अपावन राख-सी अस्पृश्य और अनुपयुक्त रह जाती है। सचमुच सच्ची धन-सम्पत्ति, समृद्धि-ऐश्वर्य तो वही है, जो बहुजनहिताय, बहुजनसुखायकी उदार भावनासे लोककल्याणकारी कार्योंमें लगे। सामान्यतः सज्जनोंकी समृद्धि-विभूति अहंकार और मदके लिये न होकर दान-धर्मादि लोकहितकारी कार्योंके लिये ही होती है। सम्पत्तिका संचय स्वभोगार्थ न होकर जनकल्याणार्थ उसका उत्सर्ग ही होता है, जिससे उसकी शुचिता, निर्मलता सुरसरिके समान सर्वहितकारिणी बनी रहती है। ऐसे त्यागी, ऐश्वर्यवान्, यशस्वी, दानी महापुरुषका पुण्यस्मरण सज्जनोंको भगवत् कीर्तिकथा-

सा सुखद तथा गंगाधर शंकरकी विभूति-सा परम पावन प्रतीत होता है। दूसरे शब्दोंमें तुलसीने इसे इस प्रकार व्यक्त किया है—

प्रभु सुजस संगति भनिति भलि होइहि सुजन मन भावनी।
भव अंग भूति मसान की सुमिरत सुहावनि पावनी॥
(रा०च०मा० १।१० छन्द)

गोस्वामीजीने *'कीरति भनिति भूति भलि सोई'* अर्द्धालीके अन्तर्गत तीनों उपमेयोंकी सार्थकता सुरसरि उपमानमें ढूँढ़ी है। सचमुच सुरसरिकी त्रिपथगारूपमें सर्वव्यापक वन्द्यता, गंगारूपमें गतिशीलता, भागीरथी-रूपमें त्याग, परिश्रम तथा प्रयासशीलता, विष्णुपदीरूपमें परमपावनता मुक्ति-प्रदानताकी प्रतीक है। कविकुलगुरु कालिदासने इसे सगरसुतोंकी 'स्वर्गसोपानपंक्ति' कहा—'जह्नोः कन्यां सगरतनयस्वर्गसोपानपंक्तिम्।' (मेघदूत ५४) अब्दुल रहीम खानखानाने 'गंगाष्टकम्' संस्कृत कवितामें गंगाकी पावनता, सार्वभौम हितकारिता मुक्तकण्ठसे स्वीकारी है—

अच्युतचरणतरङ्गिणि शशिशेखरमौलिमालतीमाले।
त्वयि तनु वितरणसमये हरता देया न वै हरिता॥
त्रिमार्गगा त्रितापहा त्रिलोकशोकखण्डिनी।
जगत्त्रिदोषतस्तनुं पुनातु जह्नुनन्दिनी॥
(गङ्गाष्टकम्)

सम्राट् अकबर तो औषधिके समान गुणकारी विशुद्ध गंगाजल हरिद्वारसे नित्य मँगाकर सेवन करता था। रसखान-जैसे भक्त कविने कल्याणकारी पावन गंगाजल पानकी अभिलाषा इस प्रकार व्यक्तकर सुरसरिकी सर्वहितकारिता प्रतिपादित की है—

बैद की औषधि खाऊँ कछू न करौं व्रत संजम री सुनु मोसे।
तेरोई पानी पियों रसखानि संजीवन लाभ लहौं सुख तोसे॥
ए री! सुधामयी भागीरथी कोऊ पथ्य कुपथ्य करै तऊ पोसे।
आक धतूरो चबात फिरैं, विष खात फिरैं सिव तोरे भरोसे॥

प्रसिद्ध रीतिकालीन कवि 'पद्माकर' तो अपने नीच पातकको सावधानकर ललकारते हुए गंगाकी कछारमें पछाड़ने को कहते हैं—

जैसे तैं न मोको कैहूँ नेकहूँ डरात हुतो,
ऐसे अब तोसों हौं हूँ नेकहू न डरिहौं।
कहै पद्माकर प्रचण्ड जो परैगो तौ,
उमंड करि तोसों भुजदण्ड ठोंकि लरिहौं॥
चलो चलि चलो चलि विचलु न बीच ही ते,
कीच बीच नीच! तो कुटुम्ब को कचरिहौं।
ऐ रे दगादार! मेरे पातक अपार तोहिं,
गंगा की कछार में पछारि छार करिहौं॥

यशस्वी भगीरथ-जैसे भूपोंकी कीर्तिपताका, कवियोंके काव्यकी अमृतधारा, कृषकों, पशुपालकों, वणिजोंकी समृद्धिकी मूलाधार, पशुपक्षियों, मनुष्यादि प्राणियोंकी परम पोषिका, साधु-सन्तों, भगवद्भक्तों, गृहस्थोंको भुक्तिमुक्तिदायिनी सुरसरि गंगासे बढ़कर और कौन अच्छा सर्वहितकारी हो सकता है? लोकमंगलविधायिनी, पतितपावनी, पापनाशनी गंगाको सर्वातिशायी समर्थ उपमानरूपमें 'कीर्ति' (यश), 'भणिति' (भाषा या बोली) और 'भूति' (समृद्धि)-जैसे उपमेयोंके लिये स्थापित करना सन्त तुलसी-जैसे श्रेष्ठ कविके लिये सर्वथा उचित ही है; क्योंकि गंगाके सम्बन्धमें इनकी असीम आदरपूर्ण अवधारणा है—

गंग सकल मुद मंगल मूला। सब सुख करनि हरनि सब सूला॥
(रा०च०मा० २।८७।४)

व्यापक लोकजीवनमें हमें अपनी कीर्ति, (यश), भणिति (भाषा या बोली) और भूति (समृद्धि)-को सुरसरिके समान सदैव स्वच्छ, धवल और सर्वहितकारी बनाये रखनेका ध्यान अवश्य रखना चाहिये। यदि ये भले—भद्र एवं भलाईके लिये न रहे और इनमें यदि कालुष्य, कटुता तथा अशुचिता आ गयी तो सुरसरिकी स्वच्छता-पावनतासे दूर ऐसे स्वार्थी-संकुचित मानव जीवनसे क्या लाभ?

गंगा साक्षात् ब्रह्मद्रव हैं

(शास्त्रार्थपंचानन पं० श्रीप्रेमाचार्यजी शास्त्री)

जिस पुण्यसलिला एवं पुण्यश्लोका भगवती गंगाकी दिव्य गुणवत्ताका समादर करते हुए वेदोंने अन्य पावन नदियोंकी श्रेणीमें **'इमं मे गङ्गे! यमुने! सरस्वति…'** मन्त्रद्वारा सर्वप्रथम स्मरण किया हो, भगवान् श्रीकृष्णने गीताशास्त्रमें जिसे **'स्रोतसामस्मि जाह्नवी'** कहते हुए अपनी दिव्य विभूतियोंमें महनीय स्थान प्रदान किया हो, **'औषधं जाह्नवीतोयम्'** कहकर जिसके पावन जलको समस्त शारीरिक एवं मानसिक रोगोंको सर्वथा निर्मूल कर देनेवाली अचूक महौषधिके रूपमें मान्यता प्राप्त हो, जिसमें निरन्तर अविरल रूपसे प्रवहमान पदार्थको साधारण पानी न कहकर साक्षात् 'ब्रह्मद्रव' अर्थात् भगवान्‌का जलमयरूप मानकर शिरोधार्य किया जाता हो और जिस 'ब्रह्मस्वरूपिणी' को अपने मस्तकपर धारण करके भगवान् शंकरने उसकी पूज्यताको चरमपर पहुँचा दिया हो, उस भोग एवं मोक्ष प्रदान करनेवाली गंगाको साधारण नदी और उसके जलको साधारण पानी मानने-कहनेवालोंकी अत्यन्त कठोर शब्दोंमें भर्त्सना की गयी है। यथा—

> दुर्बुद्धयो दुराचारा हैतुका बहुसंशयाः।
> पश्यन्ति मोहिता विष्णो गङ्गामन्यनदीमिव॥
> साधारणाम्भसा पूर्णां साधारणनदीमिव।
> पश्यन्ति नास्तिका गङ्गां पापोपहतलोचनाः॥
> गङ्गां न बहु मन्यन्ते ते स्युर्निरयगामिनः॥
>
> (स्कन्दपुराण काशीखण्ड २७।५४, ६७, ८०)

अर्थात् (भगवान् शिव विष्णुभगवान्‌से कहते हैं—) हे विष्णो! दुष्ट-बुद्धिवाले, दुराचारी, प्रत्येक विषयमें कारण ढूँढ़नेवाले, सर्वथा संशयग्रस्त तथा मोहान्ध व्यक्ति ही गंगाको साधारण नदीके समान देखते हैं अथवा वेदादि शास्त्रोंकी निन्दा करनेवाले नास्तिक और निरन्तर पापकर्म करते रहनेसे जिनकी दृष्टि विकृत हो गयी है, ऐसे मनुष्य ही गंगाको साधारण नदी और गंगाजलको साधारण पानीकी तरह देखा करते हैं, परंतु यह सुनिश्चित है कि जो महिमामयी गंगाका सम्मान नहीं करते हैं, वे सभी नरकगामी हैं।

ब्रह्मद्रव, ब्रह्माम्बु और जल

गंगाकी अनन्त गौरव-गाथाको उक्त तीनों शब्दोंके माध्यमसे सरलतापूर्वक समझा जा सकता है। सर्वप्रथम ब्रह्मद्रवपर विचार करें।

'ब्रह्मद्रव' का अर्थ है—आध्यात्मिक, आधिदैविक एवं आधिभौतिक तापोंसे संतप्त सांसारिक प्राणियोंकी दशापर द्रवित होकर उनके तापको शान्त करनेके लिये ब्रह्मका अर्थात् परमात्माका जलरूपमें अवतरित हो जाना। यह केवल शास्त्रीय अवधारणा ही नहीं है, अपितु प्रत्यक्षगोचर अनुभवसिद्ध यथार्थ भी है। उक्त भावसे गंगास्नान करनेवालोंने तापशान्तिका अनुभव किया है और आज भी किया जा रहा है। यह अनुभव ऐसा है, जिसे कोई भी कभी भी अनुभव कर सकता है। तात्पर्य यह है कि जैसे अंगूरका स्वाद अंगूर खानेसे ही मिल सकता है, वैसे ही गंगास्नानका फल भी गंगास्नानसे ही प्राप्त किया जा सकता है—

> गङ्गास्नानफलं ब्रह्मन् गङ्गायामेव लभ्यते।
> यथा द्राक्षाफलस्वादो द्राक्षायामेव नान्यतः॥
>
> (स्कन्दपुराण काशीखण्ड २९।१०)

वस्तुतः ताप कैसा भी हो, उसकी शान्तिके लिये जल ही अनिवार्य रूपसे अपेक्षित होता है, उसका कोई विकल्प नहीं है। इस यथार्थकी रसमयी अभिव्यंजना इस सूक्तिमें देखिये—

> नराकारं भजन्त्येके निराकारं तथापरे।
> वयं तु तापसंतप्ता नीराकारमुपास्महे॥

अर्थात् कुछ भक्त श्रीराम, श्रीकृष्ण आदिके रूपमें अवतरित नराकार भगवान्‌का भजन किया करते हैं और कुछ ऐसे हैं, जो निराकार ब्रह्मका ध्यान करते हैं, परंतु हम तो सांसारिक तापोंसे संतप्त प्राणी हैं, अतः हम तो अपने तापोंकी शान्तिके लिये (गंगाके रूपमें) नीरके

आकारवाले भगवान्‌की उपासना किया करते हैं।

स्कन्दपुराणमें भगवान् शिव गंगाको 'ब्रह्माम्बु' नामसे स्मरण करते हैं और उसके अपरिमित गुणोंकी महिमाका विस्तारसे वर्णन भी करते हैं। तदनुसार गंगा साधारण जल नहीं है, अपितु विशिष्ट जल है। जैसे नारियलके भीतरवाला जल ब्रह्माण्डमें होता हुआ भी उससे पृथक् प्रतीत होता है, उसी प्रकार गंगा ब्रह्माण्डमें अवस्थित अवश्य हैं, परंतु वास्तवमें वह ब्रह्माण्डके बाहर विभुरूपमें विराजमान ब्रह्मका ही जलमय रूप है—

बहिः स्थितं जलं यद्वन्नारिकेलान्तरे स्थितम्।
तथा ब्रह्माण्डबाह्यस्थं परब्रह्माम्बु जाह्नवी॥

(स्कन्दपुराण काशीखण्ड २७। २९)

गंगा ब्रह्मजल है, अत: उसमें भगवदीय गुणोंकी अवस्थिति भी है, जिनके कारण वह अन्य नदियों, जलाशयोंसे अपना पृथक् महत्त्व रखती है। गंगाजल सदा शुद्ध, सदा पवित्र और सदा निर्विकार रहनेवाला दिव्य पदार्थ है, इस तथ्यको तो आबाल-वृद्ध आश्रोत्रिय-चाण्डाल सभी भली प्रकारसे जानते ही हैं, परंतु इनके अतिरिक्त गंगाजलमें जिन अन्य भगवदीय गुणोंकी विद्यमानता है, उनका दिग्दर्शन भी भगवान् शिवने कराया है। यहाँ पाठकोंके मन:प्रसादके लिये उनमेंसे कुछका संक्षिप्त रूपसे विवरण उपस्थित करना अप्रासंगिक नहीं है।

भुक्ति एवं मुक्ति अर्थात् सांसारिक नानाविध विषयोंके उपभोगकी सामर्थ्य और अन्ततः मोक्ष प्रदान करना, इस भगवदीय गुणका गंगामें सम्यक् विकास हुआ है। भगवान् शिवद्वारा उपदिष्ट 'गंगाशतनामस्तोत्र' में उक्त गुणोंको धारण करनेवाली गंगाको सादर नमस्कार किया गया है। यथा—

भुक्तिमुक्तिप्रदायिन्यै भद्रदायै नमो नमः।
भोगोपभोगदायिन्यै भोगवत्यै नमोऽस्तु ते॥

(स्कन्दपुराण काशीखण्ड २७। १६२)

गंगा साधककी भावनानुसार उसे भोग अथवा मोक्ष प्रदान करती है, इस यथार्थको निम्नांकित लोक-प्रसिद्ध श्लोकमें भी अभिव्यक्त किया गया है—

नमामि गङ्गे! तव पादपङ्कजं
सुरासुरैर्वन्दितदिव्यरूपम्।
भुक्तिं च मुक्तिं च ददासि नित्यं
भावानुसारेण सदा नराणाम्॥

अन्य युगोंमें अन्य साधनोंसे मोक्ष प्राप्त किया जाता था, जैसे सत्ययुगमें ध्यानके द्वारा, त्रेतायुगमें ध्यान और तपके माध्यमसे और द्वापरमें ध्यान, तप तथा यज्ञके द्वारा मोक्षप्राप्ति होती थी, परंतु कलियुगमें तो केवल गंगा ही मोक्ष प्रदान करनेवाली है—

ध्यानं कृते मोक्षहेतुस्त्रेतायां तच्च वै तपः।
द्वापरे तद्द्वयं यज्ञाः कलौ गङ्गैव केवलम्॥

(स्कन्दपुराण काशीखण्ड २७। १९)

गंगा और स्वास्थ्य—सांसारिक विषयोंके उपभोगके लिये व्यक्तिका शरीर पूरी तरह स्वस्थ एवं नीरोग हो, यह नितान्त आवश्यक है, किंतु आश्चर्य है कि गंगा इस महत्त्वपूर्ण विषयमें भी असावधान नहीं है। गंगा साक्षात् 'भेषजमूर्ति' है, उसके जलमें सभी असाध्य रोगोंको समाप्त कर देनेकी अद्भुत सामर्थ्य है। अस्वस्थ कर देनेवाले सब प्रकारके विषोंको सर्वथा निष्प्रभावी बना देनेकी शक्ति गंगाजलमें है। जरा गंगाकी इस प्रार्थनापर दृष्टि डालिये—

सर्वस्य सर्वव्याधीनां भिषक्श्रेष्ठ्यै नमोऽस्तु ते।
स्थास्नुजङ्गमसम्भूतविषहन्त्र्यै नमोऽस्तु ते॥

(स्कन्दपुराण काशीखण्ड २७। १५९)

गंगा जिन भयंकर रोगोंको समाप्त कर देती है, उनमेंसे अधिकांशका उल्लेख 'गंगासहस्रनामस्तोत्र' में किया गया है। विस्तार-भयसे कुछ ही नाम यहाँ प्रस्तुत हैं—

'उद्वेगघ्नी'—कुण्ठा-टैंशन आदि दूर करनेवाली, **'उष्णशमनी'**—ज्वरादिसे उत्पन्न होनेवाली अतिरिक्त गर्मी शान्त करनेवाली, **'कालकूटप्रशमनी'**—भयानक विषको शान्त करनेवाली, **'दवथुवैरिणी'**—निमोनिया दूर करनेवाली, **'भ्रान्तिज्ञानप्रशमनी'**—भ्रमि (चक्कर आना) रोग मिटानेवाली, **'वन्ध्यत्वपरिहारिणी'**—बाँझपन

दूर करनेवाली, 'षण्ढताहारिसलिला'—नपुंसकता मिटानेवाले जलवाली, 'सर्वव्याधिमहौषधम्'—समस्त व्याधियोंकी महौषधि। (स्कन्दपुराण काशीखण्ड २९१)

'जल'—ब्रह्मद्रव अथवा ब्रह्माम्बु शब्दका जो अर्थ है, वही अर्थ जल शब्दका भी है। वास्तवमें जल शब्द संस्कृतभाषाके अन्य अनेक शब्दोंकी भाँति एक संग्राहक शब्द है, अर्थात् दो शब्दोंको मिलाकर बनाया जानेवाला शब्द। जैसे—

'यस्माज्जायते यस्मिन् लीयते तज्जलम्।'

अर्थात् जिससे अनन्त ब्रह्माण्डोंका जन्म होता है और समयानुसार अन्तमें सब कुछ जिसमें लीन हो जाता हो, उस परम तत्त्वको 'जल' कहते हैं। यहाँ जन्म शब्दका 'ज' और लय शब्दका 'ल' लेकर 'जल' शब्दका निर्माण किया गया है। जिसका निर्गलितार्थ हुआ—संसारके जन्म और लयकी सामर्थ्य रखनेवाले भगवान्।

विष्णुपुराणमें कहा गया है कि जो अनन्त प्राणियोंकी उत्पत्ति और प्रलयका और कर्मानुसार उनकी गति-अगतिको तथा विद्या-अविद्याके रहस्यको जानता हो, उसीको 'भगवान्' कहा जाता है—

उत्पत्तिं प्रलयं चैव भूतानामगतिं गतिम्।
वेत्ति विद्यामविद्यां च स वाच्यो भगवानिति॥

इसी भगवद्-गुणविशेषको विष्णुसहस्रनामस्तोत्रमें शब्दान्तरसे इस प्रकार कहा गया है—

यतः सर्वाणि भूतानि भवन्त्यादियुगागमे।
यस्मिंश्च प्रलयं यान्ति पुनरेव युगक्षये॥

जन्म और लय—ये दोनों भगवदीय गुण भगवद्रूप होनेके कारण गंगाजलमें भी यथावत् रूपसे विद्यमान हैं। गंगाजलका स्पर्श होते ही व्यक्तिके कायिक, वाचिक एवं मानसिक सभी प्रकारके दोष उसी प्रकार तत्क्षण विनष्ट हो जाते हैं, जैसे आगकी चिनगारी लगते ही विशाल रुईका ढेर जलकर भस्म हो जाता है—

तूलशैलः स्फुलिङ्गेन यथा नश्यति तत्क्षणात्।
तथा दोषाः प्रणश्यन्ति गङ्गाम्भःस्पर्शनाद् ध्रुवम्॥

(स्कन्दपुराण काशीखण्ड २७। ६२)

हमारे जन्म-जन्मान्तरोंसे संचित पाप तो गंगामें गोता लगाते ही विलीन हो जाते हैं—

स्नानमात्रेण गङ्गायां सञ्चिताघं विनश्यति।

और आत्मशोधनके लिये हजारों बार किये गये कृच्छ्र-चान्द्रायण व्रतोंसे जो पुण्य प्राप्त होता है, उससे कहीं अधिक फल (पुण्य) गंगाजल पान करनेसे प्राप्त हो जाता है—

चान्द्रायणसहस्रेण यत्पुण्यं स्याज्जनार्दन।
ततोऽधिकफलं गङ्गामृतपानादवाप्नुयात्॥

(स्कन्दपुराण काशीखण्ड २७। १०४)

इतना ही नहीं, जो मनुष्य सब प्रकारके संशयोंसे मुक्त होकर श्रद्धा-भक्तिपूर्वक गंगास्नान करता है, वह मनुष्य शरीरमें होता हुआ भी दैवीगुणोंसे सम्पन्न हो जाता है, इसमें जरा भी सन्देह नहीं है—

यो गङ्गाम्भसि निःस्नातो भक्त्या सन्त्यक्तसंशयः।
मनुष्यचर्मणा नद्धः स देवो नात्र संशयः॥

(स्कन्दपुराण काशीखण्ड २७। ५१)

उक्त विवरणका सारांश यह है कि गंगाजल मनुष्यके समस्त दोषों और पापोंका विलय करके उसमें देवत्वको जन्म देनेवाला भगवद्रूप दिव्य जल है।

गुलाबजल और गंगाजल

(श्रीपृथ्वीसिंहजी चौहान 'प्रेमी')

क्यारिन में फूलन की डारिन पै वास तेरो, पायो न ऊँचो पद बिसनु पदी को है।
अनल तपायो तोहि, बोतल समायो, यह भूतल पै छायो, जल संभु-जटनी को है॥
याके अंग लागत ही पाप झरि जात, तव लागत अनंग-बस अंग सबही को है।
नैन-पीर मेटत तू केवल गुलाब जल, भव-पीर मेटन को गंगाजल नीको है॥

तीर्थरूपा महिमामयी गंगा

(श्रीगदाधरजी भट्ट)

गंगा तीर्थका दूसरा नाम है। जैसे 'राम' नामने असंख्य पापियोंका उद्धार किया, वैसे ही तीर्थरूपा गंगाने अनगिनत पापोंसे उबारा है। ऐसी तीर्थ हैं भगवती गंगा, जो पापादिकसे तारती हैं 'तरति पापादिकं यस्मात्'। विविध तीर्थोंमें गंगा स्थावर तीर्थ है, जो देशके बड़े भूभागमें स्थायी रूपसे प्रवाहित है। गंगाकी महिमा अपार है। ब्रह्मपदकी प्राप्तिका माध्यम है गंगा—'गम्यते ब्रह्मपदमनया।' इससे बढ़कर गंगाकी महिमा क्या हो सकती है!

'गंगा' का नाम लेनेपर मस्तक श्रद्धासे नत हो जाता है। जैसे राम एवं कृष्ण हमारे भारतीय जीवनके स्पन्दन हैं, वैसे गंगा भी हमारी संस्कृतिकी धड़कन है। गंगा श्रद्धा-भक्तिकी पर्याय, आस्था-विश्वासोंकी धरोहर एवं भारतीय धर्म तथा संस्कृतिकी सुदृढ़तम आधारशिला है। अपौरुषेय वेदोंसे गंगाका बखान प्रारम्भ होता है। आर्ष स्वर मुखरित हो उठते हैं—

'इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमम्।' (ऋक्० १०।७५।५)

—मन्त्रमें पवित्र सिन्धुओं (नदियों)-में गंगाका नाम सर्वप्रथम है। गंगादि प्रमुख नदियोंके कारण प्राचीन भारतको सप्त सिन्धु कहा गया है।

पुराणोंमें गंगाके स्वरूपकी गरिमा एवं भव्यताका विशद वर्णन है। आग्नेयपुराणमें गंगाको स्वर्गदायिनी कहा गया है—'गङ्गा सर्वत्र नाकदा।' नारदपुराणमें एक आख्यान मिलता है, जिसमें पितरोंकी मुक्तिके लिये अंशुमान् महर्षि कपिलसे गंगाके अवतरणके लिये प्रार्थना करते हैं। अंशुमान् तो नहीं, भगीरथद्वारा यह कार्य पूरा होता है। पद्मपुराण एवं ब्रह्मपुराणमें गंगाकी प्रभावशीलता एवं महत्तामें अनेक प्रार्थना-स्तवन हैं। मार्कण्डेयपुराणमें गंगावतरणका वर्णन है। ब्रह्माके कमण्डलुसे नारायणके चरणपदसे जन्मी त्रिपथगा गंगासागर हो जाती हैं।

भागवतपुराणमें भगीरथद्वारा गंगाका आह्वान एवं गंगावतरणका विस्तारके साथ वर्णन है। गंगावतरणकी कथा आदिशक्तिके तीन रूप—ब्रह्मा, विष्णु, महेशसे जुड़ी हुई है। ब्रह्माके कमण्डलुसे आविर्भूत गंगा विष्णुके चरणोंसे प्रवाहित होकर भगवान् शिवद्वारा जटामें धारण की गयी हैं। वेदोंमें सूर्यको विष्णु कहा गया है—विष्णुपद आकाशमार्गसे गंगाका अवतरण हुआ है। अतः गंगाका विष्णुके चरणोंसे प्रवाहित होना सार्थक है। हिमालयके हिमनदोंको लाँघकर गंगा नीचे उतरती हैं—हिमालयके शिखर जटाजूट हैं। पृथ्वीपर अवतरित गंगाका मुख्य द्वार है—हरि (विष्णु) और हर (शिव)-का द्वार अर्थात् हरिद्वार या हरद्वार। इसीलिये गंगा वैष्णव एवं शैव दोनोंके लिये समानरूपसे आदरणीया हैं। वास्तवमें गंगा धार्मिक एकताकी प्रतीक हैं।

भारतीय साहित्यमें गंगाकी गौरवगाथा भरी-पूरी है। आदिकवि वाल्मीकिने रामायणमें गंगावतरणका उल्लेख किया है। वनगमनके समय श्रीराम गंगाके तटपर पहुँचते हैं, गंगाका पूजन करते हैं। वाल्मीकिने अपने आदिकाव्यमें गंगाके सौन्दर्यपूर्ण अनेक चित्र उभारे हैं। वाल्मीकिने गंगाष्टककी रचना भी की है—

'गाङ्गं वारि मनोहारि मुरारिचरणच्युतम्।'

मनोहारि मुरारिचरणामृत कहकर वन्दना की गयी है। महाभारतमें गंगा शापके कारण शान्तनुकी पत्नी बनती हैं। भीष्म-माता गंगा महाभारतमें देवीके रूपमें प्रकट होती हैं। समय-समयपर प्रकट होकर भीष्मकी रक्षा करती हैं। उनकी भीष्मप्रतिज्ञाकी ओर इंगित करते हुए कर्तव्य-पथपर अग्रसर रहनेकी सतत प्रेरणा देती हैं। महाभारतके अनुसार गंगासे बढ़कर कोई तीर्थ नहीं है—'न गङ्गासदृशं तीर्थम्।' गीतामें गंगाको भगवत्स्वरूप कहा गया है—'स्रोतसामस्मि जाह्नवी'।

महाकवि कालिदासका गंगा-वर्णन तो अद्वितीय है। रघुवंश एवं मेघदूतमें गंगाके मनमोहक, सरस चित्र

प्रस्तुत किये गये हैं। गंगा-यमुना-संगममें स्नान करनेसे जो पवित्र हो गये हैं, वे बिना तत्त्वज्ञानके ही शरीरके बन्धनसे मुक्त हैं।

नैषध, उत्तररामचरित, मुद्राराक्षस आदि प्रसिद्ध संस्कृत काव्य और नाटकग्रन्थोंमें भी गंगाके सौन्दर्य एवं महिमाका विशद वर्णन है। संस्कृत साहित्यमें गंगाकी स्तुतिमें विशाल स्तोत्र-साहित्यकी रचना हुई है। पूज्यपाद शंकराचार्यने गंगाष्टकमें तरल-तरंगा देवी गंगासे प्रसन्न होनेकी प्रार्थना की है—'तरलतरतरङ्गे देवि गङ्गे प्रसीद'।

पण्डितराज जगन्नाथका पाण्डित्य एवं कवित्व भी गंगाके चरणोंमें समर्पित है। 'गंगालहरी' कविकी अमर रचना है। यह गंगाकी स्तुतिमें संस्कृत साहित्यकी श्रेष्ठतम स्तोत्र रचना है। महाकवि जयदेवने भी गीति शैलीमें गंगा-स्तवन किया है। इसी प्रकार पद्माकरने भी पण्डितराजकी भाँति ब्रजभाषामें गंगालहरीकी रचना की। तुलसी, रसखान, मतिराम, सत्यनारायण, रत्नाकर, भारतेन्दु, मीर, शेख, अमीर आदि हिन्दीके श्रेष्ठ कवियोंने गंगाकी स्तुतिकर अपने कविकर्मको पवित्र किया है।

जाति-धर्मकी सीमाओंको लाँघकर अब्दुल रहीम खानखानाने संस्कृतमें गंगालहरीकी रचनाकर गंगाके प्रति अपार श्रद्धाका परिचय दिया है—

'हरता देया न मे हरिता'

वे प्रार्थना करते हैं कि शरीर-धारणके समय मुझे हरता (महादेवत्व) प्रदान करें, हरिता (विष्णुत्व) नहीं। विष्णु न बनाकर शिव बनायें, ताकि माता गंगाको मैं आदरपूर्वक सदैव शिरोधार्य कर सकूँ।

मुसलमान कवियोंका ही नहीं, मुसलमान शासकोंका भी गंगासे अटूट सम्बन्ध रहा है। जलको अमृत कहा जाता है—'अमृतं जलम्।' गंगाका जल वास्तवमें अमृत है। हिमखण्डोंसे सतत प्रवाहित गंगाका जल वनौषधिका सार ग्रहणकर कीटाणुरहित पथ्य है। आयुर्वेदाचार्य चक्रपाणिने गंगाके जलको 'गङ्गा पथ्यम्' कहा है। १३वीं शतीमें विदेशी यात्री इब्नबतूताने अपने यात्रा-वर्णनमें मोहम्मद तुगलकके लिये प्रतिदिन दौलताबादको गंगाजल भेजे जानेका उल्लेख किया है। अबुल फजल ने 'आईने अकबरी' ग्रन्थमें सम्राट् अकबरद्वारा प्रतिदिन गंगाजलका पान करनेका उल्लेख किया है। सम्राट् जलको अमृत समझकर पीते थे। मुगल सम्राट् औरंगजेब भी प्रतिदिन गंगाजलका पान करते थे। वर्नियर (फ्रेंच यात्री)-ने अपने यात्रा-वर्णनमें यह विवरण प्रस्तुत किया है। मराठा इतिहासकारोंने दक्षिणके मुसलमान शासकोंद्वारा भी गंगाजलके उपयोगकी पुष्टि की है। मराठा शासकोंके लिये काँवड़में रखकर गंगाजल लानेका उल्लेख मिलता है। वर्तमानमें उत्तरसे दक्षिणमें रामेश्वरका, पश्चिममें सोमनाथ महादेवका गंगाजलसे अभिषेक करनेका विधान देशको एकतामें बाँधनेकी दिशामें गंगाकी महती भूमिका है।

इण्डियन मेडिकल काँग्रेसके एकआलेख (नदियोंमें कीटाणु)-में गंगाजलके कीटाणुरहित अपितु कीटाणुनाशक होनेके वैज्ञानिक प्रमाण मिलते हैं। अनेक वैज्ञानिकोंने प्रयोगोंद्वारा इस तथ्यकी सत्यताके परीक्षण किये हैं।

वर्तमानमें हमारे अन्धाधुन्ध शहरीकरण एवं औद्योगीकरणने जीवनदायिनी, रोगनिवारिणी, पतितपावनी गंगाके जलको प्रदूषित कर दिया है। प्रदूषण-निवारणके लिये एक राष्ट्रीय प्राधिकरण कार्य कर रहा है एवं एक स्वतन्त्र मन्त्रालय भी है। गंगाके प्रदूषणके निवारणका उपाय यह है कि गंगामें मिलनेवाले समस्त गन्दे नाले, उद्योगोंकी अवशिष्ट सामग्री एवं अन्य गन्दगीको पूर्ण रूपसे बन्द करें। जलमें प्रदूषणको रोकनेके लिये धनराशिसे अधिक सुदृढ़ क्रिया तथा इच्छाशक्तिकी आवश्यकता है। हम संकल्पित होकर प्रदूषण-निवारणका अनुष्ठान करें। गंगाके लिये यह देश चिर ऋणी है। गंगा ऐसी कालजयी धारा है, जो जन-जनके संस्कारोंमें सदैव प्रवाहित है। गंगाकी महिमाका पुण्य-स्मरण भी पापोंका नाश करता है—

गङ्गा गीता च गायत्री गोविन्दो गरुडध्वजः।
पञ्चैतान्स्मरतो नित्यं सर्वपापं प्रणश्यति॥

गंगाजलकी महान् महिमा

(डॉ० श्रीप्रणवजी पण्ड्या, एम० डी०, कुलाधिपति)

'भगवती गंगाका जल ओषधितुल्य है, वह रूपको चमका देता है, रोगका नाश करता है।' ये पंक्तियाँ पढ़ीं तो कुष्ठ रोगसे पीड़ित महाकवि पद्माकर कानपुर पहुँचे और 'पद्माकर-कोठी' नामसे एक स्थान गंगाजीके किनारे लेकर वहीं रहने लगे। गंगाजीका जल पीना, उसीमें स्नान करना, उसीके जलसे भोजन बनाना, गंगाजीके ही पावन तटपर विहार करना—यही उनका क्रम हो गया।

जिस रोगको वैद्यों, डॉक्टरोंने असाध्य घोषित कर दिया था, गंगामाँकी कृपासे वह रोग अच्छा हो गया तो कविहृदयसे उनके प्रति स्वाभाविक श्रद्धा फूट पड़ी। 'गंगा-लहरी' नामसे ५५ छन्दोंवाला उनका खण्ड-काव्य उन्हीं भावोंकी अभिव्यक्ति है। लगता है, भारतीय जन-जीवनको आदिकालसे गंगाजीसे ऐसे ही चमत्कारी लाभ प्राप्त हुए हैं, तभी स्थान-स्थानपर उनकी स्तुति और भक्ति-गाथा गायी गयी है।

बाल गंगाधर तिलकने गंगाजीको संसारकी सभी नदियोंसे पवित्र माना था। गाँधीजी तो थे ही महान् धार्मिक, उन्होंने भी भगवती गंगाके प्रति प्रगाढ़ निष्ठा व्यक्त की। बँगलाके प्रसिद्ध कवि श्रीयुत द्विजेन्द्रलालरायने गंगाजीको अपनी श्रद्धा व्यक्त करते हुए भावपूर्ण शब्दोंमें लिखा है—

परिहरि भव सुख दुःख जे खले, माँ! शापित अंतिम शपने।
बरषि श्रवणे तव जल कल-कल, बरषि सुप्ति मम नयने॥
बरषि शान्ति मम शंकित प्राणे, बरिष अमृत मम अंगे।
माँ! भागीरथि जाह्नवि सुरधुनि, माँ! कल्लोलिनि गंगे॥

हे कल्लोलिनि गंगे! तुम जन्म-जन्मान्तरोंके दुःखोंको दूर करनेवाली हो। अन्तिम समयमें मेरे शंकित मन और प्राणोंको शान्ति और तृप्ति प्रदान करो। अपने अमृतमय जलकी हमारे सम्पूर्ण अंगोंमें वर्षा करो।

कवियों और शास्त्रकारोंद्वारा अभिव्यक्त इस श्रद्धाके पीछे निराधार कल्पनाएँ और मात्र भावुकता नहीं रही। किसी भी तत्त्वके प्रति श्रद्धा उसकी उपयोगिता और वैज्ञानिक गुणोंके आधारपर होती है। गंगाजीके जलमें ऐसे उपयोगी तत्त्व और रसायन पाये जाते हैं, जो मनुष्यकी शारीरिक विकृतियोंको ही नष्ट नहीं करते वरन् विशेष आत्मिक संस्कार जाग्रत् करनेमें भी वे समर्थ हैं, इसीलिये उनके प्रति इतनी श्रद्धा व्यक्त हो गयी। वैज्ञानिक परीक्षणोंसे भी ये बातें स्पष्ट होती जा रही हैं।

प्राच्य विद्वानोंकी दृष्टिमें—हमारे यहाँ आजसे २००० वर्ष पूर्व महर्षि चरकने यह घोषणा कर दी थी कि गंगाजल पथ्य है। '**औषधं जाह्नवीतोयं**' गंगाजल औषधि है, इसकी समता संसारकी कोई औषधि नहीं कर सकती। चक्रपाणिदत्तने १०६० वर्ष पूर्व ही खोज करके बताया था कि गंगाजल स्वास्थ्यवर्धक है। 'भोजन-कुतूहल' (भण्डारकर ओरियण्टल इन्स्टीट्यूट)-में गंगाजल श्वेत, स्वादु, स्वच्छ, रुचिकर, पथ्य, भोजन पकानेयोग्य, पाचक, शक्तिवर्द्धक और बुद्धिको बढ़ानेवाला बताया गया है। इन प्राच्य विद्वानोंकी खोजोंके अतिरिक्त आज भी शतशः जीवनसे निराश व्यक्ति जिन्हें डॉक्टरों-वैद्योंने असाध्य घोषित कर दिया, गंगामाताकी शरणमें गये और स्वस्थ होकर लौटे। पर्वत-शिखरोंसे जड़ी-बूटियोंका स्पर्श करता हुआ जल यहाँ आते-आते काफी दूषित हो जाता है, फिर भी साधारण जलसे कई गुना स्वास्थ्यप्रद होता है, अतः गंगाजल एक अनुपम पेय है, संसारमें कहीं उसकी समता नहीं।

पाश्चात्य विद्वानोंकी दृष्टिमें—विज्ञानाचार्य श्रीहैनवरी हैकिंस किसी समय उत्तर प्रदेश तथा मध्यप्रदेशके रसायन परीक्षक थे, उन्होंने अपने वैज्ञानिक यन्त्रोंद्वारा परीक्षण करके सिद्ध किया है कि गंगाजलमें हैजेके कीटाणु नष्ट करनेकी प्रबल शक्ति विद्यमान है। उन्होंने काशी जाकर गंगाजलकी परीक्षा की और देखा कि गन्दे नालोंके कीटाणु गंगाजलमें मिलनेके पश्चात् नष्ट हो गये। इसका समर्थन पैरिसके सुविख्यात डॉक्टर मि० हेरेलने भी किया है। हैजे और आँवकी बीमारियोंसे मरे व्यक्तियोंके शवोंको जो गंगामें फेंक दिये गये थे, उक्त डॉक्टर महोदयने कुछ ही फुट नीचे शवोंके पास जहाँ कीटाणुओंकी आशा थी उसकी जाँच की और एक भी कीटाणु नहीं पाया।

डॉ० कहाविराने अपने प्रयोग एवं परीक्षणद्वारा सिद्ध किया कि गंगाजलसे सन्निपातज्वर और संग्रहणी नष्ट हो जाती है। इसी प्रकार एक प्रमुख अँगरेजी दैनिक लिखता है कि 'गंगाजलमें रेडियमके समान वस्तु है, जिसमें दुष्टव्रण नष्ट करनेकी अद्भुत शक्ति है।'

फ्रान्सीसी यात्री बर्नियर अपने यात्राविवरणमें लिखता है कि 'गंगाजलमें जो विशेषताएँ पायी जाती हैं, उनके कारण अनादिकालसे राजाओंसे लेकर निर्धनोंतकमें इसका प्रयोग होता आया है। मुसलिम शासनकालमें भी बादशाहोंके महलोंमें गंगाजलका ही प्रयोग होता था।'

मुसलमानोंकी दृष्टिमें—इब्नबतूताने जो चौदहवीं शताब्दीमें भारत आया था, लिखा है कि सुलतान मुहम्मद तुगलकके लिये गंगाजल बराबर दौलताबाद जाया करता था। अबुल फजलने 'आईने अकबरी' में लिखा है कि 'बादशाह अकबर गंगाजलको अमृत समझते हैं और उसके आनेका प्रबन्ध रखनेके लिये उन्होंने कई योग्य व्यक्तियोंको नियुक्त किया हुआ है, वह घरमें या यात्रामें गंगाजल ही पीते हैं। खाना बनानेके लिये वर्षाजल या यमुनाजल, जिसमें गंगाजल मिला दिया जाता है, काममें लाया जाता है।'

डॉक्टर बर्नियर जो १६५६ ई० से ६८ तक भारतमें रहा, जो शाहजादा दाराशिकोहका चिकित्सक था, उसने अपने यात्रा-विवरणमें लिखा है 'बादशाह औरंगजेबके लिये खाने-पीनेकी सामग्रीके साथ गंगाजल भी रहता है, प्रतिदिन नाश्तेके साथ एक सुराही गंगाजल भेजा जाता है।'

कप्तान एडवर्ड मूर, जिसने टीपू सुलतानके साथ युद्धमें भाग लिया था, लिखा है कि सन्नवरके नवाब केवल गंगाजल ही पीते थे। प्रसिद्ध इतिहासकार गुलाम हुसेनने बंगालके इतिहास रियाजुस-सलातीनमें गंगाजलकी भूरि-भूरि प्रशंसा की है।

प्राचीनकालमें जब भारतवर्षका अरब, मिस्र और योरोपीय देशोंसे व्यापार चलता था, तब भी और इस युगमें भी सब देशोंके नाविक गंगाकी गरिमा स्वीकार करते रहे हैं। डॉ० नेल्सनने लिखा है कि हुगली नदीका जो जल कलकत्तासे जहाजोंमें ले जाते हैं, वह लन्दन पहुँचनेतक खराब नहीं होता, परंतु टेम्स नदीका जल जो लंदनसे जहाजोंसे भरा जाता है, बम्बई पहुँचनेके पहले ही खराब हो जाता है।

तब जबकि जलको रासायनिक सम्मिश्रणोंसे शुद्ध रखनेकी विद्याकी जानकारी नहीं हुई थी, पीनेके पानीकी बड़ी दिक्कत होती थी। खारा होनेके कारण लोग समुद्रका पानी नहीं पी सकते थे। अपने साथ जो जल लाते थे, वह भी कुछ ही दिन ठहरता था, यह दिक्कत उन्हें आनेमें ही रहती थी। जाते समय वे लोग गंगाजी (हुगली)-का जल भर ले जाते थे, बहुत दिनोंतक रखा रहनेपर भी उसमें किसी प्रकारके कीड़े नहीं पड़ते थे। समुद्री जलमें रखे चावल बहुत दिनतक अच्छे नहीं रहते, सड़ने लगते हैं, जबकि गंगाजीके पानीमें वे शीघ्र नहीं सड़ते। यों संसारमें और भी अनेक पवित्र नदियाँ हैं, पर गंगाजीके जलमें पायी जानेवाली जैसी पवित्रता किसीमें भी नहीं है।

योरोपीय देशोंमें चैटल गायोन सेण्ट नेक्टेयर बार्बूले और मोण्टेडोरेके कुण्डोंको अति पवित्र माना जाता रहा है। हमारे देशमें लखनऊके पास कुकरैलनदीमें स्नान करनेसे कुत्तेके काटे व्यक्तिके अच्छे हो जानेका विश्वास किया जाता है। मोण्टेडोरेके बारेमें भी वहाँके लोगोंका ऐसा ही विश्वास है। फ्रान्सके प्रसिद्ध चिकित्साशास्त्री डॉ० डी० हेरेलने जब गंगाजलकी इतनी प्रशंसा सुनी तो वे भारत आये और गंगाजलका वैज्ञानिक परीक्षण किया। उन्होंने पाया कि इस जलमें संक्रामक रोगोंके कीटाणुओंको मारनेकी जबर्दस्त शक्ति है। आश्चर्यजनक बात तो यह है कि एक गिलासमें किसी नदी या कुएँका पानी लें, जिसमें कोई भी कीटाणुनाशक तत्त्व न हों, उसे गंगाजलमें मिला दो तो गंगाजलके कृमिनाशक कीटाणुओंकी संख्या बढ़ जाती हैं, इससे सिद्ध होता है कि गंगाजीमें कोई ऐसा विशेष तत्त्व है, जो किसी भी मिश्रणवाले जलको भी अपने ही समान बना लेता है। यही कारण है १५५७ मील लम्बी गंगाजीमें गोमती, घाघरा, यमुना, सोन, गण्डक और हजारों छोटी-छोटी नदियाँ मिलती चली गयीं, तब भी

गंगासागरपर उसकी यह कृमिनाशक क्षमता अक्षुण्ण बनी रही। यह एक प्रकारका चमत्कार ही है।

डॉ० डी० हेरेलने अपने प्रयोगोंसे सिद्ध कर दिया कि इस जलमें टी०बी०, अतिसार, संग्रहणी, व्रण, हैजाके जीवाणुओंको मारनेकी शक्ति विद्यमान है। गंगाजीके कीटाणुओंकी सहायतासे ही उन्होंने सुप्रसिद्ध औषधि 'बैक्टीरियोफैज' का निर्माण किया, जो ऊपर कही गयी बीमारियोंके लिये सारे संसारमें लाभप्रद सिद्ध हुई। आज भी भारतवर्षके लगभग १५ हजार कुष्ठरोगी रोग-निवारणकी आशासे गंगाजीके किनारे रहते हैं। दूसरे देशवासी हमारी इस ईश्वरीय देनका विश्वासपूर्वक लाभ ले रहे हैं और हम भारतीयोंने उन्हीं श्रद्धास्पद भगवती गंगामें कितनी गन्दगी भर दी, उसका स्मरण करनेमात्रसे बड़ा कष्ट होता है।

यदि अपनी इस धार्मिक, आध्यात्मिक और महानतम सांस्कृतिक उपलब्धिको पवित्र और लोकोपयोगी रखना है तो गंगाजलकी शुद्धिके लिये भी एक सत्याग्रह आन्दोलन छेड़ना पड़ेगा। जो गंगा हम भारतीयोंके जीवन-मरणके साथ जुड़ी हुई है, उसे यों अशुद्ध करना उन लाखों-करोड़ों भारतीयोंकी श्रद्धा और भावनाओंका अपमान है, जो अमावस्या, सूर्यग्रहण और कार्तिकी पूर्णिमा-जैसे विशेष पर्वोंपर गंगाजीके घाट-घाटपर कोसों मील दूरसे चलकर पहुँचते हैं और स्नान करते हैं।

हमारी इस श्रद्धाका आधार वह विज्ञान है, जिसे भारतीय तत्त्ववेत्ता आदिकालसे जानते रहते हैं और आजका विज्ञान जिसकी अक्षरशः पुष्टि करता है। डॉ० केहिमानने लिखा है—'किसीके शरीरकी शक्ति जवाब देने लगे तो उस समय यदि उसे गंगाजल दिया जाय तो आश्चर्यजनक ढंगसे जीवनी शक्ति बढ़ती और रोगीको ऐसा लगता है कि उसके भीतर किसी सात्त्विक आनन्दका स्रोत फूट रहा है।'

उपर्युक्त उद्धरणोंसे विशेष कुछ कहनेको स्थान ही नहीं रहता, आज संसार धीरे-धीरे हमारी मूलभूत मान्यताओंको मानकर उन ऋषियोंके चरणोंमें श्रद्धावनत हो रहा है, जिनकी तपस्या एवं खोजोंके परिणामस्वरूप हमें ये रत्न मिले हैं। आइये, हम सब भी गंगामातासे प्रार्थनाकर कुछ ऋणसे उऋण हों—

त्वत्तीरे वसतस्त्वदम्बु पिबतस्त्वद्वीचिषु प्रेङ्खत-
स्त्वन्नाम स्मरतस्त्वदर्पितदृशः स्यान्मे शरीरव्ययः ॥

कल्याणकारी गंगाजल एवं पुण्यसलिला भागीरथी

(श्रीचुन्नीलालजी भारद्वाज)

'गंगाजल', भारत-भूमिकी एक परम पुनीत, दिव्य और आरोग्यप्रदायक वस्तु है। अत्यन्त प्राचीन कालसे ही समस्त मानवजाति इसे श्रद्धा और सम्मानकी दृष्टिसे पूज्य मानती आयी है। प्रायः सभी प्राचीन भारतीय ग्रन्थोंमें—चाहे वे आध्यात्मिक हों, ऐतिहासिक हों, स्वास्थ्य-सम्बन्धी हों या संस्मरणात्मक हों—किसी-न-किसी रूपमें गंगा और गंगाजलका उल्लेख अवश्य आया है। इसे सर्वपापनाशक, आध्यात्मिक परम लाभकी प्राप्तिका श्रेष्ठ साधन तो माना ही गया है, स्वास्थ्यकी दृष्टिसे भी इसका महत्त्व बहुत ही अधिक है।

आयुर्वेदशास्त्रके मतानुसार 'गंगाजल' सब प्रकारके जलोंमें सर्वोत्कृष्ट और सर्वदोषनाशक है। यह शीतल, हलका, तृप्तिदायक, आनन्दवर्धक, पाचक, बुद्धिवर्धक, जीवनीशक्तिका विकास करनेवाला और समस्त रसायन-गुणोंसे भरपूर है। गंगाजल मूर्च्छा, तन्द्रा, प्यास, शरीरका दाह, थकावट, उदरविकार, पेटके कृमि और पुराना कब्ज इत्यादि व्याधियोंको नष्टकर शरीरकी समस्त धातुओंको शुद्ध करते हुए देहको सुदृढ़ बनाता है एवं आयु दीर्घ करता है। मुख्य बात यह है कि इसका सेवन करनेसे मनुष्यकी बुद्धि सात्त्विक विचारोंसे परिपूर्ण होती है। इसी दृष्टिकोणसे सम्भवतः हमारे पूर्वज महर्षियोंने एकस्वरसे यह कहा है, 'गंगाजलके पान और स्नान करनेवाले मनुष्यके समस्त पापोंका नाश हो जाता है और वह पूर्ण आरोग्य प्राप्त करते हुए दीर्घायु बनता है।' इसी

मतकी पुष्टि आयुर्वेदशास्त्रके विश्वविख्यात विद्वान् महर्षि चरकने अपने ग्रन्थ 'चरक-संहिता'में भी की है। इनके पश्चात् सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक 'चक्रपाणिदत्त'ने भी सन् १०६० ई० में उक्त कथनकी पुष्टि करते हुए गंगाजलको सर्वव्याधियोंका संहारक कहा है।

भारतवर्षके प्रसिद्ध 'भण्डारकर ओरियंटल इन्स्टीट्यूट'-में प्राप्य एक हस्तलिखित ग्रन्थमें किसी प्राचीन विद्वान्ने गंगाजलकी महत्तापर विस्तृत रूपसे लिखा है। उसमें भी गंगाजलको सुपथ्य, आहारके लिये सर्वोत्तम, पाचनशक्तिवर्धक, तृषानाशक और बौद्धिक विकास करनेवाला कहा गया है।

देशके सुविख्यात शारीरशास्त्री एवं महान् चिकित्सक स्वर्गीय श्रीगणनाथसेन महोदयने गंगाजलके अतिरिक्त उसकी रज (मिट्टी)-को भी सर्वप्रकार चर्म एवं रक्तविकारोंका नाश करनेवाला माना है। रजके शरीरपर लेपनसे भयंकर व्याधियाँ भी कुछ ही कालमें नष्ट हो गयीं और त्वचाका वर्ण उज्ज्वल हो गया।

गंगाजल और पाश्चात्य विज्ञान

कई वर्ष हुए, प्रसिद्ध समाचारपत्र 'स्टेट्समैन'में एक पश्चिमी जगत्के किसी सुविख्यात चिकित्सकका एक निबन्ध प्रकाशित हुआ था। उसमें उन्होंने लिखा था—

'गंगाजलमें एक आश्चर्यजनक गुण पाया—दुष्ट व्रणरोपणकी अद्भुत शक्ति। पूरी सम्भावना है कि गंगाजल जिस भू-भागसे बहकर आता है, उसमें रेडियम-सरीखी कोई वस्तु हो। कृमि-समूहका नाश करना गंगाजलका एक चमत्कार है।'

फ्रांसके सुप्रसिद्ध चिकित्सक डॉ० हेरेलने गंगाजलपर अनेक अनुसन्धान किये। इन्होंने अनेक ऐसे मनुष्योंके शवोंको, जो आँव आदि रोगों और हैजेसे समाप्त हो गये थे, ऐसे स्थानपर गंगामें डाला, जहाँ इन्हें उक्त रोगोंके कीटाणु-समूहके एकत्र होनेका विश्वास था; किंतु आश्चर्य! एक भी कीटाणुका पता नहीं चल पाया। अन्वेषणकी सफलतापर डॉक्टरने घोषित किया कि 'उक्त प्रकारके रोगियोंके लिये, गंगाजलको औषधरूपमें सेवन कराया जाना चाहिये।'

आगराके राजकीय रसायन-परीक्षक, श्री ई० एच० हैकिन्सने अपनी प्रयोगशालामें गंगाजलपर अनेक परीक्षण किये। तत्पश्चात् इस विषयमें उन्होंने स्पष्ट घोषणा की—

'गंगाजलको पवित्र और दिव्य वस्तु माननेवाले भारतीयोंके कथनमें सार है। गंगाजल हैजा आदि संक्रामक रोगोंके कीटाणुओंको नष्ट करता है। किंतु मुझे आश्चर्य है कि प्राचीन भारतके हिन्दूसमाजके विद्वानोंको कीटाणु-विज्ञानका इतना सूक्ष्म ज्ञान किस प्रकार हुआ!' निश्चय ही श्रीहैकिन्स महोदयका अभिप्राय उन विश्वविख्यात प्रातःस्मरणीय विद्वान् आयुर्वेद-विशेषज्ञोंसे रहा, जिन्होंने आजसे कहीं सहस्रों वर्ष पूर्व ही संसारको इसका रहस्य बता दिया था, जो आज भी उतना ही महत्त्वपूर्ण और अक्षरशः सत्य सिद्ध हो रहा है।

वैज्ञानिक हैकिन्सकी इस घोषणाके पश्चात् पाश्चात्य विज्ञान-जगत्में गंगाजलके प्रति आकर्षण उत्पन्न हुआ और इसपर अनेक अनुसन्धान हुए। इसी सन्दर्भमें एक बार एक विदेशी वैज्ञानिकने वाराणसीके गंगाजल तथा कूपजलमें संक्रामक रोगोंके कीटाणु छोड़े। कुछ समयके पश्चात् यह देखकर आश्चर्यस्तब्ध रह जाना पड़ा कि कूपजलमें तो ये कीटाणु कई गुना पनपकर बढ़ गये, किंतु गंगाजलमें इन्हें समाप्त होते तीन घण्टे भी न लगे। वैज्ञानिकका कथन था—'गंगाजलमें कीटाणुनाशक रसायन-शक्तिका अस्तित्व प्रचुररूपमें विद्यमान है।'

ब्रिटेनके सुप्रसिद्ध चिकित्सक श्री ई० नेलसन, एफ० आर० सी० एस० महोदयने आश्चर्यसे अभिभूत होकर कहा—

'भारतवासी गंगाजलको इतना पवित्र क्यों मानते हैं—क्यों इसका रहस्य समझमें नहीं आ पाता; किंतु एक चमत्कारपूर्ण बात है कि कलकत्तामें हुगलीसे भरा गंगाजल इंग्लैण्डतक आनेमें विकृत नहीं हो पाता, ताजा बना रहता है। इसके ठीक विपरीत लंदनकी टेम्स नदीका जल इंग्लैण्डसे बम्बई जानेतक बिगड़ जाता है, यद्यपि कलकत्ताकी अपेक्षा इंग्लैण्डसे जहाज बम्बई एक सप्ताह पूर्व ही पहुँच जाता है। इन जहाजोंको पोर्ट सईद, अदन आदि अनेक स्थानोंपर जल लेना पड़ता है। क्या गंगाजल पवित्र और टेम्सका जल अपवित्र है? बैक्टीरिया-सम्बन्धी होनेवाले अन्वेषणोंसे

मेरे कथनकी पुष्टि होती है।'

कनाडा (अमेरिका)-के मैकगिल विश्वविद्यालयके प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ० एस० सी० हैमिल्टनने गंगाजलके अनेक परीक्षणोंके पश्चात् विज्ञान-छात्रोंके सम्मुख स्वीकार किया—

'गंगाजलकी इस महान् एवं अद्भुत शक्तिको मैं स्वीकार करता हूँ कि इसमें कीटाणुओंको नष्ट करनेकी प्रबल क्षमता है। मैं नहीं कह सकता कि यह शक्ति इसमें कैसे और कहाँसे आयी!'

'संसारयात्रा' नामक ग्रन्थके प्रसिद्ध लेखक, यात्री मार्क ट्वेनने लिखा—

'गंगाजलकी परीक्षा करनेपर मैं इस परिणामपर पहुँचा कि यह जल अत्यन्त शुद्ध और पवित्र है। इसके स्नान एवं पानसे मनुष्यके विचार शुद्ध हो जाते हैं तथा गंगाजलमें संक्रामक रोगाणुओंका नाश करनेकी महान् और अद्भुत शक्ति है।'

विश्वप्रसिद्ध फ्रांसीसी यात्री टेनियरने भी गंगाजलकी इस महत्ताको स्वीकार करते हुए इसके गुणोंपर आश्चर्य व्यक्त किया और निम्न शब्दोंमें श्रद्धांजलि समर्पित की—

'समस्त भूमण्डलकी सलिल-सरिताओंमें गंगा सर्वश्रेष्ठ है; क्योंकि यह मानवमात्रको वह अमृत प्रदान करती है, जो उसे वास्तविक अर्थोंमें नीरोग और दीर्घायु बनाता है।'

यूरोपके प्रसिद्ध चिकित्सक रिचर्डसनने दीर्घकालतक गंगाजलका परीक्षण करनेके पश्चात् व्यक्त किया—

'गंगाके दर्शन करने और बार-बार 'गंगा-गंगा' मुखसे कहनेसे मनुष्यके हृदय और मस्तिष्कपर उत्तम प्रभाव पड़ता है।'

ऐसे ही विचार कुछ समय पूर्व भारतमें आये एक रूसी वैज्ञानिकोंके दलके सदस्यने प्रकट करते हुए कहा था, 'आज गंगास्नानके पश्चात् मुझे ज्ञान हुआ कि भारतीय गंगाको इतना पवित्र क्यों मानते हैं।' इन उपर्युक्त विचारोंमें और सहस्रों वर्ष पूर्व भारतीय पुराणोंमें लिखे गये इस विचारमें कितनी समानता है कि सहस्रों कोस दूर बैठा मनुष्य भी यदि 'गंगा-गंगा' उच्चारण करता है तो उसके समस्त पापोंका नाश हो जाता है, इसमें सन्देह करना ही व्यर्थ है।

मुस्लिम शासनकालमें

मध्यकालीन मुगल शासकोंके विषयमें निम्न उद्धरणोंसे ज्ञात होता है कि वे भी गंगाजलकी महत्तासे परिचित थे और अपने निजी प्रयोगमें प्रायः गंगाजलका ही प्रयोग किया करते थे।

मध्य एशियाके सुप्रसिद्ध विश्व-यात्री इब्नबतूता चौदहवीं शताब्दीमें भारत आये और उन्होंने देखा कि सुलतान मुहम्मद तुगलक सदैव गंगाजलका ही प्रयोग करते हैं।

प्रसिद्ध लेखक अबुल फजलने 'आईने अकबरी'में लिखा है, 'सम्राट् अकबरके भोजनालयमें केवल गंगाजलका ही प्रयोग किया जाता था और वे घरपर तथा यात्रामें सदैव गंगाजलका ही सेवन किया करते थे। सम्राट् गंगाजलको अमृत कहा करते थे।'

'हिन्दू-संस्कृतिका कट्टर विरोधी और अपने धर्मका कड़ाईसे पालन करनेवाला मुगल-शासक औरंगजेब भी अपने लिये गंगाजलसे ही भोजन बनवाता था।' यह उल्लेख सुप्रसिद्ध फ्रेंचयात्री बर्नियरने, जो सन् १६५६ से १६६८ तक भारतमें रहा, किया है।

मैसूरके शासक टीपू सुलतानके साथ युद्ध करनेवाली अंग्रेज सेनाके एक सैनिक अधिकारी 'कैप्टन मूर'ने अपनी भारत-यात्राके वर्णनमें लिखा कि 'टीपू सुलतानके लिये ऊँटोंद्वारा महलमें गंगाजल लाया जाता था; क्योंकि वह अपने सभी कार्योंमें गंगाजलका ही प्रयोग करता था।'

उपर्युक्त कथनकी पुष्टि करते हुए बंगालके इतिहास 'रियाजुस-सलातीन'में गुलाम हुसैनने लिखा—'गंगाजलके स्वाद, मिठास, हलकेपन और आरोग्यदायक गुणोंकी तुलना किसी भी अन्य जलसे नहीं की जा सकती।'

और आज भी

जी हाँ, आज भी गंगाजलको भारतीय, विशेषरूपसे हिन्दू-समाज अत्यन्त श्रद्धाभावसे मानता है और आरोग्य प्राप्त करता है। हिन्दू-समाजमें तो कोई भी मांगलिक कार्य बिना गंगाजलके सम्पन्न ही नहीं हो पाता। शरीरपर गंगाजल छिड़कने तथा गंगाके दर्शनमात्रसे ही

स्वयंको धन्य समझनेवाले साधु-स्वभावयुक्त मनुष्योंकी आज भी भारत और संसारमें कमी नहीं।

उत्तर भारतके प्रमुख तीर्थस्थल गढ़मुक्तेश्वर, जो मेरठ नगरसे तीस मील पूर्वमें है, गंगातटपर लेखकने देखा है कि अनेक रोगग्रस्त व्यक्ति तटपर बनी कुटियाओंमें कई-कई मास आकर ठहरते हैं और व्याधिमुक्त होकर नव स्फूर्ति लिये लौटते हैं। उदररोगोंसे पीड़ित एक स्नेही इसी दृष्टिसे कई मास गंगातटपर रहे। कुछ ही मासमें उनका गया स्वास्थ्य पुनः लौट आया और अब उनका सदैव यही परामर्श होता है कि 'कुछ समय माँ गंगाकी शरणमें जाकर निवास करो, निश्चय ही समस्त व्याधियाँ समाप्त हो जायँगी।'

मेरठसे कुछ दूर पिलखुवा नामक उपनगरमें एक सांस्कृतिक प्रदर्शनीका आयोजन हुआ था। इसमें देशके सभी भागोंसे अनेक विद्वान्, विचारक और कलाप्रेमी अवलोकनार्थ पधारे थे। इन्हींमेंसे एक विदुषी महिलाने गंगा और गंगाजलकी महत्तापर अपना अनुभव बताया—

'मंगोलिया और साइबेरिया आदि देशोंमें गंगा और गंगाजलके प्रति असीम श्रद्धा है। इन देशोंके निवासी गंगाजलको पवित्रतम और स्वर्गीय वस्तु मानते हुए इसकी एक-एक बूँदके लिये इतने लालायित रहते हैं कि इसके बदले उन्हें बड़े-से-बड़े प्राचीन महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ भी देनेमें संकोच नहीं होता। मंगोलियाकी यात्राके समय वहाँके नागरिक हमें साष्टांग प्रणाम करते थे। यही सोचकर कि हम उस देशके निवासी हैं, जहाँ पवित्र गंगा बहती है।'

उपर्युक्त शब्द भारतीय संस्कृतिके महान् अनुसन्धानकर्ता आचार्य डॉ० रघुवीरकी पुत्रवधू श्रीमती डॉ० शारदा रानीके हैं।

इसी प्रकार पुनीत भागीरथीके प्रति अपने स्नेहोद्‌गार प्रकट करते हुए बापूकी अनन्यभक्त बहन निवेदिता लिखती हैं, 'जबतक गंगा बहती है, भारतकी संस्कृति निष्प्राण नहीं हो सकती। गंगा तो माँ है—जो उसके किनारे आ गया, उसकी माँ।'

भारतीय जननायक नेहरूके शब्द

'गंगा तो विशेषकर भारतकी नदी है, जनताकी प्रिय है, जिससे लिपटी हुई हैं—भारतकी जातीय स्मृतियाँ, उसकी आशाएँ और उसके भय, उसके विजयगान, उसकी विजय और पराजय। गंगा तो भारतकी प्राचीन सभ्यताका प्रतीक रही है, निशानी रही है। सदा बहती, सदा बदलती—फिर भी वही गंगाकी गंगा।'

'वह मुझे याद दिलाती है हिमालयकी बर्फसे ढकी चोटियोंकी और उन गहरी घाटियोंकी, जिनसे मुझे अनन्य स्नेह रहा, उनके नीचेके उपजाऊ और दूर-दूरतक फैले मैदानोंकी, जहाँ काम करते मेरी जिन्दगी गुजरी है। मैंने सुबहकी रोशनीमें गंगाको मुसकराते, उछलते, कूदते देखा और देखा है शामके सायेमें उदास—काली-सी चादर ओढ़े—भेदभरी—जाड़ोंमें सिमटी-सी—धीमे-धीमे बहती सुन्दर धारा। और बरसातमें—दौड़ती हुई—समुद्रकी तरह चौड़ा सीना लिये और सागरको बरबाद करनेकी शक्ति लिये हुए।'

'यही गंगा मेरे लिये निशानी है भारतकी प्राचीनताकी—यादगारकी, जो बहती आयी है वर्तमानतक और बहती चली जा रही है भविष्यके महासागरकी ओर।'

संसार जिसे सदैव नास्तिक समझता रहा, उस युग-पुरुषने भी माँ भागीरथीको, अपने अन्तरके ममत्वपूर्ण स्नेहिल शब्दोंमें श्रद्धा-सुमन अर्पितकर एक महामानवका कर्तव्य पूर्ण किया। इसी प्रकार हमारे पूर्वज भारतीय महर्षि, विद्वानोंने जो अनेक महाकाव्यों, ग्रन्थों और पुराणोंमें गंगाजल और गंगाकी अपार महिमाका उल्लेख किया है, वह आधुनिक विज्ञानकी कसौटीपर भी तपे स्वर्णकी भाँति खरा उतरा है और यह भारतके लिये एक गौरवका विषय है।

अपने उद्‌गमस्थल गोमुख (गंगोत्री)-से लेकर, बंगालकी खाड़ीतक यह पुण्यतोया भागीरथी जिस-जिस भू-भागका स्पर्श करती प्रवाहित होती है, वहाँकी सभी वनस्पतियाँ परम पवित्र, गुणकारी और मानवमात्रका कल्याण करनेवाली सिद्ध हुई हैं। सहस्रों मीलकी भूमि गंगाजलसे सिंचित होकर लाखों-करोड़ों व्यक्तियोंको अमूल्य आशीर्वाद प्रदान कर रही है।

हे गंगे! तेरी महिमा अनन्त

(डॉ० श्रीराजीवजी प्रचण्डिया)

पुण्यसलिला नदियोंमें देवनदी गंगाका स्थान सर्वोपरि है। गंगाकी पुनीतता-पवित्रताका मुख्य आधार उसमें व्याप्त अलौकिक दैवी शक्ति है, जिसके कारण लोग उसपर अगाध आस्था एवं श्रद्धा रखते हैं, पूजा एवं अर्चना करते हैं। ऋग्वेदमें भी जिन विशिष्ट नदियोंकी ओर श्रद्धा संकेतित है, उनमें गंगा शीर्षस्थ हैं। 'वायुपुराण' एवं 'कूर्मपुराण'में कहा गया है कि जिस प्रकार हिमालय जहाँ-जहाँ आच्छादित है, वह समस्त भाग पुनीत है, उसी प्रकार गंगाका प्रवाह जिन-जिन क्षेत्रोंमें है, वे समस्त क्षेत्र एवं तट पवित्र हैं। यथा—'**सर्वपुण्यं हिमवतो गङ्गा पुण्या च सर्वतः।**' इसके तटोंपर स्थित हरद्वार, कनखल, प्रयाग एवं काशीप्रभृति तीर्थ प्रसिद्ध ही हैं। वायुपुराणने आकाश, अन्तरिक्ष एवं भूमिमें पैंतीस कोटि तीर्थोंकी जो गणना की है, वे सभी तीर्थ गंगामें अवस्थित माने गये हैं। वास्तवमें गंगा पुनीततम नदी है।

जन्मसे लेकर मृत्युपर्यन्त गंगा हमारे संस्कारोंमें कहीं-न-कहीं, किसी-न-किसी रूपमें जुड़ी हुई हैं। उनका यह जुड़ाव आजसे नहीं युग-युगान्तरोंसे है, जो भारतीय संस्कृतिको अक्षुण्ण बनाये हुए है। वह दो रूपोंमें हमारे हृदयमें प्रतिष्ठित है—१-भौतिक रूपमें और २-आध्यात्मिक रूपमें। एक ओर वे जहाँ तनके तापको दूर करती हैं तो दूसरी ओर मनकी मलिनता यानी संक्लेशों, परिणामोंको हरनेमें भी पूर्णतः सक्षम हैं। तनकी शुद्धिके साथ-साथ अन्तःकरणकी शुचिताके लिये हम गंगाकी शरणमें जाते हैं। गंगा अनन्तधर्मा हैं। इसलिये वे सहस्राधिक नामोंसे गुम्फित हैं। इनका जल मात्र पानी नहीं है, अपितु वह जीवनदायी जैविक शक्तिप्रदाता होनेसे लोकमें गंगामैयाके रूपमें समादृत है। गंगा जनमानसमें इतनी पूज्य हैं कि लोग उनके प्रति अनन्य श्रद्धा—निष्ठा प्रकट करते हैं, उनके दर्शन, नाम-स्मरण, मार्जन, अवगाहन आदिसे अपनेको धन्य एवं कृतकृत्य मानते हैं। अपने सत्योच्चारणकी पुष्टिके लिये भी उन्हें साक्षी बनाते हैं। महाराज मनुने स्वयं साक्षीके सत्योच्चारणके लिये जो कुछ कहा, वह गंगाकी पुनीतताकी ही पुष्टि करता है (मनुस्मृति ८।९२)।

धर्मशास्त्रोंमें, महाभारत एवं पुराणोंमें गंगाके विषयमें अभिव्यक्त अनेक प्रशस्तिजनक श्लोक इनकी महत्ता एवं पवित्रताका हमें अभिज्ञान कराते हैं।

महाभारतके 'वनपर्व' एवं 'अनुशासनपर्व'में अनेक श्लोकोंमें गंगाकी महिमा सविस्तार अभिमण्डित है, जिसे संक्षिप्तरूपमें यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है—

जहाँ-कहीं भी स्नान किया जाय गंगा कुरुक्षेत्रके बराबर हैं, किंतु कनखलकी अपनी विशेषता है और प्रयागमें इनकी परम महत्ता है। यदि कोई सैकड़ों पापकर्म करके गंगाजलका अवसिंचन करता है तो गंगाजल उन दुष्कृत्योंको उसी प्रकार जला देता है, जिस प्रकार अग्नि ईंधनको। कृतयुगमें सभी स्थल पवित्र होते हैं, त्रेतामें पुष्कर सबसे अधिक पवित्र है, द्वापरमें कुरुक्षेत्र एवं कलियुगमें गंगाकी विशेष महिमा है। नाम लेनेपर गंगा पापीको पवित्र कर देती हैं, इन्हें देखनेसे सौभाग्य प्राप्त होता है, कल्याण-मंगल प्राप्त होता है। जब इनमें स्नान किया जाता है या इनका जल ग्रहण किया जाता है तो सात पीढ़ियोंतक 'कुल' पवित्र हो जाता है—

सर्वं कृतयुगे पुण्यं त्रेतायां पुष्करं स्मृतम्।
द्वापरेऽपि कुरुक्षेत्रं गङ्गा कलियुगे स्मृता॥
पुनाति कीर्तिता पापं दृष्टा भद्रं प्रयच्छति।
अवगाढा च पीता च पुनात्यासप्तमं कुलम्॥

(वनपर्व ८५।९०, ९३)

जबतक किसी मनुष्यकी अस्थि गंगा-जलको स्पर्श करती रहती है, तबतक वह स्वर्गलोकमें प्रसन्न रहता है। गंगाके समान कोई तीर्थ नहीं है—'**न गङ्गासदृशं तीर्थम्**' (वनपर्व ८५।९६)। वही उत्तम देश है, जहाँ गंगा बहती हैं और वह तपोवन जहाँ गंगा पायी जाती हैं, उसे सिद्ध-क्षेत्र कहना चाहिये; क्योंकि

वह गंगातीरको छूता रहता है। वे जनपद एवं देश, वे पर्वत एवं आश्रम जिनसे होकर गंगा बहती हैं, पुण्यका फल देनेमें महान् हैं।

पुराणोंमें भी गंगाकी महत्ता सुन्दर ढंगसे प्रतिपादित है। जब गंगाका नाम श्रवण किया जाता है, जब कोई इनके दर्शनकी अभिलाषा करता है, जब इनका दर्शन होता है या जब इनका स्पर्श किया जाता है या जब इनका जल ग्रहण किया जाता है या जब कोई इनमें डुबकी लगाता है या जब इनका नाम लिया जाता है या इनकी स्तुति की जाती है तो गंगा प्रतिदिन प्राणियोंको पवित्र करती हैं। जब सहस्रों योजन दूर रहनेवाले लोग भी 'गंगा' का उच्चारण करते हैं तो तीन जन्मोंके एकत्र पाप नष्ट हो जाते हैं—

श्रुताभिलषिता दृष्टा स्पृष्टा पीतावगाहिता।
या पावयति भूतानि कीर्तिता च दिने दिने॥
गङ्गा गङ्गेति यैर्नाम योजनानां शतेष्वपि।
स्थितैरुच्चारितं हन्ति पापं जन्मत्रयार्जितम्॥

(विष्णुपुराण २।८।१२२-१२३)

वह व्यक्ति जो चाहे या अनचाहे गंगाके पास पहुँच जाता है और मर जाता है, स्वर्ग जाता है और नरक नहीं देखता। 'मत्स्यपुराण' (१०४।१४-१५)-में तो गंगाकी प्रशस्ति इस प्रकारसे उल्लिखित है कि पाप करनेवाला व्यक्ति भी सहस्रों योजन दूर रहता हुआ गंगा-स्मरणसे परम पद प्राप्त कर लेता है। गंगाके नाम-स्मरण एवं उसके दर्शनसे क्रमसे पापमुक्त होता हुआ सुख पाता है। इनमें स्नान करने एवं जलके पानसे वह सात पीढ़ियोंतक अपने कुलको पवित्र कर देता है। 'काशीखण्ड' (२७।६९)-में ऐसा आया है कि गंगाके तटपर सभी काल शुभ हैं, सभी देश शुभ हैं और सभी लोग दानग्रहणके योग्य हैं। 'पद्मपुराण' (सृष्टिखण्ड ६०।२५-२६)-में गंगाकी महानताका वर्णन करते हुए कहा गया है कि पिताओं, पतियों, मित्रों एवं सम्बन्धियोंके व्यभिचारी, पतित, दुष्ट, चाण्डाल एवं गुरुघाती आदि हो जानेपर या सभी प्रकारके पापों एवं द्रोहोंसे संयुक्त होनेपर क्रमसे पुत्र, पत्नियाँ, मित्र एवं सम्बन्धी उनका त्याग कर देते हैं, किंतु गंगा उन्हें परित्यक्त नहीं करती हैं।

गंगा-स्नानकी एक सुदीर्घ परम्परा है। स्नान और आचमन कर लेनेसे समस्त आधि-व्याधि-रोग मिट जाते हैं। पर, यह सब सशंकित मनसे नहीं, अपितु गंगाके प्रति पूर्ण समर्पण भाव-भक्ति लिये हुए होना चाहिये। गंगा-स्नानके सन्दर्भमें भी पुराणोंमें विस्तारसे चर्चा हुई है। 'स्कन्दपुराण' (काशीखण्ड २७।१२९—१३१)-में स्पष्टरूपसे यह अंकित है कि विशिष्ट दिनोंमें गंगास्नानसे विशिष्ट एवं अधिक पुण्यफल प्राप्त होते हैं। यथा—साधारण दिनोंकी अपेक्षा अमावास्यापर स्नान करनेसे सौ गुना फल प्राप्त होता है, संक्रान्तिपर स्नान करनेसे सहस्र गुना, सूर्य या चन्द्र-ग्रहणपर स्नान करनेसे सौ लाख गुना और सोमवारको चन्द्र-ग्रहणपर या रविवारको सूर्यग्रहणपर स्नान करनेसे असंख्य फल प्राप्त होता है। स्नान यदि शास्त्र-सम्मत तथा विधि-विधानपूर्वक मन्त्रोच्चारके साथ किया जाय तो उसका फल द्विगुणित हो जाता है। धर्मशास्त्रोंमें यह स्पष्ट निर्देश है कि गंगाका आह्वान 'नमो नारायणाय' मन्त्रके साथ करना चाहिये। आप विष्णुके चरणसे उत्पन्न हुई हैं, विष्णुभगवान् भी आपकी पूजा करते हैं। अतः जन्मसे मरणतक किये गये समस्त पापोंसे मेरी रक्षा करें। हे जाह्नवी गंगे! देवोंमें आपका नाम नन्दिनी और नलिनी भी है तथा आपके अन्य नाम भी हैं। यथा—दक्षा, पृथ्वी, विहगा, विश्वकाया, अमृता, शिवा, विद्याधरी, सुप्रशान्ता, शान्ति-प्रदायिनी आदि। स्नान करते समय इन नामोंका उच्चारण करना चाहिये।

धर्मशास्त्रोंमें पावन गंगाका वैशिष्ट्य जहाँ प्रदर्शित है, वहीं इनके उद्गम एवं स्वरूपादिकी भी चर्चा हुई है। भारतीय संस्कृतिमें 'ओंकार' शब्द जो ब्रह्मका द्योतक है, उसका बड़ा महत्त्व दिया गया है। समस्त मन्त्र इस एक विराट् शब्दमें गर्भित हैं। ओंकारमें सरस्वती, यमुना तथा गंगा—ये तीन नदियाँ समाविष्ट हैं। 'अ, उ, म्', से विनिर्मित 'ओऽम्' में अ—सरस्वती, उ—यमुना तथा म्—गंगाका द्योतक है और इन तीनोंके जल क्रमशः—

प्रद्युम्न, अनिरुद्ध एवं संकर्षण हरिके प्रतीक माने गये हैं। भगवती गंगाको साक्षात् ब्रह्मद्रव भी कहा गया है। वराहपुराण (अ० ८२)-में गंगाकी व्युत्पत्तिके लिये कहा गया है कि 'गां गता' अर्थात् जो पृथ्वीकी ओर गयी हों, वे गंगा हैं। 'पद्मपुराण'के सृष्टिखण्ड (६०। ६४-६५)-में निम्न मूल मन्त्रमें गंगाके स्वरूपको स्थिर करते हुए कहा गया है कि 'ॐ नमो गङ्गायै विश्वरूपिण्यै नारायण्यै नमो नमः।' अर्थात् विष्णु सभी देवोंका प्रतिनिधित्व करते हैं और नारायणी गंगा भगवान् विष्णुका। 'पद्मपुराण' (६। २६७। ४७)-में आगे कहा गया है कि गंगा मंदाकिनीके रूपमें पातालमें सतत प्रवहमान हैं। विष्णु आदि पुराणोंमें गंगाको भगवान् विष्णुके बायें पैरके अँगूठेके नखसे प्रवाहित माना है। जबकि 'ब्रह्मपुराण' (७३। ६८-६९)-में गंगा भगवान् विष्णुके पाँवसे प्रवाहित एवं भगवान् शिवके जटाजूटमें स्थापित मानी गयी हैं। 'मत्स्यपुराण' (१२१। ३८—४१), 'ब्रह्माण्डपुराण' (२। १८। ३९—४१) आदिमें बताया गया है कि भगवान् शिवने अपनी जटासे गंगाको सात धाराओंमें परिवर्तित कर दिया, जिनमें तीन (नलिनी, ह्लादिनी एवं पावनी) पूर्वकी ओर, तीन (सीता, चक्षुस् एवं सिन्धु) पश्चिमकी ओर प्रवाहित हुईं और सातवीं धारा भागीरथी हुई। इसी प्रकार 'कूर्म' (१। ४६। ३०-३१) एवं 'वराहपुराण' (अ० ८२)-में गंगाको सर्वप्रथम सीता, अलकनन्दा, सुचक्षु एवं भद्रा नामक चार विभिन्न धाराओंमें प्रवाहित होना माना है। अलकनन्दा दक्षिणकी ओर बहती हुई भारतवर्षकी ओर आती है और सप्तमुखोंमें होकर अन्ततोगत्वा समुद्रमें जा गिरती है।

'महाभारत'में इन्हें त्रिपथगामिनी, 'वाल्मीकीय-रामायण'में त्रिपथगा और 'रघुवंश' आदि काव्योंमें त्रिस्रोता कहा गया है—

गङ्गा त्रिपथगा नाम दिव्या भागीरथीति च।
त्रीन् पथो भावयन्तीति तस्मात् त्रिपथगा स्मृता॥
(वा०रा० १। ४४। ६)

विन्ध्यगिरिके उत्तर भागमें देवनदी गंगा 'भागीरथी गंगा'के नामसे तथा दक्षिण भागमें 'गौतमी गंगा' ('गोदावरी')-के नामसे प्रसिद्ध हैं।

गंगा वस्तुतः लोकमाता और विश्वपावनी हैं। अविलम्ब सद्गतिके इच्छुकजनोंके लिये गंगा ही एक ऐसा तीर्थ है, जिसके दर्शनमात्रसे सारा पाप नष्ट हो जाता है। ऐसी भगवती भागीरथीकी महिमा अनन्त है।

वैदिक गंगा

(आर्योंके भारत-प्रवेशकी भ्रान्त धारणाके खण्डनमें सहायक)

(डॉ० श्रीभागीरथप्रसादजी त्रिपाठी 'वागीश')

पश्चिमी विद्वानों और उनके अनुयायी कुछ सुधीजनोंकी भ्रान्त विचारधाराके अनुसार आर्योंने मध्य एशिया आदि भूभागोंसे चलकर भारतमें प्रवेश किया था। इस मान्यताकी पुष्टिमें वे ऋग्वेदमें उल्लिखित पर्वतों, नदी-नदोंके साक्ष्योंको प्रस्तुत करते हैं। उनका कथन है कि आर्यजनोंका भारत-प्रवेश पश्चिम दिशामें हुआ था। इसलिये उनका सर्वप्रथम परिचय पश्चिम दिशामें प्रवहमान नदियों एवं पर्वतोंके साथ होना स्वाभाविक था। सिन्धु, सप्तसिन्धु, कुभा इत्यादि नदियोंका सर्वाधिक वर्णन ऋग्वेद-संहितामें हुआ है। पाश्चात्त्य देशीय विद्वज्जनोंकी यह भी मान्यता है कि ऋग्वेद-संहिताका दशम मण्डल अन्य मण्डलोंकी अपेक्षा परवर्ती है। इसका कारण बताते हुए वे कहते हैं कि दशम मण्डलकी रचना तब हुई, जब आर्यजन भारतवर्षमें पूर्णरूपसे स्थापित हो चुके थे। अतः आर्यजन पूर्व दिशामें प्रवहमान गंगा, यमुना इत्यादि नदियोंका वर्णन इस मण्डलमें ही कर सके।

भारतीय संस्कृतिकी प्रकृति एवं सुदीर्घ परम्पराओंकी अतलस्पर्शी गहराइयोंको नापनेमें झिझकते पश्चिमी संस्कृतिके भक्तोंद्वारा उद्भावित ये भ्रान्त धारणाएँ सर्वथा

हास्यास्पद एवं उनके अपरिपक्व ज्ञानकी सूचक हैं। यदि आर्योंने पश्चिम दिशासे भारत-प्रवेश किया होता और अफगानिस्तान, सिन्धुप्रदेश तथा पंजाबमें सर्वतः प्रथम स्थापित हुए होते तो पूर्व दिशामें स्थापित होते हुए भी उन्होंने भारतके पश्चिम भागमें प्रवहमान नदियोंकी पूज्यताको भुला न दिया होता। वे सर्वतः प्रथम पश्चिमी नदियों एवं भूभागोंका ही स्मरण करते। ऋग्वेदीय दशम मण्डलके पचहत्तरवें नदीसूक्तमें नदियोंकी स्तुति की गयी है। इस नदीसूक्तके प्रथम मन्त्रमें बताया गया है कि सिन्धु नदी अपने बलसे सभी नदियोंको अतिक्रान्त करके प्रवहमान है। इसके परवर्ती सभी मन्त्रोंमें सिन्धुका वर्णन हुआ है। केवल पंचम मन्त्रमें पूर्व दिग्भागकी ओर प्रवहमान गंगा, यमुना, सरस्वती नदियोंकी स्तुति की गयी है—

इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या।
असिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तयाऽऽर्जीकीये शृणुह्या सुषोमया॥

(ऋग्वेद १०।७५।५)

इस मन्त्रमें नदियोंकी प्रार्थनाका जो क्रम रखा गया है, वह दिखाता है कि आर्यजन पूर्व दिशासे पश्चिम दिशाकी ओर अग्रसर हुए थे। गंगाके पश्चिममें यमुना हैं, उनके पश्चिम सरस्वती, उनके पश्चिम पंजाबकी सतलज, इरावती, चिनाव, मरुद्वृधा (चन्द्रभागा), झेलम और आर्जीकीया (व्यास) नामक नदियाँ प्रवहमान हैं। इस मन्त्रके परवर्ती छठे मन्त्रमें गोमती (गोमल—अफगानिस्तानके अराकोसियामें प्रवहमान) तथा कुभा (कावुल) नदियोंका नामोल्लेख हुआ है। अन्तिम नवम मन्त्रमें सिन्धु नदीकी महिमा बतायी गयी है। अष्टम मन्त्रमें बताया गया है कि सिन्धु नदीके तटवर्ती स्थान ऊनी कम्वलों, विविध ओषधियों और धन-धान्यसे समृद्ध थे। सिन्धु नदीमें आध्यात्मिकताकी अपेक्षा भौतिकता अधिक झलकती है। परवर्ती कुछ पुराणोंमें सिन्धुमें तर्पण आदि धार्मिक कृत्योंके अनुष्ठानकी चर्चाके अतिरिक्त बहुत महत्त्व नहीं दिया गया है। आर्यजन पूर्व दिशामें पश्चिमाभिमुख यात्रा करते हुए कुछ समयतक सिन्धुक्षेत्रमें ठहरे होंगे। वहाँसे शक-स्थान आदि देशोंमें फैल गये।

भारतसे समय-समयपर आर्योंके निष्क्रमण होते रहे हैं। 'जिप्सीभाषा' नामक ग्रन्थसे पता चलता है कि रोमा नामसे प्रसिद्ध यायावर कबीले पुराणोंमें निर्दिष्ट 'राम' नामक क्षेत्र ईसवी पूर्व और पश्चात्तन शताब्दियोंमें ईरान तथा मिस्र (इजिप्ट) होते हुए सम्पूर्ण यूरोप, तुर्किस्तान इत्यादि देशोंमें फैल गये। 'राम' नामक क्षेत्रसे सम्बन्धित होनेके कारण वे आज भी स्वयंको 'रोमा' कहते हैं। इजिप्टसे यूरोपमें प्रवेश करनेके कारण उन्हें जिप्सी कहा जाने लगा। यह 'राम' नामक क्षेत्र वहाँ है, जहाँ राजस्थान, पंजाव एवं सिन्धु प्रदेशकी सीमाएँ परस्पर मिलती हैं। समय-समयपर हुए इन निष्क्रमणोंका सम्यक् अनुशीलन करनेपर सिन्धु घाटीकी सभ्यताके रहस्योद्-घाटनपर नया प्रकाश पड़नेकी सम्भावना है। भारतसे आर्योंके ये निष्क्रमण चिरन्तन हैं। पश्चिमी संस्कृतिमें वैदिक देवताओंकी नामोपलब्धिका रहस्य आर्यजनोंके निष्क्रमणोंमें निहित है।

पाश्चात्य विद्वानोंका यह वक्तव्य सत्यसे सर्वथा परे है कि ऋग्वेद-संहितामें गंगाकी स्पष्ट चर्चा एक बार ही की गयी है। ऋग्वेदीय खिल पाठमें नदीसूक्तका एक खिल मन्त्र **'सितासिते सरिते यत्र संगथे तत्राप्लुतासो दिवमुत्पतन्ति'** मिलता है। इसमें श्रीगंगा और यमुनाके श्वेत एवं श्याम जलकी पावनता तथा दिव्यताको लक्षित करके वहाँ उनका स्मरण 'सिता' और 'असिता' के रूपमें भी किया गया है। उनका यह कहना अवश्य सत्य है कि ऋग्वेद-संहिताके अतिरिक्त यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद-संहिताओंमें गंगाकी चर्चा नहीं आयी है। यजुर्वेदसंहिताके शतपथब्राह्मण तथा कृष्णयजुर्वेदके तैत्तिरीय आरण्यकमें गंगाका स्पष्ट उल्लेख मिलता है।

ऋग्वेद-संहिताके (१।१५८।४—६) मन्त्रोंमें दीर्घतमस् (पूर्वनाम दीर्घतपस्) नामक महर्षिकी कथा आयी है। ऐतरेय ब्राह्मण (८।२३)-में बताया गया है कि ये महर्षि भरत राजाओंके पुरोहित थे। उन्होंने भरत दौष्यन्तिका 'ऐन्द्र अभिषेक' यमुनाके किनारे किया था। कथा है कि एक बार अंग देशके राजा

गंगा नदीमें जल-क्रीड़ा कर रहे थे। इन्होंने दीर्घतमस्को गंगाधारामें बहता हुआ देखकर उनका उद्धार किया था। बृहद्देवता नामक ग्रन्थमें इस कथाका उपबृंहण हुआ है। गंगा और यमुना नदियोंके मध्यवर्ती भूभागोंपर भरत दौष्यन्तिद्वारा प्राप्त की गयी विजयका अंकन शतपथब्राह्मणमें हुआ है। गंगा और यमुनाके मध्यवर्ती क्षेत्र (दोआब)-के निवासियोंकी तैत्तिरीय आरण्यकमें विशेषतः प्रशंसा की गयी है।

ऋग्वेद-संहिताके प्रथम एवं अष्टम मण्डलोंके अतिरिक्त षष्ठ मण्डलमें गंगा-सम्बन्धी चर्चा हुई है। वहाँ भरद्वाज ऋषि तथा कृपण पणियोंके बृबु नामक काष्ठकारका ऐसा प्रसंग है, जिसके अनुसार भरद्वाजने बृबुद्वारा दिये गये दानको स्वीकार किया था। बृबुकी प्रशंसामें भरद्वाजजीने जो ऋचा पढ़ी, उसमें बृबुकी दानोच्चताकी समानता गंगाके ऊँचे तटपर लगे विस्तीर्ण वृक्षके साथ की थी—

वर्षिष्ठे मूर्धन्नस्थात्। उरुः कक्षो न गाङ्ग्यः।

(६।४५।३१)

गंगा शब्दसे सम्बन्धित 'गाङ्ग्य' शब्दका व्यवहार किया गया है। यह कक्ष वृक्षका विशेषण है। 'गाङ्ग्यः कक्षः'-का तात्पर्य हुआ—गंगाका वृक्ष।

वैदिक वाङ्मयकी विविध व्याख्याएँ हैं, जो भौगोलिक स्थानोंका परिचय कराती हैं। महाभारत, पुराण इत्यादि वाङ्मयमें वैदिक कथाओंका विशदीकरण मिलता है। ऋग्वेदीय अष्टम मण्डलका उन्नीसवाँ सूक्त सौभरिसूक्तके नामसे प्रसिद्ध है। इसमें पुरुकुत्स-पुत्र राजा त्रसदस्युके दानकी प्रशंसा है। इसके ३६वें और ३७वें मन्त्रोंमें सौभरि ऋषिने राजा त्रसदस्युद्वारा किये गये कन्यादानकी प्रशस्ति की है—

अदान्मे पौरुकुत्स्यः पञ्चाशतं त्रसदस्युर्वधूनाम्।
मंहिष्ठो अर्यः सत्पतिः॥

उत मे प्रयियोर्वयियोः सुवास्त्वा अधि तुग्वनि।
तिसृणां सप्ततीनां श्यावः प्रणेता भुवद्वसुर्दियानां पतिः॥

राजा त्रसदस्युसे कन्यादान लेनेके पूर्व सौभरि ऋषि नदीके जलमें खड़े होकर तपस्या कर रहे थे। ऋग्वेद-संहितामें नदीके नामका उल्लेख नहीं है। उक्त दोनों मन्त्रोंमें ऋषिको दिये गये दानका संकेतभर मिलता है। बृहद्देवतामें भी केवल नदी कहा है। द्याद्विवेदने उस नदीको गंगा बताया है। श्रीमद्भागवतपुराणमें राजा त्रसदस्युके स्थानपर सम्राट् मान्धाता तथा गंगाके स्थानपर यमुना नाम दिया गया है। दोनोंकी राजधानियोंकी विभिन्नताके कारण नदियोंका भी नाम-भेद हुआ है। दोनों ग्रन्थोंमें गंगा-यमुनाके मध्यवर्ती भूभागकी पावनता दिखाना मुख्य लक्ष्य है। बृहद्देवता और पुराणोंमें इस सांकेतिक कथाका विशदीकरण उपलब्ध होता है। इतिहास-पुराण वेदोंकी सांकेतिक कथाओंका उपबृंहण करते हैं। इनकी सहायताके विना वेदोंका अर्थ-निश्चय करनेपर समग्र परम्पराका उल्लंघन होता है।

पाश्चात्त्य विद्वज्जन और उनके कुछ अनुयायियोंद्वारा इतिहास-पुराणकी उपेक्षा करके जो मनमाना अर्थ किया जाता है, उससे वेदोंको चोट पहुँचती है। उपर्युक्त विवेचनसे यह स्पष्ट है कि ऋग्वेद-संहिताके पहले, छठे और आठवें मण्डलमें भी गंगाका स्मरण किया गया है। आर्यजनोंकी प्रारम्भसे ही गंगाके प्रति आदर भक्ति रही आयी है। आर्यजनोंका बाहरसे भारतमें आगमन नहीं हुआ, अपितु समय-समयपर उनका भारतसे अन्य देशोंमें निष्क्रमण अवश्य होता रहा।

स्थाणुजङ्गमसम्भूतविषहन्त्रि नमोऽस्तु ते। संसारविषनाशिन्यै जीवनायै नमो नमः॥
तापत्रितयहन्त्र्यै च प्राणेश्वर्यै नमो नमः। शान्त्यै सन्तापहारिण्यै नमस्ते सर्वमूर्तये॥

[हे देवि गंगे!] आप स्थावर और जंगम जीवोंसे उत्पन्न होनेवाले विषका नाश करनेवाली हैं, आपको नमस्कार है। संसाररूपी विषका नाश करनेवाली जीवनदायिनी आपको बारम्बार नमस्कार है। आप आध्यात्मिक आदि तीनों तापोंका निवारण करनेवाली एवं सबके प्राणोंकी अधीश्वरी हैं, आपको नमस्कार है, नमस्कार है। आप शान्ति-स्वरूपा तथा सबका सन्ताप दूर करनेवाली हैं, सब कुछ आपका ही स्वरूप है, आपको नमस्कार है। [नारदपुराण]

ब्रह्मद्रव भगवती गंगा

(डॉ० श्रीप्रेमप्रकाशजी लक्कड़)

श्रीरामचरितमानसमें श्रीभरतजीके चित्रकूटगमनके प्रसंगमें ऐसा वर्णन आया है कि गुरुवर वसिष्ठ, माताओं और नगरवासियोंसहित जब सभी लोग शृंगवेरपुर पहुँचे, तब वहाँ जगपावनी गंगाका दर्शनकर कृतार्थ हो गये।

एहि विधि भरत सेनु सबु संगा। दीखि जाइ जग पावनि गंगा॥
रामघाट कहँ कीन्ह प्रनामू। भा मनु मगनु मिले जनु रामू॥
करहिं प्रनाम नगर नर नारी। मुदित ब्रह्ममय बारि निहारी॥
(रा०च०मा० २।१९७।३—५)

यहाँ श्रीगंगाजीके विशेषणमें 'जगपावनी' शब्दका प्रयोग श्रीगोस्वामीजीने किया है। यह श्रीगंगाजीकी विशेषता है कि वे अपनी ओर उन्मुख जीवोंका पापशमन और उद्धार बिना किसी भेदभावके करती रहती हैं। वहाँ स्त्री-पुरुष, मूर्ख-विद्वान्, धनी-निर्धन, विषयी-विरागी आदिका कोई भेदभाव नहीं है। उस दरबारमें जिसने हाजिरी लगायी, वही पुण्यात्मा हुआ। ऐसा सर्वसुलभ कृपाप्रवाह भगवती गंगाकी अन्यतम विशेषता है। इसलिये 'जगपावनी'।

श्रीगंगाजीमें सविधि स्नानके पुण्यकी गणना कौन कर सकता है, जबकि उनके नामस्मरण और दर्शनमात्रसे पापोंका नाश उसी प्रकार हो जाता है, जिस प्रकार सूर्योदय होते ही अन्धकारका नाश। सूर्योदय होने और अन्धकारके नाशमें कोई अन्तराल नहीं होगा, यह तत्क्षण होनेवाली घटना है। उसी प्रकार श्रीगंगाजीके नामस्मरण तथा दर्शनसे पापोंका सद्यः नाश हो जाता है। इसलिये भी 'जगपावनी'।

गङ्गा गङ्गेति यो ब्रूयाद् योजनानां शतैरपि।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति॥
………गङ्गे तव दर्शनात् मुक्तिः॥

श्रीगंगादर्शन और श्रीरामघाटको प्रणाम करनेकी फलश्रुति श्रीगोस्वामीजी बताते हैं कि लोगोंको ऐसा लगा, चित्तमें ऐसी प्रसन्नता उमड़ी, मन ऐसा मगन हुआ, मानो श्रीरामसे भेंट हो गयी हो। श्रीभरतजीकी इस यात्राका प्रधान उद्देश्य श्रीरामसे भेंट करना ही तो था। अतः श्रीगंगादर्शनसे मनोवांछाकी सिद्धि और कृतकृत्यताका भाव प्राप्त होता है। तभी तो भक्तजन वन्दना करते हैं—

नमामि गङ्गे तव पादपङ्कजं
सुरासुरैर्वन्दितदिव्यरूपम्।
भुक्तिं च मुक्तिं च ददासि नित्यं
भावानुसारेण सदा नराणाम्॥

अर्थात् हे गंगा मैया! मैं आपके चरणकमलकी वन्दना करता हूँ, जिन दिव्य चरणोंको देव-दानव सभी पूजते हैं। आप सदा ही मनुष्योंको उनके भावानुसार ऐहिक सुखभोग तथा पारलौकिक मोक्ष प्रदान करती रहती हैं।

देव-दानव जिसे समान रूपसे आदर दें, वही सर्वप्रिय, सर्वसुलभ और सर्वहितकारी हो सकता है। इसीलिये एक अन्य प्रसंगमें गोस्वामीजी लिखते हैं—

कीरति भनिति भूति भलि सोई। सुरसरि सम सब कहँ हित होई॥
(रा०च०मा० १।१४।९)

धर्मसम्राट् स्वामी करपात्रीजी महाराज अपने प्रवचनोंमें श्रीगंगाजीको 'ब्रह्मद्रव' कहा करते थे। वे कहते थे कि कलियुगके पामर जीवोंके कल्याणार्थ अहैतुकीकृपाकौतुकी परमात्मा मानो करुणाविगलित होकर श्रीगंगाजलके रूपमें साक्षात् बह चला है। गंगाजल साक्षात् बहता हुआ ब्रह्म है। गोस्वामीजीकी उपर्युक्त चौपाईमें *'मुदित ब्रह्ममय बारि निहारी'* के द्वारा इसी भावकी पुष्टि होती है। श्रीराम साक्षात् परब्रह्म हैं और यह गंगाजीका पावन जल भी बहता हुआ ब्रह्म है। अतः सहज ही अयोध्यावासियोंके चित्त श्रीगंगादर्शनसे आह्लादित हो उठे, मानो श्रीरामसे ही मिलना हो गया हो।

उसी प्रसंगमें श्रीभरतजीने श्रीगंगाजीके रजकणोंकी महिमा भी बतायी है। वे कहते हैं कि हे मैया! आपकी बालुका सेवकोंके लिये सभी सुखोंको देनेवाली कामधेनुके समान है—

भरत कहेउ सुरसरि तव रेनू। सकल सुखद सेवक सुरधेनू॥
(रा०च०मा० २।१९७।७)

कुछ सुख तो क्षणिक और नाशवान् होते हैं, कुछ चिर स्थायी और शाश्वत। श्रीगंगाजीकी रेणु 'सकल' सुखोंको सेवकोंके भावानुसार प्रदान करनेमें समर्थ है, जबकि कामधेनु सम्भवतः मुक्तिके शाश्वत सुखको प्रदान करनेमें समर्थ न हो।

श्रीगंगादशमीके पावन पर्वपर हमें यह स्मरण रखना चाहिये कि ब्रह्मद्रवकी इस जगपावनी धाराके सतत प्रवाहको अक्षुण्ण बनाये रखनेमें ही हम सबका कल्याण निहित है। इस हेतु अपना जो कर्तव्य हो, उसका निर्वाह करनेको हमें अग्रसर रहना चाहिये। कम-से-कम अपने द्वारा गंगाप्रवाहके भौतिक स्वरूपको मलिन और प्रदूषित करनेवाला कोई कृत्य न हो जाय, इसकी विशेष सावधानी रखनी चाहिये—

गंग सकल मुद मंगल मूला। सब सुख करनि हरनि सब सूला॥
(रा०च०मा० २।८७।४)

त्रिपथगामिनी

(श्रीलक्ष्मण नारायणजी गर्दे)

भगवती गंगाकी महिमा अपार है। पांचभौतिक देहमें बद्ध जीव अपनी बद्ध दृष्टिसे संसारके यथावत् पदार्थोंको बद्धरूपमें ही देखते हैं, परंतु प्रत्येक पदार्थका रूप बद्ध होनेपर भी उसका तत्त्व किसी भी कालमें बद्ध नहीं होता, परंतु तत्त्वको तो तत्त्वदर्शी ही जानते हैं, हम बद्ध जीव कैसे जान सकते हैं? तथापि भगवती गंगाकी यह विचित्र महिमा है कि हम इस बद्ध दृष्टिसे भी उसकी निर्बन्ध गति और उसके मुक्त स्वरूपको कुछ-न-कुछ देख सकते हैं।

गंगा जहाँसे निकलती और 'हर-हर' की अहोरात्र गर्जनाके साथ पृथ्वीपर अवतरित होती हैं, हिमालय-स्थित उस उद्‌गम-स्थानकी कल्पनामात्र भी मनुष्यके अति क्षुब्ध अन्तःकरणको क्षणमात्रमें विलक्षण शान्तिका अनुभव करा देती है। यहाँ थोड़ी देर ठहरकर इस ग्रीष्म ऋतुमें पाठक नयनोंको शीतल करनेवाले उस हिम-दृश्यका मनोहारित्व हृदयंगम करें, इस झल्लाती धूपमें उस दिव्य पवित्र शीतल समीरसे ग्रीष्मका ताप हरण हो जाने दें। गंगाका यह उद्‌गम-स्थान है। पर यह उद्‌गम-स्थान भी एक संगम-स्थान है; क्योंकि गंगा यद्यपि यहाँसे निकलती हैं तथापि गंगाका यह जन्मस्थान नहीं है। यहाँ वे कहीं ऊपरसे आती हैं, हिमनगपर आकर हिम-रूपको प्राप्त होती हैं और फिर वहाँसे तरल होकर प्रवाहको प्राप्त होती हैं। यह प्रवाह इस उद्‌गम-स्थानसे उत्तरकाशी, हरद्वार, प्रयाग, काशी आदि स्थानोंसे होता हुआ गंगासागरको प्राप्त होता है। गंगोत्रीसे गंगासागर तथा गंगा-प्रवाहका एक पथ है। गंगाका यह पथ देखने और गंगाके पुण्य सलिलमें स्नानादिसे परम पावित्र्य लाभ करनेके लिये यह सम्पूर्ण पथ मनुष्योंके नगरोंसे बसा हुआ है। मनुष्य-लोकमें—भूलोकमें—गंगाका यही पथ है, जो गंगासागरमें जाकर समाप्त होता है। पर क्या गंगा भी यहाँ समाप्त होती हैं? हाँ, सम्यक् रूपसे अपने विराट् सागर-रूपको प्राप्त होती हैं, अल्प रूप त्यागकर बृहत् रूप धारण करती और गंगासागर कहलाती हैं। जैसे गंगोत्री केवल उद्‌गम-स्थान नहीं है, वैसे ही गंगासागर भी केवल संगम-स्थान नहीं है; क्योंकि यहींसे गंगा वाष्परूपसे ऊपर सूर्यमण्डल या द्युलोकमें जाती हैं। सागरसे द्युलोकतक अन्तरिक्षमें गंगाका दूसरा पथ है और स्वयं द्युलोकमें उसका प्रवाह तीसरा पथ है। इस प्रकार गंगा त्रिपथगामिनी हैं। जहाँ कोई भी दो पथ मिलते हैं वह संगम भी है और उसके आगेकी गतिका उद्‌गम भी। हिमालयमें द्युलोकसे अन्तरिक्ष होकर आनेवाली गंगाका भूलोकमें प्रवाहित होनेवाली गंगाके साथ संगम होता है और यहींसे भूगंगाका उद्‌गम होता है। गंगासागरमें भूगंगाका अन्तरिक्ष

होकर द्युलोक जानेवाली भुवर्गंगाके साथ संगम होता तथा भुवर्गंगाका उद्‌गम होता है और द्युलोकमें इस भुवर्गंगाका स्वर्गंगाके साथ संगम होता और स्वर्गंगाका उद्‌गम होता है। यथार्थमें गंगा तो एक ही हैं, परंतु द्युलोकमें उनका रूप भिन्न है। अति सूक्ष्म तेजोमय अन्तरिक्षमें वाष्परूप है, जो हिमालयमें हिमरूपको प्राप्त होता है और भूलोकमें यह जलरूप है। ये तीन पथ हैं और यह त्रिपथव्यापिनी गति कहींसे भी रुद्ध नहीं है। जैसे भूलोकमें प्रवाह सतत है, वैसे ही अन्तरिक्षमें भी प्रवाह सतत है और द्युलोकमें भी प्रवाह सतत है। कहींसे भी इस त्रिपथगामिनी गंगाका पथ खण्डित या रुद्ध नहीं हुआ है। इसके प्रवाहका प्रत्येक कण और प्रत्येक क्षण सतत प्रवाहरूप है—सतत त्रिपथगामी है। यह तो हम अपनी बद्ध दृष्टिसे भी देख पाते हैं। कहते हैं, गंगा सकल-पाप-विनाशिनी हैं। जो गंगा बिना कुछ कहे-सुने केवल अपने उदाहरणमात्रसे मनुष्यकी इस बद्ध दृष्टिको भेदकर अपना निर्बन्ध और मुक्तस्वरूप सदा दिखाती हुई इस निर्बन्धमुक्त स्वरूपका अखण्ड रहस्य बता रही हैं, वह प्रतिक्षण अपने प्रत्येक प्रवाहशील कणसे अपना त्रिपथगामी निर्बन्ध आप ही प्रत्येक भावुकके हृदयमें भर रही हैं। गंगाके इस स्वरूपको जो गंगासे शत योजन दूर रहकर भी स्मरण करता है, वह भी '**मुच्यते सर्वपापेभ्यः**' अर्थात् '**विष्णुलोकं स गच्छति**'—सब पापोंसे मुक्त होनेके कारण इसी लोकमें बैठा-बैठा भी विष्णुलोकको प्राप्त होता है; क्योंकि विष्णुलोकसे गंगा निकलती हैं और वहाँसे यहाँतक और यहाँसे वहाँतक उनका सतत प्रवाह है—तीनों लोकोंको गंगाने अपने अखण्ड प्रवाहसे व्याप्त कर लिया है।

बद्ध जीवका वास्तविक मुक्त स्वरूप और मुक्त कर्म-प्रवाह भी ऐसा ही है। इस लोकमें जो है, वह इहजीवनरूप कर्म-प्रवाहके अन्तके साथ जन्म पा नष्ट नहीं होता। यहाँसे फिर विराट् अन्तरिक्षमें यही प्रवाह भिन्न रूपमें है और वहाँसे वही प्रवाह और भी सूक्ष्म होकर, तेजोमय रूपसे आदित्यलोक में है। इसीलिये आदित्यका ध्यान करते हुए भूर्भुवः स्वः—इन तीन व्याहृतियोंका नामोच्चारण कर जीवके भूलोक, अन्तरिक्षलोक और स्वर्लोक इन तीनों लोकोंमें एक साथ अवस्थितिका ही स्मरण किया जाता है। हम लोग उन्हींको मुक्तात्मा कहते हैं, जो इस प्रकार एक साथ तीनों लोकोंमें अवस्थित रहते हैं। गंगाका यह स्वरूप प्रत्यक्ष है और अपने इस प्रत्यक्ष स्वरूपसे गंगा जीवमात्रको अपने इस स्वरूपका बोध कराकर प्रतिक्षण यह नया जन्म देनेको तैयार रहती हैं। इसीलिये 'मातर्गंगे!' कहकर क्षुब्ध प्राणी अपने चेतनाधिकारानुसार अल्प या अधिक ज्ञानप्रदा शान्ति अनुभव करते हैं, परंतु क्या यह बात उन सभी नदियोंके विषयमें कही जा सकती है, जिनका प्रवाह सदा अखण्ड और सतत देखनेमें आता है? हाँ, '**मम वर्त्मानुवर्तन्ते**' यह बात ऐसी सभी नदियोंके विषयमें अवश्य कही जा सकती है। इसीलिये सभी समुद्रगत जल-प्रवाह पुण्यतीर्थ माने जाते हैं, परंतु इनके प्रभावमें तारतम्य है। प्रत्येक पुण्यतीर्थका वैशिष्ट्य है। जिस विशुद्ध सात्त्विक जीवनसे मनुष्यका अन्तःकरण विमल होकर अन्तःस्वरूपको प्रतिबिम्बित करनेमें समर्थ होता है, वह जीवन देनेकी शक्ति गंगाके ही जलमें सबसे अधिक है। अस्तु! गंगाकी यह जो त्रिपथव्यापिनी निर्बन्ध गति और त्रिलोकमें नित्य अवस्थिति है, इस कारण इसके अंशभूत प्रत्येक जल-कणमें भी गंगाप्रवाहका गुण-धर्म अंशतः उपस्थित है। इसलिये गंगाजलके दर्शन, स्पर्श, मार्जन, निमज्जनसे केवल भौतिक लाभ ही नहीं होता, बल्कि पारलौकिक पुण्य और ब्रह्मलोक-प्राप्तिका भी साधन होता है। गंगाका यह त्रिलोकव्याप्त नित्य स्वरूप कहींसे भी च्युत न होनेके कारण गंगाको तत्त्वतः ईश्वरत्व प्राप्त है और इसीलिये कहा है कि—

हरिर्नारायणो गङ्गा गङ्गा नारायणो हरिः।
हरिर्विश्वेश्वरो गङ्गा गङ्गा विश्वेश्वरो हरिः॥

ऐसी गंगाके नामोच्चारणका भी वही फल है, जो श्रीहरिके नामोच्चारणका फल है। यही नहीं, श्रीहरि ही जीवमात्रके उद्धारके लिये, जीव-मात्रको उसके त्रिलोकव्याप्त वास्तविक नित्य स्वरूपका बोध करानेके लिये, गंगा-रूपसे अवतीर्ण हुए हैं। [गीताधर्म]

गंगा : सदानीरा पुण्यतोया नदी

(साहित्यवाचस्पति श्रीयुत डॉ० श्रीरंजनजी सूरिदेव)

गंगा सभी नदियोंमें श्रेष्ठ है। इसीलिये भगवान् कृष्णने गीता (१०।३१)-में अपनेको गंगा नदी कहा है—'**स्रोतसामस्मि जाह्नवी॥**' गंगा भारतकी पवित्रतम नदी है। इस नदीका उल्लेख ऋग्वेद (१०।७५।५)-में भी मिलता है। गंगा देवीके रूपमें, मूर्त स्थितिमें हिमवान् पर्वतकी ज्येष्ठ पुत्री कही जाती हैं। कहते हैं, ब्रह्माके किसी शापके कारण गंगाको इस धरतीपर आना पड़ा। महाभारतके अनुसार वे राजा शान्तनुकी पत्नी बनीं। गंगाके आठ पुत्र हुए, जिनमें भीष्म सबसे छोटे पुत्र थे। भीष्म आजीवन ब्रह्मचारी एवं शौर्य-सम्पन्न होनेके कारण विख्यात हुए।

अन्य मतानुसार गंगा राजा भगीरथकी आराधनापर इस पृथ्वीपर आयीं। पुराणोंके अनुसार इस पवित्र नदीमें स्नान करनेसे स्वर्गकी प्राप्ति होती है। इसीलिये इसकी व्युत्पत्ति है—'**गां गमयति या सा गङ्गा।**' अर्थात् स्वर्ग ले जानेवाली नदी। विष्णुपदी, मन्दाकिनी, सुरसरि, देवगंगा, हरिनदी आदि गंगाके पर्याय हैं। गंगाकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें दो कथाएँ हैं—

(१) गंगाकी उत्पत्ति विष्णुके चरणोंसे हुई है। इसीलिये इसे '**विष्णुपदी**' कहते हैं। ब्रह्माने इन्हें अपने कमण्डलुमें भर लिया था। ऐसी भी प्रसिद्धि है कि विष्णुके विराट् अवतारके आकाशस्थित तीसरे चरणको धोकर ब्रह्माने अपने कमण्डलुमें रख लिया था। इसके सम्बन्धमें एक भिन्न व्याख्या भी मिलती है। पौराणिक जन समस्त आकाशमें स्थित मेघका विष्णु-स्वरूप वर्णन करते हैं। विष्णुका अर्थ ही है, जो सर्वत्र व्याप्त है। मेघसे होनेवाली वृष्टिसे ही गंगाकी उत्पत्ति हुई है।

(२) गंगाका जन्म हिमालयकी कन्याके रूपमें सुमेरुपुत्री मैनाके गर्भसे हुआ है। किसी विशेष कारणवश गंगा ब्रह्माके कमण्डलुमें जा छिपी। देवीभागवतपुराणके अनुसार लक्ष्मी, सरस्वती और गंगा तीनों नारायणकी पत्नियाँ हैं। पारस्परिक सपत्नीत्व-कलहके कारण उन्होंने एक-दूसरेको शाप देकर नदीके रूपमें अवतीर्ण होकर मृत्युलोकमें वास करनेको बाध्य कर दिया। फलस्वरूप, तीनों पृथ्वीपर अवतीर्ण हुईं। पुराणोंमें गंगा राजा शान्तनुकी पत्नी तथा भीष्मपितामहकी माता कही गयी हैं।

पृथ्वीपर गंगावतरणकी पौराणिक कथा इस प्रकार है—राजा सगरने अश्वमेध यज्ञ किया था। यज्ञके नियमानुसार अश्वको समस्त भूमण्डलपर विजय-अभियानके निमित्त छोड़ा गया। सौ अश्वमेध यज्ञ करनेवाले इन्द्रके राज्यके अधिकारी हो जाते हैं। इसीलिये इन्द्र यज्ञको विघ्नित करनेका प्रपंच रचते हैं। राजा सगरका जो घोड़ा छोड़ा गया, उसे इन्द्रने अपहरण कराकर पातालमें कपिलमुनिके आश्रममें बँधवा दिया।

राजा सगरके साठ हजार पुत्र घोड़ेको खोजते हुए पातालपुरी पहुँचे। धरतीको खोदकर जो गड्ढा बना, वही 'सागर' कहलाया। पातालमें कपिलमुनि नेत्र बन्दकर तपस्यामें लीन थे। उन मुनिके आश्रममें घोड़ेको बँधा देखकर सगर-पुत्रोंने अनुमान लगाया कि इसी मुनिने घोड़ा चुराया है। इसलिये कि अश्वमेध यज्ञ विघ्नित होकर अधूरा रह जाय। सगर-पुत्रोंने पातालपुरीमें स्थित कपिलमुनिके आश्रममें उपद्रव करना शुरू किया।

तपस्यामें विघ्न होते ही कपिलमुनिके नेत्र खुल गये। उन्होंने क्रोधावेशमें अपनी नेत्राग्निसे सगरके साठ हजार पुत्रोंको जलाकर भस्म कर दिया। मुनिके शापसे राजा सगरके साठ हजार पुत्र जब जलकर भस्म हो गये, तब उनके वंशजोंने गंगाको पृथ्वीपर लाकर अपने पूर्वजोंके उद्धारका प्रयत्न किया। इसके लिये उन्होंने घोर तपस्या की।

अन्तमें उन वंशजोंमें एक भगीरथने घोर तपस्या करके ब्रह्माको प्रसन्न कर लिया। ब्रह्माने गंगाको पृथ्वीपर लानेकी अनुमति दे दी, लेकिन पृथ्वी ब्रह्मलोकसे अवतीर्ण होनेवाली गंगाके प्रवाहका भार वहन करनेमें असमर्थ थी, अतएव भगीरथने शिवजीसे गंगाको अपने

जटाजालमें धारण करनेकी प्रार्थना की। ब्रह्माके कमण्डलुसे निकलकर गंगा शिवके जटाजालमें खो गयीं।

मार्गमें जह्नु ऋषिकी यज्ञ-सामग्री गंगाके प्रवाहसे नष्ट होने लगी तो वे एक चुल्लूमें गंगाको पी गये। भगीरथके प्रार्थना करनेपर उन्होंने गंगाको अपनी जाँघसे निकालकर प्रवाहित होनेको छोड़ दिया। इसी कारण गंगाका एक नाम जाह्नवी हो गया।

भगीरथ आगे-आगे रथपर शंख बजाते हुए चल रहे थे और गंगा पीछे-पीछे प्रवाहित होती चल रही थी। इस प्रकार भगीरथ गंगाको अपने पूर्वजोंकी उस भूमितक ले आये, जहाँ वे (उनके पूर्वज) भस्मावशेष हो गये थे। इस प्रकार गंगाके प्रवाहके स्पर्शसे उनके पूर्वजोंको मुक्ति प्राप्त हो गयी। भगीरथका यह प्रयत्न 'भगीरथ-प्रयत्न' नामसे मुहावरा बनकर लोक-प्रचलित हो गया। भगीरथके प्रयत्नोंसे पृथ्वीपर प्रवाहित होनेके कारण गंगाको 'भागीरथी' कहा जाता है।

राजा भगीरथ सूर्यवंशी असमंजसके पुत्र अंशुमान्‌के पौत्र तथा राजा दिलीपके पुत्र थे। महाप्रतापी राजा सगरके प्रपौत्र थे, परंतु महाकवि कालिदासके 'रघुवंश' महाकाव्यके अनुसार दिलीपके पुत्रका नाम रघु था, जिसके नामसे रघुवंश प्रसिद्ध है। रघुवंशमें ही राजा राम हुए। पुराणोंके गंगावतरणके साथ ही हिन्दी कवि रत्नाकरका भी 'गंगावतरण' काव्य प्रसिद्ध है।

गंगावतरणकी यह भी कथा है कि शंकर गंगाके गर्वको चूर करनेके लिये एक हजार वर्षोंतक उसे अपने जटाजालमें बाँधे रहे। अन्तमें भगीरथकी प्रार्थनापर गंगाको अपने जटाजालसे मुक्त कर दिया। अतः गंगा 'भागीरथी' नामसे प्रसिद्ध हुई। पुराणोंके अनुसार गंगा त्रिलोकव्यापिनी है। इसकी एक धारा आकाशमें, एक पृथ्वीपर और एक पातालमें प्रवहमान है।

हिमालयकी ज्येष्ठ कन्या भागीरथी गंगा

(डॉ० श्रीरमाकान्तजी पाण्डेय)

सूर्यवंशी राजाओंमें महाप्रतापी महाराज सगर चक्रवर्ती राजा हुए, उन्होंने महर्षि और्वकी आज्ञासे अश्वमेध यज्ञ किया। सौवें अश्वमेध यज्ञमें इन्द्रने अश्वमेधीय अश्वको अपहृतकर उसे गंगासागरमें तपस्यारत कपिल मुनिके आश्रममें बाँध दिया। पिताकी आज्ञासे सगरके साठ हजार पुत्रोंने अश्वमेधीय अश्वकी खोज करते हुए सारी पृथ्वी खोद डाली, जो सागरके नामसे प्रसिद्ध है। उन सभी पुत्रोंने कपिलमुनिके आश्रममें बँधे हुए अश्वको देखकर शोर मचाया। उनके शोरसे कपिलमुनिकी समाधि भग्न हो गयी। उनकी क्रोधाग्निसे तत्काल वे सभी सगरके पुत्र जलकर भस्मके रूपमें परिणत हो गये।

ततस्तेनाप्रमेयेण कपिलेन महात्मना।
भस्मराशीकृताः सर्वे काकुत्स्थ सगरात्मजाः॥
(वा०रा० १।४०।३०)

उसके बाद राजा सगरकी दूसरी पत्नीसे उत्पन्न असमंजसके पुत्र अंशुमान् पितामह सगरकी आज्ञासे अश्वकी खोजमें निकल पड़े। सगरके साठ हजार पुत्रोंद्वारा निर्मित सागरमार्गसे चलते हुए वे वहीं पहुँचे, जहाँ उनके पितृगण भस्मराशिमें परिणत हो पड़े हुए थे। अंशुमान्‌ने विनयपूर्वक महर्षि कपिलकी स्तुति की। उनकी स्तुतिको सुनकर भगवान् कपिलने अंशुमान्‌से कहा—वत्स! यह तुम्हारा अश्वमेधीय घोड़ा है, इसे ले जाओ। मेरी क्रोधाग्निसे भस्म हुए तुम्हारे पितृगण अपने उद्धारार्थ गंगाजलकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। ये गंगाजल पाकर ही स्वर्ग जा सकते हैं अन्यथा नहीं।

गंगाको पृथ्वीतलपर ले आनेका मैं उपाय बता रहा हूँ, उसके लिये तुम प्रयत्न करो।

हे पुरुषश्रेष्ठ! गंगा हिमालयकी ज्येष्ठ कन्या हैं। हे बाहुबली! गंगाजलसे ही पितरोंको तृप्त करो। जब लोकपावनी गंगा इस भस्मराशिको आप्लावित करेंगी तो गंगाजलसे आर्द्र होकर ये सगरके साठ हजार पुत्र स्वर्ग

चले जायँगे।

गङ्गा हिमवतो ज्येष्ठा दुहिता पुरुषर्षभ।
तस्यां कुरु महाबाहो पितॄणां सलिलक्रियाम्॥
भस्मराशीकृतानेतान् प्लावयेल्लोकपावनी।
तया क्लिन्नमिदं भस्म गङ्गया लोककान्तया।
षष्टिं पुत्रसहस्राणि स्वर्गलोकं गमिष्यति॥

(वा०रा० १।४१।१९-२०)

भगवान् कपिलकी आज्ञाको मानकर अश्वमेधीय अश्वको लेकर अंशुमान् लौट आये। श्रीमद्भागवतमें वर्णन आता है कि महाराज सगर उस अश्वमेधीय पशुसे यज्ञके अवशिष्ट कार्यको पूर्णकर तथा अंशुमान्को राज्यमें अभिषिक्तकर महर्षि और्वकी आज्ञासे तपस्यार्थ वन चले गये।

अंशुमान्ने भगवती गंगाको पृथ्वीतलपर लानेके लिये अनेक वर्षोंतक घोर तपस्या की, पर गंगाको पृथ्वीतलपर लानेमें समर्थ न होकर तपस्या करते हुए स्वर्ग सिधार गये। उसके बाद उनके पुत्र महाराज दिलीपने भी गंगाको पृथ्वीपर लानेका प्रयास किया, वे भी लानेमें समर्थ नहीं हुए। तपस्या करते हुए उनका भी शरीर शान्त हो गया।

उसके बाद दिलीपके पुत्र महाप्रतापी राजा भगीरथने मन्त्रियोंके ऊपर राज्यभार सौंपकर गंगाको पृथ्वीपर लानेके लिये अन्न-जलादिका त्यागकर एक पैरसे खड़े होकर कठिन तपस्या की। उनका सारा शरीर सूख गया, केवल अस्थिमात्र शेष रहा।

उनकी कठिन तपस्यासे प्रसन्न होकर भगवती गंगाने उन्हें दर्शन देकर वर माँगनेको कहा।

तब भगीरथने हाथ जोड़कर प्रणाम करते हुए इस प्रकार प्रार्थना की—हे कृपामयी माँ! मेरे पितृगण अश्वमेधीय अश्वकी खोज करते हुए तथा सारी पृथ्वीको विदीर्ण करते हुए महर्षि कपिलके ब्रह्मतेजसे जलकर भस्मरूपमें परिणत हो गये। उनके उद्धारकी कामनासे मेरे अनेक पितृपितामहगण आपको पृथ्वीपर लानेके लिये तपस्या करते हुए स्वर्ग सिधार गये।

आपके बिना कपिलमुनिकी क्रोधाग्निसे दग्ध हुए लोगोंके उद्धारार्थ धर्मशास्त्रोंमें कोई प्रायश्चित्त नहीं है। कृपाकर आप वहाँ चलकर उनका उद्धार करें, यही मेरी अभिलाषा है तथा वर-याचना भी है।

भगीरथकी दीनताभरी प्रार्थना एवं वर-याचनाको सुनकर दयामयी गंगाने कहा—वत्स! मैं अवश्य चलूँगी, परंतु पृथ्वीपर मेरे वेगको कौन सम्हालेगा, जब मैं वेगपूर्वक आकाशसे चलूँगी तो पृथ्वीको छेदकर रसातलमें चली जाऊँगी।

कोऽपि धारयिता वेगं पतन्त्या मे महीतले।
अन्यथा भूतलं भित्त्वा नृप यास्ये रसातलम्॥

(श्रीमद्भा० ९।९।४)

तब माँ गंगाकी बात सुनकर महाराजने कहा—हे अम्ब! भगवान् सदाशिव आपको धारण करेंगे। मुझपर कृपा करके वहाँ जानेके लिये स्वीकृति प्रदानकर मुझे अनुगृहीत करें। मैं तपस्यासे भगवान् आशुतोषको प्रसन्न करूँगा। तब तथास्तु कहकर भगवती गंगाने भगीरथकी प्रार्थना स्वीकार कर ली।

इसके बाद महाराज भगीरथने कठिन तपस्याके द्वारा आशुतोष भगवान् सदाशिवको अनुकूल कर लिया।

तब भगवती गंगा प्रचण्डवेगसे नीचे उतरीं। भगवान् शिवने उन्हें अपने जटाजूटमें आबद्ध कर लिया। पुनः भगीरथकी प्रार्थनासे जटाके एक भागको निचोड़ दिया, जो विशाल धारामें परिणत होकर महाराज भगीरथके रथके पीछे चल पड़ी।

भगीरथो हि राजर्षिर्दिव्यं स्यन्दनमास्थितः॥
प्रायादग्रे महाराजस्तं गङ्गा पृष्ठतोऽन्वगात्।

(वा०रा० १।४३।३०-३१)

मार्गमें महाराज जह्नु यज्ञ कर रहे थे, गंगाकी धारामें अपनी यज्ञशालाको प्रवाहित होते देखकर तथा गंगाके गर्वको जानकर कुपित हो उन्होंने समस्त गंगाजलका पान कर लिया। पुनः भगीरथकी प्रार्थनासे सन्तुष्ट होकर उन्होंने अपने कानोंसे गंगाको प्रवाहित किया, इसीलिये गंगा जह्नुकी पुत्री जाह्नवी कहलायीं।

ततस्तुष्टो महातेजाः श्रोत्राभ्यामसृजत् प्रभुः।
तस्माज्जह्नुसुता गङ्गा प्रोच्यते जाह्नवीति च॥

(वा०रा० १।४३।३८)

उसके बाद लोकपावनी गंगा भगीरथके रथका अनुसरण करती हुई हरिद्वार, कनखल, कानपुर, प्रयाग, विन्ध्याचल, वाराणसी, सोनपुर तथा पटना आदिको पवित्र करती हुई महर्षि कपिलके पावन आश्रममें उपस्थित हुईं, जहाँपर महर्षि कपिलकी क्रोधाग्निसे राखके ढेर बने महाराज सगरके साठ हजार पुत्र गंगाजलके स्पर्शमात्रसे शापमुक्त हो दिव्य शरीर धारणकर दिव्य विमानोंमें बैठकर स्वर्ग सिधारे।

यज्जलस्पर्शमात्रेण ब्रह्मदण्डहता अपि।
सगरात्मजा दिवं जग्मुः केवलं देहभस्मभिः॥

(श्रीमद्भा० ९।९।१२)

इसीलिये आज भी कहीं भी मरे हुए व्यक्तिकी हड्डी एवं भस्मको गंगाजलमें प्रवाहितकर लोग उसे मुक्त मानते हैं।

महाराज भगीरथ घोर तपस्यासे भगवती गंगाको भूतलपर ले आये, इसीलिये लोग इसे भागीरथी गंगाके नामसे जानते हैं—

भगीरथस्तु तां गङ्गामानयामास कर्मभिः।
तस्माद्भागीरथी गङ्गा कथ्यते वंशवित्तमैः॥

(वायुपुराण २।२६।१६८)

जगत्पावनी, मुक्तिदायिनी, भगवती भागीरथी हिमालयकी ज्येष्ठ कन्या गंगाकी महिमा अद्भुत है; क्योंकि केवल गंगा नामके उच्चारणमात्रसे सैकड़ों योजनस्थ व्यक्ति जन्मजन्मान्तरीय पापोंसे मुक्त हो विष्णुलोक चले जाते हैं—

गङ्गा गङ्गेति यो ब्रूयाद् योजनानां शतैरपि।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति॥

गंगा मैया! हम सदा तुम्हारे ऋणी रहेंगे

(साधु श्रीनवलरामजी शास्त्री)

गङ्गेति स्मरणादेव क्षयं याति च पातकम्।
कीर्तनाददतिपापानि दर्शनाद् गुरुकल्मषम्॥
स्नानात् पानाच्च जाह्नव्यां पितॄणां तर्पणात्तथा।
महापातकवृन्दानि क्षयं यान्ति दिने दिने॥
गङ्गा गङ्गेति यो ब्रूयाद् योजनानां शतैरपि।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति॥

'गंगा'—इस नामका स्मरण करनेसे पापोंका नाश हो जाता है। 'गंगा'—नामका कीर्तन करनेसे अतिपापोंका और गंगाजीके दर्शनसे महापापोंका नाश हो जाता है। गंगाजीमें प्रतिदिन स्नान करने, गंगाजलका पान करने और पितरोंका तर्पण करनेसे महापातकोंके समूह नष्ट हो जाते हैं। 'गंगा-गंगा'—इस नामका सैकड़ों कोस दूरसे उच्चारण करनेसे मनुष्य समस्त पापोंसे मुक्त होकर विष्णुलोकको चला जाता है।

गंगाजीका जन्मस्थान गंगोत्री गोमुखसे है। गोमुखसे ये उत्तरकाशी, रुद्रप्रयाग, ऋषिकेश, हरिद्वारतक पहाड़ी क्षेत्रमें बहती हैं। यहाँपर अनेक प्रकारकी औषधियाँ कन्द-मूल तथा चीड़ आदिके अनेक बड़े-बड़े वृक्ष होते हैं। वनौषधियोंसे रोगमुक्ति, वृक्षोंसे पर्यावरणशुद्धि तथा बहुमूल्य काष्ठकी प्राप्ति होती है।

हरिद्वारसे आगे मैदानी भागके रुड़की, मेरठ, सोरों, कानपुर, प्रयागराज आदि नगरोंसे होते हुए बंगालमें कलकत्तासे आगे जाकर गंगा सागरमें मिलती हैं, जिसे गंगासागर कहते हैं। गंगाके मैदानी भागमें मानवीय जीवनका मुख्य आधार अन्न और जल गंगासे प्राप्त होता है। अन्नमें गेहूँ, चावल, जौ, चना, सरसों, कपास, फलोंमें आम, केला, सन्तरा, मौसमी, तरबूज, खरबूजा, अंगूर, गन्ना आदि तथा शाकोंमें लौकी, तोरई, भिण्डी, टिण्डा, परवल, आलू, टमाटर, गाजर, मूली, कटहल, कद्दू (पेठा) आदि सब्जियाँ गंगाके कारण हमें प्राप्त

होती हैं। गंगाजल मानवको पीनेके लिये मिलता है। बड़े-बड़े वृक्षोंसे पर्यावरणशुद्धि, ऑक्सीजन (प्राणवायु) मानवको प्राप्त होती है। जिससे मानव जीवन जीते हैं। गंगाके सहारे मानव, पशु, पक्षी, कीट, पतंग (जलचर, थलचर, नभचर) सभी प्राणी अपना जीवन जीते हैं।

मानवका तो आध्यात्मिक एवं भौतिक जीवन गंगाजीपर ही आधारित है। यदि आज गंगाजीका लोप हो जाय तो मानवको पीनेके जल, अन्न, फल, शाक सब्जियों, वनौषधियों और प्राणवायु ऑक्सीजनका अभाव हो जायगा। इस सहज पावन गंगाको हम लोग अपने स्वार्थमें अन्धे होकर भविष्यके जीवनका विचार न करके, चमड़ेके जूते बनानेवाली फैक्ट्रियोंका गन्दा पानी उसमें छोड़कर, उसे अपवित्र करके उसके मूल सहज पावन स्वरूपको नष्ट कर रहे हैं।

आज तथाकथित नगरीय सभ्यताके नामपर कानपुर, पटना, बनारस, कलकत्ता आदि महानगरोंके गटरोंका गन्दा पानी गंगाजीमें छोड़कर उनका मूल स्वरूप नष्ट कर दिया गया है। इस दुष्कृत्यके लिये हमें गंगाजी, प्रकृति, परमात्मा तथा भविष्यमें आनेवाली मानव-पीढ़ी क्षमा नहीं करेगी; क्योंकि हमने गंगाको नष्ट करके मानव-जीवनके आधारको खत्म कर दिया है।

अतः समय रहते हम सभीको तथा सरकारको चाहिये कि गंगाजीमें फैक्ट्रियों एवं गटरोंका दूषित जल न जाने दें, जिससे वह पावन बनी रहे।

हमें गंगाजीका मन्त्रोंसे, दूध, दही, जल, फल, दीप, पुष्प, गन्ध, सोना, चाँदी, रत्न तथा मुद्रासे पूजन करना चाहिये, परंतु गंगाजीका वास्तविक पूजन तभी होगा, जब हम गंगाजीमें फैक्ट्रियों एवं शहरोंका गन्दा (दूषित) जल जाने नहीं दें।

गंगाजीने हमें जीनेका आधार प्राणवायु, अन्न, जल, फल, शाक, सब्जी, औषधियाँ आदि दीं, साथ ही हमारे एवं पूर्वजोंके अशुभ कर्मोंके पापोंको धोकर निर्मल किया, परंतु हमने उनके सहज पावन स्वरूपको नष्ट कर दिया। गंगाजीने हमको जीवन दिया, परंतु गंगाजीको हमने क्या दिया? अपने अन्तःकरणमें सदा विचार करें। गंगा माँ! हम सदा तुम्हारे ऋणी रहेंगे। जय गंगामैयाकी।

'गंगागीत'

(प्रो० डॉ० श्रीजयनारायणजी मिश्र)

हे भागीरथि, शुभदे, गङ्गे, हे तापनिवारिणि विष्णुनुते।
हे सङ्कटहारिणि शम्भुनुते, हे वाञ्छितदायिनि सरिद्वरे॥ १॥
हे ब्रह्माण्डविलासिनि ध्यानरते, हे विबुधप्रिये, हे भक्तहिये।
शुभकर्मसनाथिनि यज्ञप्रदे, हे विष्णुप्रिये, हे ईशप्रिये॥ २॥
अघओघविनाशिनि बुद्धिप्रदे, सनकादिप्रपूजित पापहरे।
नित ध्यानरते, विमले, सुभगे, तिल-तिल उपकारिणि ब्रह्मरते॥ ३॥
देवर्षिपितृ नर-नागकृते, पशु-पक्षि सिद्धजन साधुकृते।
घट-घाटविहारिणि, पुण्यजले हे गिरिवरगिरजे, जह्नुसुते॥ ४॥
कल-कल-निनादिनि कल्कहरे, जगतारिणि मातः हे शिवदे।
बहुनगरविलासिनि लोकहिते, जन-जनहितकारिणि, हे क्षणदे॥ ५॥
हिम-औषधिवाहिनि दिव्यजले, नितसागरगामिनि कामप्रिये।
सगरान्वयतारिणि जगदम्बे, हे शक्तिप्रदे, हे भक्तिप्रदे॥ ६॥
मनसा-वचसापि च संस्मरिते, तत्क्षणउद्धारिणि हे दयिते।
कलिकोटिकुठारहरे करुणे, जनजीवनदायिनि भक्तप्रिये॥ ७॥
हे गिरिवरधारिणि हे ललिते, निजभक्तजनार्चित बहुफलदे।
जय, जयनारायणमिश्रनुते, शुभभक्ति प्रदान करो धवले॥ ८॥

ज्ञान-गंगा—गंगामाता

(डॉ० श्रीवासुदेवशरणजी अग्रवाल)

पतितपावनी गंगानदी समग्र उच्च आधिभौतिक सत्योंका प्रतीक है। वैदिक कालमें सरस्वती एक महानदीके रूपमें आराध्य थी, जिसे यज्ञ (यज्ञं दधे सरस्वती) एवं ज्ञान-माता माना गया है तथा जो जीवन एवं मनकी समस्त अशान्त शक्तियोंको शमन करनेवाली है। ये सभी माहात्म्य गंगाजीके भी हैं।

'गंगा' शब्द की व्युत्पत्ति 'गम्' धातुसे हुई है। गम् अर्थात् विचरण करना। अतः गंगा संचारका प्रतीक है, जिससे सर्वव्यापी पुरुषकी अन्तरात्मासे जागतिक सृजन सम्भव होता है। एक शब्दमें गंगा प्राणिक स्पन्दन है अर्थात् वह जीवन-प्रवाह है, जो अविरल गतिसे मन, जीव एवं जड़ पदार्थके तीनों धरातलोंपर बहता रहता है।

पौराणिक कथाओंके अनुसार गंगाकी उत्पत्ति त्रिदेवों—ब्रह्मा, विष्णु एवं महेशद्वारा हुई है। ब्रह्माके कमण्डलु तथा भगवान् विष्णुके चरणामृतसे गंगाका अवतरण हुआ है तथा अन्तमें भगीरथकी तपस्याके फलस्वरूप गंगाका अवतरण जब धरतीपर होने लगा तो वे शिवजीकी जटामें विलीन हो गयीं। अन्ततोगत्वा वे धरतीपर लायी गयीं और उनकी धारा सागरकी ओर बह चली।

लेकिन गंगाका वास्तविक महत्त्व ब्रह्मद्रवी है। हिन्दू प्रतीक-प्रयोगमें मनको अनन्त सागरकी संज्ञा दी गयी है या जिसे 'ब्रह्मसर' कहा गया है और वह 'मानसरोवर' के नामसे सर्वविदित है। जल तो विचारकी भाँति है, जो व्यक्तिगत पात्रोंमें विद्यमान है। स्रष्टाका सर्वव्यापी मन सरोवरसदृश है, जो सरस्वती है, जिसका स्रोत विद्याकी साक्षात् अधिष्ठात्रीका रूप कहा गया है। सरस्वती सावित्री या गायत्रीकी भाँति सवितृविद्यापर आधारित है। यही सवितृविद्या सम्पूर्ण ब्रह्माण्डका त्रिवैदिक आधार है। सरस्वती एवं गंगा भी मन, जीवन एवं जड़-पदार्थके तीनों धरातलपर सृष्टिके विविध प्रवाहकी प्रतीक हैं। अतः गंगाको त्रिपथगा कहा गया है ; क्योंकि इनकी तीन धाराएँ तीनों लोकोंमें प्रवाहित होती हैं। 'मनोऽर्न्नाह' एक जीवन्त प्रतीक है तथा ऐसा विश्वास है कि इसका जल अमृत—सोम है, जो सर्वदा नूतन एवं पावन है। गंगाके पवित्र जलका यह गुण सुविख्यात है।

शिव गंगाधर हैं। गंगा-अवतरण एक ऐसा संयोग है जो कि प्रतिवर्ष ग्रीष्मके पश्चात् वर्षाके रूपमें घटित होता है। अतः ज्येष्ठ मासमें शुक्ल पक्षकी दसवीं तिथिको गंगा-अवतरणकी कथामें वर्षाका आगमन इसका प्रतीक माना गया है, जो स्वर्गलोक एवं भूलोकका सम्पर्क सूत्र है। पौराणिक कथामें भगीरथका उल्लेख आया है कि उनकी कठोर तपस्यासे प्रभावित होकर स्वर्गकी देवीको गंगाके रूपमें भूलोकपर अवतरित किया गया। सूर्यको भगीरथका प्रतीक माना गया है। सूर्यकी महाशक्तिद्वारा सागरके जलका वाष्पीकरण होता है और वही जल सघन बादलोंका समूह बनकर आकाशमार्गसे जल-वर्षाके रूपमें भूतलपर पहुँच जाता है। अतः सूर्य सर्वव्यापी देव तथा ताप-नियन्त्रक है।

हिमालयमें गंगाकी चार धाराएँ हैं, जिनके नाम अलकनन्दा, भागीरथी, मन्दाकिनी और जाह्नवी हैं। लोकमें ये चारों पर्याय समझे जाते हैं, किंतु हिमालयके प्रस्रवण-क्षेत्रमें ये चारों धाराएँ अलग-अलग हैं। देव-प्रयागमें इन सबके मिलकर एक हो जानेके बाद गंगा नाम पड़ता है। इनमें मुख्य नदी अलकनन्दा है, जो बदरीनाथके पास अलकापुरीकी बाँकसे निकलती है। उसी अलकनन्दामें देवप्रयागके संगमपर भागीरथी मिलती है, जो गंगोत्तरीकी ओरसे आयी है और रुद्रप्रयागके संगमपर केदारनाथसे आयी हुई मन्दाकिनी मिली है। गंगाकी सबसे ऊपरी धारा जाह्नवी है, जो गंगोत्तरीसे कुछ ही मील नीचे भागीरथीमें मिलती है, पर वह हिमालयके उस पार जंस्कर पर्वत-शृंखलासे निकली है, जो सतलज और गंगाके बीचका जलविभाजक है। जाह्नवीका उद्गम टिहरी रियासतका सबसे ऊपरी छोर है। अक्षांशके हिसाबसे जाह्नवी सबसे ऊपरी धारा है, जिसका जल गंगामें मिला है। [हिन्दू विश्व]

भारतीय संस्कृतिकी स्त्रोतस्विनी गंगा

(प्रो० श्रीनागेन्द्रजी पाण्डेय)

'गंगा' शब्द स्त्रीवाची है। 'गम्' धातुसे गन् प्रत्यय तथा स्त्रीत्वकी विवक्षामें 'टाप्' करनेसे गत्यर्थक गंगा शब्द उत्पन्न होता है। इसका विवेचन करते हुए कहा गया है—'गमयति प्रापयति ज्ञापयति वा भगवत् पदं या शक्तिः यद्वा गम्यते प्राप्यते ज्ञाप्यते मोक्षार्थिभिर्या।'

अर्थात् गंगा वह है, जो भगवत्-पदको प्राप्त करा देती है अथवा जो मोक्षार्थी साधकको मोक्षपद प्राप्त करा देती है। अमरकोषमें इसके आठ पर्यायवाची शब्द हैं। पद्मपुराण, हेमचन्द्र, त्रिकाण्डशेष और शब्दरत्नावलीमें गंगाके ४८ नाम मिलते हैं।

महाभागवतपुराणमें श्रीगंगाजीके एक सौ आठ नाम आये हैं और इस अष्टोत्तरशतनामके पाठकी महिमामें आया है कि जो इन नामोंका पाठ करता है, वह अन्तमें परम पदको प्राप्त होता है—'प्रयाति परमं पदम्।' स्कन्दपुराणके काशीखण्डमें देवी गंगाके एक हजार नाम आये हैं, जिनके पाठकी बहुत महिमा बतायी गयी है। इस सहस्त्रनामस्तोत्रका पाठ सब प्रकारकी सिद्धियोंको देनेवाला, जन्म-जन्मान्तरके पापोंका विनाशक तथा शिव एवं भगवान् विष्णुकी भक्ति प्रदान करनेवाला है, इसका पाठ वेदके पारायणके समान अमोघ फलदायी है। तात्पर्य यह है कि गंगाजीके नाम-कीर्तनका महान् फल है। जैसे गंगाजीका नाम-कीर्तन मुक्तिदायी है, वैसे ही गंगाजल परम पवित्र एवं परम पदको प्रदान करनेमें सक्षम हैं। साथ ही यह मानव-शरीरके लिये परम गुणकारी एवं अमृततुल्य लाभदायक है। गंगाजल शीतल, स्वच्छ, सुस्वादुके साथ ही रुचिवर्धक, पथ्य, उद्दीपक, तृष्णा और मोहका शामक एवं बुद्धिवर्धक माना गया है।

हारीत संहिताके प्रथम स्थान, अध्याय ७ में वर्णित है कि यह नदी नौ सौ नदियोंको अपनेमें समेटे हुए पूर्व समुद्रमें जाकर मिलती है। सुमेरु पर्वतसे विनिर्गत गंगा हिमालयसे निकलकर राजा सगरके साठ हजार पुत्रोंके उद्धारहेतु राजा भगीरथकी तपस्यासे पृथ्वीपर अवतरित हुई थीं। इससे यह सिद्ध है कि गंगा भौतिक तापनाशके साथ ही आध्यात्मिक उद्धार करनेवाली भी है। भारतीय जनमानसमें भगवती गंगाका देवतास्वरूप विद्यमान है। गंगाका स्मरण, दर्शन, पूजन मानव-जीवनके लिये स्पृहणीय है। प्रत्येक भारतीय अपने जीवनमें गंगाजलका एक बूँद भी प्राप्तकर स्वयंको धन्य मानता है।

गंगा भारतीय संस्कृतिकी प्रत्यक्ष मूर्ति हैं। ये हमारी पूर्ण धार्मिक व्यवस्थाका अनिवार्य अंग हैं। ज्ञानकी अधिष्ठात्री, कर्मकी दिग्दर्शिका, भक्ति एवं श्रद्धाका आधार हैं। गंगा भारतवर्षकी सांस्कृतिक तपस्याका प्रत्यक्ष फल हैं। इससे दैहिक और पारलौकिक दोनों सम्पत्तियाँ प्राप्त हो जाती हैं। आज भी भारतवर्षकी करोड़ों जनता गंगाजलमें गम्भीर आस्था रखती हुई विभिन्न पर्वोंपर दर्शन, स्पर्श, मज्जन एवं पानके द्वारा अपने जीवनको धन्य समझती है।

भगवत्पाद जगद्गुरु शंकराचार्यने अपनी लघु रचना 'भज गोविन्दम्' में भगवती गंगाका माहात्म्य बतलाते हुए लिखा है—

भगवद्गीता किञ्चिदधीता गङ्गाजललवकणिका पीता।
सकृदपि यस्य मुरारिसमर्चा तस्य यमः किं कुरुते चर्चाम्॥

भगवान् शंकराचार्यका यहाँपर आशय यह है कि गंगाजलकी एक बूँद भी यदि पी ली जाय तो यमयातनासे मुक्ति मिल जाती है। हिन्दू समाजमें कोई व्यक्ति मरणासन्न हो जाता है तब उसको श्वास, कफावरोध तथा वेदनासूचक घर्घराहट उत्पन्न हो जाती है, यदि उस समय गंगाजल तथा तुलसीपत्र उसके मुखमें डाल दिया जाता है तब चमत्कारी लाभ देखनेको मिलता है। प्राण निकलते समय जो यमयातना मिलती है, गंगाजलके प्रभावसे सहज होकर स्वाभाविक रूपसे वह कष्टमुक्त होकर महाप्रयाण करता है।

पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश—इन

पंचमहाभूतोंसे सृष्टिकी उत्पत्ति हुई। इनमें पृथ्वी और जल ही मुख्य तत्त्व है। इस तन्मात्राका परिणमन ही जल है। जल महाभूतमें सूक्ष्मता, मृदुता, स्निग्धता, गुरुता तथा शीतलता और पवित्रता निरन्तर विद्यमान रहती है। भारतमें जलको जीवनका सर्वस्व आधार तथा सर्वकल्याणकारी होनेके कारण गंगाजलको ही सर्वश्रेष्ठ माना गया है। वैदिककालसे ही ऋषियोंने जलतत्त्वको सभी कामनाओंका पूरक तथा ब्रह्मके सदृश स्वीकार किया है। जैसा कि छान्दोग्योपनिषद्‌में कहा गया है—

स योऽपो ब्रह्मेत्युपास्त आप्नोति सर्वान् कामान्।

(छान्दोग्योपनिषद् ६।१०।२)

जलतत्त्वमें सत्त्व और रजकी वृद्धि होती है तथा तमस् तत्त्वकी न्यूनता रहती है। फलस्वरूप जल सतत गतिशील होता हुआ सूक्ष्म रूपसे आकाशमें वाष्पित होकर संचरण करता है तथा शरीरके भीतर नाड़ी-तन्तुओंके द्वारा प्राणशक्तिका कार्य करता है।

महाभारतमें गंगाको वेद-वेदान्त विद्याके साथ ही ज्ञान, क्रिया एवं भक्तिका सार तत्त्व कहा गया है—

ज्ञानयोगक्रियायोगसारभूता महर्द्धिदा।
वेदवेदान्तविद्यानां सारभूता हि जाह्नवी॥

भविष्यपुराणमें कहा गया है कि गंगास्नानके लिये सभी काल एवं सभी स्थान पवित्र माने गये हैं। महाभारत वनपर्वमें स्पष्ट रूपसे बताया गया है कि गंगामें मिलनेवाले विविध स्थानोंकी धूलि तथा अनेक नदी-नालोंके प्रदूषणका संयोग होता है, परंतु ये सभी गंगामें मिलकर पवित्र हो जाते हैं, उनसे कभी गंगा प्रदूषित नहीं होती।

गंगा हमारी संस्कृतिकी आत्मा है। गंगाके पावन जलमें हम अपना सर्वस्व समर्पितकर शान्तिका अनुभव करते हैं। महाकवि कालिदासके कुमारसम्भव (दशम सर्ग)-में वर्णित गंगाके सन्दर्भमें इस प्रकार बताया गया है—

स्वर्गारोहणनिःश्रेणिमोक्षमार्गाधिदेवता।
उदारदुरितोद्‌गारहारिणी दुर्गतारिणी॥
महेश्वरजटाजूटवासिनी पापनाशिनी।
सगरान्वयनिर्वाणकारिणी धर्मधारिणी॥
विष्णुपादोदकोद्भूता ब्रह्मलोकादुपागता।
त्रिभिः स्रोतोभिरश्रान्तं पुनाना भुवनत्रयम्॥

(१०।२९—३१)

अर्थात् गंगा सब दुःख मिटा डालती हैं। सीढ़ी बनकर भक्तोंको स्वर्ग पहुँचा देती हैं, मोक्ष दे डालती हैं, बड़े-बड़े पाप हर लेती हैं, कठिनाइयाँ दूर कर देती हैं, शंकरके जटा-जूटमें बसी रहती हैं, सगरके पुत्रोंको भी तारनेवाली हैं, धर्मकी रक्षा करनेवाली हैं, विष्णुके चरणसे जलके रूपमें निकलकर ब्रह्मलोकसे आयी हैं और अपनी तीव्र धाराओंसे तीनों लोकोंको सदा पवित्र करती रहती हैं।

श्रीगंगामहिमा

(पंचरसाचार्य श्रद्धेय स्वामी श्रीरामहर्षणदासजी महाराज)

गंगा गुण गावहुँ गति दायक।
महिमा महा मुनिन मन मानी, तट वसि सेइ राम गुण गायक॥
जेहि सुरसरि शिव शिरहि सदा रख, हरि पद प्रीति प्रगटि मन भायक।
गंगा, गंगा कहि जो न्हावत, पाइ विष्णु पद अभय अघायक॥
ब्रह्म स्वयं द्रव रूप बहत नित, जग तारण सुन्दर सुखदायक।
दरस, परस, मज्जत अरु पीवत, दुरत पाप सद्‌गुण सरसायक॥
गंग धार जो निज तन त्यागत, मुक्ति पाइ पुनि बंध न आयक।
हाड़हु परे स्वर्ग सुख देवति, चहत राम रति 'हर्षण' पायक॥

[प्रेषक—पं० रामायणप्रसादजी गौतम]

गंगास्नानसे पापोंका नाश तथा कल्याण

(श्रीभीकमचन्दजी प्रजापति)

महिमा—गंगाजीकी महिमा अपार है, असीम है, अनन्त है, अवर्णनीय है। गंगाजी श्रीभगवान्‌के चरणोंसे निकली हैं। भगवान्‌के चरणकमलोंके सम्पर्कसे गंगाजीका जल परम पवित्र हो गया, उसमें दिव्य शक्तियाँ आ गयीं।

शक्तियाँ—श्रीगंगाजीकी शक्तियोंका संक्षिप्त विवेचन इस प्रकार है—

१-रेणुका (बालू-मिट्टी)—गंगाजीकी बालूमें ऐसी दिव्य शक्ति है कि अन्तिम समयमें उसके स्पर्शमात्रसे समस्त पापोंका नाश हो जाता है।

२-गंगाजल—गंगाजलके नित्य सेवनसे हृदय निर्मल तथा पवित्र हो जाता है। मोह, ममता, कामना, राग, द्वेष, दीनता, अभिमान आदि हृदयमें रहनेवाले दोष स्वतः मिट जाते हैं। दाह-संस्कारके बाद शरीर राख (भस्म) बन जाता है। उस राखका भी गंगाजलके साथ स्पर्श हो जाय तो उस मनुष्यको स्वर्ग मिल जाता है।

३-बन्धन मिट जाना—गंगाजलके सेवनसे मानव जन्म-मरणके बन्धनसे मुक्त हो जाता है।

४-पापोंका नाश—गंगाजीमें स्नान करनेमात्रसे भूतकालके समस्त पाप तत्काल जड़मूलसे भस्म हो जाते हैं।

५-कल्याण—कल्याणका अर्थ है—दुःखोंका सदैवके लिये सर्वांशमें मिट जाना, परमशान्ति मिल जाना, जीवन-कालमें ही जीवन्मुक्तिका अनुभव हो जाना, भगवान्‌के दर्शन हो जाना, भगवान्‌का परम प्रेमी भक्त बन जाना। जो मानव श्रद्धा, विश्वास और प्रेमसे नियमपूर्वक गंगाजलका सेवन करते हैं, उनका कल्याण हो जाता है।

श्रीमद्भागवतमें महिमा—श्रीमद्भागवतमें गंगाजीकी महिमा इस प्रकार आयी है—

यज्जलस्पर्शमात्रेण ब्रह्मदण्डहता अपि।
सगरात्मजा दिवं जग्मुः केवलं देहभस्मभिः॥
भस्मीभूताङ्गसङ्गेन स्वर्याताः सगरात्मजाः।
किं पुनः श्रद्धया देवीं ये सेवन्ते धृतव्रताः॥
न ह्येतत् परमाश्चर्यं स्वर्धुन्या यदिहोदितम्।
अनन्तचरणाम्भोजप्रसूताया भवच्छिदः॥
संनिवेश्य मनो यस्मिञ्छ्रद्धया मुनयोऽमलाः।
त्रैगुण्यं दुस्त्यजं हित्वा सद्यो यातास्तदात्मताम्॥

(९।९।१२—१५)

इसका अर्थ इस प्रकार है—यद्यपि सगरके पुत्र ब्राह्मणके तिरस्कारके कारण भस्म हो गये थे, इसलिये उनके उद्धारका कोई उपाय नहीं था, फिर भी केवल शरीरकी राखके साथ गंगाजलका स्पर्श हो जानेसे ही वे स्वर्गमें चले गये। परीक्षित्! जब गंगाजलसे शरीरकी राखका स्पर्श हो जानेसे सगरके पुत्रोंको स्वर्गकी प्राप्ति हो गयी, तब जो लोग श्रद्धाके साथ नियम लेकर श्रीगंगाजीका सेवन करते हैं, उनके सम्बन्धमें तो कहना ही क्या है! मैंने गंगाजीकी महिमाके सम्बन्धमें जो कुछ कहा है, उसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं है; क्योंकि गंगाजी भगवान्‌के उन चरणकमलोंसे निकली हैं, जिनका श्रद्धाके साथ चिन्तन करके बड़े-बड़े मुनि निर्मल हो जाते हैं और तीनों गुणोंके कठिन बन्धनको काटकर तुरन्त भगवत्स्वरूप बन जाते हैं। फिर गंगाजी संसारका बन्धन काट दें, इसमें कौन बड़ी बात है!

गंगालहरीमें महिमा—गंगालहरीमें आया है—

कृतक्षुद्राघौघानथ झटिति सन्तप्तमनसः
समुद्धर्तुं सन्ति त्रिभुवनतले तीर्थनिवहाः।
अपि प्रायश्चित्तप्रसरणपथातीतचरितान्
नरानूरीकर्तुं त्वमिव जननि त्वं विजयसे॥

(१७)

इसका अर्थ इस प्रकार है—हे गंगामैया! छोटे-छोटे पापसमूहका आचरण करके तुरन्त ही पश्चात्तापसे पीड़ित प्राणियोंका शीघ्रतासे उद्धार करनेवाले तो त्रिभुवनमें बहुत तीर्थ हैं, परंतु जिनका कोई प्रायश्चित्त भी नहीं हो सकता, ऐसे-ऐसे पाप करनेवाले पतितोंको अपनानेवाली तो केवल तुम्हीं सर्वोपरि समर्थ हो, दूसरा कोई नहीं।

सन्देह—श्रीगंगाजीकी अपार महिमाको सुनकर कभी-कभी मनमें यह शंका होती है कि हमने अनेक बार गंगाजीमें स्नान कर लिया, वर्षोंसे गंगाजलका सेवन भी कर रहे हैं, फिर भी हमारे दुःख, चिन्ता, मानसिक तनाव, भय आदि मनके रोग क्यों नहीं मिटे? हमें अपने जीवनमें शान्ति क्यों नहीं मिली? हमारा कल्याण क्यों नहीं हुआ? इन प्रश्नोंका सीधा-सरल उत्तर यह है कि जो भगवान्‌की वाणीमें अविचल, अखण्ड विश्वास करता है, उसको ही उसका फल मिलता है। जो विश्वास नहीं करता है, उसको उसका फल नहीं मिलता है। शास्त्रवाणी, भगवान्‌की वाणी है, उनके महान् भक्तोंकी वाणी है। वह वाणी अक्षरशः, पूर्णतया सत्य है। आप उसमें विश्वास करेंगे तो आपको उसका फल अवश्य मिलेगा।

भूल—आज बहुत-से साधक भाई-बहन शास्त्र-वाणीको सुनते हैं, पढ़ते हैं, लेकिन उसमें विश्वास नहीं करते हैं, कोई विरला ही उसमें विश्वास करता है। विश्वास न करना ही सबसे बड़ी भूल है। भगवान्‌की वाणीमें विश्वास करना ही वास्तवमें भगवान्‌में विश्वास करना है। श्रीरामचरितमानसमें भगवान् श्रीरामकी वाणी है—

मोर दास कहाइ नर आसा। करइ तौ कहहु कहा बिस्वासा॥
(७।४६।३)

इसका अर्थ है मेरा दास कहलाकर यदि कोई मनुष्योंकी आशा करता है तो तुम्हीं कहो, उसका क्या विश्वास है? (अर्थात् उसकी मुझपर आस्था बहुत निर्बल है।)

विश्वासका अर्थ—बिना जाने, बिना देखे, बिना मिले किसी बात या घटनाको केवल कानोंसे सुनकर एकदम सत्य मान लेना और उसका प्रभाव अपने जीवनमें हो जाना—इसका नाम है—विश्वास। उदाहरण लीजिये—विदेशमें रहनेवाले आपके भाईने आपको फोनपर सूचना दी—भगवत्कृपासे मेरे पुत्र हुआ है। आपने सुना, तत्काल सत्य माना, आपको बहुत प्रसन्नता हुई। दो महीने बाद उसने सूचना दी—वह पुत्र भगवान्‌के घर चला गया, आपने सुना, माना, बड़ा भारी दुःख हुआ। आपने भाईके पुत्रको देखा नहीं, उससे मिले भी नहीं, बुद्धिसे आप यह जानते भी नहीं कि पुत्र हुआ या नहीं हुआ। आपने केवल सुना। विश्वासमें देखने, सुनने, जाननेकी जरूरत नहीं है।

इसी प्रकार शास्त्रोंकी वाणीको सुनकर एकदम सत्य मान लेना और उसका प्रभाव अपने जीवनमें हो जाना, शास्त्रवाणी या भगवान्‌में विश्वास कहलाता है।

सटीक उदाहरण—निम्नलिखित दो उदाहरणोंसे विश्वासका आशय एकदम स्पष्ट हो जायगा।

(१) भगवान् शंकर और पार्वतीजी हरिद्वारमें थे। पार्वतीजीने पूछा—प्रभु! हजारों लोग गंगामें स्नान कर रहे हैं, फिर भी इनके पापोंका नाश क्यों नहीं हो रहा है? उन्होंने उत्तर दिया—इन्होंने गंगामें स्नान किया ही नहीं, पानीमें स्नान किया है। मैं तुम्हें बताऊँगा कि वास्तवमें गंगामें स्नान किसने किया। भगवान् शंकरने रास्तेके किनारे एक गड्ढा बनाया, बरसातका गड्ढा पानीसे भर गया, उसमें खड़े हो गये, उनकी गर्दन पानीसे बाहर थी। पार्वतीजीको किनारेपर बैठा दिया और कहा—गंगास्नान करके इधरसे निकलनेवाले भाई-बहनोंसे निवेदन करना—मेरे पतिको बाहर निकाल दीजिये। साथमें यह शर्त सुना देना कि यदि आप पूर्णतया निष्पाप हैं, कभी कोई पाप नहीं किया हो, तब तो मेरे पतिको बाहर निकालना, अन्यथा स्पर्श करते ही भस्म हो जाओगे। चार दिन बीत गये, हजारों लोग निकले, किसीकी हिम्मत नहीं हुई। सब एक ही बात कहते—मैंने इस जन्ममें कोई पाप नहीं किया, लेकिन भूतकालका क्या पता? अगले दिन एक सज्जन आये—बोले, मैं आपके पतिको निकालूँगा। पार्वतीजीने पूछा—क्या आप पूर्णतया निष्पाप हैं। उनका उत्तर था—मैया! मैंने बहुत पाप किये हैं, लेकिन अभी-अभी मैंने गंगाजीमें स्नान कर लिया, मेरे समस्त पापोंका नाश हो गया। मैं निष्पाप हूँ। उसने शंकरभगवान्‌को स्पर्श किया, वे स्वतः बाहर आ गये और कहा—इसने गंगाजीमें स्नान किया है,

इसको विश्वास है कि गंगाजीमें स्नान करनेसे पापोंका नाश हो जाता है।

(२) मन्दिरमें प्रवचन हो रहा था। पण्डितजीने कहा—भगवान्‌के नाममें इतनी शक्ति है कि पानी भी रास्ता दे देता है। सड़कपर चलते हुए चार बहनोंने इस बातको सुना, विचार करने लगीं। केवल एक बहनने इसको माना। चारों नदीके किनारे गयीं। भगवान्‌का नाम लिया। जिसने विश्वास किया, उसको पानीने रास्ता दे दिया। बादमें शेष तीन बहनोंने भी भगवान्‌का खूब नाम लिया, लेकिन नदी वैसी ही बहती रही। पानीने किसीको भी रास्ता नहीं दिया।

विश्वास कैसे हो—भगवान्‌ने आपको विश्वास करनेकी शक्ति दी है। आप विश्वास कर सकते हैं। फिर भी यदि आप विश्वास नहीं कर पाते हैं तो आप भगवान्‌से उनका विश्वास माँगें। माँगनेसे वे आपको विश्वास दे देंगे। कैसे माँगें? एक-दो घंटे अकेले बैठें—अपनी वाणीसे बोलें—हे भगवान्! आप अपनी कृपासे मुझे अपना अखण्ड विश्वास दीजिये। घर, परिवार, नौकरी, व्यवसायका कार्य करते समय भी विश्वास माँगें। यदि आप चाहते हैं कि भगवान् आपको बहुत शीघ्र विश्वास दे दें तो आप भगवान्‌से केवल उनका विश्वास ही माँगें, भीतरमें विश्वास ही चाहें, संसारकी कोई चीज न तो कभी माँगें, न भीतरमें उसकी इच्छा रखें। अपनी समस्त इच्छाओंको भगवान्‌की इच्छामें विलीन कर दें। भगवान्‌के नाते सबकी निःस्वार्थ भावसे सेवा कर दें। बदलेमें किसीसे किसी भी प्रकारकी कामना न रखें। कामनाएँ मिटते ही विश्वासकी माँग सजीव तथा जाग्रत् हो जायगी। प्रभु अपनी कृपासे आपको अपना पक्का विश्वास दे देंगे। आपको गंगाजीके समस्त लाभ मिल जायँगे।

संकल्पसिद्धिदा गङ्गा मता कल्पलतासमा

(आचार्य श्रीवेदप्रकाशजी मिश्र, वरिष्ठ शोधछात्र)

पतितपावनी गंगाको विविध नामोंसे जाना जाता है, जिनमें गंगा, भागीरथी, जाह्नवी, देवनदी, त्रिपथगा, विष्णुपदी आदि नाम प्रमुख हैं। इस पुण्यतमा सरिताकी महिमाका वर्णन रामायण, महाभारत, पुराणादि तथा विभिन्न शास्त्रोंमें किया गया है। 'गंगा' शब्दका शाब्दिक अर्थ होता है—गमनशील। 'गंगा' पदकी निष्पत्ति संस्कृत व्याकरणशास्त्रके अनुसार गम् धातुसे उणादिसूत्र 'गन्गम्यद्योः' (उणादिसूत्रसंख्या १२०)-के द्वारा गन् प्रत्यय, तदनन्तर स्त्रीत्वकी विवक्षा करके टाप् प्रत्ययका विधान करके की गयी है। जिसका व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ होता है 'गच्छतीति गङ्गा' अर्थात् जो गमनशील हो, वह गंगा है। अमरकोशकारके अनुसार गङ्गाके आठ नाम हैं—

गङ्गा विष्णुपदी जह्नुतनया सुरनिम्नगा।
भागीरथी त्रिपथगा त्रिस्रोता भीष्मसूरपि॥

(अमरकोश प्रथमकाण्ड वारिवर्ग ३१)

इनके प्रचलित इन विविध नामोंके सम्बोधनकी भी अलग-अलग कथाएँ हैं। गंगाका प्रादुर्भाव विष्णुके चरणकमलोंसे होनेके कारण इन्हें विष्णुपदी कहा जाता है। जह्नु ऋषिकी कन्या होनेके कारण इन्हें जाह्नवी भी कहा जाता है—

तस्माद् गच्छेरनुकनखलं शैलराजावतीर्णां
जह्नोः कन्यां सगरतनयस्वर्गसोपानपंक्तिम्।

(मेघ० पूर्व० ५४)

देवलोकसे पृथ्वीपर अवतरित होकर निम्नगति हो जानेसे ही इन्हें सुरनिम्नगा कहते हैं। राजा भगीरथकी तपस्याके फलस्वरूप उनकी इष्टसिद्धिहेतु धरतीपर अवतरित होनेसे इन्हें भागीरथी भी कहते हैं—

रसातलमुपागच्छत् सिद्ध्यर्थं तस्य कर्मणः।

(वा० रामायण १।४३।४०)

देवलोक, मृत्युलोक और नागलोक—तीनों लोकोंमें

गमनकर तीनोंको तारनेके कारण इन्हें त्रिपथगा भी कहा जाता है—

क्षितौ तारयते मर्त्यान्नागान्तारयतेऽप्यथ।
दिवि तारयते देवांस्तेन त्रिपथगा स्मृता॥

गंगा उद्गम-स्थलसे आगे चलकर मन्दाकिनी, अलकनन्दा और गंगा तीन धाराओंमें विभक्त होनेसे इन्हें त्रिस्रोता भी कहते हैं तथा भीष्मकी माता होनेके कारण इन्हें भीष्मसू: की संज्ञासे अभिहित किया गया है। इन नामोंके अतिरिक्त भी आचारप्रकाश नामक ग्रन्थमें गंगाजीके द्वादश नामोंकी चर्चा की गयी है, जिनका किसी भी स्थानमें स्नानके समय नित्यप्रति स्मरण करनेसे उस जलमें गंगाजीका वास हो जाता है। जैसा कि आचारप्रकाश ग्रन्थमें कहा भी गया है—

नन्दिनी नलिनी सीता मालती च महापगा।
विष्णुपादाब्जसम्भूता गङ्गा त्रिपथगामिनी॥
भागीरथी भोगवती जाह्नवी त्रिदशेश्वरी।
द्वादशैतानि नामानि यत्र यत्र जलाशये॥
स्नानोद्यतः स्मरेन्नित्यं तत्र तत्र वसाम्यहम्॥

गंगा नदीका वर्णन आदिग्रन्थ ऋग्वेद* तथा आदिकाव्य रामायण और भागवत आदि विभिन्न पुराणोंके साथ-साथ वेदांगों एवं संस्कृत साहित्यके अन्यान्य ग्रन्थोंमें उपलब्ध होता है। शिवपुराण, भागवतपुराण आदि ग्रन्थोंमें गंगाकी महिमाका विशेष गुणगान किया गया है। गंगा ब्रह्माके कमण्डलुका जल, विष्णुका चरणोदक एवं शिवकी जटाओंमें स्थित पावन रसामृत है, जिनका जल भगीरथकी तपश्चर्याके फलस्वरूप धरतीपर प्रवाहित हुआ, जो हिमालयक्षेत्रके गोमुख स्थलसे उद्भूत होकर ऋषिकेश, हरिद्वार, कानपुर, इलाहाबाद, वाराणसी, पटना, भागलपुर, पश्चिम बंगाल होते हुए सागरमें मिलती हैं, जिस स्थानमें गंगा समुद्रमें मिलती हैं, उस स्थानको गंगासागरके नामसे जाना जाता है। गंगाका जल ऋषिकेशसे लेकर गंगासागरपर्यन्त सर्वत्र परमपवित्र एवं पुण्यदायक माना गया है, तथापि पद्मपुराणके अनुसार हरिद्वारमें स्थित कनखल स्थानका गंगाजल अत्यन्त पुण्यप्रद कहा गया है—

पुण्या कनखले गङ्गा कुरुक्षेत्रे सरस्वती।

(पद्मपुराण)

गंगाजल अन्य जलकी अपेक्षा अधिक पवित्र और अमृततुल्य माना जाता है—

अमृतं जाह्नवीतोयममृतं स्वर्णमुच्यते।
अमृतं गोभवं चाज्यममृतं सोम एव च॥

(ब्रह्मपुराण)

इस जलका वैशिष्ट्य है कि इसे किसी पात्रमें चिरकालतक रखनेपर भी यह विकृत नहीं होता है। इस जलमें रोगाणुओंको नष्ट करनेकी विशिष्ट क्षमता है। निरन्तर इसके पान करते रहने तथा इसके स्वच्छ जलमें स्नान करनेसे कई प्रकारके असाध्य रोग भी ठीक हो जाते हैं। प्राचीनकालसे ही यह प्रसिद्धि व्याप्त है— **'औषधं जाह्नवीतोयं वैद्यो नारायणो हरिः'** अर्थात् गंगाका जल औषधिस्वरूप तथा वैद्य नारायणरूप ही होता है, इन दोनोंमें हमारी जितनी निष्ठा तथा विश्वास होगा, प्रतिफल भी वैसा ही प्राप्त होता है।

देवनदी गंगा भवबन्धनसे मुक्ति देनेवाली हैं, पावन तीर्थोंमें गंगाकी महिमाका गुणगान प्राथम्येन किया गया है। गंगाजलका यह विशेष गुण है कि यह पर्युषित अर्थात् बासी नहीं होता। बृहन्नारदीयपुराणके अनुसार पर्युषित पुष्प तथा पर्युषित जल भगवान्‌को नहीं चढ़ाना चाहिये, पर तुलसीपत्र एवं गंगाजल पुराना भी चढ़ाया जा सकता है, क्योंकि यह कभी पर्युषित होता ही नहीं है।

वर्ज्यं पर्युषितं तोयं वर्ज्यं पर्युषितं दलम्।
न वर्ज्यं जाह्नवीतोयं न वर्ज्यं तुलसीदलम्॥

(बृहन्नारदीयपुराण)

भारतवर्षके लिये गंगा सब प्रकारसे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण निधि हैं। निराकार ब्रह्मभक्तोंके लिये वह निराकार गंगा है। गंगाकी महिमा अनन्त है। भगवान् श्रीकृष्णने भी

* इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या। असिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तयार्जीकीये शृणुह्या सुषोमया॥

श्रीमद्भगवद्गीताके दशम अध्यायके विभूतिवर्णनप्रसंगमें **'स्रोतसामस्मि जाह्नवी'** कहकर गंगाके महत्त्वको प्रकट किया है। पुराणोंकी दृष्टिमें देशमें प्रवहमान नदियाँ मात्र निर्जीव जलका प्रवाह नहीं हैं, बल्कि वे भारतके सजीव देहकी प्राणसंचारिका नाड़ियोंके सदृश सजीवताकी आधायिका हैं।

महर्षि वाल्मीकि, महर्षि वेदव्यास, शंकराचार्य, भर्तृहरि[1], महाकवि कालिदासादि[2] कवियोंने गंगाकी भूरिशः प्रशंसा करते हुए सुमधुर पद्योंद्वारा गंगाका स्तुतिगान किया है। पण्डितराज जगन्नाथने गंगालहरीमें अनेक पद्योंके माध्यमसे गंगाकी महिमाका अद्भुत वर्णन किया है—

समृद्धं सौभाग्यं सकलवसुधायाः किमपि त-
न्महैश्वर्यं लीलाजनितजगतः खण्डपरशोः।
श्रुतीनां सर्वस्वं सुकृतमथ मूर्तं सुमनसां
सुधासौन्दर्यं ते सलिलमशिवं नः शमयतु॥

(गंगालहरी १)

भारतवर्षके इतिहासकी धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक और राजनीतिक चेतनाके प्रमुख केन्द्र गंगाके तटवर्ती क्षेत्र रहे हैं। कोटि-कोटि ऋषि, मुनि, सन्त, महात्मा, साधु, संन्यासी और तपस्वी गंगातटपर स्थित तीर्थोंमें आध्यात्मिक साधना करते हैं। असंख्य श्रद्धालुजन विविध पर्वोंपर गंगास्नानके लिये एकत्रित होते हैं, कहा जाता है कि विशेष पर्वोंपर गंगामें स्नानका महत्त्व भी बढ़ जाता है। भागीरथीकी ऐसी महिमा है कि उनमें स्नानमात्रसे सात पीढ़ियोंका उद्धार हो जाता है। जैसा कि महर्षि व्यासका कथन है—

पुष्करे च कुरुक्षेत्रे गङ्गायां मध्यमेषु च।
स्नात्वा तारयते जन्तुः सप्तसप्तावरांस्तथा॥

(महाभारत, वनपर्व ८५।९२)

फिर भी वर्तमानमें सरिताओंका दुर्दिन देखकर कष्ट होता है तथा यह खेदका विषय है कि ऐसी परमपावन पतितपावनी देवसरिता भागीरथी गंगा वर्तमानमें जलप्रदूषणकी भयावह समस्यासे त्रसित हैं। जिसका मुख्य कारण है नदीकी धाराको रोक देना। यह समस्या केवल गंगा नदीके साथ है, ऐसा नहीं कहा जा सकता; क्योंकि देशकी प्रायः समस्त नदियाँ प्रदूषणकी भयावह समस्यासे जूझ रही हैं। इसके प्रमुख कारण हैं आधुनिकीकरण तथा नदियोंके किनारे बसे प्रमुख शहर और आधुनिक समाज, जिसके द्वारा लाखों टन अमेध्यपदार्थका जलसे संसर्ग होता है, जो प्रदूषण उत्पन्न करता है। चरकसंहिता, अष्टांगहृदयादि ग्रन्थोंमें ऐसे जलके प्रयोगका निषेध किया गया है, जो गन्धयुक्त हानिकर पदार्थोंसे मिलित हो, कृमियोंसे व्याप्त हो, विविध द्रव्योंसे मिश्रित हो, रासायनिक द्रव्योंके कारण फेनिल हो, विष्ठामूत्रविषादि हानिकारक पदार्थयुक्त तथा दुर्गन्धसे युक्त[3] हो—ऐसा जल अपेय होता है। इसका सर्वथा त्याग ही करना चाहिये अर्थात् कभी भी पीनेहेतु प्रयोग नहीं करना चाहिये। **'न पिबेत्पर्णपङ्कशैवालतृणपर्णाविलास्तृतम्। फेनिलं जन्तुमत्तप्तं···· लूतादितन्तुविण्मूत्रविषसंश्लेषदूषितम्॥'** (अष्टांगहृदय ५।६—८) यदि जलका शुद्धाशुद्धविवेक करके प्रयोग नहीं किया गया तो शरीर ज्वर, तृष्णा, उदरकष्ट, अग्निमान्द्य, श्वासरोग, खुजली, गण्डादि विभिन्न रोगोंसे पीड़ित होकर कष्टको प्राप्त करेगा। एतदर्थ स्वास्थ्यकी प्राप्तिके लिये आवश्यक है कि शुद्ध जलका प्रयोग किया जाय। शुद्ध जलकी कामना अथर्वा ऋषिने भी अथर्ववेदमें की है—

शुद्धा न आपस्तन्वेऽक्षरन्तु यो नः सेदुरप्रिये तं नि दध्मः। पवित्रेण पृथिवि मोत् पुनामि॥ (अथर्ववेद १२।१।३०)

१-अथो गङ्गा सेयं पदमुपगता स्तोकमथ वा (भर्तृहरिनीतिशतक श्लोक १०)।

२-(क) भागीरथीनिर्झरसीकराणाम्। (कुमारसम्भव १।१५) (ख) गङ्गाप्रपातान्तविरूढशष्पं गौरीगुरोर्गह्वरमाविवेश॥ (रघुवंश २।२६)
(ग) सुरसरिदिवतेजो वह्निनिष्ठ्यूतमैशम्। (रघुवंश २।७५)

३-पिच्छिलं क्रिमिलं क्लिन्नं पर्णशैवालकर्दमैः। विवर्णं विरसं सान्द्रं दुर्गन्धं न हितं जलम्॥ (चरकसंहिता २७।२१५)

जल-प्रदूषणकी समस्या प्राचीनकालमें भी थी, इसीलिये मनुस्मृतिकारने कहा है—**'दृष्टिपूतं न्यसेत्पादं वस्त्रपूतं पिबेज्जलम्'** अर्थात् वस्त्रादिके द्वारा जलको छानकर एवं पवित्र करके ही जलको पीये, ऋग्वेदादि वाङ्मय तथा आयुर्वेदके ग्रन्थोंमें भी जलको विभिन्न प्रकारसे पवित्र करके पीनेका संकेत प्राप्त होता है। जलको शुद्ध करनेकी अन्यान्य विधियाँ शास्त्रोंमें वर्णित हैं, जिनके द्वारा शुद्ध जल प्राप्त किया जा सकता है। जैसे—सूर्यरश्मियोंके सम्पर्कमें आनेसे जल पवित्र होता है, क्योंकि सूर्यकी किरणोंमें कृमिनाश करनेकी शक्ति होती है—**'अमूर्या उपसूर्ये सूर्यः सह।'** (ऋग्वेद) शरद् ऋतुमें स्वयमेव जल शुद्ध हो जाता है, कालिदासने ऋतुसंहारमें कहा है—**'विगत-कलुषमम्भः श्यानपङ्का धरित्री'** जिसके विभिन्न कारण विद्वानोंने माने हैं, जिसमें वर्षाजन्य प्रदूषणका अभाव, सूर्यचन्द्रकी किरणोंका सम्पर्क, वर्षाकालीन अपद्रव्योंका नदीतलमें बैठ जाना तथा अगस्त्य नक्षत्रका उदय प्रमुख है।[१] अर्थात् अगस्त्य नक्षत्रका उदय भी जल-शुद्धिमें हेतु है। फलमूलादिके द्वारा भी जलका प्रसादन माना गया है। **'फलं कतकवृक्षस्य यद्यप्यम्बु-प्रसादकम्।'** अनेक द्रव्योंके योगसे जलशोधकी प्रक्रियाका वर्णन बृहत्संहिता[२] ग्रन्थमें प्राप्त होता है, जिसमें विविध चूर्णादिके द्वारा कूपके जलको शुद्ध करनेका निर्देश है। जलको शुद्ध करनेमें वनौषधियाँ भी बहुत महत्त्वपूर्ण कार्य करती हैं। अथर्ववेदमें औषधियोंके द्वारा जलशुद्धिका उपाय वर्णन करते हुए कहा गया है कि **'त्वया वयमप्सरसो गन्धर्वांश्चा-तयामहे। अजशृङ्ग्यज रक्षः सर्वान् गन्धेन नाशय॥ नदीं यन्त्वप्सरसोऽपां तारमवश्वसम्। गुल्गुलूः पीला नलद्यौ३क्षगन्धिः प्रमन्दनी। तत् परेताप्सरसः प्रतिबुद्धा अभूतन॥ यत्राश्वत्था न्यग्रोधा महावृक्षाः शिखण्डिनः।'** (अथर्ववेद ४।३७।२—४) धातुरत्नोंके प्रयोगद्वारा तथा यज्ञके माध्यमसे वृष्टि कराकर भी जलको शुद्ध करनेका वर्णन प्राप्त होता है। तथापि इन समस्त उपायोंको करनेसे अच्छा है कि हम जलको दूषित होने ही न दें; क्योंकि **'प्रक्षालनाद् हि पङ्कस्य दूरादस्पर्शनं वरम्'** अर्थात् हम कीचड़से लिप्त हों फिर उसे साफ करें, इससे अच्छा है कि हम कीचड़से लिप्त ही न हों। अतः शुद्ध जलप्राप्तिहेतु सरिताओंकी शुद्धि आवश्यक है और सरिता शुद्धिके लिये शास्त्रोंमें कहा गया है—**'नदी वेगेन शुद्ध्यति'** अर्थात् नदीकी दोषरहित अविरल धारा होनी चाहिये; क्योंकि नदीको शुद्ध करनेका सर्वोत्तम और एकमात्र उपाय है नदीका वेग, यदि नदीमें प्रवहमान जलराशि सदा विद्यमान रहती है तो वह जल सर्वथा शुद्ध होता है। अतः अन्य नदियोंके साथ-साथ भागीरथी गंगाको भी बन्धनमुक्त करना चाहिये, जिससे पुण्यतोया अपने वास्तविक रूपमें विद्यमान रहते हुए समाजका कल्याण करती रहे। हम सभीको भी उसकी पवित्रताकी रक्षा करनी चाहिये।

गंगा नदी पृथ्वीवासियोंके लिये स्वर्गके वरदानतुल्य हैं, इन्हें मुक्तिदायिनी, मोक्षप्रदा तथा कल्मषनाशिनी भी कहते हैं। भारतीय सनातनधर्मावलम्बी जनमानसमें माता गंगाके प्रति अटूट श्रद्धा-विश्वास अब भी पूर्ववत् ही बना हुआ है। पतितपावनी-पापनाशिनी गंगाके उपकारोंसे प्राणिसमुदाय कभी उऋण नहीं हो सकता। सूर्य, चन्द्र, वायु, अग्नि तथा हिमालयकी भाँति गंगाके बिना भारतवर्षके कल्याणकी कल्पना नहीं की जा सकती। अतः सर्व-संकल्पोंको पूर्ण करनेवाली जगद्वन्द्या भगवती गंगाकी सेवा करनेसे ही समस्त प्राणिसमुदाय सुखी एवं समृद्ध हो सकता है।

१-शरदि स्वच्छमुदयादगस्त्यस्याखिलं हितम्। (वृद्धसुश्रुत)

२-अञ्जनमुस्तोशीरैः सराजकोशातकामलकचूर्णैः। कतकफलसमायुक्तैर्योगः कूपे प्रदातव्यः॥ (बृहत्संहिता)

गंगा

(महामहोपाध्याय पं० श्रीगिरिधरजी शर्मा चतुर्वेदी)

गंगा नदी भारतकी सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण नदी है। भौगोलिक, आध्यात्मिक और आधिदैविक दृष्टिसे इसका अत्यन्त महत्त्व है। अपने आध्यात्मिक महत्त्वके
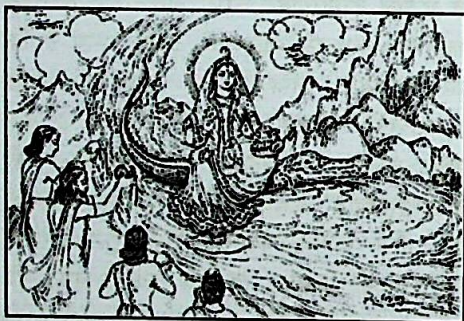
आधारपर यह 'मकरवाहिनी' रूपसे उपास्या होती है तथा अधिदैवमें इसे आकाशगंगाके रूपमें प्रतिष्ठित समझा जाता है। अधिभूतमें तो इसकी अनेक संज्ञाएँ हैं, जो इसके अन्यातिशायी महत्त्वका ख्यापन करती हैं। गंगाके इस महत्त्वके कारण अन्य नदियोंको महत्त्वपूर्ण बतलानेके लिये उन्हें भी कई बार गंगा कह दिया गया है। एक और भी बात गंगाके विषयमें ध्यान रखनेयोग्य है कि हरिद्वारमें आनेके पूर्व गंगामें हिमालयसे बहनेवाली अनेक नदियोंका संगम होता है। इस तरहकी दो नदियोंका संगम जहाँ-जहाँ होता है, उन सबकी वहाँ अलग-अलग 'प्रयाग' संज्ञा है। श्रीबदरीनाथ-यात्राके मार्गमें यद्यपि 'पंचप्रयाग' का नाम आता है तथापि आजकल तो षट्प्रयाग, (देवप्रयाग, रुद्रप्रयाग, कर्णप्रयाग, नन्दप्रयाग, गरुडप्रयाग और पातालप्रयाग)-की यात्रा होती है। इन प्रयागोंपर मिलनेवाली नदियोंमें अलकनन्दा नदी प्रधान है। उसीमें अन्य पाँच गंगाएँ मिलती हैं। उन पाँचों गंगा नदियोंके पृथक् नाम हैं—भागीरथी, मन्दाकिनी, कर्णगंगा, नन्दगंगा और गरुडगंगा। इसके अतिरिक्त एक 'विष्णुप्रयाग' भी है, जहाँ 'विष्णुगंगा' का अलकनन्दासे संगम होता है। एक 'केशवप्रयाग' भी है, जो तीर्थराज माना जाता है। अन्यत्र दो ही नदियोंका संगम होता है; परंतु यहाँ गंगा और यमुनाकी जलधाराओंमें भूमिके स्तरोंमें बहनेवाली 'सरस्वती' की धारा भी आकर मिल जाती है। दो प्रवाहशीला नदियोंके संगमस्थलमें अत्यधिक पवित्रता और शान्ति रहनेके कारण यह भूमि यज्ञ करनेके लिये बहुत उपयुक्त समझी गयी थी, इसीलिये उसकी संज्ञा 'प्रयाग' हो गयी। यज्ञ-यागदिके लिये प्रकृष्ट स्थानको 'प्रयाग' कहा जाता है।

गुरुवर श्रीयुत मधुसूदन विद्यावाचस्पतिजीने अपने जगद्गुरुवैभव नामक संस्कृत-ग्रन्थमें यह दिखाया है कि आकाशसे गंगाका अवतरण पामीर पर्वत-प्रदेशमें हुआ था, जिसकी प्राचीन संज्ञा 'प्राङ्मेरु' थी। 'वाराहपुराण' के आधारपर उन्होंने दिखाया है कि पामीर-प्रदेशसे चार गंगाकी धाराएँ निकलती हैं। ये चारों धाराएँ चार दिशाओंकी ओर प्रवाहित हो जाती हैं। पूर्ववाहिनी नदीका नाम 'सीता' है। उत्तरवाहिनी 'मद्रा' नदी है। पश्चिमकी ओर 'यक्षु' नदी प्रवाहित होती है तथा दक्षिणकी ओर अलकनन्दा नदी प्रवाहित होती है। उक्त चारों नदियोंकी 'गंगा' संज्ञा सामान्य है। पूर्ववाहिनी सीता नदीके तीन स्रोत हो जाते हैं, जो पूर्व समुद्रमें पृथक्-पृथक् गिरते हैं। उत्तरवाहिनी 'मद्रा' का ही नाम 'मद्रसोमा' है, जो उत्तर समुद्रमें मिलती है। 'यक्षु' को ही पुराणोंमें 'चक्षु' कहा गया है। इसीको जम्बूनदी भी कहा गया है। यह 'कैस्पियन' समुद्रमें गिरती है। 'अलकनन्दा' भारतवर्षमें बहती हुई दक्षिण समुद्रमें मिलती है। प्राय: सभी पुराणों, महाभारत तथा वाल्मीकीय रामायणमें गंगाकी अमित महिमा गायी गयी है और प्राचीन भारतके अनेक आख्यानोंका आधार गंगा है। [प्रेषक—श्रीअमितकुमार त्रेहन]

गंगाका आर्थिक एवं भौगोलिक महत्त्व

(श्री बी०एस० रावत 'चंचल')

गंगा नदी विश्वभरमें अपनी शुद्धिकरण-क्षमताके लिये जानी जाती है। लम्बे समयसे प्रचलित गंगाकी शुद्धिकरणसम्बन्धी क्षमताकी मान्यताका वैज्ञानिक आधार भी है। वैज्ञानिकोंका कहना है कि गंगाके जलमें 'बैक्टीरियोफेंज' नामक विषाणु होते हैं, जो जीवाणुओं एवं अन्य हानिकारक सूक्ष्म जीवोंको जीवित नहीं रहने देते हैं। इस नदीके जलमें प्राणवायु (ऑक्सीजन)-की मात्राको बनाये रखनेकी असाधारण क्षमता है, किंतु इसका कारण अभीतक अज्ञात है।

हिन्दुओंद्वारा देवीरूपमें गंगा नदीकी पूजा की जाती है; क्योंकि उनका विश्वास है कि गंगाका पानी 'अमृत' है, इसमें स्नान करनेसे सारे पाप धुल जाते हैं और जीवन-मरणके चक्रसे मुक्ति मिल जाती है। तीर्थयात्री गंगाके पानीमें अपने परिजनोंकी अस्थियोंका विसर्जन करनेके लिये लम्बी दूरी तय करके इस विश्वास एवं आस्थाके साथ आते हैं ताकि उनके प्रियजन सीधे स्वर्ग जा सकें।

थाईलैण्डके लोग 'क्राथोंग' त्योहारके दिन सौभाग्य-प्राप्ति तथा पापोंको धोनेके लिये 'बुद्ध' तथा 'देवीगंगा'के सम्मानमें नावोंमें कैंडिल जलाकर उन्हें पानीमें छोड़ते हैं।

आर्ष साहित्यमें गंगाका वर्णन—विश्वमें जितनी नदियाँ हैं, उनमें सबसे अधिक पर्यायवाची शब्द गंगाके हैं, जिनमें गंगा, सुरसरि, भागीरथी, मन्दाकिनी, जाह्नवी, त्रिपथगा, शैलपुत्री, हिमतनया, विष्णुप्रिया तथा सरितश्रेष्ठा प्रमुख हैं। विभिन्न ग्रन्थोंमें इनका विवरण इस प्रकार है—

पुराण—स्कन्दपुराणमें देवी गंगा 'कार्तिकेय', (मुरूगन)-की विमाताके रूपमें वर्णित हैं, कार्तिकेय वास्तवमें शिव और पार्वतीके पुत्र हैं।

ब्रह्मवैवर्तपुराण और देवीभागवतपुराणके अनुसार, विष्णुकी तीन पत्नियाँ हैं, जो हमेशा आपसमें झगड़ती रहती हैं, इसलिये अन्तमें उन्होंने केवल लक्ष्मीको अपने साथ रखा और गंगाको शिवजीके पास तथा सरस्वतीको ब्रह्माजीके पास भेज दिया।

ऐसी मान्यता है कि सरस्वती नदीके समान ही, कलियुगके अन्ततक गंगा पूरी तरहसे सूख जायँगी। उसके साथ ही यह युग भी समाप्त हो जायगा। उसके बाद सत्ययुगका उदय होगा।

महाभारत—हिन्दुओंके महाकाव्य महाभारतमें कहा गया है कि वसिष्ठद्वारा शापित वसुओंने गंगासे प्रार्थना की थी कि वे उनकी माता बन जायँ। गंगा पृथ्वीपर अवतरित हुईं और इस शर्तपर राजा शान्तनुकी पत्नी बनीं कि वे कभी भी उनसे कोई भी प्रश्न नहीं करेंगे अन्यथा वह उन्हें छोड़कर चली जायँगी। सात वसुओंने उनके पुत्रोंके रूपमें जन्म लिया और गंगाने एक-एक करके उन सबको अपने पानीमें बहा दिया, इस प्रकार शापसे उनको मुक्ति दिलायी। इस समयतक राजा शान्तनुने कोई आपत्ति नहीं की। अन्ततः आठवें पुत्रके जन्मपर राजासे

नहीं रहा गया और उन्होंने अपनी पत्नीका विरोध किया, इसलिये गंगा उन्हें छोड़कर चली गयी। इस प्रकार आठवें पुत्रके रूपमें जन्मा 'द्यौ' मानवरूपी नश्वर शरीरमें ही फँसकर जीवित रह गया और बादमें महाभारतके सर्वाधिक सम्मानित पात्रोंमेंसे एक 'भीष्म' (देवव्रत)-के नामसे जाना गया।

ऋग्वेद—गंगाका उल्लेख हिन्दुओंके सबसे प्राचीन

और पवित्र ग्रन्थ 'ऋग्वेद' में हुआ है। गंगाका उल्लेख नदी स्तुति (ऋग्वेद १०।७५)-में किया गया है, जिसमें पूर्वसे पश्चिमकी ओर बहनेवाली नदियोंके बारेमें बताया गया है।

साहित्यमें गंगा—भारतकी राष्ट्रीय नदी गंगा मात्र बहता हुआ जलप्रवाह ही नहीं है; अपितु भारत और भारतीय साहित्यकी मानवीय चेतनाको भी प्रभावित करनेवाली नदी है। ऋग्वेद, महाभारत, रामायण एवं पुराणोंके अतिरिक्त विभिन्न साहित्य-ग्रन्थोंमें भी गंगाका वर्णन हुआ है। संस्कृत कवि पण्डितराज जगन्नाथने गंगाकी स्तुतिमें 'श्रीगंगालहरी' नामक काव्यकी रचना की है। हिन्दीके आदि महाकाव्य 'पृथ्वीराजरासो' तथा 'बीसलदेवरासो' में गंगाका उल्लेख हुआ है। आदिकालके सर्वाधिक लोकविश्रुत ग्रन्थ जगनिकरचित 'आल्हखण्ड' में गंगा, यमुना और सरस्वती—तीनों नदियोंका उल्लेख है। कविने प्रयागराजकी इस 'त्रिवेणी' को पापनाशक बतलाया है। विद्यापतिकी पदावली, कबीरवाणी और जायसीके पद्मावत महाकाव्यमें गंगाका विस्तृत उल्लेख हुआ है। सूरदास और तुलसीदासने भक्ति-भावनासे 'गंगा-माहात्म्य' का वर्णन विस्तारसे किया है। गोस्वामी तुलसीदासजीने 'कवितावली' के 'उत्तरकाण्ड' में 'श्रीगंगा-माहात्म्य' का वर्णन तीन छन्दोंमें किया है। रीतिकालीन कवि सेनापति और पद्माकरका गंगा-वर्णन श्लाघनीय है। पद्माकरने गंगाकी महिमा और कीर्तिका वर्णन करनेके लिये 'गंगा-लहरी' नामक ग्रन्थकी रचना की है। सेनापति 'कवित्त-रत्नाकर' में गंगाके माहात्म्यका वर्णन करते हुए कहते हैं कि पापकी नावको नष्ट करनेके लिये गंगाकी पुण्य धारा तलवार-सी सुशोभित है। रसखान, रहीम आदिने भी गंगाजीके प्रभावका सुन्दर वर्णन किया है। आधुनिक कालके कवियोंमें 'जगन्नाथदास रत्नाकर' के ग्रन्थ 'गंगावतरण' में गंगाके भूमिपर अवतरित होनेकी कथा है। सम्पूर्ण ग्रन्थ तेरह सर्गोंमें विभक्त और रोला छन्दमें निबद्ध है। अन्य कवियोंमें भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, सुमित्रानन्दन पन्त और श्रीधर पाठक आदिने भी यत्र-तत्र गंगाका वर्णन किया है। छायावादी कवियोंका प्रकृति-वर्णन हिन्दी साहित्यमें उल्लेखनीय है। सुमित्रानन्दन पन्तने 'नौका-विहार' में ग्रीष्मकालीन तापसबाला गंगाका जो चित्र उकेरा है, वह अति रमणीय है। पन्तजीने 'गंगा' नामक कविताकी भी रचना की है। भारतके प्रथम प्रधानमन्त्री जवाहरलाल नेहरूने तो अपनी कृति 'भारतकी खोज' (डिस्कवरी ऑफ इण्डिया)-में गंगाको 'भारतकी आत्मा' कहकर उल्लेखित किया है।

आर्थिक महत्त्व—गंगा अपनी उपत्यकाओंद्वारा भारत और बँगलादेशकी कृषि-आधारित अर्थव्यवस्थामें भारी सहयोग तो करती ही है, यह अपनी सहायक नदियोंसहित बहुत बड़े क्षेत्रके लिये सिंचाईका बारहमासी स्रोत भी है। इन क्षेत्रोंमें उगायी जानेवाली प्रधान उपजमें मुख्यतः धान, गन्ना, दाल, तिलहन, आलू एवं गेहूँ है, जो भारतकी कृषि उपजका महत्त्वपूर्ण भाग है। गंगाके तटीय क्षेत्रोंमें दलदल एवं झीलोंके कारण यहाँ लेग्यूम, मिर्च, सरसों, तिल, गन्ना और जूटकी अच्छी फसल होती है। गंगा नदी-प्रणाली भारतकी सबसे बड़ी नदी प्रणाली है। इसमें लगभग ३७५ मत्स्य प्रजातियाँ उपलब्ध हैं। वैज्ञानिकोंद्वारा उत्तरप्रदेश एवं बिहारमें १११ मत्स्य प्रजातियोंकी उपलब्धता बतायी जाती है। गंगाका महत्त्व पर्यटनपर आधारित आयके कारण भी है। इसके तटपर ऐतिहासिक दृष्टिसे महत्त्वपूर्ण तथा प्राकृतिक सौन्दर्यसे भरपूर कई पर्यटन-स्थल हैं, जो राष्ट्रीय आयके महत्त्वपूर्ण स्रोत हैं। गंगा नदीपर रैफ्टिंगके शिविरोंका आयोजन किया जाता है, जो साहसिक खेलों और पर्यटनद्वारा भारतकी आर्थिक समृद्धिमें सहयोग करते हैं। गंगातटके तीन बड़े शहर हरिद्वार, इलाहाबाद एवं वाराणसी तीर्थस्थलोंमें विशेष स्थान रखते हैं। इस कारण यहाँ श्रद्धालुओंकी बड़ी संख्या निरन्तर बनी रहती है और धार्मिक पर्यटनमें महत्त्वपूर्ण योगदान करती है। गर्मीके मौसममें जब पहाड़ोंसे बर्फ पिघलती है, तब नदीमें पानीकी मात्रा एवं बहाव अच्छा होता है। यह सब पर्यटकोंको विशेष रूपसे आकर्षितकर भारतके आर्थिक

सहयोगमें महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

सहायक नदियाँ—गंगामें उत्तरकी ओरसे आकर मिलनेवाली प्रमुख सहायक नदियाँ यमुना, रामगंगा, करनाली (घाघरा), ताप्ती, गण्डक, कोसी और काक्षी हैं तथा दक्षिणके पठारसे आकर इसमें मिलनेवाली प्रमुख नदियाँ चम्बल, सोन, बेतवा, केन, दक्षिण टोंस आदि हैं। यमुना गंगाकी सबसे प्रमुख सहायक नदी है, जो हिमालयके यमुनोत्री हिमखण्डसे निकलती है। हिमालयके ऊपरी भागमें इसमें 'टॉस' तथा बादमें लघु हिमालयमें आनेपर इसमें 'गिरि' और 'आसन' नदियाँ मिलती हैं। चम्बल, बेतवा और शारदा तथा केन 'यमुना' की सहायक नदियाँ हैं। 'चम्बल' इटावा के पास तथा 'बेतवा' हमीरपुरके पास यमुनामें मिलती हैं। यमुना इलाहाबादके निकट बाँयी ओरसे गंगा नदीमें जा मिलती है। रामगंगा मुख्य हिमालयके दक्षिणी भाग नैनीतालके निकटसे निकलकर बिजनौर जिलेसे बहती हुई कन्नौजके पास गंगामें मिलती है। 'करनाली' नदी मप्सातुंग नामक हिमनदसे निकलकर अयोध्या, फैजाबाद होती हुई बलिया जिलेकी सीमाके पास गंगामें मिल जाती है। इस नदीको पर्वतीय भागमें 'कौरियाला' तथा मैदानी भागमें 'घाघरा' कहा जाता है। 'गण्डक' हिमालयसे निकलकर नेपालमें 'शालीग्राम' नामसे बहती हुई मैदानी भागमें 'नारायणी' नदीके नामसे जानी जाती है। यह 'काली गण्डक' और 'त्रिशूल' नदियोंका जल लेकर प्रवाहित होती हुई सोनपुरके पास गंगामें समाहित होती है। 'कोसी' की मुख्यधारा 'अरुण' है, जो गोसाई धामके उत्तरसे निकलती है। 'ब्रह्मपुत्र' के बेसिनके दक्षिणसे सर्पाकार रूपमें 'अरुण' नदी बहती है, जहाँ 'यारू' नामक नदी इससे मिलती है। इसके बाद एवरेस्टके कंचनजंघा शिखरोंके बीचसे होकर यह दक्षिणकी ओर ९० कि०मी० बहती है, जहाँ पश्चिमसे 'सूनकोशी' तथा पूरबसे 'तामूरकोसी' नामक नदियाँ इसमें मिलती हैं। इसके बाद कोसी नदीके नामसे यह शिवालिकको पारकर मैदानमें उतरती है तथा बिहार राज्यसे बहती हुई गंगामें मिल जाती है। अमरकण्टक पहाड़ीसे निकलकर 'सोन' नदी पटनाके पास गंगामें मिलती है। मध्यप्रदेशमें मऊ (इन्दौर)-के निकट 'जानापाव' पर्वतसे निकलकर 'चम्बल' नदी इटावासे ३८ कि०मी० की दूरीपर यमुनासे जुड़ जाती है। भागीरथी नदीके दायें किनारेसे मिलनेवाली अनेक नदियोंमें बाँसलई, द्वारका, मयूराक्षी, रूपनारायण, कंसावती और रसूलपुर प्रमुख हैं। 'जलांगी' और 'माथा भाँग' या 'चूनी' बायें किनारेसे मिलती है, जो अतीत कालमें 'गंगा' या 'पद्मा' की शाखा नदियाँ थीं, किंतु ये वर्तमान समयमें गंगासे पृथक् होकर वर्षाकालीन नदियाँ बन गयी हैं।

विश्वका सबसे बड़ा डेल्टा-'सुन्दरवन'—हुगली नदी कोलकाता, हावड़ा होते हुए 'सुन्दरवन' के भारतीय भागमें सागरसे संगम करती है। 'पद्मा' में 'ब्रह्मपुत्र' से निकली शाखा नदी 'जमुना' नदी एवं 'मेघना' नदीमें मिलती है। अन्ततः ये ३५० कि०मी० चौड़े 'सुन्दरवन' डेल्टामें जाकर बंगालकी खाड़ीमें 'सागर-संगम' करती है। यह डेल्टा गंगा एवं उसकी सहायक नदियोंद्वारा लायी गयी नवीन जलोढ़से १,००० वर्षोंमें निर्मित समतल एवं निम्न मैदान है। यहाँ गंगा और बंगालकी खाड़ीके संगमपर एक प्रसिद्ध हिन्दू तीर्थ है, जिसे 'गंगा-सागर-संगम' कहते हैं। विश्वका सबसे बड़ा डेल्टा (सुन्दरवन) बहुत-सी प्रसिद्ध वनस्पतियों और प्रसिद्ध बंगाल टाइगरका निवास-स्थान है। डेल्टाके दक्षिणी भागमें समुद्रका खारा पानी पहुँचनेके कारण यह भाग दलदली है तथा आसानीसे पनपनेवाले मैंग्रोव जातिके वनोंसे भरा पड़ा है। यह डेल्टा चावलकी कृषिके लिये अधिक विख्यात है। यहाँ विश्वमें सबसे अधिक कच्चे जूटका उत्पादन होता है।

सिन्धु-गंगा-ब्रह्मपुत्रका मैदान—हरिद्वारसे लगभग ८०० कि०मी० मैदानी यात्रा करते हुए गढ़मुक्तेश्वर, सोरों, फर्रूखाबाद, कन्नौज, बिठूर, कानपुर होते हुए गंगा इलाहाबाद (प्रयाग) पहुँचती है। यहाँ इसका संगम 'यमुना' नदीसे होता है। यह संगम-स्थल हिन्दुओंका

महत्त्वपूर्ण तीर्थ है। इसे 'तीर्थराज' (प्रयाग) भी कहा जाता है। इसके बाद हिन्दू-धर्मकी प्रमुख मोक्षदायिनी नगरी काशी (वाराणसी)-में गंगा एक वक्र लेती है, जिससे यह यहाँ उत्तरवाहिनी कहलाती है। यहाँसे मीरजापुर, पटना, भागलपुर होते हुए 'पाकुर' पहुँचती है। इस बीच इसमें बहुत-सी सहायक नदियाँ सोन, गण्डक, घाघरा, कोसी आदि मिल जाती हैं। भागलपुरमें राजमहलकी पहाड़ियोंसे यह दक्षिणवर्ती होती है। पश्चिम बंगालमें मुर्शिदाबाद जिलेके गिरिया स्थानके दक्षिणकी ओर बहने लगती है, जबकि पद्मा नदी दक्षिण पूर्वकी ओर बहती 'फरक्काबैराज' (१९७४ में निर्मित)-से छनते हुए बँगलादेशमें प्रवेश करती है। यहाँसे गंगाका डेल्टाई भाग शुरू हो जाता है। मुर्शिदाबाद शहरसे हुगली शहरतक गंगाका नाम 'भागीरथी' तथा हुगली शहरसे मुहानेतक गंगाका नाम 'हुगली' नदी है। गंगाका यह मैदान मूलतः एक भू-अभिनति गर्त है, जिसका निर्माण मुख्यरूपसे हिमालय पर्वतमाला निर्माण-प्रक्रियाके तीसरे चरणमें लगभग ४-६ करोड़ वर्ष पहले हुआ था। तबसे इसे हिमालय और प्रायद्वीपसे निकलनेवाली नदियाँ अपने साथ लाये हुए अवसादोंसे पाट रही हैं। इन मैदानोंमें जलोढ़की औसत गहराई १००० से २००० मीटर है। इस मैदानमें नदीकी प्रौढ़ावस्थामें बननेवाली अपरदनी और निक्षेपण स्थलाकृतियाँ जैसे—बालू-रोधका, विसर्प, गोखुर-झीलें और गुंफित नदियाँ पायी जाती हैं।

बाँध एवं नदी परियोजनाएँ—गंगा नदीपर निर्मित अनेक बाँध भारतीय जनजीवन तथा अर्थव्यवस्थाका महत्त्वपूर्ण अंग हैं। इनमें प्रमुख हैं—फरक्का बाँध, टिहरी बाँध तथा भीमगोंडा बाँध। 'फरक्का' (बैराज) बाँध भारतके पश्चिम बंगाल प्रान्तमें स्थित गंगा नदीपर बनाया गया है। इस बाँधका निर्माण कोलकाता बन्दरगाहको गाद (सिल्ट)-से मुक्त करानेके लिये किया गया था, जो कि १९५० से १९६० तक इस बन्दरगाहकी प्रमुख समस्या थी। कोलकाता हुगली नदीपर स्थित एक बन्दरगाह है। ग्रीष्म ऋतुमें हुगली नदीके बहावको निरन्तर बनाये रखनेके लिये गंगा नदीके जलके एक बड़े हिस्सेको फरक्का बाँधके द्वारा हुगली नदीमें मोड़ दिया जाता है। गंगापर निर्मित दूसरा प्रमुख बाँध 'टिहरी बाँध' टिहरी विकास परियोजनाका एक प्राथमिक बाँध है, जो उत्तराखण्ड प्रान्तके टिहरी जिलेमें स्थित है। यह बाँध गंगा नदीकी प्रमुख सहयोगी नदी भागीरथीपर बनाया गया है। टिहरी बाँधकी ऊँचाई २६१ मीटर है, जो इसे विश्वका पाँचवाँ सबसे ऊँचा बाँध बनाती है। इस बाँधसे २४०० मेगावाट विद्युत्-उत्पादन २७०,००० हेक्टेयर क्षेत्रकी सिंचाई और प्रतिदिन १०२.२० करोड़ लीटर पेयजल दिल्ली, उत्तरप्रदेश एवं उत्तरांचलको उपलब्ध कराना प्रस्तावित है। तीसरा प्रमुख बाँध 'भीमगोंडा बाँध' हरिद्वारमें स्थित है, जिसे सन् १८४० ई० में अँगरेजोंने गंगा नदीके पानीको विभाजितकर ऊपरी गंगा नहरमें मोड़नेके लिये बनवाया था। यह नहर हरिद्वारके भीमगोंडा नामक स्थानसे गंगा नदीके दाहिने तटसे निकलती है। प्रारम्भमें इस नहरमें जलापूर्ति गंगा नदीमें एक अस्थायी बाँध बनाकर की जाती थी। वर्षाकाल प्रारम्भ होते ही अस्थायी बाँध टूट जाया करता था तथा मानसून अवधिमें नहरमें पानी चलाया जाता था। इस प्रकार इस नहरसे केवल रबीकी फसलोंकी ही सिंचाई हो पाती थी। अस्थायी बाँध निर्माण स्थलके डाउनस्ट्रीममें वर्ष १९७८-१९८४ ई० की अवधिमें भीमगोंडा बैराजका निर्माण करवाया गया। इस बाँधके बन जानेके बाद ऊपरी गंगा नहर प्रणालीसे खरीफकी फसलमें भी पानी दिया जाने लगा।

इस प्रकार गंगा हमारे देशके लिये न केवल धार्मिक दृष्टिसे अपितु भौगोलिक एवं आर्थिक दृष्टिसे भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं, वे सम्पूर्ण राष्ट्रकी जीवन रेखा (Life Line) हैं।

[ख] गंगाके पौराणिक आख्यान

[१] राजा सौदास [कल्माषपाद]-पर गंगाजीकी कृपा

बृहन्नारदीय पुराणके गंगा-माहात्म्यमें एक कथा आती है। राजर्षि भगीरथके वंशमें सुदास नामक एक नरेश थे। समस्त धर्मोंके ज्ञाता एवं पवित्र मनवाले राजा 'मित्रसह' सुदासके पुत्र थे। मित्रसह अपनी प्रजाके पालनमें सदा तत्पर रहते थे। प्रजा उनके शासनमें प्रत्येक दृष्टिसे सुखी थी।

एक बारकी बात है, सौदास (राजा मित्रसह) अपने सैनिकोंके साथ आखेटके लिये वनमें गये। तृषाधिक्यसे वे रेवाके तटपर पहुँचे और मन्त्रियोंके साथ स्नान तथा भोजनादिसे निवृत्त हो उन्होंने वहीं रात्रि व्यतीत की।

दूसरे दिन नित्यकर्मसे निवृत्त होकर वे अपने मन्त्रियोंके साथ नर्मदातटवर्ती वनमें जानेके विचारसे इधर-उधर घूम रहे थे कि संयोगवश एक वनसे दूसरे वनमें प्रवेश करते समय वे अपने सैनिकों एवं सचिवोंसे बिछुड़ गये। वहाँ उन्होंने एक कृष्णसार मृग देखा। राजा मित्रसहने धनुषकी प्रत्यञ्चापर तीक्ष्ण शर रखा और उसे कानोंतक खींचकर उस मृगके पीछे दौड़ पड़े। अश्वारूढ़ नरेशने कुछ आगे जाकर गुफामें मैथुनरत व्याघ्र-दम्पतीको देखा। उन्होंने मृगकी चिन्ता छोड़ उक्त शर व्याघ्रीपर छोड़ दिया। व्याघ्रीके चीत्कारसे सम्पूर्ण वन-प्रान्त गूँज उठा।

उस समय एक आश्चर्यजनक घटना हुई। उक्त व्याघ्रीने भयानक राक्षसीका रूप प्रकट किया और वह छटपटाकर मृत्यु-मुखमें चली गयी।

'मैं तुमसे बदला लूँगा।' दुःखके आवेग एवं द्वेषाग्निमें जलते हुए उसके राक्षस पतिने कहा और वह वहीं अदृश्य हो गया।

राजा मित्रसह भयाक्रान्त हो गये। सैन्य-शिविरमें लौटकर वे मन्त्रियों तथा सैनिकोंसहित अपनी राजधानीको लौट आये और फिर उन्होंने आखेट खेलना ही बन्द कर दिया।

बहुत दिनों बाद धर्मपरायण नरेश मित्रसहने वसिष्ठ आदि महर्षियोंके साथ अश्वमेध यज्ञका अनुष्ठान किया। यज्ञ सविधि सम्पन्न होनेपर महर्षि वसिष्ठ यज्ञ-मण्डपसे बाहर चले गये और राजा मित्रसह भी अवभृथ स्नानकर वहाँसे चले आये।

'मैं मांस खाना चाहता हूँ।' उसी समय प्रतिहिंसाकी ज्वालामें झुलसते हुए उक्त राक्षसने महर्षि वसिष्ठके रूपमें राजाके समीप पहुँचकर कहा। इतना ही नहीं, उस द्वेषी राक्षसने रसोइयेके वेषमें मनुष्यका मांस बनाया और राजाको दे दिया।

महर्षि वसिष्ठके लौटनेपर धर्मात्मा नरेशने वह मांस सुवर्ण-पात्रमें अत्यंत आदरपूर्वक उनके सम्मुख उपस्थित किया।

'मूर्ख नरेश!' कुछ देरतक विचार करनेके अनन्तर नर-मांसका विश्वास होते ही क्रुद्ध होकर वसिष्ठजीने कहा—'तूने मुझे राक्षसोंका भोजन दिया है, अतएव तू इसे खानेवाला राक्षस हो जा।'

'महाराज! इसके लिये तो आपने ही आज्ञा प्रदान की थी।' भय-विह्वल नरेशके उत्तरसे वसिष्ठजीने दिव्य दृष्टिसे देखा तो उन्हें राक्षसका छल विदित हुआ।

'आपने मुझ निरपराधको कठोर दण्ड दिया है।' मित्रसह नरेशने दुःखावेशमें वसिष्ठजीको शाप देनेके लिये हाथमें जल उठा लिया।

'धर्मपरायण क्षत्रियनरेश! क्रोध शान्त कीजिये।' उसी क्षण मित्रसहकी साध्वी पत्नीने अपने पतिको रोकते हुए निवेदन किया—'आपको अपने अपकर्मका प्राप्तव्य

फल ही प्राप्त हुआ है। अब आप गुरुको शाप न दें, यह भयानक पाप होगा।'

'यह शापार्थ जल कहाँ फेंकूँ?' सहधर्मिणीके सत्परामर्शका सम्मान करते हुए राजाने कुछ देरतक विचार किया और फिर वह जल अपने पैरोंपर छोड़ दिया। उस जलके पड़ते ही उनके पैर चितकबरे हो गये। उसी क्षणसे वे राजा 'कल्माषपाद'के नामसे प्रख्यात हुए।

'भगवन्!' कल्माषपादने हाथ जोड़कर अत्यन्त आर्तस्वरमें गुरु वसिष्ठजीसे निवेदन किया—'आप कृपापूर्वक मेरे सारे अपराध क्षमा करनेका अनुग्रह करें।'

'राजन्!' पश्चात्ताप करते हुए दुखी मनसे वसिष्ठजीने उत्तर दिया—'तुम तो सर्वथा निर्दोष थे। मैंने ही विवेक खो दिया। यदि तुम मुझे शाप दे देते तो अच्छा ही करते। किंतु तुम्हें यह शाप केवल बारह वर्षतक ही लगेगा। इसके अनन्तर तुम परब्रह्मस्वरूपिणी गंगाजलकी बूँद पड़ते ही राक्षसी कायासे मुक्त होकर पुनः पूर्ववत् पृथ्वीका उपभोग करोगे।'

तद्बिन्दुसेकसम्भूतज्ञानेन गतकल्मषः।
हरिसेवापरो भूत्वा परां शान्तिं गमिष्यसि॥

(बृहन्नारदीय पु०, गंगा-माहा० २।४५)

'गंगाजलके अभिषेकसे तुम्हें ज्ञान प्राप्त होगा, तुम्हारे सारे पाप नष्ट हो जायँगे और तुम हरि-सेवाकर परम शान्ति प्राप्त करोगे।'

इतना कहकर महर्षि वसिष्ठ अपने आश्रमके लिये प्रस्थित हुए और राजा कल्माषपादकी भयानक काली आकृति हो गयी। वे निर्जन वनमें जाकर अत्यन्त क्षुधा-पिपासासे व्याकुल होकर निर्ममतासे मृग, मनुष्य, सर्प और बड़े-बड़े बन्दरोंको पकड़-पकड़कर खाने लगे। छः महीनेमें उक्त वनके समस्त प्राणियोंको खाकर वे दूसरे वनमें जाकर मनुष्योंका मांस खाने लगे।

इस प्रकार वे नर्मदाके तटपर पहुँचे, जहाँ ऋषियों एवं सिद्ध पुरुषोंके आश्रम थे। वहाँ राक्षसके रूपमें राजा कल्माषपादने अपनी प्रियतमाके साथ अंग-संग करते हुए एक मुनिको देखा। क्रोधोन्मत्त राक्षसने तुरंत उक्त मुनिको पकड़ लिया।

'राजन्! आप राक्षस नहीं हैं, आप सूर्यवंशोत्पन्न नरश्रेष्ठ मित्रसह हैं।' अत्यन्त भयभीत होकर ब्राह्मणी (मुनि-पत्नी)-ने विनयपूर्वक निवेदन किया। 'आप निष्ठुर कर्म न करें। मुझे वैधव्य न प्रदान करें। स्त्रीके लिये वैधव्यसे बड़ी विपत्ति और कुछ नहीं है। मैं माता-पिता एवं भाईसे रहित, छोटे बच्चेकी माँ हूँ। आप मुझपर और इस अनाथ शिशुपर दया करें।'

'राक्षस! तूने रतिमें आसक्त मेरे प्राणपतिको मार डाला।' ब्राह्मणी राक्षसके चरणोंपर गिर पड़ी थी; किंतु फिर भी निर्दय राक्षसने उसके पतिको आत्मसात् कर लिया। तब उसने कुपित होकर उसे शाप दे दिया, 'अतएव तू भी स्त्री-प्रसंगके अवसरपर कालके गालमें चला जायगा।'

ब्राह्मणीने एक और शाप दिया—'तूने मेरे जीवन-सर्वस्वको खा लिया है, अतएव तेरा राक्षसत्व भी अविचल रहेगा।'

'दुष्टे! मैंने एक ही अपराध किया था, किंतु तूने मुझे दो शाप दे दिये!' राक्षस (कल्माषपाद)-ने क्रोधोन्मत्त होकर कहा—'अतः तू भी अपने पुत्रसहित राक्षसी हो जा।'

उक्त शापके प्रभावसे ब्राह्मणी भी अपने पुत्रसहित राक्षसी हो गयी। वह पुत्रके साथ राक्षसी क्षुधासे व्याकुल होकर रोने लगी।

इस प्रकार शापोपहत वह राक्षस तथा सपुत्र राक्षसी क्षुधाकी ज्वालासे कष्ट पाते हुए पवित्र नर्मदाके तटपर स्थित एक बरगदके वृक्षके पास पहुँचे। उक्त वृक्षपर गुरुकी उपेक्षाके कारण एक राक्षस आसुरी शरीर प्राप्तकर कष्ट पाता हुआ निवास करता था।

'भयानक राक्षसो! तुम यहाँ क्यों आये? राक्षसत्रयको देखते ही उक्त वटवृक्षनिवासी राक्षसने अत्यन्त क्रुद्ध होकर पूछा। 'तुमलोगोंने कौन-सा भयानक पाप किया था, जिसके कारण तुम्हारी यह दुर्दशा हो रही है?'

'आप भी कृपापूर्वक बतलानेका कष्ट कीजिये कि आप कौन हैं।' सुदास-पुत्र मित्रसहने अपने तथा

ब्राह्मणीके अपराधोंको बतलाते हुए उससे पूछा। 'आपको यह दुर्गति क्यों भोगनी पड़ी है?'

'मैं पूर्वजन्ममें मगधवासी वेदज्ञ ब्राह्मण था।' ब्रह्मराक्षसने उत्तर दिया। 'मेरा नाम सोमदत्त था। एक बारकी बात है, मैं आशुतोष शिवकी पूजा कर रहा था। उसी समय मेरे गुरुजी आ गये। शिव-पूजामें संलग्न होनेके कारण मैंने उन्हें प्रणाम नहीं किया। मेरे द्वारा मन्त्रशास्त्रोक्त कार्य किये जानेपर मेरे अत्यन्त बुद्धिमान् और तेजस्वी गुरु प्रसन्न हुए, किंतु जगद्गुरु भगवान् शंकरने गुरुकी अवज्ञाके कारण क्रुद्ध होकर मुझे राक्षस बना दिया।'

अत्यन्त दुःखी राक्षसने आगे कहा—'मैंने अबतक सहस्रों ब्राह्मणोंको खा लिया है, किंतु क्षुधा-तृषाकी ज्वालासे निरन्तर छटपटाता ही रहता हूँ। भगवान् शंकरके इस दुस्सह शापसे पता नहीं, कब त्राण प्राप्त हो?'

'हमारा भोजन आ गया।' सहसा राक्षस और पिशाची एक ब्राह्मणको अपनी ओर आते देखकर दौड़ पड़े। ब्राह्मणदेवता कलिंगदेशके निवासी थे। गर्ग नाम था उनका। उन्होंने अपने कन्धेपर गंगाजल ले रखा था और वे मन-ही-मन विश्वाधार प्रभुका ध्यान करते हुए उनके मंगलमय नामका कीर्तन कर रहे थे। श्रीभगवन्नाम-कीर्तनके प्रभावसे राक्षस और पिशाची उक्त ब्राह्मणके समीप नहीं पहुँच सके।

'महाभाग्यशाली ब्राह्मण! आपके चरणोंमें हमलोग प्रणाम करते हैं।' राक्षसने उनसे विनयपूर्वक कहा। 'आजतक हमने सहस्रों, लाखों ब्राह्मणोंको खा डाला है, पर—

नामप्रावरणं विप्र रक्षति त्वां महाभयात्।
नामश्रवणमात्रेण राक्षसा अपि भो वयम्॥
परां शान्तिं समापन्ना महिम्ना ह्यच्युतस्य वै।

(बृहन्ना०, गंगा-माहा० ३। ६४-६५)

'हे ब्राह्मण! यह भगवन्नामका दुर्ग तुम्हारी महाभयसे रक्षा कर रहा है। हम सब यद्यपि राक्षस हैं, फिर भी भगवान्के नाम-श्रवणसे हमें भी परम शान्ति अनुभव हो रही है। अहो! भगवान् अच्युतकी महिमा अपार है।'

राक्षसने आगे कहा—'आप गंगाजलसे अभिषेककर हमें पापोंसे बचाइये।'

पृथिव्यां यानि तीर्थानि पवित्राणि द्विजोत्तम॥
तानि सर्वाणि गङ्गायाः कणस्यापि समानि न।
तुलसीदलसम्मिश्रमपि सर्षपमात्रकम्॥
गङ्गाजलं पुनात्येव कुलानामेकविंशतिम्।

(बृहन्ना० गंगा-माहा० ३। ७०—७२)

'हे द्विजोत्तम! इस पृथ्वीतलपर जितने भी तीर्थ हैं, वे सब गंगाके कणमात्रकी भी समानता नहीं कर सकते। तुलसीदल पड़ा हुआ सरसोंके बराबर भी गंगाजल इक्कीस पीढ़ियोंको तारनेवाला है।'

'अतएव दयामय ब्रह्मण्यदेव! गंगाजलका दानकर हम पातकियोंका उद्धार कीजिये।'

राक्षसोंके मुखसे निर्वाणजननी गंगाजीकी महिमा सुनकर दयालु ब्राह्मणने अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक तुलसी-दल-मिश्रित गंगाजल उनके ऊपर फेंका। भुवनपावन गंगाजलका तनिक-सा छींटा पड़ते ही पुत्रसमेत ब्राह्मणी और सोमदत्तका राक्षस-स्वभाव नष्ट हो गया और वे तेजस्वी देवस्वरूप हो गये। लक्ष्मीपति श्रीविष्णुकी भाँति उनके हाथोंमें शंख, चक्र, गदा और पद्म सुशोभित थे। उन्होंने अपने उद्धारक ब्राह्मणकी स्तुति की और परम पावन विष्णुलोकको चले गये।

उन राक्षसोंको शापमुक्त देखते हुए राजा कल्माषपाद वहीं दुखी मनसे खड़े थे। तब आकाशवाणी हुई—राजन्! दुःख और शोक त्याग दो। कर्मभोगके अनन्तर तुम्हारी भी मुक्ति हो जायगी।'

राजा मित्रसहको सन्तोष हुआ। उन्होंने कलिंगदेशीय ब्राह्मण (गर्ग)-को अपना सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनाकर उनके चरणोंमें प्रणाम किया, तदनन्तर अविमुक्तक्षेत्र वाराणसीपुरीको लौट आये। वहाँ उन्होंने श्रद्धापूर्वक छः मासतक गंगास्नान एवं काशी-विश्वेश्वरका दर्शन किया। इसके फलस्वरूप वे भी ब्राह्मणीके शापसे मुक्त हो गये। (श्रीशिवनाथजी दुबे)

[२] भगवती गंगाका 'विष्णुपदी' नाम पड़नेका आख्यान

धर्मकामार्थमोक्षप्रदा गंगाजीका एक नाम 'विष्णुपदी' है। ये पाप-ताप-निवारिणी परमपावनी जगन्माता विराट् विष्णुके महिमामय चरण-कमलोंसे प्रकट हुई थीं। यह कल्याणमयी कथा श्रीमद्भागवतादि पुराणोंमें विस्तारसे वर्णित है। कथा संक्षेपमें इस प्रकार है—

महर्षि कश्यपकी दो पत्नियाँ थीं—दिति और अदिति। दिति दैत्यजननी और अदिति देवताओंकी माता थीं। दोनोंकी सन्तानें एक-दूसरेको पराजित करनेके लिये सचिन्त रहती थीं। देवता दैत्योंके छोटे भाई थे। दितिके पुत्रोंमें सर्वप्रथम हिरण्यकशिपु नामक महाबली दैत्य हुआ। दैत्योंमें श्रेष्ठ भगवान् श्रीहरिके भक्त प्रह्लाद उसके पुत्र हुए। प्रह्लादके पुत्रका नाम था—विरोचन। वे ब्राह्मणोंके अनन्य भक्त थे। उनके अमिततेजस्वी एवं परम पराक्रमी पुत्रका नाम था—बलि। बलि दैत्यसेनाके अधिपति हुए। उन्होंने सम्पूर्ण भूमण्डलको अपने अधिकारमें कर लिया। फिर स्वर्गपर चढ़ दौड़े। दैत्यों और देवताओंमें आठ सहस्र वर्षोंतक भयानक संग्राम होता रहा। अन्ततः देवगण पराजित हुए और स्वर्ग त्यागकर भाग गये तथा मनुष्यके वेषमें पृथ्वीपर यत्र-तत्र निर्वाह करने लगे। परम पराक्रमी दैत्यराज बलि सर्वलोकमहेश्वर श्रीविष्णुकी चरण-शरण ग्रहणकर त्रैलोक्यका शासन करते हुए ब्राह्मणोंद्वारा देवताओंकी तुष्टिके लिये दिये गये समस्त यज्ञोंका हविष्य भी ग्रहण करने लगे।

इस कारण अत्यन्त दुखी होकर देवमाता अदिति हिमालयमें जाकर श्रीहरिका ध्यान करती हुई अत्यन्त कठोर तप करने लगीं। उन्हें अनेक दिव्य वर्षोंतक दुस्साध्य तपश्चरण करते देख मायावी दैत्योंने अनेक विघ्न उपस्थित किये, पर उनका कोई वश नहीं चला। माता अदिति अविचलित रहीं। अन्ततः भगवान् श्रीहरि उनके सामने प्रकट हुए।

'मैं तुम्हारी तपश्चर्या एवं आराधनासे प्रसन्न हूँ।' श्रीहरिने अपने कर-कमलोंसे माता अदितिको स्पर्शकर कहा। 'तुम निर्भय होकर वरकी याचना करो। तुम्हारा कल्याण निश्चित है।'

'सर्वव्यापक, देव-देवाधीश जनार्दन!' गद्गद कण्ठसे स्तुति करनेके अनन्तर महिमामयी महर्षि कश्यपकी प्राणवल्लभा अदितिने निवेदन किया—'मेरे पुत्र दैत्योंसे पीड़ित हैं। मैं दैत्योंका वध नहीं चाहती, वे भी मेरे पुत्र हैं। उनका संहार किये बिना आप मेरे पुत्रोंको राज्य-लक्ष्मी प्रदान कीजिये।'

'सौतके पुत्रोंके प्रति तुम्हारी वत्सलता देखकर मैं अत्यन्त प्रसन्न हूँ।' श्रीहरिने मधुर वाणीमें उत्तर दिया। 'जो अपने पुत्रोंके समान अन्यके पुत्रोंके साथ व्यवहार करता है, उसे पुत्र-शोक नहीं होता—यह सनातन धर्म है।* मैं तुम्हारा पुत्र बनूँगा। मेरा भक्त मुझे धारण करनेमें सदा समर्थ होता है। तुम निर्भय रहना।'

इतना कहकर दयानिधान प्रभुने माता अदितिको अपने कण्ठकी माला प्रदान की और वहीं अन्तर्हित हो गये। दक्षनन्दिनी देवमाता अदिति भी श्रीभगवान्‌के त्रिभुवनसुन्दर स्वरूपका स्मरण करती हुई अपने स्थानपर लौटीं।

अन्ततः परम मंगलमय अवसर उपस्थित हुआ। भाद्रपद मासके शुक्लपक्षकी द्वादशीके दिन चन्द्रमा श्रवण नक्षत्रपर थे। अभिजित् मुहूर्त चल रहा था। धरती, आकाश, तारागण, नक्षत्र एवं पवनादि सभी मंगलरूप एवं आह्लादजनक थे। उसी समय परम भाग्यशालिनी देवमाता अदितिके सम्मुख वामनरूपमें पीतकौशेयवासा, शंख-चक्र-गदा-पद्मधारी नीलघन प्रकट हुए।

हर्ष-विह्वल हो अत्यन्त श्रद्धापूर्ण हृदयसे महर्षि कश्यपने उनके चरणोंमें प्रणाम किया और उन मुनि-जन-वन्दित त्रैलोक्यनाथकी स्तुति करने लगे।

'सुरवन्दित! मैं प्रसन्न हूँ। तुम्हारा कल्याण हो।' भगवान् वामनने अपने माता-पितासे कहा। 'मैं पिछले दो जन्मोंमें भी तुम दोनोंका पुत्र हुआ था। उसी प्रकार इस जन्ममें भी तुम दोनोंको प्रत्येक रीतिसे सुख प्रदान करूँगा।'

* स्वात्मजे वान्यपुत्रे वा यः समत्वेन वर्तते। न तस्य पुत्रशोकः स्यादेष धर्मः सनातनः॥ (बृहन्ना० गंगोत्पत्ति० २। ४८)

उसी समय विरोचनपुत्र बलिने शुक्राचार्य एवं ऋषियोंके सहयोगसे सत्र नामक महान् यज्ञ प्रारम्भ किया। उस यज्ञमें ब्रह्मवादी ऋषियोंने हवि ग्रहण करनेके लिये लक्ष्मीसहित श्रीविष्णुका आवाहन किया। भक्तवत्सल वामनभगवान् अपने माता-पिताकी आज्ञा प्राप्तकर उक्त यज्ञमें पहुँचे। ज्ञानी ऋषियोंने तत्काल उठकर उन परम प्रभु वामनका सादर अभिनन्दन किया।

'प्रिय दैत्यराज!' दैत्यगुरु शुक्राचार्यने एकान्तमें बलिसे धीरेसे कहा—'ये वामन साक्षात् विष्णु हैं। तुम्हारी राज्यलक्ष्मीका हरण करने आये हैं। सावधान रहना।'

'गुरो!' बलिने अत्यन्त प्रसन्न होकर उत्तर दिया—'इसमें सावधान क्या होना है! दरिद्रावस्थामें अत्यल्प वस्तु भी जिन विष्णुको अर्पित करनेपर अक्षय हो जाती है, वे विष्णु साक्षात् मेरे यज्ञ-मण्डपमें पधारें—इससे बड़ा सौभाग्य और क्या होगा? उन्हींके प्रसन्नतार्थ तो मैंने इस यज्ञका अनुष्ठान किया है।'

उसी समय अमिततेजस्वी वामनभगवान्‌ने यज्ञकी प्रज्वलित अग्निसे सुशोभित यज्ञ-मण्डपमें पदार्पण किया। उनका दर्शन करते ही भाग्यवान् बलिने हाथ जोड़कर उनका स्वागत किया, श्रद्धापूर्वक प्रभुके देव-दुर्लभ चरण पखारे और वह पावनतम जल सपरिवार सिरपर धारण किया। इसके अनन्तर गद्‌गद वाणीसे स्तुति करते हुए परम सौभाग्यशाली प्रह्लाद-पौत्रने अत्यन्त विनयपूर्वक कहा—'आज मेरा जन्म, जीवन और यह यज्ञानुष्ठान सफल हो गया। मैं निस्सन्देह कृतार्थ हो गया।'

कृतार्थोऽस्मि कृतार्थोऽस्मि कृतार्थोऽस्मि न संशयः।
तस्मात्तुभ्यं नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं नमो नमः॥
त्वदाज्ञया त्वन्नियोगं साधयामीति मन्मनः।
अत्युत्साहसमायुक्तं समाज्ञापय मां प्रभो॥

(बृहन्ना० गंगोत्पत्ति० ३। ४६-४७)

'मैं निस्सन्देह कृतार्थ हो गया, कृतार्थ हो गया, कृतार्थ हो गया। इसलिये आपको बार-बार नमस्कार है, नमस्कार है। मेरे मनमें यही भावना है कि आपके आज्ञानुसार ही मैं आपका कार्य करूँ। प्रभो! अत्यन्त उत्साहित देखकर मुझे निस्संकोच आज्ञा दीजिये।'

'तपश्चरणके लिये मुझे तीन पग भूमिका दान कर दीजिये।' यज्ञमें दीक्षित बलिके आनन्दोल्लासपूर्ण वचन सुनकर निखिलपावन भगवान् वामनने अपनी इच्छा व्यक्त कर दी।

'मेरे वैभवपूर्ण इतने विशाल साम्राज्यके रहते आप यह क्या माँगते हैं?' बलिने साश्चर्य निवेदन किया। 'राज्य, नगर और अमित धन-रत्नादि माँगिये।'

'धर्मपरायण दैत्यराज!' सर्वथा निर्विकार परमप्रभु वामनने कहा—'यह सब कुछ मुझमें है। मुझे तो तप करनेके लिये केवल तीन पग भूमि दे दो।'

भक्ताग्रगण्य प्रह्लादके पौत्र बलिने पृथ्वी-दानके लिये जलपूर्ण कलश हाथमें लिया। दैत्यगुरु शुक्राचार्यने कलशकी जलधाराका अवरोध किया तो सर्वान्तर्यामी भगवान् वामनने उक्त कलशके छिद्रमें कुशाग्र प्रविष्ट कर दिया।

शुक्राचार्यका एक नेत्र नष्ट हो गया।

'शस्त्रतुल्य कुशाग्रकी तीक्ष्णता एवं इसका प्रभाव तो देखो।' शुक्राचार्य इतना कह ही रहे थे कि बलिने भगवान् वामनको पृथ्वी दान कर दी।

सर्वात्मा प्रभुने विराट् रूप धारण किया। उन विश्वात्मा श्रीविष्णुने अपने एक पगसे बलिकी सारी पृथ्वी नाप ली, शरीरसे आकाश और भुजाओंसे दिशाएँ घेर लीं, दूसरे पगसे उन्होंने स्वर्गको भी नाप लिया। भगवान्‌द्वारा उठाया हुआ दूसरा चरण महर्लोक, जनलोक और तपलोकसे भी ऊपर सत्यलोकमें पहुँच गया। उसके दर्शनकर देवगण सर्वपापतापहारी करुणामय प्रभुकी स्तुति करने लगे। कमलोद्भवने स्वयं विश्वरूप भगवान्‌के ऊपर उठे हुए चरणका अपने कमण्डलुके जलसे अत्यन्त श्रद्धा और भक्तिपूर्वक प्रक्षालन किया और पूजन किया।

धातुः कमण्डलुजलं तदुरुक्रमस्य
पादावनेजनपवित्रतया नरेन्द्र।

स्वर्धुन्यभून्नभसि सा पतती निमार्ष्टि
लोकत्रयं भगवतो विशदेव कीर्तिः॥

(श्रीमद्भा० ८।२१।४)

'परीक्षित्! ब्रह्माके कमण्डलुका वही जल विश्वरूप भगवान्‌के पाँव पखारनेसे पवित्र होनेके कारण उन गंगाजीके रूपमें परिणत हो गया, जो आकाशमार्गसे पृथ्वीपर गिरकर तीनों लोकोंको पवित्र करती हैं। ये गंगाजी क्या हैं, भगवान्‌की मूर्तिमान् उज्ज्वल कीर्ति।'

भुवनपावन श्रीविष्णुके चरण धोनेके कारण गंगाजी[१] 'विष्णुपदी' नामसे प्रसिद्ध हुईं। (शि०ना०दु०)

[३] गंगाके द्रवरूपमें आविर्भूत होनेकी कथा

ब्रह्मवैवर्तपुराणके प्रकृतिखण्ड और देवीभागवतके नवम स्कन्धमें परब्रह्मस्वरूपिणी विष्णुपदीके आविर्भावकी एक और बड़ी सुन्दर कथा है। आनन्दामृतस्वरूपा गंगाजीके पवित्रतम प्राकट्यका यह मनोहर वृत्तान्त भगवान् श्रीनारायणने अपने मंगलमय मुखारविन्दसे देवर्षि नारदको सुनाया था। उक्त पापप्रशमनी कथाका संक्षेप इस प्रकार है—

एक बारकी बात है, गोलोकमें कार्तिकी पूर्णिमाके दिन राधा-महोत्सव हर्षोल्लासपूर्वक मनाया जा रहा था। आनन्दघन श्रीकृष्ण राधाकी सविधि पूजाकर रासमण्डलमें विराजित थे। ब्रह्मादि देवगण तथा शौनकादि ऋषि अचिन्त्य शक्तिसम्पन्न राधाका पूजन कर वहीं विराजमान हो गये। उसी समय वीणापाणि सरस्वती वीणाकी मधुर स्वर-लहरीपर गीत गाने लगीं। भगवती भारतीका भुवनपावन अत्यन्त श्रुति-मधुर संगीत सुन लोकपितामह ब्रह्मा, देवाधिदेव महादेव, भगवान् श्रीकृष्ण, सर्वसार-समन्विता राधा, भगवान् नारायण, लक्ष्मी तथा अग्नि और पवनदेवने अत्यन्त प्रसन्न होकर उन्हें क्रमशः सर्वोत्तम रत्नोंसे निर्मित हार, दुर्लभ उत्तम मणि, कौस्तुभमणि, रत्नमय अनुपम हार, सुन्दर पुष्पमाला और बहुमूल्य रत्नोंके दो कुण्डल, चिन्मय वस्त्र और मणिमय नूपुर अर्पित किये। भगवती मूलप्रकृति[२]ने उनके अन्तःकरणमें अत्यन्त दुर्लभ परमात्मभक्ति उत्पन्न कर दी और धर्मने देवी सरस्वतीको धार्मिक बुद्धि और प्रपंचात्मक जगत्‌में स्थिर कीर्ति प्रदान की।

उसी समय लोकस्रष्टाकी प्रेरणासे पार्वतीवल्लभ भगवान् शंकर अत्यन्त मधुर स्वरसे रसोल्लासपूर्ण श्रीकृष्णसम्बन्धी सरस पदका गान करने लगे। उसे सुनकर देववर्ग मूर्च्छित-सा हो गया। बड़ी कठिनाईसे जब उनकी चेतना लौटी, तब वहाँ राधाकृष्णके स्थानपर

सम्पूर्ण रासमण्डलमें फैला हुआ जल-ही-जल दीखा। अपने प्राणधन राधाकृष्णके अदर्शनसे गोप, गोपी, देवता और ब्राह्मण—सभी आर्तस्वरसे विलाप करते हुए प्रार्थना करने लगे—'प्रभो! आप अपनी श्रीमूर्तिके हमें पुनः दर्शन करा दें।'

गोप, गोपीजन, ब्राह्मण एवं देवसमुदायकी करुण प्रार्थना सुनते ही सर्वान्तर्यामी सर्वान्तरात्मा भक्तवत्सल

१. ब्रह्मवैवर्तपुराणमें आया है कि 'विराट् प्रभुके उठाये हुए चरण-अंगुष्ठद्वारा स्पर्श होते ही ब्रह्माण्ड विदीर्ण होकर दो भागोंमें विभक्त हो गया और विष्णुभगवान्‌के चरणको प्रक्षालित करता हुआ लोकपावनकारी कारणार्णवका जल अनेक धाराओंमें बाहर बह निकला और ब्रह्मलोकमें आकर ब्रह्मादिक देवताओंको पवित्र करते हुए मेरुके शिखरपर गिरा।'

२. वे विष्णुमाया, ईश्वरी, दुर्गा, नारायणी और ईशाना नामसे प्रख्यात हैं।

प्रभुने आकाशवाणीके माध्यमसे मधुर स्वरमें अत्यन्त सुस्पष्ट कहा और उसे सबने सुना—'मैं सर्वात्मा श्रीकृष्ण और मेरी स्वरूपा शक्ति राधा—हम दोनोंने ही भक्तोंपर अनुग्रह करनेके लिये यह जलमय विग्रह धारण कर लिया है।' इसके अनन्तर करुणामय श्रीकृष्णने अपने दर्शनका मार्ग बतलाया। (शि०ना०दु०)

[४] गंगा और भगवान् विष्णुके विवाहकी कथा

गंगा लक्ष्मीपति श्रीविष्णुकी पत्नी हुई, यह कथा ब्रह्मवैवर्तपुराण और देवीभागवतमें आयी है। उक्त पावन कथाका सार इस प्रकार है—

पवित्रतम गोलोककी बात है, परब्रह्म परमेश्वर श्रीकृष्णके मंगलमय अंगोंसे प्रकट लावण्यामृतवर्षिणी गंगाके रत्नाभरणभूषित भुवनमोहन दिव्य अंगोंपर चिन्मय वस्त्र सुशोभित थे। वे सलज्जभावसे दिव्य-सौन्दर्यसार श्रीकृष्णके समीप विराजमान हो गयीं। वे नीलोत्पल श्यामसुन्दरके अपरिसीम रूप-लावण्यके दर्शनकर पुलकित हो रही थीं।

उसी समय असंख्य गोपियोंके साथ अनुपम-सौन्दर्यमयी राधा वहाँ आकर श्रीकृष्णके समीप सुन्दर रत्नमय सिंहासनपर विराजित हुईं। भगवान् श्रीकृष्ण उनसे प्रसन्नतापूर्वक मधुर वार्तालाप करने लगे।

परम मंगलमयी राधा रोषसे काँप रही थीं और उनके रागयुक्त सुन्दर अधर फड़क रहे थे। भयभीत गोपोंने उनके देवदुर्लभ पादपद्मोंमें प्रणाम निवेदनकर उनकी स्तुति की। श्रीकृष्णने भी उनका स्तवन किया। तीर्थमाता गंगाने भी उठकर उनकी स्तुति-प्रार्थना की और अत्यन्त विनयके साथ उनकी कुशल पूछी। कल्याणकारिणी गंगा मन-ही-मन भयभीत हो रही थीं। इस कारण भयवश नीचे खड़ी हो गयीं। उन्होंने अन्तर्मनसे श्रीकृष्णपदारविन्दकी शरण ग्रहण की। भक्तप्राणधन श्रीकृष्णने हृत्कमलमें तपोमयी श्रीगंगाको देखकर उन्हें अभय-दान किया।

परम प्रभुसे आश्वस्त होनेके अनन्तर त्रैलोक्यव्यापिनी गंगा परम तेजस्विनी राधाके परम मनोहर रूपको निहारने लगीं। वे दिव्यरत्नाभरणभूषिता राधाके नखमणि-चन्द्रिकासे लेकर पावनतम सीमन्ततक जिस मंगलमय लोकपावन श्रीअंगपर दृष्टि डालतीं, वहीं अतृप्त नेत्रोंसे देखती रह जातीं।

'प्राणेश्वर! आपके विकसित वदनारविन्दको मुसकराकर अपलक दृगोंसे निहारनेवाली यह कल्याणी कौन है?' उसी समय राधाने अत्यन्त मधुर वाणीमें भगवान् श्रीकृष्णसे पूछा। 'इसके हृदयमें मिलनेच्छाके भाव जाग्रत् हैं। आपकी अद्भुत सौन्दर्यराशिके दर्शनकर यह पुलकित ही नहीं, अचेत-सी होती जा रही है और आप भी इसकी ओर देखकर मधुर-मधुर मुसकरा रहे हैं। मैं नारी-जातिके मृदुल स्वभावके कारण प्रेमवश क्षमा कर देती हूँ।'

इसके अनन्तर रक्तोत्पलनयना राधाने गंगासे कुछ कहना चाहा, किंतु योगप्रवीणा त्रैलोक्यसुन्दरी गंगा राधाके मनोगत भावोंको जानकर तत्क्षण अन्तर्धान होकर अपने जलमें प्रविष्ट हो गयीं। राधा सिद्धयोगिनी थीं। यह रहस्य जानकर उन्होंने सर्वत्र विद्यमान उन जलस्वरूपिणी गंगाको अपनी अंजलिमें भरकर पीना प्रारम्भ कर दिया। रागद्वेषविनाशिनी गंगा पूर्ण सिद्धा थीं। राधाका अभिप्राय समझकर वे निखिलब्रह्माण्डपावन श्रीकृष्णकी शरणमें जाकर उनके अरुण चरणकमलोंमें लीन हो गयीं। श्रीकृष्ण-हृदय-हारिणी श्रीराधाने उन्हें गोलोक, वैकुण्ठलोक तथा ब्रह्मलोक आदिमें सर्वत्र ढूँढ़ा; किंतु वे कहीं नहीं दीख पड़ीं।

उस समय सर्वत्र जलाभाव हो गया। कीचड़तक सूख गये। ब्रह्माण्डके सम्पूर्ण जलचर तड़प-तड़पकर मृत्युमुखमें चले गये। तब ब्रह्मा, विष्णु, शिव, अनन्त, धर्म, इन्द्र, चन्द्रमा, सूर्य, मनुगण, मुनिसमाज, देवता, सिद्ध और तपस्वी—सभी गोलोकमें प्रकृतिसे परे श्रीकृष्णके समीप पहुँचे। सभीके कण्ठोष्ठ-तालु

सूख रखे थे। उन लोगोंने श्रीकृष्णके भक्तभयहारी चरणकमलोंमें श्रद्धापूर्वक प्रणामकर उनकी स्तुति की। इसके अनन्तर देवताओंकी प्रेरणासे चतुर्मुख ब्रह्मा परात्पर ब्रह्म भगवान् श्रीकृष्णके निकट गये। क्षीराब्धिशायी विष्णु उनके दायें और कैलासवासी शंकर उनके बायें स्थित थे। उस समय आनन्दघन श्रीकृष्ण एवं राधा—दोनों साथ ही विराजमान थे।

कमलोद्भव चतुरानन आश्चर्यचकित थे। उन्होंने अत्यन्त अद्भुत दृश्य देखा। सम्पूर्ण रासमण्डल श्रीकृष्णमय था। उसमें सभी समवय द्विभुज श्यामसुन्दर थे। मयूरपिच्छ सबके मस्तकपर सुशोभित था। पीयूषवर्षिणी मुरली सबके करकमलोंमें विद्यमान थी और सबके वक्षपर कौस्तुभमणि सुशोभित थी। विधाता सेवक-सेव्यका निर्णय नहीं कर सके।

क्षणार्धमें ही भगवान् श्रीकृष्ण तेज:स्वरूप हो जाते और क्षणार्धमें आसनासीन दीखते। लोकस्रष्टाने एक ही क्षणमें उनके निराकार और साकार दोनों रूपोंका दर्शन-लाभ किया। एक बार वे नवघनसुन्दर एकाकी और दूसरी बार अपनी प्रियतमा राधाके साथ प्रत्येक आसनपर आसीन दीखते। कभी श्रीकृष्ण राधा और कभी राधा श्रीकृष्ण बन जातीं।

चकित विधाताने अपने हृत्कमलस्थित श्रीभगवान्का ध्यान किया। उन्हें ध्यानमें श्रीभगवान्के दर्शन हुए। फिर तो पद्मयोनिने प्रभुकी श्रद्धा-भक्तिसे विह्वल होकर स्तुति की और परमप्रभुके आदेशसे उन्होंने अपने नेत्र बन्द कर लिये। तब उन्होंने भगवान् श्रीकृष्णको अकेले ही आसनपर विराजमान देखा। उनके वक्षपर राधा सुशोभित थीं। पार्षदों एवं गोपियोंसे घिरे श्रीभगवान्के दर्शन प्राप्तकर ब्रह्मादि देव-समुदायने प्रभुको प्रणामकर उनका स्तवन किया।

'ब्रह्मन्! आप गंगाको ले जानेके लिये पधारे हैं, यह मुझे विदित है।' सर्वात्मा, सर्वान्तर्यामी, सर्वभावन परब्रह्म परमेश्वर श्रीकृष्णने उपस्थित देवताओंका अभिप्राय समझकर कहा। 'किंतु इस समय उसने मेरे चरणोंमें आश्रय लिया है। राधाजी उसे पी जाना चाहती थीं। आपलोग पहले इसे पूर्णतया निर्भय करनेका यत्न करें, मैं आपलोगोंको इसे प्रसन्नतापूर्वक दूँगा।'

'महिमाशालिनी देवि!' चतुराननने सम्पूर्ण देवताओंके

साथ श्रीकृष्णपूजिता राधाकी स्तुति करनेके अनन्तर अत्यन्त विनम्रतासे निवेदन किया। 'गंगा आपके तथा भगवान् श्यामसुन्दरके ही श्रीअंगसे उत्पन्न होनेके कारण आपकी पुत्रीके तुल्य हैं। आपकी आराधनासे वैकुण्ठाधिपति श्रीहरि इसके पति होंगे। साथ ही अपनी एक कलासे ये भूमण्डलपर भी पधारेंगी। वहाँ श्रीभगवान्के अंश क्षीरसमुद्रको इनका पति होनेका सौभाग्य प्राप्त होगा।'

'माता!' विधाताने पुन: निवेदन किया—'गोलोककी ही भाँति इन्हें सर्वत्र रहना चाहिये।'

श्रीराधाने मुसकराते हुए पद्मयोनिकी सभी बातें स्वीकार कर लीं। तब आश्चर्यमूर्ति गंगा श्रीकृष्णके चरणके अँगूठेके अग्रभागसे निकलकर विराजित हुईं। श्रीहरिके चरणसे प्रकट होनेके कारण वे 'विष्णुपदी' कहलायीं। देवगण प्रसन्न हुए और सबने उनको सम्मान प्रदान किया। फिर जलस्वरूपा गंगासे उसकी अधिष्ठात्री देवी जलसे निकलकर परमशान्त विग्रहसे सुशोभित होने लगीं। लोकपितामह ब्रह्माने उस पावन जलको अपने कमण्डलुमें रख लिया और कर्पूरगौर भगवान् त्रिनयनने उन्हें अपने मस्तकपर धारण किया। इसके अनन्तर लोकस्रष्टाने गंगाको राधा-मन्त्रकी दीक्षा देकर उन्हें राधाके स्तोत्र, कवच, पूजा और ध्यानकी

विधि भी बता दी।

'ब्रह्मन्! आप गंगाको स्वीकार करें।' भगवान् श्रीकृष्णने विधाताके साथ महेश्वरादि देवगणोंको सम्बोधित करते हुए कहा। 'गोलोकमें कालचक्र नहीं चलता, इस कारण आपलोग, अन्य देवता, मुनिगण, मुक्त और सिद्धादि जो यहाँ उपस्थित हैं, वे ही जीवित हैं, अन्यथा कल्पान्तके कारण सम्पूर्ण सृष्टि प्रलयार्णवमें डूब गयी है। वैकुण्ठके अतिरिक्त सब जलमय है। आप जाकर ब्रह्मलोकादि तथा अपने ब्रह्माण्डकी रचना करें। इसके अनन्तर गंगा भी वहाँ जायगी। अब आपलोग शीघ्र पधारिये।'

इतना कहकर परमाराध्या राधाके सर्वस्व भगवान् श्रीकृष्ण अन्तःपुरमें चले गये और ब्रह्मादि देवगण वहाँसे लौटकर सृष्टि-रचनामें जुट गये।

जब सौभाग्यसुन्दरी गंगा वैकुण्ठमें चली गयीं, तब कुछ देरके अनन्तर विधाता भी उनके साथ ही वैकुण्ठमें पहुँचे।

'करुणामय प्रभो!' भगवान् श्रीनारायणके चरण-कमलोंमें श्रद्धापूरित प्रणाम करनेके अनन्तर कमलोद्भवने अत्यन्त विनम्र निवेदन किया—'ब्रह्मद्रवरूपिणी गंगा सत्त्वस्वरूपिणी एवं अमितसौन्दर्यशालिनी हैं। ये श्रीकृष्णके चरणोंसे प्रकट हुई हैं और उन्हें छोड़कर किसी अन्यको पतिके रूपमें वरण करना नहीं चाहतीं, पर तेजस्विनी राधाको यह सह्य नहीं।'

'सर्वाधार प्रभु!' विधाताने गंगापर राधा-रोषका वृत्तान्त सुनाते हुए आगे कहा—'परिपूर्णतम श्रीकृष्ण स्वयं दो भागोंमें विभक्त हुए। आधेसे तो द्विभुज श्रीकृष्ण बने रहे और उनका आधा अंग आपके चतुर्भुजरूप श्रीहरिके रूपमें प्रकट हो गया। इसी प्रकार भगवान् श्रीकृष्णके वामांगसे आविर्भूत श्रीराधा भी दो रूपोंमें परिवर्तित हो गयीं। दाहिने अंशसे तो वे स्वयं रहीं और उनके वामांशसे लक्ष्मी प्रकट हुईं। अतएव आपके ही श्रीअंगसे प्रकट ये महापुण्योदय-प्राप्या गंगा आपको ही पतिके रूपमें वरण करना चाहती हैं।'

इतना कहनेके अनन्तर लोकपितामह सौभाग्यमूर्ति गंगाको श्रीहरिके समीप बैठाकर वहाँसे चले गये। फिर तो स्वयं श्रीहरिने दिव्यातिदिव्य गंगाके साथ सोत्साह सविधि विवाह किया। शेषशायी श्रीविष्णु प्रणतार्तिभंजनी गंगाके प्रियतम पति बन गये। (शि०ना०दु०)

[५] लक्ष्मी, सरस्वती और गंगाका रोचक आख्यान

गतिभ्रष्टगतिप्रदा गंगाजी इस धराधामपर सरस्वतीके शापवश अवतरित हुई थीं, यह कथा ब्रह्मवैवर्तपुराण एवं देवीभागवतमें विस्तारपूर्वक आयी है। इसे भगवान् श्रीनारायणने देवर्षि नारदको सुनाया था। उसका संक्षेप इस प्रकार है—

लक्ष्मी, सरस्वती और गंगा—ये तीनों त्रैलोक्यपावनी देवियाँ भगवान् श्रीहरिकी भार्या हैं। एक बारकी बात है, शुभप्रदा सरस्वतीके मनमें संदेह उत्पन्न हुआ कि श्रीहरि उससे उतना प्रेम नहीं करते, जितना वे गंगाजीसे करते हैं। इस कारण उन्होंने अपने प्रियतम श्रीहरिके लिये कुछ निष्ठुर वचनोंका प्रयोग किया और गंगापर भी कुपित होकर उनके साथ कुछ कठोर व्यवहार करने लगीं।

'बहन! क्रोध त्याग दो।' शान्तस्वरूपा, क्षमामूर्ति लक्ष्मीने सरस्वतीसे निवेदन किया।

'तुम निश्चय ही वृक्षरूपा और नदीरूपा हो जाओगी।' गंगाकी पक्षपातिनी समझकर देवी सरस्वतीने लक्ष्मीको शाप दे दिया।

सरस्वतीका शाप सुनकर भी समुद्रतनया सर्वथा शान्त थीं। उनके मनमें तनिक भी क्रोध उत्पन्न नहीं हुआ, अपितु उन्होंने अत्यन्त प्रीतिपूर्वक सरस्वतीका हाथ अपने हाथमें ले लिया।

'बहन लक्ष्मी!' सरस्वतीने अत्यन्त निष्ठुरतासे तुम्हें

शाप दे दिया। परमपुण्यदायिनी गंगा सरस्वतीकी अनीति नहीं सह सकीं। उन्होंने तुरंत कहा—'ये सरस्वती भी नदीरूप होकर मर्त्यलोकमें जायँ, जहाँ पापीजन निवास करते हैं।'

'तुम्हें भी धरातलपर जाना होगा।' सत्त्वस्वरूपा सरस्वतीने तुरंत गंगासे कहा। 'तुम वहाँ पापियोंका पाप अंगीकार करोगी।'

उसी समय शङ्ख, चक्र, गदा एवं पद्म धारण किये चतुर्भुज प्रभु अपने चार पार्षदोंके साथ वहाँ पधारे। उन्होंने सरस्वतीको प्रेमपूर्वक अपने समीप बैठा लिया।

'लक्ष्मी!' दुखित पत्नियोंके कलह और शापका हेतु समझकर सर्वज्ञानसम्पन्न सर्वान्तर्यामी प्रभुने अपनी प्रियतमा समुद्रतनयासे कहा—''तुम अपनी कलासे पृथ्वीपर जाओ। वहाँ राजा धर्मध्वजके यहाँ स्वयं प्रकट हो जाना। कुछ दिनोंके बाद पुण्यभूमि भारतमें त्रैलोक्यपावनी 'तुलसी' के नामसे तुम्हारी ख्याति होगी। अभी तो तुम सरस्वतीके शापसे आर्यधरापर 'पद्मावती' नामक सरिता बनकर जाओ।''

'गङ्गे! तुम सरस्वतीका शाप चरितार्थ करनेके लिये अपने अंशसे पापियोंके पाप-ताप ध्वंस करनेके लिये विश्वपावनी सरिता बनकर भारतवर्षमें जाओ।' धर्मविग्रह श्रीहरिने दारिद्र्य-दमनी गङ्गाको आदेश दिया। ''राजा भगीरथके तपसे तुम्हें वहाँ जाना पड़ेगा। धरातलपर तुम 'भागीरथी' नामसे प्रख्यात होओगी। वहाँ मेरे अंश समुद्रकी पत्नी होना स्वीकार कर लेना।''

'भारती!' न्यायमूर्ति प्रभुने सरस्वती देवीसे कहा—'तुम गंगाके शापसे अपनी एक कलासे आर्यभूमिपर जाओ। तुम अपने पूर्ण अंशसे ब्रह्म-सदन जाकर उनकी कामिनी बन जाओ। ये गंगा अपने पूर्ण अंशसे शिवके यहाँ जायँ।'

भगवान् श्रीहरिने आगे कहा—'केवल लक्ष्मी अपने पूर्ण अंशसे यहाँ रह जायँ। इनमें क्रोधका सर्वथा अभाव है। ये सत्त्वस्वरूपा, परम शान्त एवं क्षमामूर्ति हैं। मुझमें इनकी अगाध प्रीति है।'

गंगा, लक्ष्मी और सरस्वती—तीनों परमपावनी देवियाँ परस्पर आलिंगनकर रोने लगीं। वे अपने परम प्रियतम श्रीहरिके वियोगकी कल्पनासे ही व्याकुल हो गयीं। सरस्वती और गंगाने सर्वेश्वर प्रभुसे पृथक्-पृथक् प्रार्थना की। लक्ष्मीने दुःख प्रकट करते हुए श्रीहरिके चरण पकड़ लिये तथा अपने सुचिक्कण काले केशोंसे श्रीहरिके चरणोंको आवेष्टितकर वे रोने लगीं।

'प्रभो! आप सत्त्वस्वरूप हैं।' रुदन करते हुए लक्ष्मीने कहा। ''सच्चरित्र पतिके लिये क्षमा ही धर्म है। मैं सरस्वतीके शापसे एक कलासे भारतवर्षमें जाऊँगी; पर वहाँ मुझे कितने दिनोंतक रहना होगा, पुनः मुझे आपके चरणोंके दर्शन कब होंगे? पापीजन मेरे जलमें स्नान एवं आचमनकर मुझे पापके बोझसे लाद देंगे, फिर मैं किस प्रकार निष्पाप होकर आपके त्रयतापहारी चरणोंके दर्शनका अधिकार प्राप्त कर सकूँगी? मैं अपनी एक कलासे 'तुलसी'-तरुके रूपमें भी धरतीपर वास करूँगी, पर आप मेरा उद्धार कबतक करेंगे?''

'सरस्वतीके शापसे गंगा भारत-धरापर जायँगी, फिर ये कबतक शापग्रस्ता रहेंगी?' लक्ष्मीदेवीने बार-बार प्रणाम करते हुए श्रीहरिसे आगे कहा। 'ये आपको कबतक प्राप्त कर सकेंगी? गंगाके शापसे सरस्वती कबतक मुक्त होंगी? सरस्वतीको ब्रह्म-सदन एवं गंगाको धूर्जटिके घर भेजनेके प्रश्नपर भी मैं आपसे क्षमाकी प्रार्थना करती हूँ। दयामय! आप हमपर दया करें।'

'कमलेक्षणे!' सौन्दर्य-सुधा-सिन्धु लक्ष्मीकी करुण

प्रार्थनासे श्रीहरि द्रवित हो गये। मुसकराते हुए उन्होंने

अत्यन्त मधुर वाणीमें लक्ष्मीसे कहा—"ये सरस्वती कलाके एक अंशसे सरिताके रूपमें भारतभूमिको पावन करें और एक अंशसे ब्रह्म-सदन पधारें। पूर्णांशसे स्वयं मेरे समीप रहें। इसी प्रकार गंगा भगीरथका सत्प्रयत्न पूर्ण करने तथा त्रिलोकीके पाप-ताप-शमनार्थ अपने कलांशसे भारत-धरापर जायँ। वहाँ इन्हें कर्पूरगौरके मस्तकपर निवास करनेका दुर्लभतम सुअवसर प्राप्त होगा। स्वयं पूर्ण अंशसे मेरे समीप निवास करें। तुम अपनी कलाके अंशांशसे आर्यधरापर जाओ। वहाँ तुम 'पद्मावती नदी' और 'तुलसी' के रूपमें निवास करो।"

(वर्तमान कल्पके अन्तिम) 'कलिके पाँच सहस्र वर्ष व्यतीत होनेपर तुम सरिता-स्वरूपिणी तीनों परमपावनी देवियोंका उद्धार हो जायगा और तुमलोग पुनः मेरे यहाँ आ जाओगी।' जगत्प्रभुने लक्ष्मीजीको समझाते हुए कहा। 'मेरे मन्त्रोंके उपासक कितने ही सन्त पुरुष तुम्हारे समीप स्नानादिके लिये आते रहेंगे। तुम उनके दर्शन और स्पर्शसे समस्त पातकोंसे मुक्त हो जाओगी।'

मद्भक्ता यत्र तिष्ठन्ति पादं प्रक्षालयन्ति च।
तत्स्थानं च महातीर्थं सुपवित्रं भवेद् ध्रुवम्॥

(ब्र०वै०पु०, प्रकृति० ६।९४)

'मेरे भक्त जहाँ रहते और अपने पैर धोते हैं, वह स्थान महान् तीर्थ एवं परम पवित्र बन जाता है—यह बिल्कुल निश्चित है।'

इसके अनन्तर लक्ष्मीके पूछनेपर श्रीहरि भक्तोंके लक्षण बताकर अपने आसनपर विराजमान हो गये और सरस्वती, गंगा तथा लक्ष्मी जगदाराध्य श्रीहरिके आज्ञानुसार कार्य करने लगीं। (शि०ना०दु०)

[६] सगरपुत्रोंके उद्धारके लिये गंगावतरणकी कथा

परित्राणपरायणा गंगाके इस भूतलपर अवतीर्ण होनेकी मंगलमयी कथा महर्षि विश्वामित्रने भगवान् श्रीरामको इस प्रकार सुनायी थी—'प्राचीन कालमें अयोध्याके सगर नामक प्रसिद्ध नरेश थे। उनकी ज्येष्ठ पत्नी विदर्भराजकुमारी केशिनी थी और उनकी दूसरी पत्नी अरिष्टनेमि कश्यपकी पुत्री तथा गरुड़की बहन थी। उसका नाम था सुमति।*

महाराज सगरके कोई पुत्र नहीं था। इस कारण वे अपनी दोनों पत्नियोंके साथ हिमालय पर्वतके भृगु-प्रस्रवण नामक शिखरपर जाकर तपस्या करने लगे। उन्हें तपश्चरण करते हुए सौ वर्ष व्यतीत हो गये। तब श्रेष्ठ महर्षि भृगुने प्रकट होकर केशिनीको वंश चलानेवाला एक पुत्र तथा सुमतिको उसकी इच्छाके अनुसार यशस्वी साठ सहस्र पुत्र होनेका वरदान प्रदान किया। प्रसन्न होकर महाराज सगरने महर्षिकी परिक्रमाकर उनके चरणोंमें प्रणाम किया और वे अपने नगरके लिये प्रस्थित हुए।

कुछ दिनों बाद महारानी केशिनीके गर्भसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ। उसका नाम था—'असमंज'। छोटी रानी सुमतिके गर्भसे तूँबीके आकारका एक गर्भपिण्ड उत्पन्न हुआ। उसके फाड़नेसे छोटे-छोटे साठ सहस्र बालक निकले। उन्हें दाइयोंने घृतकुम्भमें रखा और वे बड़ी सावधानीसे उनका पालन करने लगीं। कुछ दिनोंके अनन्तर राजा सगरके वे साठ सहस्र पुत्र अत्यन्त शूर-वीर तथा प्रभुता-सम्पन्न हो गये। किंतु असमंज अत्यन्त निर्मम एवं क्रूर निकला। वह नगरके बालकोंको पकड़कर सरयूके जलमें फेंक देता और जब वे डूबने लगते, तब उन्हें देखकर वह अत्यन्त प्रसन्नतासे अट्टहास करने लगता। उसके पापाचारसे त्रस्त प्रजाकी रक्षाके लिये महाराजने उसे निर्वासित कर दिया।

असमंजके एक पुत्र था। उसका नाम था अंशुमान्। वह प्रबल पराक्रमी, मधुरभाषी एवं प्रजापालक था। अंशुमान्से उसके माता-पिता, भाई-बन्धु तथा प्रजावर्ग—

* ब्रह्मवैवर्तपुराणमें राजा सगरकी दोनों पत्नियोंका नाम 'शैव्या' और 'वैदर्भी' लिखा है।

सभी संतुष्ट रहते थे।

कुछ दिनोंके अनन्तर वेदवेत्ता राजा सगर अपने उपाध्यायोंके साथ यज्ञानुष्ठानमें लग गये। महाराज सगरके आदेशानुसार यज्ञीय अश्वकी रक्षाका भार सुदृढ़ धनुर्धर महारथी अंशुमान्ने स्वीकार किया, किंतु पर्वपर सुरेन्द्रने राक्षसके वेषमें घोड़ेको चुरा लिया।

'ककुत्स्थनन्दन! आज पर्वके दिन कोई इस यज्ञसम्बन्धी अश्वको चुराकर तीव्रतासे भागा जा रहा है।' समस्त ऋत्विजोंने राजा सगरसे कहा।'आप यज्ञकी निर्विघ्न पूर्तिके लिये चोरको दण्डितकर घोड़ा वापस लाइये; अन्यथा वह हम सबके लिये अमंगलका हेतु होगा।'

'पुत्रो! यह महान् यज्ञ पवित्रतम अन्तःकरणवाले महात्माओंके द्वारा सम्पादित हो रहा है, अतः यहाँ राक्षसोंके आनेकी तो सम्भावना नहीं। यह अश्व चुरानेवाला कोई देवकोटिका पुरुष होगा। यज्ञमें दीक्षित होनेके कारण मैं तो स्वयं नहीं जा सकता और जबतक अश्व-दर्शन न हो, मैं ऋत्विजों एवं पौत्र अंशुमान्के साथ यहीं रहूँगा। अतएव पुत्रो! तुमलोग उक्त अश्वको ढूँढ़ लानेके लिये तुरंत चले जाओ और धरतीका कोना-कोना छान डालो।'—महाराज सगरने अपने पुत्रोंको आज्ञा प्रदान की।

महाराज सगरके साठ सहस्र श्रेष्ठ वीर पुत्र प्रसन्नतापूर्वक अश्वको ढूँढ़ने चले। उन्होंने सम्पूर्ण पृथ्वी छान डाली, पर अश्वका कहीं पता नहीं चला। तब महाबलशाली पुरुषसिंह राजपुत्रोंने प्रत्येक भागमें एक-एक योजन भूमिको बाँटकर अपनी भुजाओंसे धरतीको खोदना प्रारम्भ किया। उन राजकुमारोंकी कुदालोंके वज्र-तुल्य प्रहारसे असुर, राक्षस तथा अन्यान्य प्राणी व्याकुल होकर अपनी रक्षाके लिये इधर-उधर भागने लगे।

इस प्रकार समूची पृथ्वी खोदनेपर भी कहीं अश्वका पता नहीं लगा, तब निराश होकर सगर-पुत्रोंने अपने पिताके समीप पहुँचकर स्थिति स्पष्ट की। राजा सगरने अत्यन्त कुपित होकर अपने पुत्रोंसे कहा—'जाओ, पुनः समूची पृथ्वी खोदो। जैसे भी हो, यज्ञिय अश्व लेकर ही लौटना।'

पिताकी आज्ञा प्राप्तकर साठ सहस्र प्रबल पराक्रमी राजकुमार रसातलकी ओर बढ़े और अत्यन्त रोषके साथ वे पुनः पृथ्वी खोदने लगे। पूर्व दिशामें खुदाईके समय उन्हें पृथ्वीको धारण करनेवाला पर्वताकार दिग्गज विरूपाक्ष दिखायी दिया। उस महान् दिग्गजकी परिक्रमाकर उसे सम्मान प्रदान करते हुए राजकुमार आगे बढ़े। इस प्रकार उन्होंने रसातलकी खुदाईमें दक्षिण, पश्चिम और उत्तरमें क्रमशः महान् दिग्गजों महापद्म, सौमनस एवं हिमके समान श्वेत भद्रकी परिक्रमा की। फिर महाराज सगरके अमित पराक्रमशाली साठ सहस्र पुत्र अत्यन्त कुपित हो एक साथ पूर्वोत्तर दिशामें जाकर धरती खोदने लगे।

उस समय उनके हर्षकी सीमा नहीं थी, जब उन्होंने यज्ञिय अश्वको चरते हुए देखा। वहीं सनातन वासुदेवस्वरूप भगवान् कपिलको देखकर सगर-पुत्र अत्यन्त क्रुद्ध हो अपने शस्त्रोंसहित उनकी ओर दौड़े और धरतीके अन्यतम वीर साठ सहस्र सगर-पुत्र भगवान् कपिलको यज्ञमें विघ्न उपस्थित करनेवाला समझकर दुर्वचन कहने लगे।

'हुं!' सगर-पुत्रोंके वाग्बाणोंसे क्रुद्ध हो भगवान् कपिलके मुखसे निकल पड़ा और वीरवर साठ सहस्र
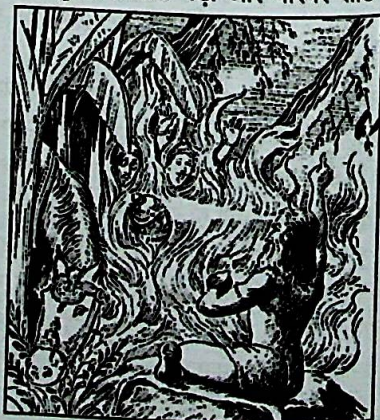
सगर-पुत्र उक्त ज्वालामें पतंगकी तरह क्षणार्द्धमें ही

भस्म हो गये।

कुछ समयतक अपने पुत्रोंका कोई संवाद न पाकर महाराज सगरने अपने वीर पौत्र अंशुमान्को उनका पता लगानेके लिये भेजा। असमंजकुमार अंशुमान् अपने चाचाओंके बनाये मार्गसे दिग्गजोंका दर्शन एवं उनका आशीर्वाद प्राप्त करते हुए वहाँ पहुँचे, जहाँ यज्ञिय अश्व चर रहा था और उन सबके भस्मकी ढेर पड़ी हुई थी। अपने साठ सहस्र चाचाओंके एक साथ मृत्युमुखमें चले जानेपर वीरवर अंशुमान् अत्यन्त दुःखसे फूट-फूटकर रोने लगे।

अंशुमान्ने उन्हें जलांजलि देनेके लिये इधर-उधर जलको खोजा, पर वहाँ कहीं कोई जलाशय नहीं दीखा। उसी समय उन्हें वायुवेगसे आते हुए सगर-पुत्रोंके मामा विनतानन्दनके दर्शन हुए।

'वीरवर अंशुमान्! तुम शोक मत करो।' आते ही गरुड़जीने कहा। 'ये राजकुमार भगवान् कपिलकी क्रोधाग्निसे भस्म हुए हैं। इनका अन्त धरित्रीके मंगलके लिये हुआ है। इनके लिये तुम्हें लौकिक जल देना उचित नहीं है। तुम अपने परम शूर-वीर चाचाओंका तर्पण हिमवान्की ज्येष्ठ पुत्री गंगाजीके पवित्रतम जलसे करो—

भस्मराशीकृतानेतान्　प्लावयेल्लोकपावनी।
तया क्लिन्नमिदं भस्म गङ्गया लोककान्तया।
षष्टिं पुत्रसहस्राणि स्वर्गलोकं गमिष्यति॥

(वा०रा०, बाल० ४१।२०)

'जिस समय लोकपावनी गंगा राखके ढेर होकर गिरे हुए उन साठ हजार राजकुमारोंको अपने जलसे आप्लावित करेंगी, उसी समय उन सबको स्वर्गलोकमें पहुँचा देंगी। लोककमनीया गंगाके जलसे भीगी हुई यह भस्मराशि इन सबको स्वर्गलोकमें भेज देगी।'

'महाभाग!' गरुड़जीने अंशुमान्से आगे कहा— 'अब तुम अश्वके साथ लौट जाओ और अपने पितामहका यज्ञ पूर्ण करो।'

'गरुड़के आदेशानुसार महातपस्वी अंशुमान् घोड़ेसहित तुरंत लौट आये। उन्होंने अपने पिताको सम्पूर्ण समाचार एवं गरुड़की बात भी सुना दी। वज्रपाततुल्य भयंकर संवाद सुनकर महाराज सगरने कल्पोक्त नियमके अनुसार अपना यज्ञ सविधि पूर्ण किया और वे अपनी राजधानीको लौटे।'

''त्रैलोक्यतारिणी विष्णुपदीको धरतीपर लानेके लिये महाराज सगरने बहुत विचार किया, किंतु वे किसी निर्णयपर नहीं पहुँच सके। तीस सहस्र वर्षोंतक राज्यकर ये स्वर्ग चले गये। उनके अनन्तर धर्मात्मा अंशुमान् राजा हुए। कुछ कालके उपरान्त उन्होंने अपने सुयोग्य पुत्र दिलीपको राज्यपर अभिषिक्त कर दिया और स्वयं हिमगिरिके रमणीय शिखरपर कठोर तपश्चरण करने लगे। बत्तीस सहस्र वर्षोंतक तप करनेके बाद अंशुमान्ने परलोककी यात्रा की।''

''महातेजस्वी दिलीप भी अपने पितामहोंकी सद्गतिके लिये सदा चिन्तित रहते थे, किंतु तीस सहस्र वर्षोंतक राज्यकर वे परलोकवासी हुए। वे अपने योग्यतम पुत्र भगीरथको राज्यपदपर अभिषिक्त कर चुके थे। नरेश भगीरथके कोई संतान नहीं थी। उन्होंने अपने पूर्वजोंकी सद्गतिकी चिन्तासे राज्यका भार मन्त्रियोंको सौंप दिया और स्वयं गंगाजीको धरतीपर ले आनेके लिये गोकर्ण तीर्थमें जाकर कठोर तपश्चरण करने लगे। महाराज भगीरथ अपनी इन्द्रियोंको वशमें रखकर अपनी दोनों भुजाएँ ऊपर उठाकर पंचाग्निका सेवन करते और एक-एक मासपर आहार-ग्रहण करते। इस प्रकार एक सहस्र वर्ष कठोर तप करनेपर अत्यन्त प्रसन्न होकर चतुरानन ब्रह्मा उनके सम्मुख उपस्थित हुए।''

'नरेश्वर! मैं तुम्हारे कठोर व्रतसे प्रसन्न हूँ।' सर्वलोक-पितामहने महाराज भगीरथसे कहा। 'तुम कोई वर माँगो।'

'प्रभो! यदि आप मुझपर प्रसन्न हैं तो मेरे पूर्वज महाराज सगरके साठ सहस्र पुत्रोंको मेरे हाथसे देवनदी गंगाजीका जल प्राप्त हो।' विधाताके सम्मुख हाथ

जोड़े महाराज भगीरथने वरकी याचना की। 'मेरे पितामहोंकी भस्मराशिपर गंगाजीका जल पड़नेपर उन्हें अक्षय स्वर्गकी प्राप्ति हो।'

'मैं सन्तानके लिये भी आपसे प्रार्थना करता हूँ।' महाराज भगीरथने कुछ रुककर निवेदन किया। 'मेरे द्वारा माँगा हुआ वर सम्पूर्ण इक्ष्वाकुवंशके लिये लागू होना चाहिये।'

'महाराज भगीरथ! तुम्हारा मनोरथ इसी रूपमें पूर्ण होगा।' अत्यन्त मधुर वाणीमें लोकस्रष्टाने भगीरथको वर देते हुए कहा। 'ये हिमगिरिकी ज्येष्ठ पुत्री हैमवती गंगाजी हैं। इनके गिरनेके वेगको पृथ्वी नहीं सह सकेगी। तुम इसके लिये त्रिशूलधारी भगवान् शंकरको प्रसन्न करो। उनके अतिरिक्त इनका वेग धारण करनेकी शक्ति मेरी दृष्टिमें किसीमें नहीं है।'

इतना कहकर ब्रह्माने दयामयी गंगासे भी भगीरथपर अनुग्रह करनेके लिये कहा और वे देवताओं तथा मरुद्गणोंके साथ स्वर्गके लिये प्रस्थित हुए। महाराज भगीरथ वहीं केवल अँगूठेके अग्रभागपर खड़े होकर देवाधिदेव महादेवकी उपासनामें लग गये। इस प्रकार एक वर्ष व्यतीत होनेपर सर्वलोकमहेश्वर पार्वतीवल्लभ भगवान् शंकर प्रकट हुए।

'नरश्रेष्ठ! मैं प्रसन्न हूँ।' आशुतोष उमानाथने महाराज भगीरथसे कहा। 'मैं हिमवान्की ज्येष्ठ पुत्री गंगादेवीको अपने मस्तकपर धारण करूँगा।'

''करुणामूर्ति पशुपतिकी स्वीकृति प्राप्त होते ही त्रैलोक्यपावनी सुरेश्वरीने विशाल रूप धारण किया और बड़े वेगसे कर्पूरगौर त्रिनयनके जटामण्डित पवित्रतम मस्तकपर गिरीं; किंतु वे जटामण्डलमें ही घूमती रह गयीं। पृथ्वीपर आनेके लिये प्रयत्न करनेपर भी वे नीलकण्ठके जटाजूटसे बाहर नहीं निकल सकीं। इस तरह कई वर्ष व्यतीत हो गये।''

भगवती गंगाको करुणामय शिवके जटाजालमें अदृश्य हुई देखकर महाराज भगीरथने पुनः तपस्या प्रारम्भ की। उस तपश्चरणसे भगवान् शंकर अत्यन्त प्रसन्न हुए। पृथ्वीका सौभाग्य उदय हुआ। भगवान् शंकरने गंगाजीको बिन्दुसरोवरमें छोड़ दिया। छूटते ही वे पवित्रतम सात धाराओंमें विभक्त हो गयीं।

ह्लादिनी पावनी चैव नलिनी च तथैव च।
तिस्रः प्राचीं दिशं जग्मुर्गङ्गाः शिवजलाः शुभाः॥
सुचक्षुश्चैव सीता च सिन्धुश्चैव महानदी।
तिस्रश्चैता दिशं जग्मुः प्रतीचीं तु दिशं शुभाः॥

(वा०रा०, बाल० ४३।१२-१३)

'ह्लादिनी, पावनी और नलिनी—ये कल्याणमय जलसे सुशोभित गंगाकी तीन मंगलमयी धाराएँ पूर्व दिशाकी ओर चली गयीं। सुचक्षु, सीता और महानदी सिन्धु—ये तीन शुभ धाराएँ पश्चिम दिशाकी ओर प्रवाहित हुईं।'

जगत्पावनी गंगाकी पवित्रतम सातवीं धवल धारा पृथ्वीपर उछलती, छलकती और सर्वत्र शीतलताका प्रसार करती हुई दिव्य रथपर आरूढ़ महातेजस्वी राजर्षि भगीरथके पीछे-पीछे चलने लगी। मृत्युलोकमें पापनाशिनी सुरसरिके अवतरणका दृश्य देखनेके लिये ऋषि, गन्धर्व, यक्ष और सिद्धगण एकत्र हो गये। देवगण वहाँ आश्चर्यचकित होकर खड़े थे। आकाश दर्शकोंके विमानोंसे आच्छादित हो गया।

अनाथवत्सला गंगाजीका पुण्यमय जल कभी ऊँची भूमिपर उठता और कभी नीचे गिरता था। उस समय गंगाजीके निर्मल एवं पवित्र जलकी बड़ी शोभा हो रही थी। ऋषि और गन्धर्व अहिभूषणके मस्तकसे अवतीर्ण होनेके कारण बड़ी ही श्रद्धासे गंगाजलसे आचमन करने लगे। जो शापके प्रभावसे आकाशसे धरतीपर आये थे, गंगाजलमें स्नान करते ही उनके पाप ध्वंस हो गये तथा वे अपने लोकोंमें पहुँच गये। उक्त पवित्र गंगाजलके दर्शनकर सभी आनन्दमग्न हो गये। गंगाजीमें स्नान करके सभी निष्पाप हो गये।

समस्त पापोंका समूल नाश करनेवाली पुण्यतोया

त्रिपथगा मार्गके जीवोंका परम कल्याण करती हुई राजर्षि भगीरथके पीछे-पीछे जा रही थीं। उस समय देवता, ऋषि, दैत्य, दानव, राक्षस, गन्धर्व, यक्षप्रवर, किन्नर, बड़े-बड़े नाग, सर्प तथा अप्सराएँ पतितपावनी गंगाजीके साथ-साथ अत्यन्त आनन्दपूर्वक चल रही थीं।

मार्गमें एक अद्भुत घटना घटित हुई। सुरसरि जिस मार्गसे जा रही थीं, उसी मार्गमें अद्भुत पराक्रमी राजा जह्नुकी यज्ञशाला थी। वे यज्ञ कर रहे थे। सर्वपापप्रणाशिनी गंगाकी प्रखर धारासे यज्ञशाला बह गयी, यह देखते ही महामना जह्नु क्रुद्ध हो गये और सुरसरिका सम्पूर्ण जल पी गये। यह आश्चर्यजनक दृश्य देखकर देवता, गन्धर्व तथा ऋषि महात्मा जह्नुकी स्तुति करने लगे। सामर्थ्यशाली, महातेजस्वी जह्नुने प्रसन्न होकर अपने कर्णछिद्रोंसे पुनः गंगाजीको प्रकट कर दिया—

'तस्माज्जह्नुसुता गंगा प्रोच्यते जाह्नवीति च॥'

(वा०रा०, बाल० ४३।३८)

'इसलिये गंगा जह्नुकी पुत्री एवं जाह्नवी कहलाती हैं।'

वहाँसे जाह्नवी राजर्षि भगीरथके पीछे-पीछे सागर-तटपर पहुँचीं और सगर-पुत्रोंका उद्धार करनेके लिये रसातलमें प्रविष्ट हुईं। वहाँ सगर-पुत्रोंकी भस्मराशिपर उनकी पावनतम धारा पड़ते ही वे सभी राजकुमार शापमुक्त हो स्वर्ग पहुँच गये।

'नरश्रेष्ठ! तुमने अपने शापग्रस्त साठ सहस्र प्रपितामहोंका उद्धार कर दिया।' उसी समय सर्वलोक-पितामहने वहाँ उपस्थित होकर महाराज भगीरथसे कहा। 'वे सभी देवताओंकी तरह स्वर्गमें प्रतिष्ठित रहेंगे।' और—

इयं च दुहिता ज्येष्ठा तव गङ्गा भविष्यति।
त्वत्कृतेन च नाम्नाथ लोके स्थास्यति विश्रुता॥
गङ्गा त्रिपथगा नाम दिव्या भागीरथीति च।
त्रीन् पथो भावयन्तीति तस्मात् त्रिपथगा स्मृता॥

(वा०रा०, बाल० ४४।५-६)

'ये गंगा तुम्हारी भी ज्येष्ठ पुत्री होकर रहेंगी और तुम्हारे नामपर रखे हुए 'भागीरथी' नामसे इस जगत्‌में विख्यात होंगी। त्रिपथगा, दिव्या और भागीरथी—इन तीन नामोंसे गंगाकी प्रसिद्धि होगी। ये आकाश, पृथ्वी और पाताल—तीनों पथोंको पवित्र करती हुई गमन करती हैं, इसलिये त्रिपथगा मानी गयी हैं।'

इसके अनन्तर लोकस्रष्टाने राजर्षि भगीरथसे कहा—'तुमने इस धरापर परमपावनी दिव्याको लाकर धर्मके आश्रयरूप महान् ब्रह्मलोकपर अधिकार कर लिया है। अब तुम अघहारिणी गंगामें स्नानकर अपने प्रपितामहोंका तर्पण करो। तुम्हारा कल्याण हो।'

चतुराननने ब्रह्मलोकके लिये प्रस्थान किया और राजर्षि भगीरथ अभीष्टार्थसिद्धिदा गंगाजीके परमपावन जलसे सभी सगर-पुत्रोंका विधिवत् तर्पण करके अपनी राजधानी लौट आये। अपने नरेशको पुनः पाकर अयोध्याके मन्त्री और प्रजावर्ग—सभी आनन्दित हुए।

महर्षि विश्वामित्र भगवान् श्रीरामसे कहते हैं कि 'यह गंगावतरणका मंगलमय उपाख्यान आयु बढ़ानेवाला है। धन, यश, आयु, पुत्र और स्वर्गकी प्राप्ति करानेवाला है। जो ब्राह्मणों, क्षत्रियों तथा अन्य वर्णोंके लोगोंको भी यह कथा सुनाता है, उसके ऊपर देवता और पितर प्रसन्न होते हैं। ककुत्स्थकुलभूषण! जो इसका श्रवण करता है, वह सम्पूर्ण अभीष्ट वस्तुओंको प्राप्त कर लेता है। उसके सारे पाप नष्ट हो जाते हैं और आयुकी वृद्धि एवं कीर्तिका विस्तार होता है।'* (शि०ना०दु०)

---

* धन्यं यशस्यमायुष्यं पुत्र्यं स्वर्ग्यमथापि च। यः श्रावयति विप्रेषु क्षत्रियेष्वितरेषु च॥
प्रीयन्ते पितरस्तस्य प्रीयन्ते दैवतानि च। इदमाख्यानमायुष्यं गङ्गावतरणं शुभम्॥
यः शृणोति च काकुत्स्थ सर्वान् कामानवाप्नुयात्। सर्वे पापाः प्रणश्यन्ति आयुः कीर्तिश्च वर्धते॥ (वा०रा०, बाल० ४४।२१—२३)

[७] गंगाका भीष्मजननी होनेका आख्यान

सुरेश्वरी गंगा करुणाकी मूर्ति हैं। सम्पूर्ण जीवोंके प्रति इनके रोम-रोममें दया भरी है। दयामयी माता गंगाने वसुओंकी प्रार्थनासे द्रवित होकर मानवी बनना भी स्वीकार कर लिया। वह प्रख्यात मंगलमयी कथा इस प्रकार है—

महाभारत आदिपर्वके सम्भवपर्वमें आया है—एक बारकी बात है, चतुर्मुख ब्रह्माजीकी सभामें देवगणोंके साथ सत्यवादी एवं सत्यपराक्रमी इक्ष्वाकुवंशोत्पन्न पुण्यात्मा नरेश महाभिष उपस्थित थे। उसी समय गंगाजी भी वहाँ आयीं। वायुके झोंकेसे उनका परम शुभ्र वस्त्र सहसा ऊपर उठ गया। देवताओंने तुरन्त अपना मुख नीचे कर लिया, किंतु महाभिष नरेश निश्शंक होकर गंगाजीकी ओर देखते ही रह गये। तब कुपित होकर ब्रह्माजीने उन्हें शाप दे दिया—'दुर्मते! तुम्हें मनुष्योंमें जन्म लेना पड़ेगा। तुम जिस गंगापर मुग्ध हो गये हो, वही तुम्हारे प्रतिकूल आचरण करेगी।' फिर दयामूर्ति लोकपितामहने कहा—'जब तुम्हें गंगापर क्रोध आ जायगा, तव तुम भी शापसे मुक्त हो जाओगे।'

महाराज महाभिषने वहुत सोच-विचारकर परम प्रतापी नरेश प्रतीपका पुत्र होना स्वीकार किया। समयपर महाराज प्रतीपकी सौभाग्यशालिनी पत्नीकी कुक्षिसे सूर्यतुल्य प्रकाशमान देवोपम पुत्र (राजा महाभिष)-ने जन्म लिया। शान्त पिताकी सन्तान होनेसे वे शान्तनु कहलाये।*

उधर राजा महाभिषकी अधीरताका चिन्तन करती हुई गंगाजी जा रही थीं कि उन्होंने वसुदेवताओंको मोहाच्छन्न और मलिनवेषमें स्वर्गसे नीचे गिरते हुए देखकर दयापूर्वक पूछा—'तुमलोगोंका दिव्यरूप कैसे नष्ट हो गया?'

वसुदेवताओंने देवनदी गंगाजीसे अपनी व्यथा-कथा बतायी—'एक दिन वसिष्ठजी वृक्षोंकी ओटमें संध्या-वन्दन कर रहे थे कि हमलोगोंने उनकी गायोंका अपहरण कर लिया। इससे क्रुद्ध होकर उन्होंने हमें मनुष्ययोनिमें जन्म लेनेका शाप दे दिया।'

"आप मानव-पत्नी होकर हमें पुत्ररूपमें उत्पन्न करें'—ब्रह्मवादी महर्षि वसिष्ठकी अमिट वाणीसे आकुल होकर वसुओंने गंगाजीसे प्रार्थना की। 'हमें मानुषी स्त्रियोंके उदरमें प्रवेश न करना पड़े, इतनी कृपा करें।"

'धरतीपर राजा प्रतीपके लोकविख्यात पुत्र शान्तनु हमारे पिता होंगे।' वसुओंने आगे कहा। 'त्रैलोक्यपावनी गंगे! मर्त्यलोकसे हमारी शीघ्र मुक्तिके लिये आप हमें जन्म लेते ही अपने पवित्र जलमें फेंक दें।'

'मैं ऐसा ही करूँगी।' करुणामूर्ति गंगाजीने कहा। 'किंतु राजाका मेरे साथ पुत्रार्थ किया सम्बन्ध व्यर्थ न हो, इसलिये उनके लिये एक पुत्रकी व्यवस्था तो होनी ही चाहिये।'

'हम सब लोग अपने-अपने तेजका अष्टमांश देंगे—वसुओंने अपनी भावी माता गंगाजीको आश्वस्त किया। 'उस तेजसे आपका पुत्र राजाकी इच्छाके अनुरूप होगा, किंतु वह पुत्र ब्रह्मचारी और परम पराक्रमी होगा।'

इसके अनन्तर वसुगण वहाँसे स्वेच्छया चले गये।

× × ×

कुछ दिनोंके बाद नरेश प्रतीपके पुत्र उत्पन्न हुआ। वह युवक होनेपर धर्मज्ञोंमें श्रेष्ठ एवं अद्भुत धनुर्धर हो गया। वेदाध्ययनमें उसकी उच्चतम स्थिति थी। उससे उसके पुण्यात्मा पिताने कहा—"शान्तनो! बहुत पहले तुम्हारे कल्याणके लिये मेरे पास एक दिव्य सुन्दरी स्त्री आयी थी। यदि वह तुम्हारे पास कभी आये, तो उससे तुम कौन हो? किसकी पुत्री हो? आदि कोई प्रश्न न करना। उसके किसी कार्यमें कोई प्रश्न तुम्हें नहीं करना चाहिये। यदि वह तुम्हें

* शान्तस्य जज्ञे सन्तानस्तस्मादासीत् स शान्तनुः। (महा०, आदि० सम्भव० ९७।१९)

स्वीकार करे तो तुम मेरी आज्ञासे उसे पत्नीके रूपमें स्वीकार कर लेना।''

इस प्रकारका उपदेश करके महाराज प्रतीप अपने अद्भुत धर्मपरायण योग्यतम युवक पुत्र शान्तनुको राज्यपर अभिषिक्तकर स्वयं तपश्चरणके लिये वनमें चले गये।

एक दिन शान्तनु पुण्यतोया गंगाजीके तटपर एकाकी विचरण कर रहे थे कि उन्होंने समुद्रतनया लक्ष्मीके समान एक अनुपमरूप-लावण्यसम्पन्न दिव्य सुन्दरीको देखा। नरेश उसे देखते ही मोहित हो गये। सुन्दरी भी उनकी ओर प्रेमपूर्ण दृष्टिसे देख रही थी। परम पुण्यमय शान्तनुने उस अनिन्द्य सुन्दरीसे कहा—'देवि! तुम दानवी, गन्धर्वी, अप्सरा, यक्षी, नागकन्या या मानवी कोई भी क्यों न हो, मैं तुम्हें पत्नीके रूपमें स्वीकार करना चाहता हूँ।'

परमसाध्वी गंगाने वसुओंको दिये वचनका स्मरणकर महाराज शान्तनुके समीप आकर कहा—'भूपाल! मैं आपकी महारानी बनूँगी। किंतु एक तो आप मुझे कभी कोई कटु वचन न कहें और मैं भला या बुरा जो भी करूँ, उसमें कभी व्यवधान उत्पन्न न करें। इस प्रकार मैं आपके अधीन रहूँगी; किंतु जिस दिन आपने मुझे किसी कार्यसे रोका या अप्रिय वचन कहा, उसी दिन मैं आपको त्यागकर चली जाऊँगी।'

'मुझे तुम्हारी शर्त स्वीकार है।' इतना कहकर अत्यन्त संयमी महाराज शान्तनु दिव्य सौन्दर्यकी सजीव मूर्ति गंगाको रथपर बैठाकर प्रसन्नतापूर्वक लौटे। अपने पिताके आदेशका स्मरणकर वे उनसे कभी कोई प्रश्न नहीं पूछते थे; किंतु गंगाके श्रेष्ठ शील-स्वभाव, सदाचार, सौन्दर्य, उदारता, सद्गुण तथा एकान्त सेवासे वे आप्यायित रहते थे। त्रिपथगामिनी दिव्यरूपिणी देवी गंगाकी प्रीतिमें कितने संवत्सर निकल गये, यह महाराज शान्तनुको पता भी नहीं चला।

कुछ दिनों बाद पुत्रदात्री गंगाके अंकमें अभिशप्त एक वसु आया। गंगाने उसे—'वत्स! मैं तुम्हें शापमुक्तकर प्रसन्न हो रही हूँ।' यह कहकर अपनी निर्मल धारामें डुबा दिया।

महाराज शान्तनु दुःखी हुए, पर सर्वथा मौन थे। इसी प्रकार जो-जो पुत्र उत्पन्न होता, दयामयी जाह्नवी उसे अपनी त्रैलोक्यपावनी धारामें डुबा देतीं। इस प्रकार सुरसरिने सात पुत्रों (वसुओं)-को अपने पवित्रतम जलमें डुबा दिया। नरेश अत्यन्त व्याकुल होनेपर भी चुप रह जाते। उन्हें उक्त लोकोत्तर देवीको छोड़कर चले जानेका भय बना रहता। किंतु आठवाँ पुत्र उत्पन्न होनेपर उसकी प्राण-रक्षाके लिये व्याकुलतासे अत्यन्त अधीर होकर महाराज शान्तनुने मुसकराती हुई गंगासे रोषपूर्वक कहा—

मा वधीः कस्य कासीति किं हिनस्सि सुतानिति।
पुत्रघ्नि सुमहत् पापं सम्प्राप्तं ते सुगर्हितम्॥

(महा०आदि०सम्भव० ९८। १६)

'अरी! इस बालकका वध न कर, तू किसकी कन्या है? कौन है? क्यों अपने ही बेटोंको मारे डालती है? पुत्रघातिनी! तुझे पुत्रहत्याका यह अत्यन्त निन्दित और भारी पाप लगा है।'

'मैं महर्षियोंद्वारा सेवित जह्नुपुत्री गंगा हूँ।' त्रिपथ-गामिनीने महाराज शान्तनुको उत्तर दिया। 'मैं आपके इस पुत्रको नहीं मारूँगी, परंतु अब मैं यहाँ रह भी नहीं सकती—यह पहले ही शर्त हो चुकी है। मैं अभिशप्त वसुओंके उद्धारके लिये यहाँ आयी थी, आपका यह पुत्र वसुओंके पराक्रमसे सम्पन्न होकर आपके वंशको यशस्वी करनेके लिये उत्पन्न हुआ है। मेरा यह पुत्र देवदत्त (देवव्रत) और गंगादत्त—इन दो नामोंसे प्रख्यात होगा। यह अभी शिशु है। बड़ा होनेपर आपके पास आ जायगा।'

गंगादेवी अपने पुत्रके साथ वहीं अन्तर्धान हो गयीं। यही गंगादत्त महाभारतके अद्भुतपराक्रमी बाल-ब्रह्मचारी पितामह भीष्म हुए। (शि०ना०दु०)

[८] सर्वान्तक व्याधकी कथा

[गंगाके दर्शनका फल]

पूर्वकालमें शबर जातिमें उत्पन्न सर्वान्तक नामका एक परम पापी, बलवान् तथा अत्यन्त क्रूर व्याध था। वह बहुतसे प्राणियोंको बलपूर्वक मारकर उनके मांस आदि बेचकर अपनी आजीविका चलाता था और अपने कुटुम्बका भरण-पोषण करता था। वह परायी स्त्रियोंके साथ व्यभिचार तथा पराये धनका हरण करता था। उस दुरात्माने कभी भी धार्मिक कृत्य नहीं किया। एक समयकी बात है उस व्याधने वनमें जाकर अनेकविध पशुओंका वध किया और फिर इधर-उधर घूमते-घामते गंगानदीके तटपर आकर स्नान किया। इसी बीच नृपश्रेष्ठ राजा चित्रसेन आखेट करनेके लिये उसी वनमें पहुँच गये। उन्होंने मांसका बोझा लेकर अपने पुरको जानेके लिये तत्पर उस सर्वान्तक नामक दुरात्मा व्याधको देखा। इसी समय महाबली राजा चित्रसेनने एक सुन्दर मृगको देख लिया और धनुषपर बाण चढ़ाकर उसकी ओर निशाना साधा। वह मृग अस्त्र छोड़नेके लिये उद्यत महान् ओजस्वी राजा चित्रसेनको देखकर बड़ी तेजीसे भागा, तभी राजाने बाण छोड़ दिया। हे मुनिश्रेष्ठ! उस बाणसे बिधा हुआ वह मृग खूनसे लथपथ होकर उस व्याधके पास आया। व्याधने राजाको नहीं देखा और उस व्याकुल मृगको देखकर व्याधने उसे रस्सीमें बाँधकर उठा लिया और राजाने उसे देख लिया। इसपर वे बलशाली राजा चित्रसेन क्रोधित हो गये और वहाँ आकर उन्होंने अनेक रस्सियोंसे उस पापात्मा व्याधको बाँध दिया। तदनन्तर उस पापी व्याधको तथा मृगको लेकर राजा चित्रसेन उत्तम घोड़ेपर सवार होकर अपने पुरकी ओर निकल पड़े। जाते समय राजाने नावपर चढ़कर गंगाको पार किया। उस समय सम्पर्कमें आ जानेसे व्याधने उन भगवती गंगाको देख लिया अर्थात् गंगाका दर्शन किया। तत्पश्चात् अपने पुर आकर अत्यन्त कुपित राजाने उस पापात्मा व्याधको कठोर कारागारमें डाल दिया। तब कुछ समय बीतनेपर वह सर्वान्तक नामक व्याध उसमें मर गया। इसके बाद यमदूत उसे रस्सियोंसे बाँधकर ले जाने लगे। ठीक उसी समय शिवकी आज्ञासे उन यमदूतोंको हराकर शिवदूत उस व्याधको शिवलोक ले गये। तदनन्तर शिवदूतोंसे पराजित उन यमदूतोंने धर्मराजके पास पहुँचकर शिवदूतोंने जो कुछ किया था, वह सब उनसे कह दिया। उसे सुनकर धर्मराजने महान् बुद्धिवाले चित्रगुप्तसे पूछा—'यह व्याध सर्वेश्वर शिवके सान्निध्यमें क्यों ले जाया गया? आप यह देखिये कि इसका कितना पुण्य है तथा कितना पाप है? क्योंकि पुण्य तथा पापके अलावा मैं कुछ भी नहीं देखता हूँ'। तब धर्माधर्मका विवेचन करनेवाले उन चित्रगुप्तने उस व्याधके द्वारा गंगाके सम्पर्कसे किये गये उत्तम, सभी पापोंका हरण करनेवाले तथा महापातकोंका विनाश करनेवाले पुण्यदायक दर्शनके विषयमें बता दिया। उसे सुनकर धर्मराज अत्यन्त आश्चर्यचकित हुए और गंगाको प्रणाम करके उन दूतोंसे यह बात कहने लगे।
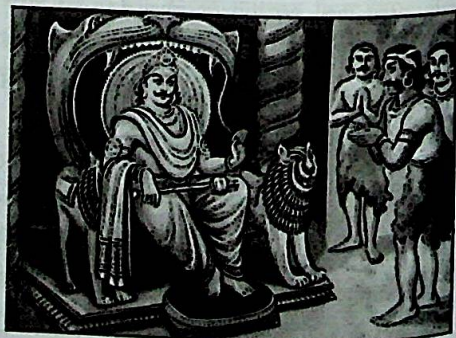
धर्मराज बोले—हे दूतो! जो लोग अति पावनी भगवती गंगाके सान्निध्यमें होकर उनका दर्शन करते हैं, वे सैकड़ों पापोंसे युक्त रहनेके बावजूद मेरे द्वारा कभी दण्डित नहीं किये जाते। पतितोंका उद्धार करनेवाली भगवती गंगाका जो एक बार भी स्मरण कर लेते हैं, वे सैकड़ों पापोंसे युक्त रहते हुए भी मेरे द्वारा कभी

दण्डित नहीं किये जाते। जो लोग उन द्रवरूपिणी गंगादेवीका निरन्तर ध्यान करते हैं, वे भी सैकड़ों पाप करनेके बावजूद भी मेरे दण्डनीय नहीं हैं। जो लोग उन भगवती गंगाका पूजन करते हैं तथा उनके जलमें अवगाहन करते हैं, वे लोग महापातकी होते हुए भी मेरे द्वारा कभी दण्डित नहीं होते। मैं स्वयं गंगामें देह-त्याग करनेवाले प्राणियोंकी आज्ञाके अधीन हूँ। वे लोग इन्द्र आदि देवताओंके लिये भी नमस्कारके योग्य हैं; तो फिर मेरे द्वारा उन्हें दण्डित करनेकी शंका ही कहाँसे हो सकती है। [महाभागवतपुराण]

[९] इन्द्रकी ब्रह्महत्यासे मुक्ति

[गंगास्नानका फल]

एक समय वज्रके द्वारा वृत्रासुरका वध करनेसे इन्द्रको ब्रह्महत्या लग गयी थी, तब उनको इसका बड़ा दुःख हुआ। इस प्रकार दुःखको प्राप्त हुए एक पर्वतपर चढ़कर मृत्युका निश्चय करके वहाँसे अपने शरीरको नीचे गिराना ही चाहते थे कि आकाशवाणी सुनायी दी—'इन्द्र! ऐसा दुःसाहस न करो, इस पातकसे शुद्ध होनेके लिये सावधान होकर उपाय सुनो। हाटकेश्वरक्षेत्रमें, जहाँ भगवान् शिव स्वयं विराजमान हैं, जाओ और वहाँ जिस बिलके मार्गसे नागलोग इस पृथ्वीपर आते-जाते हैं, उसी मार्गसे तुम भी पातालमें प्रवेश करो और वहाँ पातालगंगामें स्नान करके हाटकेश्वर महादेवकी पूजा करो। इससे तुम अवश्य ही पापसे मुक्त हो जाओगे।'

यह आकाशवाणी सुनकर इन्द्र शीघ्र ही उस क्षेत्रमें गये और नागबिलके मार्गसे पातालमें प्रवेश करके वहाँकी गंगामें स्नान किया। स्नानके पश्चात् हाटकेश्वर लिंगका पूजन किया। इससे क्षणमात्रमें उनका शरीर निर्मल हो गया और तेज बढ़ गया। इसी समय ब्रह्मा-विष्णु आदि सब देवता वहाँ आये और अत्यन्त प्रसन्न हो पापमुक्त इन्द्रसे इस प्रकार बोले—'देवराज! तुम ब्रह्महत्यासे मुक्त होकर परम पवित्र हो गये हो। अतः आओ, हम साथ ही स्वर्गलोकको चलें।' तदनन्तर सब देवता स्वर्गलोकको चले गये। इन्द्रको पुनः देवताओंका राज्य प्राप्त हुआ और स्वर्गमें वृत्रासुरके मारे जानेसे बड़ा भारी उत्सव मनाया गया।

[१०] गंगास्नानसे कुष्ठरोगसे मुक्ति

पूर्वकालमें चमत्कारपुरके भीतर गौओंका पालन करनेवाला एक ब्राह्मण था, जो कुष्ठरोगसे पीड़ित हो अत्यन्त दुर्बल हो गया था। किसी समय मार्गसे उसकी गौओंका झुण्ड जा रहा था। वे सभी गौएँ प्याससे कष्ट पा रही थीं। उस दिन ज्येष्ठमासकी एकादशी तिथिमें चित्रा नक्षत्रका योग था और मध्याह्नकाल हो गया था। यद्यपि वहाँ घास बहुत उगी थी, फिर भी गरमी और प्यासके कष्टसे किसी भी धेनुने उस घासकी ओर देखातक नहीं। उनमेंसे एक गौने दूरसे ही घासके उस पुंजको देखा और अत्यन्त हर्षमें भरकर तुरंत ही वहाँ जा दाँतोंसे उखाड़कर खींचा। इतनेमें ही उस घासके नीचेसे जलकी धारा निकल आयी। प्याससे कष्ट पाती हुई उस गायने घासको खाकर धीरे-धीरे दुग्धके समान स्वच्छ एवं मधुर प्रतीत होनेवाले उस जलको जी भरकर पीया। जब वह वेगपूर्वक जल पी रही थी, उसी समय पृथ्वीपर वहाँ जलसे भरे हुए अनेक लम्बे-चौड़े गड्ढे प्रकट हो गये। तदनन्तर दूसरी सैकड़ों गौओंने भी उस अत्यन्त निर्मल अमृतरसके समान मधुर जलका पान किया। जैसे-जैसे गौएँ आकर जल पीती थीं, वैसे-ही-वैसे उनके मुखके स्पर्शसे वे गड्ढे बढ़ते जाते थे। इस

प्रकार जब सभी गौओंने पानी पीकर प्यासको बुझा लिया, तब वह प्यासा गोपालक ब्राह्मण जलमें घुसा। अपने अंगोंको धोकर और जल पीकर ज्यों-ही वह जलसे बाहर निकला त्यों-ही अपने शरीरको उसने सूर्यके समान तेजस्वी देखा। इससे उसको बड़ा आश्चर्य हुआ और उसने घर जाकर सब लोगोंके सामने वहाँका सब वृत्तान्त कह सुनाया। तब वहाँके सब लोग, विशेषत: रोगी मनुष्य उस दिव्य जलके पास गये और सबने एकाग्रचित्त होकर वहाँ स्नान किया। स्नान करते ही सब लोग तत्काल रोगों और पापोंसे मुक्त हो गये। तबसे वह जल गोमुख-तीर्थके नामसे विख्यात हुआ; क्योंकि वह गौओंके मुखसे प्रकट हुआ था।

वास्तवमें वहाँ पूर्वकालमें महाराज अम्बरीषने तप किया था। तपस्याका कारण यह था कि राजाको वृद्धावस्थामें एक पुत्र हुआ। उसका नाम सुवर्चा था। पूर्वजन्मके कर्मके फलसे बाल्यावस्थासे ही राजकुमार सुवर्चा कोढ़ी हो गये। इससे राजाको बड़ा दु:ख हुआ। तब वे सब मनोरथोंको पूर्ण करनेवाले हाटकेश्वरक्षेत्रमें गये और पुत्रके रोगका निवारण करनेके लिये उन्होंने बड़ी भारी तपस्या की। इससे सन्तुष्ट होकर भगवान् विष्णुने उन्हें प्रत्यक्ष दर्शन दिया और आदरपूर्वक कहा—'वत्स! मैं तुमपर प्रसन्न हूँ, तुम्हारे मनमें जो इच्छा हो, उसे माँगो।'

राजाने कहा—केशव! मेरा पुत्र बाल्यावस्थामें ही कुष्ठरोगसे पीड़ित हो गया है। आप इसके रोगका निवारण करें।

उनके ऐसा कहनेपर भगवान् विष्णुने एकाग्रमनसे पातालगंगाका स्मरण किया। भगवान्‌के स्मरण करनेपर पातालगंगा एक छोटा-सा विवर बनाकर तत्काल ऊपर आ गयीं। तब श्रीहरिने राजासे कहा—'तुम्हारा पुत्र इस गंगाजलमें स्नान करे।' यह आज्ञा पाकर अम्बरीषने अपने उत्तम पुत्रको श्रीहरिके सामने ही पातालगंगाके जलमें नहलाया। वहाँ स्नान करनेमात्रसे ही बालक उसी क्षण कुष्ठ-रोगसे मुक्त हो बालसूर्यके समान तेजस्वी हो गया। तब उसने भगवान्‌को नमस्कार किया। इस बातको कोई जानता नहीं था, इसलिये वह सर्वपापहारी जल वहाँ गुप्त ही रहा और वही पुन: गोमुखद्वारा पृथ्वीपर प्रकट हुआ। [स्कन्दपुराण]

गंगा-ग़ज़ल

(श्रीरसूल अहमद 'सागर')

अपनी अज़्मत लिए जारी है हमारी गंगा
हमको जी जान से प्यारी है हमारी गंगा
हिन्दू-मुस्लिम को वफ़ा बख़्शती रहती यकसां
एकता की ही पुजारी है हमारी गंगा
पाक है नाम जो इसका तो ये पानी अमरित
इसलिये सबको दुलारी है, हमारी गंगा
कोई दरिया न हुआ आज तक इसका सानी
सारी दरियाओं पै भारी है हमारी गंगा
खुशनुमा फूल, ये परवत, ये सुहाने झरने
किस कदर वादे-बहारी है हमारी गंगा
हार किरनों के चढ़ाता इसे उगता सूरज
कैसी क़ुदरत को भी प्यारी है हमारी गंगा
छीन सकता नहीं हमसे इसे कोई 'सागर'
बस हमारी है हमारी है हमारी गंगा

[प्रेषक—श्रीराधेश्यामजी 'योगी']

[११] गंगाजीके सम्पर्कसे चण्डशर्माकी पाप-शुद्धि

पूर्वकालकी बात है। चमत्कारपुरमें उत्तम व्रतका पालन करनेवाले चण्डशर्मा नामसे विख्यात एक ब्राह्मण हो गये हैं, जो रूप और उदारता आदि गुणोंसे सम्पन्न थे। वे जब युवावस्थामें पहुँचे, तब किसी वेश्यामें आसक्त हो गये। एक समय आधी रातमें वे प्याससे व्याकुल होकर उठे तो उस वेश्यासे बोले—'प्रिये! मैं पानी पीना चाहता हूँ।' तब उस वेश्याने पानीके भ्रमसे उस निद्राकुल ब्राह्मणको मदिरासे भरा हुआ पुरवा लाकर दे दिया। मुखमें मदिरा जाते ही ब्राह्मण कुपित हो उठे और उस वेश्याको बार-बार धिक्कारते हुए कड़ी फटकार सुनाने लगे—'अरी पापिनी! तूने यह क्या किया। आज मदिरा पीनेसे मेरी ब्राह्मणता निश्चय ही नष्ट हो गयी; अतः मैं आत्मशुद्धिके लिये प्रायश्चित्त करूँगा।' ऐसा कहकर वे दुःखपूर्वक घरसे बाहर निकले और निर्जन वनमें जाकर करुणस्वरमें विलाप करने लगे। तत्पश्चात् प्रातःकाल होनेपर उन्होंने अपने शरीरके सब बाल बनवाकर वस्त्रसहित स्नान किया। तदनन्तर वे श्रेष्ठ ब्राह्मणोंकी सभामें गये और उन्हें प्रणाम करके बोले—'ब्राह्मणो! मैंने जलके धोखेसे मदिरा पी ली है, मुझे दण्ड दीजिये।' तब उन ब्राह्मणोंने बार-बार धर्मशास्त्रका विचार करके कहा—'ब्राह्मण यदि ज्ञान अथवा अज्ञानसे भी मदिरा पी ले तो मदिराके बराबर ही खौलता हुआ घी पी लेनेपर उसकी शुद्धि होती है; अतः यदि तुम आत्मशुद्धि चाहते हो तो यही प्रायश्चित्त करो।' 'बहुत अच्छा, ऐसा ही करूँगा' ऐसी प्रतिज्ञा करके ब्राह्मणने तत्काल घी लेकर उसे पीनेके लिये आगपर तपाया। इतनेमें ही यह समाचार सुनकर उनके पिता-माता भी आ पहुँचे और बोले—'यह क्या, यह क्या बेटा! तुम यह क्या करते हो?'

तब पुत्रने नेत्रोंसे आँसू बहाते हुए रातकी सब घटना कह सुनायी। यह सब सुनकर ब्राह्मण-दम्पतीने उन सब श्रेष्ठ ब्राह्मणोंसे प्रार्थना की, 'मेरे इस पुत्रको धर्मशास्त्रका विचार करके कोई दूसरा प्रायश्चित्त बताइये।' तब उन ब्राह्मणोंने पुनः आदरपूर्वक धर्मशास्त्रका विचार किया और इस प्रकार कहा—'ब्रह्मन्! धर्मशास्त्रमें तो कोई दूसरा उपाय नहीं है। तुम्हें जो उचित प्रतीत हो सो करो।' तब ब्राह्मणने पुत्रसे कहा—'बेटा! तीर्थयात्रा करो, फिर क्रमशः अनेक प्रकारका व्रत करनेसे पवित्रताको प्राप्त होओगे।'

पुत्र बोला—महाभाग! क्या ब्राह्मणोंका बताया हुआ प्रायश्चित्त पवित्रताके लिये पर्याप्त नहीं है, जो आप व्रत आदिका उपदेश करते हैं?

पुत्रका यह निश्चय जानकर पुत्रवत्सल पिता तथा उनकी सती पत्नीने भी मृत्युका निश्चय करके प्रसन्नतापूर्वक अपना सब कुछ ब्राह्मणोंको दान कर दिया। तब माताने कहा—'बेटा! जब हम दोनों अग्निमें प्रवेश कर जायँ, उसके बाद तुम मौंजीहोम (मरणान्त प्रायश्चित्त) करना।' ऐसा कहकर वे दम्पती प्रसन्नतापूर्वक मृत्युके लिये अग्निके समीप गये। उनके साथ ही उनका पुत्र भी था। इतनेमें ही वेदोंके पारंगत विद्वान् शाण्डिल्यमुनि तीर्थयात्राके प्रसंगसे उस स्थानपर आ पहुँचे और सारी बात सुनकर उन सब ब्राह्मणोंसे बोले—'अहो! तुम सब लोग अत्यन्त मूढ़ हो; क्योंकि तुम्हारे कारण सुगम प्रायश्चित्तके होते हुए भी आज ये तीन ब्राह्मण व्यर्थ ही मृत्युको प्राप्त हो रहे हैं। कृच्छ्र और चान्द्रायण आदि प्रायश्चित्त वहाँ दिये जाते हैं, जहाँ श्रीगंगाजी उपलब्ध न हों। यहाँ तो साक्षात् विष्णुपदी गंगा विद्यमान हैं; उसीमें यह स्नान करे तो पापसे शुद्ध हो जायगा।'

तब सब ब्राह्मणोंने शाण्डिल्यमुनिको साधुवाद देते हुए कहा—'मुने! आपका कथन सत्य है।' इसके बाद वे सब लोग ब्राह्मणको समझा-बुझाकर विष्णुपदी गंगाके तटपर ले गये। वहाँ ब्राह्मणने ज्यों-ही मुखमें गंगाजल डालकर कुल्ला किया, त्यों-ही वह शुद्ध हो गया। फिर जब वे उस शोभायमान जलमें स्नान करने लगे, उस समय स्पष्ट स्वरमें आकाशवाणी हुई—'विष्णुपदीका सम्पर्क होनेसे तथा उसके जलमें स्नान और आचमन करनेसे ब्राह्मणदेवता शुद्ध हो गये हैं; अतः अब वे अपने घर लौट जायँ।' यह सुनकर सब लोग हर्ष प्रकट करते हुए अपने-अपने घर चले गये। [स्कन्दपुराण]

[१२] धनाधिप वैश्यकी कथा

धनाधिप नामका एक महापापी वैश्य था। वह प्रतिदिन चोरीके काममें लगा रहता था और सदा परायी स्त्रियोंमें आसक्त रहता था। वह पापात्मा देह-त्यागकर यमराजके अधीन हो गया और यमराजने उसे असिपत्र नामक नरकमें ढकेल दिया। उसका बिना जला शरीर जंगलमें पड़ा रहा। भूखसे पीड़ित एक गीदड़ उस मृतदेहको खा रहा था। इसी बीच उस जंगलमें रहनेवाला एक गीधराज वहाँ आ गया और उसने उस गीदड़को वहाँसे भगा दिया तथा स्वयं उसे खाने लगा। अत्यन्त थके हुए उस गीधने गंगामें आकर जल पीया। उसकी चोंचपर लगा हुआ उस धनाधिपका मांस गंगाजलमें मिल गया। उस जलके स्पर्शमात्रसे वह पापी घोर पापसे मुक्त हो गया और शिवरूप होकर स्वर्ग चला गया। असिपत्र नरकमें स्थित उस पापीको वहाँसे जाते हुए देखकर वहाँके रक्षक धर्मराजके पास आकर यह वचन कहने लगे।

रक्षकगण बोले—हे प्रभो! आपने जिस पापीको असिपत्र नरकमें रखा था, वह तो साक्षात् शिवदेह प्राप्तकर स्वर्ग चला गया! यह सुनकर यमराजको महान् आश्चर्य हुआ। पुनः अपनी ज्ञानदृष्टिसे उसका कारण जानकर वे अपने रक्षकोंसे कहने लगे।

यमराज बोले—हे दूतो! गीदड़के द्वारा खाये गये मांसके गंगाजलसे स्पर्श हो जानेसे अत्यन्त पापी होनेपर भी वह (वैश्य) अकस्मात् मुक्त हो गया।

यह सुनकर यमदूतोंको बड़ा आश्चर्य हुआ और वे गंगाजलकी महिमाका स्मरण करते हुए अपने स्थानपर आ गये और शिव-सायुज्य प्राप्त करके स्वर्गलोकमें देवताओंके द्वारा स्तुत होता हुआ वह वैश्य सदाके लिये आनन्दित हो गया। इस प्रकार महापातकोंका नाश करनेवाली भगवती गंगाका जिस किसी भी प्रकारसे दर्शन या स्पर्श हो जानेपर वे मोक्ष प्रदान कर देती हैं। [महाभागवतपुराण]

गंगावतरणकी विभिन्न कथाएँ

(श्रीनवीनजी आचार्य, एम०ए०, बी०कॉम०)

समृद्ध भारतीय संस्कृतिकी पहचान माँ गंगा (त्रिस्रोता)-से है। माँ देशवासियोंकी धार्मिक, आध्यात्मिक आस्थाका केन्द्र हैं। ब्रह्म-विष्णु-रुद्ररूपा ये भगवती गंगा, अनेक ब्रह्माण्डोंका आधार और परा प्रकृति हैं। गंगाका जल धर्ममय है; क्योंकि इनका प्रादुर्भाव भगवान् विष्णुके चरणोंसे हुआ है। ये सम्पूर्ण संसारमें 'वैष्णवी' के नामसे भी प्रसिद्ध हैं। गंगा सम्पूर्ण जगत्‌की धात्री हैं, लोकमाता हैं। गंगाजल समस्त पापोंको जलाकर भस्म कर देता है। कलियुगमें गंगाजलका सेवन ही सर्वोत्तम है।

गंगाजीका अवतरण लोककल्याणहेतु हुआ है। ये मोक्षदायिनी हैं। माँ गंगाके स्मरणमात्रसे अन्तःकरण शुद्ध एवं हृदय निर्मल होता है। इनमें स्नान करनेसे प्राणी भवसागरसे पार होता है। गंगाजल अनेक ओषधियुक्त है, यह आरोग्य प्रदान करता है।

गंगाजी धरतीपर मोक्ष-प्राप्तिका स्थान हैं। गंगा त्रिपथगा, भागीरथी, त्रिस्रोता, मन्दाकिनी, विष्णुपदी, सिद्धगा, अलकनन्दा, स्वर्गा, स्वर्गगंगा, हेमवती, ऋषिकुल्या आदि रूपोंमें अति पवित्र, पुण्यसलिला नदी हैं। इनके तटपर पूर्वजोंका श्राद्धकर्म करनेपर पितर तृप्त होते हैं एवं उन्हें शान्ति प्राप्त होती है।

गंगाजीका धरतीपर अवतरण कैसे हुआ—इस सम्बन्धमें पुराणोंमें अनेक रोचक आख्यान प्राप्त होते हैं, जिनमें उनके धरतीपर आगमनका मुख्य हेतु लोककल्याण ही बतलाया गया है। यहाँ उनके धरतीपर अवतरणकी कतिपय कथाएँ दी जा रही हैं—

(१) श्रीगौतम ऋषिकी आराधनाके फलस्वरूप प्रकट हुई माँ गंगा (गौतमी गंगा)—

एक बारकी बात है, माता पार्वतीको गंगाजीके प्रति

सापत्यबुद्धि हो गयी और उन्होंने शिवजीसे कहा कि आप गंगाको अधिक महत्त्व देते हैं और उसे सिरपर बैठा रखा है, परंतु शिवने उनकी बातोंको सुना-अनसुना कर दिया। माताको शिवजीके इस व्यवहारसे बड़ी ठेस लगी। उन्होंने अपनी इस समस्याको पुत्र गणेशके समक्ष रखा और साथ ही यह भी कह दिया कि यदि गंगा इनकी जटाओंसे नहीं हटीं तो मैं तप करनेके लिये हिमालय चली जाऊँगी। वस्तुतः उस समय धरतीपर बारह वर्षका अकाल पड़ा था। गणेशजी तो बुद्धिके आगार ही हैं, उन्होंने तुरन्त समझ लिया कि जगज्जननीको अपनी अकालपीड़ित सन्तानोंपर करुणा हो आयी है, इसीलिये ये उनकी रक्षाहेतु गंगाजीको धरतीपर भेजना चाहती हैं, अन्यथा जगन्मातामें भला मात्सर्य और सापत्यभाव कहाँ? वे तो भगवान् शिवकी सदा अर्धांगिनी हैं। गणेशजीको समस्याके समाधानमें भला क्या देर लगती! उन्होंने तुरन्त समाधान सोच लिया कि इस कार्यमें मैं महर्षि गौतमको निमित्त बनाऊँगा, इससे उनकी महिमाका प्रकाशन तो होगा ही, साथ ही धरतीके प्राणियोंका भी हित होगा।

इस प्रकार गणेशजी मन-ही-मन समस्याके समाधानका निर्धारणकर कार्तिकेय और जयाको लेकर महर्षि गौतमके आश्रम ब्रह्मगिरिपर पहुँच गये। वहाँ पहुँचकर गणेश और कार्तिकेयने तो ब्राह्मणोंका वेश बनाया और वहाँ रहनेवाले अन्य ब्राह्मणोंमें शामिल हो गये तथा जया गोरूप धारणकर गोसमूहमें शामिल हो गयीं।

एक दिन विघ्नराज गणेशने लीला रची, उनके कथनानुसार जयाने दुर्बल गौका रूप धारण किया और महर्षि गौतमके धानके खेतमें जाकर उसे खाने और कुचलने लगी। यह देख गौतममुनि एक तिनकेसे उसे हाँकने लगे, तब वह मायारूपी गौ वहीं गिरकर मृतप्राय हो गयी। यह देखकर वहाँ रहनेवाले अन्य ब्राह्मण और ऋषि-मुनि हाहाकार करने लगे और कहने लगे—हे मुनिवर! अब हम आपके आश्रममें पूर्वकी भाँति नहीं रह सकते, अतः हमारा यहाँसे चले जाना ही उचित है।

इस पर विप्रवेशधारी गणेशजीने कहा—यह गौ न तो मरी ही है और न तो जीवित ही जान पड़ती है, अतः इस सन्देहपूर्ण स्थितिमें मैं इसके बचाव और आपके उद्धारका उपाय बताता हूँ।

गौतमजीने कहा—यह गौ जिस प्रकार उठ खड़ी हो और मेरे पापका प्रायश्चित्त भी हो जाय, मैं वह सब करनेको तैयार हूँ। आप उपाय बतलाइये।

इसपर गणेशजीने सब विप्रोंसे अनुमति लेकर कहा कि आप भगवान् भूतभावन सदाशिवके जटाकलापमें विहार करनेवाली भगवती गंगाको धरतीपर लाकर उनके जलसे इस गौको अभिषिक्त करें तो यह गौ उठ खड़ी होगी और आपका प्रायश्चित्त हो जायगा।

गणेशजीका यह वचन सुनकर गौतमऋषिने भगवान् शिवकी घोर तपस्या की। तपस्यासे प्रसन्न होकर भगवान् शिव प्रकट हुए एवं वर माँगनेको कहा।

गौतमऋषिने निवेदन किया कि भूमण्डलमें सर्वथा जलका संकट है। आप गंगा माँको धरापर जानेकी आज्ञा प्रदान करें। माँ आपके मस्तकपर विराजमान हैं। भूमण्डलका जल-संकट दूर करनेहेतु भगवान्ने माँ गंगाकी एक धाराको धरापर भेजा। इस प्रकार माँ गंगा धरापर अवतरित हुईं एवं माता पार्वतीका कार्य भी सफल हुआ। वे ही माँ गंगा धरापर गौतमी गंगाके नामसे प्रसिद्ध हुईं। [ब्रह्मपुराण]

(२) श्रीब्रह्माजीद्वारा माँ गंगा (स्वर्गगंगा)-को शाप—पूर्वमें अनेक विख्यात धर्मात्मा प्रसिद्ध चक्रवर्ती राजा हुए। उनमें इक्ष्वाकुवंशमें एक महाभिष नामक विख्यात राजा हुए। उन्होंने अनेक अश्वमेध यज्ञ किये, फलस्वरूप वह स्वर्गके अधिकारी बने।

एक समय प्रजापति ब्रह्माजीकी सेवाहेतु बहुतसे राजा गये थे, उनमें राजा 'महाभिष' भी गये थे, समस्त देवता भी वहाँ पधारे थे। उस समय गंगाजी भी पधारी थीं। अचानक बड़े वेगसे हवा चली, जिससे गंगाजीके वस्त्र इधर-उधर खिसक गये। समस्त देवताओंने गंगाजीपर दृष्टि न डालते हुए मस्तक झुका लिये, किंतु राजा महाभिष निर्भीकतापूर्वक गंगाजीको निहारते रहे एवं गंगाजी भी नरेशकी ओर निहारती रहीं। इसपर ब्रह्माजीको क्रोध आ गया। उन्होंने दोनोंके इस अपमानजनक कार्यहेतु शाप दिया कि तुम दोनों मृत्युलोकमें जाकर रहो। इस प्रकार ब्रह्माजीके शापके कारण माँ गंगाको भूमण्डलपर आना पड़ा। राजा महाभिष ही महाराज शान्तनु हुए, जो समुद्रके अंशसे अवतरित हुए थे।

देवनदी भगवती गंगा उनकी पत्नी बनीं। देवव्रत (भीष्म पितामह) इन्हीं देवी गंगाके पुत्र थे। [महाभारत]

(३) श्रीहरिका माँ गंगा (विष्णुपदी)-को आदेश—माता श्रीलक्ष्मी, सरस्वती एवं गंगाजी तीनों भगवान् श्रीहरिकी भार्या हैं। बहुपत्नी होनेपर आपसमें विवाद, शंका-कुशंका, सन्देहात्मक दृष्टि सम्भव होती ही है। सरस्वतीजीको सन्देह होता था कि श्रीहरि मेरी अपेक्षा गंगाजीको अधिक प्रेम करते हैं, अतः उन्होंने श्रीहरिके समक्ष कड़े शब्दोंमें इसका विरोध प्रकट किया। माता लक्ष्मीने सरस्वतीको समझानेका प्रयत्न किया, परंतु आवेशमें आकर लक्ष्मीजी एवं गंगाजी दोनोंको सरस्वतीजीने शाप दे दिया। माँ गंगाको शाप दिया कि तुम्हें धरापर जाना पड़ेगा एवं पापियोंके पापको अंगीकार करना पड़ेगा। गंगाजीने भी सरस्वतीजीको मृत्युलोकमें नदी बननेका शाप दे दिया।

श्रीहरिने तीनोंके वार्तालापको सुननेके पश्चात् माँ गंगासे कहा—'हे गंगे! तुम सरस्वतीके शापके कारण पापियोंका पाप भस्म करने धरापर जाओ, राजा भगीरथकी तपस्यासे उनके द्वारा धरातलपर ले जायी गयी तुम 'भागीरथी' नामसे प्रसिद्ध होओगी। गंगे! तुम नदीरूपमें भारतवर्षमें रहोगी एवं मेरे अंशरूपमें उत्पन्न समुद्र (शान्तनु) तुम्हारे पति होंगे। पुण्यात्मा भक्त तुम्हारे जलमें स्नान करेंगे, जिससे तुम्हारा जल पापमुक्त होता रहेगा। तदनुसार श्रीहरिके आदेशानुसार लक्ष्मीजी, सरस्वतीजी एवं गंगाजी धरतीपर अवतरित हुईं एवं भूमण्डलको आप्लावित किया। [श्रीमद्देवीभागवतपुराण]

(४) भगवान् विष्णुके वामन अवतारसे माँ गंगा (विष्णुपदी)-का अवतरण—शास्त्रोंमें वर्णित कथानुसार भगवान् विष्णुने राजा बलिके यज्ञके समय 'वामन अवतार' धारण किया और राजा बलिसे तीन पग पृथ्वी माँगी। राजा बलिने जब दानके लिये संकल्प कर दिया तब भगवान् विष्णुने अपना विराट् रूप प्रकट किया। पृथ्वी, आकाश, दिशाएँ, स्वर्ग, पाताल, समुद्र, पशु-पक्षी, मनुष्य, देवता और ऋषि—सब-के-सब उसीमें समा गये। उन्होंने एक पगसे बलिकी सारी पृथ्वी नाप ली, शरीरसे आकाश और भुजाओंसे दिशाएँ घेर लीं, दूसरे पगसे उन्होंने स्वर्गको भी नाप लिया। तीसरा पैर रखनेके लिये बलिकी तनिक-सी भी कोई वस्तु न बची। भगवान्का वह दूसरा पग ही ऊपरकी ओर जाता हुआ महर्लोक, जनलोक और तपलोकसे भी ऊपर सत्यलोकमें पहुँच गया। उस समय पितामह ब्रह्माने अगवानी करनेके बाद विश्वरूप भगवान्के

ऊपर उठे हुए चरणका अर्घ्य-पाद्यसे पूजन किया, प्रक्षालन किया। पूजा करके बड़े प्रेमसे उन्होंने भगवान्‌की स्तुति की। ब्रह्माके कमण्डलुका वही जल विश्वरूप भगवान्‌के पाँव पखारनेसे पवित्र होनेके कारण उन गंगाजीके रूपमें परिणत हो गया, जो आकाशमार्गसे पृथ्वीपर गिरकर तीनों लोकोंको पवित्र करती हैं। ये गंगाजी भगवान्‌की मूर्तिमान् उज्ज्वल कीर्ति हैं—

धातुः कमण्डलुजलं तदुरुक्रमस्य
पादावनेजनपवित्रतया नरेन्द्र।
स्वर्धुन्यभून्नभसि सा पतती निमार्ष्टि
लोकत्रयं भगवतो विशदेव कीर्तिः॥

[श्रीमद्भागवत]

(५) समस्त देवताओंके अंगसे उत्पन्न हुई गंगा (देवनदी)—एक बार भगवान् लक्ष्मीनारायण अपने निवास वैकुण्ठधाममें विराजमान थे। इन्द्रादि समस्त देवता, मुनि, आदित्य, वसु, रुद्र, मनु, सिद्ध, चारण आदि भी वहाँ उपस्थित थे। लोकपितामह ब्रह्माजी भी भगवान् नारायणके पार्श्वमें विराजमान थे, उसी समय वृषभराज नन्दिकेश्वरपर आरूढ़ होकर भगवान् शंकर भी वहाँ आये। उनके हाथमें रत्नसारनिर्मित एक स्वरयन्त्र था। उन्होंने नन्दीसे उतरकर भगवान् कमलाकान्तको प्रणाम किया और उनके वामभागमें रखे एक उत्तम आसनपर बैठ गये, उस समय उनके सारे अंग पुलकित हो रहे थे। समस्त देवताओंने सिर झुकाकर उन्हें प्रणाम किया। तदनन्तर स्वरयन्त्र लिये

भगवान् शंकरने सुमधुर तालस्वरके साथ संगीत आरम्भ किया, जिसमें भगवान् श्रीकृष्ण और भगवती राधाजीके गुणों एवं राससम्बन्धी लीलाका वर्णन था। वह संगीत स्वयं भगवान् शिवद्वारा निर्मित और लोकदुर्लभ था। उस समय भगवान् शंकरके समस्त अंगोंमें रोमांच हो रहा था, उनके नेत्रोंसे बारम्बार अश्रु प्रवाहित हो रहे थे। उस संगीतको सुननेमात्रसे मुनि तथा देवता मूर्च्छित एवं बेसुध हो द्रव (जल)-रूप हो गये। श्रीहरिके पार्षदों तथा ब्रह्माजीकी भी यही दशा हुई। भगवान् नारायण, लक्ष्मी तथा गान करनेवाले स्वयं शिव भी द्रवरूप हो गये। उस समय वैकुण्ठको जलपूर्ण देख भगवान् श्रीकृष्णने वहाँ जाकर उन देवताओं-मुनियों आदिके शरीरोंका पूर्ववत् निर्माण किया। तदनन्तर उस जलराशिके लिये वैकुण्ठके चारों ओर स्थान बनाया, फिर उसकी अधिष्ठात्री देवी गंगा अपने उस वासस्थानमें आयीं।

समस्त देवताओंके शरीरोंसे उत्पन्न हुई वह दिव्य जलराशि ही देवनदी गंगाके नामसे प्रख्यात हुई।

[ब्रह्मवैवर्तपुराण]

(६) महातपस्विनी अनसूयाके तपका फल प्रदान करनेहेतु अवतरित माँ गंगा (मन्दाकिनी)—एक बार सौ वर्षकी अनावृष्टिसे अकाल पड़ गया। सबको दुखी न देख सकनेके कारण अत्रिजीने समाधि

लगा ली। श्रीअनसूयाजी उनकी सेवामें अन्न-जलादिका त्यागकर वहीं उपस्थित रहीं। दोनोंका कठिन तप देखकर देवता, ऋषि और गंगाजी उनके दर्शनको आये, सबके चले जानेपर गंगा और शिवजी वहीं ठहर गये। गंगाने सोचा कि यदि मैं ऐसी महासतीका उपकार कर सकूँ तो मेरे बड़े भाग्य हैं। ५४ वर्ष बीतनेपर महर्षिने समाधि छोड़ी और अनसूयाजीसे जल माँगा। वे कमण्डलु लेकर निकलीं और चिन्ता करने लगीं कि कहाँसे स्वामीके लिये जल लाकर उन्हें सन्तुष्ट करूँ। गंगाजीने मूर्तिमान् होकर दर्शन दिया और पूछनेपर बताया कि तुम्हारी तपस्यासे प्रसन्न होकर मैं आयी हूँ, तुम जो माँगो वही मैं दूँ। अनसूयाजीने जल माँगा। गंगाजीने गड्ढा खोदनेको कहा। गड्ढा खुदनेपर गंगाजी उसमें उतरकर जलरूप हो गयीं। श्रीअनसूयाजीने जल लिया और प्रार्थना की कि जबतक मेरे स्वामी यहाँ न आ जायँ, तबतक आप यहीं उपस्थित रहें। वे जल लेकर गयीं, महर्षिने जल पीकर पूछा कि यह दिव्य स्वादिष्ट जल कहाँ मिला? सारा वृत्तान्त सुनकर महर्षिने आकर कुण्ड और गंगाजीका दर्शन पाकर प्रणाम और स्तुति करके प्रार्थना की कि अब आप यहाँसे न जायँ। गंगाजीने कहा कि तुम अपने एक वर्षकी शंकर और पार्वतीकी सेवाका फल हमें दे दो तो हम यहाँ रह जायँ। महर्षि अत्रिने ऐसा ही किया और गंगाजी वहाँ रह गयीं।

[शिवपुराण चतुर्थ कोटिरुद्रसंहिता]

(७) राजा भगीरथकी तपस्याके फलस्वरूप माँ गंगा (भागीरथी)-का अवतरण—राजा सगर राजा बाहुके सुपुत्र थे। सगरका विवाह कश्यपपुत्री 'सुमति' तथा विदर्भराजकी पुत्री केशिनीसे हुआ था। केशिनीके गर्भसे उत्पन्न असमंजस नामक पुत्र तथा सुमतिसे ६०,००० पुत्र उत्पन्न हुए थे। असमंजसके पुत्र अंशुमान् तथा अंशुमान्के पुत्र दिलीप तथा पौत्र भगीरथ हुए, जिन्होंने अपने सभी ६०,००० पूर्वजोंका उद्धार किया।

नाना प्रकारके भोगोंका उपभोगकर राजा भगीरथ सन्तुष्ट एवं प्रसन्न थे। उन्हें उस विशाल राज्यसे, सांसारिक सुखोंसे, बन्धु-बान्धवोंसे, परम वैराग्य उत्पन्न हो गया था। उन्होंने एक परम श्रेष्ठ मन्त्रीको राज्य-भार सौंप दिया और वे तपहेतु वनमें चले गये। उसकी प्रबल इच्छा यह थी कि वे अपने पितरोंका उद्धार करें। सर्वप्रथम उन्होंने ब्रह्माजीको तपद्वारा प्रसन्नकर लम्बी आयु प्राप्त की। तत्पश्चात् माँ गंगाकी आराधना की एवं घोर तपके माध्यमसे उन्हें प्रसन्न किया। भगीरथने गंगासे भूमिपर अवतरणहेतु वरदान प्राप्त कर लिया। शिवके अलावा किसी अन्यकी ऐसी शक्ति नहीं थी, जो गंगाके वेगको सह सके। शंकरजीको नीचे खड़ा देख गंगाजी गर्जनाके साथ बड़े वेगसे आकाशसे धरापर उतरीं एवं भगवान् शंकरकी जटामें विलीन हो गयीं। राजा भगीरथने भगवान् शिवकी स्तुति की एवं गंगाजीको जटासे पृथ्वीपर अवतरित कराया।

राजा भगीरथ गंगाको उस स्थानपर ला रहे थे, जहाँ उनके पूर्वज भस्म हुए थे। उसी मार्गमें एक जह्नु नामक ऋषि यज्ञ कर रहे थे। माँ गंगाने उनके यज्ञ-स्थलको पूर्णतया जलमग्न कर दिया, जिससे ऋषि क्रुद्ध हो गये एवं सम्पूर्ण गंगाजलका पान कर लिया। भगीरथने दीर्घकालतक उनकी सेवाकर उन्हें प्रसन्न किया एवं गंगाको मुक्त कराया। गंगाजी जह्नुकी जाँघसे प्रकटीं, अत: उन्हें 'जाह्नवी' नामसे भी जाना जाता है। अन्तमें माँ गंगाने भगीरथके पितरोंका उद्धार किया। [योगवासिष्ठ]

भारतमें माँ गंगा (भागीरथी)-का उद्गम गोमुख तीर्थसे हुआ है, जो गंगोत्रीधामसे ९८ मील नीचे है। अन्तमें गंगाजी विशाल भू-भागको पावन करती हुई महासागरमें जा मिलती हैं।

गोमुखसे गंगासागरतक गंगाकी यात्रा

गंगा नदीका भौगोलिक भूदृश्य : एक सिंहावलोकन

(डॉ० श्रीसुरेशचन्द्रजी बन्सल, पी-एच० डी०, आई० आई० आर० एस० (सी))

गंगा नदी भारतीय उपमहाद्वीपकी सबसे प्रमुख नदी है। यह हिमालयसे बँगलादेशतक करीब २५१५ कि०मी० का सफर तय करती है। यह अपने विशाल मैदानमें पूर्व दिशामें बहती हुई फरक्काके निकट दक्षिणकी ओर मुड़कर दो शाखाओंमें बँट जाती है। यह नदी भागीरथी, अलकनन्दा, हुगलीके नामसे भारतमें तथा पद्मा एवं मेघनाके नामसे बँगलादेशमें पहचानी जाती है और उत्तराखण्डमें भागीरथी एवं अलकनन्दा नदियोंके मिलनेसे गंगा नदीका नाम प्राप्त करती है।

भागीरथीका उद्गम पवित्र गोमुख नामक हिमनदसे हुआ है। इसे ही गंगोत्री-उद्गम कहते हैं, जो वास्तवमें गंगाका उद्गम है। यह चौलम्बा चोटी (७१३८ मीटर)-के दूसरी ओर स्थित है। यहींसे भिल्लुन गंगा निकलकर भागीरथीसे मिल जाती है। भागीरथी उद्गम-स्थलसे निकलनेके पश्चात् ३५ कि०मी० तक पश्चिम दिशाकी ओर प्रवाहित होनेके बाद दक्षिणकी ओर मुड़ जाती है। वहाँ बृहद् हिमालयके अन्दर एक यह गहरी घाटी काटती है तथा आगे यह १४० कि०मी० की दूरीतक मध्य हिमालयमें प्रवाहित होती है। इसकी प्रमुख सहायक नदी अलकनन्दा है, जो देवप्रयाग नामक स्थानपर इससे मिलती है।

अलकनन्दाका उद्गम अल्कारी नामक हिमनदसे हुआ है। यह बदरीनाथके उत्तरमें स्थित है। यह नदी प्रारम्भमें बड़े वेगके साथ तीव्र धाराके रूपमें बहती है। आगे एक हिमखण्ड धाव (Ice Avalanche) इसका मार्ग अवरुद्ध कर देता है। वहाँ यह हिमखण्डके नीचेसे होकर बहती हुई अपनी घाटीका निर्माण करती है। इसमें अलकनन्दा, मन्दाकिनी, विष्णुगंगा, नन्दिनी, पिण्डार एवं धवलगंगा नदियाँ आकर गिरती हैं। मन्दाकिनी नदी गौरीकुण्ड हिमनदसे निकलती है। इसके निकट केदारनाथजी स्थित हैं। मन्दाकिनी दक्षिणकी ओर बहकर रुद्रप्रयागके निकट अलकनन्दासे मिल जाती है। अलकनन्दा एवं मन्दाकिनी दोनों वी-आकारकी घाटियाँ बनाती हैं। इन घाटियोंके ढालोंपर समतल एवं सपाट वेदिकाएँ पायी जाती हैं। कर्णप्रयागके निकट पिण्डार या पिण्डर गंगा नदी अलकनन्दामें मिलती है। विष्णुप्रयागके निकट धौलीगंगा इसमें मिलती है। नन्दप्रयागके निकट नन्दा या नन्दिनी नदी इसमें मिलती है। इस प्रकार उपर्युक्त पाँचों पर्वतीय प्रयाग भागीरथी एवं अलकनन्दासे मिलनेवाली नदियोंके संगमपर स्थित हैं।

देवप्रयागके नीचे अलकनन्दा एवं भागीरथीकी सम्मिलित नदीका नाम गंगा हो जाता है, जो हिमालयको लक्ष्मणझूलाके निकट छोड़ती हुई आगे दून घाटीमें बहती हुई चलती है तथा हरिद्वारमें शिवालिक पहाड़ियों, जिसके पश्चिमी शीर्षकी मनसापहाड़ियोंपर मनसा-देवीजीका मन्दिर एवं पूर्वी शीर्षकी चण्डीपहाड़ियोंपर चण्डीदेवीजीका मन्दिर स्थित है, को काटती हुई मैदानमें प्रवेश करती हैं।

गंगा नदीको अनेक विद्वानोंने अपनी-अपनी तरहसे वर्णित किया है। ट्रेवोके अनुसार यह तीनों महाद्वीपों (यूरोप, एशिया, अफ्रीका)-में सबसे बड़ी नदी है, जिसकी कम-से-कम लम्बाई ३००० कि०मी० है। ऐसा माना जाता है कि वैदिक कालमें सिन्धु एवं सरस्वती नदी प्रमुख नदियाँ मानी गयीं, लेकिन बादमें गंगा नदीको

अधिक महत्त्व दिया गया, सम्भवत: प्रथम पश्चिमी विद्वान् मैगस्थनीजने गंगा नदीके बारेमें वर्णन किया है। उसका कहना है कि यह हिन्दुओंकी सबसे महत्त्वपूर्ण धार्मिक नदी है, जिसकी साधारण चौड़ाई एक कि०मी० है और गहराई ३६ मीटर है। इस नदीको दिसम्बर २००८ ई० में भारतकी राष्ट्रीय नदीका नाम दिया गया है। हिन्दुओंकी यह पवित्र नदी है। इस नदीको देवीके रूपमें पूजा जाता है। इस नदीका जल पवित्र एवं अमृत माना जाता है। ऐसा कहा जाता है कि ईस्ट इण्डिया कम्पनी अपने समुद्री जहाजोंमें पीनेके लिये गंगाजल भरती थी। महीनोंतक चलनेवाली समुद्री यात्रामें गंगाका पानी बिलकुल शुद्ध रहता था। गंगाके पानीमें मौजूद ऑक्सीजन किसी अन्य नदीके पानीके ऑक्सीजनसे २५ गुना अधिक है। वैज्ञानिक मानते हैं कि इस नदीके जलमें बैक्टीरियोफेज नामके विषाणु होते हैं, जो हानिकारक सूक्ष्म जीवोंको पनपने नहीं देते। पर्यावरणविदोंके अनुसार वर्तमानमें गंगा नदीका जल कई स्थानोंपर बुरी तरह प्रदूषित हो चुका है। गंगा नदीमें कुल कोलीफार्म जीवाणु २४००० प्रति मिलीमीटर पाये गये हैं, जबकि मानक ५०० प्रति मिलीमीटरका है।

इस नदीके निकट अनेक धार्मिक स्थल एवं प्राकृतिक सौन्दर्य देखनेको मिलते हैं। कन्नौज, मुर्शिदाबाद, इलाहाबाद, कोलकाता प्रान्तीय अथवा विभिन्न शासकोंकी राजधानी-नगर रहे हैं। हरिद्वार, सोरों, कानपुर, पटना, वाराणसी, मिर्जापुर, बलिया, बक्सर, चुनार, गया, प्रयाग प्रमुख धार्मिक एवं महत्त्वपूर्ण नगर हैं। प्रयागके निकट यमुना, गाजीपुरके निकट गोमती, छपराके निकट घाघरा, पटनाके निकट सोन नदी इसमें मिलती हैं। गंगा नदीके बाँयें किनारेपर रामगंगा, घाघरा, गण्डक, बड़ी गण्डक, बागमती एवं कोसी नदियाँ अपना पानी गिराती हैं, जबकि यमुना, सोन, दामोदर इसमें दाँयें किनारेपर मिलती हैं। सोन, दामोदर प्रायद्वीपीय भारतकी नदियाँ हैं। भागलपुरमें यह नदी राजमहल पहाड़ियोंके निकट विसर्प बनाती हुई दक्षिणकी ओर मुड़ जाती है। यहाँ पाकुरके निकट यह नदी दो प्रमुख शाखाओंमें बँट जाती है। भागीरथी एवं हुगलीके रूपमें यह पश्चिम बंगालमें प्रवाहित होती है। सन् १९७४ ई० में निर्मित फरक्का बैराज, जो बँगलादेशकी सीमापर स्थित है, गंगा नदीमें जलके प्रवाहको नियन्त्रित करता है। साथ ही एक फीडर नहरद्वारा हुगलीको जोड़नेका काम करता है, यह नहर हुगलीकी मिट्टी (सिल्ट)-के जमावको कम करनेमें मदद देती है। गंगा नदीकी एक शाखा पद्माके रूपमें बँगलादेशमें प्रवेश करती है और मेघना नदीसे मिलकर बंगालकी खाड़ीमें गिर जाती है। बंगालतक पहुँचनेमें यह नदी २५१५ कि०मी० की दूरीमें बह चुकी होती है। इसका जलप्रवाह क्षेत्र ८,६१,४०४ वर्ग कि०मी० है, जो घना बसा एवं अति उपजाऊ प्रदेश है। भारतकी लगभग ४२ प्रतिशत जनसंख्या गंगाके विशाल मैदानमें निवास करती है।

गंगाका डेल्टा हुगली एवं मेघना नदियोंके बीचमें है। यह विश्वका सबसे बड़ा डेल्टा माना जाता है। इसका क्षेत्रफल ५१३०६ वर्ग कि०मी० है। डेल्टाका समुद्री भाग घने जंगलोंसे ढका है, जिन्हें सुन्दर वन कहते हैं। हुगली नदीके तटपर कोलकाता एवं हल्दिया बन्दरगाह स्थित हैं। डेल्टाई भूभागके नीचे पवित्र स्थान गंगासागर द्वीप स्थित है।

गंगाका महत्त्व इस बातसे माना जाता है कि हिन्दू मतके अनुसार अपने जीवनकालमें गंगाके पानीमें नहाये बिना जीवन अधूरा रहता है। अनेक हिन्दू परिवार गंगाजलको अपने घरमें रखते हैं; क्योंकि इसको रखना पवित्र माना जाता है। जीवनके अन्तिम पलोंमें गंगाजलका सेवन उसकी मुक्ति दिलानेमें सार्थक माना जाता है। गंगामें पवित्र स्नान लोगोंके पाप धोनेमें मददगार माना जाता है। बीमार व्यक्तिको गंगाजलका सेवन बीमारीसे लड़नेकी क्षमता प्रदान करता है।

ब्रिटेनके ओवरसीज डेवलपमैन्ट एडमिनिस्ट्रेशन

(ODR) और भारतके वन एवं पर्यावरण मन्त्रालयद्वारा संयुक्त रूपसे अनुदानप्राप्त 'गंगा एक्शन प्लान' के प्रभावोंपर हुए एक अध्ययनके अनुसार गंगा नदी गंगोत्रीसे लेकर बंगालकी खाड़ीतकके अपने प्रवाहक्षेत्रमें लगभग १०० नगरोंके अलावा हजारों गाँवोंको पोषित करती है। इन नगरोंका १.३ अरब लीटर सीवेज, २६ करोड़ लीटर औद्योगिक कचरा, ६० लाख टन उर्वरक और ९००० टन कीटनाशक दवाओंसे निकला अपशिष्ट पदार्थ रोजाना गंगा नदीमें उत्सर्जित होता है। हजारों पशुओं एवं मनुष्योंके शव भी गंगाकी दशाको दयनीय बना रहे हैं।

हालाँकि हिन्दुओंकी आस्था है कि पवित्र गंगा नदी अमर है और इसका पानी अमृत है, लेकिन यह स्पष्ट है कि सरकार एवं जनमानसकी उदासीनताकी वजहसे यह पवित्र नदी खतरेमें है। इसके अस्तित्वपर खतरा मण्डरा रहा है। यदि अब हम नहीं चेते, तो यह नदी एक इतिहास बनकर रह जायगी।

गंगा हजारों लोगोंकी जीविकाका आधार भी है। नाविकों, पुरोहितों और फुटकर विक्रेताओंके लिये गंगा रोजी-रोटीका मुख्य आधार है। इसीके साथ गंगा-किनारे मौजूद धार्मिक स्थानोंकी अर्थव्यवस्थामें गंगाका अहम योगदान है। बी०एच०यू० और काशी विद्यापीठमें फाइन आर्ट्सकी पढ़ाई करनेवाले छात्रोंके लिये गंगा स्कॉलरशिपका जरिया भी है। हर प्रमुख घाटपर दर्जनों ऐसे छात्र गंगाके खूबसूरत घाटोंको कैनवासपर उकेरनेमें लगे रहते हैं। इन कलाकृतियोंको विदेशी पर्यटक अच्छी कीमत देकर साथ ले जाते हैं। गंगाके मैदानकी मिट्टी दुनियामें सबसे अधिक उपजाऊ है। इसके ऊपर बने पुल, बाँध और नदी परियोजनाएँ भारतकी बिजली, पानी और कृषिसे सम्बन्धित जरूरतोंको पूरा करती हैं।

'गंगाकी मुख्य धाराकी खोजमें'*

(श्रीफादर द्योतियेन)

'इस बार चलो हिमालय घूम आते हैं,' उस लड़केने इस बातको इस तरहसे कहा, जैसे हिमालय-भ्रमण मैदानमें हवाखोरीको निकलनेकी तरह सरल बात हो।

उसे सभी 'भूतो' कहकर पुकारते हैं। उसका अभिजात, सरकारी अभिलेखोंवाला नाम मैं नहीं जानता। कस्मिन् काले सुना भी नहीं है और उससे पूछूँ, इस बारेमें कभी सोचा भी नहीं है। उसे बचपनसे ही पहचानता हूँ, डाक टिकट जमा करता था, मेरे डेरेपर जल्दी-जल्दी आया करता था।

आजकल वह नौकरी कर रहा है। अच्छी नौकरी है। उसने दो सप्ताहकी छुट्टी माँगी है, उसे मिल भी गयी; क्योंकि उसे हिमालय घूमना था, किंतु परम्परागत भ्रमण नहीं, तीर्थयात्रा करनी थी। सभी तरहके नियमोंका पालन करनेवाली तीर्थयात्रा—गंगोत्री, केदारनाथ, बदरीनाथ। केवल घुमक्कड़ होनेसे क्या होगा, वह छोकरा सचमुचमें धर्मनिष्ठ और वंश-परम्परासे भक्तिप्राण है। दक्षिणेश्वर, तारकेश्वर, धोपपाड़ा, देवघर (वैद्यनाथ) आदि तीर्थोंमें उसकी वार्षिक परिक्रमा होती रहती है। इस बार उसने निश्चय किया है, पुण्यार्जनके लिये अपने भ्रमण-परिसरको वह थोड़ा विस्तृत करेगा, अपने तीसवें जन्मदिनका, हिमालयके किसी एक पुण्यक्षेत्रमें उद्यापन करना ही उसका अभिप्राय है। पहले उसने सोचा था, अकेला ही जायगा। बादमें उसने विचार किया, आध्यात्मिक सुरक्षाकी दृष्टिसे अगर विचार किया जाय तो एक तीर्थसंगीके रूपमें मुझे साथ ले चलना, सभी दृष्टियोंसे श्रेयस्कर

* इस 'गंगा-यात्रावृत्तान्त' को मूलतः एक फ्रांसीसी विद्वान् श्रीफादर द्योतियेनने बँगला भाषामें लिखा है, जो 'देश' नामक बँगला पत्रिकाके सितम्बर २०१० के अंकमें प्रकाशित है, उसीका डॉ० श्रीरामशंकरजी द्विवेदीद्वारा हिन्दी रूपान्तरण यहाँ प्रस्तुत है।

होगा। स्वीकार करनेमें मुझे जरा भी संकोच नहीं हुआ, मुझे सहमत करनेमें उसे अधिक वक्त नहीं देना पड़ा।

भूतोने मेरे हाथमें गमछा, चादर, एसपिरिन और सेफ्टीपिनसे लेकर अन्य अनेक आवश्यक वस्तुओंकी एक सैंतीस संख्यावाली सूची पकड़ा दी। नहीं, तीर, बन्दूक नहीं खरीदना पड़ा, अब वह युग नहीं रहा है, जिस युगमें तीर्थ जानेके पहले गोमुख-अभिमुखी यात्रियोंको अपने उत्तराधिकारियोंके हाथमें अपनी सम्पत्तिका बँटवारा करना पड़ता था। सम्प्रति, चीन और भारतके युद्धके बादसे, उस अंचलके रास्ता-घाटियोंका अब काफी विकास हो गया है।

यात्राका सूत्रपात उत्तरकाशीसे हुआ। वहाँके संस्कृत विश्वविद्यालयके अध्यक्ष अखण्डानन्द नामक एक संन्यासीसे हम लोगोंका परिचय हुआ, एक अभियन्ताके रूपमें उन्होंने जर्मनीमें चौदह वर्ष बिताये थे। उन्होंने हम कई बंगालियोंको हिमालयके तपस्वियोंके स्थानोंका पता बताया। उन्हें हाथ जोड़कर नमस्कार करनेके बाद हम लोगोंने उनसे बिदा ली।

हम लोग नदीतटपर स्थित एक आश्रममें पहुँच गये। गुरुमहाशयकी अनुपस्थितिमें हम लोगोंका स्वागत किया एक मध्य वयस्क संन्यासीने। उसने हमें अपनेद्वारा रचित प्रश्नोत्तर-मालाके ईश्वर-साधनासे सम्बन्धित छियालीस अध्याय उपहारमें दिये। यथोचित अभिवादनके उपरान्त हम वहाँसे निकल पड़े।

कुछ पल पैदल चलनेके बाद हम एक छोटे मठमें जाकर उपस्थित हो गये। उस मठके चौदह प्रकोष्ठोंमें चौदह योगी समय-समयपर कुछ समयके लिये रहते हैं। वे किसी सम्प्रदाय-विशेषके कार्योंका सम्पादन नहीं करते हैं, न पूजा, न भोजन, न तर्क आदिका आयोजन। उनमेंसे हर योगी व्यक्तिगत रूपसे अपने गुरुद्वारा उपदिष्ट आदर्शके अनुसार चलता है। जो अवधि समाप्त हो जानेपर मठका त्याग करना चाहता है, वह अखण्डानन्दजीके डेरेपर खलासीके कमरेमें चाबी रख जाता है, वे प्रतीक्षारत प्रार्थियोंकी तालिकामेंसे एक दूसरे उम्मीदवारको आवासकी सुविधा प्रदान कर देते हैं।

स्वामी विमलानन्द गिरि एकमात्र इस मठके स्थायी निवासी हैं। बीस वर्षकी उम्रमें गांधीजीद्वारा चलाये गये असहयोग आन्दोलनमें उन्होंने अपनेको समर्पित कर दिया था। तेरह वर्षतक स्वतन्त्रता संग्राममें भाग लेनेके बाद उन्होंने परिव्राजक होकर भारतीय उपमहाद्वीपकी प्रदक्षिणा की थी—तिब्बतसे लेकर कन्याकुमारीतक। छः वर्षके परिभ्रमणके समापनपर एक दिन सहसा उनके अन्त:करणमें संन्यास लेनेकी अदम्य आकांक्षा जाग गयी। वयस् आधिक्य और शास्त्रीय विद्याकी न्यूनताके कारण रामकृष्णमिशनमें प्रवेशाधिकार न मिलनेके कारण उन्होंने उत्तरकाशीके इसी मठमें अपनी जड़ें जमायीं। गत सत्ताईस वर्षसे हर मध्याह्नमें निकलकर किसी आश्रमसे अन्न-भिक्षा माँग लाते हैं, अपने कक्षमें बैठकर नि:शब्द होकर एकान्तमें आहार करते हैं, इस संसारकी नश्वरताका बड़ी गहराईसे अनुभव करते हैं और शाश्वत सत्ताके साथ अपनी एकात्मताका अनुभव करते हैं, पूरे समय ध्यानमें मग्न रहकर अपना कालक्षेप करते हैं। क्या ऐसे ही जनको जीवन्-मुक्त नहीं कहते हैं?

× × ×

बारह बज चुके हैं। होटलकी ओर पैर बढ़ाता हूँ, तप्त कंकड़ोंसे भरे पहाड़ी रास्तेपर। सहसा देखता हूँ कहींसे आकर एक भद्रपुरुषने मेरा साथ पकड़ लिया। मेरे खुले, विरल केशोंवाले मस्तककी ओर करुणाघन दृष्टिनिक्षेप करते हुए उन्होंने अतिशय सौजन्यवश उसे अपने छातेका सहारा देकर दिनपतिकी रश्मियोंके अत्याचारसे बचानेका उपक्रम किया। हमारे साथ ताल-पर-ताल मिलाते हुए चलते-चलते उन्होंने आत्मपरिचय दिया; नाम जगदीशानन्द और उनकी उम्र है तिहत्तर वर्ष।

यान-वाहनकी कमी होनेसे क्या होता है, ठीक समयपर यथास्थान पहुँच गये, यही अच्छा है। शान्तिसे और निरापदरूपमें। कल दोपहरमें गंगोत्री मन्दिरके फाटक बन्द थे, किला लगा हुआ था। गंगामैया दोपहरके विश्राममें निद्रामग्न थीं। देवीके दिव्य दर्शनके इच्छुक एक बंगाली नव-दम्पती द्वार खुलनेकी आशासे प्रतीक्षा कर रहे हैं। इस पीठस्थानमें वे अपनी मधुचन्द्रिका

मनाने आये हैं। देखनेमात्रसे ही उनके साथ हमारी खूब पटरी बैठ गयी। उन लोगोंने निश्चय किया, हम चार लोग अनिल, अंजलि, भूतो और मैं एक साथ यात्रा करेंगे। शुरुआतमें ही बाधा खड़ी हो गयी। आश्रमके स्वामीजीने घोषणा कर दी कि यहाँ तीन लोगोंको ही स्थान मिलेगा। बचा रह गया अकेला मैं। प्रवेशाधिकारकी अस्वीकृतिका आखिर कारण क्या है? एक जन्मगत अपराध तथाकथित अस्पृश्य होना! मेरे पैरोंकी धूलिसे आश्रमकी आबोहवा दूषित हो जायगी।

भूतोने मेरे पक्षमें वकालत करते हुए उन्हें समझाया कि दीर्घकालसे मैंने भारतीय संस्कृतिका इतना अनुशीलन किया है कि मेरी त्वचाका वर्ण चाहे जितना श्वेत हो, मेरी आत्मा पीताम्बर-रंगमें रँग चुकी है। पहरेदारने हार मानकर अन्तमें कहा—बहुत अच्छा, आप भी ठहर जाइये।

गंगोत्तरीके पथ-प्रान्तरमें घूमते-घूमते हरेक तरहके मनुष्यका सन्धान मिलता है। जैसे इन्हींको लीजिये, ब्रह्मचैतन्यानन्द महाशयको, डेरेके बरामदेमें आराम कुर्सीपर बैठे हुए धूप ले रहे हैं, उनके चारों ओर अभिधानोंका ढेर लगा हुआ है। वे भद्रपुरुष एक दुर्बोध्य पाण्डुलिपिके अनुवाद-कार्यमें मग्न हैं। नहीं, किसी तरहके प्रकाशनकी इच्छा उनकी रंचमात्र भी नहीं है। उनका कार्य पूरी तरह निष्काम है। विशुद्ध आनन्दप्रद, गंगोत्रीके तटपर आमृत्यु एकान्तवासकी इनकी दृढ़ प्रतिज्ञा है।

× × ×

कुछ दूरपर एक छोटी गुफा-जैसे घरमें अर्धनग्न एक किसान अपनी सातवर्षकी बेटीके साथ रह रहा है। आन्ध्र प्रदेशमें उसका आवास था। युगों-युगोंतक याद रहनेवाली एक बाढ़में चार वर्ष पहले उसके खेत बह गये, घर नष्ट हो गया, उसकी स्त्री डूब गयी। बापका घर कहिये, ससुरालका घर कहिये, जाति भाइयोंमें भी किसीने भी उस मातृहीन बच्चीका भार नहीं लेना चाहा। उपायहीन होकर उस असहाय व्यक्तिने इस पुण्यभूमिमें आश्रय लिया है। घर बनानेयोग्य आर्थिक शक्ति न होनेके कारण जमीन खोदकर, पत्थर तोड़कर थोड़ी रहनेयोग्य यह गुफा बना ली है। 'इस लड़कीके विवाहका क्या होगा?' प्रश्नके उत्तरमें उस बेचारे बापने लम्बी साँस छोड़ते हुए स्वर्गकी ओर अपने उद्विग्न नयनोंको उठा दिया।

हमारी बातचीतमें योग देने आ गया एक अन्य तीर्थयात्री, वह भी किसान है। काशीके निकटवर्ती एक ग्रामीण अंचलसे आया हुआ है। बहुत दिन पहले गृहीत एक व्रतके उद्यापनके लिये गंगोत्रीमें उसका आगमन हुआ है। उसे गंगामाताके पवित्र जलमें स्नान करना है। हर वर्ष उसकी यह मनोकामना व्यर्थ होती रही, उसकी स्त्रीकी बीमारी, माँका परलोकगमन, खुदका कार एक्सीडेण्ट। अबकी बार उसने निश्चय किया है, अब वह और विलम्ब नहीं करेगा, कुछ रुपया उधार लेकर उसने अपना मनोरथ पूर्ण कर डाला है।

× × ×

गंगोत्री हमारा अन्तिम गन्तव्य स्थल नहीं था, सच्चे और वास्तविक गंगास्रोततक पहुँचनेके लिये अभी और पाँच कोस पैदल चलना पड़ेगा।

एक कुलीको साथ लेकर दीर्घ किंतु मन्द पैर रखते हुए हम रवाना हो गये। कुली बीच-बीचमें रुक जाता है, बोझ बिना उतारे किसी शिलाखण्डसे टिककर थोड़ा आराम कर लेता है। चारों ओरके भूदृश्य अत्यन्त विस्मयकर हैं। पर्वतशिखरोंपर मेघोंकी बहार है, झरनोंके उज्ज्वल सलिलमें प्रतिबिम्बित इन्द्रधनुषकी क्रीडा…। आश्चर्यसे अभिभूत हमारी दृष्टिको लक्षितकर हमारे अनुचरने एक मतावलम्बी व्यक्तिकी भंगिमासे कहा—'हमारे पहाड़ कितने सुन्दर हैं।' उसके फटे जूतों और थिगले लगे कुर्तेसे क्या बनता-बिगड़ता है, उसका सौन्दर्यबोध तो चौंकानेवाला है।

बीच रास्तेमें भुजवासा नामक एक निर्जन स्थलपर हमारी रात बितानेकी बात है, लालबाबाके आश्रममें। यात्रियोंके हितार्थ मुद्रित एक प्रस्ताविकामें पढ़ा है, बाबाजी सरलतासे पटनेवाले लोग नहीं हैं, बड़े मिजाजी स्वभावके हैं।

दूसरे दिन प्रत्यूष वेलामें गोमुख नामक गंगोत्सकी ओर हम लोग उन्मुख होकर आगे बढ़े। चार किलोमीटरका सर्पाकार निर्जन पथ पार करते हुए हम शिलाओंपर

अंकित चूनेके चिह्नोंका अनुसरण करते रहे। जाते-जाते सहसा देखता हूँ कि और किसी भी तरहके चिह्न नहीं हैं। किंकर्तव्यविमूढ़ चित्तसे मैं सोचने लगा, क्या हम लोग रास्तेसे भटक गये हैं, किंतु असलमें यहीं हमारी यात्राका अन्त था, गोमुख ही हमारे सम्मुख था। गहरे मुख विवर-जैसी दरारसे द्रवित बरफका एक उन्मत्त स्रोत क्षिप्र वेगसे बहता आ रहा है।

दीर्घकालसे स्तब्ध होकर सुनता आ रहा हूँ, युगों-युगोंसे अनुनादित उसकी विरामहीन कलकल ध्वनि, कवियोंद्वारा स्तूयमान, ऋषि-मुनियोंद्वारा ध्येय, वह पवित्र एकतान, एक ही धारा-प्रवाह। सहसा मुझे याद आया, कलकत्ता छोड़नेके दिन भूतोकी दीदीके सामने मैंने दो प्रतिज्ञाएँ की थीं, एक गोमुखसे मंगलकारी पवित्र गंगाजलसे एक शीशी भर लाऊँगा, उस शीशीको भूतोकी दीदी अपने सोनेवाले कमरेमें एक तक्खेमें बड़े जतनसे रखेगी, स्वामी अथवा बच्चेके बीमार होनेपर पीड़ित व्यक्तिको पथ्यके रूपमें उसी जलकी दो बूँदें पिला देगी।

दूसरी प्रतिज्ञा थोड़ी स्वतन्त्र है। उसे मैं समझाकर विस्तारपूर्वक बताये दे रहा हूँ। अपने विवाहित जीवनके बाईस वर्षोंमें भूतोकी दीदी देवताकी शरणमें जाकर सत्तर मुद्राएँ (चवन्नी, दुअन्नी, कानी कौड़ी, छदाम आदि जो भी उसके हाथमें आ गयी) एक डिब्बेमें जमा करती रही है। हर मुद्रा एक-एक मार्मिक क्षणकी प्रतीकरूप है! बच्चेको प्लीहाकी बीमारी, घरमें अग्निकाण्ड, भाभीकी आत्महत्या। उन मुद्राओंको अगर गोमुखमें फेंक दिया जाय तो उन सब दुःखद घटनाओंकी स्मृति सदाके लिये समाप्त हो जायगी। उन मुद्राओंको फेंकनेका भार मेरे कन्धोंपर है। यह कार्य बड़ा मुश्किल है, उन पैसोंका वजन एक-सा नहीं है, आकार भी उनका भिन्न-भिन्न है। अपने अनिपुण काँपते हुए हाथोंसे उन्हें एक-एक कर गोमुखमें फेंके दे रहा हूँ। दुःखके साथ मैं यह स्वीकार करता हूँ, मैं अपने वचनके पालनमें पूर्णकाम नहीं रहा। दो रुपये गोमुखमें न गिरकर दूसरे हिमखण्डपर गिर गये। उनमेंसे एक तो सूर्योदयके साथ जैसे ही बरफ पिघलेगी, उसे मुक्ति मिल जायगी, लेकिन एक सिक्का ऐसी जगह जा गिरा कि भूकम्पके बिना उसके परित्राणकी आशा करना दुराशामात्र है। अब आप ही बताइये मैं क्या करूँ? शास्त्रसम्मत हो या न हो, मैंने एक अन्तिम उपायका सहारा लिया। आप मुझे साहस दें, जिससे मैं उसके बारेमें कह सकूँ। भूतोके नास्तिक जमाईबाबूने एक दिन हँसी-हँसीमें पैंटकी एक बटन अपनी पत्नीके बक्सेमें फेंक दी थी। रास्तासे भटकी मुद्राके बदले उसे भी मैंने गोमुखमें फेंक दी थी। इसका पुण्य फल होगा या नहीं किसे पता? तो भी लोगोंका कहना है कि राधावल्लभको अगर परिहासमें भी बुलाया जाय, तो वे जरूर उत्तर देते हैं।

गोमुख-यात्रा शेष हो गयी, फिर भी दो हजार फुट लगातार ऊर्ध्व गमनकर तपोवन नामक तृणशून्य, पादपहीन एक निराले स्थानपर पहुँच गया। वहाँपर अधिष्ठान किये हुए है निर्जनवासिनी एक तपस्विनी, अब मैं उनके साथ भेंट करूँगा।

पथ-प्रदर्शनमें नियुक्त हुआ हम लोगोंका कुली, वह इस देशका व्यक्ति है, इससे क्या फर्क पड़ता है, वह हमें तीन बार गलत जगह ले गया। हमारी उद्दिष्ट जगह समुद्रतलसे १५००० फुट ऊँचाईपर स्थित है। हाँफते-हाँफते उस अभियानपर चलता रहा, हर कदमपर मेरी साँस रुँधने लगी। आरोहणकी समाप्तिपर पर्वतशिखरपर हम लोग बिना किसी बाधाके सुरक्षापूर्वक पहुँच गये।

गोमुखमें वापस आकर कुछ विश्राम करनेकी आवश्यकता अनुभव होने लगी, इसलिये हम लोगोंने एक एकान्तवासी सन्तकी आतिथेयताके आस्वादनका सुयोग प्राप्त किया। उन्होंने बहुत छुटपनमें मातृपितृहीन दशामें एक परिव्राजक साधुका संग पकड़ लिया था। कई वर्ष परिव्रजनके बाद उस संतके अकस्मात् तिरोधानके बाद दिशाहीन होकर उन्होंने इस गोमुखमें ही गंगा मैयाकी धर्मछायामें शरण ले ली है। नहीं, विधि-सम्मत कोई पूजा-उपासना वे नहीं करते हैं, नियमित सन्ध्या आह्निक भी नहीं। फिर भी कभी-कभी शामके समय गंगामैयाके प्रति श्रद्धा व्यक्त करनेके लिये भक्तिभरे कण्ठसे शैशवमें सीखे गये एक मर्मस्पर्शी भजनको जरूर गाते हैं।

साहस बटोरकर उनसे पूछ बैठा, इस स्थानपर आपकी अविरत उपस्थितिका आखिर अर्थ क्या है? उन्होंने समझाते हुए कहा—गंगामैयाके श्रीचरणोंमें निःस्वार्थ भावसे रहना ही उनका एकमात्र उद्देश्य है। यही उनके जीवनका आदर्श है। फिर भी हाँ, अवसर मिलनेपर, जैसे आज ही देखिये, तीर्थयात्रियोंके लिये वे चायकी व्यवस्था जरूर करते हैं और कोई तीर्थयात्री रात्रियापनकी इच्छा व्यक्त करता है, तो वे अपने इस क्षुद्रातिक्षुद्र कुटीरमें उसे आश्रय भी दे देते हैं।

'आप यहाँ कबसे रह रहे हैं?'

'भैया! इसे मैं नहीं बता सकूँगा, मेरे जैसे वनवासी पंचांग नहीं रखते हैं, सम्भवतः दस-बारह बरस तो हो ही गये होंगे।'

'और कबतक यहाँ रहेंगे?'

'गंगामैया जबतक मुझे यहाँ रखें।'

× × ×

गंगोत्रीसे लौटकर देखता हूँ, दूर-दूरान्तसे आया हुआ एक किसान-मजदूरोंका दल गंगाकी ओर चींटियों-जैसी कतारोंमें आगे-आगे बढ़ा जा रहा है, उनमेंसे कोई गोमुख नहीं जा रहा है। उनके लिये तीर्थयात्राका अर्थ ही है—इस तीव्र स्रोतके द्रवित, पिघलते बर्फमें स्नान और स्नानके बाद देवीदर्शन। हाँ, अधिकतर लोगोंके लिये स्नानका अर्थ है मात्र गात्रप्रक्षालन, पवित्र जलके अनुपम स्पर्शमात्रसे ही उनका मनोरथ सिद्ध हो जाता है। दुःसाहसी पुण्याकांक्षी तीर्थयात्री नदीकिनारे घुटनोंतक भरे जलमें बैठकर एक बाल्टी हिमशीतल जलको अपने कम्पित मस्तकपर उड़ेल रहे हैं।

किसी भी तरह पवित्र होकर यात्रीगण अब मन्दिरमें प्रवेश करते हैं, हाथमें पूजाकी एक थाली लेकर। वह थाली हर तरहके नैवेद्य-द्रव्यसे विभूषित है, काली कंघी, रंगीन लाल फीता, शंखकी चूड़ियाँ, सिन्दूर, बतासा और आधा नारियल। पुजारी महाराज सारी वस्तुओंको देवीके श्रीचरणोंमें चढ़ाकर निवेदकके हाथोंमें वापस लौटा देते हैं, नारियलके अर्धांशको अलग रख देते हैं दक्षिणाके रूपमें। कई तीर्थयात्री ऊपर उल्लिखित समस्त नैवेद्यको गंगागर्भमें निक्षेप करने चले जाते हैं। किंतु भूतो बतासोंको अपने झोलेमें रख लेता है, कलकत्ता लौटकर अपनी माताको उपहारमें देगा।

इस प्रकार हमारी तीर्थयात्राका पहला पर्व गंगोत्री-गोमुख-दर्शनके साथ यहीं समाप्त हुआ।

पतितपावनी गंगाकी यात्रा

[ब्रह्मलोकसे भूलोकतक]

(डॉ० श्रीविद्याभास्करजी वाजपेयी)

भगवती गंगा नदी नहीं; अपितु हमारी आस्था, निष्ठा एवं श्रद्धाका दिव्य प्रवाह हैं। तरल-तरंगिणी गंगा हमारी माँ हैं, जो लम्बी यात्राकर तटवर्ती वनों, पर्वतों, नगरों तथा ग्रामोंको पावनता प्रदान करती हुई गंगासागरमें समाहित हो जाती हैं। गंगा अपने आँचलमें आर्यावर्तका वैभवशाली, समृद्ध इतिहास और जीवन्त संस्कृति समेटे हुए हैं। गंगा भारतीय जीवनका अमृत-प्रवाह हैं और भारतीय संस्कृतिका प्राण हैं।

भारतका धर्म, दर्शन, सभ्यता, संस्कृति, जीवन, मृत्यु सभी कुछ गंगासे सम्पृक्त है। गंगाने आर्यावर्तकी धरतीको ही सरस नहीं बनाया, अपितु उसके आध्यात्मिक जीवनको भी अनुप्राणित किया है। गंगा हमारे प्रबल पुरुषार्थ और अखण्ड विश्वासकी साक्षी हैं। गंगा हमारी दैहिक शुद्धता एवं आत्मिक चेतनाका केन्द्र हैं। गंगा जहाँ हमारी अपावन देहको पावन बनाती हैं, वहीं आत्माको अमरत्वके द्वारपर ला खड़ा करती हैं। पुण्यसलिला गंगाकी सतत-प्रवाही पीयूषधारा भारतीय संस्कृतिका प्रत्यक्ष आधार एवं जीवन्त प्रेरणाका अजस्र स्रोत रही है। गंगा हमारे जीवनमूल्योंका मानक एवं परिमाप हैं। हिन्दूमात्रकी कामना रहती है कि यदि जीते-जी माँ गंगाका सान्निध्य सुलभ नहीं हुआ, तो मरणोपरान्त ही सही, केवल अस्थियाँ ही भगवती गंगाके आँचलमें

विसर्जित हो जायँ तो जीवन धन्य हो जायगा। इतना गहरा समर्पण अन्य किसी देवताके प्रति नहीं पाया जाता। इसमें शैव, वैष्णव, शाक्तका भी भेद नहीं है। भागीरथीकी अमृतमयी धारा प्रत्येकके लिये मोक्षका साधन है।

बलि शतक्रतु होना चाहते थे और सगर विश्वविजेता। एक देवेन्द्र बनना चाहते थे, दूसरे भूपेन्द्र। दोनों ही यज्ञका आश्रय लेकर अपनी संकल्प-पूर्तिके लिये कटिबद्ध होते हैं, जो पुरुषार्थकी प्रत्यक्ष उपेक्षा थी और अर्चनाके उत्तम विधानकी अवमानना; क्योंकि यज्ञ सर्वभूतहित-साधनका दैवी-उपक्रम है, निज स्वार्थपूर्तिका साधन नहीं। इसी कारण यज्ञके अधिष्ठाता यज्ञपुरुष उसमें बाधा पहुँचाते हैं। मेघनादका यज्ञ-विध्वंस इसी प्रक्रियाकी एक कड़ी था। कार्यका औचित्य उसके संकल्पसे निश्चित किया जाता है। संकल्प यदि अपावन है, तो कार्य भी अपावन ही होगा।

भगवान् वामन और महर्षि कपिलका हस्तक्षेप भले ही मर्यादाविरुद्ध परिलक्षित हो, किंतु विश्वकी सत्ता और स्वर्गका सत्य एक ही व्यक्तिकी सम्पत्ति कैसे हो सकती है? उसपर सभीका अधिकार है। भगवान् वामनकी बाधा और महर्षि कपिलका क्रोध गंगावतरणका निमित्त बना और ज्येष्ठ शुक्ल दशमीका मान बढ़ाती हुई भगवती गंगा भूलोकमें अवतरित हुईं। विराट् वामनभगवान्ने पहले पगसे पृथ्वी मापी और दूसरा जब अन्तरिक्षकी ओर

बढ़ाया तो उनके पादके नखसे ब्रह्माण्डमें छिद्र हो गया और उस छिद्रसे ब्रह्मद्रव टपकने लगा, जिसे ब्रह्माजीने अपने कमण्डलुमें सहेज लिया।

कथामें आता है कि इक्ष्वाकु-कुलकी पाँचवी पीढ़ीमें महाराज सगरका जन्म होता है। सगर परम प्रतापी धर्मात्मा नरेश हैं। विप्र, धेनु, सुर, सन्त-हितकारी हैं; किंतु उनका पुत्र असमंजस आचरणकी सभी मर्यादाएँ तोड़ देता है, इसलिये वे उसे राज्यसे निष्कासित कर देते हैं। सगर अश्वमेधयज्ञकी दीक्षा लेते हैं। अश्व अवमुक्त होता है। घूमते-घामते वह कपिलमुनिके आश्रममें पहुँच जाता है। राजा सगरके साठ हजार पुत्र अश्वरक्षामें नियुक्त थे। अश्वको जब वे कपिलमुनिके आश्रममें पाते हैं तो कपिलमुनिको चुनौतीरूपमें देखते हैं। आश्रम-ध्वंस होता है। कपिलमुनि अपमानित होते हैं तथा उनका क्रोध शाप बनकर फूटता है और उसी क्रोधाग्निमें सगरके पुत्र भस्म हो जाते हैं।

असमंजसके पुत्र अंशुमान् सिंहासनपर बैठते हैं। अपने साठ सहस्र पूर्वजोंको क्षार-क्षार देखकर उन्हें पश्चात्ताप होता है। वे कपिलमुनिसे क्षमा-याचनाकर पूर्वजोंके उद्धारका उपाय पूछते हैं। कपिलमुनिका उत्तर होता है—'इन पापियोंका उद्धार केवल भगवती गंगा ही कर सकती हैं। यदि तुम उन्हें धरतीपर ला सको तो उनका ही नहीं, समस्त प्राणियोंके उद्धारका मार्ग प्रशस्त हो सकता है।' अंशुमान् प्रयत्नशील होते हैं, किंतु सफलता नहीं मिलती। उनके पुत्र दिलीप भी पिताका अनुकरण करते हैं, किंतु उन्हें भी निराशा ही हाथ लगती है। दिलीपपुत्र भगीरथको पूर्वजोंके उद्धारकी चिन्ता सताती है। वे गंगाको धरतीपर लानेका संकल्प ले लेते हैं।

भगीरथ क्षत्रियकुमार हैं। अध्यात्ममें उनकी प्रवृत्ति है। वे भौतिक सुखोंकी लालसासे सर्वथा उदासीन हैं। ब्राह्मणोंके प्रति उनकी गहरी आस्था है, तपके प्रति सच्ची निष्ठा है, ईश्वरके प्रति सच्ची श्रद्धा है। हिमालय पहुँचकर वे तपमें प्रवृत्त होते हैं। विधिपूर्वक किये गये दिव्य प्रयोग परमात्मा और महात्माओंके अनुग्रहसे पूर्ण होते हैं। भगीरथके संकल्पमें अपना कोई स्वार्थ नहीं है। पूर्वजोंकी सद्गति, परिवारकी प्रतिष्ठा और संसारका

श्रेयस् ही उनका अभीष्ट है। उनका पावन प्रयास सफल होता है।

प्रसन्न होकर ब्रह्मा वर्षोंसे संचित आस्थाका वह अमृत-प्रवाह मानवमात्रके कल्याणके लिये भगीरथको सौंप देते हैं। पावनताकी इस प्रखर धारको कौन सम्हाले? यदि वह सगरके वंशधरोंके भस्मावशिष्टपर गिरती तो भस्मसहित पातालमें समा जाती। अतः भगीरथ भगवान् शंकरकी उपासनामें लीन होते हैं और स्वर्गसे उतरकर गंगा शिवजीकी अलकोंमें समा जाती हैं।

कौन निकाले गंगाको वहाँसे? मुक्तिप्रदायिनी धारा स्वयं उलझ गयी थी। कल्याणके देवता शंकर कृपाकर गंगाको अपनी अलकोंसे निकाल धरतीपर उतार देते हैं। ऋषि, मुनि और सन्तोंकी साधना सफल बनानेके लिये गंगा धरतीपर उतरती हैं; किंतु कुछ आगे बढ़ते ही भटक जाती हैं। जह्नुऋषिका अपमान होता है। कुपित जह्नु गंगाको पी जाते हैं। भगीरथकी प्रार्थनापर द्रवित हो जह्नु गंगाको पुनः प्रकट करते हैं। पुत्री-जैसा प्यार देकर उसका मान बढ़ाते हैं और नाम दे देते हैं—जाह्नवी।

हिमालयको देखकर आज भी भगीरथके कठोर तपका अनुमान लगाया जा सकता है। कितना श्रम किया होगा उन महाशिल्पीने? हिमालयके हिमनदोंको जोड़कर जब आर्यावर्तकी ओर मोड़ा होगा, शिवालिककी पहाड़ियोंमें बिखरी धाराओंको जब एकमें मिलाया होगा। भगीरथके इस प्रयासमें शिवजीके गणोंका अभूतपूर्व योगदान रहा होगा। उत्तरकी ओर जानेवाले प्रवाहको दक्षिणवाही बनाकर उसे पूर्वकी ओर प्रवाहित होनेको बाध्य किया होगा। गंगाकी साधनामें समा गये राजर्षि भगीरथ। लेकिन भागीरथी आज भी उस महान् शिल्पी, महान् संकल्पी, महान् तपस्वी और परम पुरुषार्थीको अपने आँचलमें खोज रही हैं। कहाँ गये भगीरथ? धरतीपर आनेसे पहले मैंने पूछा था कि 'सबके मैलको मैं धोऊँगी, किंतु जब मैं मैली हो जाऊँगी तो मेरा मैल कौन धोयेगा? सबकी प्यास मैं बुझाऊँगी, किंतु जब मेरी धाराओंमें शीतल जलकी जगह तपती रेत उड़ेगी तब कौन बुझायेगा मेरी प्यासको?'

तब तुमने भरोसा दिलाया था कि 'तटवर्ती आश्रमोंमें निवास करनेवाले ऋषि, मुनि, सन्त, महात्मा अपनी निष्काम साधनासे आपका मैल धोयेंगे। वनवासी वृक्ष बादलोंको आकर्षकर आपकी प्यास बुझायेंगे।' किंतु कहाँ गये वे सब आज? आज तो अमृतकी जगह बचा है मुझमें विष और शीतल जलकी जगह सूखी रेत। अब मेरी धाराओंमें आरतीके दीप नहीं जलते, पूजाके पुष्प समर्पित नहीं होते। अब तो मुझमें बहाये जाते हैं कारखानोंके कचरे, बहायी जाती है गलियोंकी गन्दगी। स्वर्गसे मुझे लानेवाले भगीरथ! तुम मुझे धरतीपर क्या इसीलिये लाये थे कि मैं जहाँ-तहाँ बाँधी जाऊँ और गन्दगीको ढोती रहूँ? यदि तुम मेरी पावनताकी रक्षा नहीं कर सकते तो मुझे वापस लौटा दो उसी ब्रह्म-कमण्डलुमें।

पुण्यसलिला भगवती भागीरथीकी सतत प्रवाही पीयूष-धारा भारतीय सांस्कृतिक जीवनकी प्रत्यक्ष आधारशिला एवं जीवन्त प्रेरणा रही है। जन्मसे लेकर मृत्युतक वह हमारे साथ चलती है। गंगासे हमारा जीवन जुड़ा हुआ है, प्राण बँधे हुए हैं।

त्रितापनाशिनी गंगा यदि आर्यावर्तमें अवतरित न होती तो यहाँकी धरती नरक बन जाती। जिस संसारमें पग-पगपर पाप होनेकी सम्भावना है, श्वास-प्रश्वासमें जहाँ हिंसा है। उस पापमय जगत्‌में पैदा हुआ प्राणी पुण्य कार्य कैसे कर सकता है? धन्य हैं राजर्षि भगीरथ, जिन्होंने अपनी तप-गरिमा तथा पुरुषार्थ-परायणतासे पापोंको समूल नष्ट करनेवाली देवसरिताको सबके लिये सुलभ बना दिया। भागीरथीकी सुधा-धारा संसारी सन्तापोंसे सन्तप्त प्राणियोंके पापोंको बिना विश्राम लिये धोया करती है। इनके यहाँ भेदभाव नहीं, ऊँच-नीचका ध्यान नहीं, समय-असमयका विचार नहीं, पात्र-अपात्रकी परिभाषा नहीं, छोटे-बड़े पापोंका हिसाब नहीं—यहाँ तो *'दरस परस मज्जन अरु पाना। हरइ पाप कह बेद पुराना॥'* की प्रक्रिया चलती रहती है। वेद-पुराण साक्षी हैं—दर्शन-मज्जन करना तो दूर, जो एक बार माँ गंगाका नाम ले लेता है, उसके लिये विष्णुलोकके द्वार

खुल जाते हैं।

कैलासस्थित शिवकी जटाओंसे निकलकर गंगाजी बर्फके नीचे-नीचे बदरिकाश्रमके निकट एक पर्वतपर आ जाती हैं—उस स्थानको 'गोमुख' कहते हैं। यहाँ गौके मुखके समान बर्फकी गुफा है। उसी गुफामें सर्वप्रथम गंगाजीके दर्शन होते हैं। वहाँसे १४-१५ मील नीचे गंगोत्री नामक स्थान है। यहींपर बैठकर भगीरथने तपस्या की थी। चारों ओर हरियाली, देवदारु और भोजपत्रकी नयनाभिराम वृक्षावलि, रजतके समान चमकीली पर्वतश्रेणियाँ दर्शकका मन अनायास मोह लेती हैं। भटवारीमें गंगाजीका पूजन होता है। भटवारीसे आगे हरिप्रयाग (हरसिल) है। हरिप्रयागसे आगे गौरीकुण्ड है। गौरीकुण्डमें एक शिवलिंग है। गंगाकी समस्त धारा उस लिंगके ऊपर गिरती है। इसी कुण्डका जल रामेश्वरम्‌में चढ़ानेका विधान है। वास्तवमें गौरीकुण्ड ही गंगोत्री है। इसके भीतर गंगाजीकी अष्टधातुकी मूर्ति है। यहीं यमुना, सरस्वती, अन्नपूर्णा भी विराजमान हैं। यहाँ शंकराचार्य और भगीरथकी मूर्तियाँ स्थापित हैं। किंवदन्ती है कि पार्वतीजी सखियोंसमेत यहाँ स्नानहेतु आती थीं। इसी कारण इस कुण्डका नाम गौरीकुण्ड हो गया। गंगोत्रीकी यात्राका मुख्य आकर्षण यही है।

हरिद्वारमें गंगाजी सयानी बालिकाकी भाँति गम्भीर हो गयी हैं। ऋषिकेश-जैसी चपलता उनमें दिखायी नहीं देती। देवप्रयागमें अलकनन्दासे इनका सम्मिलन देखकर मन प्रेमानन्दमें निमग्न हो जाता है। उत्तरकाशीमें जलकी शीतलता, स्वच्छता और चपलता देखते ही बनती है। हरिद्वारसे आगे बढ़कर गंगा प्रयाग पहुँचती हैं। यहाँ यमुनासे मिलन होता है। यहाँ गंगाका मध्य विश्रामस्थल है। यहाँसे काशीमें उत्तरवाहिनी होकर गंगाजी आगे चलकर गंगासागर पहुँचती हैं और समुद्रसे मिलकर एकाकार हो जाती हैं। यहाँ गंगाकी लीलाका संवरण हो जाता है। यह गंगाका अन्तिम विश्राम-स्थल है।

गंगातीर्थ—गोमुखसे गंगासागरतक

(श्रीशान्तनुकुमारजी मिश्र)

'तीर्थ' का शाब्दिक अर्थ है—'तीर्यते अनेन' या 'तरति पापादिकं यस्मात्' यानि जिससे तर जाया जाय या जिसके द्वारा पापमुक्त हुआ जाय। जिस पतितपावनी गंगाका उद्गम ही सगरपुत्रोंके उद्धारके लिये हुआ, भगीरथकी तपस्या तथा त्रिदेवोंकी कृपासे जो पृथ्वीपर प्रवाहित हुई और जिस गंगाजलके स्पर्शमात्रसे सगरपुत्र पापमुक्त हुए—वह गंगा स्वयमेव परमतीर्थ है। शास्त्रोंने इसे एक स्थावर, सुगम, नित्यतीर्थ कहा है। वेदों एवं पुराणोंमें गंगाको बारम्बार तीर्थमयी कहा गया है—

'सर्वतीर्थमयी गंगा सर्वदेवमयो हरिः।'

(नृसिंहपुराण)

'न गंगासदृशं तीर्थं न देवः केशवात् परः॥'

(महा०, वनपर्व)

महाभारतमें गंगाके बारेमें कहा गया है—

पुनाति कीर्तिता पापं दृष्टा भद्रं प्रयच्छति।
अवगाढा च पीता च पुनात्यासप्तमं कुलम्॥

'गंगा अपना नाम उच्चारण करनेवालेके पापोंका नाश करती हैं, दर्शन करनेवालेका कल्याण करती हैं तथा स्नान-पान करनेवालेकी सात पीढ़ियोंतकको पवित्र करती हैं।'

जिस गंगाजलकी बूँद-बूँदमें और गंगाजलके कण-कणमें तीर्थ विद्यमान हों, उसके तीर्थोंका वर्णन दुरूह कार्य है। गोमुखसे गंगासागरतक पग-पगपर तीर्थ हैं, परंतु माहात्म्यविशेषको दृष्टिगत रख उद्गमसे सागर-संगमतक गंगातटपर अवस्थित तीर्थभूमियोंका संक्षिप्त विवरण संकलित किया गया है। तीर्थाटन या देशाटन किसी भी दृष्टिसे यह क्षेत्र अद्वितीय है। अबतक असंख्य लोगोंने गंगा-परिक्रमाका पुण्य प्राप्त किया है और हिलैरी-जैसे अनेकोंने Ocean to sky-जैसे अभियानोंका रोमांच भी इसी गंगाक्षेत्रमें प्राप्त किया है।

पर्वतीय क्षेत्रके गंगातीर्थ

भागीरथी गंगा गोमुखमें गंगोत्तरी ग्लेशियरसे निकलती हैं। अलकनन्दाका उद्गम बदरीनाथजीके उत्तरमें है। ये दोनों नदियाँ देवप्रयागमें आकर मिलती हैं—इसके पहले ही मन्दाकिनी तथा धौली गंगाकी धाराएँ भी इनमें मिल चुकी होती हैं। देवप्रयाग संगमके बाद सम्मिलित धाराको 'गंगा' नाम दिया जाता है। वैसे देवप्रयागसे ऊपर भी भागीरथी तथा अलकनन्दा दोनों धाराओंको गंगा नामसे जाना जाता है।

भागीरथीके तटवर्ती तीर्थ

गोमुख—गंगोत्तरीसे गोमुखकी दूरी लगभग २५ कि०मी० है। भागीरथीकी जलधारा सर्वप्रथम गोमुखमें ही प्रकट होती है। यह स्थान समुद्रतलसे लगभग ४००० मीटरकी ऊँचाईपर है। यहाँ कोई मन्दिर नहीं है। गोमुख स्नान तथा पवित्र हिमशिखरोंका दर्शन ही यहाँका माहात्म्य है।

गंगोत्तरी—गोमुखसे करीब २५ कि०मी० उत्तर पश्चिममें यह प्रसिद्ध तीर्थस्थान है। समुद्रतलसे यह स्थान लगभग ३१०० मीटरकी ऊँचाईपर है। आदि शंकराचार्यद्वारा स्थापित गंगाजीकी मूर्ति यहाँके प्रसिद्ध श्रीगंगामन्दिरमें है। यहाँ सूर्यकुण्ड, विष्णुकुण्ड, ब्रह्मकुण्ड आदि तीर्थ हैं। भगीरथशिला भी यहीं है, जिसपर राजा भगीरथने तपस्या की थी।

भैरवघाटी—यहाँ भैरव मन्दिर है। इस स्थानसे कुछ पहले जाड़ गंगा या जाह्नवीकी धारा भागीरथीमें मिलती है।

हरसिल (हरिप्रयाग)—यहाँ श्यामगंगा तथा भागीरथीका संगम है। यहाँसे कुछ दूरीपर गुप्तप्रयाग तथा हरिप्रयाग हैं।

धराली—श्रीकण्ठ शिखरसे दूधगंगा आकर यहाँ भागीरथीमें मिलती हैं। भागीरथीके दूसरे तटपर मुखवा मठ है, जहाँ शीतकालमें गंगामूर्ति गंगोत्तरीसे लाकर पूजी जाती है।

गंगनानी—यहाँ ऋषिकुण्ड नामका पवित्र गर्म जलका स्रोत है।

उत्तरकाशी—उत्तराखण्डका प्रसिद्ध तीर्थ है। यह भागीरथी, असि और वरणा नदियोंके बीचमें है। प्राचीन विश्वनाथ मन्दिर, एकादश रुद्रमन्दिर, गोपेश्वर, परशुराम, दत्तात्रेय, भैरव, अन्नपूर्णा, शिवदुर्गा आदि मन्दिर हैं। जड़भरत मन्दिर तथा आश्रम भी है, जिसके पास ब्रह्मकुण्डमें पिण्डदानादि करते हैं।

अलकनन्दाके तटवर्ती तीर्थ

अलकनन्दाके उद्गमके बाद मार्गमें सत्पथ, स्वर्गारोहण, वसुधारा आदि दुर्गम तीर्थ हैं। आजकल बदरीनाथतक बससे यात्रा की जाती है।

बदरीनाथ—शीतकालमें मन्दिरके कपाट ६ महीने बन्द रहते हैं। बदरीनाथके मन्दिरमें भगवान्‌की चतुर्भुज मूर्ति ध्यानमुद्रामें शालग्राम-शिलाकी बनी है। आदि शंकराचार्यने इसकी स्थापना की थी। भारतके चार धामोंमें यह एक है। मुख्य मन्दिरमें ही सामने गरुड़जी स्थापित हैं। नरनारायण आदि अनेक देवमूर्तियाँ हैं। अलकनन्दामें स्नान सम्भव न होनेके कारण लोग तप्तकुण्डमें नहाकर मन्दिरमें दर्शन करते हैं। तप्तकुण्डके नीचे पंचशिला है। ऋषिकेशसे रुद्रप्रयाग होते हुए बदरीनाथकी दूरी प्रायः २०० कि०मी० है।

विष्णुप्रयाग—यह विष्णुगंगा तथा अलकनन्दाका संगम है। यहाँ विष्णुमन्दिर है। यह नारदजीकी तपोभूमि है।

पाण्डुकेश्वर—पाण्डुद्वारा स्थापित पाण्डुकेश्वर या योगबदरीका मन्दिर है। राजा पाण्डुने कुन्ती तथा माद्रीसहित यहीं तपस्या की थी। पाण्डवोंका जन्म भी यहीं मानते हैं।

जोशीमठ—शीतकालमें बदरीनाथजीकी चलमूर्ति छः महीने यहीं रहती है। ज्योतिष्पीठ शंकराचार्य मठ यहीं है। ज्योतीश्वर शिव भक्तवत्सल भगवान् तथा नृसिंहजीके प्राचीन मन्दिर हैं।

रुद्रप्रयाग—यहाँ मन्दाकिनी नदीका अलकनन्दासे संगम है। केदार तथा बदरीनाथ धामोंके मार्ग यहाँ अलग होते हैं। कोटेश्वर महादेवका लिंग एक गुफामें स्थित है।

श्रीनगर—यहाँ अलकनन्दा धनुपाकार हो गयी है। शंकरमठ, कमलेश्वर महादेव तथा अन्य प्रसिद्ध मन्दिर हैं।

मन्दाकिनी-तटके तीर्थ

रुद्रप्रयागसे केदारनाथजीतक मन्दाकिनीके किनारे अनेक पवित्र तीर्थ हैं। जिनमें अगस्त्यमुनि, गुप्तकाशी, त्रियुगी-नारायण तथा गौरीकुण्ड आदि प्रमुख हैं। केदारनाथसे बदरीनाथ मार्गपर ऊषीमठ, कालीमठ, कालशिला, कोटिमाहेश्वरी आदि तीर्थ हैं।

केदारनाथ—केदारनाथजी द्वादश ज्योतिर्लिंगोंमेंसे एक हैं। केदारनाथमें कोई निर्मित मूर्ति नहीं है। मन्दिरमें अन्य मूर्तियाँ उषा, अनिरुद्ध, कृष्ण, पाण्डव, शिव, उमा आदिकी हैं।

भागीरथी-अलकनन्दा-संगम : देवप्रयाग—यह प्रसिद्ध तीर्थ है। यहाँका सबसे प्रसिद्ध मन्दिर श्रीरघुनाथजीका है। भगवान्‌की काली शिलामूर्ति स्थापित है। संगमके पास ही गंगा-यमुना, आदिविश्वेश्वरके प्राचीन मन्दिर हैं।

मैदानी क्षेत्रके गंगातीर्थ

करीब २५० कि०मी० की पहाड़ी यात्राके बाद गंगा लक्ष्मणझूलाके बाद मैदानोंमें उतरती हैं।

लक्ष्मणझूला—यहाँ लक्ष्मणजीका मन्दिर है। गंगापर केबुल (रस्सों)-से बना झूलता पुल है। बायें तटपर गीताभवन, स्वर्गाश्रम आदि पवित्र स्थान हैं।

ऋषिकेश—यहाँ त्रिवेणी घाटपर स्नान करते हैं। यहाँ प्राचीन भरत मन्दिर, राम मन्दिर, वाराह मन्दिर हैं। लक्ष्मण झूला और ऋषिकेशके बीचमें मुनिकी रेतीपर प्रसिद्ध शिवानन्द आश्रम है। यहाँ नौकासे गंगाको पारकर स्वर्गाश्रम जाते हैं। ऋषिकेशका पौराणिक नाम कुब्जाम्रक भी है।

हरिद्वार—सात पुरियोंमें वर्णित मायापुरी हरिद्वार क्षेत्रके अन्तर्गत है। यह महातीर्थ है। प्रति बारहवें वर्ष कुम्भ और छठे वर्ष अर्धकुम्भ मेला यहाँ होता है। प्रसिद्ध हरिकी पैड़ी (गंगाद्वार), कुशावर्त घाट, बिल्वकेश्वर महादेव, नील धारा, काली मन्दिर, चण्डी देवी, अंजनी देवी तथा गौरीशंकर मन्दिर यहाँके प्रसिद्ध मन्दिर हैं। हरिद्वारमें गंगासे ऊपरी गंगा नहर निकलती है। हरिद्वार प्रसिद्ध रेलवे स्टेशन है।

कनखल—यहाँ नील धारा तथा नहरवाली गंगाकी धारा मिल जाती हैं। इसके पास दक्षेश्वर महादेव, सप्तर्षि आश्रम, सप्त धारा, कपिल स्थान, वीरभद्रेश्वर आदि पवित्र स्थान हैं।

रावली—सहारनपुर-बिजनौरकी सीमापर यह स्थान है। यहाँ मालिन (मालती) नदी गंगासे मिलती है। कहते हैं यहाँपर कण्व ऋषिका आश्रम था।

शुकताल—मुजफ्फरनगरसे तीस किलोमीटर दूर यह पवित्र स्थान गंगा किनारे स्थित है। यहीं श्रीशुकदेवजीने महाराज परीक्षित्‌को श्रीमद्भागवत सुनाया था।

गढ़मुक्तेश्वर—गंगाके दाहिने तटपर यह नगर है। यहाँ मुक्तेश्वर शिवका विशाल मन्दिर है। इसके अतिरिक्त अनेक प्रसिद्ध मन्दिर हैं। गंगाजीका मन्दिर सबसे प्राचीन है। यहीं बूढ़ी गंगा (गंगाकी पुरानी धारा)-का संगम भी है। कार्तिक पूर्णिमा तथा गंगादशहराके प्रसिद्ध मेले लगते हैं।

इसी क्षेत्रमें हस्तिनापुर, गंज, सीतावनी आदि पवित्र क्षेत्र हैं। हस्तिनापुर जैनतीर्थ भी है।

पूठ—पूठका पुराना नाम पुष्पवती था। यहाँ महाकालेश्वर, रघुनाथजी आदिके मन्दिर हैं। सोमवती अमावस्याको यहाँ मेला लगता है। कुछ दूरपर माढ़ू नामका स्थान है, जहाँ मण्डकेश्वर महादेव तथा माण्डव्य ऋषिका मन्दिर है।

अहार—कहते हैं पुराण-प्रसिद्ध राजा परीक्षित्‌के पुत्र जनमेजयने यहीं नागयज्ञ किया था और भगवान्‌ने यहीं वाराहरूप धारण किया था। शिवरात्रि और गंगादशहरापर मेला लगता है।

अनूपशहर—यह अहारसे १२ किलोमीटर दक्षिणमें है। गंगा-किनारे अनेक साधु-आश्रम तथा नर्मदेश्वर शिव, हनुमान्‌जी, चामुण्डा देवीके प्राचीन मन्दिर हैं। कार्तिक पूर्णिमा तथा फाल्गुनमें मेला लगता है।

कर्णवास—अनूपशहरसे बारह किलोमीटर दक्षिण है। कर्णशिला यहाँका प्रसिद्ध स्थान है, जिसपर बैठकर कर्ण दान दिया करते थे। गंगातटपर भूतेश्वर महादेव, कल्याणी देवीका प्रसिद्ध मन्दिर है। शुम्भ और निशुम्भके वधके बाद देवीने यहाँ विश्राम किया था। दोनों नवरात्रों,

कार्तिक पूर्णिमा तथा गंगा दशहरेपर मेले लगते हैं। कर्णवाससे कुछ दूरपर राजघाट, विहारघाट तथा रामघाट आदि पवित्र स्थान हैं। विहारघाटको राजा नलका क्षेत्र भी कहते हैं। रामघाटमें अनेकों प्रसिद्ध मन्दिर हैं। कार्तिक तथा वैशाखी पूर्णिमा और गंगा दशहरामें मेले लगते हैं।

नरोरा—यह बरेली-अलीगढ़ रेलवे लाइनपर स्थित है। यहाँ गंगाजीका मन्दिर है। यहाँसे लोअर गंगा नहर निकलती है।

सोरों—सोरों एक प्रसिद्ध वाराहक्षेत्र है। गंगा यहाँसे अब काफी दूर चली गयी हैं—कुछ विद्वान् सोरोंको गोस्वामी तुलसीदासकी जन्मभूमि भी मानते हैं।

कम्पिल—यह भी गंगाकी अलग हुई धारा गूढ़ गंगापर है। किसी समय यह कम्पिल महानगर था। यहाँ रामेश्वरनाथ और कालेश्वरनाथ महादेवके प्रसिद्ध मन्दिर हैं। यह जैन तीर्थ भी है।

सिंधीरामपुर—(शृंगीरामपुर) शृंगीऋषिका मन्दिर गंगाके दक्षिणी तटपर है। यह स्थान फतेहगढ़से सत्रह किलोमीटर दक्षिण है—शिवजीका प्राचीन मन्दिर है।

कन्नौज—यह पौराणिक स्थान है और पहले गौरवशाली नगर रह चुका है। गंगाजी अब यहाँसे कुछ दूर बहती हैं। महर्षि ऋचीकने महाराज गाधिकी कन्यासे यहीं विवाह किया था। गौरीशंकर तथा देवीके अनेक मन्दिर यहाँ हैं।

बिठूर—यह प्राचीन तथा ऐतिहासिक स्थान है। कहते हैं, ध्रुवका जन्म यहीं हुआ था। गंगापर यहाँ अनेक घाट हैं। ब्रह्माघाट प्रमुख है। कुछ दूरपर बैला रुद्रपुर है, जिसे वाल्मीकिकी भूमि भी मानते हैं।

कानपुर—उत्तर प्रदेशका बृहत्तम नगर है। यहाँ कार्तिक पूर्णिमाको मेला लगता है। यहाँ अनेकों नये भव्य मन्दिर हैं।

परियर—उन्नावसे २० किलोमीटर दूर यह स्थान है। कहते हैं लवकुशने यहाँ अश्वमेधका घोड़ा पकड़ा था। बालकानेश्वर तथा जानकीजीके मन्दिर हैं।

बकसर—यह उन्नाव जिलेमें है। कानपुर-रायबरेली रेलमार्गपर बैसवारा स्टेशनसे २४ किमी० दक्षिणमें स्थित है। कहते हैं, बकसरमें बकासुरका निवास था। वागीश्वर महादेव, महेश्वरनाथके प्राचीन मन्दिर हैं। राजा सुरथ और समाधिवैश्यकी तपोभूमि भी बकसरको ही माना जाता है। कामेश्वरनाथका विशाल मन्दिर यहाँसे ३ किमी० दूर है।

प्रयाग—यह तीर्थराज कहा जाता है। गंगा-यमुना-सरस्वतीका पवित्र त्रिवेणी-संगम यहाँ होता है। शास्त्रोंमें इसे अनन्त महत्त्ववाला स्थान कहा जाता है। प्रति माघमें भक्तजन कल्पवास करते हैं। कुम्भ तथा अर्धकुम्भ प्रयागमें होते हैं। प्रयागमें त्रिवेणी-स्नान, माधव, अक्षयवट, ललितादेवी तथा अन्य असंख्य मूर्तियोंके दर्शनका माहात्म्य है।

झूँसी (प्रतिष्ठानपुर)—त्रिवेणी-संगमके पास गंगापार एक पवित्र स्थान है। प्रयागमें जैनतीर्थ भी है।

विन्ध्याचल-मिर्जापुर—गंगातटपर मिर्जापुर एक पुराना शहर है। यहाँ गंगापर २० घाट तथा अनेक मन्दिर हैं। तारकेश्वरनाथ महादेव एक प्रसिद्ध मन्दिर है। विध्याचलक्षेत्र देवीके सिद्धपीठोंमें एक है। यहाँ विन्ध्याचलकी पहाड़ियाँ हैं। विन्ध्याचलमें विन्ध्यवासिनी देवी, कालीखोह, अष्टभुजाके तीन प्रसिद्ध तीर्थोंका त्रिकोण है। चामुण्डा, अष्टभुजा देवी, भैरव मन्दिर पहाड़ियोंपर हैं। पहाड़ीपर ही गेरुआ तालाब, सीताकुण्ड, भैरवकुण्ड आदि पवित्र स्थान हैं।

चुनार—गंगाके दाहिने तटपर एक किलोमीटर लम्बी पहाड़ीपर चुनारका प्राचीन किला है। इसका प्राचीन नाम चरणाद्रि है। कहते हैं, भगवान् वामनका पहला चरण यहीं पड़ा था। राजा भर्तृहरिने यहीं तप किया था। जरगो नदी यहाँ गंगासे मिलती है—कामाक्षा देवी, गंगेश्वर महादेव आदि अनेक पुराने मन्दिर हैं।

काशी—काशी-महिमासे शास्त्र-पुराणादि भरे पड़े हैं। यह गंगातटपर स्थित शिवजीकी परमप्रिय नगरी, तपःस्थली और मोक्षदायिनी मानी जाती है। सप्तपुरियों (अयोध्या, मथुरा, हरिद्वार, काशी, कांची, अवन्तिका, द्वारका)-में यह प्रमुख पुरी मानी जाती है। यह सर्वविद्याका केन्द्र तथा प्रमुख व्यावसायिक नगर है। द्वादश ज्योतिर्लिंगोंमेंसे एक भगवान् 'विश्वनाथ' तथा

५१ शक्तिपीठोंमेंसे एक 'विशालाक्षी' यहीं काशीमें है। गंगापर अनेक प्रसिद्ध घाट हैं, जिनमें दशाश्वमेध प्रमुख है। विश्वनाथ, दुर्गाजी, संकटमोचनजीके अलावा अनेकानेक प्राचीन पुराणोक्त मन्दिर हैं। गंगा यहाँ पूर्णरूपेण उत्तरवाहिनी हैं। गंगामें असी और वरणा नदियाँ क्रमशः नगरके दक्षिण तथा उत्तरमें मिलती हैं। यह प्रसिद्ध जैनतीर्थ तथा बौद्धतीर्थ भी है। सारनाथ समीपवर्ती पवित्र स्थान है। गंगापार रामनगरमें काशीके भूतपूर्व नरेश रहते हैं।

रजवाड़ी—इस स्टेशनसे कुछ दूर कैथीके पास गंगा-गोमती-संगम है। इसे मार्कण्डेयक्षेत्र कहते हैं। शिवरात्रिका मेला यहाँ होता है।

जमानियाँ—कहते हैं, यहाँ गंगातटपर जमदग्नि आश्रम था।

बलिया—यहाँ पू० टोंस (सरयू)-का गंगासे संगम है। भृगु आश्रम एक प्रसिद्ध स्थान है, जहाँ कार्तिक पूर्णिमाको ददरी मेला लगता है।

बक्सर—बिहारमें प्रवेश करनेके बाद यह पहला प्रसिद्ध तीर्थ है। इसका प्राचीन नाम सिद्धाश्रम है। महर्षि विश्वामित्रका आश्रम यहाँ था, जहाँ भगवान् राम तथा लक्ष्मणने यज्ञकी रक्षा की थी। यहाँ कई प्राचीन शिव मन्दिर हैं। गंगा-किनारे यज्ञकुण्डों तथा चरित्रवनके अवशेष मिलते हैं।

सोनपुर—यहाँ गण्डक गंगामें मिलती है। सोनपुरका हरिहर क्षेत्रका मेला प्रसिद्ध है। हरिहरनाथका मन्दिर है। कुछ लोग इसी स्थानको गजग्राहका युद्धस्थान कहते हैं।

पटना—प्रसिद्ध नगर है, जिसका प्राचीन नाम पाटलिपुत्र है। यहाँ देवीका शक्तिपीठ भी माना जाता है। अनेक पुराने मन्दिर हैं। यह गुरु गोविन्दसिंहकी जन्मस्थली तथा सिख एवं जैनतीर्थ भी है।

बाढ़—यहाँ गंगा उत्तरवाहिनी हैं। गंगातटपर उमानाथ तीर्थ है।

मुंगेर—यहाँ भी गंगा उत्तरवाहिनी हैं। दूसरे तटपर बूढ़ीगंडक गंगासे मिलती है। यहाँ पाँच जलकुण्ड हैं। सीताकुण्ड उष्ण जलकुण्ड है, शेष चार जलकुण्ड (रामकुण्ड, लक्ष्मणकुण्ड, भरतकुण्ड तथा शत्रुघ्नकुण्ड) शीतल हैं। कष्टहरणीघाट मुख्य घाट है। कहते हैं कि यहाँ कर्णकी राजधानी थी।

सुलतानगंज—यहाँ गंगाके बीच एक छोटे द्वीपपर अजगयबीनाथ महादेवका मन्दिर है। यहाँसे गंगाजल काँवरमें ले जाकर वैद्यनाथ धाममें चढ़ाते हैं। कहा जाता है कि जह्नु आश्रम भी यहीं था। अनेक पुराने मन्दिर हैं। माघ पूर्णिमासे शिवरात्रितक मेला लगता है।

बटेश्वर—कोलगाँव स्टेशनके समीप टीलेपर बटेश्वर महादेवका मन्दिर है। यहाँ मौर्यकालमें विक्रमशिला विश्वविद्यालय था।

बंगाल—बंगालमें गंगाकी मुख्यधारा भागीरथीके नामसे जानी जाती है। जो धारा बँगलादेशमें प्रवाहित होती है, वह पद्मा नामसे पुकारी जाती है।

बड़नगर—अजीमगंजसे कुछ पहले यह स्थान है। भवानीश्वर शिवमन्दिरके अलावा बहुत-से प्रसिद्ध मन्दिर हैं। यहाँसे कुछ दूरपर स्थित किरीटस्थानके देवी मन्दिरको शक्तिपीठ माना जाता है।

कटवा—यह अंजय तथा गंगाके संगमपर स्थित है। केतुग्राममें देवीमन्दिर है, यह ५१ शक्तिपीठोंमेंसे एक है। केतुग्राममें ही गौरांग महाप्रभुने संन्यास लिया था। यहाँसे कुछ दूरपर अग्रद्वीप, मोग्राम आदि तीर्थ हैं।

नवद्वीपधाम—यह चैतन्य महाप्रभुकी जन्मभूमि और गौड़ीय वैष्णव संप्रदायका परमतीर्थ है। चैतन्य देवके अनेक मन्दिर तथा आश्रम यहाँ हैं।

मायापुर—यह गौड़ीयमठका मुख्य स्थान है। राधागोविन्द, सीताराम आदिके मन्दिर हैं। आसपास कई गौड़ीय वैष्णव तीर्थ हैं।

सिद्धेश्वर—कृष्णनगरके पास यहाँ सिद्धेश्वर शिवका प्राचीन मन्दिर है।

शान्तिपुर—अद्वैत गोस्वामीका स्थान है। गौड़ीय वैष्णव तीर्थ है। श्यामचन्द्र, गोकुलचन्द, जलेश्वर महादेव तथा कालीके मन्दिर हैं।

कलना—यहाँसे कुछ दूर गुप्तीपाड़ामें अनेक प्राचीन मन्दिर हैं। श्रीरामचन्द्र, कृष्णजी तथा चैतन्यदेवके मन्दिर हैं। कुछ दूरपर बालागढ़ भी तीर्थस्थान है।

कलकत्ता—महानगर कलकत्ता गंगापर स्थित सबसे विराट् नगर है। यहाँ ५१ शक्तिपीठोंमेंसे एक शक्तिपीठ भी है। काली मन्दिर, आदिकाली, रामकृष्णदेवका प्रसिद्ध स्थल दक्षिणेश्वर मन्दिर आदि यहाँके पवित्र तीर्थ हैं। इनके अलावा अनेक प्रसिद्ध मन्दिर भी हैं। दक्षिणेश्वर गंगातटपर अन्तिम प्रमुख तीर्थ है। कलकत्ताके आसपास श्रीरामपुर, सिवड़ाफूली, चकदह, त्रिवेणी, वल्लभपुर आदि अनेक प्रसिद्ध स्थान हैं। त्रिवेणीको मुक्त त्रिवेणी भी कहते हैं; क्योंकि यहाँ गंगा फिर तीन धाराओंमें बँटती है। पुराणोंमें इसका माहात्म्य वर्णित है। गंगा दशहरा, वारुणी, संक्रान्तिको अनेक मेले लगते हैं।

गंगासागर—गंगासागर-संगमपर यह महातीर्थ, अन्तिम गंगातीर्थ है। यह कलकत्तासे करीब १५० किलोमीटर पड़ता है। गंगाका मुहाना सागर द्वीपसे अब काफी पीछे हट गया है। मकर-संक्रान्तिको यहाँ तीन दिन स्नान होता है। यहाँ कभी कपिल मुनिका मन्दिर था, अब मेलेके समय अस्थायी मन्दिर बनाकर मूर्ति स्थापित की जाती है। [सन्मार्ग]

भागीरथी गंगाके पग-पगपर तीर्थ

(डॉ० श्रीलक्ष्मीनारायण टण्डनजी 'प्रेमी')

भागीरथी गंगा गंगोत्तरी ग्लेशियरसे निकली है, जो १५ मील लम्बा है। प्रसिद्ध तीर्थ गंगोत्तरीसे यह ऊपर है। गंगाका उद्गम यही स्थान है। गोमुख-धारासे गंगाके दर्शन होते हैं। अनेक छोटी-छोटी धाराएँ इस भागमें निकलकर एक-दूसरेसे मिलती हैं। यहाँ गंगा कम चौड़ी हैं, किंतु प्रवाह अत्यधिक तीव्र है। भैरोंघाटीपर जाड़गंगा उत्तरसे आकर इसमें मिली है। अलकनन्दाका भागीरथीसे देवप्रयागपर संगम है। अलकनन्दाको भी वहाँके लोग गंगाजी ही कहते हैं। देवप्रयागसे ऊपर दोनों ही नदियाँ गंगा कहलाती हैं। अलकनन्दा तथा उसकी मुख्य सहायक नदियोंका उद्गम हिमालय-पर्वतकी मुख्य श्रेणीके दक्षिणी ढालमें है। जोशी-मठपर अलकनन्दाका भी धौली गंगासे संगम हुआ है। वसुधारा-प्रपातके निकटसे अलकनन्दाके दर्शन होते हैं और वहीं उसका उद्गम है। धारटोलीमें अखा नदी इससे मिलती है। यहाँ अलकनन्दा सरस्वती कहलाती है। अनेक छोटी-छोटी धाराओंका इस ओर अलकनन्दासे संगम होता है। नन्दा-देवीके बेसिनसे ऋषि-गंगाका फिर संगम है। धौली-गंगाका उद्गम १६,६२८ फुट ऊँचेपर स्थित नीति दर्रा है। मलारी ग्राममें गिरथी नदी इसमें मिली है। धौली-गंगासे विष्णुप्रयागमें संगम होनेके बाद नदीका नाम अलकनन्दा पड़ता है। त्रिशूलके पश्चिमी ढालवाले ग्लेशियरसे निकली मन्दाकिनी नदीका विष्णुप्रयागमें अलकनन्दासे संगम है। नन्दकोटके पिंडारी ग्लेशियरसे निकली पिण्डर नदीका कर्णप्रयागमें अलकनन्दासे संगम है। मन्दाकिनी नदीका उद्गम केदारनाथके पाससे है। रुद्रप्रयागमें मन्दाकिनीका अलकनन्दासे संगम है। लक्ष्मणझूलेसे केदारनाथतक गंगाके किनारे स्थित देवप्रयाग एवं श्रीनगरसे रुद्रप्रयाग, गुप्तकाशी आदि होते हुए जाते हैं। ऊषीमठ, मन्दाकिनी नदीकी घाटीमें है। अलकनन्दाकी घाटीमें चमोली है। केदारनाथसे ऊषीमठ तथा तुंगनाथ होते चमोली आते हैं। चमोलीसे बदरीनाथको जाते हैं। भागीरथीसे अलकनन्दाका संगम देवप्रयागमें होनेके बाद, व्यास-घाटपर नायर-संगम होता है। पूर्वी नायर तथा पश्चिमी नायर दोनों धाराएँ भटकोलीमें मिल जाती हैं। व्यास-घाटसे लक्ष्मणझूलेतक गंगाका बहाव पश्चिमकी ओर है। इस प्रकार हम देखते हैं कि देवप्रयागके बादसे गंगा कहलानेवाली अलकनन्दा तथा भागीरथी दोनों आपसमें मिलकर गंगा नामसे लक्ष्मणझूलेकी ओर बहती हैं।

लक्ष्मणझूलेमें गंगा कम चौड़ी, किंतु अधिक गहरी और काफी नीचे खड्डमें प्रबल वेगसे घहराती हुई बहती हैं। यहाँसे ३ मील गंगातटपर ऋषिकेश है। चन्दन

वाराव नदीका यहाँ संगम है। फिर लगभग १० मील बाद रायवालाके निकट संग तथा सुसवाका गंगासे संगम होता है। सुसवा नदी आसारोरी-देहरा सड़कके पूर्व एक जलाशयसे निकली है। रिसपान राव और किन्दल नदियाँ सुसवामें मिलती हैं। संग नदी कंस रावसे थोड़ी दूरपर सुसवासे मिली है, जिसका उद्गम टेहरीमें है। फिर लगभग २ मील नीचे जाखन राव सुसवासे मिली है।

लक्ष्मणझूलेसे गंगा गढ़वाल और देहरादून जिलोंकी सीमापर बहती हुई हरिद्वारतक आती है। सर्वनाथ-मन्दिरके पास लालताखका गंगासे संगम है। मायापुर स्थानसे १८५५ ई० में गंगासे नहर निकाली गयी थी, जो लगभग ६१५ मील बहकर फिर कानपुरमें गंगासे मिल जाती है। गंगाकी अनेक धाराएँ हो जाती हैं। मुख्य धारा नीलधारा कहलाती है। मायापुरसे लगभग एक मील बाद कनखलमें नीलधारा गंगामें मिल जाती है। कनखलसे लगभग ४ मील नीचे बाणगंगा, जो गंगाकी ही एक शाखा थी, गंगासे मिल जाती है। हरिद्वारके बाद सहारनपुर जिलेमें गंगा आती है और पूर्वकी ओर बहती है।

नदीकी प्रायः तीन अवस्थाएँ होती हैं—(१) पर्वतीय अवस्था, (२) मैदानी अवस्था और (३) डेल्टा अवस्था। हरिद्वारतक गंगाकी पहली अवस्था रहती है और उसके बाद गंगाकी द्वितीय अवस्था प्रारम्भ हो जाती है। बालावलीके बाद नदीके तलमें पत्थर मिलना बहुत कम हो जाता है और धाराकी तीव्रता भी कम हो जाती है। पहाड़ी प्रदेश पार करनेपर भाभरके इलाकेमें नदीका प्रवेश हो चुकता है। फिर गंगा-नदीका प्रवेश बिजनौर जिलेमें होता है। गढ़वालसे निकली पैलीराव नदी शामपुरसे दो मील नीचे गंगासे मिलती है। यहाँसे लगभग चार मील दक्षिण-पश्चिम लालभंगके निकट खासन नदी आकहू-गंगामें मिलती है। कोटवाली रावका संगम आसफगढ़के निकट हुआ है। सैफपुर खादरसे निकली हुई लहपी नदी रावली झालमें मिल जाती है। गढ़वालसे निकली मालिन नदी नजीबाबाद परगनेमें तीन धाराओंमें विभक्त हो जाती है—पश्चिमवालीको रतनाल और पूर्ववालीको रिवारी कहते हैं। रतनाल, साहनपुरके पास और रिवारी भोगपुरके पास मालिनसे मिल जाती है और फिर रावलीके पास स्वयं मालिन नदी गंगासे मिल जाती है। कण्वऋषिका आश्रम यहीं था। नजीबाबाद परगनेके समीपुर ग्रामसे निकली छोइया नदीका संगम जहानाबादसे २ मील नीचे होता है। इसकी सहायक नदियाँ खलिया और पदोही क्रमशः पडला और मेमनके निकट मिल जाती हैं।

इसके बाद गंगा मुजफ्फरनगर जिलेमें बहती है। गंगातटपर शुकताल नामक स्थानपर ही राजा परीक्षित्को शुकदेवजीने कथा सुनायी थी। पूर्वकी ओर बहती हुई गंगा फिर मेरठ जिलेमें प्रवेश करती है। बूढ़गंगा मुजफ्फरनगरसे फीरोजपुर ग्रामके निकट इस जिलेमें प्रवेश करती है और गढमुक्तेश्वरमें उसका गंगासे संगम होता है। इस जिलेमें गंगातटपर गढमुक्तेश्वर तथा पूठ-दो ही प्रमुख स्थान हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि हरिद्वारतक गंगा पर्वतीय भागपर बहती है और फिर वहाँसे पूठतक भाभर तथा खादरके दलदली जंगलों आदिको यह पार करती है। इसके बाद नदी मैदानमें आ जाती है। यहाँ नदीका बुलन्दशहर जिलेमें प्रवेश हो जाता है। गंगातटपर अहार, अनूपशहर, राजघाट तथा रामघाट बसे हुए प्रसिद्ध स्थान हैं। अहार प्राचीन स्थान है। यहीं महाराज जनमेजयने नाग-यज्ञ किया था। मोहम्मदपुर ग्राम भी गंगातटपर अपने चैत्र-वैशाखके नागराजके मेलेके लिये प्रसिद्ध है। यहाँ अम्बिकादेवीका मन्दिर है। कुछ लोग कहते हैं कि भगवान् श्रीकृष्णने यहींसे रुक्मिणीका हरण किया था। अहारसे ८ मील दक्षिण अनूपशहर है। कार्तिक-पूर्णिमा तथा फाल्गुनमें यहाँ मेले लगते हैं। यहाँसे ८ मील दक्षिण दानवीर कर्णका बसाया कर्णवास स्थान है। यहाँ कल्याणीदेवीका प्रसिद्ध मन्दिर है। कर्णशिला यहाँका दर्शनीय ऐतिहासिक स्थान है। यहाँ गंगा-दशहरापर बड़ा भारी मेला लगता है। कर्णवाससे ३ मील दक्षिण राजघाट है। यहाँसे चार

मील दक्षिण नरोरा स्थान है, जहाँसे लोअर-गंगानहर निकाली गयी है। यहाँसे ४ मील दक्षिण प्रसिद्ध तीर्थ रामघाट है। कार्तिकी तथा वैशाखी पूर्णिमा एवं गंगा-दशहरापर यहाँ प्रसिद्ध मेले लगते हैं। कोयल स्थानमें कोलापुर दैत्यका वध करनेके बाद बलदाऊजीने इसे बसाया था। बिजनौरसे निकलकर गंगा मुरादाबाद जिलेमें आती है। कृष्णी और बैया नदियाँ आजमगढ़के निकट धाव झीलमें मिलती हैं। बैया इससे निकलकर टिगरीके पास गन्दौलीपर गंगासे मिलती है। यहाँ अनेक छोटी-मोटी धाराएँ गंगासे मिलती हैं। इस भागमें अनेक छोटी-मोटी झीलें हैं। अनेक धाराएँ उनमेंसे निकलतीं तथा उनमें मिलती रहती हैं। बाढ़के समय गंगाका जल इन अनेक झीलोंके जलसे मिलकर पृथ्वीको जलमग्न कर देता है। उसके बाद गंगा बदायूँ जिलेमें प्रवेश करती है। इस भागमें भी अनेक झीलें हैं तथा अनेक छोटी-मोटी धाराएँ इनमें गिरती-निकलती रहती हैं। महावा नदी मुरादाबाद जिलेसे निकलती है। सहसवानमें इससे छोइया नदी आकर मिलती है और यह स्वयं उझियानी परगनामें गंगासे मिल जाती है। बदाऊँसे १७ मील दूर कछला नामक स्थानपर गंगाका बड़ा मेला गंगा-दशहरापर लगता है। कछलासे ६ मील ककोरा स्थानपर भी कार्तिक-पूर्णिमाको बड़ा मेला लगता है। फिर गंगाका प्रवेश एटा जिलेमें होता है। गंगासे ४ मील दूर बूढ़गंगापर प्रसिद्ध सोरों तीर्थ है। गंगातटपर कादिरगंज नामक प्रसिद्ध स्थान है। एटा जिलेके बाद गंगाका प्रवेश शाहजहाँपुर जिलेमें होता है। ढाईघाट नामक स्थानपर कार्तिक-पूर्णिमाको बड़ा मेला लगता है। इसके बाद गंगा फर्रुखाबाद जिलेमें आती है। कुसुमखोर और दाईपुर तटवर्ती प्रसिद्ध स्थान हैं। इन जिलोंमें गंगासे कई धाराएँ निकलती और मिलती हैं। कम्पिल स्थानमें ऐसी ही एक धारा दो भागोंमें विभाजित हो जाती है, जिनमेंसे एक धारा तो उत्तरकी ओर बहती हुई गंगामें मिलती है और दूसरी अजीजाबादके पास गंगासे मिली है। फीरोजपुर-कटरीके पास काली नदीका गंगासे संगम है। बूढ़गंगापर कम्पिल प्रसिद्ध स्थान है। यहाँ द्रौपदीका स्वयंवर हुआ था। गंगासे अलग हुई धाराओंको लोग बूढ़गंगाके नामसे पुकारते हैं। गंगातटपर फर्रुखाबाद प्रसिद्ध स्थान है। फतेहगढ़ यहाँसे ३ मील है। फतेहगढ़से ११ मील दक्षिण सिन्धीरामपुर प्रसिद्ध स्थान है, जहाँ कार्तिक-पूर्णिमा तथा गंगा-दशहरापर बड़े मेले लगते हैं। फिर गंगा हरदोई जिलेमें बहती है। हैदराबादके पास रामगंगा इससे आकर मिली है। इसके बाद गंगाका प्रवेश कानपुर जिलेमें होता है। इस जिलेमें गंगाकी सहायक ईसन और नोन दो ही नदियाँ हैं। ईसन नदीका उद्गम अलीगढ़ जिलेमें है। महगावाँके निकट इसका गंगासे संगम है। नोन नदीका उद्गम फर्रुखाबाद है। इसका गंगासे संगम फतेहपुरसे ३ मील आगे हुआ है। बिल्हौरमें नई, शिवराजपुरमें लौखा, कानपुरमें भोनी तथा नरवलमें फगइया और भोनरी नदियाँ गंगासे मिली हैं। गंगातटपर नानामऊ स्थान है जो बिल्हौरसे ४ मील दूर है। इसीके लिये कहावत प्रसिद्ध है—'देशभरका मुर्दा और नानामऊका घाट।' सैरयाघाट तथा बदीमाताघाट गंगातटपर प्रसिद्ध स्थान हैं। बिठूर गंगातटपर अत्यन्त प्रसिद्ध तीर्थ है। कार्तिक-पूर्णिमाको यहाँ तथा कानपुरमें, जो गंगातटपर प्रसिद्ध नगर है, बड़े मेले लगते हैं। इसके बाद गंगाका प्रवेश उन्नाव जिलेमें होता है। मराँदाके निकट कल्याणीका गंगासे संगम है। डौंड़ियाखेरा नामक प्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थान गंगातटपर है तथा यहाँसे ३ मीलपर बकसर नामक प्रसिद्ध स्थान है, जहाँ कार्तिक-पूर्णिमाको बड़ा मेला लगता है। फिर गंगा रायबरेली जिलेमें आती है। इटौरा बुजुर्गके जलविभाजकके दक्षिणसे निकली हुई छोव नदी शहजादपुरके पास गंगासे मिलती है। उन्नाव जिलेसे निकली लोन नदी डलमऊके निकट गंगासे मिलती है। गंगातटपर खजूरगाँव प्रसिद्ध स्थान है। डलमऊ यहाँसे ५ मील है। कार्तिक-पूर्णिमाको यहाँ भी बड़ा मेला लगता है। फिर गंगाका प्रवेश फतेहपुर जिलेमें होता है। गंगातटपर शिवराजपुर एक अच्छा स्थान है। यहाँ भी कार्तिक-पूर्णिमाको मेला लगता है। तदनन्तर गंगाका

प्रवेश इलाहाबाद जिलेमें होता है। सिंगरौर (शृंगवेरपुर) गंगातटपर प्राचीन स्थान है। फाफामऊके बाद प्रयागमें गंगा-यमुनाका प्रसिद्ध संगम है। पहले सरस्वती नदीका भी गंगामें संगम था और इसीसे संयुक्त धाराका 'त्रिवेणी' नाम पड़ा था। गंगाके उस पार झूँसी या प्रतिष्ठानपुर अति प्राचीन स्थान है। यमुना-पार अरैल स्थानमें शिवरात्रिपर बड़ा मेला लगता है। प्रत्येक वर्ष मकर-संक्रान्तिपर, छठे वर्ष अर्धकुम्भी तथा बारहवें वर्ष कुम्भके अवसरपर लाखों यात्री संगम-स्नानके लिये आते हैं। सिरसानगर, लच्छागिर आदि प्रसिद्ध स्थान गंगातटपर हैं। बैरगिया नाला गंगासे मिलता है। स्वर्गीय रायबहादुर श्रीसीतारामकी प्रसिद्ध कविता 'बैरगिया नाला जुलुम जोर' इसीके आधारपर लिखी गयी थी। गंगातटपर कुटवा, चक सराय दौलतअली, अकबरपुर, शाहजादपुर, कीहइनाम, संजैती, पट्टीनरवर, कोराईउजहनी, उजहनी पट्टी कासिम, उमरपुर निरावन, दारागंज, अरैल, लवाइन, मनैया, डीहा, लकटहा, सिरसा, बिजौर, मदरा मुकुन्दपुर, परनीपुर, चौखटा और डींगरपुरमें गंगा-पार करनेके घाट हैं। फिर गंगा मिर्जापुर जिलेमें प्रवेश करती है। विन्ध्याचल, मिर्जापुर तथा चुनार गंगातटपर प्रसिद्ध नगर हैं। अनेक नाले गंगाके इस भागमें मिले हैं। जिरगो नाला चुनारके पास गंगासे मिला है। विलवा, दहवा, खजूरी, लिगड़ा, करनौटी आदि अन्य स्थान हैं। फिर गंगा बनारस जिलेमें आती है। सुभा नाला बेतावर गाँवके पास गंगासे मिला है। रामनगर तथा काशीके प्रसिद्ध नगर इसके तटपर बसे हैं। वरुणाका काशीमें गंगासे संगम है। आगे चलकर गोमती नदी भी गंगासे मिलती है। इसके बाद गाजीपुर जिलेमें गंगा प्रवेश करती है। यहाँ कई छोटी-छोटी धाराएँ गंगामें मिलती हैं। गंगातटपर गाजीपुर प्रसिद्ध नगर है। इसके बाद गंगा बलिया जिलेमें प्रवेश करती है। गंगातटपर बलिया प्रसिद्ध नगर है तथा अपने मेलेके लिये प्रसिद्ध है। इसके बाद गंगाका प्रवेश शाहाबाद जिलेमें होता है। शाहाबादके पास कर्मनाशा नदीका गंगासे संगम होता है। पर अबतक गंगा उत्तरप्रदेश प्रान्तको छोड़ चुकी होती है और विहार प्रान्तमें आ जाती है, अतः हमारा वर्णन भी अब समाप्त होता है।*

इस प्रकार गंगाके वर्णनमें हमने देखा कि सैकड़ों गाँव, कस्बे तथा प्रसिद्ध नगर इसके तटपर बसे हैं। सैकड़ों छोटे-मोटे तीर्थस्थान तथा ऐतिहासिक और धार्मिक स्थान इसके तटपर सुशोभित हैं। गंगाके पग-पगपर तीर्थ हैं। गंगा स्वयं तीर्थ-स्वरूपिणी है।

एक बात और याद रखनी चाहिये। गंगा सदासे अपना मार्ग बदलती रही है, यद्यपि यह कार्य बहुत धीरे-धीरे होता है। फलस्वरूप प्राचीन कालमें जिन स्थानोंपर गंगा बहती थी और तदनुसार जो स्थान उस समय महत्त्वपूर्ण थे, आज उनमेंसे बहुतेरे स्थानोंको गंगा छोड़ चुकी है और उनका पहले-जैसा महत्त्व नहीं रहा है। साथ ही जहाँ पहले वे नहीं थीं, उन स्थानोंपर आज गंगाजी बह रही हैं।

इतने बड़े प्रान्तमें असंख्य गाँव, कस्बे और नगर हैं और प्रत्येक स्थानमें अनेक देवमन्दिर तथा प्रसिद्ध धार्मिक स्थल हैं। किंतु इस प्रान्तमें कुछ अत्यधिक प्रसिद्ध तीर्थ हैं। उत्तरी पर्वतीय भागमें हरिद्वार, बदरी-धाम, केदारनाथ, गंगोत्तरी, यमुनोत्तरी आदि हैं। दक्षिणी पर्वतीय भागमें विन्ध्याचल तथा चित्रकूट आदि हैं तथा मैदानी भागमें काशी, सारनाथ, अयोध्या, प्रयाग, गोला गोकर्णनाथ, बिठूर, नैमिषारण्य-मिश्रिख, हत्याहरण, व्रजके समस्त स्थान (मथुरा, दुर्वासाश्रम, वृन्दावन, रावल, गोकुल, महावन, रमणरेती, ब्रह्माण्डघाट, बड़े दाऊजी, गोवर्धन, जतीपुरा, राधाकुण्ड, डीग, कामवन, कोसी, छाता, नन्दगाँव, प्रेमसरोवर, बरसाना, मधुवन, कुमुदवन आदि), देवीपाटन, सोरों (वाराहतीर्थ या सूकर क्षेत्र), गढ़मुक्तेश्वर, नटेश्वर, रामघाट आदि प्रसिद्ध तीर्थस्थान हैं।

* गङ्गा-सम्बन्धी यह वर्णन 'भूगोल' के विशेषाङ्क 'गङ्गा अङ्क' के आधारपर है।

गंगोत्तरी

[यात्रा-संस्मरण]

(श्रीरामेश्वरजी टाँटिया)

विश्वकी प्रधान नदियोंमें गंगाका एक विशिष्ट स्थान है। वैसे अफ्रीकाकी नील, दक्षिण अमेरिकाकी अमेजन और उत्तर अमेरिकाकी मिसीसिपी नदियाँ गंगासे दुगुनेसे भी अधिक बड़ी हैं, भारतकी ब्रह्मपुत्र और सिन्धु भी गंगासे २५० मील अधिक लम्बी हैं; परंतु जो महत्ता गंगाको प्राप्त है, वह इन सबको नहीं। ब्रह्मपुत्रका अधिकांश भाग तिब्बतमें और सिन्धुका पाकिस्तानमें रह जाता है, जब कि गंगा पूर्णरूपसे भारत-भूमिको शस्यश्यामला और सुजला बनाती हैं। गंगा हमारे लिये केवल नदी ही नहीं हैं, अपितु जीवनदात्री, अन्नदात्री और मातृस्वरूपा हैं।

गोमुख और गंगोत्तरीसे जल लेकर लोग २५०० मीलकी लम्बी यात्राकर सुदूर दक्षिण भारतके रामेश्वर और कन्याकुमारीकी मूर्तियोंको उस पवित्र जलसे स्नान कराकर अपने जीवनको धन्य मानते हैं।

गंगा और सिन्धुका इतिहास आर्य सभ्यतासे भी प्राचीन है। यह कहनेमें अत्युक्ति न होगी कि भारतीय संस्कृति और सभ्यता इन्हीं दोनों नदियोंके तटपर पनपी है—फली-फूली है। गंगापूजनसे मनमें पवित्र भावोंकी जागृति होती है और शुभकर्मोंकी प्रेरणा मिलती है।

यदि आप गंगोत्तरी जाकर गंगामें गोता लगाते हैं तो वह काशी, नवद्वीप और गंगासागरके समग्र जलमें स्नान करनेके बराबर होता है; क्योंकि १५०० मीलकी अजस्र प्रवाहित धारा तो अविभाज्य और अटूट है। भला, इससे अधिक राष्ट्रिय एकताका उदाहरण और क्या होगा?

जहाँ श्रीमद्भगवद्गीतापर जगद्गुरु शंकराचार्य, सन्त ज्ञानेश्वर, लोकमान्य तिलक-जैसे सन्तों और विद्वानोंने अपने-अपने ढंगसे टीकाएँ लिखी हैं, वहीं साधारण पाठकोंके लिये सैकड़ों अन्य लोगोंने भी सरल शब्दोंमें इस महान् ग्रन्थको सुलभ बनानेका प्रयास किया है। एक बड़े यज्ञमें वेदपाठी विद्वानोंके साथ-साथ 'स्वाहा'का उच्चारणकर साधारण भक्त भी आहुति देते रहते हैं, इन्हीं उदाहरणोंसे उत्साहित होकर अपने ज्ञानको स्वल्प जानते हुए भी मुझे यमुनोत्तरी-गंगोत्तरीपर लिखनेका उत्साह मिला है। अस्तु,

यमुनोत्तरीकी यात्रा करके हम चारों साथी दंडोटी चट्टीतक घोड़ोंपर वापस आये। जाते समय जहाँ दो दिन लगे, वहाँ लौटते समय केवल चार घण्टेमें ही वापस आ गये थे।

पण्डाजीको विदा किया, घोड़ेवालोंका, भारवाही मजदूरोंका और मोदीका हिसाब चुकता किया। उन्हें ऊपरसे कुछ पुरस्कार भी दिया। इन्हें वर्षमें केवल चार महीने काम मिलता है, खेतीकी जमीन है नहीं, अतः ये अत्यन्त गरीबी और अभावमें जीवन व्यतीत करते हैं।

हमलोग ऋषिकेशसे ही भोजन बनानेका पर्याप्त सामान लेकर चले थे, परंतु अभीतक उसका विशेष उपयोग नहीं हो पाया था। ऊँची चढ़ाई और लगातार यात्रासे थकावट आ जाती, इसलिये हमलोग दूकानदारोंके यहाँसे गर्म-गर्म दाल-फुल्का या पूड़ी-मिठाई लेकर खाते थे। आज श्रीकृष्ण-प्रिया यमुनासे साक्षात् करके आ रहे थे, मन प्रसन्न था; अतः सब मिलकर रसोईकी व्यवस्था करने लगे।

दूध पर्याप्त मिल रहा था। मेरे एक मित्र खीर बनाना चाहते थे तो दूसरे मित्र हलवे-पूड़ीके पक्षमें थे, मुझे दाल-फुल्कामें ही सन्तोष था; आखिर प्रथम मित्रकी ही बात रही। हलवाईसे छः सेर दूध लेकर कड़ाहीमें औटानेके लिये चढ़ा दिया गया, आधा सेर बासमती चावल डाल दिये गये। रसदार सब्जी बनी, अपने पासका घी देकर हलवाईसे गर्म पूड़ियाँ बनवायी गयीं। यथेष्ट भोजन करनेके पश्चात् मोटरमें सामान लादकर दण्डोटीको प्रणामकर हम तीन बजे वहाँसे चल

पड़े। हमें रात्रिमें उत्तरकाशी जाकर ठहरना था। यहाँसे धरासू होकर आनेसे उत्तरकाशी ६० मीलकी दूरीपर है। मार्ग उतारका था, परंतु पहाड़ी मार्ग चाहे चढ़ावके हों या उतारके, वहाँ मोटर सदैव धीरे-धीरे सावधानीपूर्वक ही चलानी पड़ती है।

हम उत्तरकाशी पहुँचे, तबतक सन्ध्या बीत चुकी थी। मन्दिरोंमें आरती और घण्टोंकी आवाज हो रही थी। हम रात्रिमें बिड़ला-धर्मशालामें ठहरे। वहाँ साफ-सुथरे और हवादार कमरे तथा बिजली-पानी आदिकी पूरी सुविधाएँ हैं।

कहते हैं, किरातार्जुन-युद्ध यहीं हुआ था। ऐसी भी मान्यता है कि कलियुगमें जब काशी लोप हो जायगी, तब यही काशी रहेगी। काशीकी तरह यहाँ भी अस्सी, वरुणा, दशाश्वमेध और मणिकर्णिकाघाट हैं।

सम्भवतः ३०-३५ वर्ष पहले यह साधु-सन्तों और योगियोंकी भूमि थी, आज भी उनके आश्रम इसके आस-पासके वनप्रान्तरमें वर्तमान हैं। कुछ योगी-महात्मा इस समय भी विद्यमान हैं, परंतु अब तो यह एक बड़ा कस्बा हो गया है।

उत्तराखण्डके तीनों धामों तथा टेहरी राज्यका केन्द्रस्थल होनेके कारण यहाँ रात-दिन मोटरों, बसों और ट्रकोंकी चिल्ल-पों मची रहती है। बाजारमें सैकड़ों दूकानें हैं। लोग दोनों ओरकी कठिन यात्रासे थककर आते हैं, सम्भवतः इसीलिये यहाँ चाट और मिठाईकी बीसियों दूकानें हैं।

प्रातः हम सबने भागीरथी स्नान किया। वर्षाका मौसम था, नदी पूरे उफानपर थी, पानी भी मटमैला था। जो आनन्द हरिद्वार या देवप्रयागके संगममें आया, वह यहाँ नहीं था। स्नान करके सब लोग श्रीविश्वनाथ-मन्दिरमें दर्शन करने गये। यहीं एक पण्डाजी साथ हो गये। इसी प्रांगणमें शक्तिका भी एक प्राचीन मन्दिर है। उसमें एक २६ फीट लम्बा बहुत मोटा त्रिशूल है। कहते हैं, यह देवासुर-संग्रामके समयका है। उसपर जो लेख है, वह पुरातत्त्ववेत्ताओंके मतानुसार आजसे एक हजार वर्ष पूर्व राजा गुहकी विजय-यात्राके विषयमें है। जो भी हो, हमने आजतक इतना बड़ा त्रिशूल तो क्या तोप भी नहीं देखी थी।

इसी प्रांगणमें एक बुद्ध-मूर्ति भी है। सम्भव है, किसी समय यहाँ बौद्ध-धर्मका प्रभाव रहा हो। उत्तरकाशीकी ऊँचाई ३८०० फीट है। यह घाटीमें है, इसके चारों ओर उच्च गिरि-शिखर हैं। चीड़ और देवदारुके वृक्षोंसे सुगन्धित एवं ठण्डी हवा तथा पहाड़ोंके ऊपरसे गिरते हुए जल-प्रपात, हरे-भरे खेत और नाना प्रकारके पुष्प यात्रियोंके मनमें एक अद्भुत शान्ति उत्पन्न करते हैं।

भोजन करके हम एक बजे मोटरसे चले, दृश्य इतने सुहावने थे कि पैदल चलनेका मन होता था। मार्गकी कई चट्टियोंसे गुजरते हुए हम २७ मील दूर गंगनानी चट्टीपर ठहरे। ६२०० फीटकी ऊँचाईपर पहाड़ोंसे घिरा हुआ यह एक सुन्दर स्थान है। यहाँ गर्म पानीके तीन कुण्ड हैं, पासमें ही एक ठण्डे पानीका भी झरना है। प्राकृतिक चिकित्साके अनुसार गर्म पानीमें स्नान करके तुरंत ठण्डे पानीमें स्नान करनेसे बहुत-सी बीमारियाँ मिट जाती हैं। हमने गर्म पानीके झरनोंमें तो देरतक स्नान किया, परंतु फिर बर्फके समान शीतल जलमें स्नान करनेकी हिम्मत न हुई।

गर्म पानीमें स्नान करनेके बाद मन और तनमें स्फूर्ति आ गयी थी। यहाँसे १४ मीलपर ही ८४०० फीटकी ऊँचाईपर इस क्षेत्रका प्रसिद्ध दर्शनीय स्थान 'हरशिल' है। आजसे लगभग ११५ वर्ष पहले जब न तो सड़कें थीं और न आवागमनके साधन ही, विलसन नामका एक अँगरेज यात्री किसी तरह यहाँ आ पहुँचा था। स्थानकी रमणीयता देखकर वह मुग्ध हो गया और घर-परिवारको भूलकर यहीं रहने लगा। हमने उसके उस समयके बनाये हुए बँगलेमें कुछ देर ठहरकर जलपान किया।

इस स्थानके विषयमें एक प्रसिद्ध पौराणिक कथा है। जलन्धर दैत्यकी पतिव्रता पत्नी वृन्दाके शापसे

भगवान् विष्णु शिला हो गये थे। वह शिला आज भी यहाँ विद्यमान है। इसलिये इस स्थानका नाम 'हरिशिला' या 'हरशिल' पड़ गया।

यहाँसे ६ मीलकी दूरीपर जांगला नामका प्रसिद्ध स्थान है, जहाँ भगीरथने तप किया था। कहते हैं, यहाँतक गंगा उनके पीछे-पीछे चली आयीं, परंतु यहाँ आनेपर उनका वेग इतना प्रबल हो गया कि वे जह्नु ऋषिके आश्रमको, जो मार्गमें पड़ रहा था, बहा ले गयीं। ऋषिने क्रुद्ध होकर भागीरथीका आचमन कर लिया। भगीरथकी कड़ी तपस्याके बाद प्रसन्न होकर उन्होंने अपनी जाँघ चीरकर फिर गंगाको पृथ्वीपर छोड़ दिया। इसलिये गंगाका एक नाम जाह्नवी भी है। यह स्थान अत्यन्त भयावह है। नीचे गहरी घाटीमें जोरसे दौड़ती हुई जाह्नवीको देखकर मनमें सिहरन-सी हो आती है।

मोटरका मार्ग यहींतक बना है। आगे ढाई मील भैरोंघाटीतक पैदल जाना पड़ता है, यह चढ़ाई दमतोड़ है; परंतु यात्री सोचता है, सामने ही तो माँ गंगाका उद्‌गम है, वहाँ पहुँचकर ही विश्राम लेंगे। भैरोंघाटीसे फिर ६ मीलतक मोटर-बसें जाती हैं।

हम सायंकाल गंगोत्तरी पहुँचे। सामनेके ऊँचे पहाड़से शक्तिरूपिणी जगन्माता गंगा बड़े वेगसे नीचे उतर रही थीं। ऐसा लग रहा था, जैसे माँको अपने भूखे बच्चोंको दूध पिलानेकी शीघ्रता हो। पवित्र जलके कण चारों ओर इस प्रकार बिखर रहे थे, जैसे भगवान् शंकर अपनी जटाओंको हिलाकर मोतियोंकी बौछार कर रहे हों।

स्वामी रामतीर्थ छाया-पथद्वारा यमुनोत्तरीसे यहाँ आये थे। उन्होंने जो वर्णन किया है, वह संक्षेपमें इस प्रकार है—'यहाँ दुग्ध-धवल कान्तियुक्त शिखरोंसे देवदारु वृक्षोंका चिर साहचर्य है, उनका वर्णन राम किन शब्दोंमें करेगा। यहाँ परमात्मा पर्वतरूपमें निद्रास्थ हैं, वृक्षरूपमें श्वास ले रहे हैं। छाया-पथके दोनों ओरकी रंग-बिरंगी पुष्पलताएँ पर्वतोंपर कलापूर्ण शाल ओढ़ाती हैं। जब-जब दृष्टि जाती है, ऐसा लगता है—स्वर्ग और मृत्युलोकका नियन्त्रण करनेवाले देवाधिदेवका सिंहासन यहीं है।'

हमलोग बाबा कालीकमलीवालेकी धर्मशालामें ठहर गये। गंगा मैयाकी आरतीका समय हो रहा था, दूसरे यात्रियोंके साथ हम भी हाथ जोड़कर खड़े हो गये। शरीरमें एक प्रकारका हर्षोद्रेक-सा हो आया था। आज दो वर्ष बाद भी जब याद करता हूँ तो ऐसा लगता है, जैसे कलकी ही बात हो। मैंने शेक्सपियरके किसी नाटकमें पढ़ा था कि स्थानके वातावरणसे मनुष्यके मनपर अच्छा-बुरा प्रभाव पड़ जाता है। यहाँ आकर उसका प्रत्यक्ष प्रमाण मिला।

प्रसाद लेकर हम ऊपर कमरेमें आये, भोजन किया। ऊँचाई तो १०४०० फीट ही थी, परंतु हिमालयके भीतरी भागमें होनेके कारण सर्दी यहाँ अधिक थी। हमने क्षेत्रसे कुछ कम्बलें लीं और गहरी नींदमें सो गये।

दूसरे दिन प्रातः हम फिर आरतीमें गये, परंतु जो आनन्द और अनुभूति रातमें हुई, वह दिनमें नहीं मिली।

कुछ लोग गोमुख जानेकी तैयारी कर रहे थे। वह यहाँसे लगभग १२ मीलकी दूरी एवं १२७५० फीटकी ऊँचाईपर है। वहाँसे गंगाजी एक छोटे-से नालेके रूपमें निकली हैं। कहते हैं, मार्ग बहुत ही दुर्गम किंतु सुन्दर है। मेरा मन तो बहुत था, परंतु घोड़े जा नहीं सकते थे और पैदल चलनेकी हिम्मत नहीं थी।

गंगोत्तरीमें भी एक महात्मा रहते हैं, उनके दर्शन करने गये। वे हिन्दी बोलते थे। कहने लगे—'माँ गंगासे इस बातकी शिक्षा लेकर जाओ कि फलकी इच्छाके बिना ही दूसरोंकी भलाई करनेमें जीवनकी सार्थकता है।' हम थोड़ी देर बैठे रहे, उन्होंने प्रसादरूपमें मिश्री दी, तब प्रणाम करके चले आये।

जलपान करके माँ गंगाके पीहर—अपने ननिहालसे एक प्रकारसे भारी मनसे विदा हुए। मनुष्य-जीवनमें ऐसे क्षण बहुत कम आ पाते हैं, परंतु इनकी सुखद स्मृति जीवनपर्यन्त बनी रहती है।

ऋग्वैदिक सिन्धुकी प्रमुख सप्त नद्यः-स्वसाएँ

(श्रीपानसिंहजी रावत)

प्रियमेधके पुत्र सिन्धुक्षित् ऋषिने गंगाकी सहायक नदियोंके साथ सरस्वतीका भी गुणगान किया है—

इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या। असिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तयाऽऽर्जीकीये शृणुह्या सुषोमया॥ (ऋग्वेद १०।७५।५)

वहीं दूसरी ओर बृहस्पतिके पुत्र भरद्वाजने सरस्वतीकी स्तुतिमें **'सप्तस्वसा सुजुष्टा'** शब्दावलियोंका प्रयोग किया है। अर्थात् गंगा या अलकनन्दासे संगम करनेमें सात नदी-बहनोंमें सरस्वती सबसे ज्येष्ठ और श्रेष्ठ है—

उत नः प्रिया प्रियासु सप्तस्वसा सुजुष्टा। सरस्वती स्तोम्याभूत्॥ (ऋग्वेद ६।६१।१०)

इन दो ऋषियोंके उपर्युक्त मन्त्रोंके आधारपर गंगा और सरस्वतीके उद्गमस्थानोंका यदि अनुसन्धान किया जाय तो वे स्थान मध्य हिमालयके आदि धाम बदरीनाथके सन्निकट ही प्रमाणित होते हैं।

प्राप्त जानकारीके अनुसार गंगा और उसकी प्रमुख सात सहायक नदियोंका संक्षिप्त वर्णन किया जाता है। सरस्वतीका उद्गमस्थान विष्णुनाभि भी सुमेरुकी उत्तरोत्तर तलहटीपर है, अतः सरस्वती भी भागीरथी या सिन्धुसे अभिन्न मानी जाती है, इसीलिये गंगाकी त्रिपथगामिनी नामसे प्रसिद्धि है।

गंगा या अलकनन्दा और उससे उत्पन्न भागीरथी और विष्णुपदी भी पर्याय हैं। बदरीधामसे सीमान्त ग्राम माणा ३ कि०मी० की दूरीपर है, जहाँपर इस क्षेत्रके मूल आदिवासी मोल्फा निवास करते हैं, अन्य जनजातिके लोग भी यहाँ आकर बसे हुए हैं। इस ग्रामके निवासी सत्पथ (सतोपंथ) तीर्थको साक्षात् भू-वैकुण्ठ मानते हैं। यह तीर्थ माणा गाँवसे लगभग २० कि०मी० दूर है, (समुद्रतलसे १४४०० फुटकी ऊँचाईपर है।) नीती माणाके जनजातिके लोग इस तीर्थको मुक्तिदाता मानते हैं। इतनी ऊँचाईपर पदयात्राकर चलते हुए मृतक आत्माओंकी भस्मी सत्पथके सरोवरमें विसर्जितकर उनकी मुक्तिकी कामना परमेश्वरसे करते हैं। इस सत्पथ तीर्थसे भी ५ कि०मी० की ऊँचाईपर स्वर्गारोहण तीर्थ है, जो समुद्रतलसे १६५०० फुटकी ऊँचाईपर है।

यह स्वर्गारोहण तीर्थ ही सुमेरु पर्वतकी जड़पर है, हिमाच्छादित सुमेरु पर्वतसे उतरकर अलकापुरी बीक (ग्लेशियर)-से उत्तरगामिनी अलकनन्दाकी धार प्रकट हुई। गंगा या अलकनन्दाका स्वर्गसे उतरना पुराण-प्रसिद्ध गाथा है। स्वर्गारोहणतीर्थसे चढ़कर ही धर्मराज युधिष्ठिर स्वर्गमें इन्द्रकी सभामें पहुँचे।

एक बार पृथ्वी गोरूप धारणकर भू-भार हलका करानेकी प्रार्थना लेकर ब्रह्मादिक देवताओंके पास पहुँची। इस विषयपर विचार-विमर्श करनेके लिये भगवान् विष्णु और ब्रह्मादिक देवताओंने सुमेरु पर्वतपर एक सभा की।

मेरोः शिखरविन्यस्तां संयुक्तां सूर्यवर्चसा।
काञ्चनस्तम्भरचितां वज्रसंधानतोरणाम्॥
तां हृष्टमनसः सर्वे यथास्थानं यथाविधि।
यथानिदेशं त्रिदशा विविशुस्ते सभां शुभाम्॥

(हरिवंशपुराण हरिवंशपर्व ५२।७, १०)

उस सभामें ब्रह्माजीने देवताओंको सम्बोधित करते हुए कहा—'पूर्वमें मैं अपने पुत्र कश्यपके साथ लोक और वेदकी वार्ता कर रहा था, उस समय मेरे पास गंगाके साथ समुद्र शीघ्रतापूर्वक आया, मैंने समुद्रसे शान्त होनेको कहा, 'समुद्र! तू सुभग शरीरवाला होकर शान्तनु नामसे विख्यात होगा और यह सर्वगुणसम्पन्ना गंगा तुम्हारी सेवामें रत रहेगी।'

'रूपिणी च सरिच्छ्रेष्ठा तत्र त्वामुपयास्यति॥'

(५३।२७)

पुराणोंमें प्रसिद्ध है कि रावणके सौतेले भाई कुबेर (वैश्रवण)-ने अलकनन्दाके दोनों अंचलोंमें अलकापुरी

नगरी बसायी थी। अतः अलकनन्दाका सुमेरु पर्वत और अलकापुरीसे अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध है। सुमेरु पर्वत और कुबेरको श्रीकृष्णने गीतामें अपनी विभूति माना है—

रुद्राणां शङ्करश्चास्मि वित्तेशो यक्षरक्षसाम्।
वसूनां पावकश्चास्मि मेरुः शिखरिणामहम्॥

(गीता १०। २३)

अतः स्पष्ट है कि गंगा (अलकनन्दा) स्वर्ग और सुमेरु पर्वतसे उतरकर अलकापुरी बॉक (ग्लेशियर)-को अपनी गोदमें लेती हुई लक्ष्मीवनके सामने प्रवहमान होती हुई माणाके पास केशवप्रयागमें अपनी पहली स्वसा (बहन) सरस्वतीसे संगम करती है, इसीलिये सिन्धुक्षित्ने सरस्वतीको सप्तस्वसा सुजुष्टा कहा है। ऋग्वैदिक ऋषियोंने अलकनन्दाको भी सिन्धुसे अभिन्न मानते हुए उसका भी अत्यधिक गुणगान किया है।

सरस्वतीको अपनेमें मिलाकर अलकनन्दा केशव-प्रयागसे नीचे ३ कि०मी० दूर बदरीधामके चरण-स्पर्श करती हुई अपना विष्णुपदी नाम सार्थक करती है।

तत्रापश्यत धर्मात्मा देवदेवर्षिपूजितम्।
नरनारायणस्थानं भागीरथ्योपशोभितम्॥

(महा० वनपर्व १४५। ४१)

यहाँपर सुस्पष्टरूपसे अलकनन्दाको भागीरथीकी मुख्य धारा कहा गया है और यह भी अकारण नहीं है। देवप्रयागमें इस मुख्य धारासे मिलनेवाली भागीरथीकी उपधारा स्वर्गारोहण (सुमेरु) पर्वतके पृष्ठ भागसे उतरती हुई उत्तरकाशीके गंगोत्तरी बॉकके गोमुखसे निकलती है। भागीरथीकी ये दोनों धाराएँ देवप्रयागमें मिलकर एक हो जाती हैं, दोनोंका संयुक्त नाम गंगा हो जाता है। दोनों धाराओंको पृथक्-पृथक् नहीं समझना चाहिये। विष्णुनाभिसे प्रकट सरस्वती भी गंगारूपमें एक और धारा बनाती है। इसीलिये भागीरथीको त्रिपथगामिनी कहते हैं—

विष्णुपादाब्जसम्भूतं जलं मोक्षप्रदायकम्।
निपपात ततस्तत्तु सप्तर्षीणां तु मण्डले॥
तैश्च सप्तर्षिभिर्विप्र धृतं तच्छीर्षकैस्ततः।
ब्रह्मलोके मेरुशृङ्गे पतितं जलमुत्तमम्॥

(स्कन्दपुराण केदारखण्ड १६२। १४-१५)

अलकनन्देति चाख्याता प्राणिनां मुक्तिदायिनी॥
देवप्रयागके क्षेत्रे एकीभूता तु सा मुने।
गां गतेति ततो गङ्गा जातासौ मुक्तिदायिनी॥
भेदस्त्वया न ज्ञातव्यः पर्यायः कथितो मया॥

(स्कन्दपुराण केदारखण्ड १६२। २६-२८)

वैदिक कालमें नदियोंको सिन्धु कहा जाता था; क्योंकि नदियाँ आपसमें सन्धि या सम्मिलन करती हैं, सन्धिसे ही सम्भवतः नदियोंका सिन्धु नाम प्रचलित हुआ होगा; क्योंकि सबसे ऊँचे स्रोतसे अलकनन्दा ही उतरती है और अन्य सहायक नदियोंको अपनेमें मिलाती है, इसलिये मुख्यरूपसे अलकनन्दा ही सिन्धु कही जाती थी। वैसे सामान्यतः नदियोंको सिन्धु कहा जाता था, यथा—

'मधु वाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः।'

इसलिये अलकनन्दा ही सिन्धु, भागीरथी, गंगा और त्रिपथगा इत्यादि नामोंसे जानी जाती है।

ब्रह्मनदी सरस्वती

माणा दर्रा (पास)-के समीप ह्यैतोली बॉक (ग्लेशियर) विष्णुनाभिसे प्रकट होकर वेदमाता सरस्वती वेदध्वनि करती हुई भीमशिलाके नीचे प्रवाहित होकर केशवप्रयागमें अलकनन्दामें मिल जाती हैं।

मित्रावरुणके पुत्र वसिष्ठने ऋग्वेदके ७वें मण्डलके ९५वें एवं ९६वें सूक्तमें सरस्वतीका स्तवन किया है।

भरद्वाज बार्हस्पत्यने ऋग्वेदके छठे मण्डलके ६१वें सूक्तके १४ मन्त्रोंसे वेदमाता सरस्वतीकी स्तुति की है। देवश्रवा यामायनने १०वें मण्डलके १७वें सूक्तके ३ मन्त्रोंमें सरस्वतीका गुणगान किया है, उदाहरणस्वरूप—

सरस्वतीं यां पितरो हवन्ते
दक्षिणा यज्ञमभिनक्षमाणाः।
सहस्रार्धमिळो अत्र भागं
रायस्पोषं यजमानेषु धेहि॥

(ऋग्वेद १०। १७। ९)

पुराणोंमें प्रसिद्ध है कि ब्रह्मनदी सरस्वतीके पश्चिमी छोरपर ऋषियोंका पुण्यदायक शम्याप्रास आश्रम है। महाभारतमें लिखा है कि राजा सृंजयके पुत्र सहदेवने यहाँ शमीका डण्डा फेंककर जितनी दूरीपर डण्डा

पड़ा था, उतनी दूरीमें मण्डप बनवाकर उसमें यज्ञ किया था—

पुण्यं चाख्यायते दिव्यं शिवमग्निशिरोऽनघ।
सहदेवोऽयजद् यत्र शम्याक्षेपेण भारत॥

(महा० वनपर्व ९०।५)

कहा जाता है कि जो व्यक्ति वेदमाता सरस्वतीके तटपर स्नान, जप, पूजा, हवनादि करता है, उसकी वाक् शक्ति प्रबल हो जाती है और वेदविद्या उसके कुलमें सदा निवास करती है। हम लोग बचपनसे इन पवित्र स्थानोंको देखते आये हैं और यहाँके देवी-देवताओं और नदियोंके विषयमें अनेक दन्तकथाएँ भी सुनते आये हैं, माणाकी व्यास गुफामें ही व्यासजीने भी श्रीगणेशजीको महाभारत लिखनेके लिये मनाया। दन्तकथा है कि महाभारतकी कथा कहते समय सरस्वतीका गर्जन-तर्जन गणेशजीको श्लोक सुननेमें विघ्न उपस्थित करता था, व्यासजीने अभिमन्त्रित जल छिड़ककर सरस्वतीको बहुत नीचे गहराईमें बहनेके लिये बाध्य कर दिया।

इस प्रकार अलकनन्दा (गंगा)-की पहली स्वसा (वहन) सरस्वती केशवप्रयागमें प्रथम प्रयाग बनाती है।

धौली और द्वितीय प्रयाग विष्णुप्रयाग, केशवप्रयाग और बदरीधामसे नीचे उतरकर भागीरथीकी मुख्य धारा या अलकनन्दा विष्णुप्रयागमें धौलीको अपनेमें मिलाती है। धौली गंगा जोशीमठसे तपोवन मार्गपर लगभग ७० मील दूर धौलागिरि पर्वतसे निकलती है। हिमधवल चट्टानोंसे टकराकर उतरती हुई इसकी धारा श्वेतवर्णकी हो जाती है, इसलिये सिन्धुक्षित् ऋषिने इसे श्वेत्या नाम दिया है—

तृष्टामया प्रथमं यातवे सजूः सुसर्त्वा रसया श्वेत्या त्या।
त्वं सिन्धो कुभया गोमतीं क्रुमुं मेहत्न्वा सरथं याभिरीयसे॥

(ऋग्वेद १०।७५।६)

धौलागिरि नीती दर्रा (पास)-से तिब्बत जानेके मार्गमें पड़ता है; क्योंकि धौली अपने बॉकसे निकलकर नीति सीमान्त ग्रामसे नीचे उतरती है, इसलिये श्यावाश्व आत्रेयने इसे नितभा नाम दिया है। अतः धौलीका श्वेत्याके अतिरिक्त नितभा नाम भी है।

नन्दाकिनी (रसा) और तृतीय प्रयाग—नन्दप्रयाग

सिन्धु या गंगाकी तीसरी स्वसा (बहन) नन्दाकिनीका वैदिक नाम रसा है, यह नन्दाकिनी नन्दाके पर्वतसे उतरकर चमोलीके निकट नन्दप्रयागमें अलकनन्दामें मिल जाती है।

पिण्डर नदी और चतुर्थ प्रयाग—कर्णप्रयाग

सिन्धु या गंगाकी चौथी स्वसा (बहन) पिण्डर गढ़वाल और कुमायूँमण्डलोंके लगभग सन्धिस्थल पिण्डारका ग्लेशियरसे निकलकर कर्णप्रयागमें अलकनन्दासे मिल जाती है। इसका ऋग्वैदिक नाम क्रुमु है।

मन्दाकिनी (कुभा) और पंचम प्रयाग—रुद्रप्रयाग

सिन्धुकी पाँचवीं स्वसा (बहन) मन्दाकिनीका वैदिक नामक कुभा है। यह मन्दराचल पर्वत (जहाँ गोदमें केदारेश्वर ज्योतिर्लिंग अवस्थित है)-से निकलकर और केदारक्षेत्रमें प्रवहमान होती हुई रुद्रप्रयागमें अलकनन्दामें मिल जाती है।

इन पंचप्रयागोंमें सन्धि करनेवाली नदियाँ बड़े वेगसे प्रवहमान होती हैं, १६ जून, सन् २०१३ ई० को मन्दाकिनीने अपना भयंकर रौद्ररूप दिखाया था और केदारके यात्रियोंको सहस्रोंकी संख्यामें अपनी जान गँवानी पड़ी।

पंचप्रयागोंकी इन नदियोंका गर्जन-तर्जन ऋग्वैदिक कालसे ही चला आ रहा है।

मा वो रसानितभा कुभा क्रुमुर्मा वः सिन्धुर्नि-रीरमत्। मा वः परि ष्ठात् सरयुः पुरीषिण्य स्मे इत् सुम्नमस्तु वः॥ (ऋग्वेद ५।५३।९)

इस मन्त्रमें अत्रिपुत्र श्यावाश्व मरुद्‌गणोंसे प्रार्थना करते हैं कि रसा, नितभा, कुभा, क्रुमु और सिन्धु आदि वेगपूर्वक प्रवहमान नदियाँ हमारे मार्ग न रोकें और जल-पूर्ण सरयू भी हमारे आवागमनमें बाधा न डाले। आपके संरक्षणमें हम सुखपूर्वक रहें।

यह पंचप्रयागोंसे घिरा हुआ बदरी-केदारक्षेत्र ही वैदिक पंचनद-क्षेत्र प्रतीत होता है। यह विषय भी विद्वानोंके लिये विचारणीय है। इस प्रकार श्यावाश्व-वर्णित ये

रसा, नितभा, कुभा, क्रुमु और सिन्धु ही क्रमशः आजकी नन्दाकिनी, धौली, मन्दाकिनी, पिण्डर और अलकनन्दा हैं।

पंचप्रयागोंकी सहायक नदियोंको अपनेमें मिलाती हुई अलकनन्दा या भागीरथीकी मुख्य धारा देवप्रयागमें अपनी गंगोत्री बॉकसे निकलनेवाली उपधाराको अपनेमें मिलाती है, दोनों धाराएँ यहाँसे गंगा नाम धारण कर लेती है, दोनोंमें कोई पार्थक्य नहीं है, यह पूर्वमें बता दिया गया है।

यहाँपर अलकनन्दाका नामकरण गंगा हो जाता है, 'गां गता इति गङ्गा' अर्थात् भागीरथी गंगा स्वर्गसे उतरकर पृथ्वीलोकमें आ गयी है।

नयार (पुरिघिणि) और व्यासघाट—छठा प्रयाग

अब यह गंगा व्यासघाटमें नयारको अपनेमें मिलाती है, नयारका ऋग्वैदिक नाम परुष्णी लिखा मिलता है। इसके निकट मरुतोंका आवास बताया गया है।

उत स्म ते परुष्ण्यामूर्णा वसत शुन्ध्यवः।
उत पव्या रथानामद्रिं भिन्दन्त्योजसा॥

(ऋग्वेद ५।५२।९)

ऋषि वामदेव गौतम इन्द्रकी स्तुतिमें कहते हैं कि वज्रपाणि इन्द्र परुष्णी नदीको शत्रुओंके साथ कूट-युद्धके लिये प्रयुक्त करते हैं।

वृषा वृषन्धिं चतुरश्रिमस्यन्नुग्रो
बाहुभ्यां नृतमः शचीवान्।
श्रिये परुष्णीमुषमाण
ऊर्णां यस्याः पर्वाणि सख्याय विव्ये॥

(ऋग्वेद ४।२२।२)

इन्द्रके शत्रुओंने परुष्णी नदीके तटोंको तोड़ डाला, इन्द्रकी कृपासे सुदासने चयमानके पुत्रको पालित पशुकी तरह धराशायी कर दिया, जिससे सुदासका यश चतुर्दिक् फैल गया।

दुराध्योऽ अदितिं स्रेवयन्तोऽचेतसो वि जगृभ्रे परुष्णीम्। महाविव्यक् पृथिवीं पत्यमानः पशुष्कविरशयच्चायमानः॥ (ऋग्वेद ७।१८।८)

इन्द्रदेवने परुष्णीके भग्नतटोंको सुधारा, जल-प्रवाहको सुव्यवस्थित किया, इन्द्रकी कृपासे सुदासका अश्व भी गन्तव्य स्थानपर गया। इन्द्रने सुदासके दुष्ट स्वभावके शत्रुओंका संहार किया।

ईयुरर्थं न न्यर्थं परुष्णीमाशुश्चनेदभिपित्वं जगाम। सुदास इन्द्रः सुतुकाँ अमित्रानरन्धयन्मानुषे वध्रिवाचः॥ (ऋग्वेद ७।१८।९)

इस प्रकार गंगाकी छठी स्वसा (बहन) परुष्णीका ऋग्वेदमें इन्द्रके युद्धमें सहायता पहुँचानेवाले स्थानके रूपमें वर्णन किया गया है।

यमुना और सप्तम संगम—तीर्थराजप्रयाग

गंगाकी सातवीं स्वसा (बहन) यमुना हिमालयके वन्दरपूँछ ग्लेशियरसे निकलकर यमुनोत्रीक्षेत्रके जानकीबाई, फूल, हनुमान् और स्याना नामकी चट्टियोंसे क्रमशः उतरती है, तदनन्तर बड़कोट नौगाँव और मसूरी होती हुई दूनघाटीमें टॉन्स (तमसा) आदि नदियोंको अपनेमें मिलाती हुई प्रवेश करती है। वहाँसे दक्षिण-पश्चिमकी ओर मुड़ती है, सहारनपुर, दिल्ली, आगरा, इटावा इत्यादि नगरोंमें प्रवाहित होती हुई उत्तर प्रदेशके तीर्थराज
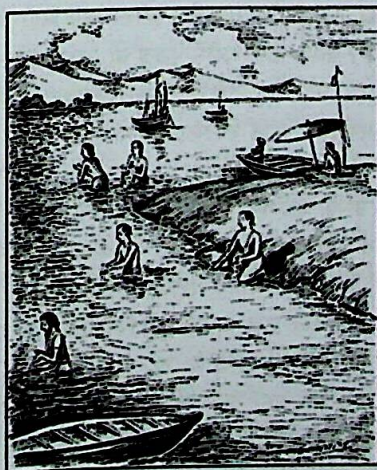
प्रयागमें गंगासे सन्धि करती है।

भागीरथीके उद्गमकी खोज

(श्रीजगदीशचन्द्रजी बसु)
[रूपान्तर—डॉ० श्रीरामशंकरजी द्विवेदी]

मेरे घरके नीचे ही गंगा बह रही है। बचपनसे ही नदीके साथ मेरा सख्य-भाव उत्पन्न हो गया था। वर्षमें एक बार कूलको प्लावित करता हुआ जलका प्रवाह बहुत दूरतक फैल जाता था। फिर हेमन्तके अन्तमें क्षीण रूप धारण कर लेता था। रोज ही ज्वार-भाटेके कारण जलकी धारामें होनेवाले परिवर्तनको लक्षित किया करता था। नदी मुझे एक गति बदलनेवाली जीव-जैसी लगती थी। शाम होते ही अकेला ही नदी-तटपर आकर बैठ जाता था। छोटी-छोटी तरंगें तट-भूमिसे टकराकर कल-कल स्वरमें गीत गाती हुई अविश्रान्तरूपसे बहती जाती थीं। जब अन्धकार गाढ़ा होनेको आता और बाहरका कोलाहल धीरे-धीरे शान्त होने लगता, तब मैं नदीकी उस कल-कल ध्वनिमें न जाने कितनी बातें सुन पाता था। कभी-कभी ऐसा लगता था, यह जो अजस्र-जलधारा प्रतिदिन प्रवाहित होती चली जा रही है, यह तो कभी वापस लौटती नहीं है; तो भी यह अनन्त प्रवाह आखिर आ कहाँसे रहा है? इसका क्या कहीं अन्त नहीं है? कभी-कभी नदीसे पूछता था, 'तुम कहाँसे आ रही हो?' नदी उत्तर देती थी, 'महादेवके जटा-जूटसे।' तब भगीरथके गंगा लानेका वृत्तान्त मनमें उदित हो जाता था।

उसके बाद बड़े होनेपर नदीकी उत्पत्ति कैसे होती है, इस सम्बन्धमें कई विश्लेषण, कई व्याख्याएँ सुननेको मिलीं, किंतु जब भी नदी-तटपर श्रान्त मनसे बैठा, वैसे ही उसकी कल-कल ध्वनिसे वही चिरकालीन पूर्व कथा सुननेको मिली—'महादेवके जटा-जूटसे निकली।'

एक बार इसी नदी-तटपर अपने एक प्रियजनके पार्थिव अवशेषोंको चितानलमें भस्मसात् होते देखा। मेरा वही आजन्म परिचित, वात्सल्यका निवास-मन्दिर एकाएक शून्यमें विलीन हो गया। स्नेहका वह एक गम्भीर और विशाल प्रवाह किस अनजाने और अज्ञात देशमें प्रवाहित होता हुआ चला गया? जो चला जाता है, वह तो लौटकर आता नहीं है, तो भी क्या वह अनन्तकालके लिये लुप्त हो जाता है? मृत्युमें ही क्या जीवनकी परिसमाप्ति हो जाती है? जो चला जाता है, वह कहाँ चला जाता है? मेरे प्रियजन आज कहाँ हैं?

उसी क्षण नदीकी कल-कल ध्वनिमें सुननेको मिला, 'महादेवके पद-तलमें।'

चारों ओर अँधेरा घिरता आ रहा था, कल-कल ध्वनिके बीच सुनायी दिया—'हम जहाँसे आये हैं, वहीं लौट जाते हैं। दीर्घ प्रवाहके बाद मूल-स्रोतमें ही मिलने जा रहे हैं।'

प्रश्न किया—'तुम कहाँसे आयी हो नदी?' नदीने उसी पुराने स्वरमें उत्तर दिया—'महादेवकी जटाओंसे।'

एक दिन मैंने नदीसे कहा—'नदी! आज बहुत दिन हो गये, जबसे तुम्हारे साथ मेरा सख्य-भाव है। पुरानी चीजोंमें केवल तुम्हीं रह गयी हो। बचपनसे ही आजतक तुम मेरे जीवनको घेरे हुए हो, तुम मेरे जीवनका एक अंश ही हो गयी हो, तुम कहाँसे आयी हो, मैं नहीं जानता। मैं तुम्हारे प्रवाहका सहारा लेकर तुम्हारे उद्गम-स्थानको देख आऊँगा।'

सुना था, उत्तर-पश्चिममें जो तुषारमण्डित गिरिशृंग दिखायी देता है, वहींसे जाह्नवीकी उत्पत्ति हुई है। मैं उसी गिरिशृंगको लक्ष्यमें रखकर, बहुग्राम जनपद और विजय-वनको अतिक्रम करते हुए चलने लगा। चलते-चलते कूर्माचल नामक पुराणप्रसिद्ध देशमें जाकर उपस्थित हो गया, वहाँसे सरयू नदीके उत्पत्ति-स्थानका दर्शन करता हुआ दानवपुरमें आ गया। उसके बाद पुनः बहुत-से गिरिगहनको पार करता हुआ उत्तराभिमुख हो आगे बढ़ने लगा।

एक दिन अत्यन्त ऊबड़-खाबड़ पर्वतीय रास्तेपर चलते-चलते थककर बैठ गया। मेरे चारों ओर पर्वतमाला थी, उसके पार्श्व देशमें गहन, निविड अरण्यानी थी, एक अभ्रभेदी-शृंग अपने विशाल शरीरद्वारा अपने पीछेके दृश्यको आड़में करता हुआ मेरे सामने खड़ा था। मेरे मार्गदर्शकने कहा—'इस शृंगपर चढ़नेके बाद ही तुम्हारे अभीष्टकी सिद्धि हो जायगी। नीचे जो रजत-सूत्रकी तरह पतली रेखा दिखायी देती है, उसीने अनेक देशोंको पारकर तुम्हारे देशमें जाकर अत्यन्त वेगवती होकर, तटपर छहरानेवाली स्रोतस्विनीका रूप धारण कर लिया है। सामने स्थित शिखरपर चढ़नेके बाद ही तुम इसे देख सकोगे कि इस पतले सूत्रकी तरह धारका आरम्भ कहाँसे हुआ है।'

यह बात सुनकर मैं सारे रास्तेकी थकानको भूलकर नवीन उत्साहके साथ पर्वतपर चढ़ने लगा।

मेरा मार्गदर्शक सहसा कहने लगा—'सामने देखो, जय नन्दादेवी। जय त्रिशूल (धारी)!'
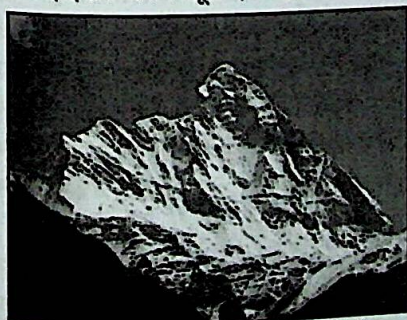
कुछ क्षण पूर्व पर्वतमाला हमारी दृष्टिके सामने अवरोध बनकर खड़ी थी। इतने ऊँचे शिखरपर चढ़नेमात्रसे मेरे सामनेका आवरण हट गया। देखा, सामने अनन्त देशमें फैला हुआ नीला-नीला नभोमण्डल है। उन्हीं गहन नीली पर्तोंको भेदते हुए दो शुभ्र तुषारमूर्तियाँ शून्यमें उठी हुई हैं। एक तो गरिमापूर्ण रमणीकी तरह है—ऐसा लगा, जैसे वह मेरी ओर स्नेहपूर्वक प्रशान्त दृष्टिसे देखे जा रही है। जिसके विशाल वक्षमें बहुत-से जीव आश्रय और पोषण पा रहे हैं; इस मूर्तिको उसी मातृरूपिणी धरतीके रूपमें पहचाना। इससे थोड़ी ही दूरपर महादेवका त्रिशूल स्थापित है। यह त्रिशूल पातालगर्भसे निकलकर मेदिनीको विदीर्ण करता हुआ, अपने नुकीले अग्रभागसे आकाशका भेदन कर रहा है। त्रिभुवन इसी महास्त्रसे ग्रथित है।

इस तरह एक-दूसरेके पार्श्वमें सृष्ट-जगत् और सृष्टिकर्ताके हाथके आयुध, दोनोंका साक्षात् दर्शन किया। यह त्रिशूल स्थिति और प्रलयका चिह्न है, इसे बादमें समझ सका।

मेरे पथ-प्रदर्शकने कहा—'सामने अभी भी लम्बा रास्ता अतिक्रम करनेको पड़ा हुआ है, वह अत्यन्त दुर्गम है, दो दिन चलनेके बाद ही तुषार नदी देखनेको मिल सकेगी।'

उन दो दिनोंमें बहुत-से वन और गिरि-घाटियोंको पार करनेके बाद अन्तमें हम लोग तुषार-क्षेत्रमें पहुँच सके। नदीकी धवल धार अबतक सूक्ष्मसे भी सूक्ष्म होती जा रही थी, कल्लोलिनीका मृदु गीत अबतक कानोंमें गूँज रहा था, सहसा मानो किसी इन्द्रजालिकके मन्त्र-प्रभावसे वह गीत नीरव हो गया, नदीका तरल नीर अकस्मात् कठोर, स्तब्ध, तुषारमें बदल गया था। धीरे-धीरे देखा, स्थान-स्थानपर विशाल ऊर्मिमाला प्रस्तरीभूत होकर रह गयी थी, मानो क्रीडाशील, चंचल तरंगोंको किसीने 'तिष्ठ' (खड़ी रहो) कहकर एक ही स्थानपर अचल कर दिया हो। किसी महाशिल्पीने मानो पूरे विश्वकी स्फटिक खानोंको खालीकर इस विशाल क्षेत्रमें क्षुब्ध समुद्रकी मूर्तिकी रचना कर दी हो।

दोनों ओर उच्च पर्वतश्रेणी, बहुदूरप्रसारित उसी पर्वत पादमूलसे उत्तुंग भृगुदेशतक असंख्य ऊँचे वृक्ष निरन्तर पुष्पवर्षा कर रहे थे। शिखरसे तुषार-निःसृत जलधारा बंकिम गतिसे नीचे उपत्यकामें गिरती जा रही थी। सामने नन्दादेवी और त्रिशूल अब खूब साफ-साफ
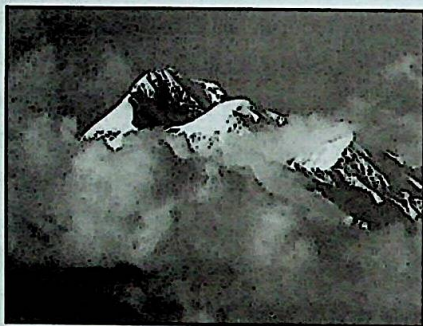
दिखायी नहीं दे रहे थे। बीचमें घना कुहरा छाया हुआ था, इस आवरणको पार करते ही हमारी दृष्टि अबाध रूपसे आगेका दृश्य देखने लगेगी।

बर्फीली नदीके ऊपरसे होते हुए हम लोग ऊँचे पहाड़पर चढ़ने लगे। यह नदी धवलगिरिके सबसे ऊँचे शिखरसे आ रही थी। वहाँसे आते समय पर्वतको भग्न करती हुई पत्थरोंके ढेरको अपने बहावके साथ ला रही थी। पत्थरोंका वह ढेर इधर-उधर बिखरा हुआ था। पत्थरोंके उन दुर्गम ढेरोंसे होते हुए एक-के-बाद दूसरे ढेरोंको पार करते हुए हम आगे बढ़ने लगे। मैं जितनी ऊँचाईपर चढ़ता जा रहा था, हवाका स्तर उतना ही क्षीण होता जा रहा था। वह क्षीण वायु दैवी धूपकी सुगन्धसे परिपूर्ण थी। धीरे-धीरे श्वास लेना कठिनतर होता जा रहा था। शरीरमें जड़ता आती जा रही थी। अन्तमें प्राय: चेतनाशून्य होकर नन्दादेवीके चरणोंमें गिर पड़ा।

सहसा शत-शत शंखोंकी ध्वनि कानोंमें प्रवेश करने लगी। अर्द्धोन्मीलित नेत्रोंसे देखा—समस्त पर्वत और वनस्थलीपर पूजाका आयोजन हो रहा है। जल-प्रपात जैसे महादेवके कमण्डलुसे निकल रहे हों; उसके साथ पारिजातके सारे वृक्ष स्वत: ही पुष्पवर्षा कर रहे थे। कहीं दूर सारी दिशाओंको कम्पित करती हुई शंख-ध्वनि-जैसी कोई गम्भीर ध्वनि उठ रही थी। यह शंखध्वनि थी अथवा पतनशील तुषारावृत पर्वतोंका वज्र-निनाद था, यह मैं निश्चित नहीं कर पा रहा था। कुछ पलोंके बाद सामने दृष्टिपात करते ही जो देखा, उससे हृदय उच्छ्वसित और देह पुलकित हो उठी। अबतक जो कुहरा नन्दा देवी और त्रिशूलको ढके हुए था, वह ऊपर उठकर आकाशमें विलीन होने लगा था। नन्दा देवी शिखरके ऊपर एक अत्यन्त बृहद् भास्वर ज्योति विराज रही थी; उसे कठिनाईसे ही देखा जा सकता था। उस ज्योतिपुंजसे निकलनेवाली धूमराशि दिग्दिगन्तमें फैल रही थी। तो फिर क्या यह महादेवकी जटाएँ थीं? ये जटाएँ पृथिवीरूपी नन्दा देवीको चन्द्रातपकी तरह आवृत किये हुए थीं। इन जटाओंसे हीरक कणोंकी तरह झरते तुषारकणोंने नन्दा देवीके मस्तकको उज्ज्वल मुकुट पहना दिया था। इन कठोर हीरक कणोंने त्रिशूलको और धारदार बना दिया था।

शिव और रुद्र। रक्षक और संहारक। अब इसका अर्थ समझमें आ रहा था। मानसिक नेत्रोंसे मूल-स्रोतसे वारिकणोंकी सागरके उद्देश्यसे की जानेवाली यात्रा और पुन: उसी मूल-स्रोतमें उनका लौटना स्पष्ट रूपसे देख पा रहा था। इस महाचक्र प्रवाहित स्रोतमें सृष्टि और प्रलयको एक-दूसरेके पार्श्वमें स्थित स्पष्ट रूपसे देख सका।

सामने आकाशभेदी जिस पर्वतश्रेणीको देख रहा था, हिमकणरूपी वारिकण उसके भीतर प्रवेश कर रहे थे। प्रवेश करते हुए वे कण प्रबल शक्तिसे उनकी देहको विदीर्ण करते जा रहे थे। टूटे हुए शिखर वज्र-घोष करते हुए नीचे गिरते जा रहे थे।

वारिकणोंने नीचे शुभ्र तुषारकणोंकी शय्या तैयार कर रखी थी। टूटे हुए शैल-शिखर इसी तुषार-शय्यापर लेटे हुए थे। तब तुषारकणोंने एकको पुकारते हुए दूसरेसे कहा—'अरे! हम लोग इनकी अस्थियोंसे पृथिवीकी देहका नये रूपमें निर्माण करेंगे।'

करोड़ों छोटे-छोटे हाथ असंख्य अणुओंकी शक्ति-सम्पुंजनसे अनायास उस गुरुभार पर्वतको अपने प्रवाहमें बहाते हुए ले चले। कोई मार्ग तो था ही नहीं, नीचे पतित पर्वतखण्डोंके घर्षणसे मार्ग बनता गया। इस प्रकार उपत्यकाका निर्माण हुआ। पर्वतोंकी देहसे रगड़ते-

रगड़ते पत्थरोंका स्तूप चूर्ण-विचूर्ण हो गया।

मैं जिस स्थानपर बैठा हुआ हूँ, उसके दोनों तरफ तुषार-वाहित प्रस्तर-खण्ड राशीभूत होकर विद्यमान थे। इसके नीचे ही तुषारकण द्रवित होकर जलका रूप धारणकर छोटी-सी धारमें परिणत हो गये थे। यही छोटी-सी सरिता पर्वतोंकी अस्थियोंको वहन करती हुई गिरिदेशको पारकर बहुत-से समृद्ध नगरों, जनपदोंके बीचसे होती हुई सागरकी ओर प्रवाहित हो रही है।

मार्गमें एक स्थानपर उभय तटवर्ती देश मरुभूमि-जैसे हो गये थे। इस नदीने तटोंकी सीमाका उल्लंघन-कर उस देशको अपनी जलधारासे प्लावित कर दिया। पर्वतोंकी अस्थियोंके चूर्णके संयोगसे मिट्टीकी उर्वरा-शक्ति बढ़ गयी। कठोर पर्वतोंके देहावशेषोंसे वृक्ष-लताओंकी सजीव हरी-भरी देहका निर्माण हुआ है।

वारिकण ही वर्षाके रूपमें पृथिवीको धोकर निर्मल कर देते हैं और मृत और परित्यक्त द्रव्योंको बहाते हुए समुद्रके गर्भमें छोड़ देते हैं, वैसे ही मनुष्य-चक्षुओंसे दूर नये राज्योंकी रचना भी कर देते हैं।

समुद्रमें विलीन होनेवाले वारिकण सदा एक-दूसरेसे टकराकर वेलाभूमिको तोड़ते रहते हैं।

कभी-कभी यही जल-कण भूगर्भमें प्रवेशकर पातालमें अवस्थित अग्निकुण्डमें आहुतिके रूपमें बदल जाते हैं। उस महायज्ञसे निकलनेवाली धूमराशि पृथिवीको विदीर्णकर ज्वालामुखीसे निकलनेवाली अग्निकी लपटोंके रूपमें प्रकाशित होने लगती है; उस महातेजसे पृथिवी काँप उठती है; ऊँची भूमि अतलमें निमग्न और समुद्र-तल ऊपर उठकर नये महाद्वीपका निर्माण हो जाता है।

समुद्रमें गिरनेके बाद भी जलबिन्दुओंको विश्राम नहीं मिलता है। सूर्यके तापसे भाप बनकर ये ही ऊपर उठने लगते हैं। ये ही एक दिन उपल और झंझाके रूपमें पर्वत-शिखरोंकी ओर धावित होते हुए वहीं शिवके विशाल जटा-जालमें आश्रय लेंगे; फिर धीरे-धीरे विश्रामके अन्तमें पर्वतोंपर तुहिनके रूपमें बरसेंगे। इस गतिमें कोई विराम नहीं, इसका कोई अन्त नहीं।

इस समय भी भागीरथीके तटपर बैठे-बैठे उसकी कल-कल ध्वनि सुन रहा हूँ। इस समय भी पहलेकी तरह उसकी बात सुन पा रहा हूँ। अब और समझनेमें भूल नहीं हो रही है, 'नदी तुम कहाँसे आ रही हो?' इसके उत्तरमें साफ-साफ सुन पा रहा हूँ, 'महादेवके जटा-जूटसे।' [राष्ट्रधर्म]

गंगाके उद्गम—'गोमुख'की रोमांचक यात्रा

(श्रीराजेन्द्र मोहनजी शुक्ल)

मैं मूलतया एक यायावर घुमक्कड़ सैलानी हूँ। अपनी इसी प्रवृत्तिके चलते मैं इनसानोंकी बनायी हुई दुनिया और प्रकृतिके बनाये संसारमें विचरण करता रहा हूँ। एक तरफ दिल्ली, कोलकाता, मुम्बई, चेन्नई, बैंगलूर-जैसे शहरोंकी चकाचौंधभरी दुनियामें भव्य और विशाल इमारतोंमें सरपट दौड़ती जिन्दगी तो दूसरी ओर सड़क-किनारे फुटपाथोंपर अपनी रोजी-रोटीके लिये संघर्ष करनेवालोंकी घिसटती जिन्दगीको भी देखनेका मौका मिला। लोगोंकी इस भीड़में जीवन तो देखा, परंतु जीवन्तता नहीं थी। इसी जीवन्तताकी तलाशमें धार्मिक स्थलोंकी भी बहुत यात्राएँ कीं, किंतु पर्यटन-उद्योगकी बढ़ती हुई सुविधाओंके चलते इन सभी स्थानोंपर पर्यटकोंकी भीड़ बढ़ गयी है। कमोबेश धार्मिक स्थलोंपर भी वही गहमा-गहमी और वही शोरगुलभरी जिन्दगी है, जो बड़े-बड़े शहरोंमें है। इसके चलते उन धार्मिक स्थानोंका वातावरण भी प्रदूषित हो गया है।

अपने इसी घुमक्कड़ी स्वभावके चलते मैं मनके किसी कोनेमें प्रकृतिके प्रति भी एक गहन आकर्षण महसूस करता रहा। दुनियाके इस हिस्सेको जिसे हम भारत या हिन्दुस्तान कहते हैं, इसपर प्रकृति हमेशासे

बहुत मेहरबान रही है। एक ओर लहलहाते हरे-भरे मैदान तो दूसरी ओर सुबहकी सुनहरी रोशनीसे नहाये हुए रेगिस्तानकी खूबसूरती, एक ओर समुद्रकी गरजती हुई लहरोंका शोरगुल तो दूसरी ओर नदियोंकी कलकल करती हुई लहरें, मुझे रोमांचित करती रहीं। हरिद्वार, इलाहाबाद, बनारसमें बहती हुई गंगाकी जलराशि एवं उसके अप्रतिम सौन्दर्यको देखकर मनमें गंगाके उद्गम—गोमुखको देखनेकी इच्छा मेरे मनकी गहराइयोंमें हमेशा कुलबुलाती रही। इसीके चलते सेवानिवृत्तिके बाद पैंसठ सालकी उम्रमें गर्म कपड़े रखकर मैं अकेला ही हरिद्वार पहुँच गया। हरिद्वारसे सुबह पाँच बजे एक बस गंगोत्रीको जाती थी, किंतु ट्रेनके लेट होनेके कारण मैं वह बस नहीं पकड़ सका, अतः ऋषिकेश जाकर दूसरी बस १० बजे पकड़ी और उत्तरकाशीमें रात्रि-विश्राम किया। रास्तेमें सफरके दौरान दिल्लीसे आनेवाले एक दम्पतीसे मुलाकात हुई, मालूम हुआ कि वे लोग भी गंगोत्री जा रहे हैं। यह परिचय कब सहज आत्मीयतामें बदल गया, पता ही नहीं चला। उत्तरकाशीमें रातमें एक होटलमें खाना खाने बैठे तो खानेसे पहले पतिने अपनी पत्नीको इन्सुलिनका इंजेक्शन लगाया। मालूम हुआ कि उनकी पत्नी शुगरकी घोर मरीज हैं, जानकर आश्चर्य हुआ, मैंने उन दम्पतीसे कहा कि ऐसी अवस्थामें उन्हें दुर्गम पहाड़ोंकी यात्रा नहीं करनी चाहिये। प्रत्युत्तरमें पत्नी मुसकुरा दीं। उनकी उत्कण्ठाको देखकर मैं हैरान था।

दूसरे दिन सुबह-अँधेरे ही किरायेकी जीपमें बैठकर गंगोत्रीधामको रवाना हुए। चार घंटेकी यात्राकर करीब १० बजे हमलोग गंगोत्रीधाम पहुँचे। हम तीनोंने सम्मिलित रूपसे होटलका एक-एक कमरा परिवारकी भाँति किरायेपर लिया। उसके उपरान्त नहानेके कपड़े लेकर गंगोत्री-मन्दिर पहुँचे, जहाँ एक ओर गंगा अपने तेज प्रवाहके साथ लहराती हुई बह रही थीं। गंगाकी तेज धारामें नहानेवाले यात्री बह न जायँ, इसलिये एक जंजीर बँधी थी। यात्रियोंके लिये निर्देश था कि वे उस जंजीरतक न जायँ, कारण कि तेज धारामें लोगोंके बह जानेका खतरा था। हवा भी बहुत ठण्डी थी, पानी भी बर्फीला था, स्नान करना तो दूर कपड़ेतक उतारनेकी हिम्मत नहीं पड़ रही थी। जैसे-तैसे हम लोगोंने कपड़े उतारे और सीढ़ीपर बैठकर दो-तीन लोटे पानी अपने बदनपर उड़ेला और जल्दीसे कपड़े पहने। सहयात्रीकी पत्नी जब स्नान करनेको उद्यत हुईं तो मेरा मन आशंकासे भर गया—एक तो वे शुगरकी मरीज, ऊपरसे कड़कड़ाती ठंड और बर्फीला पानी! मैंने उनसे आग्रह किया कि वे स्नान न करें, सिर्फ गंगाजलसे मुँह-हाथ धो लें। लेकिन वे नहीं मानीं और उन्होंने स्नान कर ही लिया। धर्मके प्रति भारतीय स्त्रियोंकी आस्था और विश्वासको देखकर मैं नतमस्तक हो उठा। हम सब लोगोंने गंगोत्री-मन्दिरमें श्रद्धाभावसे पूजा-अर्चना की और फिर बाहर आकर सड़ककिनारे ढाबेमें आलूके पराठेका नाश्ता किया और चाय पी। बातचीतके दौरान मैंने गोमुखकी यात्रा करनेकी अपनी इच्छा जाहिर की। गंगाका उद्गम—गोमुख गंगोत्रीसे करीब २५ कि०मी० दूर है। मैंने उन दम्पतीसे कहा कि यद्यपि यात्रा दुर्गम है, फिर भी हम गोमुखके दर्शन करके दूसरे दिन लौट सकते हैं।

गोमुख जानेकी बात सुनकर उन दम्पतीने भी गोमुख जानेकी इच्छा जाहिर की। २५ कि०मी०की पैदल चढ़ाई, बीहड़ और ऊबड़-खाबड़ रास्ते, ऊपरसे डाईबिटीजसे पीड़ित उनकी पत्नी, मैंने उन लोगोंको आगाह किया, लेकिन वे लोग अड़े रहे। पति घोड़ा तय करने गये। मैं इस बीच मौका देखकर पैदल ही इस रास्तेपर चल पड़ा। करीब तीन कि०मी० आगेकी यात्रा पैदल चलकर एक स्थानपर सुस्तानेके लिये रुका तो पीछेसे वही दम्पती दो घोड़ोंपर बैठे एक घोड़ा खाली लेकर आते दिखायी दिये। पूछनेपर बताया कि वह खाली घोड़ा मेरे लिये था, मेरे मना करनेपर वे समझे कि धनाभावके चलते घोड़ा नहीं ले रहा हूँ। उन्होंने कहा कि आप मना न करें, यह घोड़ा हम आपके लिये लाये हैं।

घोड़ेपर न बैठनेकी अपनी जिदपर अड़े होनेके कारण मैं पैदल ही उस पहाड़ी रास्तेपर चला। थोड़ी दूर

चलनेके उपरान्त उनकी पत्नीकी तबीयत खराब होने लगी। मैंने उन दम्पतीको आग्रहपूर्वक वापस लौटनेके लिये कहा। वे लोग मान गये। इस तरह मैंने चैनकी साँस ली। रास्तेमें चीड़वासा नामक स्थानपर रुककर चाय पी तथा कुछ देर विश्राम किया, फिर चल पड़ा। दुर्गम एवं बीहड़ पहाड़ी रास्ता था। रास्तेमें कई जगह जंगली जानवरोंसे रूबरू होनेकी आशंकासे मन भी सिहर उठता था।

शाम होते-होते हम भोजवासा पहुँचे, जो गोमुखकी यात्रा करनेवाले यात्रियोंके लिये रात्रि-विश्रामका अन्तिम पड़ाव था। ऊपर पहाड़ी रास्तेपर कुछ समतल जगह देखकर लोगोंने यात्रियोंकी सुविधाके लिये राउटियाँ गाड़ रखी थीं, जिनमें यात्रियोंके सोनेके लिये रजाई-गद्दे तथा भोजनका प्रबन्ध था। रास्तेसे नीचे लालमुनिबाबाका आश्रम था, जहाँपर कुछ पक्के कमरे बने थे। इसके अतिरिक्त थोड़ा-सा और उतरकर सरकारी रेस्ट हाउस भी था, जहाँ यात्री अपनी सुविधानुसार ठहरते थे।

भोजवासा पहुँचकर मैंने अपना सामान एक राउटीमें रखा तथा बाहर निकल पड़ा। सामने बर्फकी तीन चोटियाँ एक अनुपम दृश्य उपस्थित कर रही थीं। शामको डूबते हुए सूरजकी किरणें जब उनपर पड़ रही थीं तो ऐसा लग रहा था, जैसे वे तीनों बर्फकी पहाड़ियाँ सोनेकी तरह चमचमा रही हों। उनमेंसे एक पहाड़ी अपेक्षाकृत ऊँची और ऊबड़-खावड़ थी।

उसके बाद दूसरी पहाड़ी अपेक्षाकृत गोलाई लिये सुडौल-सी थी। देखनेपर ऐसा लग रहा था मानो सोनेका शिवलिंग हो, किंतु तीसरी पहाड़ी उससे भी छोटी थी, उसपर नजर पड़ी तो मैं आश्चर्यचकित तथा स्तब्ध-सा रह गया। उस पहाड़ीको देखकर मुझे सहसा शिवकी जटाओंमें गंगाके अवतरणके दृश्यकी याद हो आयी। मेरे सामनेकी पहाड़ीके शीर्षपर शिवकी जटाओं-जैसा दृश्य प्रतीत हो रहा था। उसके नीचेकी बनावट शिवका विशाल मस्तक, दीर्घ नासिका, होठ, ठोढ़ी और ग्रीवा तथा पुष्ट और बलिष्ठ कन्धे और सीनेपर बाकायदा पसलियोंके उभरे चिह्न सिर्फ कमरतक ही दृश्य दिखायी पड़ रहा था। मैं बार-बार आँखें फाड़कर देख रहा था। मुझे लग रहा था, जैसे साक्षात् शिव आकाशकी ओर देखते हुए गंगाके अवतरणका आह्वान कर रहे हों। चार-पाँच मिनटतक मुग्ध भावसे लगातार देखनेके बाद मुझे लगा कि मैं अपनी कल्पनामें कहीं शिवके दर्शन कर रहा हूँ। मुझे सहसा अपने बचपनके वे दिन याद हो आये, जब चाँदनी रातोंमें छतपर लेटा हुआ आसमानमें छुटपुट बादलोंके तैरते टुकड़ोंको देखकर अपनी बालसुलभ कल्पनाओंमें कहीं हाथीकी सूँड़, कहीं घोड़ा तो कहीं हनुमान्‌की कल्पना किया करता था। मुझे लगा शायद आज भी मैं उसी कल्पनालोकमें विचर रहा हूँ। मैं अभिभूत-सा महसूस कर रहा था।

अपने उस अनुभवको किसीसे कहनेका साहस भी नहीं जुटा पा रहा था। बड़ी हिम्मत करके मैं नीचे लालमुनिके आश्रम जा पहुँचा। लालमुनिबाबाने मुझे देखते ही अपने एक शिष्यको आज्ञा दी, जो चायका एक बड़ा ग्लास ले आया। मैं चाय पीते हुए इस उहापोहमें था कि मैं बाबासे अपने अनुभवका जिक्र करूँ। बड़ी हिम्मतसे मैंने सकुचाते हुए बाबासे अपने अनुभवके बारेमें कुछ कहना चाहा, तभी बाबा मेरी ओर देखकर कह उठे—हाँ-हाँ, ठीक है। मेरी समझमें नहीं आया कि बाबाने मेरी बात सुने बिना 'हाँ-हाँ ठीक है' क्यों कहा। अपनी बात फिर कहनेकी कोशिश की। बाबा हँसे और बोले—जो कुछ तू देख रहा है, वह ठीक है। कभी किसी-किसीको ऐसा दृश्य दिखायी देता है। बाबाकी बात सुनकर मैं चमत्कृत हुआ और ठगा-सा रह गया।

अँधेरा और झुक आया था और मैं तेज-तेज कदमोंसे पहाड़के रास्तोंके द्वारा अपने ठहरनेके स्थानपर वापस लौट पड़ा। राउटीपर पहुँचनेपर राउटी-मालिकने भोजन आदिके बारेमें पूछा। रातका अँधेरा झुक आया था और मैं अपने मनके किसी कोनेमें गंगा-अवतरणके उस दृश्यको सँजोये रखनेकी कोशिशमें आँखें बन्द करके विश्राम करने लगा। भोजनकी इच्छा नहीं थी। मैं लिहाफमें दुबककर कब सो गया, पता ही नहीं चला।

सोते-सोते अचानक मेरी तबियत घबराने लगी। मुझे लगा कि शायद उलटी हो जायगी। मुझे लगा कि कहीं उलटीसे लिहाफ और गद्दे खराब न हो जायँ, अत: मैं टेंटसे बाहरकी ओर भागा और बाहर जानेपर खलखलाकर उलटी हुई। चारों तरफ घोर नीरवता थी। राउटियोंके अन्दर लोग अपने-अपने बिस्तरमें सो रहे थे।

उलटी करनेकी मेरी आवाज सुनकर राउटी-मालिक लालटेन लेकर आया और मुझसे हाल-चाल पूछने लगा। उसने मुझसे पूछा—आपके साथ और कौन है? मेरे यह बतलानेपर कि मैं बिलकुल अकेला हूँ, लालटेनसे उसने मेरी शक्ल देखी और बोला—बाबू! मैं आपको अपने टेंटमें नहीं रख सकता। मुझे ताज्जुब हुआ और पूछा क्यों? तो उसने कहा कि बाबू! इतनी उम्रमें आपको अकेले इस स्थानपर नहीं आना चाहिये था। करीब तीन-चार महीने पहले आपकी ही उम्रका एक आदमी यहाँ अकेला आया था। रातमें इसी तरह उसकी तबीयत खराब हुई और दो-चार घंटे बाद वह चल बसा। पुलिस आयी और उसने लूटनेके इरादेसे यात्रीकी हत्या करनेके आरोपमें मुझे पकड़ लिया। उसके सारे सामानकी जाँच की। घरका पता मिलनेपर उसके परिजनोंको सूचित किया, जिन्होंने आकर इस बातकी पुष्टि की कि कोई भी सामान लूटा नहीं गया। उसका सारा सामान सुरक्षित था। इसपर भी पुलिसने एक हफ्ते बाद मुझे छोड़ा और ऊपरसे आठ हजार रुपये भी ले लिये। उसने कातर भावसे कहा कि मैं आपको टेंटमें नहीं ठहरा सकता। अब मैं परेशान हो उठा। मैंने अपनी बुद्धिका तत्काल उपयोग करके राउटीवालेसे कहा—देख भाई! अगर मुझे टिकनेकी जगह नहीं देगा तो मैं इस ठण्डमें मरनेको न होऊँगा तो भी मर जाऊँगा, लेकिन मरनेसे पहले मैं अपनी जेबमें लिखकर छोड़ जाऊँगा कि तुमने मुझे खुलेमें सोनेको मजबूर किया और तुम्हारे कारण मेरी मृत्यु हुई। इस तरह पुलिस तुम्हें पकड़कर मेरी हत्याके जुर्ममें जेल भेज देगी। वह सीधा-सादा पहाड़ी व्यक्ति घबरा गया। उसने दया-भावसे कहा कि मैं अपने टेंटमें नहीं रखूँगा, परंतु दूसरे टेंटमें ठहरनेका इन्तजाम कर दूँगा। मुझे तो सोनेसे मतलब था, इसलिये मैंने कहा ठीक है।

दूसरे टेंटमें भी मैंने रात बड़ी बेचैनीसे काटी। मैं रह-रहकर अपने-आपको कोस रहा था कि मैं नितान्त अकेला यहाँ क्यों आया? गोमुखके दर्शनकी मेरी इच्छा काफूर हो गयी और मैं किसी तरह वापस लौटनेकी सोचने लगा। इसी उहापोहमें सुबहका धुँधलका छटने लगा तो मैं टेंटसे बाहर निकला। सारा वातावरण निस्तब्ध तथा शान्त था। आसमान बिलकुल साफ था, तारे आसमानमें ऐसे टिमटिमा रहे थे, जैसे हाथ छूटनेपर मुट्ठीमें आ जायँगे। सामनेकी पहाड़ीपर चौथका चन्द्रमा ऐसा लग रहा था, जैसे पहाड़ीपर रखा है। ठण्डी-ठण्डी हवा जब मेरे शरीरमें लगी तो मेरा मन शान्त हुआ। मेरे कदमोंकी आहटसे राउटीवाला उठकर बाहर आया तो उससे मैंने कहा—चायसे पहले मुझे थोड़े-से गरम पानीकी जरूरत होगी। गरम पानी मिलनेपर मैंने उससे मुँह धोया और मुँहमें गरम पानी भरकर कुल्ले किये।

रातमें उलटीके कारण सारा गला छिल गया था। कुल्ले करनेसे कुछ राहत महसूस हुई। बादमें गरम-गरम चायने तो अमृतका काम किया। मैं ऊर्जासे भर उठा। कहाँ तो रातमें वापसीकी सोच रहा था, लेकिन अब मनमें पुनः गोमुखके दर्शनकी इच्छा अँगड़ाई लेने लगी। राउटीवालेसे मैंने गोमुखका रास्ता पूछा, फिर अपना बैग उठाकर जल्दी ही सुबह गोमुखकी ओर चल पड़ा। रास्तेमें न कोई यात्री, न कोई पैदल व्यक्ति, लेकिन उस सुनसान रास्तेपर न तो मुझे कोई डर लगा, न किसी प्रकारकी अन्य कोई आशंका। तबतक दिनकी रोशनी फैल चुकी थी और मैं बड़े आरामसे अपनी मंजिलकी ओर घोड़ोंकी लीद देखता चला जा रहा था। अचानक एक जगह घोड़ेकी लीदके निशान समाप्त हो गये, उसके आगे रास्ता नहीं था, बल्कि उसके आगे शिलाखण्ड पड़े हुए थे। उन शिलाखण्डोंमेंसे किन्हीं-किन्हींपर गोमुखकी ओर इंगित करते निशान अंकित थे, जिनको लाँघता-फलाँघता मैं गोमुखको चल पड़ा।

रास्तेमें तलहटीमें एक समतल स्थानपर पानीकी

छोटी-सी झीलनुमा जगह थी। सूर्यकी सुनहरी छाया उन पहाड़ियोंपर पड़ रही थी। दृश्य इतना नयनाभिराम था कि मैं एकटक कुछ देर देखता रहा। अबतक सफरकी सभी थकान दूर हो गयी थी। थोड़ी देर देखनेके बाद उस दृश्यसे तरोताजा होकर मैं अपनी मंजिलकी ओर चल पड़ा। अभीतक मुझे रास्तेमें इक्का-दुक्का बोझिये मिले। मगर मैं उनके साथ कदम-से-कदम मिलाकर न चल पानेके कारण रास्ता भटक गया और एक ऐसे स्थानपर पहुँच गया, जहाँसे नीचे देखनेपर सैकड़ों फुट गहरी खाई देखकर मेरा कलेजा दहल उठा। आगे कोई रास्ता नहीं था। वहाँ खड़े रहनेपर मुझे ऐसा लगा कि कुछ देर और डरकर देखनेपर चक्कर खाकर गिर जाऊँगा। मैं तुरन्त मुड़ा लेकिन पलटकर ऊपर चढ़नेका कोई रास्ता दिखायी नहीं पड़ा। आतंकित होकर मैं उन पत्थरोंपर लेटकर सरक-सरककर आगे बढ़नेकी कोशिश करने लगा। मेरे हाथ-पाँव डरके मारे काँप रहे थे। धीरे-धीरे मैं सुरक्षित स्थानपर पहुँचकर बैठ गया। मुझे कुछ सूझ नहीं रहा था। अपनी मूर्खतापर—अकेले सफरकी योजनापर मैं रुआँसा हो उठा, यही बहुत था कि मेरे अश्रु नहीं निकल रहे थे और मैं जोर-जोरसे नहीं रो रहा था। थोड़ी देर बाद मुझे कुछ लड़कियोंकी आवाजें सुनायीं पड़ीं, जो मेरी ही ओर आ रही थीं। पास आनेपर मैंने देखा वे तीन लड़कियाँ सत्रह-अट्ठारह वर्षके लगभग थीं। गौरवर्ण, अत्यन्त सुन्दर नाक-नक्शवाली तीनों लड़कियाँ सलवार-कुर्ता पहने थीं और अपने सरपर लाल रंगका गोटा लगा लाल दुपट्टा बाँधे थीं। उन लड़कियोंने पास आकर मुझसे पूछा—'अंकल! आप कैसे बैठे हो?' मैंने रुआँसे स्वरमें जवाब दिया—'बेटा! मैं गोमुख जा रहा था, रास्ता भटक गया। अब मुझे कोई रास्ता सुझायी नहीं देता।' प्रत्युत्तरमें उन लड़कियोंने कहा—हम भी गोमुख जा रहे हैं, आइये, आप हमारा हाथ पकड़ लें, हम आपको गोमुख ले चलेंगे। उस निर्जन स्थानमें उन युवा लड़कियोंका हाथ पकड़नेमें मुझे संकोच हुआ, मैंने उनसे विनती की 'मैं बगैर सहारेके चल सकता हूँ, मुझे सिर्फ रास्ता दिखा दो।' उन लड़कियोंने अत्यन्त सहज भावसे पुनः हाथोंका सहारा देकर मेरे हाथ पकड़ लिये। मेरे दोबारा मना करनेपर उन्होंने कहा—ठीक है, आप हमारे पीछे-पीछे आइये। मैं उनके पीछे-पीछे चल पड़ा। कुछ दूर जानेपर वे अकस्मात् रुक गयीं। उन्होंने एक ओर इशारा करते हुए कहा—वह रहा गोमुख। सामने एक ढलुआ-सा रास्ता था, जो सीधा गोमुख पहुँच रहा था। उन्होंने मुझसे पूछा कि अब आप पहुँच जायँगे? मैंने कहा—हाँ। इसके बाद मैं उत्साहमें भरकर ढलुआ रास्तेपर उतरने लगा। उस रास्तेपर छोटी-छोटी बजरियाँ बिछी थीं। पच्चीस-तीस कदम चलनेपर अचानक मेरे पैर फिसल गये, असन्तुलित होकर मैं पीठके बल गिरा और एकदम नीचेकी ओर घिसटने लगा। लाख चाहनेपर भी खुदको रोक नहीं पाया। मैंने अपनी निश्चित मृत्युको सामने पाकर डरसे अपनी आँखें बन्द कर लीं। फिसलते-फिसलते अचानक मेरा दायाँ पैर किसी पत्थरका सहारा पाकर रुक गया।

कुछ देरतक तो मुझे विश्वास ही नहीं हुआ कि मैं रुक गया हूँ। फिर मैं धीरे-धीरे उस पथरीली दीवारका सहारा लेकर ऊपरकी ओर खिसकने लगा। करीब पाँच-सात मिनट बाद मैं खिसकते-खिसकते उसी स्थानपर पहुँच गया, जहाँ उन लड़कियोंने मुझे छोड़ा था। मैंने वहाँ पहुँचकर उन लड़कियोंको बहुत आवाजें दीं, परंतु कोई नहीं बोला। मैंने आसपास घूमकर भी देखा, पता नहीं वे लड़कियाँ कहाँ विलीन हो गयी थीं। लगभग १५-२० मिनटतक उन लड़कियोंको खोजते-खोजते थककर बैठ गया, तभी एक यात्री आता दिखायी दिया, जिसके दोनों हाथोंमें डंडे थे। वह डंडे टेकता हुआ मेरी ही ओर आ रहा था। मैंने उसे रोककर सारा वृत्तान्त बताया, उसने कहा कि पहाड़ी सफरमें हमेशा डंडा साथ लेकर चलना चाहिये। आपके पास कोई डंडा नहीं है। इसलिये आपके साथ यह घटना घटी। उसने मुझे एक हाथमें डंडा दिया और कहा—'इसके सहारे आप मेरे पीछे-पीछे आइये।' मैं डरते-डरते धीरे-धीरे उस फिसलनभरे रास्तेपर फिर चल पड़ा, जो गोमुखकी ओर जाता था।

गोमुख पहुँचकर मैं अवाक् था। मैं सोचता था कि गोमुखपर जलकी कोई पतली-सी धारा निकल रही होगी, किंतु वहाँ तो जैसे ग्लेशियरमें बहुत बड़ी गुफाका मुखद्वार खुला हो और उसमेंसे अपने पूरे आकारमें गंगानदी हर-हर करके पूरे वेगसे निकल रही थीं। उस ग्लेशियरमेंसे बड़े-बड़े हिमखण्ड टूट-टूटकर वह रहे थे। शोर इतना था कि पास खड़े आदमीकी आवाज मुश्किलसे समझमें आये। मैंने पास ही पड़े एक शिलाखण्डपर बैठकर गंगाके पवित्र जलसे मुँह धोया। पानीकी धारा इतनी तेज थी कि नहानेका कोई मौका नहीं था। मैंने मुँह-हाथ धोकर सूर्यको अर्घ्यांजलि दी और अपने मित्रों एवं पूर्वजोंका नाम लेकर अंजलिमें जल लेकर तर्पण कर दिया तथा एक छोटी-सी प्लास्टिककी गंगाजलीमें जल लेकर लौट पड़ा।

अबतक पूरी तरहसे धूप निकल चुकी थी, मुझे प्यास लग आयी। रास्तेमें एक साधुकी कुटियापर जल पीनेके लिये जलकी याचना की तो उस साधुने अपने धूनेमें जल गरम करके मुझे पीनेको दिया। तभी मुझे अपने बैगमें रखे हुए अखरोट, किशमिश और काजू-जैसे सूखे मेवोंका ध्यान हो आया। मैंने कुछ सूखे मेवे उस साधुको भेंट किये। थोड़ी देर बाद मुझे उस निर्जन स्थानपर अचानक कौवोंकी आवाज सुनायी पड़ी, जिसे देखकर आश्चर्य हुआ। मैंने कुछ मेवे कौवोंकी ओर भी उछाल दिये, जिसे वे अपनी चोंचमें भरकर बड़े चावसे खाने लगे। मेरे साथ मेरा एक सहयात्री भी था, मैंने उसे भी कुछ मेवे भेंट करना चाहा, पहले तो उसने इनकार किया, परंतु आग्रह करनेपर संकोचपूर्वक स्वीकार कर लिया। हम दोनों आपसमें बात करते बड़े आरामसे चलते हुए भोजवासापर आ गये, यहाँ कुछ देर विश्राम करके तथा कुछ खा-पीकर वापस गंगोत्रीकी ओर चल दिये, जहाँ वे दिल्लीवाले दम्पती मेरी प्रतीक्षा कर रहे थे, मैंने उनको अपनी गोमुख-यात्राका जब वृत्तान्त सुनाया तो उन्होंने कहा कि रास्तेमें मिली वे तीनों युवतियाँ साक्षात् भगवती थीं, देवियाँ थीं। मैं आज भी यह नहीं समझ पाया कि वह अनुभव क्या था? क्या वे वास्तवमें देवियाँ थीं या साधारण युवतियाँ? कुछ भी हो, परंतु यह अनुभव अत्यन्त अलौकिक था। इस घटनाको आज भी याद करके मेरा मन दिव्य आनन्दसे भर जाता है।

उत्तरांचलके पंचप्रयाग

(श्रीआद्याप्रसाद सिंहजी 'प्रदीप')

उत्तरांचलकी यात्रा हरिद्वारसे आरम्भ होती है। कुछ लोग इसे हरिद्वार और कुछ लोग हरद्वार कहते हैं। वह यही स्थान है, जहाँसे केदारनाथ और बदरीनाथको मार्ग जाता है। बदरीनारायण हरि हैं, अस्तु इसका नाम हरिद्वार हुआ। केदारनाथ शंकरजी अर्थात् हर हैं, अस्तु इस स्थानका नाम हरद्वार हुआ। दोनोंका प्रवेशद्वार यही है। उत्तराखण्डको स्वर्ग भी कहा जाता है, अस्तु हरद्वार 'स्वर्गद्वार' भी कहा जाता है। ऋषिकेशसे पंचप्रयाग आनेका सर्वसुलभ साधन प्राप्त होता है। यहाँसे सत्तर किलोमीटर आगे बढ़नेपर देवप्रयागका पावन तीर्थ आ जाता है।

१-देवप्रयाग

यहाँपर अलकनन्दा और भागीरथीका पावन संगम है। यहाँ श्रद्धालुओंकी अपार भीड़ रघुनाथजीके दर्शनकर जीवनको सार्थक करती है।
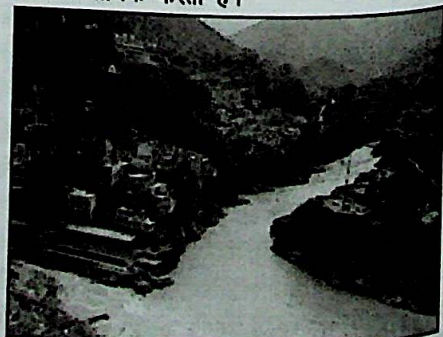
यह स्थान बड़ा ही रमणीक और प्राकृतिक

सुषमाओंसे परिपूर्ण है। यहाँ कालीकमलीवालेकी धर्मशाला है। यहींसे भागीरथीको गंगाजीके नामसे पुकारा जाता है। यहाँसे सीधा एक मार्ग बदरिकाश्रमको और दूसरा गंगोत्तरी-यमुनोत्तरीको चला जाता है। यहींसे तीसरा मार्ग टिहरीको भी चला जाता है। स्कन्दपुराणके केदारखण्डमें इस तीर्थका विस्तारसे वर्णन मिलता है। यहाँपर देवशर्मा नामक ब्राह्मणने सत्ययुगमें कठोर तप किया था। सूखे पत्तोंको खाकर उस ब्राह्मणने एक हजार वर्षतक तप किया, वहींपर भगवान् विष्णुने उसे दर्शन देकर मनोवांछित वर प्रदान किया था। यह स्थान बड़ा मनमोहक और प्रिय है। वन, पर्वत और सीढ़ीदार खेत और भोले-भाले गाँव अन्तरमनको मुग्ध कर लेते हैं। भूटिया लोग भेंड़-पालनका काम करते हैं। पानी रोककर कहीं-कहीं छोटी नहरें निकाली गयी हैं।

रघुनाथ क मंदिर भव्य इहाँ सिर नाइ मनाइ खुसाल भये।
करिया पथरे कै सुमूरति ऊ पढ़ि लेख प्रलेख बहाल भये।
तहँ भव्य गुफा इक पीछे वरी हुसियार बने मृदु चाल गये।
निसि वासर पार गये कितने रुकि के तहि ठाउँ निहाल भये॥
गिरि कंदर खोह मिले कितने जल निर्झर भार अपार चले।
पथ पूर्ण उठान चढ़ान कहूँ सब भार तजे सुचि धार चले।
वन कै पसु सीस उठाइ लखैं सुभ दर्सन पाइ निहार चले।
पिक कोयल रागि सुरागि पढ़ैं, कुह स्वागत गान उचार चले॥

इस स्थानपर खूब अघाकर दर्शन-भ्रमण करनेके पश्चात् सभी देवी-देवताओंको मनाते हुए हमने आगेकी ओर प्रस्थान किया। वन, पर्वतकी अप्रतिम सुषमाका अवलोकन करते हुए हम रुद्रप्रयागकी ओर प्रस्थानकर आगे बढ़ने लगे।

२-रुद्रप्रयाग

देवप्रयागसे चलकर हम मलेटा, कीर्तिनगर, श्रीनगर पार करते हुए रुद्रप्रयाग आ जाते हैं। यहाँ अलकनन्दा और मन्दाकिनीका संगम है। पुराणोंमें इस तीर्थका वर्णन विस्तारसे आया है। यहींपर ब्रह्माजीकी आज्ञासे देवर्षि नारदजीने हजारों वर्षतक तप किया। यहाँपर उन्हें भगवान् शंकरके दर्शन हुए। यहींपर भगवान् शंकरजीने नारदजीको सांगोपांग गन्धर्वशास्त्र प्रदान किया। यहीं भगवान् रुद्रने नारदजीको 'महती' नामकी वीणा प्रदान की। संगमके निकट कुछ ऊपर भगवान् शंकरका रुद्रेश्वर नामक लिंग है। यहाँ जनमानस आकर दर्शनका पुण्यलाभ प्राप्त करते हैं। यहाँ केदारनाथकी ओरसे मन्दाकिनी और बदरीनाथकी ओरसे अलकनन्दा आकर इस तीर्थकी महत्ताका सम्वर्धन संगमके द्वारा करती हैं। यहाँपर रुद्रनाथजीका मन्दिर है। भक्तगण वर्षभर यहाँ दर्शन करते और पुण्यलाभ प्राप्त करते हैं। प्राकृतिक दृश्य बड़ा ही मनोहर है। यहाँ तीन जनपदका त्रिकोणीय
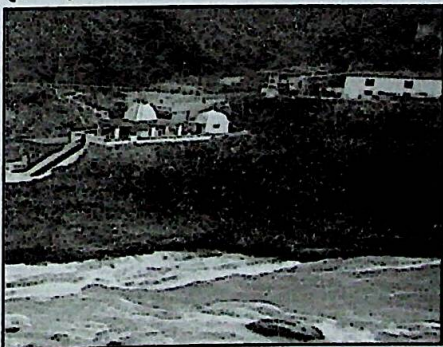
केन्द्रविन्दु है। सर्पाकार सड़कें बड़ी मनोहर लगती हैं।

सब आइ गये वहिं ठाउँ जहाँ हिमवान क सोभा अपार बढ़ी।
भल सोभा सुरम्य मढ़ी सुषमा वहिं चोटी पे चोटी कचोटी कढ़ी।
चहुँओर लसै विलसै प्रतिमा नगराज क साज मही मे मढ़ी।
सब चाँकि के रुद्रप्रयाग लखैं भलि सोभा अपार अवास चढ़ी॥
दिन राति विते कितने पथ पै वहि ठौर पे आइ गये हुलसी।
लखि नारद कै तप निष्ठ मही सब अंतर माझ गये सुलसी।
सुचि मर्म पुनीत ज पाइ गये मति नारद भव्य गई खुलसी।
यहु रुद्र प्रयाग सुठौर इहाँ विलसे सिर मौर बनी तुलसी॥

इस स्थानपर निष्ठापूर्वक तन्मय होकर लोग अपनी भक्ति-भावनाको तृप्ति प्रदान करते हैं। शंकरजीका अर्चन-वन्दन करके अपने यात्रा-अभियानको आगेकी तरफ अर्थात् कर्णप्रयागकी ओर मोड़ देते हैं।

३-कर्णप्रयाग

रुद्रप्रयागसे ३१ किलोमीटरकी दूरी पारकर कर्णप्रयागमें हम आ जाते हैं। यहाँपर अलकनन्दा और पिन्दार गंगाका संगम है। यहाँ भगवती उमाका अति प्राचीन मन्दिर है। संगमसे पश्चिमकी ओर शिलाखण्डके रूपमें दानवीर कर्णकी भव्य तप:स्थली है। यहाँ एक मन्दिर भी है। यहाँपर महादानी कर्णने भगवान् सूर्यकी आराधना करके अभेद्य कवच-कुण्डलोंको हस्तगत किया था। कर्णकी तप:स्थली होनेके कारण ही इसका नाम
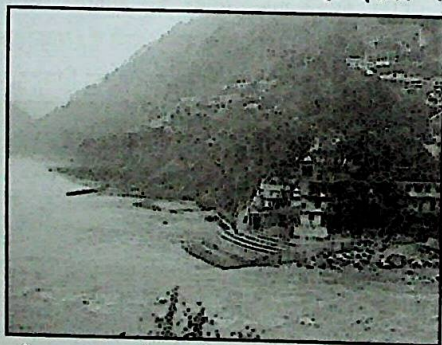
कर्णप्रयाग पड़ा है। यहाँका प्राकृतिक दृश्य बड़ा ही सुहावना लगता है। यहाँसे छोटी-छोटी नहरें निकालकर खेतीका काम किया जाता है। यहाँ नीमतला स्थानपर ऊनी वस्त्रोंका अच्छा उद्योग चलता है। पहले यह चमोली जनपद था। अब उसका नाम बदलकर गोपेश्वर हो गया है। यहाँपर कुछ दूरपर हाथी पर्वत, कागभुसुण्ड पर्वत, मराली गाँव, चेयँ मेयँ गाँव, घाटगाँव, चिकोला गाँव आदि स्थान प्रकृतिकी गोदमें अहर्निश अठखेलियाँ करते दिखायी पड़ते हैं।

४-नन्दप्रयाग

कर्णप्रयागसे मात्र २० किलोमीटर की दूरीपर नन्दप्रयाग आता है। यहाँपर अलकनन्दा और नन्दाकिनीका संगम है। यह स्थान बदरीनारायण मार्गपर स्थित है। यहाँकी पौराणिक कथा है कि यहाँ नन्द महाराजने कठिन तप किया था। भगवान् नारायणने प्रसन्न होकर उनसे वरदान माँगनेको कहा। नन्दजीने नारायणको पुत्ररूपमें प्राप्त करनेको कहा। नारायणने उन्हें वरदान दिया था। यहाँपर नन्दा देवीका सुन्दर मन्दिर है। नन्दाका मन्दिर, नन्दकी तप:स्थली और नन्दाकिनीके संगमके कारण इस स्थानका नाम नन्दप्रयाग पड़ा। संगमपर भगवान् शंकरजीका भव्य मन्दिर है। यहाँपर लक्ष्मीनारायण और गोपालजीका मन्दिर है। यहाँ चीड़के
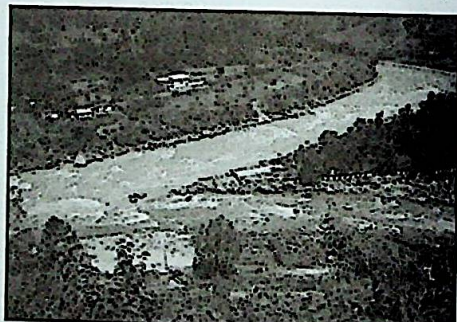
बहुत ऊँचे-ऊँचे वृक्ष प्रचुर संख्यामें भरे पड़े हैं। यहींसे कुछ दूर आगे पीपरकोटी, गरुड़ गंगा, टंगनी, हेलंग आदि स्थान हैं। यहाँका प्राकृतिक सौन्दर्य अपार है। कहींपर पर्वतोंसे दुग्ध धारवाले झरने भी सुन्दर दृश्यकी रचना करते हैं।

नृप नन्द इहाँ तप कीन्हें कबौं सरि के तट पै सुचि ध्यान धरे।
तप निष्ठ बने तन से मन से प्रकटे नर नाथ अल्हाद भरे।
वर प्राप्त कियो प्रभु सों हित में सुत रूप में नाथ को प्राप्त करें।
यहु रम्य सुरम्य मही जगकी यस ख्याति अपार जो व्याप्त करें॥
लख नन्दा सुदेवि क भव्य मही सुभ मंदिर सोभा अपार कढ़ै।
सुचि संगम पै महदेउ क रूप अनूप सुरूप अल्हाद मढ़ै।
भल लच्छि नरायण मंदिर भव्य सुरम्य बना यहिं ठाउँ चढ़ै।
यहु रूप गोपाल कै सोहै उहाँ लखिके मन भाउ अकास चढ़ै॥

यहाँकी अप्रतिम सुषमाका अवलोकन करते हुए आगे बढ़नेपर हम विष्णुप्रयागके रास्तेपर आ जाते हैं। यहाँ पर्वतोंपर अनेक फूल खिले हुए हैं। उनमें सिर उठाये जंगली गुलाब अत्यन्त सुशोभित हो रहा है।

५-विष्णुप्रयाग

जोशीमठसे मात्र १० किमी० दूर विष्णुप्रयाग स्थित है। यहाँपर धौरी गंगा और अलकनन्दाका पवित्र संगम है। स्कन्दपुराणमें इस तीर्थका वर्णन विस्तारसे आया है।

यहाँ दोनों पवित्र नदियोंमें पाँच-पाँच कुण्डोंका वर्णन आया है। यहींसे बदरीनाथ धामका सूक्ष्म प्रभाव दिखायी पड़ने लगता है। यहाँ दो पर्वत रक्षकके रूपमें खड़े हैं, जिन्हें जय और विजयके रूपमें जाना जाता है। यहाँ

जल-प्रवाह अत्यन्त द्रुतगामी है। यहाँ धारामें प्रवेश करके कोई स्नान नहीं कर सकता। यहाँ स्नान करनेके लिये लोटा लेकर जाना पड़ता है। किनारे बैठकर जलधारासे जल लेकर स्नान करना पड़ेगा। पानी अत्यन्त शीतल होता है।

इक संगम भव्य मिला पथ मा धौलि गंगा क धारि सुधारि मिली।
तहँ नन्दा क धारि नियारि मिली मन केरि कली हरसाइ खिली।
यहिं से अब ऊँचि चढ़ाइ अहै पथ ऊँचि निहारि सुगात हिली।
लखि गंग पताल क जाति चली वहिं धारि में धारि सुधारि मिली॥
बहु काल गये शंकराचार्य इहाँ तप निष्ठ बने तन गारत की।
पथ खोजि अद्वैत रहे तहँ पैं, प्रतिपादन भाउ बघारत की।
मठ मंदिर देउ विराजें इहाँ जग कै सब ताप नेवारत की।
यहि ठाउँ चला तपनिष्ठ भला गोहरावत नाउँ पुकारत की॥

गंगोत्री

(श्रीकाकाजी कालेलकर)

यों तो हर-एक देशके लोग पहाड़ोंमें घूमना, शिखरोंके दर्शन करना और शिखरोंपर पहुँचकर आसपास दूर-दूरतकका भूमि-भाग देखना पसन्द करते ही हैं और ऐसा पर्वतानन्द पानेके लिये हर तरहके कष्ट उठाते हैं और जानका खतरा भी मोल लेते हैं।

नदीका उद्‌गम ढूँढ़नेके लिये अन्य देशोंमें शायद कम लोग जाते होंगे, लेकिन नदीके पृष्ठभागपर नौका-विहार करनेकी इच्छा तो सबको होती है। लाखों बरसतक स्थिर रूपसे रहनेवाले पहाड़ और लाखों बरसोंसे अखण्ड बहनेवाली नदियाँ मनुष्योंके आकर्षणके विषय हमेशा रहे हैं।

लेकिन, भारतवासियोंका हिमालयका आकर्षण और उनकी नदी-भक्ति और लोगोंसे न्यारी ही है। गंगा नदी भारतीय संस्कृतिकी माता है और हिमालयकी घाटियाँ और गुफाएँ तो भारतकी आत्मसाधनाका पीहर हैं।

भारतकी श्रद्धा कहती है—शालग्राम कोई पत्थर नहीं है, जनेऊ सूतका धागा नहीं है, हिमालयका पहाड़ पत्थरोंकी राशि नहीं है और गंगा नदी कोई पानीका स्रोत नहीं हैं। हिमालय तो अध्यात्मका घर है और गंगा नदी भारतकी पुण्य तपस्याकी परम्परा है।

हिमालयसे भारतको पार्थिव लाभ कम नहीं हुआ है। उत्तर तरफकी शीत वायुका आक्रमण और उत्तरकी आक्रमणकारी प्रजाओंका धावा—दोनोंसे भारतको बचानेका काम हिमालयने किया है। वार्षिकी वर्षा-धारासे भारतकी खेतीको जैसा लाभ है, वैसे ही हिमालयकी बरफके पिघलनेसे उत्तरी नदियोंमें ग्रीष्मकालमें जो बाढ़ आती है, उससे भी हर साल लाभ होता ही है। हिमालयकी वृक्ष-वनस्पतियाँ भारतकी अक्षय उद्भिज्ज-संपत्ति हैं। हिमालयकी खनिज-सम्पत्तिका अभी पूरा पता ही नहीं लगा है। हिमालयकी छोटी-मोटी नदियोंसे और उनके छोटे-मोटे प्रपातोंसे जो बिजली पैदा होगी, उससे तो भारतकी समृद्धि सौगुनी बढ़ जायगी। हिमालयकी घाटियोंमें आज जितने अमृतफल पैदा होते हैं, उनसे लाखगुने फल देनेकी शक्ति हिमालयमें है। हिमालयके

कस्तूरी-मृग और चमरी-मृगको हम भूल नहीं सकते, लेकिन, हिमालयकी असली सम्पत्ति वहाँकी भेड़-बकरियोंका ऊन ही है। सचमुच, हिमालय भारतवासियोंके लिये हर तरहकी समृद्धिका अक्षय भण्डार है, जिसका पता धनपति कुबेरको भी आजतक नहीं लगा।

मनुष्य-जातिके लिये यह गौरवकी बात है कि हिमालयकी ऊँचाई, उसके दुर्गम पहाड़ और बरफकी चट्टानें इधरके और उधरके मनुष्योंको हिमालय लाँघनेसे रोक नहीं सकीं। प्राचीनकालसे साधु और वैरागी ही नहीं, व्यापारी और कारीगर भी इधर-से-उधर और उधर-से-इधर आते-जाते रहे हैं और जहाँ उद्यमी, वाणिज्य वीर और सार्थवाह पहुँचे, वहाँ किसी-न-किसी दिन राजाओंकी फौजें पहुँचनेवाली हैं ही। हिमालयमें जहाँ हमारे तीर्थ-स्थान हैं, वे सब तिजारतके रास्ते हैं और लश्करी दृष्टिसे मार्केके स्थान भी हैं। गंगोत्री हो या बदरीनारायण, अमरनाथ हो या खोजरनाथ—इन स्थानोंका लश्करी महत्त्व है ही।

अब प्राचीनकालके राजा लोग यहाँ बड़ी-बड़ी फौजें कहाँसे रखें? इन दुर्गम प्रदेशोंमें तिजारतकी राजकीय आमदनी इतनी कभी थी ही नहीं कि यहाँ बड़ी फौजें रखी जायँ, लेकिन इन स्थानोंकी रक्षा करना देशके लिये अपरिहार्य था।

जो बातें राजाओंके लिये दुःसाध्य थीं, उन्हें धर्म-भावनाने सिद्ध कर दिखाया। लोक-हितचिन्तक सत्पुरुषोंने धर्मकी उपासना करने यहाँ आकर रहना पसन्द किया। उनकी लोकोत्तर संकल्प-शक्ति, अतिमानुषी तितिक्षा और दीर्घकालसेवित तपस्या देखकर धर्मपरायण समाज उनके दर्शनके लिये और उनका योगक्षेम चलानेके लिये इन दुर्गम स्थानोंकी यात्रा करने लगा। माहात्म्य लिखे गये, पुण्य पर्वके दिन मुकर्रर हो गये और दानी लोगोंने रास्तोंपर अत्यावश्यक सहूलियतें पैदा कर दीं। व्यापारी निर्भय हुए। लोगोंको सौन्दर्योपासनाके साथ तपस्याकी दीक्षा मिलने लगी और आसेतु-हिमाचल फैले हुए धर्मनिष्ठ लोगोंकी संस्कृतिका प्रचार होने लगा।

'स्थावराणां हिमालयः'—इन शब्दोंमें जिसकी विभूतिका जिक्र है, ऐसे हिमालयमें 'स्रोतसामस्मि जाह्नवी' वाली भागीरथीका जहाँ उद्गम है, ऐसा एक नितान्त रमणीय और परम पवित्र स्थान है, जिसे लोग गंगोत्री कहते हैं। उसीका स्मरण करके अपने-आपको पावन करनेका और पाठकोंको आकृष्ट करनेका आज सोच लिया है।

हमारे धार्मिकोंने हिमालयके पाँच खण्ड माने हैं—कश्मीर, जालन्धर, उत्तराखण्ड, कूर्माचल और नेपाल। इन पाँच खण्डोंमें बीचका उत्तराखण्ड सबसे पवित्र माना जाता है। गंगोत्री, जमुनोत्री, केदार और बदरी—इन परम पुण्य धामोंके कारण उत्तराखण्ड साधुओंका भक्ति-भाजन बना है। इन चारों धामोंका अपना-अपना वैशिष्ट्य है। बदरीविशाल अगर पुराणप्रसिद्ध और लोकप्रिय है, तो जमुनोत्री तितिक्षा और तपस्याकी कठिन-से-कठिन कसौटी करके मनुष्यको धन्यता अर्पण करती है। केदारनाथ अगर वैराग्यका धाम है, तो गंगोत्री परम पावन प्रदेश है। सात्त्विकताकी यहाँ परम सीमा पायी जाती है। 'गंगा गङ्गेति यो ब्रूयाद् योजनानां शतैरपि, मुच्यते सर्वपापेभ्यः'—सैकड़ों मीलकी दूरीपर रहनेवाला भक्त अगर गंगाका नाम भी ले, तो उसके सब पाप दूर होते हैं। गंगाजीका दर्शन होते ही भक्त कहता है—'गाङ्गं वारि मनोहारि मुरारिचरणच्युतम्। त्रिपुरारिशिरश्चारि पापहारि पुनातु माम्॥' उसका विश्वास है, 'दर्शनात् स्पर्शनात् पानात् तथा गङ्गेति कीर्तनात्। स्मरणादेव गङ्गायाः सद्यः पापात् प्रमुच्यते॥' जराग्रस्त श्रद्धालु व्यक्ति यह कहकर कि 'औषधं जाह्नवीतोयं वैद्यो नारायणो हरिः' त्रिविध शान्तिको पाता है।

पुराणोंका नया अर्थ करते दीख पड़ता है कि जब महासमुद्रसे भारतकी भूमि ऊपर आयी, तब आजके बंगालके दक्षिणमें जो सुन्दरवन है, उसे बसानेकी सगर-

राजाओंने कोशिश की। लेकिन पानीके अभावमें उन्हें सफलता न मिली। उनके संकल्पकी राख हो गयी।

इसलिये, उनके वंशज हिमालयमें जाकर पुश्त-दर-पुश्त वहाँके पहाड़ोंकी सर्वे करके एक बड़े स्रोतको ले आये और उसे दक्षिण-पश्चिमके रास्ते खींचते-खींचते युक्त-प्रान्त, बिहार और बंगालसे होकर सुन्दरवनतक ले गये। अंशुमान्, दिलीप और भगीरथ ऐसी राज-परम्पराने यह कठिन काम किया और युक्तप्रान्त, बिहार और बंगालको दक्षिणके समतल प्रदेशतकको फलद-रूप बना दिया। गंगा नदी प्राकृतिक स्रोत नहीं है। आर्योंके पुरुषार्थसे ही वह भारतवर्षमें बहती है। इसीलिये, उसे भागीरथी और जाह्नवी कहते हैं।

भागीरथीका जहाँ वास्तविक उद्गम है, उसे 'गोमुख' कहते हैं। बहुत कम यात्री वहाँतक जाते हैं। वहाँसे बदरीनारायण नजदीक है। हिम्मतवान् तपस्वी गोमुखसे सीधे बदरीनाथ चले जाते हैं। मामूली लोगोंको आसान रास्तेसे जाते कई दिन लगते हैं।

भक्तोंने गंगाके सच्चे उद्गमके नीचे आठ-दस मीलपर एक अच्छी जगह पसन्द करके गंगाजीका मन्दिर खड़ा किया और उसे नाम दिया गंगोत्री। भक्तोंको गंगाजीका अमिश्र पानी ही पसन्द होता है। गोमुखसे लेकर गंगोत्रीतक गंगाजीका एक ही प्रवाह है। गंगोत्रीके नीचे दूसरे-दूसरे प्रवाह आकर उससे मिलते हैं।

जो लोग हिमालयकी यात्रा नहीं कर सकते, वे हरिद्वारसे गंगाजीका जल भर लेते हैं। उतनी भी श्रद्धा जिनकी नहीं है, वे इलाहाबाद-प्रयागके पास जमुनाजीके संगमके पहले गंगाजीका पानी ले सकते हैं। प्रयागके संगमके बाद भी गंगाजीका जल पवित्र है सही, लेकिन वह जल लोटेमें भरकर कोई नहीं ले जाता। मृत्युके पहले जिस गंगाजलकी बूँद गलेतक पहुँचानेकी भक्तोंकी ख्वाहिश रहती है, वह तो प्रयागके संगमके पहलेकी गंगा है।

जब यात्राकी कठिनाई थी, तब यात्राका पुण्य भी बहुत था। हमारे जमानेमें हिमालयकी पैदल यात्रा हरिद्वार-भीमगोडासे शुरू होती थी। आज तो बस-जैसे आधुनिक तैलवाहन धरासूतक जाते हैं और जीप तो उत्तरकाशीतक जाती है। वहाँसे गंगोत्रीका पैदल रास्ता ५६ मीलका ही है। तीर्थ तपस्वी कहेंगे, गंगाके ढाई हजार या सोलह सौ मीलके प्रवाहमें अब सत्ययुग तो इन छप्पन मीलोंमें ही रहा है। उनकी भाषामें बाकीका 'सब बाजार हो गया है, बाजार!' गंगोत्रीकी सारी शोभा, नदीका सुन्दर प्रवाह, पत्थरोंपर टक्कर खाकर होनेवाला पानीका कलरव, आसपासके ऊँचे-ऊँचे देवदारुके प्रचण्ड वृक्षोंके शंकु और पर्वतके शिखरपरकी सनातन बर्फकी धवलिमा—यहीं है और ऐसे उन्नत वातावरणमें देह-दमन करते साधुओंका आत्मचिन्तन तो मानो इस सारे आकर्षणका निचोड़ है।

जिस तरह दक्षिणमें नीलगिरिके बीच उटकमण्ड (उदधिमण्डल)-में तमालके वृक्षोंकी सुगन्धसे सारा वायुमण्डल अखण्ड भरा हुआ रहता है, उसी तरह गंगोत्रीमें आत्मचिन्तनका आध्यात्मिक वायुमण्डल लबालब भरा हुआ पाया जाता है। जो लोग कहते हैं कि आत्मा-जैसी चीज ही कोई नहीं है, उनको चाहिये कि वे गंगोत्री जाकर रहें। बिना किसी तर्कके वे अनुभव करेंगे कि इस दुनियामें, इस विश्वमें, इस अनन्त कोटि ब्रह्माण्डमें अगर कोई सनातन तत्त्व है, तो वह अन्तरतर आत्मा ही है। गंगोत्रीकी भव्यता उस अनुभवका केवल बाहरी रूप है। उसका आन्तरिक सच्चा रूप तो 'हृदि संस्फुरद् आत्मतत्त्व' ही है। केवल मनुष्यके हृदयमें ही नहीं, अखिल विश्वके हृदयमें उस आत्मतत्त्वका प्रणवनाद यहाँ गूँजता रहता है।

[प्रेषक—डॉ० श्रीरामशंकरजी द्विवेदी]

गंगा और सागरके मिलनका तीर्थ—गंगासागर

(डॉ० श्रीरमेशजी 'मयंक')

भगीरथके द्वारा प्रदर्शित पथका अनुसरण करती कलुषनाशिनी, पतितोद्धारिणी गंगा गंगासागर-संगममें आकर सरित्पति समुद्रसे मिलित हुईं।

गंगाजलके स्पर्शसे सगरके पुत्रोंका मोक्ष हुआ। गंगा और सागरका संगमस्थल गंगासागर तीर्थक्षेत्रके रूपमें विख्यात हुआ। सैकड़ों पापकर्म करनेके पश्चात् भी यदि एक बार पश्चात्ताप करते हुए गंगास्नान करे तो सारे पाप धुल जाते हैं।

प्राचीन कालसे ही हिन्दू समाजमें गंगासागरकी यात्राका अत्यन्त विशिष्ट स्थान था, परंतु गंगासागरयात्राकी दुरूहताके कारण कहा जाता था—*सारे तीर्थ बार-बार। गंगासागर एक बार।* देवर्षि नारद युधिष्ठिरको गंगासागरतीर्थका माहात्म्य बताते हुए कहते हैं—दस अश्वमेधयज्ञ करनेका फल एक बार गंगासागर-स्नान करनेसे मिलता है। हे राजन्! जो मानव गंगासागरसंगममें गंगाके दूसरे पार पहुँचकर स्नान करता है और तीन रात वहाँ निवास करता है, वह सब पापोंसे छूट जाता है—

गङ्गायास्तत्र राजेन्द्र सागरस्य च सङ्गमे।
अश्वमेधं दशगुणं प्रवदन्ति मनीषिणः॥
गङ्गायास्त्वपरं पारं प्राप्य यः स्नाति मानवः।
त्रिरात्रमुषितो राजन् सर्वपापैः प्रमुच्यते॥

(महा०वन० ८५।४-५)

स्कन्दपुराणमें वर्णित है—तीर्थदर्शन, सर्व प्रकार दान, सर्वदेवता-पूजन, सर्वविध तपस्या और यज्ञ आदिसे जो पुण्य अर्जित होते हैं, वे एक बार गंगासागर-स्नान करनेमात्रसे प्राप्त हो जाते हैं—

लभते पुरुषः सर्वं स्नात्वा सागरसङ्गमे।

मकर-संक्रान्तिके अवसरपर यहाँका स्नान परम पुण्यदायक माना गया है। आर्द्रा नक्षत्र अथवा मार्गशीर्ष मासमें गंगासागर-संगममें स्नान करके मध्याह्नकालमें यथाशक्ति दान देनेसे सभी पापोंसे मुक्ति होती है और दाता शिवसायुज्यको प्राप्त करता है—

आर्द्रायां मार्गशीर्षे वा गङ्गासागरसङ्गमे।
स्नात्वा मध्यन्दिने दत्त्वा यथाशक्ति धनं मुदा॥
सर्वपापविनिर्मुक्तः शिवसायुज्यमाप्नुयात्॥

(सूतसंहिता १।१३।१३-१४)

पश्चिम बंगके सुदूर दक्षिणप्रान्तके मूल भूखण्डसे अलग सागरद्वीप गंगासागरमें महामुनि कपिलका विग्रह है, जो पद्मासनकी मुद्रामें योगक्रियामें लीन है। बायें हाथमें कमण्डलु तथा दायें हाथमें जपमाला है। पंचनाग श्रीमूर्तिका पंचनाग छत्र धारण किये हुए है। साथ ही सूर्य तथा चन्द्रमा भी हैं।

कपिलके दक्षिणकी ओर गंगादेवीकी मूर्ति है, जिसकी गोदमें राजकुमार भगीरथ विराजमान हैं। मकरवाहिनी गंगा चतुर्भुजा हैं, जो शंख, चक्र, रत्नकुम्भ तथा वराभय धारण किये हुए हैं।

गंगामूर्तिके दक्षिणमें महावीर हनुमान्‌जी विराजमान हैं, जो गदा तथा पर्वत उठाये हुए हैं। कपिल-विग्रहके बायीं ओर सगर विराजमान हैं तथा सिंहवाहिनी श्रीविशालाक्षी विराजमान हैं। इनके बायीं ओर देवराज इन्द्र अपने श्यामकर्ण घोड़ेके साथ विराजमान हैं। वामद्वारपर महादेव भगवान् कपिलेश्वरके रूपमें सपरिवार विराजमान हैं तथा दीवारपर श्रीकृष्ण तथा राधारानीकी युगल मूर्तियाँ हैं।

गंगासागरके दर्शनीय स्थान तथा मठोंमें श्रीकपिल-मुनि मन्दिर, भारत सेवाश्रम संघ (यात्रीनिवास), श्रीलक्ष्मीनारायण मन्दिर, योगेन्द्र मठ, ओंकारनाथ यात्री-निवास, शंकराचार्य मठ, चिन्ताहरणेश्वर मन्दिर, स्वामी कपिलानन्द सांख्य कुटीर आश्रम, मनानन्द कपिलाश्रम, वासुदेवमठ, सांख्याचार्य योग आश्रम, वल्लभाचार्य सनातन आश्रम इत्यादि प्रमुख हैं। कलकत्तासे गंगासागरकी दूरी १३० किमी० (बस) तथा जलपथ ८ किमी० है।

श्रीगंगाजी—यात्रादर्शन

(पं० श्रीदयाशंकरजी दुबे, एम० ए०, एल-एल० बी०)

[बहुत समय पूर्व लगभग १९३७ ई० में इलाहाबादके प्रसिद्ध विद्वान् लेखक पं० श्रीदयाशंकरजी दुबे (सम्पादक मासिक 'भूगोल')-ने श्रीगंगाजीके उद्गमसे लेकर गंगासागर-संगमतकका एक खोजपूर्ण यात्रा-वृत्तान्त लिखा, जिसमें उन्होंने गंगाजीके प्रवाहमार्ग तथा उसके तटवर्ती नगरोंके दर्शनीय स्थलोंका एक सारगर्भित परिचय प्रस्तुत किया था। यह सचित्र विवरण १९३७ से १९३९ ई० के बीच कल्याणके साधारण अंकोंमें प्रकाशित हुआ था। विगत ८० वर्षोंमें गंगातटवर्ती नगरों, तीर्थों, मन्दिरों, स्थानों एवं यात्रामार्गों आदिके स्वरूपमें यद्यपि कई परिवर्तन हो चुके हैं, परंतु लेखमें वर्णित अधिकांश विवरण आज भी यथावत् हैं, अतएव लेखको उसी परिप्रेक्ष्यमें पढ़ना चाहिये। सामग्रीकी ऐतिहासिक प्रामाणिकता एवं महत्त्वको देखते हुए 'गंगा-अंक' में इस लेखको पुनः प्रस्तुत किया जा रहा है। सुविधाके लिये गंगाप्रवाह-मार्गका एक मानचित्र भी साथमें जोड़ दिया गया है—सम्पादक]
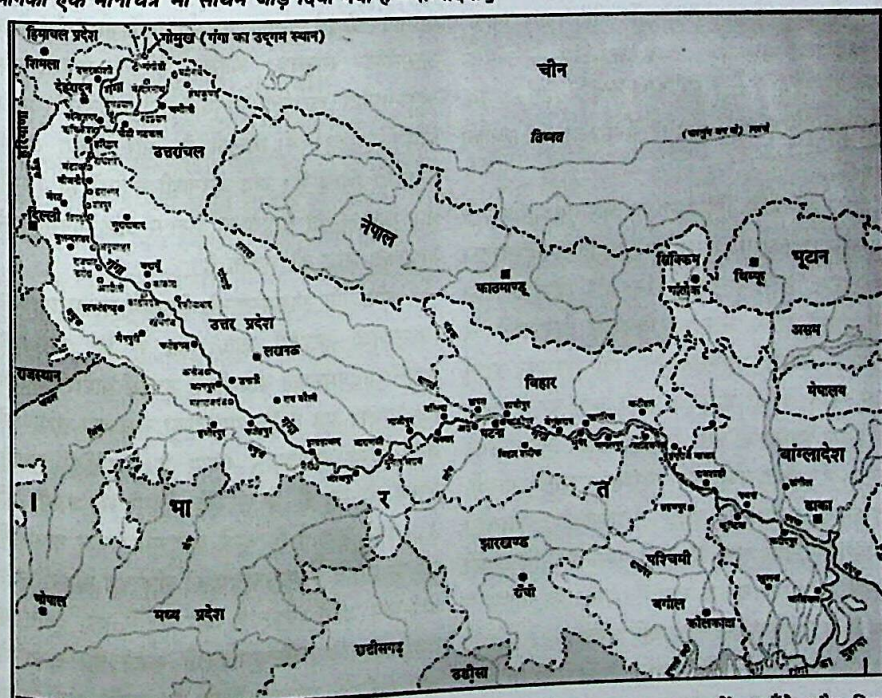
श्रीगंगाजीका उद्गमस्थान

मैं अभीतक यह निश्चय नहीं कर पाया हूँ कि गंगाजीका असली उद्गमस्थान कहाँ है? प्रतिवर्ष सैकड़ों यात्री गंगोत्रीकी यात्रा करने जाते हैं। गंगोत्रीसे दस मील आगे गोमुख है, जहाँसे गंगाजीकी धार बड़े वेगसे निकलती है। वह धार वास्तवमें कहाँसे और कितनी दूरसे आती है, यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता। गोमुखके आगे बर्फ-ही-बर्फ है, और उस बर्फको पार करना मनुष्यके लिये आसान काम नहीं है।

पुराणोंके अनुसार श्रीगंगाजी भगवान् शंकरकी जटासे

निकली हैं और शंकरजीका निवासस्थान कैलास पर्वत है, जो कि गोमुखसे सौ मीलसे अधिक दूर है। कैलासके नीचे मानसरोवर है, जिसको कुछ लोग श्रीगंगाजीका उद्‌गमस्थान मानते हैं, परंतु मानसरोवरसे गोमुखतक कोई ऐसी नदी नहीं देखनेमें आती, जिससे इस वातपर विश्वास किया जा सके। वहाँसे तो सतलज नदी अवश्य निकली है। यदि यह मान भी लें कि गंगाजीकी धार मानसरोवरसे आती है, तो बीचमें हिमालयकी एक पर्वतश्रेणी मौजूद है, जिसके कारण मानसरोवरसे निकली हुई किसी भी नदीका जल गोमुखतक आना सम्भव नहीं। हाँ, इस पर्वतश्रेणीमें दो दर्रे 'नीति' और 'माना' नामके हैं, जिनसे क्रमश: धौली गंगा और अलकनन्दा आती हैं, परंतु इसका भी कोई प्रमाण नहीं है कि मानसरोवरसे कोई नदी आकर धौली गंगा या अलकनन्दामें मिली हो।

इस सम्बन्धमें मैंने एक पत्र भारतसरकारके सर्वे विभागके डाइरेक्टरको लिखा था। इस विभागने गढ़वाल जिला और टिहरी राज्यकी जाँच और खोज करनेका काम हाथमें लिया और इस विभागके अफसरोंने भी गंगाजीके असली उद्‌गमस्थानका पता लगानेका प्रयत्न किया, परंतु वे भी गोमुखके आगे कुछ पता न लगा सके। इस विभागके एक अफसर मेजर आसमेस्टनने गोमुख और कैलासके आस-पासका नक्शा भागीरथी, अलकनन्दा, मन्दाकिनी, धौलीगंगा इत्यादिके वर्णनसहित मेरे पास भेजनेकी कृपा की। यह नक्शा सर्वे विभागकी खोजके आधारपर बनाया गया है। इससे भी गंगाजीके असली उद्‌गमस्थानका पता नहीं लगता।

सन् १७८० ई० के लगभग रेनल साहबने एक पुस्तक अँगरेजीमें लिखी है, जिसका नाम Memoirs of a Map of Hindustan है। उसमें उत्तर भारतका जो नक्शा दिया है, उसमें गंगाजीका उद्‌गमस्थान मानसरोवर बताया गया है और मानसरोवरसे गोमुखको एक नदीद्वारा सम्बन्धित कर दिया गया है और जो नदी मानसरोवरसे गोमुखतक दिखलायी गयी है, उसमें एक ऐसी नदीका भी मिलना दिखलाया गया है, जो काश्मीरकी तरफसे आती है। इस तरह श्रीगंगाजीका एक दूसरा उद्‌गमस्थान काश्मीरकी तरफ रेनल साहबने माना है। पुस्तक पढ़नेपर उसमें इस बातका कोई प्रमाण नहीं मिलता कि रेनल साहबने स्वयं खोजकर गंगाजीके उद्‌गमस्थानका गोमुखसे मानसरोवरतक गंगाजीके किनारे-किनारे जाकर पता लगाया हो। ऐसा मालूम होता है कि रेनल साहबने जनश्रुतिके आधारपर ही नक्शेमें मानसरोवरको गंगाजीका उद्‌गमस्थान दिखला दिया है। सर्वे विभागकी वर्तमान खोजसे इसका समर्थन नहीं होता है। मेजर आसमेस्टन साहबका अनुमान है कि मानसरोवरके आस-पाससे करनाली नामकी नदी दक्षिणको जाकर घाघरा (सरयू)-में मिलती है और घाघरा अन्तमें गंगाजीमें मिली है। यदि करनाली नदीको ही असली गंगा मान लें, तो गंगाजीका कैलास और मानसरोवरसे निकलना सिद्ध हो सकता है।

गंगाजीके उद्‌गमस्थानके विषयमें महामहोपाध्याय मधुसूदनजी ओझासे ज्ञात हुआ है कि गंगाजीका असली उद्‌गमस्थान काश्मीरके उत्तरमें पामीरका पठार है। आपका मत है कि गंगाजीका जल इस ब्रह्माण्डसे बाहर दूसरे ब्रह्माण्डसे आया है। इसीलिये उसके जलमें जो गुण हैं, वे संसारके किसी भी जलमें नहीं हैं। आपने कहा है कि दूसरे ब्रह्माण्डका जल भापरूपमें इस ब्रह्माण्डमें आकर चन्द्रमाकी शीतलता पाकर उसके आसपास जमने लगता है और वहाँसे वह ध्रुवतारेपर गिरता है, जिसे विष्णुपाद भी कहते हैं। ध्रुवतारेसे जल पामीरके पठारपर गिरता है। वहाँसे चारों तरफ चार धाराएँ जाती हैं। जो धार दक्षिणकी तरफ आती है, उसे ही वर्तमान गंगाका नाम दिया गया है। यह धारा प्राचीन कालमें हिमालयपर्वतके कारण भारतमें आनेसे रुक जाती थी। सूर्यवंशी राजा भगीरथ हिमालयमें एक सुरंग फुड़वाकर इस धाराको भारतकी तरफ

लाये। गोमुख ही उस सुरंगका दक्षिणी मुख है। गोमुखके आसपास बर्फ जमी रहनेके कारण अब आजकल कोई उस सुरंगका पता नहीं लगा सकता। यदि यह कथन सत्य मान लिया जाय तो पुराणोंमें श्रीगंगाजीकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें दी हुई बहुत-सी बातें आसानीसे समझमें आ जाती हैं, परंतु इस कथनको सत्य माननेमें सबसे बड़ी अड़चन यह है कि आजकल ऐसी कोई नदी नहीं दिखायी देती, जो पामीरके पठारसे हिमालयके दूसरी तरफतक बहती हो। हाँ, रेनल साहबके नक्शेमें इस प्रकारकी नदी अवश्य बतलायी गयी है, परंतु उसके अस्तित्वका पता आजकल तो कहीं नहीं लगता, दूसरी अड़चन यह है कि भगवान् शंकरका निवासस्थान पामीर मानना होगा, जो कैलास पर्वतसे सैकड़ों मील दूर है।

श्रीगंगाजीके उद्गमके सम्बन्धमें मैं जो कुछ जान पाया हूँ, उसे मैंने ऊपर लिखनेका प्रयत्न किया है। इस जानकारीके आधारपर मैं किसी भी निश्चयपर नहीं पहुँच सका हूँ।

गंगाद्वारसे गंगासागर

(१)

लक्ष्मणझूलासे कर्णवास

वर्तमान समयमें रेल, हवाईजहाज, सड़क आदिकी सुविधाओंके कारण जहाँ मनुष्यको अपने निश्चित स्थानपर पहुँच जानेकी अपूर्व सुविधा हो गयी है; वहाँ मनुष्यको मार्गके सब स्थानोंका सूक्ष्मरूपसे दर्शन और ज्ञान प्राप्त करनेका अवकाश भी नहीं रहा है। रेल सर-सर सर-सर मनुष्यको ले जाकर निश्चित स्थानपर पटक देती है। पहाड़ी स्थानोंमें अनेक कठिनाइयोंके कारण इन साधनोंका कुछ अभाव-सा है। इस कारणसे यात्री ऋषिकेशसे उत्तराखण्डमें प्रवेश करते समय पैदल या कंडी-झप्पान आदिके द्वारा ही यात्रा करते हैं। इसी कारणसे इस प्रदेशके मार्गवर्ती स्थानोंका वर्णन कुछ यात्रियोंने प्रकाशित किया है। हरिद्वारसे दक्षिणमें गंगाजी मैदानमें प्रवेश करती हैं। यहाँसे गंगासागरतककी यात्राके क्रमबद्ध विवरण कहीं भी उपलब्ध नहीं हैं।

यहाँ कुछ सज्जन कहेंगे कि रेल आदिसे हम जिस स्थानपर जाना चाहें जा सकते हैं, किंतु अनुभवसे ज्ञात होता है कि सुविधा मिल जानेपर मनुष्यका यात्राक्षेत्र कुछ स्वभावत: संकुचित हो जाता है। आजकल हवाईजहाजका मार्ग स्थापित हो जानेके कारण लोग केवल बदरीनाथ और केदारनाथके दर्शन करके ही अपनेको धन्य मान लेते हैं, जिससे मार्गके अन्य स्थानोंकी उपेक्षा होने लगी है। इन सज्जनोंको पर्वतयात्राका भी कोई विशेष आनन्द नहीं प्राप्त होता।

यह कितनी लज्जाकी बात है कि विदेशी लोग तो सुदूर विलायतसे आकर हमारे देशके दुर्गम-से-दुर्गम स्थानोंकी यात्रा करें और उनका विशद वर्णन अपने देशकी पत्र-पत्रिकाओंमें प्रकाशित करें और हमलोग अपने उन चिर-परिचित स्थानोंकी भी उपेक्षा करते जायँ, जिनकी कीर्तिको हमारे पूर्वज सहस्रों वर्षसे जीवित किये हुए हैं। श्रीगंगाजीको ही लीजिये। यह भारतकी सबसे पवित्र पुण्यसलिला नदी है। इसके तटपर सबसे प्रथम हमारी सभ्यताका विकास हुआ है। इसीकी घाटी आज भी भारतका उद्यान समझी जाती है। इसका अधिकांश भाग भी मैदानमें ही स्थित है। इसका मार्ग कुछ भी दुर्गम नहीं है। इस देशके मुख्य स्थान और हजारों तीर्थ इसके तटपर स्थित हैं, किंतु कितने हैं ऐसे भारतके लाल, जिन्होंने इसकी सम्पूर्ण यात्रा की हो। उस यात्राका पूरा विवरण लिखना तो दूर रहा, सौ-दो सौ मीलका पूरा विवरण लिखनेवाले भी नजर नहीं आते!

हम ऊपर स्वीकार कर आये हैं कि उत्तराखण्डकी यात्रा लोगोंने की है और उसके कई वर्णन भी हिन्दीमें प्रकाशित हो चुके हैं। इसलिये उस वर्णनको न दुहराकर हम केवल लक्ष्मणझूलासे दक्षिणहीका वर्णन अपनी लेखमालामें करते हैं। ईस्ट इण्डिया रेलवेके ऋषिकेश

स्टेशनसे तीन मीलकी दूरीपर लक्ष्मणझूला नामक स्थान
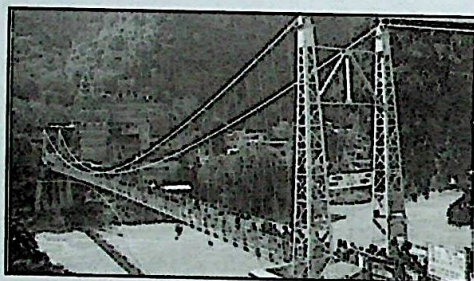
लक्ष्मण झूला

है। यहाँपर लक्ष्मणजीका मन्दिर है और उन्हींके नामसे एक प्रसिद्ध झूला है, जिसपरसे लोग भागीरथीको पार करते हैं। यह झूला तारके रस्सोंपर बना हुआ है। पुल ५०० फीट लम्बा है। इसपर चलनेसे पुल झूलेकी तरह हिलने लगता है। गंगाजीके दोनों ओर बस्ती है। यात्रियोंके ठहरनेके लिये धर्मशाला है। पोस्ट आफिस भी है। यहाँसे थोड़ी दूरपर सत्य सेवाश्रम, स्वर्गाश्रम नामक स्थान हैं। यह स्थान अत्यन्त रमणीय है। झूलेके दोनों ओर बाबा काली कमलीवालेकी धर्मशालाएँ हैं। सदावर्त भी बँटता है। यहाँ गंगाका घाट चौड़ा तो नहीं है, किंतु गहरा अवश्य है।

ऋषिकेशसे डेढ़ मीलकी दूरीपर मुनिकी रेती है। ऋषिकेश हरिद्वारसे चौदह मील है। यहाँतक रेल भी आती है। ऋषिकेशतक मोटर, ताँगा या इक्का भी मिल जाते हैं। ऋषिकेश प्राचीन ऋषि-मुनियोंकी तपोभूमि है। गंगाके दाहिने तटपर यहाँ श्रीरामजानकीका मन्दिर है। मन्दिरके आगे गंगाकी ओर कुंजामृत नामक कुण्ड है। ऋषिकेशके उत्तर भागमें भरतजीका शिखरदार एक प्रसिद्ध मन्दिर है। मन्दिरमें श्रीभरतजीकी सुन्दर मूर्ति है। बाबा काली कमलीवालेके क्षेत्रोंका यहाँ प्रधान केन्द्र है। यहाँपर पोस्ट ऑफिस और तारघर है। ऋषिकेशसे थोड़ी दूरपर कैलाश नामक एक स्थान है, यहाँ श्रीशंकराचार्य और चन्द्रशेखर महादेवके मन्दिर हैं। यहाँपर श्रीशंकराचार्यजीकी गद्दी भी है।

हरिद्वारसे आठ मीलपर सत्यनारायण चट्टी है। यहाँ श्रीसत्यनारायणजीका मन्दिर और निर्मल जलका एक कुण्ड है। बाबा काली कमलीवालेका यहाँ एक क्षेत्र है।

हरिद्वार हिन्दुओंकी मुख्य सात पुरियोंमेंसे है। श्रीगंगाजीकी विचित्र शोभाके देखनेका सौभाग्य सबसे प्रथम यहीं प्राप्त होता है। हरिद्वारका स्टेशन ई० आई० आर० की उस शाखापर है, जो लुक्सर जंक्शनसे देहरादूनतक गयी है। हरिद्वारमें अनेकों धर्मशालाएँ हैं। कुछमें यात्रियोंके भोजनका भी प्रबन्ध है।

हरिद्वार अब एक बड़ा नगर बन गया है। यह श्रीगंगाजीकी नहरके किनारे है। डाकघर, बिजली, तार, टेलीफोन आदि सभी यहाँ हैं। म्युनिसिपलटीके उद्योगसे इस समय पक्की सड़कें बन गयी हैं। अस्पताल भी खुल गया है। खाने-पीनेकी चीजोंके लिये बाजार है।

हरिद्वारमें स्नान-माहात्म्य है। यहाँ देवदर्शनका भी बड़ा पुण्य है। पिण्डदान, तर्पण भी किया जाता है। हरिकी पैड़ीमें अस्थियाँ भी प्रवाहित की जाती हैं। यह स्टेशनसे पौन मीलकी दूरीपर प्रसिद्ध पत्थरका पक्काघाट है। दाहिनी ओर दो-तीन मन्दिर हैं। बायीं ओर पत्थरका एक बड़ा मकान है, जिसके साथ ही एक और मन्दिर है। इस घाटपर उत्तरकी ओर दीवारके नीचे हरिका चरणचिह्न है। हरिकी पैड़ियोंसे कुछ दूर, पूर्वकी ओर गंगाके बीच घाटमें पानीसे थोड़ा ऊपर एक चबूतरा है। इस प्लेटफार्म तथा सीढ़ियोंके मध्यमें एक छोटा-सा पुल है। प्लेटफार्म और पैड़ियोंके बीच जहाँ गंगाकी धार है, उस स्थानको ब्रह्मकुण्ड कहते हैं। यहाँ बड़ी मछलियाँ बहुत हैं। गंगाजीकी धाराके बीचमें मनसादेवीका मन्दिर है। मन्दिरकी प्रदक्षिणा लोग जलहीमें करते हैं। ब्रह्मकुण्डपर ब्रह्माजीने यज्ञ किया है। यहींपर श्रीगंगाजीका मन्दिर है, जहाँ सायं-प्रातः आरती होती है। रातको बहुत-से नर-नारी पत्तेके दोनोंमें दीपक जलाकर गंगाजीकी धारामें छोड़ते हैं, उस समय गंगाकी शोभा बड़ी सुन्दर मालूम होती है।

गंगाकी दूसरी तरफ सामने ही नीलपर्वत है। इसके नीचे नीलधारा बहती है। हरिद्वारसे ही श्रीगंगाजीकी प्रधान नहर आरम्भ होती है। गर्मीके दिनोंमें श्रीगंगाजीका अधिकांश जल इसी नहरमें छोड़ा जाता है। थोड़ा-सा जल नीलधारामें आता है। असलमें नीलधारा ही गंगाजीकी प्रधान धारा है। पहाड़की ठीक चोटीपर चण्डीदेवीका मन्दिर है। इसके समीप ही अंजनादेवीका छोटा-सा मन्दिर है।

हरिद्वारमें अन्य स्थानोंकी भाँति मन्दिर बहुत अधिक नहीं हैं। श्रवणनाथ, और बिल्वकेश्वर महादेवके मन्दिर भी दर्शनीय हैं।

हरिद्वारसे एक मील दक्षिण-पश्चिम गंगाके दाहिने तटपर मायापुर है। यह सप्तपुरियोंमेंसे माया नामक एक पवित्र पुरी थी। अब यह हीन दशामें है। यहाँके प्राचीन ऊँचे टीले ही इसकी स्मृतिमात्र हैं। इसी मायापुरमें राजा वेनकी उजड़ी गढ़ी बनी हुई है। इन टूटे-फूटे ध्वंसावशेष स्थानोंको देखनेके लिये भी यात्री बड़े चावसे जाते हैं।

यहाँसे दो मीलकी दूरीपर गंगाके दाहिने किनारे बसा हुआ कनखल तीर्थ है। यह छोटा कसबा है, किंतु हरिद्वारकी अपेक्षा बड़ा है। यहाँ भी पक्केघाट बने हुए हैं। संन्यासियों, वैरागियोंके मठ और अखाड़े बहुत हैं। बाजार बड़ा और सुन्दर है। किंतु यहाँ हरिद्वारकी तरह रौनक नहीं है। बड़े-बड़े विशाल मकान खाली और और उजाड़ पड़े हैं। अनेक सदावर्त हैं, किंतु उनका प्रबन्ध ठीक न होनेके कारण साधु-संन्यासी कष्ट पाते हैं।

कनखलमें लंटौरवाली रानीकी छत्री और घाट दर्शनीय हैं। छत्रीमें भगवान् श्रीकृष्णकी दिव्य मूर्ति है। छत्रीका कला-कौशल और चित्रकारी दर्शनीय है।

कनखल एक अति प्राचीन स्थान है। इस स्थलपर सनत्कुमारने तप किया था। इसी स्थानपर दक्ष प्रजापतिने यज्ञ किया था, जिसमें सतीने अपना शरीर भस्म कर दिया था। दक्ष प्रजापतिका मन्दिर अब भी विद्यमान है। मन्दिरमें वीरभद्र और भद्रकालीकी छोटी-छोटी मूर्तियाँ

दक्ष प्रजापतिका मन्दिर

हैं और सामने सतीकुण्ड है। कुण्डसे लोग विभूति लेकर मस्तकमें लगाते हैं। मन्दिर और कुण्डके मध्यमें नन्दीकी मूर्ति है। दालानमें हनुमान्‌जीकी मूर्ति है।

हरिद्वारसे चार मीलकी दूरीपर कांगड़ी मिलता है। वह गंगाके बायें तटपर स्थित है। इसके निकट ही नीचेकी ओर आर्यसमाजियोंका सबसे बड़ा गुरुकुल था। इसे सन् १९०८ ई० में महात्मा मुंशीरामजी (स्वामी श्रद्धानन्दजी)-ने स्थापित किया था। सन् १९२४ ई० की गंगाजीकी बाढ़में गुरुकुलकी इमारतोंको बहुत नुकसान हुआ। अब गुरुकुल विश्वविद्यालयकी इमारतें हरिद्वारसे थोड़ी दूर श्रीगंगाजीके नहरके किनारे बनायी गयी हैं। भारतकी राष्ट्रीय संस्थाओंमें इस संस्थाका मुख्य स्थान है। प्राचीन सभ्यता और शिक्षाका भारतमें प्रचार करनेके निमित्त इस संस्थाकी स्थापना हुई थी। इसमें ब्रह्मचारियोंको प्राचीन समयके गुरुकुलोंकी भाँति शिक्षा देनेका प्रबन्ध किया गया था। यहाँसे कुछ मील नीचे इसी तटपर शामपुर है, जहाँ डाकघर और थाना दोनोंही हैं। कांगड़ीसे आनेवाली कच्ची सड़क भी इस स्थानसे निकलती है। यहींसे बिजनौर जिला आरम्भ होता है। आगे ही बहार पैली है, जहाँसे एक कच्ची सड़क लालधंगको भी जाती है। सामने उस पार चाँदपुर नामक स्थान है। जहाँसे श्रीगंगाजीकी एक धारा बाणगंगाका निकास हुआ है। यह धारा गंगाके पूर्व मार्गमें स्थित है और कुछ दूर आगे चलकर ज्ञानपुरके निकट गंगासे फिर

मिल जाती है। कुछ मील नीचे टटवाला स्थानपर रवासन नदीका संगम है। उस पार भोगपुर है। इससे भी कुछ नीचे कोटवाली राव नदीका संगम माखूवालाके निकट ही है। थोड़ा ही नीचे सावलगढ़के किलेके भग्नावशेष दिखलायी पड़ते हैं। इस दुर्गका निर्माण मुगलसम्राट् शाहजहाँके राजकालमें, लगभग तीन सौ वर्ष पूर्व, नवाब सावलखाँने किया था। किला गंगाके तटपर ही स्थित है। यहाँसे नागल कच्ची सड़कद्वारा भी जा सकते हैं। वह नगर गंगाजीके बायीं ओर लगभग डेढ़ मीलकी दूरीपर स्थित है और कांगड़ीसे १६ मील पड़ता है। इसे सन् १६०५ ई० में साहनपुरके रायने बसाया था। नागलकी खोहें देखनेयोग्य हैं। बस्तीसे पचास कदम चलकर ही बड़े-बड़े ऊँचे रेतके टीले गंगातटतक बनते चले गये हैं। इनके अन्दर गुफाएँ हैं और फिर उनके अन्दर वृक्ष-लता इत्यादि हैं। पास ही गोयला-ग्राममें कार्तिकी पूर्णिमापर मेला लगता है। पार रनजीतपुर जानेके लिये नाव भी मिलती है। नागलसे कच्ची सड़कें नजीबाबाद, चन्दोक स्टेशन और बालावली स्टेशनको जाती हैं। नागलसे चार मीलपर बालावली है। बालावलीका स्टेशन गंगाके तटपर ही स्थित है। यहीं ई० आई० आर० की लुक्सरवाली शाखा गंगाको पार करती है। चन्दोक जानेवाली कच्ची सड़क वहाँसे मण्डावरतक पक्की बनी हुई है। मण्डावर पुराना नगर है। जो प्राचीनकालमें उजड़ गया था। बारहवीं सदीमें अग्रवाल बनियोंने इसे फिर आबाद किया। गाँवके आसपास आमके बगीचे हैं। यहाँ देवीजीके उपलक्ष्यमें चैत्र और क्वारमें मेले लगते हैं। यहाँसे चारों ओर कच्ची सड़कें गयी हैं। मण्डावर श्रीगंगाजीसे करीब छः-सात मील दूरीपर दक्षिण किनारेपर है। इसके सामने गंगाजीके उत्तर तटपर शुकताल है। यह वही स्थान है, जहाँ राजा परीक्षित् शापके बाद गंगा-तटपर चले गये थे और श्रीशुकदेवजीने उनको सात दिनके अन्दर श्रीमद्भागवत सुनायी थी। उस स्थानपर एक पचास-साठ फीट ऊँचा टीला है, जिसके ऊपर एक विशाल वटवृक्ष है, जो कुल टीलेपर साया रखता है। उस टीलेपर एक छोटा-सा मन्दिर स्थापित है, जिसमें श्रीशुकदेवजीके युगल चरणोंके चिह्न स्थापित हैं। यहाँपर मुजफ्फरनगरके रईसोंने धर्मशालाएँ बनवा दी हैं। हर धर्मशालामें मन्दिर है, हर मन्दिरमें बारहों महीने पुजारी रहता है। एक दण्डीबाड़ा नामक इमारत है, जिसमें अधिकतर दण्डी स्वामी इत्यादि ठहरते हैं और जिसमें मुजफ्फरनगरकी मण्डीके आढ़तियोंकी तरफसे क्षेत्र है। मण्डीवालोंकी तरफसे एक गोशाला भी है, जिसका प्रबन्ध अच्छा है। इस स्थानपर गृहस्थी लोग सिर्फ गंगास्नानके पर्वपर जाते हैं, बाकी समयमें भजनानन्दी लोग ही रहते हैं। कोई बाजार या दूकान इत्यादि नहीं है। मेलोंपर और जगहोंसे दूकानें आती हैं। मुजफ्फरनगर स्टेशनसे भोप्पा नामक ग्रामतक पक्की सड़क गयी है, वहाँसे श्रीशुकदेवजीतक कच्ची चौड़ी सड़क गयी है। भोप्पेसे शुकदेवजी छः मील रह जाते हैं।

शुकतालसे करीब चार मील मतावलीघाट है, जहाँसे मुजफ्फरनगरको सड़क गयी है। मतावलीघाटके दूसरी तरफ श्रीगंगाजीके दक्षिण तटपर रावलीघाट है। बीचमें नावोंका पुल प्रतिवर्ष बनाया जाता है। रावलीघाटसे पक्की सड़क बिजनौरको गयी है। यह यहाँसे नौ मील है। बिजनौर गंगाके दक्षिण किनारेसे तीन मीलपर स्थित है। प्राचीन कालमें इसे उसी राजा बेनने बसाया था, जिसने बीजना—पंखे बेचकर काम चलाया, किंतु लोगोंसे कर नहीं वसूल किया। कदाचित् यह बीजानगर या विजयनगरका अपभ्रंश है। यहाँ जाटोंका आधिपत्य रहा है। यहाँ कई मन्दिर और सरकारी सरायें हैं। यहाँसे साधूपुरा होती हुई गंगातटतक पक्की सड़क बनी हुई है। वहाँ नावोंका पुल है। उस पार थाना भी है। वहाँसे मीरनपर और नयगाँवकी ओर कच्ची सड़कें गयी हैं।

दारानगर आठ मील नीचे गंगातटपर ही बसा हुआ है। यहाँसे आध मीलपर गंज है। जहाँ डाकघर और थाना है। यहाँ गंगास्नानके कई मेले होते हैं। इनमें प्रधान

कार्तिक-मासकी पूर्णिमाका होता है। दारानगरमें विदुर-कुटी है। महाभारतके समय पाण्डवोंकी स्त्रियाँ यहीं पहुँचा दी गयी थीं। इसीसे इसका ऐसा नाम है। यहाँ विदुरजीकी पादुकाएँ हैं। गंजमें कालीका मन्दिर है और पक्काघाट बना हुआ है। यहाँ कार्तिक शुक्ला सप्तमी और अष्टमीसे गंगाजीकी रेतीमें बड़ा मेला लगता है, जो अगहनमें द्वितीयातक रहता है। यह स्थान हरिद्वारसे पचास मील दक्षिण है। यहाँसे गढ़मुक्तेश्वर चालीस मील रह जाता है।

दारानगरसे दो ही मील दक्षिणमें जहानाबाद है, जिसका पुराना नाम गोवर्धननगर था। किंतु शुजाजातखाँने इसका नाम जहाँगीर बादशाहकी यादगारमें जहानाबाद कर दिया। यहाँसे कुछ मील नीचे छोइया नदी आकर गंगासे मिली है। यहीं धिनवारपुरपर गंगा पार करनेके लिये नाव मिलती है।

यहाँसे आठ मील दक्षिणमें सीताबनी नामक स्थान जंगलमें है। यहाँ शंकरजीकी मूर्ति एक मठमें है। गंगाजी इसके चारों ओर आ जाती हैं। इसे रामकार कहते हैं। ऊपर पहुँचनेके लिये जगमोहनमें पहुँचकर चार रास्ते हैं। यहाँ एक सीताकुण्ड है।

उस पार गंगाजीके उत्तर तटपर कई मीलका नीचा मैदान खादिरके नामसे प्रसिद्ध है। इस मैदानपर घासके जंगल उगे हुए हैं, जो सुअर आदि पशुओंसे पूर्ण हैं। यह अवश्य ही किसी समयमें गंगाका पेंदा रहा होगा। गंगामें वह महान् परिवर्तन जिसके कारण इस खादिरका विकास हुआ, चौदहवीं शताब्दीमें हुआ था। जनश्रुतिके अनुसार इसी प्रकारका एक और परिवर्तन शाहजहाँके शासनकालमें हुआ है।

नीचेके प्रदेशमें गंगाका दाहिना तट तो स्पष्ट है, किंतु बायें तटका कुछ भी ठिकाना नहीं है। धार काफी स्थिर है। किंतु कुछ स्थानोंपर तट कट रहे हैं। मेरठ जिलेके पूठ परगनेमें काफी कटाव हुआ है और खादिरमें कृषिकी हुई भूमि बराबर बदलती चली जा रही है। इस विस्तृत तटपर गढ़मुक्तेश्वर और पूठको छोड़कर कोई बड़ा ग्रामतक गंगाके दाहिने तटपर नहीं है। मालूम पड़ता है कि नदीका धरातल गढ़मुक्तेश्वरसे कुछ नीचा होता गया है। जिससे यहाँ और पूठकी भूमि केवल धान और ऊखके उपयुक्त रह जाती है।

सीताबनीसे करीब बीस मील श्रीगंगाजीके दक्षिण तटपर टिगरी ग्राम है। यहाँ कार्तिकी पूर्णमासीपर बड़ा मेला लगता है। टिगरीसे दूसरी तरफ श्रीगंगाजीके उत्तर तटपर गढ़मुक्तेश्वर है। यह बूढ़गंगा संगमसे कुछ ही मील नीचे एक उच्च कगारपर स्थित है। गढ़वाल और देहरादूनसे बहे हुए लकड़ी और बाँसके गट्ठर यहाँ आते हैं और उनका व्यापार यहाँ खूब होता है।

गढ़मुक्तेश्वरका नाम मुक्तेश्वर महादेवके नामपर पड़ा है। जिनका विशाल मन्दिर गंगाजीसे करीब एक मील दूर है। मन्दिरके अन्दर ही नृगकूप है, जिसमें स्नान करनेका बड़ा माहात्म्य है। मन्दिरके पास ही वनमें झारखण्डेश्वर महादेवका प्राचीन लिंग है। इसके अतिरिक्त गंगेश्वर, भूतेश्वर और आशुतोषेश्वरकी भी मूर्तियाँ प्राचीन हैं। यहाँपर लगभग अस्सी सतीस्तम्भ हैं। किंतु वे अब भग्नावस्थामें हैं। गंगाजीका सबसे पुराना सीढ़ियोंवाला मन्दिर है। यह झज्झर जिला रोहतकके नवाब और उनके कायस्थ दीवानके उद्योगसे बना है। कार्तिकी पूर्णिमाको यहाँ बड़ा मेला लगता है।

मुक्तेश्वर महादेव

गढ़मुक्तेश्वरसे आठ मील दक्षिणमें गंगाकी दाहिनी

ओर पूठ स्थित है। यहाँ सोमवतीको अच्छा मेला लगता है। रघुनाथजी, राधाकृष्ण तथा महाकालेश्वरके मन्दिर गंगातटपर ही हैं। कहा जाता है कि हस्तिनापुरके राजाओंका उद्यान यहीं था। इसका नाम भी पुष्पवती था। नाममें रूपान्तर मुसलमानोंके कारण हुआ है। यहाँ खादिर समाप्त हो जाती है। पार जानेके लिये नाव रहती है। नावोंका पुल भी बनता है। जिसे पारकर सड़क गंगाचोली ग्राम होती हुई हसनपुरको जाती है। पूठसे एक मीलपर शंकरटीला है, अति रमणीक स्थान जंगलमें है। एक मन्दिर है। भगवानपुर यहाँसे चार मील है। यहाँ एक प्राचीन शिवालय है, किंतु उसमें मूर्ति नहीं है। यहाँ एक संस्कृत पाठशाला है। यहाँसे चार मीलपर बसई ग्राम है। यहाँपर मुरादाबाद जिलेमें जानेके लिये नाव मिलती है। यहाँ एक शिवालय और दो छोटी-छोटी धर्मशालाएँ हैं, जहाँसे आठ मील माड़ू पड़ता है। यहाँ माण्डव ऋषिकी मूर्ति है। मण्डकेश्वर महादेवका मन्दिर है। यहाँ ढाकका वन है। यहाँसे पाँच मील नीचे अहार है।

अहार एक प्राचीन किंतु छोटा नगर है। यहाँसे पार सिरसासरायँ नामक ग्राममें जानेके लिये नाव मिलती है, जहाँ एक मन्दिर भी है। अहारमें मन्दिर बहुत हैं, जिनमेंसे कुछ प्राचीन हैं। शिवरात्रि और गंगादशहरापर मेला लगता है। गंगास्नानके लिये बड़ी भीड़ होती है। भैरोंगणेश, कंचनामाई, चामड़माई, हनुमान्जी, भूतेश्वर, नागेश्वर और अम्बिकेश्वर महादेवके मन्दिर हैं। ब्रह्मपुराणमें लिखा है कि जब असुरोंके उत्पातसे पृथ्वीतलपर हाहाकार मच गया, तो भगवान्ने वाराहरूप यहीं धारणकर उनका दमन किया। जनमेजयने नागयज्ञ यहीं किया था। यहाँसे दो मील दक्षिणमें अवन्तिकादेवीका मन्दिर है।

यहाँसे पाँच मील चलनेपर अनूपशहरका प्रसिद्ध नगर गंगाके दायें तटपर मिलता है। नगरके आरम्भहीमें नर्मदेश्वर महादेवका प्राचीन मन्दिर है। कार्तिकी पूर्णिमाको यहाँ बड़ा मेला लगता है।

इसे बड़गूजर राजा अनूपरायने बसाया था। यहाँकी जलवायु उत्तम समझी जाती है, किंतु यहाँकी मृत्यु-संख्या भी अधिक है। इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि बहुत-से धार्मिक हिन्दू यहाँ केवल मरनेके लिये ही आते हैं। यहाँ हिन्दू वैद्योंका एक प्रसिद्ध कुटुम्ब रहता है। अनूपशहरसे आठ मील दक्षिणमें कर्णवासक्षेत्र है।

(२)
कर्णवाससे कानपुर

कर्णवास श्रीगंगाजीके दाहिने तटपर है। यह एक प्राचीन पुण्य-तीर्थ है तथा सदैवसे ब्रह्मज्ञानियोंका निवासस्थान रहा है। भगवान् बुद्धने यहाँ तप किया था और वह रमणीय स्थान कर्णवासके समीप ही एक सघन झाड़ी नामक वनमें बूधौके नामसे प्रसिद्ध है। इस सघन झाड़ीमें सब प्रकारकी यज्ञकी सामग्री मिलती है। साधु-महात्माओंके रहनेके लिये यह बड़ा ही दिव्य स्थान है। इस वनमें ऐसे वृक्ष हैं कि छोटी-मोटी वर्षा होनेका प्रभाव उनके नीचेतक नहीं पहुँचता है। बाबा विद्याधर यहीं हुए हैं, जिनके चमत्कारसे प्रभावित होकर शाहजहाँ बादशाहने उन्हें खुदाई आदमी माना और बहुत कुछ देकर साथ दिल्ली चलनेका हठ किया, किंतु बाबाने मंजूर नहीं किया। यहाँपर अन्य कई प्रसिद्ध महात्मा हो गये हैं, इनमें परमहंस मस्तराम, दीनबन्धु, मौजानन्द विशेष उल्लेखनीय हैं। आर्यसमाजके प्रवर्तक स्वामी दयानन्द सरस्वतीने जलवायु योगानुकूल देख तथा ठहरे हुए साधुओंमें पूर्णानन्द और मौजबाबाकी पूर्णयोग क्रियासे प्रसन्न होकर यहीं तीन वर्ष योगाभ्यास किया और दोबारा फिर पधारे। अभी सांगवेद पाठशालाके अध्यापक पं० जीवारामजीने तीस वर्षतक गायत्री मन्त्रका जप किया है। इस समय भी कर्णवास और उसके आसपास कई बड़े ऊँचे विरक्त महात्मा रहते हैं। कर्णवासका पुराना नाम भृगुक्षेत्र है। यह भृगुजीका स्थान है। शुम्भ-निशुम्भको युद्धमें मारकर श्रीदुर्गाजीने यहीं विश्राम किया था और इसे अपना स्थान बनाया था। वही देवीजी आज सबका कल्याण करनेके कारण

कल्याणीदेवीके नामसे प्रसिद्ध हैं। उनके मन्दिरपर हमेशा भीड़ रहती है। दोनों नवरात्रोंपर बड़ा मेला लगता है। यहाँ बत्तीस सौ वर्षकी प्राचीन मूर्तियाँ खोदनेपर प्राप्त हुई हैं। वहाँका स्थान कर्णका कोट कहलाता है। कहते हैं कि राजा कर्णका शिशु शरीर गंगाजीसे यहीं निकाला गया था और यहाँ उन्होंने तप भी किया था। इसीसे भृगुजीने आशीर्वाद दिया कि इस स्थानका नाम कर्णवास
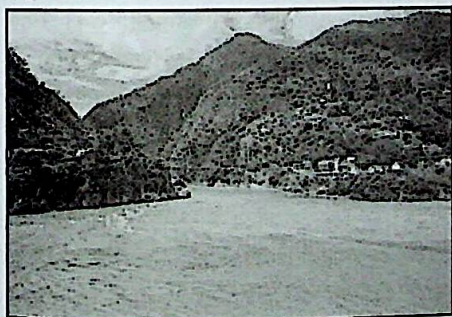
कर्णशिला

होगा। राजा कर्णकी यहाँ एक शिला है, जो जलकी चुवानतक चली गयी है।

यहाँका सिन्धियाघाट भी दर्शनीय है। यद्यपि अन्य स्थानोंकी भाँति यहाँ भी यह गिरा हुआ पड़ा है। श्रीभूतेश्वरका प्राचीन मन्दिर इसी घाटपर है।

कार्तिकी पूर्णमासी और गंगादशहराको यहाँ बड़े-बड़े मेले लगते हैं, जिनमें लगभग एक लाख नर-नारी भाग लेते हैं।

कर्णवाससे तीन मील दक्षिण राजघाट गंगाके दाहिने तटपर है। रेल निकल जानेसे इस स्थानका महत्त्व बढ़ गया है। रेलके पुलके दक्षिणमें नावोंका पुल है। पारमें बबराला है, जहाँसे कई ओरको सड़कें गयी हैं।

यहाँसे तीन मील नीचे गंगाजीके दाहिने किनारेपर सुप्रसिद्ध नरवर पाठशाला है। यह एक बड़े ही रमणीय स्थानमें स्थित है। जहाँ बड़े अच्छे-अच्छे महात्मा और विद्वान् रहते आये हैं।

यहाँसे एक मीलपर नरोरा नामक नगर है। गंगाजीकी दूसरी नहर यहींसे निकली है। नहरके लिये गंगामें एक बड़ा बाँध बँधा हुआ है। धाराको स्थिर रखनेके लिये भी बाँध बाँधे गये हैं।

यहाँसे चार ही मील नीचे दाहिने तटपर सुप्रसिद्ध तीर्थ रामघाट है। यहाँ श्रीवनखण्डेश्वर महादेवका बड़ा प्राचीन मन्दिर है। वैसे तो श्रीगंगाजी, हनुमान्‌जी, नृसिंहजी, विहारीजी और रघुनाथजीके भी मन्दिर दर्शनीय हैं। कार्तिककी पूर्णिमाको यहाँ समस्त भारतसे यात्री आते हैं। नरोरापर बाँध बँधनेके पूर्व बनारस और मिर्जापुरसे खूब व्यापार होता था, किंतु अब वह बन्द-सा हो गया है।

यहाँसे लगभग पन्द्रह-सोलह मीलपर लहराघाट है। जहाँ श्रीलहरेश्वरका मन्दिर है। यहाँसे तीन मीलपर सोरों है। पहले इसका नाम अकलक्षेत्र था, परंतु हिरण्याक्ष दैत्यके वाराह भगवान्‌द्वारा वध किये जानेपर इसका नाम शूकरक्षेत्र पड़ गया। प्राचीन नगरका अवशेष अब केवल एक ढेरी रह गयी है। यहाँ बूढ़गंगामें स्नान करनेके लिये यात्री बड़ी दूर-दूरसे आते हैं। यद्यपि इसमें बहुत-सी अस्थियाँ पड़ा करती हैं। किंतु तीसरे दिन वे सब जलरूपमें परिवर्तित हो जाती हैं। यह विचित्र बात यहीं देखनेमें आती है। अगहन शुक्ल एकादशीसे पंचमीतक यहाँ एक बहुत बड़ा मेला लगता है, जिसमें नुमायश भी होती है। यहाँके निवासियोंका कहना है कि गोस्वामी तुलसीदासजी यहींके रहनेवाले थे। उनका एक कच्चा मकान भी बताया जाता है। यहाँके अन्य दर्शनीय स्थान वटुकनाथजीका मन्दिर, सोमेश्वरका मन्दिर, सूर्यकुण्ड और श्रीभागीरथीजीकी गुफा है।

इसके उपरान्त दूसरा प्रसिद्ध घाट हमको कचला मिलता है। कहते हैं कि कच्छप अवतार यहीं हुआ था। गंगादशहराको यहाँ बड़ा मेला लगता है। यहाँ एक नावोंका पुल है। एक रेलका भी है। यह स्थान खरियामिट्टीके धन्धेके लिये प्रसिद्ध है। यहाँ एक अफीमकी कोठी है।

कचलासे कुछ दूरपर गंगाके बायें तटसे तीन मीलपर ककोड़ा नामक स्थान है। कार्तिककी पूर्णिमाको यहाँ एक बड़ा मेला लगता है, जो करीब सात-आठ

दिनतक रहता है। इसमें लाखों मनुष्य भाग लेते हैं। इस मेलेमें हाथी, ऊँट, घोड़े, बैल, घोड़ेगाड़ियाँ, बैलगाड़ियाँ बिक्रीके लिये आती हैं।

इसके निकट ही कादरचौक नामक कसबा है, जिसे नवाब कादरजंगने बसाया था और एक कच्चा किला भी बनवाया था। किंतु अब ऊँचे-ऊँचे टीले ही उसकी याद दिलाते हैं। यहाँसे गंगातटतक कच्ची सड़क गयी है। पार जानेके लिये नाव मिलती है। उस पार कादिरगंज बसा हुआ है। इसे भी इसी नवाबने बसाया था। यहाँ भी एक पुराना किला बना हुआ है।

कच्ची सड़कद्वारा जानेसे सोलह मीलपर कांपिल मिलता है। यह एक पुराने कगारपर स्थित है, जहाँ पहले गंगाजी बहती थीं, वहाँ अब मन्दिरों और स्नानगृहोंकी श्रेणियाँ खड़ी हुई हैं। यहाँ रामेश्वरनाथ महादेव और कालेश्वरनाथ महादेवके प्रसिद्ध मन्दिर हैं। एक कपिल मुनिकी कुटी स्थान है, जहाँसे नीचे आनेपर द्रौपदीकुण्ड मिलता है। यहाँ एक टीला पुराने किलेका है, जिसके ऊपर तम्बाकूकी खेती होती है। आजकल श्रीगंगाजी यहाँसे तीन मीलपर हैं। कांपिलसे पक्की सड़क कायमगंजको जाती है, जहाँ वसन्तऋतुमें दो मेले लगते हैं। एक परशुरामजीके मन्दिरपर और दूसरा लालजीदासके मन्दिरपर।

कायमगंजसे पाँच मीलपर शम्साबाद नामक नगर एक पुराने कगारपर स्थित है। विलायती वस्त्र भारतमें आनेके पहले यहाँ सुन्दर वस्त्र बहुत बड़े परिमाणमें बनते थे। यहाँसे एक सड़क श्रीगंगाजीको गयी है, जहाँसे पार जानेके लिये नाव मिलती है। उस पार भारतमें सुप्रसिद्ध ढाही घाट है।

शाहजहाँपुर जिलेमें शहरसे तीस मील दक्षिण ढाही नामका पुराना कसबा एक ऊँचे टीलेपर आबाद है। इस टीलेके खोदनेपर सुगन्धित भस्म मिलती है, जिससे मालूम होता है कि प्राचीन समयमें यहाँ कई यज्ञ हुए होंगे। गंगाजीकी धारा यहाँसे पाँच मील दूर है। ढाही और गंगाके बीचमें मौजा भरतपुर है। इसमें वानप्रस्था श्रीमती अन्नपूर्णा देवीका स्थान है। यह देवी बड़ी साधु-सेवी हैं। इनके स्थानपर कई साधु निवास करते हैं।

यहाँ प्रतिवर्ष कार्तिककी पूर्णिमाका बहुत बड़ा मेला लगता है। यह पन्द्रह दिनतक रहता है। यह ढाहीसे गंगातक फैल जाता है। इसमें पशुओंकी बिक्री बहुत होती है। दूर-दूरसे व्यापारी आते हैं। मेलेमें हर चीजके बाजार अलग-अलग होते हैं। शाहजहाँपुरसे पक्की सड़क जलालाबादतक है। आगे दस मील कच्चा रास्ता है।

ढाही घाटसे बारह मीलपर फर्रुखाबाद है। यहाँपर विश्रान्तियाँ (पक्के घाट) बहुत बनी हुई हैं, जिनमें शाहजीकी विश्रान्ति विशेषतया दर्शनीय है। इसके जोड़की विश्रान्ति कदाचित् भारतभरमें और कहीं नहीं है। घाटपर गंगामन्दिर और महाकालेश्वरके मन्दिर बने हुए हैं, थोड़ी दूर चलकर तारकेश्वरका मन्दिर और उनके नादियाका स्थान दर्शनीय है। यहाँ गड्ढावाले महादेव, बड़पुरकी देवी, मठियाकी देवी और मिट्टूकूँचाके हनुमान्‌जीका मन्दिर प्रसिद्ध हैं। यहाँका व्यापार उन्नतिशील नहीं है। साधोके छापे हुए लिहाफ विलायततक जाते थे, किंतु अब उनका भी काम गिर रहा है। फर्रुखाबाद जिलेका केन्द्र फतेहगढ़ है, जो यहाँसे तीन मील दक्षिण, गंगाजीके एक ऊँचे कगारपर स्थित है। इसीके दक्षिणमें बागर नाला आकर गंगासे मिला है। फतेहगढ़में धूमघाटपर पाण्डवोंका वनवास हुआ था। इसी नगरमें गरैयाघाट गर्गमुनिका प्रसिद्ध स्थान है। यहाँसे पक्की सड़क छः मीलपर रजीपुरतक जाती है, जहाँसे शृंगीरामपुर केवल दो मील रह जाता है और वहाँके लिये कच्ची सड़क भी है।

पुराणोंमें शृंगीरामपुरकी कथा इस प्रकार है—महर्षि अंगिरसके पुत्र शृंगी ऋषि हुए। यह शृंग (सींग) धारण किये हुए थे। इन्होंने बालकपनहीमें राजा परीक्षित्‌को शाप दिया और सब हाल अपने पितासे कह सुनाया। अंगिरस बोले कि हे पुत्र! तूने ब्रह्महत्याके समान पाप किया है, इसलिये तप कर। पुत्रने पिताकी बात स्वीकार

करते हुए प्रणाम किया और तपका स्थान पूछा। अंगिरस बोले कि तू तीर्थ-भ्रमण कर और जहाँपर तेरे शृंगका पतन हो, वहीं निवास करके तप कर।

इसके बाद शृंगी ऋषिने श्रीगंगाजीके किनारे-किनारे यहाँ आकर स्नान किया, जिससे उनके सिरका सींग गिर गया और मुनि तपस्यामें संलग्न हो गये। इसके प्रभावसे सब देवता वहाँ आये और उन्हें वरदान दिया। उनकी आज्ञासे शृंगी ऋषिने वैकुण्ठके तुल्य एक नगर बनाया। यही शृंगीरामपुर प्रसिद्ध है।

यहाँपर शृंगी ऋषिका मन्दिर बना हुआ है। अन्य दर्शनीय स्थान रावसाहबकी विश्रान्ति और खद्दीपुर महाराजकी विश्रान्ति हैं। किंतु गंगाजी अब इनसे दूर हैं। शृंगीरामपुरसे चार मीलपर चियासर नामक एक बड़ा ही रमणीय स्थान है। यहाँ च्यवन ऋषिकी मूर्ति है और च्यवनेश्वर महादेवका मन्दिर भी है।

यहाँसे दो मीलपर जलेसर है। यहाँ याज्ञवल्क्य ऋषिकी स्थापित की हुई याज्ञवल्क्येश्वर महादेवकी मूर्ति है, जो जागेश्वर महादेवके नामसे प्रसिद्ध है। किंतु मन्दिर जीर्णावस्थामें है।

यहाँसे चार कोसपर सढ़ियापुर है। यहाँ तीन शिवालय हैं। एक मौनीबाबाकी स्थापित की हुई पाठशाला है। थोड़ी दूरपर दूल्हादेवीका मन्दिर है।

यहाँसे तीन कोसपर कन्नौजका राजघाट है, जहाँसे एक कोस उत्तरकी ओर कन्नौज नगर है। यहाँका घाट कच्चा है। धारा बदलती है। रास्तेमें लाखनके किलेका खण्डहर है। यह लगभग चार खण्ड ऊँचा है। यहाँ पुरानी इमारतोंके चिह्न जैसे कोठे आदि खोदनेपर निकलते हैं। रजगिरका किला भी ऐसा ही है। रास्तेमें गौरीशंकर महादेवका मन्दिर है। अजयपालका मन्दिर नगरहीमें है। फूलमतीदेवीका भी मन्दिर शहरहीमें है। यहाँ चैत्र और क्वारमें नवदुर्गाका बड़ा मेला लगता है। कन्नौजके आसपास सुन्दर बगीचे हैं। यह नगर अतरके लिये बहुत प्रसिद्ध है। यहाँसे भारतके भिन्न-भिन्न भागोंमें अतर भेजा जाता है। कन्नौजसे तीन मीलपर सारोंमें गोवर्द्धनीदेवीका प्रसिद्ध मन्दिर है। यहाँ चैत सुदी चौथको पुरुषोंका बड़ा मेला लगता है। दूसरे मंगलको स्त्रियोंका वैसा ही मेला लगता है। चिन्तामणिका स्थान कन्नौजसे दो मील है। यहींपर रामघाट जीर्णावस्थामें अब भी देखनेको मिलता है। कन्नौजमें मन्दिर बहुत हैं। अधिकतर शिवजीके ही हैं।

यहाँसे हरदोई जिलेको असबाब और यात्री लेकर नाव जाती है। गंगाके बायें तटपर हरदोई जिलेमें बिलग्राम अच्छा नगर है। नाजिम हाकिम मेंहदीअलीखाँने दो बाजार भी बनवाये थे। यहाँ अमृतबान और घन अच्छे बनते हैं। नक्काशी किये हुए दरवाजे और अन्य वस्तुएँ भी बनती हैं।

कन्नौजसे सात कोस गंगाजीके उत्तर तटपर कानपुर जिलेमें नानामऊ नामक स्थान है। यहाँ कार्तिकी पूर्णिमाको अच्छा मेला लगता है। यहाँ मुर्दे बहुत दूर-दूरसे आते हैं। लोकोक्ति है—

'देश भरका मुर्दा, नानामऊका घाट'

नानामऊसे चार मीलपर सेंग है। यहाँसे एक मीलपर शृंगी ऋषिका मन्दिर है। सैवंसू यहाँसे दो मील है। यहाँ मालसिला देवी, बलखण्डेश्वर महादेव और महावीरजीके मन्दिर हैं।

सेंगसे दो मीलपर जैसमऊमें गंगेश्वर महादेवका मन्दिर है। यहाँसे दो मीलपर राधन एक बड़ा मौजा है। कहते हैं कि किसी भूकम्पमें आधी राधन लौट गयी थी। उसी समय यहाँकी चतुर्भुजी देवी पृथ्वीसे निकल आयी थीं। यहाँ मेला लगता है।

यहाँसे पाँच मीलपर सरैयाँका पक्का घाट है। यहाँ तीन पक्के घाट बने हुए हैं। यहाँ नीलकण्ठेश्वर महादेवका दर्शनीय मन्दिर है। मीलभर अन्दर जानेपर वीरेश्वर महादेवका प्रसिद्ध मन्दिर मिलता है। जंगलकी ओर अश्वत्थामा और दूधेश्वरके प्राचीन मन्दिर हैं। सरैयाँसे चार मीलपर बरुआ नामक स्थान है। यहाँ एक

संन्यासी रहते हैं।

यहाँसे एक मीलपर बन्दीमाताका प्रसिद्ध मन्दिर है, जिसकी स्थापना जानकीजीने स्वयं की थी। इसके आगे पटकापुर है, जहाँसे विठूर केवल दो मील रह जाता है।

बिठूरमें ब्रह्मावर्तकी खूँटी, सीताकुण्ड, सीतारसोई और मीनार, स्वामी आत्मानन्दका मन्दिर, श्रीरामचन्द्रजीका मन्दिर और राजा ध्रुवका किला दर्शनीय है। उस पार परियर नामक ग्राम है, जिसके निकट ही महुआ झील नामक सुन्दर जलाशय है। कार्तिकी पूर्णिमाको यहाँ बड़ा मेला लगता है, जिसमें लगभग एक लाख मनुष्य भाग लेते हैं। यहाँसे पन्द्रह मील नीचे कानपुरका प्रसिद्ध नगर है।

(३)
कानपुरसे प्रयाग

कानपुर न तो कोई प्राचीन ऐतिहासिक स्थान ही है, न कोई तीर्थ ही। इसके महत्त्वका मुख्य कारण यहाँका व्यापार ही है। मन्दिर यहाँ बहुत हैं, जिनमेंसे कुछ तो बहुत सुन्दर हैं, किंतु उनका महत्त्व स्थानीय ही है। कुछका वर्णन यहाँ दिया जाता है।

काँचका मन्दिर—यह माहेश्वरीमहालमें स्थित है।

काँचका मन्दिर

कानपुरका सबसे सुन्दर मन्दिर यही है। यह जैनियोंका स्थान है। मूर्तिकी आँखें असली हीरेकी हैं। शीशोंपर बड़े सुन्दर चित्र हैं और सब दीवालोंपर अनेक प्रकारके शीशे जड़े हुए हैं। यदि इसके अन्दर एक स्थानपर खड़ा होकर मनुष्य देखे, तो उसे अपने चारों ओर हजारों प्रतिमाएँ दिखलायी पड़ेंगी।

प्रागनारायणका शिवालय—इसका निर्माण पं० प्रागनारायण तिवारीने संवत् १९२७ में किया था। यह बहुत बड़ा मन्दिर है। इसके हातेके अन्दर ही लगभग १२० दुकानें हैं। इन दुकानोंपर स्त्रियोंके शृंगारकी वस्तुएँ अधिक बिकती हैं। इस मन्दिरके चारों ओर, किंतु हातेके अन्दर ही एक सब्जी मण्डी भी है। माघ मासमें इस स्थानपर विशेष उत्सव रहता है।

कैलाशका शिवालय—इसका निर्माण पं० गुरुप्रसादजी शुक्लने किया है। यह मन्दिर एक बड़े सुन्दर उद्यानके अन्दर स्थित है। कानपुरका यह एक बड़ा प्रसिद्ध मन्दिर माना जाता है। इस शिवालयके निकट ही गंगाजी केवल थोड़ी ही दूरपर स्थित हैं। यह स्थान अपनी रामलीलाके लिये प्रसिद्ध है।

संगमलालका शिवालय—इसका निर्माण संवत् १९९१ में हुआ है। इससे इसका नवीन होना सिद्ध है। यह देखनेमें बड़ा भव्य मालूम पड़ता है और इसकी डिजाइन भी अनोखी है।

कानपुरमें घाट भी बहुत हैं। इनके नाम ये हैं—जाजमऊ, बंगालीघाट, कोयलाघाट, मिक्सरघाट, गोलाघाट, भगवतदासघाट, गुप्तारघाट, सरसैयाघाट। यह सब पक्के बने हैं और इनपर मन्दिर भी हैं। जाजमऊके घाटपर शम्भूनाथ खत्रीका बनवाया हुआ सिद्धनाथका मन्दिर है। सरसैयाघाटपर बाबू गोकुलप्रसादकी सुप्रसिद्ध धर्मशाला है। मेलेके समयमें इसमें लगभग एक सहस्र मनुष्य ठहर सकते हैं। एक छोटा-सा सुन्दर बगीचा और एक मन्दिर इसके मध्यमें स्थित है।

यहाँपर जुग्गीलाल कमलापतिका मन्दिर भी है। मन्दिरमें भगवान्‌की मूर्तियाँ दर्शनीय हैं। कानपुरमें जगेश्वरीघाट और टिकायतरायके घाट भी देखनेयोग्य हैं।

कानपुरसे आठ कोस दक्षिणमें नागापुर है। यह स्थान सरसौल स्टेशनसे दो कोसपर स्थित है। पहले यह

एक अच्छा ग्राम था, किंतु श्रीगंगाजीकी बाढ़के कारण नष्ट हो गया। अब केवल पाँच-छ: घर बच गये हैं। यहाँ नागेश्वरका चबूतरा है और सतीदेवीका स्थान है। यह स्थान एक पहाड़ीपर स्थित है। यहाँका कगारा विचित्र रूपसे सीधा खड़ा है। पहले यहाँ एक खाकी बाबा रहते थे। उनके विषयमें एक मनोरंजक किंवदन्ती प्रचलित है।

एक ग्वालिन नजफगढ़से दही बेचने इस पार आयी, किंतु उसका बालक उस पार ही छूट गया। बरसातका समय था और आखिरी खेवा भी छूट गया। बाबाको उसपर दया आ गयी। उन्होंने कहा तू मेरे पीछे आ जा मैं तुझे पार उतार दूँगा। बस फिर क्या था, आगे बाबा खँड़ाऊँ पहिने गये और पीछे ग्वालिन। दोनों पार उतर गये। इनका नाम आजतक लिया जाता है।

नागापुरसे ६ कोसपर ड्योंडियाखेरा है। यह श्रीगंगाजीके उत्तर तटपर है। यहाँपर रामेश्वरका बड़ा सुन्दर और प्राचीन मन्दिर बना हुआ है। पहले इस

रामेश्वरका मन्दिर

स्थानका नाम संग्रामपुर था। यह एक प्रसिद्ध रणक्षेत्र है। यहाँ बहुत-सी लड़ाइयाँ लड़ी जा चुकी हैं। यहाँ गंगाजीपर इस सिरेसे उस सिरेतक जाल तने रहते हैं, जो कोई नाव आदिके आनेपर हटा दिये जाते हैं। गंगाजीके उस पार शिवराजपुर है। बिन्दकीरोड स्टेशन यहाँसे दो मीलपर है। यहाँ सौ-डेढ़ सौ मन्दिर हैं, किंतु मूर्ति केवल पचीस-तीसमें ही है। इनमें गंगेश्वरका प्राचीन मन्दिर, सिद्धेश्वर, कपिलेश्वर, पंचवटेश्वर, मुण्डेश्वर, दुधियादेवी, शगुनेश्वर, कालिकादेवी और महादेवजीके स्थान प्रसिद्ध हैं। श्रीठाकुर रसिकविहारीका मन्दिर सबसे प्रसिद्ध है। यह बड़ा सुन्दर बना हुआ है। इसके अन्दरके कमरेमें सजावट अधिक है। नौ तो फानूस ही हैं, जिनमें एक बहुत बड़ा है। यहाँ कार्तिकी प्रतिपदा, दशहरा, सावन और वसन्तको संगीत होता है। इसके बाद गिरधरगोपालका मन्दिर है। घाट भी बहुत हैं, किंतु सब बेमरम्मत हैं।

इससे ३ मील दक्षिण उन्नाव जिलेके बिलकुल दक्षिणमें बक्सर नामक स्थान है। यह बकासुर राक्षसका स्थान है। इसका भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रने वध किया था। इस राक्षसने यहाँ माहेश्वरनाथ महादेवका मन्दिर बनाया था। यहाँ चण्डिका और उससे आगे अम्बिका देवीका मन्दिर है। कार्तिकमें मेला लगता है। तब लगभग एक लाख यात्री यहाँ आते हैं। यहाँपर गंगाजी बहुत पवित्र मानी जाती हैं; आगे जाकर उनका बहाव कुछ उत्तरकी ओर है। अन्य मेले आश्विन और चैत्रकी अष्टमीको लगते हैं। यह प्राचीन तान्त्रिक क्षेत्र है। पहलेके समयमें यहाँके ओझा लोग बड़े विद्वान्, तन्त्र-कुशल और धनाढ्य होते थे। भाट और ब्रह्मभट्ट मन्दिरके पुरोहित और आचार्य होते थे!

एक कायस्थ सज्जनने यहाँ एक गंगा-मन्दिरका निर्माण कराया है।

बक्सरसे ८ मील पूर्व निसगर है। यह ग्राम रायबरेली जिलेमें पड़ता है। गंगाके उस पार बालापुर नामक ग्राम है, जिससे पूर्वकी ओर आदमपुर पड़ता है। यहाँ माघी, गंगा-दशहरा, भदही, कार्तिकी आदिको मेले लगते हैं। यहाँ घाट बना हुआ है। एक मन्दिर रामजीका है, जो राजगुरु रीवाँका बनवाया हुआ है। इस मन्दिरका नाम ब्रह्मशिला है। कहते हैं कि यहाँ ब्रह्माजीने यज्ञ किया था। आगे तारापुर भिटौरा मिलता है। यहाँकी वस्ती बहुत बड़ी है। पहले यह जिलेका खास स्थान था। यहाँ बड़े-बड़े विद्वान् हो गये हैं। ढाई मीलपर गेगासों है। यहाँ गंगाजीका घाट बहुत चौड़ा है। तीन प्राचीन मन्दिर भी हैं। यहाँसे डेढ़ मीलपर असनी है।

दीपावलीका उत्सव बड़े धूम-धामसे मनाया जाता है। यहाँके दूधके लड्डू प्रसिद्ध हैं। यह अश्विनीकुमारोंकी तपोभूमि है। धनुर्विद्याका प्रधान केन्द्र है। बड़े-बड़े प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति आज भी मौजूद हैं। हरिनाथ इत्यादि बड़े-बड़े कवि यहाँ हो गये हैं। बहुत-से प्राचीन मन्दिर हैं। भादोंकी पूर्णिमा, चैत्रशुक्ल नवमी, माघी अमावस्या और शिवरात्रिको मेला लगता है। गंगाजीके उस पार गेगासों है। प्राचीन नाम गर्गाश्रम था। यहाँपर श्रीसंकटाजीका प्राचीन मन्दिर है, जहाँ ज्येष्ठ शुक्ल अष्टमीको बड़ा मेला लगता है। कार्तिक पूर्णिमाको भी मेला लगता है। कई पक्के घाट हैं। मुण्डमालेश्वर महादेवका अति प्राचीन मन्दिर है। पास ही खजूरगाँव है। यह खजूरगाँव रियासतका केन्द्र है। यहाँ पाँच प्राचीन मन्दिर हैं। तीन शिवजीके और दो देवीजीके। कार्तिकी पूर्णिमाको मेला लगता है। यहाँसे एक मीलपर मौजमाबाद है, जहाँ चैत सुदी नवमीको मेला लगता है। घाट कोई नहीं है। मन्दिर तीन हैं। एक शिवजीका और दो देवीजीके। थोड़ी दूरपर गोपालपुर पड़ता है। रामनवमीको श्रीरामचन्द्रजीका मेला लगता है। मेलेके मिट्टीके बर्तन और चिउड़ा प्रसिद्ध है। पास ही सेनपुर है। यहाँ घाट कच्चा है, किंतु बहुत-से लोग स्नान करते हैं। थोड़ी दूरपर गंगाके उस पार डलमऊ है। इसकी गणना क्षेत्रोंमें थी, जैसा कि निम्नलिखित दोहेसे ज्ञात होता है—

दालिभ ऋषिकी दलमऊ गंगाकूल निवास।
तहाँ दास लालन बसैं कर अकासकी आस॥

ये महात्मा मुगलसम्राट् अकबरके समकालीन थे और उससे इनका साक्षात् भी हुआ था। इनके स्थापित किये हुए मन्दिरके ध्वंसावशेष अब भी हैं। लखनादेवीका मन्दिर है, जो कबरके समान मालूम होता है। महेश्वरी ठाकुरद्वारा बहुत सुन्दर है। अन्य मन्दिर हैं—तुलसीदास, शिवगोपाल, राम गिर, ललनदास, ठकुरायन साहेब, रानी चन्दापुर आदिके ठाकुरद्वारे हैं। आगे ही डालामऊ है, यहाँपर दस मन्दिर हैं। यहाँपर चार पक्के घाट हैं, जिनमेंसे तीन घाट उजड़े हुए हैं। थोड़ी दूर चलनेपर कुटील या कोटरा पड़ता है। भादों, कार्तिक या माघमें यहाँ मेले लगते हैं। एक छोटा शिवालय भी है। घाट कच्चा होनेपर भी सुन्दर प्रतीत होता है। यहाँपर दो ध्वंस किलोंके अवशेष पाये जाते हैं। एक राजा जयचन्दका बनवाया हुआ है। दूसरा किसी अफगानका बनवाया हुआ कहा जाता है। कुछ दूरपर कुन्दनपट्टी है। चिन्तामणि महाजनका एक अति प्राचीन शिवालय बना हुआ है। शिवरात्रिको बड़ा मेला लगता है। घाट कच्चा है। हर त्योहारको लगभग डेढ़ सौ आदमी नहाते हैं। बस्ती बहुत पुरानी है। कुछ दूरपर नौबस्ता पड़ता है। यहाँपर कई छोटे-छोटे मन्दिर हैं। माघ, ज्येष्ठ और भादोंमें मेला लगता है। यह ग्राम नया बसा हुआ है, पुराने स्थानपर लखौड़ी ईंटके ढेर पाये जाते हैं। आगे अजूरा है—यहाँ कोई मेला नहीं लगता है, किंतु यहाँके दृश्यकी विशेषता यह है कि यहाँ गंगाजीके किनारेपर कंकरके ऊँचे टीलेका कगार है और गंगाजी इस गाँवके निकट एक समकोण (Right angle) बनाती हुई मुड़ती हैं। यहाँके निवासी अधिकतर मछली मारकर गुजर करते हैं। कुछ दूरपर इकनभासे फतेहपुरका जिला समाप्त हो जाता है। गंगाजीके उस पार एक मीलतक जंगल पड़ता है। फिर मरसापुर है। मरसापुरसे कुछ ही पूर्वमें कालाकांकर स्थित है। यहाँ दो पक्के घाट और तीन-चार सुन्दर मन्दिर बने हुए हैं। यहाँ गंगाजीके सब मेले लगते हैं। राजा साहबकी कोठी बिलकुल जलके निकट होनेके कारण बड़ी भली मालूम होती है। गंगाजीके उस पार इलाहाबाद जिलेका कन्धुआ नामक स्थान है। जल बिलकुल किनारेतक है। यहाँ गंगास्नानके मेले लगते हैं। रास्तेमें लोदी ग्राम पड़ता है। यहाँसे गंगाजीके किनारे आध मीलसे एक मीलतक चौड़ा जंगल पड़ता है। उस पार मानिकपुर नामक कसबा है। इसमें शाहाबाद, मानिकपुर और राजघाट नामक तीन घाट शामिल हैं। गंगाजीके अन्य स्थानीय मेलोंके समान यहाँ भी मेले

लगते हैं। यहाँपर ज्वालामुखीदेवीका प्रसिद्ध मन्दिर है। आषाढ़ वदी सप्तमीको विशेष मेला लगता है। कुछ दूरपर गंगापार इलाहाबाद जिलेमें कड़ा नामक प्रसिद्ध स्थान है। यहाँपर शीतलाजीका बहुत प्रसिद्ध मन्दिर है। कार्तिक, चैत्रमें शीतला-सप्तमीपर, अष्टमी, नवमी, दशमी और भादों अमावस, सावनमें सप्तमीसे दशमीतक, आषाढ़में अष्टमीको मेला लगता है। यहाँपर पन्द्रह धर्मशालाएँ भी हैं। यहाँपर एक बहुत पुराना मन्दिर है। उसके अन्दर एक कुण्ड है, जिसमें एक पंजा जल सूखनेपर दिखायी पड़ता है। इस मन्दिरमें मूर्ति कोई नहीं है। घाट कच्चा है और पक्की सड़क घाटतक आयी है। इसीके पीछे दारानगरका उजड़ा हुआ ग्राम है। किंतु उसमें कोई विशेष बात नहीं है। यहाँसे पौन मीलपर अकबरपुर है। यहाँ गंगाकिनारे एक छोटा शिवालय है। घाटकिनारे एक ओर अकबरपुरका टूटा-फूटा किला है। इसके आसपासमें शोरा निकलता है। हव्वूनगर यहाँ एक मीलसे कुछ कम दूर है। गंगाजी पहले इस नगरके किनारे बहती थीं। तब उससे कुछ तिजारत होती थी। किंतु धार बदलने और रेलके निकलनेके बाद वह समाप्त हो गयी। यहाँसे एक कोसपर शहजादपुर है, जहाँ बहुत प्राचीन हनुमान्‌जीका मन्दिर है। नवरात्रमें देवियोंका मेला होता है। मन्दिरोंमें और भी मेले लगते हैं। यहाँके मनीराम बाबा बहुत प्रसिद्ध थे। अब अन्तर्धान हो गये हैं। थोड़ी दूरपर गंगाजीके उस पार शाहपुर प्रतापगढ़ जिलेमें है। यहाँ एक छोटा शिवालय है, जहाँ शिवरात्रिको मेला लगता है। फिर संगैतीघाट मिलता है। यहाँके घाटपर सूअर ज्यादा रहते हैं। गंगाजी इतने निकट बहती हैं कि बर्तनतक किनारेपर माँजे जाते हैं। गंगा पार करनेसे मुहम्मदपुर मिलता है। यहाँ शिवजीका एक छोटा-सा मन्दिर है, जहाँ मेला लगता है। एक मीलपर पलाना है। यहाँ दशहरामें करीब दो हजारका मेला लगता है। यहाँ बाबा रघुनन्दनदासका ठाकुरजी और हनुमान्‌जीका मन्दिर है और दूसरा मन्दिर रामदासका है। यहाँका घाट कच्चा है। आगे बदनपुर है। यहाँ पाँच मन्दिर हैं, जिनमें एक बहुत बड़ा और पुराना हुबलाल महाजनका बनवाया हुआ है। चैतमें रामनवमी और भादोंमें जन्माष्टमीपर हजार-दो हजार आदमी जुटते हैं। जहानाबाद यहाँसे एक मील है। वहाँ एक हनुमान्‌जीका छोटा-सा मन्दिर है। तेरस, अमावस और पूरनमासीको मेला लगता है। आगे रामचौरा है। मेला पूर्णिमा और अमावसको हर माह लगता है। दस-बारह हजारका मेला हो जाता है। खास मेला कार्तिकीको लगता है। करीव पचास हजार आदमी जुटते हैं। चरणपादुकाका प्रसिद्ध मन्दिर है। पाँच घाट हैं। सीताकुण्ड, रामचौरा, राजघाट, सन्ध्यामठ, ब्रह्माण्डीकुण्ड एक कोसकी दूरीमें हैं। निषाद लोग एक घाट पक्का बनवा रहे हैं। यहींसे एक कोसपर कुरई नामक स्थान है और वहाँपर सीताजीने बाल उठाकर रखा था। यहाँके पास शृंगवेरपुरमें महाराज दशरथकी कन्या शान्ताजीका मन्दिर है। उनके पति शृंगीजीका भी मन्दिर है। रामचौरासे मिला हुआ ही रामनगर है। यहाँ सीताकुण्डसे सीताजीने मिट्टी उठायी थी। आगे थोड़ी दूरपर उझनी ग्राम है। यहाँ कार्तिकी दशहरा और भदईंको मेला लगता है। यहाँ तीन मन्दिर हैं। महादेवजीके दो और हनुमान्‌जीका एक। नरायनदास बनियाका एक सौ वर्षका पुराना मन्दिर है और एक धोबीका बनवाया हुआ है। यहाँका घाट कच्चा है। यहाँसे कुछ दूरपर फतेहपुर नामक ग्राम है। यहाँ भूरेनाथके, राधाकृष्णके और हनुमान्‌जीके छः मन्दिर हैं। फतेहपुरसे आगे बेगमसराय नामक स्थान इलाहाबाद तहसीलमें है। इलाहाबादका चौकबाजार यहाँसे लगभग दो कोस होगा। यहाँ महावीरजीका छोटा-सा मन्दिर और एक कच्चा घाट है। किंतु मेला कोई नहीं लगता है। यहाँसे आगे मऊ सरइयाँ तो बिलकुल इलाहाबादमें ही है। यहाँ निरालेश्वरका मन्दिर है, उसमें श्रीरामचन्द्रजी, लक्ष्मणजी और सीताजीकी भी मूर्तियाँ हैं। यह एक ऊँचे टीलेपर बना हुआ है और बरसातमें चारों ओर पानीसे

घिर जाता है।

फाफामऊके पास रेलका पुल है। इसे हार्डिंज साहबने खोला था। इसलिये यह हार्डिंजब्रिजके नामसे प्रसिद्ध है। इस पुलसे थोड़ी दूरपर शिवकुटीका दर्शनीय स्थान है। यहाँ श्रावणमें प्रति सोमवारको मेला आता है। फाफामऊके पुलसे ही प्रयागका श्रीगणेश होता है।

प्रयाग भारतका बहुत पुराना और प्रसिद्ध तीर्थ ही नहीं, तीर्थराज है। मुसलमानी जमानेमें इसीका नाम इलाहाबाद पड़ गया। धार्मिक, ऐतिहासिक, पौराणिक, राजनैतिक सभी दृष्टियोंसे प्रयाग तीर्थ है। पुराणों और प्राचीन ऐतिहासिक ग्रन्थोंमें इसका वर्णन मिलता है। शंखासुरसे वेद पुनः प्राप्त कर लेनेपर ब्रह्माजीने दश अश्वमेध यज्ञ किये थे। जिस स्थानपर ये यज्ञ किये गये थे, वह दशाश्वमेधघाट कहलाता है। उसके पास ही दशाश्वमेधेश्वर महादेवका मन्दिर है। भगवान् रामचन्द्रजी अयोध्यासे वन जाते समय भरद्वाज आश्रममें ठहरे थे। महाभारत-युद्धके समाप्त होनेपर महाराज युधिष्ठिर युद्धसे उत्पन्न पापका प्रायश्चित्त करनेके लिये पाँचों भाइयोंसहित इसी नगरमें आये थे।

पुराणोंमें प्रयागका बहुत माहात्म्य है। गोस्वामी तुलसीदासजीने लिखा है—

को कहि सकइ प्रयाग प्रभाऊ। कलुष पुंज कुंजर मृगराऊ॥

प्रयागशताध्यायीमें लिखा है कि प्रयागमें पितरोंके लिये किया हुआ कर्म फलका देनेवाला है। गंगा और यमुनाके पवित्र तीरपर दिया हुआ दान अक्षय फलका देनेवाला होता है। जो पुरुष त्रिवेणीमें स्नान करता है, उसको दशाश्वमेध यज्ञोंका फल मिलता है। उसके कुलके सब लोग तर जाते हैं। प्रयागमें देवताओंके साथ विष्णु भी निवास करते हैं। प्रयाग तथा प्रतिष्ठानसे लेकर वासुकीके पूर्वतक प्रजापतिका क्षेत्र है। इसकी तीनों लोकोंमें महिमा है। वहाँ जो स्नान करते हैं, वे स्वर्गको जाते हैं और जो इस क्षेत्रमें मर जाते हैं, वे फिर नहीं जन्मते।

प्रयागके मुख्य देवस्थान छः हैं, जैसा कि निम्नलिखित श्लोकसे प्रकट होता है—

त्रिवेणीं माधवं सोमं भारद्वाजं च वासुकिम्।
वन्देऽक्षयवटं शेषं प्रयागं तीर्थनायकम्॥

त्रिवेणी—यहाँपर तीन नदियोंका संयोग होता है, किंतु संगमका स्थान निश्चित नहीं रहता। कभी किलेके पास, कभी ओल गाँवके पास तो कभी सोमेश्वर महादेवके मन्दिरके पासतक पहुँच जाता है। वर्षाऋतुको छोड़कर अन्य ऋतुओंमें संगमपर श्रीगंगाजी और यमुनाजीका जल अलग-अलग दिखलायी देता है। सरस्वती प्रयागमें आकर छिप गयी हैं। किलेके दक्षिण यमुनातटपर एक कुण्ड है। उस कुण्डको ही सरस्वती नदीका स्थान बतलाया जाता है और यात्रियोंसे यहींपर सरस्वतीकी पूजा करायी जाती है।

संगमपर प्रतिवर्ष माघमासमें एक बड़ा मेला होता है, जो महीने भर बराबर रहता है। इसमें बहुत दूर-दूरसे यात्री आते हैं। मकरकी संक्रान्तिसे यह मेला शुरू होता है और कुम्भकी संक्रान्तितक बराबर रहता है। इसमें अमावस्याका पर्व सबसे मुख्य है। अमावस्याके दिन लाखों मनुष्योंकी भीड़ गंगातटपर होती है। बारह वर्षपर जब वृषराशिके बृहस्पति होते हैं, तब यहाँ कुम्भका बड़ा मेला होता है। उस समय यहाँ सब सम्प्रदायोंके लोग सब प्रान्तोंसे आते हैं। साधु, संन्यासियोंके अखाड़े और जुलूस दर्शनीय होते हैं।

शताध्यायीके तिहत्तरवें अध्यायमें प्रयागके मुख्य देवता वेणीमाधव बतलाये गये हैं। प्रयागमें तेरह प्रकारके माधव क्षेत्र चारों ओर निवास करते हैं, परंतु आजकल केवल पाँच माधवके स्थानोंका ही दर्शन किया जा सकता है। वे नीचे लिखे अनुसार हैं—त्रिवेणी संगमके स्थानपर वेणीमाधव जलरूपमें, वटवृक्षके समीप वटमाधव या मूलमाधव, यमुना और गंगाके दक्षिणमें सोमनाथ महादेवके पास वेणीमाधव (आदिमाधव)-का प्राचीन मन्दिर, झूँसी और छतनागके बीचमें गंगाजीके उत्तर तटपर बिन्दुमाधव और दारागंजमें श्रीवेणीमाधवका प्रधान

मन्दिर है।

अक्षयवट—संगमसे थोड़ी दूरपर यह वट यमुनाजीके किनारे किलेके भीतर एक गुफामें है।* इस गुफाको पातालपुरीका मन्दिर कहते हैं। पहले इसमें बड़ा अँधेरा रहता था, पर अब रोशनदान खोलकर भीतर प्रकाश पहुँचानेका पूरा प्रबन्ध कर दिया गया है। गुफाके अन्दर जाकर एक वटवृक्षका ठूँठ दिखलाया जाता है। पत्ते वगैरह नहीं हैं। उसपर पुजारी बहुत-से वस्त्र लपेटे रहता है। मन्दिरके अन्दर अनेक देवताओंकी मूर्तियाँ हैं। प्रयागशताध्यायीमें लिखा है कि जो इस वटवृक्षके मूलमें प्राणत्याग करता है, उसे मुक्ति मिलती है।

वासुकी—यह प्रसिद्ध देवस्थान दारागंजसे सटे हुए बक्सी मुहल्लेमें मिलता है। यह मन्दिर एक ऊँचे टीलेपर बना हुआ है। इसे नागपुरके भोंसला राजाने बनवाया था। मन्दिरके भीतर काले पत्थरकी शेषभगवान्‌की सुन्दर मूर्ति बनी हुई है। यह स्थान एकान्तमें होनेके कारण बड़ा प्रिय मालूम होता है और गंगातट होनेके कारण इसकी शोभा दूनी हो जाती है। मन्दिरके नीचे एक पक्का सुन्दर घाट है। गंगाका प्रयागमें यही एक पक्का घाट है। किंतु प्रवाहके कारण यह दिन-पर-दिन नष्ट होता चला जा रहा है।

बलदेवजी (शेषभगवान्)—वासुकीसे आगे करीब दो मीलपर पश्चिम और उत्तरकी ओर गंगाजीके किनारे बलदाऊजीका मन्दिर है। वह देखनेयोग्य है। बलदेवजी शेषजीके अवतार हैं, इसलिये शेषजीका यह स्थान माना गया है।

भरद्वाज आश्रम—यह स्थान कर्नलगंज मुहल्लेमें है। एक मन्दिरके भीतर भरद्वाज मुनिका स्थापित किया हुआ शिवलिंग है। इसीके पास एक गुफा है, जिसे भरद्वाज मुनिकी गुफा कहते हैं। गंगाजी पहले इसके समीप ही बहती थीं, किंतु बाँध बँध जानेसे अब दूर पड़ गयी हैं।
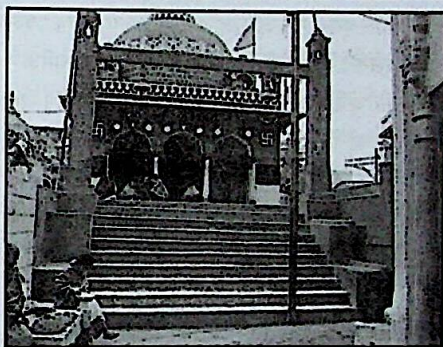
भरद्वाज आश्रम

(४)

प्रयागसे राजमहल

पारलौकिक दृष्टिसे श्रीगंगाजीका जो महत्त्व है एवं वेद-शास्त्रों में जो गंगा-माहात्म्य वर्णित है, वह तो पतितपावनी श्रीगंगाके अक्षय सार्वभौम होनेका परिचायक है ही, स्थूल दृष्टि रखनेवाले आधुनिक विज्ञानवादियोंने भी एक स्वरसे मनुष्यके व्यावहारिक जीवनमें गंगाजलकी अमित उपयोगिता सिद्ध कर दी है। अतः हम निःसन्देह यह कह सकते हैं कि गंगाजीके समान सद्यः गुणकारिणी नदी भारत क्या, संसारभरमें नहीं है।

वास्तवमें यदि देखा जाय तो गंगाजलकी जितनी उपयोगिता मनुष्यके बाह्य जीवनमें है, उससे कहीं अधिक उसके पारमार्थिक जीवनमें है। प्रायः देखा जाता है कि जो रोगी नित्यशः गंगाजलका सेवन करते हैं, जल-चिकित्सा करते हैं, एवं गंगातटपर निवासकर वहाँकी आरोग्यवर्द्धक जलवायुका सेवन करते हैं, वे तो आरोग्यको प्राप्त होते ही हैं—इसमें कोई सन्देह नहीं, परंतु जो भक्त अपनी अन्तःशुद्धि एवं आत्मकल्याणमें गंगाजलकी उपयोगिताका अनुभव करते हैं, वे धन्य हैं।

* पूर्वमें अंग्रेजोंके शासनकालमें सम्भवतः अनुमति न मिलनेके कारण प्रस्तुत लेखमें मूल अक्षयवटका उल्लेख नहीं हो सका है, आजकल मूल अक्षयवटके दर्शन किलेके भीतर विशेष अनुमति प्राप्त कर किये जाते हैं।—सम्पादक

कलियुगमें गंगाजी प्रत्यक्ष देवी हैं। गंगाजीकी एक बड़ी विशेषता यह है कि ये अपने जलमें स्नान करनेवाले मनुष्यको कुछ समयके लिये देवता बना देती हैं। जब कोई मनुष्य स्नान करनेके लिये अपने पैर गंगाजीमें रखता है तो गंगाजल उसके पैरके पाससे बहनेके कारण उसको विष्णु भगवान्का रूप बना देता है। जब मनुष्य गोता लगाता है, तब गंगाजल उसके बालोंसे गिरता है और वह मनुष्य कुछ समयके लिये शिवका रूप धारण कर लेता है। जब वह स्नान करनेके बाद अपने कमण्डलुमें गंगाजल भरकर घर ले जाता है तो वह ब्रह्माका रूप धारण कर लेता है। इस प्रकार गंगास्नान मनुष्यको क्रमशः विष्णु, शिव और ब्रह्माके रूपमें कुछ समयके लिये परिणत कर देता है।

प्रयागके त्रिवेणीघाटपर, जहाँ गंगा-यमुनाका संगम होता है (और जहाँ सरस्वती भी किसी समय मिलती थीं, जो आजकल लुप्त हैं), एक अत्यन्त मनोहर एवं दिव्य प्राकृतिक सौन्दर्यका आविर्भाव होता है। इस आनन्ददायक पवित्र स्थानका उपयोग वे ही भाग्यशाली मनुष्य करते हैं, जिन्हें त्रिवेणी-क्षेत्रमें रहनेका एवं कम-से-कम वहाँ कभी-कभी जानेका भी सौभाग्य प्राप्त हो जाता है। अस्तु,

गंगाजी त्रिवेणीतटपर एक अपूर्व वस्तु छोड़कर और यमुनाको अपनेमें अन्तर्लीन करके आगे दक्षिण-पूर्वको बढ़ती हैं।

उत्तरमें फूलपुर और हँड़िया तहसीलें तथा दक्षिणमें करछना और मेजाके बीचमें बहती हुई और किनारेके छोटे-बड़े ग्रामोंको पवित्र करती हुई गंगा त्रिवेणी (प्रयाग)-से १८ मीलपर सिरसा नामक स्थानपर पहुँचती हैं, जहाँ टोंस नदीका संगम होता है। यहाँसे हँड़ियाको कच्ची सड़क गयी है। यहाँसे प्रयागतक बोझसे भरी हुई नावें अधिक संख्यामें आती-जाती हैं।

सिरसासे ५ मील आगे गंगाके दाहिने किनारेपर परातीपुर नामक एक गाँव है, जहाँ गंगा-पार करनेके लिये नावें मिलती हैं।

सिरसासे लगभग ७ मीलपर गंगाके बायें तटपर लच्छागिरि नामक एक प्राचीन स्थान है। यहाँपर गंगाके किनारे रेतीले टीले अधिक हैं। यह वही लच्छागिरि है, जहाँपर महाभारतमें वर्णित कथानुसार दुर्योधनने युधिष्ठिरादि पाँच पाण्डवोंको जलानेके लिये एक लाहका घर बनवाया था। रातके समय जब संयोगवश पाँचों पाण्डव उस लाहके घरमें ठहरे, तब दुर्योधनने उसमें आग लगवा दी। वह घर लाहका तो था ही, एक क्षणमें भस्म हो गया। परंतु बनानेवालोंने ऐसी बुद्धिमानीसे उस घरमेंसे एक सुरंग बाहरको निकाल दी थी कि जिससे निकलकर पाँचों पाण्डव बच गये।

यहाँसे आगे बढ़नेपर गंगाजी चौखट्टा, महदेवा, नटवर, कोराई आदि प्रयाग जिलेके स्थानोंको पवित्र करती हुई, इस जिलेमें लगभग ७८ मील बहनेके बाद मिर्जापुर जिलेमें प्रवेश करती हैं। यह इस जिलेमें सर्वप्रथम इसके भदोही परगनेके करौंडिया ग्रामसे प्रवेश करती हैं। वहाँसे पुण्यक्षेत्र विन्ध्याचलमें जाती हैं। यह स्थान मिर्जापुर नगरसे ७ मील पश्चिममें है। यहाँ ई० आई० आर० का प्रसिद्ध स्टेशन है। यह गंगाके दाहिने तटपर स्थित है। यहाँ विन्ध्यवासिनी देवीका मन्दिर है,

विन्ध्यवासिनी माता

जिसके दर्शनके लिये प्रतिवर्ष असंख्य यात्री समस्त भारतसे—मुख्यतः मध्यभारत और दक्षिणसे-आते हैं।

देवीजीका चौकोर मन्दिर पत्थरका बना हुआ है। इसके चारों ओर बरामदा और पाँच सीढ़ीका जीना भी है। खम्भे साधारण कारीगरीके हैं। देवीजीकी मूर्ति एक कमरेमें है, जिसकी दीवालें मामूली पत्थरोंकी हैं।

पश्चिमकी ओर एक किलेके भग्नावशेष हैं, जहाँ पुरानी वस्तुएँ काफी परिमाणमें पायी गयी हैं। पुराण-प्रसिद्ध विन्ध्याचल पम्पापुर नामक प्राचीन नगरका एक भाग था, जिसका विस्तार मीलों था। कहते हैं, यहाँ १५० मन्दिर थे, जिन सबको औरंगजेबने गिरवा दिया था।

अष्टभुजा देवीका प्राचीन मन्दिर विन्ध्यवासिनी देवीके मन्दिरसे दो मील पश्चिम पर्वतशिखरके दुर्गम स्थानमें है। इसके चारों ओर लतायुक्त छोटे-छोटे पेड़ इसकी प्राकृतिक छटाको और भी बढ़ा देते हैं। मन्दिरके पास ही उत्तरकी ओर पर्वतकी ऊँची चोटीपरसे निर्मल जलका एक झरना गिरा करता है, यह स्थान भैरवकुण्ड कहलाता है। वहाँके रहनेवाले अथवा दर्शनके लिये गये हुए यात्रीलोग उसी झरनेका जल पीते हैं। उस स्थानका प्राकृतिक सौन्दर्य देखने ही योग्य है।

विन्ध्याचलसे ७ मील बहकर गंगाजी मिर्जापुर नगरमें पहुँचती हैं। यह नगर गंगाके दाहिने तटपर स्थित है। यहाँपर ई० आई० आर० का स्टेशन है। यह बहुत प्राचीन नगर है। यहाँके मिट्टी, ताँबे, पीतल आदिके बर्तन प्रसिद्ध हैं। संयुक्तप्रान्तमें यह आठवाँ नगर है। यहाँके लोगोंके व्यवसायके मुख्य साधन खाने-पीनेकी वस्तुएँ, कीमती पत्थर, गोंद, मसाले तथा कपड़े बुननेका रोजगार है। लाख बनानेका बड़ा कारखाना है। विन्ध्याचल पर्वत निकट होनेके कारण यहाँ पत्थर अधिक मिलते हैं, अतः पत्थरका काम भी यहाँका एक मुख्य व्यवसाय है।

यहाँपर यद्यपि बीस घाट हैं, किंतु तीन-चारको छोड़कर सब छोटे और साधारण हैं। सबसे दर्शनीय कोट नामक स्थान है, जिसके बड़े-बड़े खाली गोदामोंको देखकर वे दिवस याद आते हैं, जब वे मध्यभारतकी रूईसे ऊपरतक ठसाठस भरे रहते थे। नगरमें एक उत्तम और विस्तृत सराय भी है।

यहाँसे गंगाजी ९ मील उत्तर-पश्चिम नरैनी स्थानको पहुँचती हैं। यह स्थान गंगाके बायें तटपर है। यहींपर बनारस-मिर्जापुर जानेवाली सड़क गंगाको पार करती है। यहाँके दर्शनीय स्थानोंमें एक पत्थरका बना हुआ विशाल मन्दिर और एक सती-स्मारक भी है।

मिर्जापुरसे २१ मीलके बाद चुनार मिलता है। यह गंगाके दाहिने तटपर स्थित है। यहाँका दुर्ग प्रसिद्ध है। यहाँसे बनारस, अहिरौरा, राजगढ़ और मिर्जापुरको कच्ची सड़कें जाती हैं। नदीके तटपर स्थित दुर्ग बड़ा ही शोभायमान प्रतीत होता है। दुर्गकी सबसे बड़ी विशेषता भारतीनाथ (भर्तृहरि) (जो उज्जयिनीके राजा विक्रमके भाई थे)-का स्थान है। इस स्थानमें अब केवल एक पत्थर ही देखनेमें आता है। किलेमें ३२ फुट गहरी एक बावली है, जिसका व्यास २८ फुट है। इसमें कुएँके नीचेतक सीढ़ियाँ हैं।

चुनार चरणाद्रिका अपभ्रंश है। कहते हैं, द्वापरयुगमें हिमालयसे कुमारी अन्तरीपतक जाते समय किसी दैत्यने अपना पैर यहाँपर रख दिया था, जिसका चिह्न बन गया। एक दूसरी प्रसिद्धिके अनुसार इस कथानकको वामनावतारसे जोड़ा जाता है। स्टेशनसे दक्षिण-पश्चिममें एक सोता है, जिसे दुर्गाखोह कहते हैं। नालेके उत्तरमें कामाक्षा देवीजीका मन्दिर है। दुर्गापूजाके अवसरपर नवमीको यहाँ वार्षिक मेला लगता है। यहाँपर गंगेश्वर महादेवकी प्राचीन मूर्ति दर्शनीय है।

मिर्जापुरसे ३१ मील गंगाजीके किनारे-किनारे जानेके बाद छोटा मिर्जापुर मिलता है। यह स्थान चुनारसे १० मील उत्तर-पश्चिम और मिर्जापुरसे ३१ मील पूर्वमें स्थित है। यह स्थान परगना भुइली, जिला मिर्जापुरमें है।

यहाँसे आगे जानेपर गंगाके दक्षिण तटपर बनारस जिलेका राल्हूपुर ग्राम मिलता है। यह बनारस और रामनगरसे चुनार जानेवाली पक्की सड़कपर डफरिन ब्रिज (राजघाटके पुल)-से ६ मील दक्षिणमें स्थित है।

यहाँसे ३ मीलके बाद रामनगर है। यह गंगाके दाहिने तटपर स्थित है एवं काशीराज्यकी राजधानी है। यहाँके महाराजा काशीनरेशका किला दर्शनीय है। बनारसके दक्षिण-भागसे यह दिखलायी देता है। यहाँ या तो नगवा (जो कि बनारसके प्रसिद्ध घाट असीके पास एक मुहल्ला है)-से नावद्वारा आते हैं या जलीलपुर (जो रामनगर-राज्यसे लगभग ४ मील उत्तरमें दिल्लीसे कलकत्ते जानेवाली ग्राण्ड ट्रंक रोडके किनारे स्थित है)-से एक पक्की सड़कद्वारा सम्बन्धित होनेके कारण उस ओरसे भी बनारस-राज्यमें आते-जाते हैं। यहाँ व्यासजीका प्रसिद्ध मन्दिर है। यहाँ एक शिवमन्दिर भी है, जिसमें भारतीय चित्रकलाका अच्छा दिग्दर्शन कराया गया है।

यहाँसे गंगा उत्तरको मुड़ती हैं और ३ मीलके बाद बनारस पहुँचती हैं। यह नगर गंगाके बायें तटपर है। भारतके इने-गिने तीर्थस्थानोंमें काशी एक प्रसिद्ध तीर्थस्थान
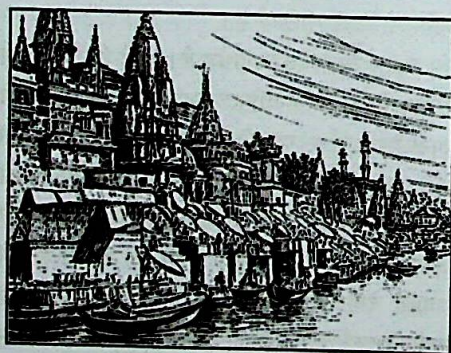
काशी

है। यह विद्याका केन्द्र है। विश्वनाथजीका मन्दिर दर्शनीय है। मन्दिरका कलश स्वर्णनिर्मित है। श्रीअन्नपूर्णा देवीका मन्दिर, श्रीसत्यनारायणजीका मन्दिर, श्रीकालभैरवजीका मन्दिर, दुर्गाकुण्डका दुर्गामन्दिर इत्यादि काशीके दर्शनीय स्थान हैं। कुछ विद्वानोंका मत है कि भारतीय सभ्यताका विकास गंगातटपर ही हुआ। इस कथनकी सार्थकता काशी-जैसी पुण्यभूमिमें दिखलायी देती है। यहाँका पूज्य श्रीमालवीयजी महाराजद्वारा संस्थापित हिन्दूविश्वविद्यालय भी भारतीय सभ्यताका गौरव-स्तम्भ है। विश्वविद्यालयकी इमारतोंका ऊपरी भाग मन्दिरके सदृश बनाकर भारतीय वास्तुकलाका अच्छा परिचय कराया गया है। चन्द्र-सूर्य-ग्रहणके अवसरपर यहाँ बड़े-बड़े मेले लगते हैं। काशीनगरके गंगातटके घाट अति प्रसिद्ध तथा सुन्दर बने हुए हैं—जैसे दशाश्वमेधघाट, मणिकर्णिकाघाट, प्रह्लादघाट, ललिताघाट, अस्सीघाट आदि। कुछ घाट जीर्ण-शीर्ण अवस्थामें पड़े हुए काशीकी प्राचीनताका परिचय दे रहे हैं। उनमें प्रसिद्ध ये हैं—तुलसीघाट, हरिश्चन्द्रघाट आदि।

बनारससे लगभग १५ मील उत्तर-पूर्वमें गंगाजीके बायें तटपर बलुआ ग्राम है। यह बनारससे धानापुर जानेवाली कच्ची सड़कपर है। यहाँसे गंगा नावद्वारा पार की जाती हैं। यहाँ एक महादेवजीका मन्दिर है और यह स्थान बहुत पवित्र माना जाता है। यह कंकड़की एक ऊँची भीतपर स्थित है। माघ मासमें यहाँ गंगास्नानका बड़ा मेला लगता है।

बलुआसे गंगाजी पुन: उत्तरको मुड़ती हैं। लगभग ५ मील जानेपर टाँड़ाकलाँ नामक एक प्रसिद्ध ग्राम गंगाके दक्षिण तटपर मिलता है। यहाँसे गाजीपुरतक नावें चलती हैं। आमके बाग यहाँपर अधिक हैं।

यहाँसे २ मील पूर्व-उत्तरमें गोमती-संगम है। संगमके दृष्टिकोणसे यह स्थान बहुत पवित्र माना जाता है।

संगमके पास ही कैथी नामक एक कृषिप्रधान ग्राम गंगाके बायें तटपर बसा है। उत्तरमें ग्रामका विस्तार मुख्य स्थानसे गोमती-संगमतक है। यहाँ एक नीची उपजाऊ घाटी है, जिसमें बाढ़के समय दोनों नदियोंका जल भर जाता है। इससे यह दो भागोंमें विभाजित है। एकका नाम है कैथी-गंगा बरार, दूसरेका कैथी-गोमती बरार। वहाँ कई मन्दिर हैं, जिनमें मार्कण्डेयेश्वर महादेवका मन्दिर दर्शनीय है। शिवरात्रिपर यहाँ बड़ा मेला लगता है। गंगापार करनेके लिये नाव भी रहती है।

यहाँसे गंगा कुछ दूरके बाद गाजीपुर जिलेमें

सर्वप्रथम सैदपुरसे प्रवेश करती हैं। यह गंगाके उत्तर तटपर स्थित है। गंगाका घाट यहाँपर कंकड़का है। यह एक प्राचीन स्थान है। इस नगरके आसपास बौद्ध और हिन्दूकालकी अनेक वस्तुएँ पायी गयी हैं।

सैदपुरसे सीधे पूर्व, गंगाजीके लगभग २२ मील बहनेके बाद जमनियाँ नामक गाजीपुर जिलेका एक प्रसिद्ध स्थान पड़ता है। यह गंगाके उच्च दक्षिण तटपर स्थित है। किंवदन्ती यह है कि यहाँ जमदग्नि ऋषि रहते थे, जिनके नामपर इसका नाम जमदग्नि पड़ा था। आगे चलकर उसीका 'जमनियाँ' हो गया। प्राचीनकालमें किसी समय मदन नामके एक राजाने यहाँपर एक बड़ा यज्ञ किया था। यज्ञके बाद नगरसे दो मील दक्षिण-पूर्वमें मदनेश्वर महादेवका एक मन्दिर बनवाया और एक स्तम्भ भी स्थापित किया, जो सठिया या शाहपुर ग्राममें अब भी है।

जमनियाँसे ६ मील पूर्व मानिकपुर ग्राममें गंगा-संगम होता है। संगमसे चार मीलके बाद तारीघाट है। यह ग्राम गाजीपुरके सामने गंगाके दक्षिण तटपर स्थित है। ई० आई० आर० की दिलदारनगरसे आनेवाली शाखा यहीं समाप्त होती है।

इसके दूसरे किनारेपर गाजीपुर नगर स्थित है। यहाँ बी० एन० डब्ल्यू० रेलवेकी औंड़िहारसे बलिया जानेवाली शाखापर एक स्टेशन है। स्टेशनके पास ही बनारस, बलिया, आजमगढ़ और गोरखपुरसे आयी हुई तीन पक्की सड़कें मिलती हैं। इसका प्राचीन नाम राजा गाधि, गज, अथवा गथके नामपर गाधिपुर था। हिन्दूलोग इसका उच्चारण अब भी गाजिपुर करते हैं। यहाँका नदीतट देखनेमें बड़ा सुन्दर प्रतीत होता है। यहाँ भी पक्के घाट बने हुए हैं, जिसमें मुख्य ये हैं—आमघाट, गोलाघाट, चित्तनाथघाट, नकटाघाट, महसूलघाट आदि।

गाजीपुर जिलेमें तीरपुर नामक एक बड़ा ग्राम गंगाके उच्च तटपर स्थित है। इसके सामने गंगापार बारा है। कहते हैं तीरपुरमें सुप्रसिद्ध चेरु राजा टीकमदेवकी राजधानी थी, जिसको भुइँहारोंने गद्दीसे उतारा था। किंवदन्तीके अतिरिक्त टीकमदेवके बारेमें कुछ भी ज्ञात नहीं है, किंतु पुराने कोटपर समय-समयके सिक्के तथा अन्य वस्तुएँ पायी गयी हैं।

गाजीपुरसे १६ मील पूर्व गंगाके दक्षिण उच्च तटपर बारा नामक ग्राम स्थित है। यहाँ एक बड़ा टीला है। मुख्य सड़कपर स्थित होनेके कारण बाराका व्यापार परगनेके अन्य बड़े ग्रामोंसे अधिक समुन्नत है। इस स्थानसे गाजीपुर जिलेका अन्त समझिये। यहाँसे ४ मील पूर्वकी ओर जानेपर गंगाजीके दाहिने तटपर शाहाबाद जिलेका चौसा नामक ग्राम पड़ता है। यहींसे गंगाजी विहार प्रान्तमें प्रवेश करती हैं। यह एक ऐतिहासिक स्थान है। यहींपर अफगान सरदार शेरखाँने मुगल-सम्राट् हुमायूँको हराया था। यहींपर कर्मनाशा नदी गंगामें मिलती है।

चौसासे गंगा उत्तर-पूर्वको मुड़ जाती हैं और लगभग ८ मीलके बाद बक्सर नामक प्रसिद्ध स्थानपर पहुँचती हैं। यह गंगाके दाहिने तटपर स्थित है। यहाँ ई० आई० आर० का स्टेशन तथा व्यापारकी मण्डी है। कहते हैं बक्सरमें प्राचीनकालमें वेदवेत्ताओंका निवास था। इन्हींके नामपर इसका प्राचीन नाम वेदगर्भ था। एक अन्य किंवदन्तीके अनुसार इसका नाम गौरीशंकरके मन्दिरके निकटवर्ती अघसर नामक सरोवरपर पड़ा है। समय बीतनेपर इसका नाम 'वघसर' हो गया और इसीके अनुसार इस स्थानका नाम क्रमशः बघसर और फिर बक्सर हो गया। यहाँ रामेश्वरनाथ महादेवका मन्दिर दर्शनीय है।

बक्सरसे १३ मील उत्तर-पूर्वमें बाँसथाना नामक एक ग्राम है। कुछ वर्ष पहले सरयू नदी यहींपर गंगामें मिलती थी। लेकिन अब तो बलियामें ही मिलती हैं।

बाँसथानासे ३ मील पूर्व बलिया नगर गंगाके बायें तटपर स्थित है। यहाँपर भृगुजीका आश्रम तथा मन्दिर दर्शनीय है। यह मन्दिर शहरसे एक फर्लांग पूर्वकी ओर

है। वर्तमान भृगुजीका मन्दिर तीसरा है, दो बारके मन्दिर गंगाजी बहा ले गयीं। भृगु-आश्रमके पास ही धर्मारण्य था, जिसका वर्णन चीनी यात्री ह्वेनसांगने किया था। १९१६ ई० तक इसी धर्मारण्यके पास एक तालाब था, जिसमें स्नान करनेसे चर्मरोग दूर हो जाता था। अब वह तालाब गंगाके गर्भमें लीन हो गया है। यहाँ बालेश्वरजीका मन्दिर भी बहुत प्राचीन है। कुछ लोगोंका कहना है कि बलि-ईश्वरकी मूर्ति है। कुछ भी हो, यह मूर्ति बहुत प्राचीन है। इसका प्रमाण यह है कि यह मूर्ति शिवलिंगके आकारकी (गोल) नहीं है, वरं चपटी है और घिसकर चपटी हुई प्रतीत होती है। 'बलिया' नामकी उत्पत्ति आदिकवि वाल्मीकिसे मानी जाती है। इनकी स्मृतिमें एक मन्दिर था, जिसे गंगाजी बहा ले गयी हैं। यहाँपर बी० एन० डब्ल्यू० रेलवेका जंक्शन भी है।

बलियासे दक्षिण-पूर्व साढ़े चार मीलकी दूरीपर शिवपुर दियर है। यह बलिया परगनेका एक तालुका है। यहाँपर सत्ताईस टोले छितराये हुए हैं और प्रति टोलेका नाम उनके राजपूत जन्मदाताके नामपर पड़ा है।

यहाँसे सीधे पूर्व दिशामें बहती हुई बलियाके छोटे-छोटे गाँवोंको पवित्र करती हुई १९ मीलकी दूरीपर गंगाजी सिनहा नामक ग्रामसे फिर सारन (बिहारप्रान्त)-में प्रवेश करती हैं।

सिनहासे १२ मील पूर्व लोहाघाटके पास घाघरा, जिसे बड़ी सरयू कहते हैं, गंगामें मिलती है। इससे तीन मील आगे सोन नदीका संगम मिलता है। सोन गंगाके दायें किनारेपर मिलती है।

यहाँसे नौ मील पूर्व सईदपुर गंगाके बायें तटपर स्थित है। यह पक्की सड़कद्वारा छपरासे सम्बन्धित है।

सईदपुरसे तीन मील आगे गंगाके दाहिने तटपर दानापुर है। यह पटना जिलेका मुख्य फौजी स्थान है।

सईदपुरसे छः मील पूर्व पहलेजाघाट है। यहाँसे पटनाके डीघाघाटतक स्टीमर चलते हैं। यहाँपर बी० एन० डब्ल्यू० रेलवेसे उतरे हुए यात्रियोंको स्टीमरद्वारा पटना अथवा पटनासे ई० आई० आर० द्वारा कलकत्ता जाना पड़ता है।

पहलेजासे तीन मील पूर्व सोनपुर (हरिहरक्षेत्र) है। यहाँपर कार्तिकी पूर्णिमाको भारतविख्यात मेला लगता है, जिसमें भारतके कोने-कोनेसे एवं विदेशोंसे भी काफी संख्यामें लोग आते हैं। यह स्थान गण्डकके दाहिने तथा गंगाके बायें तटपर स्थित है।

यहाँपर हरिहर महादेवका एक प्राचीन मन्दिर भी है, जिसके सम्बन्धमें यह कथा प्रचलित है कि इसे भगवान् रामचन्द्रजीने जनकपुर जाते समय बनवाया था। मन्दिर बहुत पुराना है तथा उसमें जो मूर्ति है वह हरि (विष्णु) और हर (शिव) दोनों देवोंके स्वरूपको एक साथ ही प्रकट करती हुई प्राचीन भारतीय मूर्तिकलाका विशेष परिचय कराती है। सोनपुरके पास ही गण्डक नदी, जो कि हिमालयसे निकलती है, गंगामें मिलती है।

सोनपुरके सामने ही गंगाके दक्षिण तटपर बाँकीपुर स्थित है। यहाँपर गंगाजी सारन और पटना जिलोंकी सीमापर बहती हैं। बाँकीपुर पटना जिलेका केन्द्र है। यहाँ बहुत-से सरकारी दफ्तर हैं। यहाँकी सबसे प्रधान और पुरानी इमारत गोलघर है। उसकी दीवालें १२ फुट मोटी और ९६ फुट ऊँची हैं। वह शहदकी मक्खीके छत्तेके आकारका है।

बाँकीपुरसे तीन मील दक्षिण-पूर्व गंगाके दक्षिण तटपर पटना नगर स्थित है। यह बिहारप्रान्तकी राजधानी है। इसका व्यापार अब भी अच्छी दशामें है। रेल और नदी दोनोंहीपर एक मुख्य स्थानमें स्थित होनेके कारण यह बिहारप्रान्तके व्यापारका एक मुख्य स्थान बन गया है। इसका प्राचीन नाम पाटलिपुत्र था। कुछ समयके बाद इसीका 'पटना' हो गया। वर्तमान पटनामें दो मन्दिर दर्शनीय हैं—एक बड़ा पाटन देवीका महाराजगंजमें और एक छोटा पाटन देवीका हरिकी गलीमें है। पाटलिपुत्रका निर्माण ५वीं सदीके पहले हुआ था। सम्राट् चन्द्रगुप्तके

समयमें यह भारतकी राजधानी हो गया था। मेगस्थनीजके लेखसे पता चलता है कि उन दिनों यह अधिकतर काष्ठका ही बना हुआ था। किंतु अशोकने इसके वातावरणमें एक महान् परिवर्तन कर दिया, पक्के मकान बनने लगे और बिहारों तथा स्मारकोंसे इस स्थानको भर दिया। यहाँ कुछ दिन पूर्व अशोकका पुराना प्रसिद्ध महल, पुरानी ईटोंकी दीवारें, लकड़ीके पुल और एक मुख्य नगर तथा अशोकके स्तम्भके भग्नावशेष पाये गये हैं।

कहते हैं गुरु गोविन्दसिंहका जन्म १६६० ई० में चौकके निकट एक गृहमें पटनामें ही हुआ था। पंजावकेसरी महाराजा रणजीतसिंहने वहाँ एक मन्दिर बनवाया अर्थात् उसका जीर्णोद्धार कराया। जिस गलीमें यह मन्दिर है, उसे हरमन्दिरकी गली कहते हैं। इस मन्दिरपर सिक्खोंकी असीम श्रद्धा है।

पटनाका ओरियण्टल पुस्तकालय जगत्प्रसिद्ध है। इसे खाँ बहादुर खुदाबख्शने स्थापित किया था। इसीलिये इसे खुदाबख्श-लाइब्रेरी भी कहते हैं।

पटनेके सामने उत्तरमें गंगाके उस पार, जहाँपर वड़ी गण्डक मिलती है, हाजीपुर है। यहाँपर भी बी० एन० डब्ल्यू० रेलवेका स्टेशन है और यहाँका हाजीपुरिया केला प्रसिद्ध है।

पटनेसे ७ मील पूर्व गंगाके दाहिने तटपर फतुआ ग्राम स्थित है। यहींपर पुनपुन नदीका संगम है। यह ई० आई० आर० का स्टेशन तथा कपड़ा बुनाईका केन्द्र है। गंगास्नानके बड़े-बड़े मेले पुनपुन-संगमपर लगते हैं। वारुणी-द्वादशीको यहाँ स्नान करनेका विशेष माहात्म्य है; क्योंकि इस दिन यहाँ वामन-अवतार हुआ था।

फतुआसे गंगाजी सीधे पूर्वको बहती हुई २५ मीलपर बाढ़ तहसीलमें जो कि पटना जिलेमें है, पहुँचती हैं। यह ग्राम श्रीगंगाजीके दाहिने तटपर स्थित है। ई० आई० आर० का स्टेशन है। पटनेसे कलकत्ते आने-जानेवाले स्टीमर यहाँ ठहरते हैं।

बाढ़से लगभग १४ मील पूर्व-दक्षिण गंगाके दाहिने तटपर मोकामा एक ग्राम है। यहाँ भी ई० आई० आर० का स्टेशन है तथा ग्राण्ड ट्रंक रोड यहाँसे होकर निकलती है।

मोकामासे २२ मील दक्षिण-पूर्वको बहती हुई गंगाजी सूरजगढ़ पहुँचती हैं। यह गंगाके दक्षिण तटपर स्थित है। इसके सामने उत्तर तटपर अकबरपुर है। कहते हैं सूरजगढ़में राजा सूरजमलका किला था, जिसका अब केवल कुछ अंश बच रहा है।

सूरजगढ़से गंगाजी उत्तर-पूर्वको मुड़ती हैं और १७ मीलके बाद मुंगेर नगरमें पहुँचती हैं। यह गंगाके दक्षिण तटपर स्थित है। कहते हैं उसे सम्राट् चन्द्रगुप्तने बसाया था, जिसके नामपर इसका प्राचीन नाम गुप्तगढ़ था। एक पौराणिक कथाके आधारपर यह कहा जाता है कि मुंगेरमें गंगाजीके तटपर मुद्गल ऋषि रहा करते थे। मुंगेरमें कष्टहारिणीघाटपर छः मन्दिर बने हुए हैं, जहाँ श्रावणी पूर्णिमाको एक बड़ा मेला लगता है। मन्दिरके बाहर एक नाक कटी हुई पुरानी मूर्ति रखी हुई है। यह बौद्धकालकी मालूम पड़ती है, किंतु इसकी चार भुजाएँ हैं।

यहाँपर एक मजबूत किला बनवाया गया था, जो अबतक मौजूद है। समीपकी पहाड़ियोंपर लोहेकी अधिक खानें होनेके कारण बिजलियाँ प्रायः यहीं गिरती हैं। यहाँकी जलवायु किसी समय बड़ी स्वास्थ्यवर्द्धक थी। वारेन हेस्टिंग्जने एक पत्रमें बंगालसे तुलना करते हुए यहाँकी जलवायुकी प्रशंसा की है। पिछले भूकम्पमें मुंगेर तहस-नहस हो गया और अबतक वह दुरवस्थामें ही है।

मुंगेरसे गंगाका प्रवाह उत्तरकी ओर घूम जाता है और लगभग छः मीलपर गंगाके बायें तटपर स्थित रहीमपुरतक ऐसा ही रहता है। फिर वहाँसे गंगाजी दक्षिण-पूर्वको घूमती हैं और मुंगेरसे १९ मील पूर्व भागलपुर जिलेके सुल्तानगंजमें जाती हैं। यह ग्राम

गंगाके दाहिने तटपर स्थित है। यहाँपर गंगाजी दो धाराओंमें बँट जाती हैं, अतः बीचमें ऊँचे टीलेके समान एक सुन्दर स्थान बन जाता है। इसी प्राकृतिक छटासे युक्त स्थानपर एक सुन्दर मन्दिर बना है, जिसमें चित्रकारीकी कला अच्छी तरह दिखलायी गयी है। वह मन्दिर अजगवीनाथ महादेवके मन्दिरके नामसे प्रसिद्ध
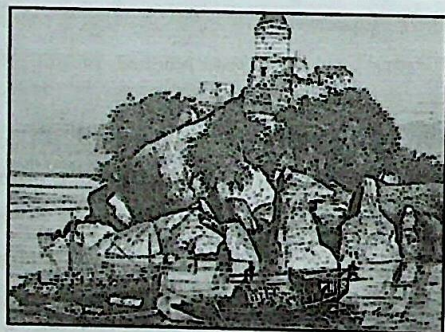
अजगवीनाथ

है। कुछ लोग इसे जह्नुऋषिका स्थान मानते हैं।

यहाँपर एक किलेका भग्नावशेष उसकी प्राचीनताका परिचय करानेके लिये अभीतक खड़ा है, जिसे कृष्णगढ़ कहते हैं।

यहाँसे १४ मील पूर्व दिशाकी ओर बहती हुई गंगाजी भागलपुर नगरको स्पर्श करती हैं। यह नगर गंगाके दक्षिण तटपर स्थित है। यहाँपर जैनियोंके दो मन्दिर हैं, जिनमेंसे एक पिछली शताब्दीके प्रसिद्ध बैंकर जगतसेठका बनवाया हुआ है। यहाँके मुख्य धन्धे कालीन बुनना, कम्बल बुनना, बेंतका काम, फर्नीचर बनाना, नक्कासी, तेल पेरना आदि हैं। भागलपुरी सिल्क और टसर भी बहुत मशहूर है।

भागलपुरसे लगभग १२ मील पूर्व गंगाके दाहिने तटपर कोलगंग नामक एक ग्राम मिलता है। यहाँपर ई० आई० आर० का व्यापारिक महत्त्वका स्टेशन है। पहाड़पर स्थित एक विचित्र शैलीका मन्दिर है, जिसमें अच्छी चित्रकारी की गयी है।

कोलगंगके पास ही कोसी नदी गंगामें मिलती है। यह नेपालके पूर्वमें सात धाराओंसे बनी है, इसलिये उस प्रदेशको सप्तकौशिकी कहते हैं।

कोलगंगसे १२ मील उत्तर-पूर्वमें करागोला या कहड़गोला नामक स्थान गंगाके बायें तटपर स्थित है। यहींपर लिखारी (वारंदी) नदी गंगामें मिलती है। पहले यह करागोला व्यापारका अच्छा केन्द्र था, लेकिन रेलके बन जानेसे व्यापार छिन गया है। किंतु फिर भी गंगापर चलनेवाले स्टीमरोंका यह स्टेशन है। यह स्थान प्रधानतया मेलोंके लिये प्रसिद्ध है। पहले यहाँ प्रान्तभरमें सबसे वड़ा मेला लगता था।

कोलगंगसे २० मील पूर्व गंगाजीके बायें तटपर मनिहारी नामक ग्राम है। यहींपर ई० बी० एस० रेलवेका बिहारप्रान्तीय भाग समाप्त होता है। ई० आई० आर० के स्टेशन सकरीगलीसे उतरे हुए यात्रियोंको यहींपर स्टीमरद्वारा गंगाको पार करना पड़ता है।

मनिहारीघाटसे गंगाजी दक्षिण-पूर्वको मुड़कर १३ मीलपर मानिकनगर जाती हैं। वहाँसे सीधे दक्षिणको बहती हैं और १२ मील बहकर प्रसिद्ध स्थान राजमहलमें पहुँचती हैं। यह राजमहल गंगाके दाहिने तटपर स्थित है। किसी समय यह बंगालकी राजधानी था, किंतु अब तो मिट्टीके झोपड़ोंका समूहमात्र रह गया है, जिसके बीचमें कुछ अच्छे घर हैं तथा कुछ सुन्दर भवनोंके भग्नावशेष हैं। सब-रजिस्ट्रारके आफिससे पूर्वकी ओर एक शिवजीका मन्दिर भग्नावस्थामें है। यहाँपर दानसिंहका बनवाया हुआ एक शिवमन्दिर भी बतलाया जाता है। राजमहलसे श्रीगंगाजी बंगालप्रान्तमें प्रवेश करती हैं।

(५)

बंगालमें गंगा

भारतवासियोंके लिये गंगाजी ईश्वरकी एक सबसे बड़ी देन हैं। गीतामें भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रजीने श्रीगंगाजीको **'स्रोतसामस्मि जाह्नवी'** कहकर अपना अभिन्न स्वरूप बतलाया है। इससे तो गंगाजीकी अपूर्व महिमामें किंचिन्मात्र भी सन्देह नहीं रह जाता। श्रीरामचरितमानसमें

गोस्वामी तुलसीदासजीने गंगाजीको **'नख निर्गता मुनि बंदिता त्रैलोक पावनि सुरसरी'** कहकर मानो गंगाजीकी व्यावहारिक महत्ता सिद्ध कर दी है। अस्तु, श्रीगंगाजीकी अखण्ड महत्ताके विषयमें इतने आप्त प्रमाण होते हुए भी उनके सम्बन्धमें कुछ विशेष चर्चा करना मानो सूर्यको दीपक दिखलाना है।

राजमहलकी पहाड़ियोंसे निकलकर गंगा बंगालमें प्रवेश करती हैं। बंगालमें प्रवेश करते ही गंगाकी रूपरेखामें परिवर्तन आ जाते हैं। उसकी विशेषताएँ बदल जाती हैं। वास्तवमें बात यह है कि चार-पाँच हजार वर्ष पूर्व गंगा-सागर-संगम राजमहलकी पहाड़ियोंके निकट ही होता था, उस समय पश्चिमी बंगालका कुछ भी अस्तित्व नहीं था, पूर्वी बंगालका प्रदेश अवश्य था। जहाँ आजकल कलकत्ता नगर है, वहाँ कुछ पहाड़ियाँ थीं।

धीरे-धीरे गंगाकी लायी हुई मिट्टीके जमा होनेसे डेल्टा बनना आरम्भ हुआ। यहींसे इस प्रदेशके जन्मका इतिहास शुरू होता है। फिर भी ईसवी सन्‌की ७वीं सदीतक खुलना, जैसोर, सुन्दरवन और कलकत्ता पूर्णरूपसे अस्तित्वमें आये थे।

कई प्रमाणोंसे सिद्ध होता है कि कलकत्तेके आसपासकी भूमि ७वीं सदीके बादसे नदियोंके द्वारा लायी हुई मिट्टीसे बननी आरम्भ हुई। हिन्दुओंके प्राचीन ग्रन्थ वराहमिहिर-रचित बृहत्संहितामें इस प्रदेशका नाम समतट (ज्वार-भाटेसे बना हुआ प्रदेश) लिखा है। अस्तु

वर्तमान ऐतिहासिक कालमें इस प्रदेशकी प्रदक्षिणाका वृत्तान्त रेनल साहबने सन् १७९० ई० के लगभग प्रकाशित किया था। यहाँका क्रमबद्ध विवरण हमें सर्वप्रथम उसीसे मिलता है। रेनल साहबके समयमें गंगाजी राजमहलके बाद उस मार्गसे होकर समुद्रमें गिरती थीं, जहाँ आजकल छोटी भागीरथी नदी रह गयी है। गंगाजीके तटपर निम्नलिखित नगरोंका वर्णन रेनल साहबने किया है—

गौड़ या लखनौती—यह बंगालकी प्राचीन राजधानी है। यह राजमहलसे २५ मील नीचे है। मुगल सम्राट् अकबरने इसका जीर्णोद्धार तथा पुनर्निर्माण किया था।

टाँडा—सन् १५४० ई० के लगभग शेरशाहके शासनकालमें यह बंगालकी राजधानी थी।

सतगाँव—अब यह सरस्वतीके तटपर एक छोटा-सा ग्राम है। १५६६ ई० के लगभग यह एक व्यापारिक नगर था।

बेंगाला—इस नामका एक नगर गंगाके पूर्वी मुहानेपर होना लिखा है। अब वह बाढ़में लीन हो गया मालूम होता है।

आजकल गंगाके इस मार्गको छोड़ देनेके कारण उपर्युक्त सब स्थान अब गंगातटसे दूर पड़ते हैं। आज गंगा ताँतीपुरके कुछ आगे वर्तमान भागीरथीके मार्गसे होकर बहती हैं, किंतु यह एक छोटी धारा है। बड़ी मुख्य धारा जो छापघाटीसे अलग हो गयी है, पद्माके नामसे प्रसिद्ध है। वह पूर्वी बंगालकी ओर जाती है। परंतु बंगालीलोग भागीरथीको ही पवित्र नदी मानते हैं। पूर्व बंगालके निवासी नावोंद्वारा भागीरथीके मुहानेसे गंगाजल मँगाते हैं।

राजमहलके बाद अनेक ग्रामोंको पवित्र करती हुई श्रीगंगाजी करीब २५ मीलपर छापघाटी स्थानपर पहुँचती हैं। इस स्थानपर श्रीगंगाजी दो धाराओंमें बँट जाती हैं। बड़ी धारा पद्माके नामसे प्रसिद्ध है, जो दक्षिण-पूर्वको बहती हुई बंगालकी खाड़ीमें गिरती है। दूसरी छोटी शाखा भागीरथीके नामसे अभिहित होती है और यह सीधे दक्षिणको बहती हुई गंगासागरतक जाती है। यद्यपि भागीरथी नामकी छोटी धारामें आजकल प्रायः कम जल रहता है, तथापि यह मानना पड़ेगा कि भागीरथीके तटपर ही बंगालके मुख्य तीर्थ और नगर हैं—जैसे महेश, काली, त्रिवेणी आदि तथा कलकत्ता, श्रीरामपुर, कासिमबाजार, अजीमगंज आदि।

प्राचीन कालमें यह भागीरथी दूसरी धारा (पद्मा)-के समान ही चौड़ी तथा गम्भीर थीं; क्योंकि उस समय जबकि गंगाका अधिक जल पद्माके ही मार्गसे बहने लगा तो मुर्शिदाबादके नवाबोंने भागीरथीकी क्रमिक क्षीणता देखकर तथा उससे अपना नुकसान देखकर

छापघाटीपर, जहाँसे गंगाका एक स्रोत भागीरथीकी राह जाता था, ताँबेकी एक मोटी चिकनी विशाल चद्दर बिछवा दी थी, ताकि मुहानेकी तहपर बालू तथा मिट्टी जमा होकर जलका प्रवाह बन्द न कर दे। इस कारण नवाबी अमलदारीमें भागीरथीका प्रवाह घटने नहीं पाया था और धारा यथासम्भव मोटी तथा प्रबल थी।

वह ताँबेकी चद्दर मूल्यवान् थी। अंग्रेजी अमलदारीमें वह हटा ली गयी। परिणाम यह हुआ कि छापघाटीपर बहुत बालू तथा मिट्टी जम गयी और जलप्रवाह भागीरथीमें कम हो गया। अस्तु

इस प्रकार भागीरथीजी मुर्शिदाबाद, कटवा, नवद्वीप, त्रिवेणी, हुगली, चिंचुड़ा, चन्द्रनगर, श्रीरामपुर होते हुए कलकत्ता पहुँचती हैं और फिर सीधी दक्षिणकी ओर बहती हुई बंगालकी खाड़ीमें जा गिरती हैं। अब उपर्युक्त स्थानोंका एक-एक करके आगे दिग्दर्शन कराया जाता है।

छापघाटीसे लगभग १० मील दक्षिणमें जंगीपुर भागीरथीके बायें तटपर स्थित है। इसका स्टेशन जंगीपुररोड है, जो उसके दूसरे किनारेपर स्थित है।

जंगीपुरसे २१ मील दक्षिणमें मुर्शिदाबाद नगर है। यह नगर भागीरथीके दाहिने तटपर स्थित है। भविष्यपुराणमें लिखा है कि मोरासुदाबादको एक यवनने स्थापित किया था। १७०३ ई० में मुर्शिद्कुलीखाँने इसका नाम मुर्शिदाबाद रखा और तबसे यह बंगालकी राजधानी हो गया। यहीं ईस्ट इंडियन रेलवेका प्रसिद्ध स्टेशन है तथा कोयलेके व्यापारका केन्द्र है। प्लासीके युद्धके बाद क्लाइवने लिखा है कि मुर्शिदाबादका नगर लंदनके समान ही विस्तृत तथा धनाढ्य और घना बसा हुआ है। हाथीदाँतपर नक्काशीका काम यहाँ बहुत समयसे अच्छा होता आया है। यहाँके अन्य धन्धे सोने-चाँदीके तारोंका काम तथा संगीतके वाद्य और रेशमके कपड़े बनाना है।

यहाँसे ६ मील आगे कासिमबाजार नामका प्रसिद्ध व्यापारिक नगर भागीरथीके बायें तटपर स्थित था। अब भागीरथी यहाँसे पश्चिमको हट गयी हैं। यहाँ भी ई० आई० आर० का प्रसिद्ध स्टेशन है। यहाँ एक प्राचीन शिवालय है और एक जैन-मन्दिर नेमिनाथके नामसे प्रसिद्ध है।

यहाँसे २२ मील दक्षिण प्लासी नामक प्रसिद्ध ऐतिहासिक ग्राम भागीरथीके बायें तटपर स्थित है। यहींपर मुर्शिदाबाद जिलेका अन्त होता है। प्लासी भी ई० आई० आर० का स्टेशन है। यहाँपर लार्ड क्लाइवसे बंगालके नवाब सिराजुद्दौलाका युद्ध हुआ था।

यहाँसे भागीरथी टेढ़ी-मेढ़ी बहती हुई १२ मील दक्षिणकी ओर जाकर कटवा नामक स्थानपर पहुँचती हैं। यह दाहिने तटपर स्थित है। यह भी ई० आई० आर० का स्टेशन है तथा पक्की सड़कें यहाँसे अन्यान्य स्थानोंको गयी हैं। यह बर्दवान जिलेमें पड़ता है, यह वैष्णवोंका तीर्थस्थान है। महाप्रभु श्रीचैतन्यदेवने यहींपर संन्यास ग्रहण किया था।

कटवासे ८ मील आगे अग्रदीप नामक स्थान पड़ता है। यह एक तीर्थ है। यहाँ गोपीनाथजीका मन्दिर है, जिनके दर्शनके लिये अप्रैलमें लगभग १० सहस्र यात्री इकट्ठे होते हैं।

कटवासे भागीरथीकी धारा दक्षिण-पूर्वको मुड़ती है और २५ मील आगे जाकर नवद्वीपमें पहुँचती है। यह भागीरथीके दाहिने तटपर स्थित है और ई० आई० आर० का स्टेशन है। कटवासे बालागढ़ जानेवाली कच्ची सड़क यहींसे गुजरती है। यहींपर जालंगी नदी मिलती है और यहींसे भागीरथीका नाम हुगली पड़ जाता है। आगे वह इसी नामसे सम्बोधित की जाती हैं। इसी जालंगी नदीके बायें तटपर कृष्णनगर नामक एक स्थान है, जो कोयलेकी खानके लिये प्रसिद्ध है। प्राचीन कालमें नवद्वीप एक समृद्ध नगर था, किंतु भागीरथीके बार-बार स्थान-परिवर्तन करनेके कारण उसके प्राचीन गौरव-चिह्न भागीरथीमें अन्तर्लीन हो गये हैं। यह चैतन्यमहाप्रभुका जन्मस्थान है।

वर्तमान नवद्वीप संस्कृत-शिक्षाके लिये अब भी प्रसिद्ध है। इस स्थानकी मुख्य विशेषता यहाँके विद्यालय

हैं, जिनमें स्मृति और न्यायशास्त्र पढ़ाये जाते हैं। पहले यहाँके पंचांग प्रसिद्ध थे।

नवद्वीपसे १० मील आगे शान्तिपुर नामक एक सुन्दर स्थान है। यह भागीरथीके बायें तटपर स्थित है। १५वीं शताब्दीमें यहाँपर अद्वैताचार्य पैदा हुए थे, जो विष्णु और शिवके संयुक्त अवतार माने जाते हैं। तबसे यह स्थान बहुत पवित्र माना जाता है।

कुछ समय पूर्व यहाँकी मलमल यूरोपतकमें विख्यात थी। यहाँके तीन सबसे प्रसिद्ध मन्दिर हैं—श्यामचन्द्रका, गोकुलचन्द्रका और जलेश्वरका।

शान्तिपुरके सामने भागीरथीके दाहिने तटपर कलना नामक बर्दवान जिलेका एक प्रसिद्ध ग्राम है। प्राचीन कालमें यहाँ एक सुदृढ़ किला था, जिसका भग्नावशेष आंशिक रूपमें अभीतक विद्यमान है। महाराज बर्दवानका एक महल भी यहाँ है। यहाँ एक सौ नौ शिवालय हैं, जिनकी श्रेणीबद्ध रचना गोलाकार हुई है। बाहरी गोलेमें ६६ मन्दिर हैं, जिनकी रचना एक काले लिंगके बाद एक सफेद लिंग रखकर हुई है। भीतरवाले गोलेमें ४२ लिंग हैं, जिनमें एक श्वेत लिंग भी है।

शान्तिपुरसे करीब १२ मील दक्षिणमें बालागढ़ नामक एक स्थान भागीरथीके दाहिने तटपर स्थित है। यह ई० आई० आर० का स्टेशन है।

बालागढ़से १० मील दक्षिण भागीरथीके दाहिने तटपर त्रिवेणी नामक एक प्राचीन स्थान है। इसका प्राचीन नाम मुक्तवेणी था। यहाँपर भागीरथीकी तीन धाराएँ हो जाती हैं—एक भागीरथी (हुगली), जो कि दक्षिणको कलकत्ता होती हुई गंगासागरको जाती है; दूसरी सरस्वती, जो हुगली तथा हावड़ा जिलोंके भीतर होकर दक्षिणकी ओर बहती है और सप्तग्राम होती हुई फिर सँकराइल नामक स्थानपर गंगा (भागीरथी)-से जा मिलती है, तीसरी यमुना, जो त्रिवेणीके सामने ही पूर्वी किनारेसे निकलकर पूर्वकी ओर प्रवाहित होती है और इच्छामतीके नामसे परिज्ञात होती है।

जैसे प्रयागमें गंगा, यमुना और सरस्वतीका संगम होनेके कारण उस स्थानको त्रिवेणी कहते हैं, वैसे ही भागीरथीसे यमुना तथा सरस्वतीके निकलनेके कारण इन तीनोंके वियुक्त होनेके स्थानको भी त्रिवेणी कहते हैं। प्रयागका मिलन-स्थान युक्त त्रिवेणी और भागीरथीके वियोगके स्थानको मुक्त त्रिवेणी कहते हैं। अस्तु

इन तीन धाराओंके संगमका वर्णन पवनदूत नामक संस्कृत-काव्य-ग्रन्थमें भी आया है। प्राचीन कालमें यहाँ बहुत-सी संस्कृत पाठशालाएँ थीं। सर विलियम जोन्सके शिक्षक पं० जगन्नाथ तर्कपंचानन (जिन्होंने धर्मशास्त्रपर एक ग्रन्थ रचा था) यहींके प्रसिद्ध विद्वान् थे। यहाँपर हिन्दुओंके गौरवके अब कुछ थोड़े-से ही चिह्न बच रहे हैं। त्रिवेणीपर कुछ महत्त्वपूर्ण मेले लगते हैं। ये दशहरा, संक्रान्ति और ग्रहणके अवसरपर होते हैं।

त्रिवेणीसे हुगली नगर ५ मील दक्षिणकी ओर है। ग्रांड ट्रंक रोड यहाँसे होकर जाती है। ई० आई० आर० के यहाँ तीन स्टेशन हैं—चिन्सूरा, हुगली और बंडेल जंक्शन। हुगली कालेजसे आध मीलपर शान्देश्वर मन्दिर है।

हुगली नगरके सामने ही दाहिने तटपर गरीफा नामका एक छोटा ग्राम है। यह ब्राह्मसमाजके जन्मदाता श्रीकेशवचन्द्रसेन (१८३८ ई०)-का जन्म-स्थान है।

चन्द्रनगरसे ५ मील आगे हुगली नदीके दाहिने तटपर श्यामनगर नामक एक ग्राम है। यहाँ ई० बी० एस० रेलवेका एक स्टेशन है। स्टेशनके कुछ पूर्व एक मिट्टीके किलेके भग्नावशेष हैं, जिसके चारों ओर खाई है।

चन्द्रनगरसे ६ मील दक्षिण हुगलीके बायें तटपर बैरकपुर नामक एक स्थान है। ऐतिहासिक दृष्टिसे यह बंगाली सेनाके दो विद्रोहोंका स्थान है। झूलनका मेला यहाँ ६ दिनतक रहता है।

बैरकपुरसे २ मील दक्षिणकी ओर बायें तटपर टीटागढ़ नामका एक प्रसिद्ध औद्योगिक केन्द्रस्थान है। यहाँ जूटकी मिलें और कागजका प्रसिद्ध कारखाना है।

टीटागढ़के २ मील आगे खड़दह नामक स्थान

है। श्रीचैतन्यमहाप्रभुके मुख्य शिष्य नित्यानन्द यहाँ कुछ समय रहे थे। यहाँ तीन मन्दिर हैं—खड़दहमें श्यामसुन्दरजीका, वल्लभपुरमें राधावल्लभजीका और शाहीवारामें नन्ददुलारेजीका।

टीटागढ़के सामने हुगली नदीके दूसरे (दाहिने) तटपर श्रीरामपुर नामक एक नगर है। यह हुगली और हावड़ा नगरोंसे समान दूरीपर स्थित है। ग्रांड ट्रंक रोड यहाँसे होकर जाती है।

वल्लभपुर राधावल्लभजीके मन्दिर और रथयात्राके लिये प्रसिद्ध है। नदी-तटपर इसके दक्षिण ओर महेश है और उससे भी दक्षिणमें रिशरा है। महेशमें जगन्नाथजीका मन्दिर है। यहाँ रथयात्रा धूमधामसे मनायी जाती है। पुरीके बाद रथयात्राकी धूमधाम यहींपर अधिक होती है।

श्रीरामपुरसे ६ मील दक्षिण हुगलीके दायें तटपर एक छोटा-सा उत्तरपाड़ा नामक नगर स्थित है। यहाँ एक पुस्तकालय है, जिसमें भारतकी प्राचीन पुस्तकें संगृहीत हैं। १९वीं शताब्दीके पूर्वार्द्धमें प्रचलित हरकारू समाचारपत्रका पुस्तकालय भी इसीमें सम्मिलित है।

उत्तरपाड़ासे ६ मील आगे हुगलीके दक्षिण तटपर हावड़ा नामक भारत-प्रसिद्ध नगर है। यहाँ हुगलीपर बना हुआ प्रसिद्ध पुल है। इसके बनानेमें विशेष कारीगरी
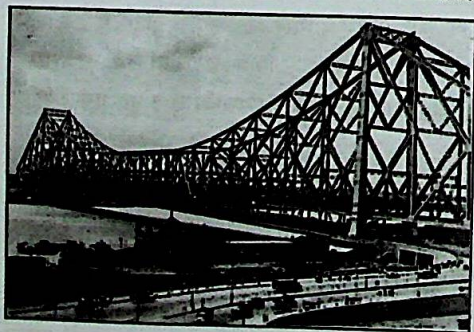
हावड़ा

दिखलायी गयी है; क्योंकि जहाज आनेके समय पुल बीचसे हटा भी दिया जाता है। जहाजके चले जानेपर फिर जोड़ दिया जाता है।

हावड़ा नगरका एक मुख्य स्थान शिवपुर है। यहाँपर रायल बोटैनिकल गार्डेन और सिविल इंजीनियरिंग कालेज हैं।

शालीमार भी हावड़ा जिलेका ही एक अंग है। यहाँपर रस्से बनानेके कारखाने और बंगाल-नागपुर रेलवेका गोदाम है।

हावड़ा पुलके दूसरी तरफ हुगली नदीके बायें तटपर जगद्विख्यात कलकत्ता नगर स्थित है। यह जनसंख्याकी दृष्टिसे भारतवर्षमें सर्वप्रथम तथा संसारभरमें १२वाँ नगर है। यह नगर ऐसे स्थानपर स्थित है कि यहाँ स्थल और जल दोनों मार्गोंसे व्यापारिक सुविधा है। यहाँ कालीघाट, आद्यापीठ तथा गंगाजीके तटपर दक्षिणेश्वर कालीजीका मन्दिर है, जिनकी भारतवर्षभरमें प्रसिद्धि है।
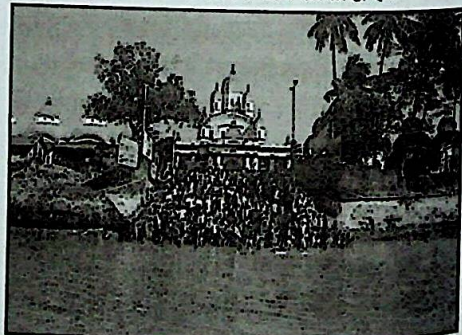
दक्षिणेश्वर

कलकत्तेकी समृद्धि आजकल दिन-दूनी रात-चौगुनी होती जा रही है। यूरोप आदि देशोंसे भारतवर्षका जो सामुद्रिक व्यापारका सम्बन्ध है, वह बहुत अंशोंमें कलकत्ता-जैसे प्रसिद्ध (प्राकृतिक) बन्दरगाहके माध्यमद्वारा ही है। यहाँके म्यूजियम (अजायबघर), चिड़ियाखाना, टकसालघर आदि दर्शनीय स्थान हैं। म्यूजियममें एक-एक अपूर्व वस्तुका संग्रह किया गया है। चिड़ियाघरमें, जो कि संसारभरमें प्रसिद्ध है, तरह-तरहके जंगली साँप, चिड़ियाँ, पहाड़ी जीव, सिंह, बाघ, रीछ आदि रखे गये हैं। यहाँपर हर तरहके कारखाने हैं।

कलकत्तेसे भागीरथी (हुगली)-की एक धारा कालीघाट होती हुई जयनगरसे और आगे जाती थी। अब

यह सूख गयी है। अंग्रेजोंके आगमनके पहले इसमें काफी जल बहता था। परंतु अब स्थान-स्थानपर केवल कुछ झीलें-सी अवश्य बन गयी हैं। इन्हें आदिगंगा, बूढ़गंगा या गंगानालाके नामसे पुकारते हैं। हिन्दूलोग कलकत्तेसे दक्षिण भी हुगलीको नदीवत् समझकर केवल इसे ही पवित्र मानते हैं और यहीं अपने शवोंको जलाते हैं।

कलकत्तेसे ६ मील आगे हुगली नदी साँकराइल नामक स्थानपर पहुँचती है, जहाँ सरस्वती नदीका संगम होता है, यह वही सरस्वती नदी है, जिसका विवरण पहले दिया जा चुका है। यह त्रिवेणीपर भागीरथीसे अलग होकर सप्तग्राम होती हुई दक्षिण-पश्चिमकी ओर वहने लगती है और इस प्रकार चक्कर खाती हुई फिर साँकराइलके पास भागीरथी (हुगली)-में मिल जाती है।

यह साँकराइल सरस्वती और हुगलीके संगमपर बसा हुआ एक बड़ा ग्राम है। यहाँ स्टीमर रुकते हैं। संगमपर होनेके कारण यह स्थान बहुत पवित्र माना जाता है।

साँकराइलसे लगभग १० मील आगे मायापुर नामक ग्राम है। यहाँपर भी स्टीमर रुकते हैं। रेलवे लाइन यहाँपर नहीं है।

मायापुरसे ९ मील आगे हुगली नदीके दाहिने तटपर दामोदर नद मिलता है और इस संगमके सामने ही दूसरे किनारेपर काल्टा नामक स्थान है। यहाँ एक किला है जिसपर भारी तोपें रखी हुई हैं। यह हुगली नदीकी रखवाली करता है।
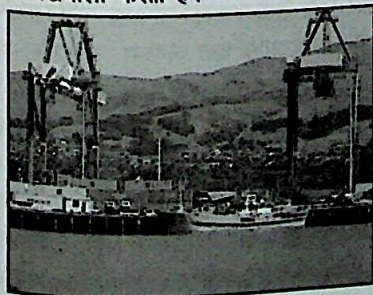
डायमण्डहारबर

यहाँसे कुछ दूरपर डायमण्डहारबर नामक बन्दरगाह है। यहाँका स्थानीय नाम हाजीपुर है। यहाँसे पक्की सड़क कलकत्ते जाती है।

इसके बाद हुगली नदी आगे बढ़नेपर वैकुण्ठपुर, रामपुर, दुर्गाचक आदि स्थानोंको पवित्र करती हुई मायापुरसे २८ मील पूर्व नारायनचकमें पहुँचती है, जहाँपर हल्दीनदीका संगम होता है। यहाँसे हुगलीकी धारा बहुत चौड़ी हो जाती है और इसी रूपमें भागीरथी (हुगली) काशीनारा, कलेक्टरगंज होती हुई गंगासागरको चली जाती है। यह स्थान सागरसे एक छोटी धाराके संगमपर है। यहाँ संक्रान्तिके दिन एक बड़ा मेला लगता है। यहाँ दूकानोंके लिये चटाइयोंके मण्डप बन जाते हैं। मेलेके समयमें रेतके चार फीट ऊँचे चबूतरेपर एक तात्कालिक मन्दिर बनाकर उसमें कपिल मुनिकी मूर्तिकी स्थापना की जाती है। यह मूर्ति वर्षा ऋतुमें कलकत्तेमें ही रखी रहती है।

पहले यह बतलाया जा चुका है कि छापघाटीके पास गंगा दो भागोंमें बँट जाती हैं—भागीरथी और पद्मा, जिनमें भागीरथीके किनारेके प्रसिद्ध-प्रसिद्ध स्थानोंका विवरण दिया जा चुका है। अब आगे पद्मा नामधारिणी गंगाके किनारेके प्रसिद्ध स्थानोंका भी संक्षिप्त विवरण दिया जाता है।

छापघाटी मुहानेसे कुछ दूरपर गिरिया नामक एक ग्राम पद्माके दाहिने तटपर स्थित है।

यहाँसे कुछ दूर आगे पद्माके बायें तटपर उदयनाला नामक एक ऐतिहासिक स्थान है, जहाँ नवाब मीरकासिमके साथ सन् १७६३ ई० में अंग्रेजोंकी दो लड़ाइयाँ हुई थीं। दोनोंमें मीरकासिमकी हार हुई थी।

यहाँसे आगे बढ़नेपर पद्मा गोदागड़ी नामक स्थानमें पहुँचती हैं। यह स्थान छापघाटीसे १६ मील दक्षिण-पूर्वमें पद्माके बायें तटपर स्थित है। ई० आई० आर० की कटिहार-गोदागड़ी शाखा यहींपर समाप्त होती है।

यहाँसे पद्मा भगवानगोलाको जाती हैं। यह स्थान छापघाटीके मुहानेसे लगभग २१ मील दक्षिण-पूर्वमें है। यह एक व्यापारिक स्थान है। पद्मा नदीकी गहराई तथा

चौड़ाई अधिक होनेके कारण इसके द्वारा मालके जानेमें व्यापारिक सुविधा अधिक रहती है। इसीलिये पद्माके किनारे बसे हुए सब प्रसिद्ध-प्रसिद्ध स्थान अपना व्यापारिक महत्त्व भी रखते हैं। अस्तु

भगवानगोलासे १५ मील आगे रामपुरबोआलिया नामका एक नगर पद्माके बायें तटपर स्थित है। पहले यहाँ रामपुर और बोआलिया नामके दो अलग-अलग ग्राम थे, किंतु अब दोनोंको मिलाकर एक कर दिया गया है। यहाँपर रेल नहीं है। स्टीमरसे काफी व्यापार होता है।

यहाँसे लगभग ३२ मीलकी दूरीपर पद्माके बायें तटपर सारा नामक एक ग्राम है, जहाँपर ई० आई० आर० का स्टेशन है और थाना, डाकखाना तथा हाईस्कूल हैं। यह ग्राम पबना जिलेमें पड़ता है।

यहाँसे ५ मील आगे पद्माके दाहिने तटपर नूरपूर नामक ग्राम स्थित है। यहाँसे कुष्ठिया नगरतक पक्की सड़क गयी है। यहाँसे ४ मील आगे नलवरिया स्थानपर गरई नदीका संगम होता है। इस संगमसे ९ मील आगे पबना नगर पद्माके दाहिने तटपर स्थित है। यह एक व्यापारिक नगर है।

पबनासे ३० मील आगे सिवले नामक स्थानपर पद्माका यमुना नदीके साथ संगम होता है। ब्रह्मपुत्र नदीके बंगालमें प्रवेश होनेके बाद उसका नाम यमुना पड़ जाता है। यह काफी चौड़ी नदी है। व्यापारकी दृष्टिसे यह ब्रह्मपुत्र (यमुना) बड़ी महत्त्वपूर्ण नदी है। सिवलेमें पद्माके पूर्वी तटपर स्थित एक बड़ा बाजार है, थाना है, व्यापारका स्थान तथा अनाजकी मण्डी है। यह गोआलंदो घाटके सामने पड़ता है, जो पद्माके दाहिने तटपर स्थित है।

गोआलंदो घाटतक ई० आई० आर० जाती है।

गोआलंदो घाटसे पद्मा नदी छोटे-छोटे गाँवोंमें होती हुई ५१ मील दूर राजवाड़ी स्थानपर पहुँचती है। यह पद्माके पूर्वी तटपर स्थित है। यहाँ थाना और सबरजिस्ट्री आफिस है। २ मील दक्षिण-पश्चिमकी ओर राजवाड़ी मठ है। यहींपर सब यात्री ठहरते हैं। इसी राजवाड़ीके आसपास मेघना नदीका (जो कि मनीपुरकी पहाड़ियोंसे निकलती है और सुर्माघाटीमें बहती है) संगम होता है।

यह मेघना राजवाड़ीसे लगभग १५ मील उत्तर मुन्शीगंजके पास कई नदियोंसे मिलकर आती है, जिसमेंसे एक बूढ़ीगंगा है। इसीके बायें किनारेपर ढाका नामक प्रसिद्ध व्यावसायिक नगर बसा हुआ है। आजकल बंगालका यह एक प्रसिद्ध नगर है। ढाकेकी मलमल प्रसिद्ध है। एक और नदी लखियार नामकी है, जिसके किनारे नारायनगंज है। एक तीसरी ढोलेश्वरी नदी है। ये तीनों नदियाँ मुन्शीगंजके कुछ पहले ही मिलकर आती हैं और मुन्शीगंजमें मेघनासे मिलकर आगे बढ़ती हैं और राजवाड़ीमें पद्मा (गंगा)-से मिलकर एक सागरका रूप धारण करती हैं और इसी रूपमें बंगालकी खाड़ीमें गिरती हैं।

पद्माके तटोंका यह हाल है कि अनेक स्थानोंपर मिट्टी जमा हो जाती है, द्वीप बन जाते हैं, इनपर घने वन उग आते हैं। जिन्हें काटकर साफ किया जाता है और गाँव बसाये जाते हैं। किंतु ये सब भूखण्ड एक रातके तूफानमें ही जलमग्न हो जाते हैं। दूसरे दिन उनका निशानतक नहीं मिलता। गोआलंदो-जैसी बड़ी मण्डीकी स्थिति इतनी नाजुक है कि इस वर्ष नगर एक स्थानपर स्थित है तो दूसरे वर्ष उसका पड़ाव सात मील दक्षिण होना कोई आश्चर्यकी बात नहीं। फरीदपुर जिलेमें पद्माने इतने अधिक सुन्दर भवनोंको नष्ट कर दिया है कि इसका नाम ही 'कीर्तिनाश' पड़ गया है। इसके आगे धारा लगभग आठ मील चौड़ी हो गयी है।

धारामें जलकी प्रचुरता होनेके कारण स्टीमर इसमें बड़ी सरलतापूर्वक चलते हैं। इसीसे राजशाही जिलेके निकट आपको इतने अधिक जलयान देखनेको मिलेंगे कि आपके आश्चर्यका ठिकाना न रहेगा। संसारभरमें जलद्वारा जितना अधिक व्यापार पद्मापर होता है, उतना और कहीं नहीं।

पर्यावरण और प्राणिजगत्‌का अन्तःसम्बन्ध

(ले० जनरल (डॉ०) श्रीशिवरामजी मेहता, एम०डी० (मेडिसिन))

पर्यावरणका सरल अर्थ पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु तथा अन्तरिक्ष (विशेष तौरसे धरती, सूर्य इत्यादि)—सबका समुच्चय है। पृथ्वीपर इनके सही तालमेलकी वजहसे ही तो जीवकी उत्पत्ति हुई है। अभीतक खोजे गये अन्य ग्रहोंपर जीवन नहीं मिला है—इसका तात्पर्य है कि वहाँका पर्यावरण प्राणिमात्रके अनुकूल नहीं है। पर्यावरण ही हमें सही जीवन देता है। पर्यावरण तथा मनुष्यका घनिष्ठ सम्बन्ध है। मनुष्य ही नहीं, हर जीव तथा पर्यावरण एक-दूसरेके पूरक हैं।

जल-प्रदूषण तथा नदी-नालोंकी सफाई— गुरुवाणीमें धरतीको माँ, हवाको गुरु तथा पानीको पिता कहा गया है—***'पवन गुरु, पानी पिता माता धरत महत'***। जलके बिना जीवन सम्भव नहीं है। हम ज्यादातर भू-जलपर निर्भर हैं, जिसका स्तर बीते हुए ४०-५० वर्षोंसे लगातार गिर रहा है और देखते-ही-देखते बहुत-से कुएँ सूख गये हैं। पुराने जमानेमें जो नदियाँ-नाले बहते थे तथा तालाब पानीसे लबालब भरे रहते थे, उनमेंसे बहुतोंका तो आज नामोनिशानतक नहीं है। जो कुछ नदियाँ-नाले बचे हैं, वे बहुत प्रदूषित हो गये हैं। इसका खास कारण हमारी अदूरदर्शिता तथा पानीका सही प्रबन्ध नहीं होना है। यह सब पर्यावरणकी छेड़-छाड़की वजहसे हो रहा है। अगर हम वर्षाऋतुमें ही पानीके संरक्षण तथा उसके उपयोगकी विधियोंपर ध्यान दें तो पानीकी समस्यापर काफी हदतक विजय पा सकते हैं। कई जगह वर्षाका पानी इतना ज्यादा होता है कि वह बहुत तबाही मचा देता है। यह पानी जो बह-बहकर सूख जाता है या समुद्रमें मिल जाता है, उसे रोककर, उसका सही उपयोग करना ही होगा।

पर्यावरण-प्रदूषण— आज जिस रफ्तारसे पर्यावरण-प्रदूषण हो रहा है एवं जलवायुमें परिवर्तन आ रहा है, वह सारे विश्वके लिये बेहद भयानक संकटोंकी दस्तक है। इस समय हम सबके सामने तीन भयंकर समस्याएँ—ग्लोबल वार्मिंग (धरतीके तापमानमें होती हुई वृद्धि), हर तरीकेका प्रदूषण तथा ईंधनकी कमी-बहुत ही विकराल चुनौतीके रूपमें खड़ी हैं एवं पूरे मानव-जातिके लिये ही नहीं, अपितु पूरे जीवमात्रके अस्तित्वके लिये घातक हैं। हर वर्ष ५ जूनको हम विश्व-पर्यावरण-दिवस मनाते हैं, परंतु पर्यावरणकी हालत दिनोंदिन बिगड़ती ही जा रही है। आज फल, अनाज, सब्जियों आदिके माध्यमसे कीटनाशक दवाइयोंका जहर हमारे शरीरमें घुलता जा रहा है। गन्दे तालाब तथा नदियोंके पानीसे पैदा की हुई सब्जियाँ एवं अनाज कई खतरनाक रोग तथा कैंसरके मामलोंमें बहुत बढ़ोत्तरी कर चुके हैं। उद्योगोंका जहरीला रासायनिक कचरा उनके आस-पासकी नदियों तथा खेतोंको बेहद नुकसान पहुँचा रहा है एवं अन्ततः फसलोंपर तथा हर जीवमात्रपर नकारात्मक प्रभाव डालेगा। विश्व स्वास्थ्य-संगठनके आँकड़ोंके अनुसार लोगोंके स्वास्थ्यपर बेहद हानिकारक असर देखनेको मिल रहे हैं। बहुत-से किसानोंके शरीरमें कीटनाशक दवाओंके पाये जानेकी खबरें बहुत चिन्ताजनक हैं। इन सबकी वजहसे जेनेटिक म्यूटेशन हो रहा है, मस्तिष्ककी क्षमतामें कमजोरी आती है एवं अन्य कई बीमारियोंका खतरा भी बढ़ जाता है।

जिन गाँवोंमें हमें ४०-५० वर्ष पूर्व जानेपर सुकून मिलता था एवं हम शुद्ध हवाका लुत्फ लेते थे, आज वहाँका वातावरण प्रदूषित हो गया है। वहाँकी वायुमें हानिकारक कीटनाशकोंकी बदबू आती है एवं कई अन्य नुकसानदायक तत्त्व भी हवामें घुल-मिल गये हैं। पर्यावरण-प्रदूषण होनेकी वजहसे जलमें भी घुले हुए हानिकारक बैक्टीरिया, वायरस तथा अन्य केमिकल

तत्त्वोंकी वजहसे नुकसान हो रहा है। यह सब हमारे अन्न, सब्जियों तथा फूलोंको भी विषैला बनाकर हमारे शरीरको रुग्ण बना रहे हैं। जाने-अनजानेमें हम वातावरणको चारों ओरसे नुकसान पहुँचा रहे हैं। हर तरहका कूड़ा-कचरा एक जटिल समस्या बन गया है। पूरे देशमें हर रोज दो करोड़ पानीकी बोतलें और चार करोड़ दूधकी थैलियाँ कूड़ेमें फेंकी जाती हैं। पॉलीथीन भी अनगिनत समस्याएँ पैदा कर रही है। कचरेमें फेंकी हुई बैटरियों, मोबाइल और कम्प्यूटरोंसे निकलता हुआ पारा, कोबाल्ट, आर्सेनिक तथा अन्य कई जहरीले रसायन, हमारी मिट्टी और भूगर्भीय जलको जहरीला बना रहे हैं। अस्पतालोंसे तथा फैक्टरियोंसे निकलनेवाला कचरा, जिसका सही तरीकेसे निस्तारण नहीं किया जाता है, कूड़ेकी समस्याको और जटिल बना रहा है। यह सब तरहका कचरा जमीन, जल तथा हवामें जहर घोल रहा है। घरेलू गन्दगीका कूड़ा-कबाड़ा जो कि तकरीबन पूरे कचरेके २० फीसदीके आस-पास होता है—उसका भी सही निस्तारण बहुत ही कम घरोंमें होता है। कई लोग तो अपने बगलवाले घर, पासकी खाली जगह या सड़कके पास कचरा फेंककर अपने घरको साफ मानते हैं। उन्हें पता तब लगता है, जब कचरेसे बीमारियाँ फैलने लगती हैं। कई वर्षों पहले सूरतमें फैली हुई प्लेग-जैसी महामारी इसका छोटा-सा उदाहरण है। छोटे शहरोंको छोड़ें, राजधानी दिल्ली-जैसे शहरका आधेसे ज्यादा कचरा यमुनामें बहा दिया जाता है। यह यमुनाकी दुर्दशाका खास कारण है। नाभिकीय ऊर्जा संयन्त्रोंमें उत्पन्न न्यूक्लियर कूड़ा-कचरेको सही ठिकाने लगाना भी एक भयंकर चुनौती बनती जा रही है।

अगर समय रहते कचरेके निस्तारणका समाधान नहीं ढूँढ़ा गया तो हमारी आनेवाली पीढ़ियोंके सामने एक भयानक संकट खड़ा हो जायगा।

ग्लोबल वार्मिंगका कहर—वैश्विक तापमानमें लगातार होती वृद्धिका प्रमुख कारण है कोयला, प्राकृतिक गैस, जैव ईंधनों तथा पेट्रोलियमका अन्धाधुन्ध उपयोग एवं जंगलोंकी कटाई। इन सबसे वायुमण्डलमें कार्बनडाईऑक्साइडकी मात्रा बढ़ती जा रही है और धरतीका वायुमण्डल गरम हो रहा है। यही विशेष कारण है, जिसकी वजहसे हमें ध्रुवीय क्षेत्रकी बर्फ पिघलने और समुद्री जलस्तर बढ़ने-जैसी गम्भीर समस्याओंका सामना करना पड़ रहा है। कई वैज्ञानिकोंने भी यह बताया है कि अंटार्कटिकाके हिमखण्डोंके जलमग्न हिस्से बहुत तेजीसे पिघल रहे हैं। इन सबकी वजहसे ही वातावरणमें उथल-पुथल, बरफबारी, तेज बारिश तथा चक्रवाती तूफानोंकी संख्या दिनोंदिन बढ़ रही है। ईंधनके जलनेसे वातावरणमें जो कार्बनडाई-आक्साइड पैदा होती है, उसका ज्यादातर हिस्सा समुद्र सोख लेता है एवं इस वजहसे समुद्रका पानी एसिडिक होता जा रहा है। अगर यही हालत रही तो सदीके अन्ततक पानीमें रहनेवाली लगभग ३० फीसदी प्रजातियाँ लुप्त हो सकती हैं।

पर्यावरण-शुद्धिके कुछ उपाय—पर्यावरण-प्रदूषण तथा जलवायु-परिवर्तनकी वजहसे कहीं बाढ़, कहीं समुद्री तूफान, कहीं तापमान तथा कई अन्य भीषण प्रकोप, यह सब भविष्यमें आनेवाले भयानक संकटोंके संकेत हैं। समय रहते हम सबको पर्यावरणको ठीक करके उसे सुरक्षित रखना होगा। ये चिन्ताएँ अकेले किसी एककी नहीं हैं, न कोई अकेला देश इनसे निपट सकता है। यह वैश्विक मानव-समुदायकी जिम्मेदारी है। इसके लिये अन्तरराष्ट्रीय प्रयास भी हो रहे हैं, १९९७ में जापानके क्योटोमें दुनियाभरके पर्यावरण वैज्ञानिकों एवं अन्य अधिकारियोंका सम्मेलन हुआ था। उन सबने पृथ्वीपर बढ़ती कार्बनडाईऑक्साइडकी मात्रा कम करनेपर जोर दिया था। इस बैठकको 'क्योटो प्रोटोकॉल' का नाम दिया था एवं एक अन्तरराष्ट्रीय समझौता माना गया, लेकिन इसके परिणाम कुछ नहीं निकले। हमारे देशमें भी पर्यावरण संकटसे बचनेके लिये कई योजनाएँ लागू हैं, लेकिन इनसे कुछ ज्यादा सुधार नहीं हो रहा है। जब इनको और कारगर एवं व्यापक

स्तरपर लागू करेंगे तब ही आनेवाले संकटोंसे बचा जा सकेगा।

वर्तमान सरकारकी 'स्वच्छ भारत' की योजना बेहद जरूरी है, परंतु जबतक हम सब इसमें नहीं जुड़ेंगे, कोई खास पर्यावरण-सुधार नहीं होगा। पर्यावरण-शुद्धिके लिये निम्न उपायोंको अपनाना एक सकारात्मक कदम होगा—

१-अक्षय ऊर्जा (Renewal Energy) का उपयोग बढ़ाना होगा—ग्लोबल वार्मिंग कम करनेके लिये सब राष्ट्रोंको अक्षय ऊर्जा जैसे कि सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा एवं जल ऊर्जाके साधनोंको प्रोत्साहित करके वायुमण्डलको दूषित होनेसे बचाना है। यह बहुत अहम मुद्दा है एवं सारे जीव-जगत्के लिये लाभदायक साबित होगा।

२-बायो डीजल देनेवाले पौधोंद्वारा पर्यावरणमें सुधार—एनर्जी प्लाण्ट जैसे कि जेट्रोफा, करकास, कैस्टरबीन, रबर ट्री तथा कसावा मेनीहाट एस्कोलैंटा इत्यादि पौधोंको बढ़ावा देकर हम कोयले तथा डीजलसे बिजलीकी वजहसे जो प्रदूषण एवं बढ़ते तापमानकी समस्या हो रही है, उससे काफी हदतक निपट सकते हैं। हमारे देशके लिये कैस्टरबीन यानी अरण्डी एक महत्त्वपूर्ण पौधा है, क्योंकि इससे बननेवाला बायो डीजल कोयले तथा कच्चे तेलका अच्छा विकल्प है। अरण्डीका पौधा प्रदूषित मिट्टीको भी काफी हदतक ठीक करके उसकी गुणवत्तामें सुधार लाता है। यह जहाँ उगाया जाता है, वहाँकी जमीनमें पोषक तत्त्वोंकी अच्छी बढ़ोत्तरी करता है एवं खेतीके लिये सहायक जीवाणुओंकी गतिविधियों और उनकी किस्मोंमें भी वृद्धि करता है। मिट्टीमेंसे यान्त्रिक तरीकोंसे प्रदूषण तत्त्वोंको हटाना एवं रासायनिक विधियोंसे काबू पाना बहुत महँगा पड़ता है, जबकि अरण्डी-जैसे पौधे विषैली भारी धातुएँ, कीटनाशक, कच्चे तेल एवं कई प्रकारके हाइड्रोकार्बन-जैसे प्रदूषणकारी तत्त्वोंको मुफ्तमें हटा देते हैं। अतः इनको बढ़ावा देना होगा।

३-हरियाली बढ़ायी जाय—जंगलोंकी संख्यामें तेजीसे होती कमीकी वजहसे पर्यावरणीय संकट और गहराता जा रहा है। आदमी विकास करना चाहता है एवं इसकी वजहसे जंगल कट रहे हैं। इस विकासके लिये पर्यावरणके साथ अच्छा तालमेल बेहद जरूरी है। धरती बहुत बड़ी है एवं वीरान जगह अब भी बहुत है। ऐसी जगह जलकी व्यवस्था करके पेड़-पौधे लगाना एक अहम कदम होगा।

वस्तुतः वृक्ष लगानेसे ही काम नहीं चलेगा, उन्हें नन्हें बच्चोंकी भाँति पालना पड़ेगा। बच्चे बड़े होकर आपसे मुकर सकते हैं, परंतु वृक्ष आपका हमेशा साथ देंगे। पेड़ोंका हमारे जीवनमें बहुत महत्त्व है एवं इनके अनगिनत लाभ हैं। घरके चारों तरफ पेड़ होनेसे बिजलीका खर्च एवं एयर कण्डीशनरकी जरूरत भी ३० फीसदीतक कम हो जाती है। एक सालमें एक पेड़ इतनी कार्बनडाईऑक्साइड सोख लेता है, जितनी कि यह एक कारसे २६००० मील चलनेके बाद निकलती है। एक व्यक्तिद्वारा जीवनभरमें फैलाये गये प्रदूषणको खत्म करनेके लिये ३०० पेड़ोंकी जरूरत होती है। पेड़ पर्यावरणके फेफड़े हैं एवं वे हमारे फेफड़ोंको भी कई रोगोंसे बचाते हैं।

४-पानीके संरक्षण तथा स्वच्छतापर ध्यान और जलस्रोतोंको स्वच्छ करनेके अभियानोंमें सहयोग देना होगा—यदि नदियाँ तथा नाले स्वच्छ हो गये तो पानीकी बहुत बड़ी समस्या दूर हो सकती है। आये दिन किसी-न-किसी शहरमें प्रदूषित पानीकी वजहसे टाइफाइड, पीलिया, दस्त एवं अन्य कई बीमारियोंके फैलनेकी खबर आम बात है। भू-जलमें फ्लोराइड एक गम्भीर समस्या है। कारखानोंसे निकलता हुआ जहरीला घोल हमारे नदी, नालों, भू-जल एवं जमीनको कई तरहके नुकसान पहुँचा रहा है। इन सबके लिये हम औद्योगीकरण और जनसंख्या इत्यादिको जिम्मेवार ठहरा रहे हैं, परंतु हम यह भूल रहे हैं कि हम सब भी इस बिगड़ती हुई स्थितिके लिये कहीं-न-कहीं जरूर जिम्मेवार हैं।

जल-प्रदूषण रोकनेके लिये जो कानून हैं, उन्हें और सख्त बनाना होगा एवं उन सबका पालन करना ही पड़ेगा। दोषी व्यक्तियों, संस्थाओं एवं कारखानों इत्यादिको तुरन्त एवं कड़ी सजा (जैसे कि Attempt to murder इत्यादिमें होता है)-का प्रावधान करनेसे ही काम चलेगा। पानीमें जहर घोलना या गन्दा करना तो एक तरहसे जीव-हत्या ही है।

आज सारे विश्वमें जल बचानेके लिये तीन आर (3Rs) रिड्यूस, रिसाइकिल और रियूजका नुस्खा दिया जाता है। रिड्यूस यानि हम पानी कम इस्तेमाल करें, उसकी यथासम्भव बचत करें। इस्तेमाल किये पानीको पुनः प्रयोग करनेके लिये जरूरी प्रक्रियाओंसे गुजरकर पानीके शुद्धिकरणके बाद उसको दुबारा रियूज करें। अमेरिकाके लॉस एन्जिल्स शहरमें सीवरके पानीको पीने लायक बनाया जाता है। हालाँकि इस शोध-प्रक्रियामें पाँच वर्षका समय लगता है। आनेवाले समयमें हमें कुछ ऐसे ही तरीके अपनाने पड़ेंगे, जिनसे किसी भी तरहके जलको शुद्ध करके उसको पीनेयोग्य बनाया जाय।

५-जनसंख्या-नियन्त्रण—जनसंख्या-नियन्त्रण भी पर्यावरणको ठीक रखनेमें कारगर साबित होगा। हमारे देशके ऊँचे तबकेके लोग जो कम बच्चे पैदा कर रहे हैं, वे यह न सोचें कि वे तो RO का पानी, बोतलोंका पानी पीकर एवं अच्छे फल खाकर अपने-आपको एवं अपने सीमित परिवारको स्वस्थ रख लेंगे। उन्हें भी पर्यावरणके प्रदूषणका जहर तो किसी-न-किसी रूपमें घेर ही लेगा। अगर उनके घरोंके अगल-बगलमें कचरेके ढेर हैं एवं कच्ची बस्तियोंकी कतारें हैं और जहाँ जनसंख्या-नियन्त्रणपर जोर नहीं है तो अमीर लोग कैसे बचेंगे?

६-गरीबी तथा पर्यावरण—इन दोनोंका बहुत करीबका रिश्ता है। गरीबी हटानेसे लोग उन्नति करेंगे एवं पर्यावरणके सुधारमें भी मदद करेंगे। वह अपने दैनिक जीवनमें सुधार करके अच्छे पर्यावरणमें रह सकेंगे।

७-शिक्षा तथा पर्यावरण—सही शिक्षाका महत्त्व हर जगह है। अगर पर्यावरण सुधार एवं कचरा नियन्त्रण तथा उसके निस्तारणकी शिक्षा स्कूली स्तरपर अनिवार्य कर दी जाय तो हमारी भावी पीढ़ियाँ इसके बारेमें सावधान हो जायँगी एवं पर्यावरण सुधारके लिये नयी तकनीकोंका आविष्कार भी कर सकती हैं।

८-शहरोंकी ओर पलायनको रोकना होगा—बड़े शहरोंमें तो ३० प्रतिशततक लोग झुग्गी-झोपड़ियोंमें रहते हैं। यह सब गन्दे वातावरणमें रहनेको मजबूर हैं एवं पर्यावरणको और दूषित करते हैं। इसपर ध्यान देना होगा।

९-ध्वनि-प्रदूषणकी रोकथाम—ध्वनि कम हानिकारक नहीं है। यातायात तथा मोटर-गाड़ियोंकी चिल्लपों, कल-कारखानोंका शोर एवं लाउडस्पीकरोंकी कर्णभेदक ध्वनिसे बहरेपन, तनाव, उच्च रक्तचाप, हृदयसम्बन्धी रोग एवं कई अन्य मानसिक रोगोंमें बढ़ोत्तरी होती है। इस ध्वनि-प्रदूषणको रोकनेके लिये जनताको जागरूक करना होगा एवं जरूरत पड़े तो इसके खिलाफ शिकायत भी दर्ज करनी होगी।

१०-मानव-सोचमें बदलाव जरूरी है—हमारी सोच सही होगी तो हम हरदम सतर्क रहेंगे, गन्दगी कम करेंगे, प्लास्टिक थैलियोंका उपयोग नहीं करेंगे, बाजारसे सामान लानेके लिये कपड़ेके थैले लेकर जायँगे, बीड़ी-सिगरेट बन्द करेंगे इत्यादि-इत्यादि। ऐसी हजारों तरकीबें हैं, जो हमारी सोचके बदलावसे हम सबको प्रदूषण कम करनेके लिये और सजग बना देंगी।

प्रदूषणका दायरा केवल वायु, जमीन, जल तथा ध्वनितक ही सिमटा नहीं है। कई मनुष्योंका तन-मन और जीवन भी प्रदूषित हो गया है एवं यह सब सही, सकारात्मक सोच तथा अध्यात्मसे जुड़नेसे ही ठीक होगा।

प्रदूषण एक ऐसा अभिशाप है, जो विज्ञानकी कोखसे जन्मा है और जिसे सहनेके लिये अधिकांश जनता मजबूर है। भारत सरकारने हालहीमें यह माना है कि गये १० वर्षोंमें ३५००० लोग वायु-प्रदूषणसे मारे गये हैं एवं २.६ करोड़ लोग हर वर्ष फेफड़े-सम्बन्धी

बीमारियोंकी चपेटमें आते हैं, जिनका मुख्य कारण वायु-प्रदूषण है। अन्तरराष्ट्रीय आँकड़े तो इन घोषित आँकड़ोंसे २-३ गुना ज्यादा हैं। दुर्भाग्यवश हमारे कई शहर दुनियाके सबसे ज्यादा प्रदूषित शहरोंमें गिने जाते हैं। मानव विकास करना चाहता है तथा विकास जरूरी भी है, लेकिन इस विकासके लिये पर्यावरणके साथ अच्छा बरताव तथा तालमेल बेहद जरूरी है; क्योंकि पर्यावरण-शुद्धि एवं सुरक्षाके बिना विकासका कोई महत्त्व नहीं रहेगा। अतः अब समय आ गया है कि हम हर तरहसे जागरूक होकर पर्यावरण-शुद्धि अभियानको सफल बनायें।

गंगाकी महिमा क्यों ?

(डॉ० श्रीशान्तिस्वरूपजी गुप्त, पूर्व कुलपति)

कुछ समय पूर्वकी बात है, एक पत्रकार महोदयने एक समाचारपत्रमें अपने लेखमें 'गंगाकी महिमा' के अन्तर्गत लिखा है कि 'गंगाकी पूजा करनेके पीछे कोई तर्क नहीं और न ही यह विश्वास करनेका आधार है कि इसके जलमें रोगमुक्त करनेकी शक्तियाँ हैं।' इस विषयमें मुझे एक कहावत याद आती है—'अज्ञानता भी कभी-कभी सुखमय होती है।' किंतु उस अज्ञानताको दूर करनेके लिये यहाँ गंगाजीके जलके विषयमें कुछ वैज्ञानिक तथ्य प्रस्तुत हैं—

१-मैकग्रिल यूनीवर्सिटीके प्रोफेसरने तीन दशक पूर्व अपने प्रयोगोंद्वारा यह पता लगाया था कि गंगाजलमें हैजेके कीटाणु तीन-चार घंटेमें स्वतः ही मर जाते हैं। यह गंगाजलके कीटनाशक गुण एवं इसकी पवित्रता तथा औषधीय गुणको दर्शाता है।

२-ब्रिटिश मासिक पत्रिका 'गुड हेल्थ' में लिखा है कि टेम्स नदीका रखा हुआ पानी जल्दी ही दूषित हो जाता है जबकि गंगाका जल महीनोंतक वैसा ही बना रहता है। इस गुणके कारण ही भारतवासी गंगाजलको अपने घरमें रखते हैं और यह पवित्र बना रहता है।

३-यूरोपियन डॉ० हाकिन्सने गंगाजलके अनेक दोषनाशक तत्त्वोंका विवेचन किया है तथा यह प्रमाणित किया है कि गंगामें ऐसे जीवाणु और रसायन होते हैं, जो प्रदूषण और अनेक रोगकारी तत्त्वोंको नष्ट कर देते हैं। गंगाजलमें पर्याप्त मात्रामें ऑक्सीजन भी होती है, जो शरीरके स्वस्थ रहनेके लिये अति लाभकारी है।

४-डॉ० एफ० कोहिमान, फ्रांसीसी डॉ० डी० हैरेल और जर्मनीके डॉ० जे० ओलिवर आदिने गंगाजलपर सन् १९२४ ई० से १९३१ ई० के बीच शोध-कार्य किये और उनके अध्ययनोंका परिणाम निकला कि गंगाजल अत्यन्त पवित्र तथा स्वच्छ जल है और इसमें रक्त बढ़ाने तथा कीटाणुओंको नाश करनेकी अद्भुत क्षमता है। इस जलमें अनेक विटामिन आदि भी हैं।

५-डॉ० डी०एस० भार्गव (रुड़की विश्वविद्यालय)-को तीन वर्षोंके अध्ययनसे पता चला कि गंगाजल बी०ओ०डी० (Bio-Chemical Oxygen Demand)-के स्तरको दूसरे जलोंकी तुलनामें तेजीसे कम करता है। यह १५-२० गुना तेजगतिसे जलके कूड़े-करकटको साफ कर देता है।

जाननेयोग्य है कि गंगाजीका जल क्यों पवित्र रहता है? इसके अनेक कारण हैं, जिनमेंसे कुछ निम्न हैं—

१-विज्ञान बताता है कि मुख्यतः दो गैसों—ऑक्सीजन एवं हाइड्रोजनके एक निश्चित अनुपातमें मिलनेसे पानी बनता है। इसका अर्थ हुआ कि गंगाजलमें और जलोंकी तरह ऑक्सीजनकी मात्रा होती है, जो स्वास्थ्यवर्धक होती है। वैज्ञानिक अध्ययनोंसे सिद्ध है कि गंगाजलमें अन्य जलोंकी तुलनामें ऑक्सीजनकी मात्रा अधिक होती है तथा यह अधिक समयतक रहती है। इसको घुली ऑक्सीजन (Dissolved Oxygen) कहा जाता है, इसके कारण गंगाजल पवित्र रहता है।

२-गंगाजल निरन्तर बहते हुए भी और जलोंकी तुलनामें वायुमण्डलसे अधिक मात्रामें ऑक्सीजन गैस ग्रहण करता रहता है। इसके कारण गंगाजलमें निरन्तर

ऑक्सीजनकी काफी मात्रा बनी रहती है, जो मनुष्यके स्वास्थ्यकी दृष्टिसे लाभप्रद होती है।

३-गंगानदीका पानी पहाड़ोंकी बर्फ या ग्लेशियरोंसे निकलता है, जो समुद्रसे ४००० मीटरसे अधिक ऊँचे हैं। इस ऊँचाईपर वातावरण बहुत पवित्र होता है। वहाँ किसी भी प्रकारका प्रदूषण नहीं होता है—न पानीका, न वायुका और न ध्वनिका। साथ ही उद्गम-स्थलपर पानी अत्यन्त ठण्डा होता है। बहुत अधिक ठण्डमें कीटाणु जीवित नहीं रह पाते हैं। अधिकांश मर जाते हैं और जो जीवित रह जाते हैं, वे मृतप्राय हो जाते हैं। फलतः गंगाजल पवित्र रहता है।

४-भागीरथी और उसकी सहायक नदियाँ, जो आगे चलकर गंगानदी कहलाती हैं, जिन पहाड़ोंसे निकली हैं, उन पहाड़ोंकी चट्टानोंमें ऐसे खनिज पदार्थ हैं, जो कीटनाशक हैं; जैसे—गन्धक, चूना आदि। इन पहाड़ोंकी ये चट्टानें समय-समयपर नदियोंमें गिरती रहती हैं तथा पानीके प्रवाहके कारण आपसमें टकराकर टूटती तथा चूरा बनती रहती हैं। गन्धकके गर्म पानीके झरने जो पानीके कीटाणुओंको मारने तथा त्वचाके रोगों और पेटके रोगोंको दूर करनेमें सहायक होते हैं। उदाहरणके लिये बदरीनाथ नगरमें ही तीन गर्म पानी (गन्धक)-के कुण्ड हैं, जो अलकनन्दा नदीमें गिरते हैं। इस तरह गंगा तथा इसकी सहायक नदियोंको निरन्तर कीटनाशक खनिज पदार्थ मिलते रहते हैं, जो गंगाजलको पवित्र रखते हैं।

५-भागीरथी तथा उसकी सहायक नदियाँ जिन पहाड़ोंसे निकली हैं, उनपर घने जंगल भी हैं। इन जंगलोंके कुछ पेड़-पौधे औषधीय गुणयुक्त हैं, जैसे बदरीनाथके ऊपर वेर तथा तुलसीके घने जंगल। इन पेड़ोंकी पत्तियों, टहनियों, जड़ आदिके गुण वर्षाके पानी तथा हवाके कारण गंगाजलमें पहुँचते रहते हैं और धीरे-धीरे कीटाणुओंको मारनेका काम करते रहते हैं।

६-प्रत्येक पानीमें विषाणु (Virus) तथा जीवाणु (Bacteria)-की कोशिकाएँ (Cells) होती हैं। विषाणु कोशिकाओं (Virus cells)-में स्वयं बढ़ने तथा अनेक होनेके गुण नहीं होते हैं, जबकि जीवाणु-कोशिकाओं (Bacteria cells)-में स्वयं बढ़ने तथा अनेक होनेके गुण होते हैं। गंगानदीके पानीकी विषाणु-कोशिकाएँ अन्य नदियोंके जलोंकी विषाणु-कोशिकाओंकी तरह जीवाणु कोशिकाओंपर सवारी कर लेती हैं तथा अपना डी०एन०ए० (D.N.A) (जन्मजात गुण) जीवाणु कोशिकाओंमें इन्जैक्ट करती रहती हैं। इस तरह जीवाणु कोशिकाओंके अन्दर नये जीवाणुओंकी संख्या बढ़ती रहती है, जिनमें दोनोंके डी०एन०ए० होते हैं। फलतः पुरानी जीवाणु कोशिकाका आकार बढ़ता रहता है तथा वह एक सीमाके वाद फट जाती है। इस तरह अनेक स्वतन्त्र नयी कोशिकाएँ वन जाती हैं, जिन्हें बैक्टीरियोफेज्स (Bacteriophages) कहा जाता है। इन बैक्टीरियोफेज्सके कारण गंगाजलमें अनेक बीमारियोंको दूर करनेके गुण आ जाते हैं, जैसे-हैजा, टाइफाइड, प्लेग, जख्म, जल जानेपर बने घाव, हेमेरेजिक सेप्टेसीमिया (Hemorrhagic Septicemia) आदि।

७-गंगाजीके बहते पानीपर जब सूर्यकी सप्तरंगी किरणें काफी समयतक पड़ती हैं तब सूर्यकी गर्मी तथा उसकी सप्तरंगी तरंगोंकी विशेषताओंके कारण गंगाजलके कीटाणु मर जाते हैं तथा पानी स्वच्छ और निर्मल हो जाता है और इस जलमें औषधीय गुण आ जाते हैं।

विज्ञान बताता है कि सूर्यकी सप्तरंगी किरणोंमें अलग-अलग गुण होते हैं, जो गंगाजीके पानीको शुद्ध तथा पवित्र बनाते रहते हैं। उदाहरणके लिये लाल रंगकी किरणमें बहुत गर्मी होती है, जो गंगाजलको गर्मी देती है। सर्वविदित सत्य है कि गर्मी कीटाणुओंको मारती है। इसी तरह सूर्यकी पीले रंगकी किरण पानीको पारदर्शी बनानेमें सहायक होती है। जिस स्थानमें आपरेशन किये जाते हैं, वहाँ पीले रंगके बल्ब लगाये जाते हैं और आज-कल तो सूर्यकी सात रंगोंकी किरणोंसे दवाइयाँ भी बनायी जाती हैं तथा इन किरणोंके गुणोंके समान बिजलीकी तरंगोंमें गुण पैदाकर मनुष्यके विभिन्न अंगोंके सेंकनेका कार्य किया जाता है।

८-गंगा एक बहती हुई नदी है, जिसका पानी ठहरा हुआ नहीं होता है। यह बहता पानी गंगामें फेंके गये कूड़े-करकटको नदीके तलमें बैठने नहीं देता है।

यह कूड़ा गंगाजलके साथ बहता रहता है।

पानीमें जो सूक्ष्म कीटाणु एवं जीवाणु (Micro-organs) होते हैं, वे खुली ऑक्सीजनके कारण गंगाजलमें पड़े दूषित कूड़े-करकटको तोड़ते तथा नष्ट करते रहते हैं। उदाहरणके लिये गंगाजीमें कोई शव बह रहा होता है तो ये सूक्ष्म कीटाणु एवं जीवाणु उस शवको खाकर उसे नष्ट कर डालते हैं। इस तरह गंगानदीके जलमें स्वयं पवित्र होते रहनेकी क्षमता होती है। यही कारण है कि लक्ष्मणझूलेसे हरिद्वारतक जो नगर तथा उद्योगोंका कूड़ा गंगामें प्रवाहित किया जाता है, उससे गंगाका प्रदूषण बहुत बढ़ जाता है, पर जलके सूक्ष्म कीटाणुओं और जीवाणुओं तथा अन्य कारणोंसे गंगानदी स्वयं पवित्र होने लगती है और गढ़मुक्तेश्वरतक यह काफी पवित्र बन जाती है। वैज्ञानिकोंका मत है कि गंगाजलमें कूड़े-करकटको नष्टकर जलको पुनः पवित्र करते रहनेकी क्षमता अन्य नदियोंके जलसे १५ प्रतिशतसे २५ प्रतिशत अधिक होती है।

९-सन् १९६० ई०में Theodore Schwent, George Adams तथा John Wilkes ने यह पता लगाया कि जलकी जीवनशक्तिका रहस्य इसकी लययुक्त गतिमें है। गंगानदीके जटिल भूमितलपर जिससे पानी बहता है, गुरुत्वशक्तिका खिंचाव रहता है। इस गुरुत्वशक्तिके खिंचावके कारण गंगाजल विभिन्न दिशाओंमें बहता है—कभी यह दाँये हाथ बहता है, कभी बाँये हाथ। कभी नीचे जाता है, कभी ऊपर आता है और कभी चक्राकार। इससे स्वाभाविक चक्कर (Swirling) जल-भँवर (Vortex) और कम्पन (Vibration) पैदा होते हैं।

पानीके इस प्रकारके प्रवाहसे पानीमें आक्सीजनकी मात्रा बढ़ जाती है और यह वैसा ही हो जाता है, जैसा कि यह अपने पहाड़ी गन्तव्य स्थानके समय था। पानीका चक्करदार बहना, भँवर और कम्पन फेफड़ों-जैसा कार्य करते हैं और इससे ऑक्सीजनकी मात्रा बढ़ानेके साथ-साथ सूक्ष्म कीटाणुओं और जीवाणुओंके द्वारा कूड़े-करकटको तोड़नेमें मदद मिलती है।

१०-कुछ ही समय पूर्वतककी बात है कि जब कोई श्रद्धालुजन गंगा नदीके पाससे गुजरता था तब वह हाथ जोड़कर गंगा माँको नमस्कार करता था तथा गंगाजीमें पीतलका टुकड़ा या पीतलके बने सिक्के या चाँदीके टुकड़े या चाँदीके सिक्के फेंक देता था। पीतल तथा चाँदी कीटाणुओंको मारनेवाली तथा जलको शुद्ध करनेवाली धातुएँ हैं।

११-गंगानदीमें विभिन्न प्रकारकी मछलियाँ, कछुए, ऊदबिलाव आदि निवास करते हैं। ये एक तरफ तो जलके ऑक्सीजनको कम करते हैं और दूसरी तरफ कीड़े-मकोड़ोंको नष्ट करते रहते हैं। पर गंगानदीके जलका गुण है कि वह वायुमण्डलसे ऑक्सीजन ले लेता है तथा उस कमीको पूरी कर देता है।

१२-गंगानदीके तटपर हजारों वर्षोंतक अनेक तपस्वियोंने तपस्या की है। इन पुनीत आत्माओंकी तपस्या तथा श्रद्धा माँ गंगाके जलको पवित्र ही नहीं आध्यात्मिक बल भी प्रदान करती है। इसी तरह जब लाखों लोग मैयाकी पूजा-अर्चना करते हैं तो उनके श्रद्धासुमन गंगाजीको मिलते हैं, जिससे गंगा पवित्र तथा अधिक बलवती बन जाती हैं। मनोवैज्ञानिक अध्ययनोंने मूर्तियोंके विषयमें प्रतिस्थापित किया है कि मनोभावनाओंकी तरंगोंका प्रभाव भी मूर्तिको पवित्र तथा फलदायक बना देता है। यही बात गंगाजलके बारेमें भी कही जा सकती है।

एक जापानी विद्वान् Masara Emoto ने अध्ययन कर यह साबित किया है कि विभिन्न प्रकारकी तरंगें जो प्रार्थना, शब्दों, विचारों, संगीत, घण्टों आदिकी ध्वनियोंसे उत्पन्न होती हैं तो वे गंगाजलके पानीके परमाणुओंके ढाँचे (Molecular structure)-को बदलकर पानीको शुद्ध करती हैं। जूलियन क्रेण्डल हौलिकने अपनी पुस्तक 'गंगा' में वैज्ञानिक साहित्यके आधारपर गंगाकी पवित्रताके कारणोंको बताया है। इस प्रकार गंगाजलका स्वच्छ, पवित्र एवं उपयोगी होना मात्र धार्मिक विश्वास ही नहीं है, अपितु यह एक वैज्ञानिक सत्य भी है।

गंगाके प्रवाहका अवरुद्ध होना अनिष्टका सूचक

(श्रीटीकारामजी मैठाणी)

गंगा निरन्तरताका प्रतीक है। जब कभी भी प्राकृतिक एवं मानवीय कारणोंसे गंगाका प्रवाह रुका है तो उसका परिणाम अनिष्टकारी हुआ है। मानव समुदायने इसका अनुभव अनादि कालसे किया है, किंतु इससे कोई सबक ग्रहण नहीं किया। इसका ताजा अनुभव १६ जून, सन् २०१३ ई० को हुआ है, जब श्रीकेदारनाथ मन्दिरके ऊपरी हिस्सेमें जल-प्रवाहके अवरुद्ध होनेके फलस्वरूप २०० मीटर लम्बी एवं १५ मीटर गहरी चौराबाड़ी झील अस्तित्वमें आयी एवं जलभारकी प्रचण्ड ऊर्जासे इसके टूटनेपर हुए व्यापक विनाशको कभी भुलाया नहीं जा सकता। इसके व्यापक विनाशमें नदीतटोंके अतिक्रमण एवं श्रीनगरमें बने बाँधकी भूमिकाको नकारा नहीं जा सकता है। इससे हुए जानमालके नुकसानकी क्षतिपूर्ति कभी नहीं हो सकती। ऐसे ही पूर्वमें गंगाका मार्ग अवरुद्ध होनेसे उत्तरकाशी एवं श्रीनगरका आधा शहर जलमग्न हो गया था।

गंगाकी अवरुद्धताके अतिरिक्त इसमें बढ़ते प्रदूषणकी मात्रा मानव-समुदायके भविष्यके लिये खतरेका संकेत है। गंगा अपने मायकेसे ही प्रदूषित होती जा रही है। गोमुखसे गंगासागरतककी यात्रा करनेवाली, करोड़ोंको जीवनदान करनेवाली मोक्षप्रदायिनी गंगा अपने इस निरादरसे आवेशित मुद्रा धारण कर रही है। राजा सगरकी चार-चार पीढ़ियोंके प्रयत्नोंसे भी गंगा इस धरापर नहीं लायी जा सकी थी। तब पाँचवी पीढ़ीके वंशज भगीरथकी घनघोर साधना, तपस्या एवं अथक प्रयत्नोंसे गंगाने इस धरापर आना स्वीकार किया और आज हम अपनी मूर्खतापूर्ण लोलुपता एवं क्षुद्र स्वार्थके वशीभूत हो इस वरदानको मिटानेपर तुले हुए हैं।

राजा भगीरथके प्रयत्नोंसे इस धरापर उतरनेवाली माँ गंगा महौषधि कहलाती थीं। अचेतनको चेतना प्रदान करती थीं—'औषधं जाह्नवीतोयं वैद्यो नारायणो हरिः।' मन्त्रका उच्चारणकर वैद्य औषधि देते थे और रोगियोंकी रुग्णता खत्म हो जाती थी। ऐसा चमत्कार था उसके जलमें। उस वेगवतीकी उफनती लहरें, लवणों, खनिजोंकी अनेकों जड़ी-बूटियोंवाली पर्वतमालाओंसे गुजरते हुए उनके गुणोंको अपने जलमें घोलती हुई आरोग्यवर्धक हो जाती थीं। सैकड़ों वर्षतक भी संग्रहीत किया गंगाजल अपने भीतर विनाशकारी जीवाणुओं एवं विषाणुओंको पनपने नहीं देता था, किंतु आज मनुष्यने अपने क्षुद्र स्वार्थसे इस जलमें विषैले रासायनिक पदार्थों एवं गन्दगीको घोलकर इसे आचमन किये जानेयोग्य भी नहीं रहने दिया है। पर्वतोंपर निरन्तर उत्खनन, बारूदी सुरंगोंका उपयोग, नदीतटपर पाँच सितारा होटलोंका निर्माण, सीवर एवं अन्य औद्योगिक रासायनिक कचरेको जलमें प्रवाहित करना, बाँध-निर्माण आदि क्रिया-कलापोंने गंगाके स्वरूपमें अनिष्टकारी परिवर्तन ला दिया है।

गंगा केवल जल-प्रवाहका नाम नहीं है। यह कोटि-कोटि भारतीयोंका अमृत पेय है। गंगाका अविरल प्रवाह ही उसके द्वारा अपने प्रवाहमार्गमें प्राप्त खनिजों, लवणों एवं जड़ी-बूटियोंके सत्त्वका संश्लेषणकर उन्हें औषधीय शक्ति प्रदान करता है। जगह-जगह नदीके मार्गमें अवरुद्धताने उसकी अविरलताको स्थिरतामें परिवर्तितकर इसमें जड़त्व ला दिया है, जिससे औषधीय संश्लेषणताकी प्रक्रिया समाप्त हो गयी है। इसे हम नदीके रुष्ट होनेके रूपमें भी देख सकते हैं। हमारे स्वार्थपूर्ण क्रिया-कलाप इसे रुष्ट कर रहे हैं और इसकी रुष्टता हमें विनाशकी ओर ले जायगी।

भगवान् शिवकी जटाओंसे उन्मुक्त हुई गंगा विभिन्न धाराओंमें हिमालयकी शृंखलाओंमें अवतरित हुई और यह सब मूल गंगाकी सहायक नदियाँ बनकर उत्तरोत्तर पथमें क्रमशः अपनी मूल धारामें समाहित होती रहीं। ये सारे स्थल तीर्थ बन गये और संगम या प्रयाग कहलाये।

पहला तीर्थ उत्तरकाशीमें (बाड़ाहाट) मणिकर्णिका, जड़भरत एवं गंगाघाट बना। इसके बाद दूसरा प्रयाग गंगा, भिलंगना एवं घृत तीन नदियोंके संगममें त्रीहरी, जिसे कालान्तरमें टिहरीके नामसे जाना गया। इस संगमका नाम गणेशप्रयाग कहा जाता है। इस स्थानपर देशकी तीन महान् विभूतियों स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानन्द और स्वामी रामतीर्थने साधना की थी। स्वामी रामतीर्थ तो अपने प्रयाणकालतक टिहरीमें ही रहे।

टिहरी जनपदके नागरिकोंका माँ गंगासे हमेशासे ही अविरल स्नेह एवं प्रभाव रहा और कई विभूतियोंकी गंगाभक्ति इतनी अधिक थी कि उनको माँका अनिर्वचनीय आशीर्वाद था, जिससे उनकी कीर्ति दिग्दिगन्तरमें फैली। महीधरकीर्ति पंचांगके जनक श्रीमहीधर शर्मा, जो प्रसिद्ध तान्त्रिक भी थे। पं० ईश्वरीदत्त जोशी, जिन्हें घर-गाँवमें माडू पण्डितके नामसे जाना जाता था, उनकी गंगाभक्ति इतनी अनन्य थी कि उनकी वाणीमें सरस्वती सिद्ध हो गयी। जो वह कहते, वह सत्य हो जाता। उन्होंने पं० मदनमोहन मालवीयजीके बुलावेपर काशी जाकर वहाँके पण्डितोंसे शास्त्रार्थ किया, जिससे प्रभावित होकर पं० मालवीयजीने इन्हें महामहोपाध्यायकी उपाधि प्रदान की थी। कई ऐसे अनन्य गंगाभक्त थे, जो चाहे कहीं भी रहें, जबतक माँके दर्शन नहीं कर लेते थे, तबतक अन्न-जल ग्रहण नहीं करते थे। आचार्य श्री-श्रीदेव थपलियाल एवं पं० धर्मानन्द शास्त्री ऐसे ही कुछ नाम थे। काशीके विद्वत् परिषद्की तरह टिहरीमें भी विद्वानोंकी मण्डली थी। पं० हरिदत्त जोशीने कई ग्रन्थोंकी रचना की थी एवं भोलादत्त शास्त्री संस्कृतके मूर्धन्य विद्वान् थे। ऐतिहासिक नगरी टिहरीने माँ गंगाके चरणोंमें स्थान पाया और देशके ऊर्जा-उत्पादनकी आवश्यकताओंके लिये अपना बलिदान देकर टिहरी बाँधके जलाशयमें विलीन हो गयी।

आज गंगाकी शुद्धता, अविरलता एवं पवित्रताके प्रति जनमानस सचेत हो रहा है, साधु-सन्तों, पर्यावरणविदों एवं अनेक सामाजिक संगठनोंकी ओरसे जोर-शोरसे इस बातको उठाया जा रहा है। सरकार भी बढ़ते जनमानसके दबावमें गंगाकी शुद्धता एवं अविरलताके लिये कृतसंकल्प हो रही है। टिहरी नगरवासियोंने तो बाँधकी रूपरेखाके तैयार होनेपर ही इस बातको समझ लिया था कि यह हमारे विकासका बाँध नहीं है, अपितु यह हमारे अस्तित्व एवं आस्थापर भयानक चोट है और गंगाकी शुद्धताके प्रति बाँधके विरुद्ध जन-आन्दोलन छेड़ दिया था। यह आन्दोलन बहुत समयतक चला, किंतु सरकारी मशीनरीके विरुद्ध यह अन्ततः विफल साबित हुआ। गंगाका प्रवाह बाँधा गया, टिहरी जनपदके लगभग नब्बे गाँवोंकी जल-समाधि लेकर, पच्चासी किलोमीटरकी परिधिका जलाशय अस्तित्वमें आया। सरकार, कम्पनियों, बड़े उद्योगपतियों, ठेकेदारोंको पैसे बनानेका मौका मिला, बिजली मिली और टिहरीके निवासियोंको मिला विस्थापन, बेरोजगारी, भटकाव, परेशानी एवं बरबादी। क्षेत्रमें पर्यावरणीय विप्लवके लक्षण अतिवृष्टि, भूक्षरण, बादल फटना-जैसी घटनाएँ बढ़ती जा रही हैं। जलाशयकी बृहत् परिधि अपने निकटवर्ती गाँवोंकी भूमिको निरन्तर क्षरणकर अपनेमें समाते जा रही है और अनेकों नये गाँवोंके अस्तित्वपर खतरा मँडराने लगा है और अब वे अपने विस्थापनकी गुहार लगाने लगे हैं। इतने सबके बावजूद भी राज्यमें बिजलीका संकट न केवल बरकरार है, अपितु और अधिक गहरा गया है। क्षेत्रमें उद्योगोंकी भारी कमीके बावजूद जनता बिजलीकी कटौतीसे निजात नहीं पा सकी है।

एक ऐतिहासिक सर्वसम्पन्न, सांस्कृतिक धरोहर-वाला, कई प्राचीन मन्दिरों एवं इमारतोंका शहर, ज्योतिष एवं तन्त्रशास्त्रका प्राचीन केन्द्र टिहरी नगर जलाशयकी भेंट चढ़ गया, किंतु यह विराम नहीं है। इसके आगे भागीरथीपर ही कोटेश्वर बाँध तैयार हो रहा है। श्रीनगरके पास एक अन्य बाँध बन रहा है। भागीरथी,

भिलंगना, अलकनन्दा, मन्दाकिनी, विष्णुगंगा, पिण्डारकी घाटियोंमें अनेक बाँध परियोजनाओंपर निरन्तर कार्य चल रहा है और अनेकों बाँध परियोजनाएँ भविष्यहेतु प्रस्तावित हैं। बाँधोंसे दूषित जलको लेकर गंगा अन्ततः पर्वतोंकी गोदसे निकलकर मैदानी क्षेत्रके प्रसिद्ध धर्म-स्थल हरिद्वारमें पदार्पण करती हैं। जहाँ इसके तटोंपर अनगिनत आश्रम, होटल, धर्मशालाएँ हैं, जिनका अपशिष्ट भी निरन्तर गंगामें आश्रय लेता है। आगे चलते हुए गंगा अनेक नगरों जिनमें कानपुर, बनारस-जैसे प्रसिद्ध व्यावसायिक, औद्योगिक नगर भी हैं, से गुजरती हैं और इनके अपशिष्टको भी अपनेमें समाहित करते हुए चलती हैं। अनेक मिल, कल-कारखानोंके विषैले रासायनिक त्याज्य अवशेषोंको भी गंगा अपने साथ लेकर बढ़ती जाती है। विषकी प्रधानता अन्ततः गंगाके अमृतको निष्प्रभावी कर देती है।

भारत सरकार भले ही इस दिशामें प्रयत्नशील है, किंतु राज्य सरकारोंके गम्भीर प्रयास, आम जनकी व्यापक भागीदारी, स्वच्छताके प्रति बृहद् सजग चेतना, अपशिष्टके निस्तारणहेतु वैकल्पिक समाधानोंकी खोज आदि बिन्दुओंपर कार्यवाही हुए बगैर इस लक्ष्यको प्राप्त करना आसान न होगा। हमें जलकी स्वच्छताके लिये कुछ निषिद्ध कार्योंकी सूची बनानी होगी और उनको निष्ठापूर्वक लागू करनेके लिये संकल्प लेना होगा। हमें भगीरथके महान् प्रयासोंसे प्राप्त अमृतकी संरक्षाके लिये पुनः भगीरथ-प्रयत्न करना होगा। यही हमारी ओरसे उन महान् पूर्वजों, मन्त्रद्रष्टा महान् ऋषियों-मुनियोंके प्रति कृतज्ञता-ज्ञापन होगा। गंगाके बिना भारतीय संस्कृति एवं वाङ्मयकी कल्पना भी नहीं की जा सकती है। इसका विशाल साहित्य है, सभी प्राचीन ग्रन्थोंमें इसकी महानताका वर्णन है। यह जीवनदायिनी है, मुक्तिदायिनी है, यह धरतीपर जीवनको सँवारती है और भवसागरसे पार लगाती है। इतना ही नहीं गंगाके प्रति सच्ची सेवा-भक्ति रखनेवाला स्वयं तर जाता है और दूसरोंको भी तारनेकी सामर्थ्य रखता है—**'स तरति स तरति स लोकांस्तारयति।'**

गंगा कोटि-कोटि भारतीयोंकी श्रद्धा है, पूजनीया है, संस्कृति है। गंगाकी रक्षा स्वतः भारतीयताकी रक्षा है। सभी श्रद्धावानोंको समझ लेना चाहिये कि गंगाकी शुद्धता बनाये रखनेके लिये हमें यह संकल्प लेना होगा कि हम गंगाको दूषित नहीं करेंगे और किसी अन्यको दूषित नहीं करने देंगे। इसमें हो रहे दूषणको परिमार्जित करेंगे, इस कार्यमें तन-मन-धनसे योगदान करेंगे। ऐसा प्रणकर और इसपर निष्ठापूर्वक कार्य करके हम तो पुण्य प्राप्त करेंगे ही, अपितु अपनी संस्कृति एवं भारतीयताकी रक्षाकर हम अपने कर्तव्यका निर्वहन भी करेंगे और पूर्वजोंके दायित्वसे उऋण भी हो सकेंगे।

गंगा-महिमा

(श्रीगेन्दनलालजी कनौजिया)

चतुरानन पात्र नियोजित है लक्ष्मीपति स्वेद भगीरथ पानी।
शिव शंकर की सुजटा उलझी जग जीवन हेतु विशेष कहानी।
भव तारन को मन शान्ति लिये परिताप मिटावन को वरदानी।
हिमवान धरातल शोभित हो त्रय ताप विमोचन सागर रानी॥

× × × ×

शुभ धार प्रवाहित गोमुख से जग में अनुराग बढ़ावत गंगा।
नव चेतन भाव जगा करके मन में अरविन्द खिलावत गंगा।
कलिकाल के पाप पहाड़ समान मिटाकर नित्य बहावत गंगा।
जनमानस मोह के जाल फँसा उनको उपकार सिखावत गंगा॥

गंग तरंग निमग्न सभी निज जीवन के परिताप मिटाते।
साधन धाम सुयोग जुटा भवबन्धन के सब दोष भगाते।
अन्तर में अनुराग जगा शुचि ज्ञान प्रभा शुभ ज्योति जलाते।
मोह कराल कुबन्धन काट सुमुक्ति विहान दिनेश दिखाते॥

× × × ×

आनन आनन भाव उमंग भरे नव चेतन गंग सुधारा।
ताप मिटे शुचिता पनपे जग मावस बीच मिले उजियारा।
जीवन-जीवन पा करके बन जाय विहान हरे दुख सारा।
ताल, सुछन्द, कला अविराम विकास गहे शुभ पाऊँ किनारा॥

गंगाजल-प्रदूषण—अनुपेक्षणीय सांस्कृतिक विघटन

(प्रो० डॉ० श्रीसीतारामजी झा 'श्याम', एम०ए० (गोल्डमेडलिस्ट), पी-एच०डी०, डी०लिट०)

गंगाजलका पावनतम प्रवाह शुभसंकल्पपूर्वक की गयी महती साधना, असीम श्रद्धाभक्तिसे सम्पन्न अद्भुत-अपूर्व तपश्चर्या तथा लोकमंगलकारी सत्प्रयासके अप्रतिम प्रतिफलके रूपमें सार्वकालिक बनकर जीवनके आन्तरिक अभिमूल्योंके प्रति निखिल मानव-समाजको सहज-स्वाभाविक रीतिसे अनुप्राणित और बहुविध प्रकारसे कृतकृत्य करता रहा है। सबसे उल्लेखनीय सन्दर्भ तो यह है कि सम्पूर्ण विश्वमें भारतीय संस्कृतिको प्राचीनतम एवं श्रेष्ठतम होनेका अतुलनीय गौरव दिव्य गुणयुक्त अमृतकल्प अनुपम निर्मल जलधारासे ही प्राप्त हुआ है—**'सा प्रथमा संस्कृतिर्विश्ववारा।'** (शु०यजु० ७। १४)

अर्थात् विश्वमानवद्वारा वरण करनेयोग्य यह पहली सर्वोत्कृष्ट संस्कृति है।

वेदमें जिस पावन एवं दिव्य जलको मातृ-सदृश बताया गया है, जिसके स्मरणमात्रसे पूर्ण शुद्धि, परम शान्ति, अद्वितीय ऋद्धि-सिद्धि और अभीप्सित आध्यात्मिक आनन्दानुभूति होती है, वह प्रवहमान गंगाजल ही तो है—

आपो अस्मान्मातरः शुन्धयन्तु घृतेन नो घृतप्वः पुनन्तु।
विश्वं हि रिप्रं प्रवहन्ति देवीरुदिदाभ्यः शुचिरा पूत एमि॥
(शु०यजु० ४। २)

अर्थात् हे जलरूप माँ! आप हमें पवित्र करें। यह पवित्र जल हमें यज्ञके योग्य पवित्र बनाये। यह तेजस्वी जल हमारे सभी पापोंका निवारण करे।

निस्सन्देह, गंगाजल प्रशस्ततम नैसर्गिक संस्कारोंमें अन्यतम है। पावन जलका वैशिष्ट्य यह होता है कि वह सारे कल्मषोंको विनष्ट कर देता है। इसके श्रद्धाभक्तिपूर्वक सेवनसे वाणी पवित्र हो जाती है। सुपरिणाम इसका यह होता है कि अनृत वचनके लिये जीवनमें कोई स्थान नहीं रह पाता। ऐसी अलभ्य उपलब्धि हो जानेसे घर-परिवार-समाज-देशसे लेकर समग्र संसारमें विश्वासका शाश्वत प्रतिमान स्थापित हो जायगा। इससे बड़ी सांस्कृतिक देन और कुछ हो नहीं सकती कि सर्वत्र केवल सत्य सुप्रतिष्ठित दिखायी पड़े, झूठ बोलनेकी दुष्प्रवृत्ति किसी व्यक्तिमें शेष ही न रहे—

इदमापः प्र वहत यत् किं च दुरितं मयि।
यद् वाहमभिदुद्रोह यद् वा शेप उतानृतम्॥
(ऋक्० १। २३। २२)

ध्यातव्य है कि वेदने जलको प्राणतत्त्वके रूपमें समादृत किया है, पावन जलमें अमृतका नित्य निवास बताया है। उसमें ऐसे दिव्य औषधीय गुण विद्यमान रहते हैं कि जो भी निष्ठा-विश्वासपूर्वक उसका सेवन करता है, उसके असाध्य रोगका निदान हो जाया करता है—

'अप्स्वन्तरमृतमप्सु भेषजम्।'
(ऋक्० १। २३। १९)

तत्त्वतः निर्मल जल, जिसका सर्वोपरि निदर्शन गंगाजल है, रोग-निवारकके साथ-साथ शुभ संसृति तथा अक्षय संस्कृतिका मूलाधार भी है, इसीलिये मार्जन आदि क्रियाओंमें ऐसे ही पवित्र जलकी महिमा गायी गयी है—

आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता न ऊर्जे दधातन।
महे रणाय चक्षसे।
यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः।
उशतीरिव मातरः।
तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ।
आपो जनयथा च नः।
(ऋक्० १०। ९। १—३)

अर्थात् हे जल! तुम सुखके आधार हो। हमें अन्नप्राप्तिके योग्य करो। हमें भलीभाँति ज्ञान दो। हे जल! जैसे माताएँ बच्चोंको उनकी शारीरिक समृद्धिके लिये अपना स्तनपान कराती हैं, वैसे ही तुम अपना सुखकर रस हमें दो। हे जल! हम पापके विनाशकी इच्छासे तुम्हें अपने मस्तकपर चढ़ाते हैं, हमारी वंशवृद्धि करो।

स्वस्थ जीवन एवं स्वच्छ जलके समवाय सम्बन्धको

अपरिहार्य बताते हुए वेदने स्पष्टतया उद्घोष किया है कि यदि लोग सचमुच सात्त्विक तथा शान्तिपूर्ण जीवन व्यतीत करना चाहते हैं तो जलकी शुद्धता-स्वच्छताके प्रति पूर्ण सतर्क-सचेष्ट रहें, अन्यथा मानवीय संस्कृतिका स्वरूप ही विकृत हो जायगा। अथर्ववेदके एक मन्त्रमें मातृभूमिसे प्रार्थना करते हुए कहा गया है कि हे मातृभूमे! आप हमारी शुद्धताके लिये स्वच्छ जल प्रवाहित करें—'शुद्धा न आपस्तन्वे क्षरन्तु' (अथर्व० १२।१।३०) परंतु, वर्तमान समयमें अधिकांश लोग परम पूजनीया गंगामाताजीके प्रति पूर्ण श्रद्धा-भक्ति रखनेके बदले भीषण उपेक्षाकी भावनासे ग्रस्त हैं, जिससे सांस्कृतिक विघटनका बीभत्स रूप उपस्थित हो गया है। जिस पावन जलसे मानव-जीवन सुशोभित, सुवासित-विभूषित हो, जिसके दर्शनसे जीव धन्य हो जाय, जिसके पूजनसे प्राणी संस्कारित होता हो और जिसकी कृपासे दैहिक-दैविक-भौतिक ताप-शाप तत्क्षण मिट जाते हों, उसे प्रदूषित करना क्या सांस्कृतिक चेतनाके सर्वथा अभावका अभिसूचक नहीं है? निश्चित रूपसे गंगाका प्रदूषित होना मानवताका अधःपतन है, पावनता-विहीन जीवन निकृष्ट जीवका लक्षण होता है। गंगा-यमुनामें कारखानेका घृणित अवशेष प्रवाहित करना नर-पिशाच होनेका अन्यतम उदाहरण है।

प्रदूषण-मुक्त गंगाके लिये कैसी सतर्कता बरती जाय, इस सम्बन्धमें महाकवि विद्यापतिके कथनपर ध्यान देना चाहिये। उन्होंने लिखा है—हे गंगामाता! मैंने महान् अपराध किया है, उसे आप कृपापूर्वक क्षमा करें—स्नानका लोभ संवरण न कर पैरसे पावन गंगाजलका स्पर्श करना पड़ा मुझे—

एक अपराध छमब मोर जानि। परसल माय पाए तुअ पानि॥

(विद्यापति-पदावली)

इसे कहते हैं गंगाजलके प्रति श्रद्धाभक्ति! परंतु जो गंगाको प्रदूषित करनेमें भी अपराध नहीं समझते, उनकी विवेकहीनता किन शब्दोंमें व्यंजित हो सकती है?

गंगाजलको प्रदूषणसे बचानेके लिये सुदृढ़ संकल्पके साथ स्वच्छता अभियान चलाना परम अपेक्षित है। पावन धारा भारतीय संस्कृतिकी मूल पहचान है। दायित्वचेतनाके सत्प्रकाशमें ही इसकी निर्मलता दृष्ट हो सकती है सदा-सर्वदा। हर किसीको इस बातसे अवगत रहना है कि गंगाजल किसी भी प्रकारकी अशान्तिको दूर करने, ताप-शापको मिटानेका सर्वोत्तम उपाय है। ज्ञातव्य है कि वृत्रासुरवधके अनन्तर जब इन्द्रका जीवन पूर्णतः कल्मष-संकुल हो गया था, तब और किसी उपायसे त्राण न मिलनेपर अन्ततोगत्वा गंगाजल-परिपूरित कलशोंसे स्नान करानेपर ही उन्हें शुद्ध और प्रसन्न किया जा सका।

कलशैः स्नापयामासुर्मलं चास्य प्रमोचयन्।

(श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण १।२४।१९)

इसी प्रकार महर्षि वेदव्यासजीने संसारके समस्त लोगोंको अटूट विश्वास दिलाते हुए कहा है कि गंगाजलके पावन संस्पर्शमात्रसे जब शरीरकी राखको भी दिव्यता प्राप्त हो जाती है—सगरपुत्र गंगाजलसे ही पुनः दिव्यरूप प्राप्त हो गये थे, तब जो श्रद्धाभक्तिसे गंगाजलका सेवन करेंगे, उनके जीवनकी सफलता-सार्थकताके सम्बन्धमें किसी प्रकारका सन्देह किया जा सकता है क्या?—

भस्मीभूताङ्गसङ्गेन स्वर्याताः सगरात्मजाः।
किं पुनः श्रद्धया देवीं ये सेवन्ते धृतव्रताः॥

(श्रीमद्भा० ९।९।१३)

तत्त्वतः किसी राष्ट्रकी संस्कृति ही उसकी सही अभिव्यक्ति होती है, उसीके आधारपर सुविकसित रहती है मानवता—'सम्यग् भूषिता च कृतिः संस्कृतिः।' अर्थात् श्रेष्ठ एवं विभूषित कृति संस्कृति कहलाती है। भारतीय संस्कृतिकी प्रतिष्ठापनामें पावन गंगाजल-प्रवाहका स्थान सर्वोपरि रहा है। अस्तु, सांस्कृतिक विघटनको समाप्त करनेके लिये पावन जल तथा दिव्य औषधियोंका संरक्षण-संवर्धन अनिवार्य है। 'माऽपो मौषधीर्हिंसीः' (शु०यजु० ६।२२)।

गंगा-प्रदूषण और उसके निवारणके प्रयास

(डॉ० श्रीअशोकजी पण्ड्या)

निर्मलजला गंगा आज मलप्रवाहिनी बनकर रह गयी हैं, कहते हुए बड़ा दुःख हो रहा है। क्या गंगाजल जहर बनता जा रहा है? क्यों उद्धारकर्त्री भागीरथीका उद्धार आवश्यक हो गया है? ये प्रश्न गंगाके विषयमें उठते हुए हमारे हृदयको वेध रहे हैं। निश्चय ही यह दुःखद है तथापि यह भारतधरा है, सब कुछ ठीक हो जायगा। आइये, कैसे? के उत्तरमें स्थितियों और प्रयासोंके बारेमें जाननेका यत्न करें।

गंगाका उद्भव भले ही गोमुख हो, लेकिन वस्तुतः गंगाका जन्म देवप्रयागमें भागीरथी और अलकनन्दाके संगमोत्तर ही है। यहाँ आकर ही दोनों नदियाँ पहाड़ी पटक और गुर्राना छोड़ कल-कल मैदानी गीत गातीं एक हो गंगा बन जाती हैं। इससे पहले भागीरथी गंगोत्रीसे तो अलकनन्दा विष्णुप्रयागसे पहाड़ी सफर ही तय करती हैं। हाँ, देवप्रयागसे साथ बहते हुए भी काफी दूरतक दोनोंका रंग भूरा और हरा-सा किसी 'पेंटिंग'-सा दिखता हमारा मन मोह लेता है।

यहाँसे ऋषिकेश, हरिद्वार, कानपुर, प्रयाग, काशी और इस तरहके प्रायः सौ शहरोंको दुलारती गंगासागरमें सागरसे भेंट करती अपनी ढाई हजार किलोमीटरकी यात्रा पूर्ण करती है।

यह ज्ञातव्य है कि गंगाका यह विराट् बेसिन प्रायः चालीस करोड़ लोगोंको अपनी गोदमें समाये बैठा है। इतनी बड़ी मात्रामें लोग इसका उपयोग करते हैं, तो साफ है कि प्रदूषण फैलेगा ही। फिर तीर्थाटन न करनेवाले पर्यटक, व्यवसायी और अन्य जीव सभी मिलकर यह प्रदूषण और बढ़ाते हैं, फिर कल-कारखानोंका औद्योगिक मैल भी तो गंगाकी शरण ही तो लेता है। इस तरह गंगाकी चिन्ता बढ़ना भी स्वाभाविक ही है।

इस तरह यह मैल इतना बढ़ जाता है कि गंगाका पानी इसे धोते-धोते आप मैला हो जाता है और गंगा स्वयं अपने आपपर कुढ़ने लगती है। यह विडम्बना नहीं तो और क्या है? सबसे पहले तो हमें यह समझना होगा कि प्रदूषण क्या है? प्रदूषणका सीधा अर्थ है—निर्मलताका अन्त और दोषोंका जमाव। सांस्कारिक भाषामें इसे अशुद्धता तो विज्ञानकी भाषामें प्रदूषण कहा गया है। चूँकि जल घुलनधर्मी है अतः अशुद्धियाँ इसमें घुल जाती हैं और जलका गुणधर्म बदल जाता है। यही प्रदूषण है।

यद्यपि यह आस्थाका प्रश्न है तथापि एक रिपोर्टके अनुसार पन्द्रह हजार टन राख प्रति वर्ष गंगामें बहा दी जाती है। उसी तरह ४९.३४ लाख घन मीटर गन्दगी प्रतिवर्ष गंगामें डाल दी जाती है। परिणाममें प्रदूषण ही प्राप्त होता है।

देखिये, हम गंगामें कितना कचरा डालते हैं—जैसा कि हम जानते हैं गंगा भारतमें गोमुखसे गंगासागरतककी पच्चीस सौ किलोमीटरकी दूरी तय करती है, जिसमें चार राज्योंके हजारों गाँव और शताधिक शहर आते हैं। ये सभी अपना मलजल गंगामें ही डालते हैं। आइये, देखें यह तालिका क्या कहती है—

क्रम	राज्य	गंगाक्षेत्र (नदीकी लम्बाई)	मल जल (सीवेज)
१.	उत्तराखण्ड	४५० कि० मी०	५१.३ मिलियन लीटर प्रतिदिन
२.	उत्तर प्रदेश	१००० कि० मी०	९३७.४ मिलियन लीटर प्रतिदिन
३.	बिहार	४०५ कि० मी०	४०७.२ मिलियन लीटर प्रतिदिन
४.	पश्चिमी बंगाल	५०२ कि० मी०	१३१७.३ मिलियन लीटर प्रतिदिन

इसीसे अन्दाजा लगाया जा सकता है कि गंगा कितना सहन कर रही है।

इन सब विकृतियोंके कारण गंगा इतिहास न बन जाय, इस बातका डर मनीषियोंको लगने लगा है; क्योंकि स्वयं केन्द्रीय जल संसाधन मन्त्रालय भी मान रहा है कि गंगाजलमें 'आर्सेनिक' (धातुविशेष)-की मात्रा मानकसे दस-पन्द्रह गुना ज्यादा दिखायी दे रही है। निःसन्देह यह चिन्ताका विषय होता जा रहा है।

यही नहीं, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयने भी इस चिन्ताके चलते एक शोध करवाया तो पाया कि गंगाके किनारे उगायी साग-सब्जियोंमें कैडमियम, निकिल, क्रोमियम आदि भारी धातुओंकी मात्रा इतनी अधिक है कि इनके खानेसे गम्भीर बीमारियोंकी आशंका बढ़ गयी है। यहाँ चर्म और श्वास रोग तो आम हो गये हैं।

इस तरह हमने ही गंगाको इतना प्रदूषित कर दिया है कि हम चाहें भी तो इसे कैसे बचायें तथापि प्रयास अनवरत हैं।

भारत सरकारने इसे गम्भीरतासे लेते हुए कई योजनाएँ एवं परियोजनाएँ बनायीं और यथेष्ट खर्च भी किया। यही नहीं, गंगाको राष्ट्रीय नदीका दर्जा भी प्रदानकर संरक्षण दिया गया। आइये, इन प्रयासोंकी ओर भी दृष्टिपात करें—

गंगा एक्शन प्लान १ प्रथम चरण—सर्वप्रथम इस ओर सन् १९८५ ई० में ध्यान केन्द्रित किया गया एवं गंगाको प्रदूषणमुक्त करने 'गंगा एक्शन प्लान' परियोजना प्रारम्भ की गयी। तत्कालीन प्रधानमन्त्रीने ४५० करोड़की इस परियोजनाको मंजूरी दी तथा पहला चरण प्रारम्भ हुआ। इसके अन्तर्गत उत्तर प्रदेश, बिहार और पश्चिम बंगालके कुल पच्चीस शहरोंमें विभिन्न योजनाएँ प्रारम्भ हुईं।

द्वितीय चरण—एक्शन प्लानका द्वितीय चरण १९९३ ई० में प्रारम्भ हुआ और इसके लिये ८९५ करोड़ रुपयेकी राशि स्वीकृत की गयी। इसके अन्तर्गत गंगाकी सहायक नदियाँ यमुना, गोमती, दामोदर और महानन्दा भी सम्मिलित की गयीं। सन् २००० तक इन योजनाओंमें १३५० करोड़ रुपये खर्च हो चुके थे एवं यहाँ एक्शन प्लानका दूसरा चरण भी समाप्त हुआ मान लिया गया।

राष्ट्रीय नदी—सन् २००९ ई० में गंगाको 'राष्ट्रीय नदी' का दर्जा और सम्मान दिया गया। राष्ट्रीय गंगा नदी बेसिन ऑथोरिटीका गठनकर गंगा एक्शन प्लान पुनः प्रारम्भ किया गया। इसके अन्तर्गत ३०३१ करोड़ रुपयेका प्रावधान रखा गया। निर्मल और अविरल धाराके लक्ष्याधीन ४४ शहरोंमें ५६ परियोजनाओंका प्रारम्भ किया गया।

नमामि गंगे प्रोजेक्ट—पिछले वर्ष २०१४ ई० में सरकारने उक्त प्रोजेक्टको प्रारम्भकर ६२३७ करोड़ रुपयेकी वित्तीय स्वीकृति जारी की। इसके अन्तर्गत दो योजनाएँ हैं—प्रथमतः गंगाको साफ करनेकी योजनामें २०३७ तथा द्वितीयतः राष्ट्रीय जलमार्ग निर्माण-योजनामें ४२०० करोड़ रुपये खर्च किये जायँगे।

बहरहाल सरकारने कहा है कि 'हम गंगाको २०१९ तक अवश्य प्रदूषणमुक्त कर देंगे।' हम सनातनधर्मी हैं, ईश्वरीय अनुकम्पामें विश्वास रखते हैं। अतः विश्वास है कि भविष्यमें भी हम गंगाका सत्-सान्निध्य प्राप्त करते रहेंगे और 'नमामि गंगे—हर-हर गंगे' बोलते रहेंगे।

नमामि गंगे, हर-हर गंगे

(श्रीगिरीश पंकजजी)

यह मेरी गंगा मैया है, इसको आज बचाना है।
सदियों से बहती धारा का, हमको कर्ज चुकाना है॥

नमामि गंगे, हर-हर गंगे, सबने महिमा गाई है।
तेरा जल है अमृत मैया, पानी नहीं दवाई है।
तेरे इस वैभव को माता, फिर से वापस लाना है॥
जिसने सबको तारा हर पल, वो ही क्यों दुखियारी है।
आज हिमालय की बेटी पर, देखो संकट भारी है।
गंगा है तो भारत है ये, लोगों को समझाना है॥

नदी नहीं, ये माँ से बढ़कर, इसकी महिमा न्यारी है।
जो भी इसकी गोद में आया, उसकी विपदा हारी है।
माँ, तुझको निर्मल रखने का, प्रण हमने अब ठाना है॥
गंगा क्या है ज्ञान हमारा, इसकी क्षति न हो पाए।
बच्चा-बच्चा माँ की खातिर, अब फौरन आगे आए।
हर-हर गंगे, घर-घर गंगे, अब गीत यही दुहराना है॥

यह मेरी गंगा मैया है, इसको आज बचाना है।
सदियों से बहती धारा का, हमको कर्ज चुकाना है॥

गंगाजलके वर्षों खराब नहीं होनेका रहस्य

(श्रीरामजी शास्त्री)

पश्चिमी देश सैकड़ों वर्षोंसे पावन गंगाजलके खराब नहीं होने, नहीं सड़नेकी चमत्कारिक कीमियागरीके रहस्यको जाननेमें लगे हैं। देवभूमि हिमालयसे निकली गंगाके पवित्र जलसे रोगोंके उपचारकी दिव्य शक्तिसे भी पश्चिमी जगत् चकित है। आदिशंकराचार्यने इस बारेमें भगवती भागीरथीसे प्रार्थना करते हुए कहा है—

रोगं शोकं तापं पापं हर मे भगवति कुमतिकलापम्।
त्रिभुवनसारे वसुधाहारे त्वमसि गतिर्मम खलु संसारे॥

श्रीस्कन्दपुराणके काशीखण्डके गंगादशहरास्तोत्रमें भी इसकी पुष्टि करते हुए कहा गया—'रोगस्थो रोगतो मुच्येद्विपदश्च विपद्युतः॥' महर्षि श्रीवाल्मीकिने गंगाष्टकमें गंगाजलकी दिव्य रासायनिक शक्तियोंको सांकेतिक शब्दोंमें कहा—'पापापहारि दुरितारि तरङ्गधारि शैलप्रचारि गिरिराजगुहाविदारि। झङ्कारकारि हरिपादरजोऽपहारि गाङ्गं पुनातु सततं शुभकारि वारि॥' महर्षि वाल्मीकिने स्पष्ट कहा कि गंगाजल पर्वतराज हिमालयकी गुफाओंको विदीर्णकर बहुत दूरतक फैला हुआ है। श्रीबृहन्नारदीय पुराणमें गंगोत्पत्तिके प्रसंगमें गंगाजलको सभी प्रकारके विषोंका नाश करनेवाला कहा गया—'स्थाणुजङ्गमसम्भूतविषहन्त्रि नमोऽस्तु ते। संसारविषनाशिन्यै जीवनायै नमो नमः॥ तापत्रयनिहन्त्र्यै च प्राणेश्वर्यै नमो नमः।' यानी गंगा आधिभौतिक, आधिदैविक, आध्यात्मिक तीनों तापोंको नाश करनेवाली है। इसी प्रसंगमें आगे लिखा है—'दशधा संस्थितैर्दोषैः सर्वैरेव प्रमुच्यते। रोगी प्रमुच्यते रोगान्मुच्येतापन्न आपदः॥'

श्रीब्रह्मवैवर्तपुराणके गंगास्तोत्रमें गंगाकी अलौकिक सिद्धियोंका संकेत है। 'सिद्धिदा सिद्धिसंसेव्या सिद्धिपूज्या सुरेश्वरी। साधिका साधनातुष्टा साधकानां प्रियङ्करी॥ योगगम्या योगिधरा योगप्रीतिविवर्धनी। योगमार्गरता साध्या साधकाभीष्टदायिनी॥' पुराणग्रन्थ, महर्षि वाल्मीकि, आदिशंकराचार्य आदिने अपने स्तोत्रोंमें गंगाकी अद्भुत दिव्य चमत्कारी, रोगोंको हरनेवाली शक्तियोंका सीधा सम्बन्ध हिमालय पर्वतमाला और पर्वतराजमें हजारों वर्षोंसे होनेवाली आध्यात्मिक साधना (जप, तप, स्तोत्र, स्तुति और योग)-की स्पन्दन शक्तिसे माना।

राष्ट्रीय पर्यावरण अभियान्त्रिकी शोध संस्थानने गंगाजलकी विशिष्ट शक्तियोंकी गहन जाँच की। गंगोत्री अथवा गोमुखसे निकली भागीरथी और महादेव शिवकी जटासे निकली अलकनन्दाके पवित्र जलमें बैक्टीरियाको समाप्त करनेकी शक्ति कैसे है? प्रो० जी०डी० अग्रवाल-सदृश आध्यात्मिक कीमियागरोंने रहस्योद्घाटन किया कि गंगाजलके पात्रोंमें रेत और मिट्टी नीचे पेंदेमें बैठ जाती है। इस हिमालयी रेत एवं मिट्टीमें खनिज ताँबा, खनिज क्रोमियम आदि होते हैं। खनिज ताँबेकी विशेषता है कि वह गंगाजलमें उत्पन्न कीटाणुओं और फफूँदीको नष्ट करनेकी शक्ति रखता है (इसी कारण प्राचीनकालसे जम्बूद्वीपमें जल मिट्टीके घड़े और ताम्रपात्रमें रखनेकी समृद्ध परम्परा है। मिट्टीके घड़ेसे भरे हुए जलमें सभी खनिज आते हैं। भारतीय ऋषियोंको ताँबेकी कीटाणु फफूँदीनाशक शक्तिकी जानकारी थी।) दूसरे, क्रोमियम विषाक्तताको जड़-मूलसे हटाता है।

हिमालयके वनोंमें पैदा होनेवाली जड़ी-बूटियाँ भी गंगाजलकी धारामें मिलती हैं। ऊँची पर्वतमालामें पायी जानेवाली तथा कायाकल्पमें सक्षम औषधियाँ गंगाजलमें स्वतः ही घुलती रहती हैं। वैज्ञानिक अध्ययनोंके अनुसार हिमालय-पर्वतमालामें खनिज स्टेराइड और संजीवनी पौधे प्रचुर मात्रामें उपलब्ध हैं। ये विभिन्न नामधारी औषधियाँ गंगाकी धारामें बिना रुकावट मिलती रहती

हैं। यही रहस्य है कि साधक केवल गंगाजल पीकर एवं सूर्य ऊर्जासे स्वस्थ रहते हैं। हिमालयके केदारनाथ, श्रीबदरीविशाल, गंगोत्री आदि हिमनदोंके मध्य असंख्य जलाशयों-झीलोंका जल तेजोविकिरणसे सम्पन्न होता है। हिमनदोंकी बर्फसे प्रत्यावर्तित सूर्य किरणें तेजोविकिरणमय होती हैं। स्मरण रहे कि इन हिमनदोंके मध्य आध्यात्मिक ज्ञानगंज, वसिष्ठ-आश्रम, विश्वामित्र-आश्रम आदि हैं। सूर्यकी संहारक नील किरणें तेजोविकिरण (रेडियोएक्टीविटी)-के साथ गंगाजलमें समाती हैं। फलस्वरूप गंगाजलमें सामान्य जलसे १५० प्रतिशत अधिक तेजोविकिरण मिलनेकी पुष्टि हुई है। वैज्ञानिक शोधके अनुसार सामान्यसे अधिक तेजोविकिरण मानवीय शरीरके लिये हानिकारक नहीं होकर वरदान बना है। इस तेजोविकिरण, ताँबे, क्रोमियम, स्टेराइड, संजीवनी और अन्य खनिज एवं जड़ी-बूटियोंने गंगाजलको रोग हरनेकी अमृतमय दिव्य शक्ति दी। इसे योगियों-साधकोंके तेजोमय स्पन्दनने अदृश्यरूपसे अधिक रहस्यमय शक्तिसम्पन्न किया। पुराणोंसे लेकर आदि शंकराचार्यने इसी रहस्यको समझकर गंगाजलको रोग, शोक, ताप, पापको हरनेवाला कहकर माँ गंगाकी स्तुति की (यहाँ रोग—शरीरगत बीमारी, शोक—मानसिक संताप, ताप-पाप—आध्यात्मिक व्याधि हैं)। वैसे प्रो० अग्रवालके अनुसार हिमालयकी चट्टानोंके तेजोविकिरण खनिज गंगाधारामें विकिरण बढ़ाते हैं।

गंगाकी उत्पत्तिमें त्रिधाराओं भागीरथी, अलकनन्दा एवं मन्दाकिनीका भगवान् शिवकी जटाओं, भगवान् विष्णुके पद एवं श्रीब्रह्माके कमण्डलुसे निकास माना गया है। तीनोंका महासंगम देवप्रयागमें होता है। यदि तीनों नदियोंकी धाराओंको रोककर बाँध बनाये गये और २७ किमीतक लम्बी सुरंगोंमें नदियोंका जल बहाया गया तो उसके दूरगामी प्रभाव होने निश्चित हैं। हिमालयी नदियाँ चट्टानोंके खनिजों, दिव्य जड़ी-बूटियों और तेजोविकिरणके सम्पर्कमें कैसे आयेंगी? राष्ट्रीय पर्यावरण अभियान्त्रिकी संस्थानके अनुसार गंगाजलकी लगभग ९० प्रतिशत मिट्टी-रेत बाँधतलमें बैठ जाती है। (इसीमें खनिज ताँबा, क्रोमियम, तेजोविकिरण धातु आदि होते हैं।) जिससे टिहरी बाँधके जलकी आन्तरिक शक्ति खत्म हो जाती है। टिहरी बाँधसे निकले गंगाजलमें पानीमें नहीं सड़नेकी चमत्कारिक शक्ति नाममात्रकी होती है। जबकि भागीरथी, अलकनन्दाके जलमें नहीं सड़नेवाली विशेषता है। गंगाजलमें कायांशोंकी उत्पत्ति सामान्य जलकी ही तरह होती है, लेकिन उसमें उपस्थित मिट्टी सभीका निवाला बनाती है।

भागीरथी, अलकनन्दाके कायांशोंका अपना ही महत्त्व है। वे गंगाकी दोनों नदियोंके जलमें पैदा होनेवाले कीड़ोंको जन्मसे पहले खत्मकर शुद्ध सौ टंच सोना अर्थात् रोगनाशक अमृतमय रूप देते हैं। यह चकित करता है कि ये कायांश हिमालयीय वनस्पतिमें भी मिलते हैं। हिमालयमें उत्तरमें ३०°५५′ एवं पूरबमें ७९°७′ स्थित गंगा १३८०० फीटसे भी ऊपरसे निकलती हैं। गंगोत्रीसे २ मील दक्षिणमें बिन्दुसर स्थलपर महाराजा भगीरथने महादेव नीलकण्ठ शिवकी कठोर तपस्या की। बिन्दुसरके ऊपर हिमनदोंका अपना रहस्यलोक है। हिमनदोंके जलमें अप्रत्याशित रूपसे चमत्कारिक औषधीय शक्ति होना पाया गया है। इन हिमनदोंमें भारतीय योगी साधु आदि शून्यसे नीचेकी हड्डियोंको गलानेवाली सर्दीमें नंगे भस्मलिपे शरीर और लँगोटीमें नंगे पैर विचरण करते हैं। इन साधुओंके चलनेकी गति सामान्य मानवकी चालकी तुलनामें तेज भागनेके समान होती है। साधु प्रातः अरुणोदयके सूर्यकी ऊर्जाका पान करते हैं और गंगाजलसे तृप्त होते हैं। वैज्ञानिक अभी अध्यात्म-जगत् और गंगाके सम्बन्धको समझनेमें असमर्थ हैं। वे नहीं जानते कि गंगासे सम्बन्धित चार धाम पवित्र तीर्थ हैं। गंगा स्वयम्भू तीर्थ है। तीर्थके बारेमें लिखा है—'रजस्तमोविरहितैस्तपसा धूतकल्मषैः। यदध्यासितमर्हद्भिस्तद्धि तीर्थं प्रचक्षते॥'

गंगाका अस्तित्व बचाना—एक चुनौती

(श्रीनरेन्द्रकुमारजी शर्मा, एम० ए०, बी० एड०)

पूजनीय ग्रन्थ स्कन्दपुराणके एक प्रसंगानुसार सूर्यवंशके महातेजस्वी, परम धार्मिक राजा भगीरथ अपने पूर्वजोंका उद्धार करनेकी इच्छासे, हिमालय पर्वतपर तपस्या करने गये। उनके कठिन तपसे प्रसन्न होकर ब्रह्मद्रवा गंगाजी पृथ्वीपर आयीं।
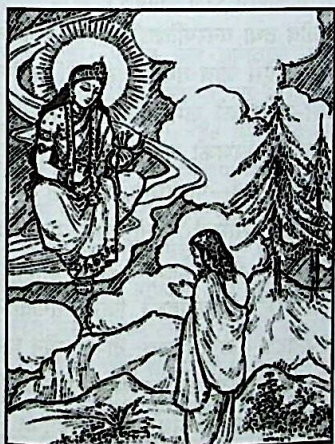
भगीरथके प्रयाससे स्वर्गसे पृथ्वीपर पृथ्वीवासियोंका उद्धार करनेहेतु उतरी गंगा समाजके हर वर्गकी आस्था एवं उपासनाका केन्द्र रही हैं। गोमुखसे चलकर गंगा अनेक दुर्गम रास्तोंको पार करती हुई हरिद्वार आती हैं। गोमुखसे हरिद्वारका मार्ग दुर्गम होनेके साथ-साथ बहुत सुरम्य भी है, यहाँ अनेकानेक दुर्लभ औषधियाँ, वनस्पतियाँ एवं बूटियाँ जड़रूपमें विद्यमान हैं; इनके सम्पर्कमें आनेसे गंगाजल औषधीय गुणोंसे भी भरपूर हो जाता है। अनेक वैज्ञानिक शोधोंसे यह ज्ञात हुआ कि गंगाजलमें जीवाणुभोजी (बैक्टीरियोफेज) तत्त्व मौजूद रहते हैं। जिनके चलते गंगाजल कभी सड़ता नहीं है और अनेक प्रकारकी औषधियोंका सेवन, यदि गंगाजलके साथ किया जाय, तो लाभ कई गुणा मिलता है।

परंतु आज स्थिति कुछ और हो गयी है, मनुष्य जो कि गंगाजीको 'मैया' सम्बोधनसे पुकारता है, माँके आनन्ददायी आँचलको, माँके जीवनदायीरूपको वह छिन्न-भिन्न करनेपर लगा हुआ है। गंगा-किनारे बसे ११८ कस्बे एवं शहर, १६१९ गाँव सभी अपना प्रदूषित जल गंगाजीमें बहा रहे हैं। प्रदूषित जलके अलावा गंगामें ठोस अपशिष्ट, कचरा एवं औद्योगिक रासायनिक अपशिष्ट मिला दिया जाता है, जिससे न केवल गंगाजलकी पवित्रता भंग हुई है, बल्कि उसके अमृतत्व गुणका भी लोप होने लगा है। यदि यही स्थिति रही तो वह दिन दूर नहीं जब इस पावन नदीका अस्तित्व ही समाप्तिके मुहानेपर होगा। मानव-विकृतिका एक रूप यह भी है कि बढ़ती बेतहाशा जनसंख्याके अनुरूप बिजली-उत्पादनके लिये गंगाका प्रवाह ही कैद कर लिया गया। टिहरी बाँधसे पूरा जल नहीं छोड़ा जाता। इस कारण गंगाका वेग प्रभावित हुआ है। नदियोंके वेगके कारण अनेक अशुद्धियाँ कुछ किलोमीटरतक चलकर शुद्ध हो जाती हैं अर्थात् प्रदूषित जल भी शुद्धावस्थामें आ जाता है।

विशेषरूपसे १९८०-९० ई० के दशकमें वैश्वीकरणकी अन्धी दौड़के साथ-साथ, इन पतित-पावनी गंगाके भी दुर्दिन शुरू हो गये। कारखानोंका लाखों गैलन रसायनयुक्त प्रदूषित पानी गंगामें मिलाया जाने लगा। दूसरी ओर मनमाने ढंगसे फैले शहरोंके सीवर भी गंगाजीमें डाल दिये जाते हैं। जरा कल्पना करें कि उन स्थानोंपर क्या दुर्गति होती होगी, जहाँ ये अपशिष्ट मिलाये जाते हैं। विशेषज्ञोंकी एक टीमकी रिपोर्टके अनुसार गंगाके तटपर बसे सभी कस्बे एवं गाँव ३६३.६ करोड़ लीटर/प्रतिदिन गन्दा पानी पैदा करते हैं और सीवेज ट्रीटमेंट प्लाण्ट मात्र १०२.७ करोड़ लीटर पानीका शोधनकर प्रदूषण रोकनेके प्रयास कर पाते हैं।

गंगामें प्रदूषण रोकनेके प्रयास—लगभग तीस

वर्षोंसे सरकारी, गैर सरकारी और निजी संस्थानोंद्वारा गंगाको प्रदूषणमुक्त बनानेके प्रयास किये जा रहे हैं, परंतु वे सब 'ऊँटके मुँहमें जीरा' कहावतको चरितार्थ करते नजर आ रहे हैं। १९८६ ई० में तत्कालीन प्रधानमन्त्रीने 'गंगा एक्शन प्लान' के लिये स्वीकृति दिलवायी और कार्य आरम्भ हुआ। इस योजनाका उद्देश्य नदीका प्रदूषण रोकना और नदीके जलकी गुणवत्तामें सुधार करना था, परंतु प्रयास प्रयासभर ही रहा। यथेष्ट सफलता नहीं मिल पायी। लगभग चार वर्ष पूर्व गंगाके महत्त्व एवं पावन स्वरूपको समझते हुए शान्तिकुंज'द्वारा 'निर्मल गंगाजल अभियान' कार्यक्रम शुरू किया गया है, जिसमें गोमुखसे गंगासागरतक २५२५ कि०मी० की दूरीतक स्वच्छता अभियान चलाया जा रहा है, यह कार्य १२ वर्षोंतक चलनेका अनुमान है, इसे पाँच चरणोंमें पूरा किया जाना है।

सात आई०आई०टी० (दिल्ली, मद्रास, कानपुर, रुड़की, खड़गपुर, मुम्बई एवं गोवाहाटी)-के वैज्ञानिकोंके एक समूहने सम्मिलित रूपसे 'गंगा रीवर बेसिन मैनेजमेण्ट प्लान-२०१५' (जी०आर०बी०एम०पी) तैयारकर जनवरी माहमें पर्यावरण मन्त्रालयके समक्ष प्रस्तुत किया है। शुरुआतमें आई०आई०टी० कानपुर तथा ओवल आब्जर्वर फाउण्डेशनद्वारा आयोजित एक सेमिनारमें आई०आई०टी० ने गंगाके उद्धार एवं स्वच्छीकरणके लिये तैयारकर प्रोजैक्टके प्रारूपको साझा किया। इस प्रोजैक्टको तैयार करनेमें आई०आई०टी० के अलावा लगभग १५० राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय सदस्योंने सहयोग किया है।

वर्तमान भारत सरकारने भी गंगाकी सफाई और संरक्षणके लिये अलगसे मन्त्रालय बना दिया है और साथ ही 'नमामि गङ्गे' नामसे एक योजना चलायी है।

गंगाको प्रदूषणसे बचानेके उपाय—गंगाको प्रदूषणसे बचानेके लिये यदि निम्नलिखित बिन्दुओंपर ध्यान दिया जाय तो सम्भव है कि कुछ सार्थक परिणाम मिलें—

१. गंगाके किनारे बसे शहरों, कस्बों तथा ग्रामोंमें उच्च क्षमतावाले एस०टी०पी० (सीवेज ट्रीटमेन्ट प्लाण्ट) लगवाये जायँ ताकि गंगामें पड़नेवाला प्रदूषक पानी इन यन्त्रोंद्वारा शोधित किया जा सके।

२. कस्बों एवं शहरोंका गन्दा पानी सीधे नदी जलमें डालनेपर प्रतिबन्ध लगाना चाहिये, आवश्यकतानुसार कानूनका भी सहारा लेना चाहिये।

३. जीव तथा वनस्पतिशास्त्रियोंका योगदान लेना चाहिये कि वे ऐसे जीव तथा वनस्पति विकसित करें, जिनसे जल-प्रदूषणको कम किया जा सके।

४. जन साधारणको जागरूक किया जाय कि वे नदीमें अपशिष्ट यथा—पॉलीथीन, अधजले शव, खराब हो चुकी खाद्य सामग्री, गली-सड़ी वनस्पति तथा रसायन न डालें। प्राय: देखनेमें आता है कि गंगाके आसपासके क्षेत्रोंमें शवदाहकी क्रिया गंगातटपर की जाती है। शवदाह-क्रियामें प्राय: दो-से-तीन घण्टे लग जाते हैं, वहाँसे लोगोंको घर वापसीकी चिन्ता रहती है। अत: शीघ्रतावश आधे-अधूरे शव दहनकर शेषको नदीमें ही प्रवाहित कर देते हैं। इसपर प्रतिबन्ध लगाना जरूरी है।

५. नगर पंचायतों, ग्राम पंचायतों, विद्यालयों तथा सामूहिक संगठनोंके माध्यमसे लोगोंको गंगाके महत्त्व, स्थिति एवं सुधारके विषयमें सर्वांगरूपसे समझाया जाय तथा उन्हें संकल्प कराया जाय कि 'हम व्यक्तिगत रूपसे गंगाको प्रदूषित नहीं करेंगे।'

६. वैज्ञानिक शोधोंसे यह सिद्ध हो चुका है कि बालू अनेक प्रदूषकोंको सोख लेती है तथा जलको स्वच्छ कर देती है, इसलिये बालूके खननपर प्रतिबन्ध लगाया जाय।

७. सरकार अपने साथ जन साधारणको जोड़कर अपने विशेष प्रयास करे।

८. नदीके जलका वेग बढ़ाया जाय ताकि प्रदूषक तत्त्वोंका तन्वीकरण प्राकृतिक रूपसे हो सके।

गंगाके अस्तित्वको देवभूमिके ४५० बाँधोंसे खतरा!

देशके विशेषज्ञोंके अनुसार देवभूमिकी महानदी गंगा (अलकनन्दा, मन्दाकिनी, भागीरथी, पिण्डार गंगा, श्वेतगंगा और यमुना आदि)-को ४५० बाँधोंकी परियोजनाओंसे भारी खतरा है। देवभूमि उत्तराखण्डमें विद्युत् उत्पादनहेतु २५० के आसपास परियोजनाओंके कारण पर्वतीय वन उजड़ रहे हैं और नदियोंके मुहाने सूखते जा रहे हैं।

चौंकें नहीं! पवित्र चार धामवाले उत्तराखण्डमें प्रत्येक २० से २५ किलोमीटरपर एक विद्युत् परियोजना प्रस्तावित है। सन् १९८० ई० से अबतक राज्यमें ८०८२६.९१ हेक्टेयर वन समाप्त हो चुके हैं। वैसे आधिकारिक रूपसे जलविद्युत्-घरोंके लिये ५३११.११ हेक्टेयर जमीन काममें लेनेकी बात की जा रही है।

प्रोफेसर जी०डी० अग्रवाल और नेशनल इन्वायरमेन्टल इंजीनियरिंग रिसर्च इंस्टीट्यूट (नीरी)-ने टिहरीबाँधके कारण 'गंगाजलके वर्षों नहीं सड़नेकी अद्भुत चमत्कारिक विशेषतापर प्रतिकूल प्रभावकी चेतावनी दी है।' गंगाजलमें यह चमत्कारिक शक्ति मानव शरीरके अनुकूल रेडीएशन (रेडियोएक्टिव विकिरण), उत्तराखण्डके पर्वतोंकी रेतमें प्राप्त होने वाले दुर्लभ खनिजों और विशेष औषधीय शक्तिमती वनस्पतियोंसे आती है। प्रख्यात प्रोफेसर रवि चोपड़ाने गंगाकी नदियोंको लम्बी सुरंगोंसे लाकर बाँधोंमें छोड़नेके खतरोंसे सावधान किया है। उत्तराखण्डमें नदियोंको बाँधोंमें छोड़नेवाली सुरंगें २८ किमीतक लम्बी हैं। इन सुरंगोंके लिये उत्तराखण्डके कच्चे पहाड़ोंमें दो कार एक साथ चल सकें—इतने विशाल छिद्र किये गये। इसके परिणामस्वरूप समूची पारिस्थितिकी ही रूपान्तरित हो गयी है। यह देखा गया है कि सुरंगोंकी वजहसे पर्वत-शिखरके आसपास अचानक पानी निकलने लगा। यह विडम्बना है कि राज्य सरकार बिजलीघर-निर्माणमें पर्यावरण एवं नदियोंके अस्तित्वके खतरेको भूल गयी। यानी कथित विकास ही परमपावन गंगाके लिये विनाशक बना है।

केन्द्रीय अन्तर मन्त्रिमण्डलीय समूहकी मार्च, सन् २०१३ ई० की रिपोर्टके अनुसार गंगा आदि नदियोंके उच्चतम स्तरपर निर्माणसे प्रदूषणका भारी खतरा पैदा हुआ है। जल-बिजलीघरोंके लिये जल-विदोहनसे गंगाके स्वास्थ्यको संकट उत्पन्न हुआ है। राज्यमें ६९ जल-विद्युत् परियोजनाओंके कारण अलकनन्दाका ६५ प्रतिशत और गंगोत्रीसे निकली भागीरथीका ८१ प्रतिशत प्रवाह प्रभावित हुआ है। समूहने सिफारिश की है कि छः नदियोंको मूलरूपमें रखा जाय एवं नदियोंके कुल जलभागको जल-बिजलीघर परियोजनाओंसे मुक्त रखा जाय। रिपोर्टके अनुसार अलकनन्दा और भागीरथीके मुहानेपर १८५१ मेगावाट बिजली-उत्पादनके लिये १४ परियोजनाओंका निर्माण विभिन्न चरणोंमें है। साथ ही ४५४४ मेगावाट बिजलीकी ३९ परियोजनाओंकी योजना तैयार की जा रही है।

उत्तराखण्डमें पावन गंगाके निर्मल जलके अविरल प्रवाहके लिये टिहरी बाँधके निर्माण और मूल टिहरी डूबनेके समय भी प्रचण्ड आन्दोलन चला। सन् २०१०-२०११ ई० में देवसारी जल बिजलीघर योजनाके विरुद्ध तीन जन सुनवाई की गयी। यह परियोजना पिन्डारगंगापर स्थापित होनी है। देवभूमिमें मातु जनसंगठन, भूस्वामी संघर्ष समिति आदिने जंगी सभाएँ कीं। उनका सनसनीखेज आरोप है कि टिहरी बाँधके विस्थापितोंको अभीतक भूमि-अधिकार और दूसरी सुविधाएँ नहीं मिलीं।

उत्तराखण्डमें बाँध और जलबिजलीघर परियोजनाओंकी मार उत्तरकाशी, रुद्रप्रयाग, चमोली, पिथौरागढ़, टिहरी आदि जिलोंपर पड़ी है। जून २०१३ ई० में केदारनाथमें जलप्रलयने उत्तराखण्डकी निर्माण परियोजनाओंको कटघरेमें खड़ा कर दिया। यमुनोत्री, गंगोत्री, केदारनाथ, बदरीविशालके हिमनदोंसे बनी झीलोंके खतरोंने हाहाकार मचाया। यह आश्चर्यजनक है कि

गंगोत्रीके उद्गम गोमुखके समीप बहुमंजिला भवनोंका निर्माण कैसे हुआ? फलस्वरूप गंगोत्री-हिमनद ५ किमी० पीछे सरक गया। यमुनोत्रीके उद्गम हिमनदकी स्थिति भी अधिक अच्छी नहीं है। बदरीविशालके ऊपर हिमनदकी झील टूटनेका संकट मँडरा रहा है। यह विडम्बना है कि भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आई० आई० टी०) नेशनल गंगा रीवर बेसिन अथारिटीके लिये गंगाजलका प्रबन्धन प्रारूप बनानेमें लगे हैं। विशेषज्ञोंने धर्माचार्योंसे पूछा कि गंगामें जलप्रवाह कितना होना चाहिये? प्रो० अग्रवाल इस प्रश्नको ही गलत मानते हैं। भागवत आदि सनातन धर्मग्रन्थोंके अनुसार पतितपावनी गंगाने अपने उद्गमसे १२ कोसतक और तीरोंपर २-२ कोसतक किसी भी प्रकारका निर्माण नहीं करनेकी चेतावनी दी है अन्यथा गंगा महाकालीके रूपमें विध्वंस करेगी (पुरानी गणनामें एक कोस मीलके बराबर है। अतः २ कोस ३.५ किलोमीटर और १२ कोस लगभग ३९ किलोमीटरके बराबर है।)

अन्तमें सर्वोच्च न्यायालयने केन्द्रीय वन एवं पर्यावरण मन्त्रालयसे २४ जल बिजली परियोजनाओंमेंसे २३ की जाँच और सभी निर्माण बन्द करनेके आदेश दे दिये। उत्तराखण्डमें भी परियोजना निर्माणोंके विशेषज्ञ जाँच दलकी रिपोर्टने हाहाकार मचाया। रिपोर्टने रहस्योद्घाटन किया कि कुछ बाँध जैविक विविधतावाले २२०० से २५०० मीटरके शीर्ष पर्वतोंपर स्थित हैं। यह क्षेत्र मूलरूपसे हिमनद और संवेदनशील पर्यावरणके सघन क्षेत्रमें आता है। इस क्षेत्रमें वर्षा होनेपर भारी संख्यामें पर्वतोंसे भूस्खलन और रेत गिरनेका महासंकट पैदा होता रहता है। जिससे हिमालयीय हिमनद (यमुनोत्री हिमनद, गंगोत्री हिमनद, केदार हिमनद, बदरीविशाल हिमनद, पिण्डार हिमनद) पीछे खिसकनेको विवश होते हैं। ऐसेमें ये बाँध इस क्षेत्रमें तबाहीका रौद्र ताण्डव मचाते हैं। जैसा कि जून, सन् २०१३ ई० में विष्णुप्रयाग-बाँधमें केदारनाथ त्रासदीके समय हुआ। उत्तराखण्ड बुनियादी रूपसे गंगा, यमुना, सरस्वतीका क्षेत्र है। गंगा आदिके बहावके मार्गमें परियोजनाओंके निर्माणसे राज्यका जल दूषित हो रहा है। प्रदेशमें कुछ स्थानोंमें नदीमें मल-मूत्र भी प्रवाहित हो रहा है। अतः पूर्वमें गंगा, अलकनन्दा, भागीरथी, मन्दाकिनी आदिके पवित्र जलको शुद्ध एवं निर्मल करनेपर भारी बजट बेकार गया।

दिल्लीमें गंगामन्थनमें भी वक्ताओंने बाँधोंसे गंगाके अस्तित्वपर खतरेसे सावधान किया, लेकिन अविरल गंगा, निर्मल गंगाके लिये हिमनदोंके संकुचन, हिमनदोंके पीछे सरकने, उत्तराखण्डमें उत्तरकाशी, रुद्रप्रयाग, चमोली, पिथौरागढ़, टिहरी, गढ़वाल आदिमें वनोंका विनाश, भूस्खलन, कच्चे पहाड़ोंके सीनेमें गहरी सुरंगें आदिको रोकना मूलभूत आवश्यकता है। गंगा देशकी वैदिक सभ्यता-संस्कृतिका मूलाधार है। इसलिये गंगोत्री-गोमुखको बचानेका महाभियान आवश्यक है।—श्रीरामजी शास्त्री

नमामि गंगे

(श्रीसंजीव मनोहरजी साहिल)

माते! तुम्हें प्रणाम बहती रहना अविराम माते! तुम्हें प्रणाम।

गंगोत्री से चलती हो तुम देवप्रयाग तक आती हो।
अलकनन्दा से मिलन तुम्हारा गंगा फिर कहलाती हो॥
पर्वतराज अजिर के ऊपर अठखेली करती जाती हो।
जिस पथ से जाती हो तुम जीवन धारा बन जाती हो॥
भारत को खुशहाल बनाने मैदानों पर आती हो।
उर्वर मृदा बनाने को बढ़ती हो अविराम॥ माते!०

भारत की हो जीवन-धारा रूप तुम्हारा कितना न्यारा।
माँ के आँचल जैसी तुम ममता ही बरसाती तुम॥
तुंग हिमालय से उतरी हो स्वच्छ नीर की बदली हो।
भारत पर तुम छाई हो सोम अनोखा लाई हो॥
देवनदी कहलाती हो तुम रत्नाकर को जाती हो तुम।
देकर जीवन का उपहार लेती नहीं विराम॥ माते!०

अगर टिहरी बाँध टूटा तो ?
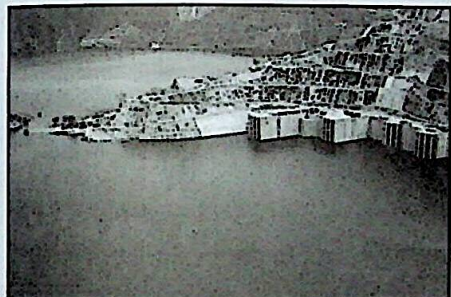
प्रसिद्ध अमेरिकी भूकम्पवेत्ता प्रो० ब्रनेके अनुसार 'यदि उनके देशमें यह बाँध होता तो इसे कदापि अनुमति न मिलती; क्योंकि यह बाँध उच्च भूकम्पवाले क्षेत्रमें बना है। ध्यान रहे कि सन् १९९१ ई० में उत्तरकाशीमें जो भूकम्प आया था, वह रियक्टर पैमानेपर ८.५ की तीव्रताका था। टिहरी बाँधका डिजायन, जिसे रूसी एवं भारतीय विशेषज्ञोंने तैयार किया है, केवल ९ एम० एम० तीव्रताके भूकम्पको सहन कर सकता है, परंतु इससे अधिक पैमानेका भूकम्प आनेपर यह धराशायी हो जायगा। भूकम्पकी स्थितिमें यदि यह बाँध टूटा तो जो तबाही मचेगी, उसकी कल्पना करना भी कठिन है। इस बाँधके टूटनेपर समूचा आर्यावर्त, उसकी सभ्यता नष्ट हो जायगी। प० बंगालतक उसका व्यापक दुष्प्रभाव होगा। मेरठ, हापुड़, बुलन्दशहरमें साढ़े ८ मीटरसे १० मीटरतक पानी-ही-पानी होगा। हरिद्वार और ऋषिकेशका तो नामोनिशां ही न बचेगा।

गौरतलब है कि विश्वमें वर्तमान समयमें कुल ८,९२५ बड़े बाँध हैं, जिनमेंसे ५३५ अपनी उपयोगिता खो चुके हैं। इनमें भी २०२ को अत्यन्त आपदाकारक माना गया है। भारतमें अबतक लगभग ४० बाँध असफल हो चुके हैं। सन् १९७९ ई० में गुजरातमें जब मच्छू बाँध टूटा तो मात्र १५ मिनटमें मोरबी कस्बा पूरी तरह जलमग्न हो गया। अक्टूबर सन् १९६३ ई० में इटलीमें वेएण्ट बाँधके टूटनेसे मात्र ७ मिनटमें ३००० लोग मारे गये तथा निचले इलाकोंमें २६५ मीटर पानी भर गया। अनेक देशोंने ऊँचे पहाड़ी क्षेत्रोंमें बड़े बाँधोंके निर्माणपर रोक लगा रखी है।

केन्द्रीय पर्यावरण-मन्त्रालयके एक दस्तावेजमें टिहरी बाँधके टूटनेकी दशामें सम्भावित नुकसानको दर्शानेवाली निम्न तालिका दी गयी है। ऐसी स्थितिमें पूरा जलाशय २२ मिनटमें खाली हो जायगा। सैकड़ों मीटर ऊँची पानीकी दीवारें सुनामी लहरोंको मात करते हुए दिल्लीतक अपनी प्रलय-लीला दिखायेंगी।

कहाँ कितने मीटर ऊँचा जल-प्रलय होगा, इस तालिकासे स्पष्ट है—

स्थान	टिहरी बाँधसे दूरी	पानी पहुँचनेमें लगनेवाला समय	पानीकी दीवारकी ऊँचाई
ऋषिकेश	८० किमी	६३ मिनट	२५० मीटर
हरिद्वार	१०४ किमी	८० मिनट	२३२ मीटर
बिजनौर	१७९ किमी	४ घंटे ४५ मिनट	१७.७२ मीटर
मेरठ	२१४ किमी	७ घंटे २५ मिनट	९.८५ मीटर
हापुड़	२४६.५ किमी	९ घंटे ५० मिनट	८.७८ मीटर
बुलंदशहर	२६६.५ किमी	१२ घंटे	८.५ मीटर

प्रस्तुति—श्रीअजयसिंहलजी 'अजेय'

उत्तराखण्डमें गंगा नदी-घाटीमें जल-विद्युत्-परियोजनाएँ

नक्शा निर्माता – साउथ एशिया नैटवर्क ऑन डैम्स, रीवर्स एंड पीपुल www.sandrp.in
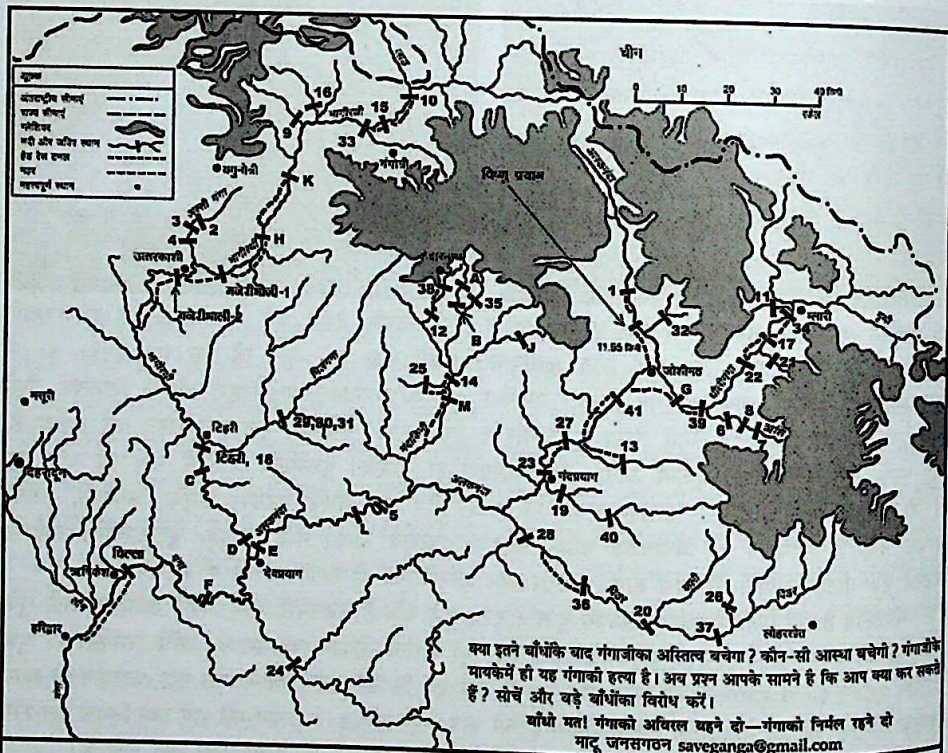
निर्माणाधीन परियोजनाएं

A कालीगंगा–1 (4 मेवा)
B कालीगंगा–2 (6 मेवा)
C कोटेश्वर (400 मेवा)
D कोटली भेल 1A (195 मेवा)
E कोटली भेल 1B (320 मेवा)
F कोटली भेल 2 (530 मेवा)
G तपोवन विष्णुगाड (520 मेवा)
H पाला-मनेरी (480 मेवा)
J मद्महेश्वर (10 मेवा)
K लोहारीनाग-पाला (600 मेवा)
L श्रीनगर (330 मेवा)
M सिंगोली-भटवाड़ी (99 मेवा)

कार्यरत परियोजनाएं

चिल्ला (144 मेवा)
टिहरी (1000 मेवा)
मनेरी भाली–1 (90 मेवा)
मनेरी भाली–2 (304 मेवा)
विष्णु-प्रयाग (400 मेवा)

प्रस्तावित परियोजनाएं (10 मेवा से ऊपर)

1 अलकनंदा (300 मेवा)
2 अस्सीगंगा–1 (4.5 मेवा)
3 अस्सीगंगा–2 (4.5 मेवा)
4 अस्सीगंगा–3 (7.3 मेवा)
5 उत्यासू बांध (1-6) (745 मेवा)
6 ऋषि गंगा (13.2 मेवा)
7 ऋषि गंगा–1 (70 मेवा)
8 ऋषि गंगा–2 (35 मेवा)
9 काकोरागाड (12.5 मेवा)
10 करमोली (140 मेवा)
11 कोसा (24 मेवा)
12 गौरीकुंड (18.6 मेवा)
13 गोहाना ताल (60 मेवा)
14 चुन्नी सेमी (24 मेवा)
15 जाडगंगा (50 मेवा)
16 जालनधरीगाड (11.8 मेवा)
17 झेलम-तमक (60 मेवा)
18 टिहरी पीएसएस (1000 मेवा)
19 देवली (13 मेवा)
20 देवसारी बांध (300 मेवा)
21 दुना गिरि (10 मेवा)
22 तमक-लता (250 मेवा)
23 नंद-प्रयाग लंगासू (100 मेवा)
24 न्यार (17 मेवा)
25 फाटा-ब्यूंग (76 मेवा)
26 बुआरा (14 मेवा)
27 बोवाला नंद-प्रयाग (300 मेवा)
28 थंगरी (44 मेवा)
29 भिलंगना–1 (22.5 मेवा)
30 भिलंगना–2 (63 मेवा)
31 भिलंगना–3 (24 मेवा)
32 भुंदर गंगा (24.3 मेवा)
33 भैरो घाटी (381 मेवा)
34 मलारी-झेलम (55 मेवा)
35 मांदनीगंगा (10 मेवा)
36 मिंग-नलगांव (114 मेवा)
37 मेलखेत (15 मेवा)
38 रामबारा (76 मेवा)
39 लता-तपोवन (125 मेवा)
40 वनाला (15 मेवा)
41 विष्णुगाड-पीपलकोटी (444 मेवा)

[गंगा रक्षा मंच]

उत्तर प्रदेशमें गंगा-प्रदूषणकी स्थिति

(डॉ० श्रीअजितकुमार सिंहजी)

भारतके प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेदके 'नदीसूक्त' (१०।७५।५)-में वर्णित गंगानदी भारतकी पवित्रतम नदी है। इनकी महानताका इससे बड़ा प्रमाण और क्या हो सकता है कि गीता (१०।३१)-में स्वयं भगवान् श्रीकृष्णने कहा है कि धाराओंमें मैं गंगा हूँ—स्रोतसामस्मि जाह्नवी।

गिरिराज हिमालयके पश्चिमी भागमें स्थित गंगोत्री ग्लैशियरसे उत्तर-पश्चिम दिशाको चलकर दक्षिण-पश्चिमवाहिनी बन यह अन्ततः पूर्वाभिमुख हो जाती है। दो हजार चार सौ अस्सी (२,४८०) कि०मी० लम्बी, कतिपय सूत्रोंके अनुसार दो हजार पाँच सौ दस (२,५१०) कि०मी० अथवा एक हजार पाँच सौ साठ (१,५६०) मील लम्बी गंगा न केवल उत्तर प्रदेशकी सर्वाधिक लम्बी नदी है, वरन् इसको भारतकी 'राष्ट्रीय नदी' होनेका गौरव भी प्राप्त है। लगभग तैंतीस हजार सात सौ (३३,७००) वर्ग कि०मी० क्षेत्रफलको सिंचित करनेवाली यह महानदी देशके अनेक राज्योंको आप्लावित करती हुई प्रवाहित होती है। विश्वकी सबसे घनी जनसंख्यावाले भूभागमें बसी भारतकी ४० प्रतिशत जनसंख्याकी जीवनरेखारूप यह पुण्यसलिला विश्वमें सर्वाधिक लोगोंको लाभ पहुँचानेवाली एकमात्र नदी होनेका श्रेय भी प्राप्त कर चुकी है। प० बंगालकी सीमामें प्रवेशके साथ ही सागरसे मिलनेको उत्सुक पुण्यसलिला गंगा 'सुन्दरवन' के रूपमें भारतको वन्य जीवोंसे समृद्ध वनक्षेत्र भी दे जाती है। यह वह नदी है, जिसका मीठा अमृत-जल भारतके राष्ट्रीय जलचर डाल्फिनोंकी प्रजातिको न केवल संरक्षित करता है वरन् उक्त प्रजातिको प्रजननका सर्वाधिक उपयुक्त वातावरण भी प्रदान करता है। चम्बल, बेतवा, केन, कालीसिन्ध, शोण, टोंस, गोमती एवं घाघरा-जैसी नदियाँ इसकी महत्त्वपूर्ण सहायिकाएँ हैं।

यह हमारा राष्ट्रीय दुर्भाग्य है कि विश्वकी सर्वाधिक पवित्र एवं अपनी स्वच्छताके लिये सम्पूजित यह देवनदी आज विश्वकी सर्वाधिक प्रदूषित नदियोंमें अग्रणीके रूपमें गिनी जाने लगी है। जहाँतक हमारे देशका प्रश्न है, आज यमुना नदीने प्रदूषणके क्षेत्रमें गंगाको दूसरे स्थानपर कर दिया है। सन् १९०१ ई० में हुए परीक्षणमें नयी दिल्लीमें यमुनाका जल अपनी नीलिमाके साथ इतना अधिक स्वच्छ था कि उसमें फेंके हुए सिक्केतक दिखलायी पड़ जाते थे। यमुनाको प्रदूषित करनेमें दिल्लीकी भूमिका सर्वाधिक अग्रणी है। लगभग ५८ प्रतिशत कूड़ा-करकट एवं गन्दगीके लिये दिल्ली ही उत्तरदायी है। रही-सही कसर आगरा पूरी कर देता है। आगराका चमड़ा-उद्योग इस दिशामें सर्वाधिक कुख्यात है। पार्श्ववर्ती हिण्डोन तो 'कूड़ागार' में परिवर्तित होती जा रही है।

आज भारतकी सभी नदियाँ प्रदूषणके महादैत्यके महाजालमें आबद्ध हो चुकी हैं, किंतु सर्वाधिक दयनीय स्थिति यमुना, गंगा, गोमती, घाघरा, चम्बल, नर्मदा कावेरी, माही एवं वर्धाकी है। सन् २०१३ ई० के आकलनसे यह स्थिति ज्ञात हुई है।

आजके राष्ट्रीय परिवेशमें ग्रामीण क्षेत्रोंको छोड़कर नगरोंमें बसनेकी प्रवृत्तिने नगरोंपर अतिरिक्त जनसंख्याका भारी बोझ डाल दिया है। आजीविका, शिक्षा, चिकित्सा आदि विभिन्न कारणोंकी आड़में लोगोंका ग्रामीण क्षेत्रोंसे नगरोंकी ओर पलायन नगरोंको विशेष रूपसे जल-प्रदूषण, वायु-प्रदूषण एवं ध्वनि-प्रदूषणका उपहार दे रहा है। प्रदूषण-वृद्धिमें सामान्य रूपसे 'नगरीकरण' मात्रको दोष देनेवाले यह भूल जाते हैं कि आजसे हजारों वर्षों पूर्व नदियोंके किनारे ही बड़े-बड़े नगर अस्तित्वमें आये थे। भारतमें ही गंगाके किनारे बसे बनारस, पाटलिपुत्र तथा इलाहाबादकी गणना विश्वके प्राचीनतम नगरोंमें की जाती है। वस्तुतः प्राचीन मानव-समूहका आदर्श 'सादा जीवन उच्च विचार' था। वह

प्रकृतिप्रेमी और प्रकृति-पूजक था। आजके मानवने अपने क्षणिक स्वार्थके वशीभूत हो प्रकृतिके साथ ही खिलवाड़ करना प्रारम्भ कर दिया है। प्रकृतिमें मानवके बढ़ते हस्तक्षेपने पर्यावरण-सन्तुलनको नष्टप्राय कर दिया है।

भारतमें निरन्तर बढ़ रहे घोर पर्यावरण-प्रदूषणके भावी दुष्परिणामोंसे चिन्तित पर्यावरणविदोंकी निरन्तर चेतावनीसे अन्तत: भारतके भाग्यविधाताओंकी कुम्भकर्णी नींद टूटी। सन् १९८६ ई० में 'पर्यावरण-संरक्षण अधिनियम' अस्तित्वमें आया। तत्कालीन प्रधानमन्त्रीकी सक्रियताके कारण उसी वर्ष 'गंगा कार्य योजना' (गंगा एक्शन प्लान)-का श्रीगणेश हुआ।

विश्व स्वास्थ्य संगठनके अध्ययनके अनुसार भारतके ३,११९ नगरोंमें मात्र २०९ नगर पर्यावरण-प्रदूषणके प्रति आंशिक रूपसे सक्रिय दिखलायी पड़े। मात्र ८ नगरोंमें पर्यावरण प्रदूषणकी समाप्तिके प्रति गम्भीर प्रयास परिलक्षित हुए। इसी संगठनकी सन् १९९५ ई० की अध्ययन समीक्षासे विदित हुआ कि ११४ भारतीय नगर असंशोधित कूड़ा-करकटके अम्बारोंसे पूर्ण मिले। अधजले शवों एवं मुर्दोंको बिना जलाये गंगामें विसर्जित करनेकी परम्पराने भी निरन्तर प्रदूषित हो रही गंगाको और अधिक प्रदूषित किया।

'गंगा कार्य योजना' के अन्तर्गत ३१ मार्च सन् २००७ ई० तक नौ सौ उनतालीस करोड़ रुपयोंकी धनराशि व्यय करनेपर भी सन्तोषजनक परिणामके अभावमें इस योजनाको अन्तत: भारत सरकारद्वारा वापस ले लिया गया। पर्याप्त विचार-मन्थनके पश्चात् 'नेशनल गंगा रिवर बेसिन अथॉरिटी' (एन०जी०आर०बी०ए०—राष्ट्रीय गंगा नदी घाटी प्राधिकरण)-की स्थापना की गयी। १७ अप्रैल सन् २०१२ ई० को तत्कालीन प्रधानमन्त्रीकी अध्यक्षतामें गंगानदी तथा उसकी प्रमुख सहायिका नदियोंकी शुद्धताकी कार्य-योजनाओंपर चर्चा हुई, किंतु परिणाम विशेष उत्साहजनक नहीं रहा। इन गतिविधियोंकी एक प्रमुख उपलब्धि यही रही कि 'गंगा' को राष्ट्रीय नदी घोषित कर दिया गया। विश्व-बैंकद्वारा एक अरब पौण्डकी सहायता प्रदान की गयी।

सम्प्रति गंगा-शुद्धिकरण-अभियानके अन्तर्गत 'नमामि गङ्गे परियोजना' को मूर्तरूप दिया गया है। भारत सरकारके बजटमें उक्त परियोजनाके निमित्त १४ जुलाई २०१४ ई० को २,०३७ करोड़ रुपयोंका प्रावधान भी किया गया। इसके पूर्व ७ जुलाई २०१४ ई० को नयी दिल्लीके विज्ञानभवनमें आयोजित कार्यक्रममें गंगाकी सफाईको राष्ट्रीय स्वाभिमानके साथ जोड़ा गया।

अभी कुछ ही दिनों पूर्व हुए ए०बी०पी० न्यूजके सर्वेक्षणमें हरकी पौड़ीमें एक मिली लीटर गंगाजलमें एम०पी०एन० कालीफार्म बैक्टीरिया ५४००० (चौवन हजार) तक पाये गये, जबकि थोड़ी ही दूर स्थित 'विश्वकर्मा-घाट' पर यह संख्या पैंतीस हजार (३५०००) ही थी। जबकि इसका मानक ५०० प्रति मिली लीटर है। कानपुर पहुँचनेके पूर्वतक यह स्थिति अपरिवर्तनीय रही, किंतु कानपुर नगरसे बाहर निकलते ही स्थिति पूर्ववत् ५४००० तक जा पहुँची। 'फीम कॉलीफार्म' परीक्षणमें भी नगर-प्रवेशके पूर्व यह संख्या जहाँ २८०० थी, वहीं कानपुरके बाहर पहुँचते-पहुँचते यह २२०० हो गयी। प्रयागराज अथवा इलाहाबाद पहुँचते-पहुँचते यमुना भी इसमें आ मिलती है। भारतकी महाप्रदूषित दो नदियोंका महामिलन स्थितिको और अधिक भयावह बना देता है। इलाहाबाद ही में फाफामऊ, नैनी और झूँसीसे सीवर एवं गन्दे नालोंका लाखों लीटर पानी प्रतिदिन सीधे गंगामें गिर रहा है। गंगा-प्रदूषण-नियन्त्रण इकाई फाफामऊ और नैनीके लिये अभी डी०पी०आर० (डिटेक प्रोजेक्ट रिपोर्ट) बना रही है। राज्य सरकारके माध्यमसे ही उक्त रिपोर्ट भारत सरकारको भेजी जायगी। फिर केन्द्रमें भी स्वीकृति-विषयक कार्यवाहीमें कुछ समय लगेगा। इसके पश्चात् टेण्डर आदिकी प्रक्रियामें समय लगना ही है। इलाहाबादमें मात्र पाँच 'एस०टी०पी०' के चालू होनेके कारण भारी मात्रामें नालों एवं सीवरकी गन्दगी गंगामें

मिल रही है। कमोवेश यही स्थिति हर बड़े नगरकी है।

इलाहाबादमें गंगा एवं यमुनाके अतिप्रदूषित जलके मिलनसे परिपुष्ट प्रदूषणका 'महादानव' विकराल रूप धारणकर वाराणसी पहुँचता है। वाराणसीमें लगभग गन्देनालेमें परिवर्तित वरणा एवं असीके अतिरिक्त लगभग तीन दर्जन (३२) नाले वहाँ जलप्रदूषणकी स्थितिको अत्यन्त चिन्ताजनक बना देते हैं। वाराणसीमें प्रति १०० मि०ली० जलमें बैक्टीरियाकी संख्या ३,५०,००० (तीन लाख पचास हजार)-से ४,४०,००० (चार लाख चालीस हजार)-तक जा पहुँची है। उत्तर प्रदेशके अन्तिम तथा उद्योगविहीन जनपद बलियातकमें गंगाजलका एम०पी०एन० कोलीफार्म १,७०,००० तक जा पहुँचा है। बलिया जनपदमें पानीमें शीशा, लोहा, मैंगनीज आदि घातक तत्त्वोंके मिश्रणके कारण गंगाके तटवर्ती क्षेत्रोंमें दो सौ फीटसे कम गहराईवाले हैण्डपम्पोंका पानी भी पीनेयोग्य नहीं रह गया है। आज स्थिति इतनी अधिक डरावनी बन गयी है कि देवनदी गंगाका जल पान और स्नानको कौन कहे, कृषियोग्य भी नहीं रह गया है।

पर्यावरणविदोंके अनुसार गंगाजलके प्रदूषित होनेके अनेक कारणोंमें गंगाजलके अविरल प्रवाहमें बाधा, नगरोंमें मानवकृत मलप्रक्षेप, गन्दगी एवं दुर्गन्धपूर्ण अपशिष्ट-क्षेपण, नालोंका गन्दा जल, चमड़ा उद्योग, पशुवधशालाएँ, रासायनिक-कीटनाशक, मद्योत्पादन इकाइयाँ, चिकित्सालय तथा निजी उपचारालयोंकी उत्सर्जित गन्दगी एवं अपशिष्ट जलको लेकर नदियोंमें मिलती नालियाँ भयंकर जल-प्रदूषण और अनेक रोगोंको जन्म देती हैं। कानपुरनगरमें तो सात सौसे भी अधिक टेनरियाँ जल-प्रदूषण-सम्बन्धी अत्यधिक भयावह स्थितिको जन्म देती हैं। धार्मिक आस्था एवं परम्पराके नामपर नदियों विशेषकर पतितपावनी गंगामें अधजले अथवा बिना जलाये मानव-शवोंका क्षेपण कम प्रदूषक नहीं है।

वैज्ञानिक अध्ययनोंसे पता चला है कि बाँधों, पम्पकैनालों एवं नदी जलके अन्यत्र एकत्रीकरणने मूल नदीके जलको रिक्तप्राय कर दिया है। बाँधोंके कारण गंगाकी अविरल धारा खण्डित हो गयी। करोड़ों लीटर प्रदूषित अपशिष्ट जल एवं मल-मूत्रके कारण विभिन्न प्रकारके घातक एवं संक्रमणीय कीटाणु नदीतटके करोड़ों निवासियोंको संक्रमित करनेमें सफल हो रहे हैं। गंगा नदीमें ही आजसे लगभग आधी शतीपूर्व कम-से-कम पैंतीस प्रजातिके सर्प तथा एक सौ चालीस प्रजातिकी मछलियाँ पल-बढ़ रही थीं। उनकी संख्या अब नाममात्रको रह गयी है। विश्वमें मीठे पानीकी डाल्फिनोंकी सर्वाधिक संख्या गंगा-निवासिनी थी। आज यदा-कदा उनकी उपस्थिति लक्षित हो पा रही है। यही नहीं गंगाके घड़ियाल और कछुए भी अब लुप्तप्राय हो चुके हैं। नदियोंके तटवर्ती वनों एवं वृक्षोंकी समाप्ति वातावरणको और अधिक गम्भीर बना रही है।

आज नदियोंके जल-प्रदूषणकी समस्या नितान्त जटिल-से-जटिलतर होती जा रही है। गंगोत्री-से-सागरतक गंगामात्रको स्वच्छ करना चाहें भी तो हमारा प्रयास तबतक व्यर्थ ही रहेगा, जबतक गंगामें मिलनेवाली सभी नदियोंसहित गंगाकी सफाईका सम्मिलित प्रयास नहीं होगा, प्रदूषित सहायिकाएँ सुरसरिताको प्रदूषणमुक्त कदापि नहीं होने देगीं।

यह कितनी बड़ी विडम्बना है कि बिना किसी भेदभावके अपने अमृत-जलसे करोड़ों प्राणियोंको संरक्षित करनेवाली पतितपावनी सुरसरि आज अपने 'आत्मसंरक्षण' के लिये चिन्तित है। अपने दर्शन, स्पर्श, अवगाहन, मार्जनमात्रसे करोड़ोंका उद्धार करनेवाली पुण्यतोया गंगा आज स्वयं अपने उद्धारके लिये दूसरोंकी मुखापेक्षी बनकर रह गयी हैं! ऐसेमें यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि करोड़ों व्यक्तियोंके लिये श्रद्धास्वरूपा गंगा क्या प्रदूषण-मुक्त एवं स्वच्छ हो सकेगी? क्या देवीस्वरूपा गंगाके अविरल एवं निर्मल प्रवाहका हमारा सपना पूरा हो सकेगा? क्या लाखों-करोड़ों भारतीय गर्वके साथ समवेत स्वरमें गा सकेंगे—*'गंगा तेरा पानी अमृत।'*

'माँ गंगा' का संकट कैसे दूर होगा ?

(श्रीदीनानाथजी झुनझुनवाला)

माँ गंगा दूसरोंको पावनता प्रदान करती है। इसीलिये इसे पतितपावनी गंगा भी कहते हैं। यही गंगा आज इतनी प्रदूषित हो गयी है कि इसमें बारहों महीने नहानेवाले एवं बारहों महीने इसका जल पीनेवाले श्रद्धालु गंगाभक्त भी आज इसके जलमें नहाने एवं प्रदूषित गंगाजलको पीनेसे कतराने लगे हैं। यह गंगा क्यों इतनी प्रदूषित हो गयी और इसको पुराना गौरव कैसे प्रदान किया जाय? आज यह प्रश्न अध्यात्म और पर्यावरण दोनों दृष्टियोंसे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

माँ गंगा हमारे देशकी पहचान हैं। हमारे देशकी सभ्यता एवं संस्कृति गंगाके किनारे विकसित हुई। साधु-सन्तोंने अपनी तपःस्थली भी गंगाके किनारे बनायी। हमारी मान्यता है कि मरणासन्न व्यक्तिके गलेमें एक बूँद गंगाजल डाल दिया जाय तो मुक्ति निश्चित है। शवको चितापर लेटानेके पहले गंगा-स्नान कराया जाता है। उसके पीछे भावना यह है कि शव माँ गंगासे प्रार्थना करता है—'हे माँ गंगे! तू पतितपावनी है। मैंने जीवनमें बड़े पाप-कर्म किये हैं। यह मेरे जीवनकी अन्तिम यात्रा है, मुझे पापमुक्त करके पावन कर देना।'

मन्दिरोंमें चरणामृत दिया जाता है, जिसमें गंगाजल एवं तुलसीदल होता है। चरणामृत देते समय पुजारीजी मन्त्र पढ़ते हैं—

अकालमृत्युहरणं सर्वव्याधिविनाशनम्।
विष्णुपादोदकं पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते॥

अर्थात् यह चरणामृत आपकी अकाल मृत्युका हरण करेगा, सर्व व्याधियोंका नाश करेगा। इस विष्णु-पादोदकको पीनेसे पुनर्जन्म नहीं होगा, यानी मुक्ति मिल जायगी। प्रत्येक हिन्दूकी यही अभिलाषा रहती है कि हमारा मोक्ष हो जाय।

गंगा-अवतरणके बारेमें कई मान्यताएँ हैं। एक तो कहते हैं गोमुखसे निकली। दूसरी है राजा भगीरथके प्रयाससे आयी। तीसरी इसे जाह्नवी भी कहते हैं। चौथी भगवान् विष्णुके चरणोंसे निकली। पाँचवीं ब्रह्माके कमण्डलुसे निकली एवं छठीं मान्यता है कि भगवान् शंकरके जटाजूटसे निकली। इस प्रकार इनके अवतरणकी अनेक कथाएँ हैं, परंतु भौगोलिक रूपसे ये धरतीपर गोमुखसे निकलती दिखायी देती हैं।

गोमुख—हरिद्वारसे गंगोत्री २७६ किलोमीटर दूर है। गंगा गोमुखसे निकलकर गंगोत्री होते हुए हरिद्वार आती हैं। फिर कानपुर, इलाहाबाद, वाराणसी, पटना, भागलपुर होते हुए बंगालकी खाड़ीके समुद्रमें जाकर विलीन हो जाती हैं। जिस स्थानपर ये सागरसे मिलती हैं, उसको गंगासागर कहा जाता है। गंगोत्रीसे गोमुख मात्र १८ किलोमीटर है। १७ किलोमीटरतक घोड़े जाते हैं, एक किलोमीटर पैदल चलना पड़ता है। यह पूरा मार्ग अत्यन्त ही ऊबड़-खाबड़, उतार-चढ़ाववाला, सँकरा एवं एक तरफ पहाड़ तथा दूसरी तरफ खाईवाला है। कई जगह बर्फके ग्लेशियरपरसे गुजरना पड़ता है। पहाड़ कहीं हिमाच्छादित हैं तो कहीं चीड़, देवदार तथा भोजपत्रके पेड़ोंसे आच्छादित हैं। प्रकृतिकी अनुपम मनोहारी छटा देखनी हो तो गोमुख एवं गंगोत्रीके अवश्य दर्शन करना चाहिये। गोमुख नामकरणका तात्पर्य है, गोका अर्थ पृथ्वी भी होता है यानी मनुष्य अपने नेत्रोंसे पहली बार पृथ्वीपर गंगाजलको आते देखता है। उसके पहले गंगा पहाड़ोंमें अदृश्य हैं। पृथ्वीके उस छिद्र भागको जहाँसे गंगा पहली बार आती दिखायी देती हैं, 'गोमुख' कहते हैं।

पहाड़ोंसे दहाड़कर निकलती, पत्थरोंसे रगड़कर बहती तथा जटाजूटसदृश पेड़-पौधोंके बीचसे प्रवाहित होती हुई गंगा हमें पावनता एवं पवित्रता प्रदान करती

हैं। इसका जल अनेक खनिज तत्त्वों और औषधीय वृक्षोंके सम्पर्कमें प्रवहमान होनेके कारण औषधीय गुणोंसे सम्पन्न हो जाता है। वैज्ञानिक दृष्टिसे भी गंगाजलमें कीड़े नहीं पड़ते। अन्य सभी जलोंसे भिन्नताके कारण ही गंगाजीको जल न कह करके 'अमृत' कहा गया है। हिन्दुओंके लिये तो गंगाजल ब्रह्मद्रवरूप है ही, 'आईने अकबरी' में लिखा है कि मुगल बादशाह अकबर गंगाजलको अमृत मानता था। गंगाजल उसके लिये श्रद्धेय था। इतना ही नहीं, कट्टर मुसलमान शासक औरंगजेबका काम भी गंगाजलके बिना नहीं चलता था। औरंगजेब जब सफरपर जाता था तो गंगाजल ऊँटोंपर साथ-साथ जाता था।

ऐसी महिमामयी अमृतद्रवरूपा हमारी गंगाका आज दर्द क्या है? ऐसी पावन गंगाको हमने इतना प्रदूषित कर दिया कि श्रद्धालु भी आज स्नान करनेसे एवं जल पीनेसे परहेज करने लगे। गंगाकिनारे बसे सारे शहरोंका मल-मूत्र आज गंगामें ही प्रवाहित हो रहा है। सारे उद्योगोंका गन्दा पानी भी गंगामें ही प्रवाहित हो रहा है। जगह-जगह गंगाको सिंचाईहेतु काममें लाया जा रहा है, जिसके कारण गंगाका जल इतना कम हो गया है कि कहीं-कहीं गंगा गर्मीमें मात्र एक नालाका आकार ले लेती हैं। आज हमारा यह राष्ट्रीय कर्तव्य है कि हम गंगाको प्रदूषणमुक्त करें ताकि गंगा हमें पावनता प्रदान करती रहे। संस्कृतमें एक वचन है कि '**धर्मो रक्षति रक्षितः**' यानी आप धर्मकी रक्षा करें, धर्म आपकी रक्षा करेगा। प्रकृतिने हमें गंगाको पवित्ररूपमें दिया। यह विश्वमें भारतको प्रकृतिकी अनुपम देन है। हमारा परम पावन कर्तव्य है कि गंगाकी पावनता सुरक्षित रहे। माँ गंगाका दर्द यही है कि मेरी पावनता मानवने नष्ट की है, अतः जबतक मुझे मेरी पावनता प्राप्त नहीं होगी, मेरा दर्द दूर नहीं होगा। हमारे देशकी सारी सभ्यता एवं संस्कृतिका विकास भी गंगा आदि नदियोंके किनारे बसे शहरोंमें हुआ। अतः गंगा आदि नदियोंकी पावनताको सुरक्षित रखना हमारा नैतिक दायित्व है। हमारे ऋषियोंने भी अपनी तपस्या एवं साधना गंगाके किनारेके पहाड़ोंपर की है, अतः हम संकल्पित हो जायँ कि गंगाकी पावनताको कम या नष्ट नहीं होने देंगे। गंगा हमारे देशकी पहचान है। प्रत्येक हिन्दू अपनेको भाग्यवान् समझता है, अगर उसने गंगाका दर्शन कर लिया, गंगामें स्नान कर लिया या गंगाजलका आचमन कर लिया। ऐसी पावन गंगाको अपावन होनेसे बचाना ही हमारी सर्वोच्च प्राथमिकता है।

गंगा सिर्फ नदी नहीं, यह भारतकी एकात्मताका प्रतीक है। गंगाजलसे रामेश्वरम्‌में अभिषेक किया जाता है, जो उत्तर-दक्षिणकी एकताका प्रतीक है, यह दक्षिण भारतको भावनात्मक रूपसे उत्तर भारतसे जोड़ता है। एक बार बादशाह अकबरने पूछा कि किस नदीका जल अति पवित्र है? तो बीरबलने बताया कि 'यमुनाजी' का, तो अकबरने पुनः पूछा—'गंगाका क्यों नहीं?' तो बीरबलने कहा कि वह तो अमृत है।

वही अमृतस्वरूप गंगाजल आज इतना प्रदूषित हो गया कि इसमें रहनेवाले कछुए भी मरने लग गये। ये कछुए ही मुर्दे खाकर गंगाको शुद्ध रखनेमें सहायक होते थे। गरीबीके कारण लोग अधजली लाश भी गंगामें प्रवाहित कर देते हैं। लाशके साथ राख, कोयला आदि भी गंगामें प्रवाहित कर देते हैं। बाढ़की मिट्टी बाढ़के बाद पुनः गंगामें ही डाल देनेके कारण गंगा प्रतिदिन छिछली होती जा रही हैं। कहीं सरस्वतीकी ज्ञानधाराकी तरह गंगाकी 'मोक्षधारा' भी लुप्त न हो जाय। क्या हम अपनी इस पहचानको यूँ ही लुप्त हो जाने देंगे? क्या हम भगीरथके तपको यूँ ही मिट जाने देंगे। यह प्रश्न निराधार नहीं है। यह केवल भावुक मनकी वेदना नहीं है। यह यथार्थ है, सत्य है, अनुभूत है और अवश्यम्भावी है कि यदि हम नहीं चेते, नहीं उठे और नहीं जगे तो यह होगा ही। हमारी यह सांस्कृतिक थाती और विरासत नष्ट हो जायगी। टिहरी

बाँधने भी हमारी गंगाको बन्धक बना लिया। कुछ बुद्धिजीवी तथा अर्थशास्त्री यह आरोप लगायेंगे कि बाँध नहीं बनायें तो बिजली कैसे पैदा होगी? बिजली पैदा नहीं होगी तो उद्योग-धन्धे कैसे चलेंगे? आर्थिक विकास कहाँसे होगा? गंगासे नहर नहीं निकाली जायगी तो खेती कैसे होगी? भारतवासी भूखे एवं भिखारी हो जायँगे। भूख और भावनाके बीचका यह संघर्ष है। इस आर्थिक युद्धके परिणाम गम्भीर होंगे। कुछ ताकतें यूनान, मिस्र और रोमकी तरह भारतकी भी हस्ती, मस्ती एवं पहचान मिटा देनेपर आमादा हैं। भारतका नाम तो रहे, लेकिन भारतीय परम्परा और प्रज्ञाका लोप हो गया तो विश्वास मानें प्रत्येक विकास हमारे विनाशका कारण बनेगा।

माँ गंगाकी लम्बाई गोमुखसे गंगासागरतक लगभग २५०० किलोमीटर है। इसके किनारे आज ११६ छोटे-बड़े शहर बसे हैं। गंगाजलमें आर्सेनिक एवं फ्लोराइड बढ़नेके कारण इसका जल जहरीला हो गया है। इसके जहरीले होनेका मुख्य कारण है देशकी आबादी एवं उद्योगका बढ़ना तथा शहर एवं उद्योगोंकी गन्दगी एवं कचरेको गंगामें प्रवाहित करना। जहाँ बढ़ी हुई गन्दगीको दूर करनेके लिये गंगामें जलकी मात्रा बढ़नी चाहिये, वहीं जगह-जगह नहर निकालकर सिंचाईके लिये जलका उपयोग बढ़नेके कारण इसमें जलकी मात्रा कम हो गयी। अन्य नदियोंके जलके मुकाबले इसके जलमें कीड़े नहीं पड़ते थे। कारण हिमालय से निकलकर इसके प्राकृतिक प्रवाहने इसके जलको यह विशेषता दे रखी थी। आज सरकारने टिहरी बाँध बनाकर इसके प्राकृतिक प्रवाहको भी अवरुद्ध कर दिया। अब जो गंगा हमारे पास तक आ रही है, वह टिहरी बाँधसे बिजली बनानेके उपरान्त आ रही है। गंगाकी जिस पावनताको हमारी एक हजार सालकी मुसलमानों एवं अँगरेजोंकी गुलामीने नष्ट नहीं किया, उसे आज हमने स्वयं नष्ट कर दिया। हमने सोचा नहीं कि हम क्या करने जा रहे हैं। गंगाके साथ करोड़ों भारतवासियोंकी आस्थाएँ जुड़ी हैं। शास्त्र तो यहाँतक कहते हैं कि गंगामें नहाने या गंगाजल पीनेके अलावा केवल गंगाका स्मरण भी आपको पावनता प्रदान करता है। हमारे शास्त्रोंके अनुसार तो गंगामें बदन रगड़कर नहानेतककी मनाही है। उस गंगाके साथ इतना बड़ा क्रूर मजाक! हमने शहरोंकी गन्दगी, उद्योगोंका जल तो छोड़ा ही, गंगाके किनारे धोबीघाट बनाकर सारी गन्दगी इसमें छोड़ी। शवोंको बहाया, फूल-माला छोड़ी, शवके जलनेके उपरान्त उसकी अधजली लाश एवं राख भी इसमें छोड़ दी। जब १९४७ में हम आजाद हुए तो देशकी आबादी ३६ करोड़ थी। आज १२५ करोड़ हो गयी, आगे और बढ़ेगी। उसकी आवश्यकताके लिये बहुत-से रासायनिक उद्योग एवं चमड़ा उद्योग इसके किनारे लग गये, जिनकी गन्दगी निर्बाध रूपसे गंगामें प्रवाहित होने लगी, जिससे गंगा निश्चित रूपसे प्रदूषित होती गयी। इसके प्रदूषणको हमें खत्म करना है।

आजका विज्ञान इतना समुन्नत हो गया है कि हम शहरोंकी गन्दगीको गंगामें गिरनेसे बचा सकते हैं तथा उस गन्दगीका दोहरा लाभ ले सकते हैं। शहरोंकी इस गन्दगीसे ऐसी जैविक खाद तैयार हो सकती है, जो हमारे खेतोंके संकटको भी दूर करेगी। रासायनिक खादोंके लगातार उपयोगसे खेतोंके ऊसर होनेका खतरा बढ़ गया है। इस खतरेको कम करनेका एकमात्र उपाय जैविक खादोंके उपयोगको बढ़ाना है। इसके लिये उद्योगपतियोंको भी विशुद्ध धार्मिक भावनासे आगे आना होगा।

कुछ भी हो, गंगा हमारे देशकी पहचान हैं। इनकी स्वच्छता, पावनता, निर्मलता सुरक्षित रहे एवं प्राकृतिक कल-कल करती जलधारा पूर्ववत् बहती रहे, यही हमारी प्रार्थना है। किसी भी कीमतपर देशकी पहचानको नष्ट होनेसे बचाना है।

गंगा-निर्मलीकरणके सम्बन्धमें वर्तमानमें हो रहे प्रयत्नोंकी समीक्षा

(श्री बी० एस० रावत 'चंचल')

युगों-युगोंसे गंगा भारतदेशकी सभ्यताके लिये भौतिक एवं आध्यात्मिक महत्त्वका केन्द्र रही है। सूर्यके उदय होते ही जिस तरह अन्धकारको विदीर्णकर जगत् प्रकाशवान् हो जाता है, ठीक उसी तरह गंगाजलमें स्नानमात्रसे ही पुरुष अपने पापोंसे मुक्त होकर सुशोभित होता है। भगवान्ने निम्न श्लोकके माध्यमसे गंगा नदीको अपनी विभूति बताकर गंगाकी महिमाको और बढ़ाया है—

पवनः पवतामस्मि रामः शस्त्रभृतामहम्।
झषाणां मकरश्चास्मि स्रोतसामस्मि जाह्नवी॥

(गीता १०। ३१)

वैज्ञानिक मत—गंगा नदीके जलमें 'बैक्टीरियोफेज' नामक जीवाणु होते हैं, जो विषाणुओं एवं अन्य हानिकारक सूक्ष्म जीवोंको जीवित नहीं रहने देते हैं। पर्याप्त सतही ढलानके कारण अति तीव्र वेगसे बहती हुई यह नदी अपने अन्दर पर्याप्त घुलनशील ऑक्सीजन (Dissolved oxygen - Do) रखती है, जो जलीय जीवोंके लिये अति आवश्यक है। गंगाजीकी इस असीमित शुद्धीकरण-क्षमता तथा उनपर अपार सामाजिक श्रद्धाके रहते हुए भी उन्हें दूषित होनेसे बचाया नहीं जा सका है।

गंगा-कार्य-योजना—भारत सरकारने सन् १९८६ ई० में 'गंगा कार्य योजना' (GAP) प्रारम्भ की। अगस्त २००९ ई० में इसे 'राष्ट्रीय गंगा नदी बोर्ड प्राधिकरण' के रूपमें पुनः प्रारम्भ किया गया। उद्देश्य एक ही था—'प्रदूषणको रोकते हुए नदीके जलकी गुणवत्ताको स्वीकृत मानकतक पहुँचाना।' गंगा नदी देशके लगभग सत्ताइस प्रतिशत भू-भागको आच्छादित करती है। इसकी सफाई एवं संरक्षणपर प्रचुर मात्रामें धन खर्च होनेके बावजूद भी गंगा प्रदूषित होती चली जा रही है। पहले इसका जो क्षेत्र साफ-सुथरा एवं शुद्ध समझा-माना जाता था, वह भी अब पूर्णरूपेण प्रदूषणकी चपेटमें है।

प्रदूषणके घटक—जिन चीजोंने गंगा-प्रदूषणको बढ़ाया है, उनमें कुछ निम्न हैं—

(१) अपर्याप्त जल-धारा-प्रवाह—इससे नदीका स्वतः तनूकरण प्रभावित होता है।

(२) अशोधित अपशिष्ट पदार्थोंका उत्सर्जन।

(३) उद्योगोंद्वारा अवांछनीय एवं अशोधित, बेकार एवं गन्दे जलका उत्सर्जन।

(४) धार्मिक आस्थाके चलते पदार्थोंका उत्सर्जन।

इन कारणोंके चलते गंगा-निर्मलीकरणहेतु जिन उपायोंको अमलमें लाना चाहिये, उनमें कुछ इस प्रकार हैं—

(१) धार्मिक स्थलके पास अनुपयुक्त एवं अपशिष्ट पदार्थोंके निस्तारणहेतु उचित व्यवस्था होनी चाहिये।

(२) मानसूनके जलका समुचित उपयोग करना चाहिये।

(३) सरकारको चाहिये कि वह कम-से-कम उतनी मात्राका प्रवाह, जो कि पारिस्थितिकीय सन्तुलन और तनूकरणके लिये चाहिये, को बनाये रखनेको प्रतिबद्ध हो और इसका मजबूतीसे पालन करे।

(४) शहरोंके द्वारा निकाले गये मैले पदार्थ एवं घरेलू अपशिष्ट पदार्थोंका उचित निवारण करना चाहिये।

(५) गन्दे नालोंको सीधे नदीमें नहीं जुड़ने देना चाहिये, अपितु उपचार-संयन्त्रोंके द्वारा शोधन करके तब पानीको नदीमें छोड़ना चाहिये।

(६) जो भी नदी-परियोजनाएँ लागू हैं अथवा होंगी, उनके द्वारा हुए अथवा होनेवाले पारिस्थितिकीय अथवा गुणवत्ता-सम्बन्धी नुकसानकी भरपाई एवं समाधान होना चाहिये।

(७) उद्योगोंद्वारा उत्सर्जित अवांछनीय पदार्थोंपर रोक लगानी चाहिये और जो मानक इन उद्योगोंके लिये निर्धारित हैं, उन्हें लागू करवानेके लिये कठोर नियम एवं कानून होने चाहिये।

इन सबके अतिरिक्त जनसंख्या-वृद्धि, उच्च जीवन-स्तर तथा तीव्र गतिसे बढ़ता हुआ औद्योगीकरण जल-संसाधन विशेषकर नदियोंको कई प्रकारसे नुकसान पहुँचा रहा है। जल-गुणवत्तामें ह्रास मनुष्यों एवं जानवरोंको सीधे रूपसे प्रभावित करता है।

गंगा दुनियाकी सबसे अधिक प्रदूषित नदी— संसारभरमें हिन्दुओंद्वारा पवित्र मानी जानेवाली गंगामें प्रतिदिन बीस लाखसे अधिक धार्मिक लोग स्नान करते हैं। दूषित जलमें स्नान करनेसे 'विल्हार जियासिस संक्रमण' तथा जल पीनेसे 'फीकल-मौखिक मार्गसे' स्वास्थ्य सम्बन्धी खतरे बढ़े हैं। 'यू ई सी पी सी वी' अध्ययनके अनुसार पानीमें मौजूद कोलिफार्मका स्तर पीनेके उद्देश्यसे ५० से नीचे, नहानेके लिये ५०० से नीचे तथा कृषि-उपयोगहेतु ५००० से कम होना चाहिये। हरिद्वारमें गंगामें कोलिफार्म (Coliform) का वर्तमान स्तर ५५०० तक पहुँच चुका है। जल-संसाधन सम्बन्धी रिपोर्टके अनुसार गंगा बेसिनमें लगभग १२,००० MLD (Million Litre Per Day) मैला जाता है, जिसमें अभीतक सिर्फ ४,००० MLD मैलेके लिये उपचार-केन्द्र उपलब्ध हैं। औद्योगिक इकाइयोंका योगदान इस प्रदूषणमें २० प्रतिशत है, जिनमें जहरीले रासायनिक पदार्थ, जैसे—पारा, आर्सेनिक, सीसा और अजैव निम्नीकरण पदार्थ नदीमें पहुँचते हैं।

विश्वबैंक एवं गंगा— राष्ट्रीय नदी गंगा बोर्ड प्राधिकरणद्वारा विश्वबैंककी सहायतासे प्रमुख शहरों, धार्मिक स्थलोंके ऊपरी एवं निचले प्रवाहके पास स्वचालित जल गुणवत्ता प्रबोधन केन्द्र स्थापित किये गये हैं, परंतु ये केन्द्र संख्यामें कम ही हैं।

उच्च न्यायालयद्वारा निर्देश— उच्च न्यायालयद्वारा जारी निर्देशोंमें सरकार तथा गठित प्रदूषण नियन्त्रण बोर्डको कहा गया है कि गंगाके निर्मलीकरणहेतु जो भी प्रयास किये जायँ, वे सामान्य जनकी समझमें आने आवश्यक हैं तथा उनकी भागीदारी सुनिश्चित की जाय। गंगा कार्ययोजना पूर्वमें 'वन एवं पर्यावरण मन्त्रालय' के अधीन थी, अब इसे 'जल संसाधन मन्त्रालय' के अधीन कर दिया गया है; जिससे इस योजनाकी विफलतामें कमियोंको दूर किया जा सके।

गंगा-मंथन— राष्ट्रीय स्तरपर आयोजित 'गंगा-मंथन' मन्त्रणा समिति, विज्ञान भवन ७ जुलाई, सन् २०१४ ई० को आयोजित की गयी, जिसका उद्देश्य था—'गंगानिर्मलीकरण' एवं 'गंगा-संरक्षण।' इसमें चार समूह बनाये गये थे—

(१) सन्तों एवं आध्यात्मिक नेताओंका संगठन,
(२) गैरसरकारी-संगठनों एवं पर्यावरणविदोंका संघ,
(३) विज्ञान-विशेषज्ञों एवं शिक्षकोंका संघ तथा
(४) लोक-प्रतिनिधियों एवं प्रशासकोंका संगठन।

उपर्युक्त मन्त्रणा समितिमें सम्मिलित सभी सहभागियोंके विचार एवं सुझाव थे कि गंगा नदी 'अविरल' और 'निर्मल' होनी चाहिये एवं एक विशद नीतिका निर्माण तथा उसका क्रियान्वयन होना चाहिये, ताकि गंगा अपने मूल स्वरूपमें पहुँच सके।

उद्देश्यप्राप्ति कैसे ?— गंगाकी पौष्टिकता निम्नांकित चार चीजोंको अपनाकर ही प्राप्त की जा सकती है, यथा—

(१) अविरल धारा (सतत प्रवाह)
(२) निर्मल धारा (अदूषित धारा)
(३) भू-गर्भिक अस्तित्व (भू-गर्भिक तत्त्व)
(४) पारिस्थितिकीय अस्तित्व।

अतः इसके निवारणहेतु या तो जल-संग्रहणकी क्षमता बढ़ानी चाहिये या पानीकी माँग कम करनी चाहिये। 'अविरलधारा' से ही पारिस्थितिकीय तत्त्व जुड़ा हुआ है। निर्मलधाराके लिये नदीके जलकी गुणवत्ता उत्तम होनी चाहिये तथा नदीमें जो भी उत्सर्जन हो, उसे बन्द कर देना चाहिये।

गंगाकी उपयोगिता एवं महत्त्व— गंगा नदीकी अविरलता एवं निर्मलता बनाये रखना सम्पूर्ण राष्ट्रका प्रमुख एवं प्रथम कर्तव्य होना चाहिये। इसे निम्न कारणोंसे उचित ठहराया जा सकता है—

(१) २०७१ कि०मी० लम्बी यात्रा करते हुए गंगा भारतमें विशाल भू-भागको सिंचित करती है।

(२) इस नदीमें कई जलीय जीव-जन्तु, जिनमें विशेष रूपसे मीठे पानीवाला दुर्लभ डाल्फिन (सूंस) भी सम्मिलित है, पर्यावरणीय सन्तुलन बनाये रखनेमें महत्त्वपूर्ण योगदान देते हैं।

(३) इस नदीके किनारे बसे कई प्रमुख शहरोंको एवं उद्योगोंको जलकी पूर्ति इसी नदीके द्वारा होती है। इनके अतिरिक्त इसपर बने पुल, बाँध और नदी परियोजनाएँ भारतकी बिजली, पानी और कृषिसे सम्बन्धित आवश्यकताओंको पूरा करती हैं।

किये जा रहे प्रयास—'जल संसाधन मन्त्रालय' को बदलकर भारत सरकारने 'जल संसाधन, नदी विकास एवं गंगा संरक्षण मन्त्रालय' बनाकर गंगाके निर्मलीकरणकी राहमें एक और महत्त्वपूर्ण कदम बढ़ाया है, जिसमें २०३७ करोड़ रुपयेका बजट गंगा सफाईहेतु स्वीकृत 'नमामि गंगे' योजनान्तर्गत किया है। गंगा-सफाई कोषकी स्थापना भारत सरकारद्वारा की जा चुकी है, जिसमें कोई भी अपना योगदान दे सकता है।

गंगा हमारी अस्मिता है, हमारी धरोहर है, हमारी संस्कृति है और हमारी पहचान है। इस पहचानको बनाये रखने हेतु हम सभीको चैतन्य एवं सजग रहनेकी आवश्यकता है।

हर भारतीयका संकल्प हो—'गाङ्गेयजलं निर्मलम्'

(श्रीराधाकृष्णजी बजाज)

हर भारतीयके अन्तरमें 'गाङ्गेयजलं निर्मलम्'—यह अभिलाषा अवश्य होगी कि गंगाजल पूर्ववत् निर्मल हो। गंगाका जल निर्मल हो, यानी भारतकी सभी नदियोंका जल निर्मल हो, हर मानवको निर्मल जल मिले।

स्वराज्यप्राप्तिके बाद शासनने आर्थिक विकासके नामपर कृषि-उत्पादनके क्षेत्रमें रासायनिक खाद एवं कीटनाशक दवाओंके रूपमें जिस जहरका प्रयोग करवाया है, उसका जो परिणाम हुआ है, वह किसीसे छिपा नहीं है। कई स्थानोंपर भूमिकी उर्वराशक्ति ही समाप्त हो गयी है और ऐसे पदार्थोंके प्रयोगसे जो अन्न-औषधि आदि प्राप्त हो रही है; वह शरीर, मन, मस्तिष्कके लिये अत्यन्त ही हानिकारक है; आर्थिक नुकसान जो हो रहा है, सो अलग। इस जहरको समाप्त करनेकी शक्ति कामधेनुस्वरूपा गौ और नीम आदि कल्पवृक्षोंमें है।

गंगाको शुद्ध करना साधारण बात नहीं है, परंतु संकल्प करनेपर सब कुछ हो सकता है। इसके लिये सभीको सचेष्ट रहनेकी आवश्यकता है। हमारी जनता-जनार्दनसे यही प्रार्थना है कि वह अपनी अन्तरात्मामें बैठे शिवस्वरूप परमात्माको पहचाने और अपने शरीरको गंगास्वरूप समझे। अतः ऐसे पवित्र शरीरमें वह रासायनिक खाद आदि जहर मिले हुए खेतोंमें पैदा हुए दूषित अन्न आदिको पेटमें न डाले, ऐसे दूषित हवा-पानीसे परहेज करे और वैसा वस्त्र शरीरमें न पहने, जो वैदेशिक वैभवका प्रतीक हो। गोबर, गोमूत्र, नीम आदिसे उगायी गयी वनस्पति तथा केंचुवा आदिसे बनी खादद्वारा पैदा हुआ अमृतरूपी अन्न तथा स्वच्छ जल ही पेटमें डाले और अपने देशका बना कपड़ा ही पहने तो शरीररूपी गंगा अवश्य निर्मल हो सकती है। अपने शरीरमें जहर डालनेको गंगामें जहर डालनेके समान पाप समझे और अपने शरीरमें अमृतमय अन्न-जल डालनेको गंगामें अमृत डालनेके समान पुण्य माने। बड़ी मछलियाँ, कछुए आदि अनेक जीव-जन्तु जो गंगाके जलको शुद्ध कर देते थे; वे इन जहरीले रसायनोंके कारण मर रहे हैं। हम चाहें और प्रयत्न करें तो वे पुनः बच सकते हैं और उनसे गंगा अवश्य शुद्ध तथा निर्मल हो सकती है।

आज भारतीयोंके मनमें भी आधुनिक सभ्यताका जहर समा गया है। हम भारतीयताको हीन-गौण मानने लगे हैं, जबकि यहाँकी भाषा, यहाँके संस्कार और शास्त्र तथा भारतीय किसान दुनियामें सर्वश्रेष्ठ हैं। जब हम भारतीयोंका आत्मसम्मान जागेगा, तभी आधुनिक सभ्यताकी श्रेष्ठताका जहर मिटेगा। इस प्रकार जनता-जनार्दनसे हमारी दो ही माँगें हैं—एक तो भारतकी श्रेष्ठता समझें और अपने पेटमें अमृतमय अन्न एवं जल ही डालें। हम इतना कर सकेंगे तो गंगा निर्मल होगी और भारतीय संस्कृति सजीव हो उठेगी।

जल-विद्युत्‌का ताण्डव

(डॉ० श्रीभरतजी झुनझुनवाला)

चारों शंकराचार्योंके अनुसार गंगाके प्रवाहको जल-विद्युत् बाँधोंसे अवरुद्ध करनेसे गंगाकी आध्यात्मिक शक्तिका ह्रास होता है। जल-विद्युत् परियोजनाओंके इस दुष्प्रभावको अनदेखा करते हुए केन्द्र सरकार देशकी सभी नदियोंपर जल-विद्युत्‌के उत्पादनके लिये बाँध बनानेको संकल्पित है। इनका मानना है कि इन परियोजनाओंसे आर्थिक लाभ बहुत अधिक है, थोड़ी ही हानि पर्यावरणकी होती है। आर्थिक विकासका दबाव इतना अधिक है कि आर्थिक लाभके लिये पर्यावरण ही नहीं कानूनको भी ताकपर रखकर परियोजनाएँ बनायी जा रही हैं। इसका एक उदाहरण उत्तराखण्डमें अलकनन्दा नदीपर बनायी जा रही श्रीनगर परियोजना है। अलकनन्दा नदी जोशीमठसे लगभग २५० किलोमीटर पहाड़में बहती है। श्रीनगर परियोजना इस बहावके बीचोबीच बन रही है, जो अलकनन्दाको १००-१०० किलोमीटरके दो टुकड़ोंमें बाँट देगी। फलस्वरूप मछलियाँ नीचेसे ऊपरी हिस्सेमें स्थित प्रजनन-क्षेत्रोंतक नहीं पहुँच पायेंगी। माहसीर-जैसी विशेष मछलियाँ विलुप्त हो जायँगी। नदी अपने साथ ऊपरसे पानी ही नहीं, मिट्टी भी लाती है। नागपुर-स्थित नेशनल इनवायरमेन्टल इंजीनियरिंग रिसर्च इन्स्टीट्यूटने पाया है कि गंगाके पानीकी शुद्धताका रहस्य मिट्टीमें है। गंगाकी मिट्टीमें सूक्ष्म रेडियोधर्मिता तथा अधिक मात्रामें ताँबा एवं क्रोमियम होता है। इन्हीं तत्त्वोंसे गंगाके पानीकी विशेषता उत्पन्न होती है। ऊपरकी मिट्टीका प्रवाह नीचे न होनेसे नीचेके पानीकी गुणवत्ता घटेगी। स्थानीय लोग नदीकी बालू और मछलीसे वंचित रहेंगे। इस परियोजनासे निर्मित झीलमें मरे हुए पशुओंकी लाशें सड़ेंगी और चारों ओर बदबूभरा वातावरण होगा। झीलमें मच्छरोंकी आबादी बढ़ेगी और स्थानीय लोगोंमें मलेरिया बढ़नेकी सम्भावना प्रबल होगी। स्थानीय लोगोंके लिये नदीके एक पारसे दूसरे पार जाना कठिन और खर्चीला हो जायगा। भूस्खलनसे लोगोंके घरोंमें दरारें पड़ेंगी।

इन तमाम प्रभावोंकी जानकारी मिलनेके बाद कुछ स्थानीय लोगोंने प्रारम्भमें ही परियोजनाके खिलाफ आवाज उठायी। परियोजनाका कार्य सन् २००७ ई० में शुरू हुआ और सन् २००८ ई० में इसकी खिलाफत शुरू हो गयी थी, जिसकी अनदेखी करते हुए परियोजनापर निर्माण कार्य जारी रहा। सन् २००८ ई० में उत्तराखण्ड हाईकोर्टमें इस परियोजनाके खिलाफ पहली याचिका दायर की गयी थी। उसके बाद क्रमसे सन् २०१० एवं २०११ ई० में याचिकाएँ डाली गयीं। अन्तमें हाईकोर्टने परियोजनाको मिली पर्यावरण स्वीकृतिको निरस्त कर दिया, परंतु परियोजनाके निर्माण-कार्यपर लगाम नहीं लगायी। निर्माण चलता रहा। विरोधियोंके आवाज उठानेपर अब दुहाई दी जा रही है कि ७५ प्रतिशत कार्य हो जानेके बाद परियोजनाका कार्य रोकना अनुचित होगा। यह कैसा न्याय है कि पहले कानून लागू करनेमें देर की गयी, बादमें कहा जा रहा है कि देर हो गयी है, इसलिये गैर कानूनी परियोजनाका निर्माण पूरा होने दिया जाय!

परियोजनाके समर्थकोंका कहना है कि परियोजना बन्द होनेकी स्थितिमें कुछ लोगोंके रोजगार समाप्त हो जायँगे। ध्यान देनेवाली बात यह है कि ऐसा नहीं है कि परियोजनाओंसे केवल रोजगार उत्पन्न होते हैं। वास्तवमें इनसे रोजगारका हनन भी होता है। इस परियोजनाके तहत लगभग ५०० हेक्टेयर कृषिभूमि नष्ट हो जायगी। इस कृषिसे उत्पन्न होनेवाले रोजगार समाप्त हो जायँगे।

देशके आर्थिक विकासमें सेवा-क्षेत्रका हिस्सा बढ़ता जा रहा है। वर्तमानमें कुल आयका लगभग ६० प्रतिशत पर्यटन, सॉफ्टवेयर, सिनेमा-जैसी सेवाओंसे उत्पन्न हो रहा है। भविष्यमें सेवा-क्षेत्रके अवसर बढ़ेंगे।

उत्तराखण्डकी जनताको तय करना है कि वे सेवाके सूर्योदयक्षेत्रके रोजगार पकड़ेंगे या फिर मैन्यूफैक्चरिंगके सूर्यास्तक्षेत्रको। नदियोंको बाँधों एवं टनलोंमें बहानेसे उत्तराखण्डका नैसर्गिक सौन्दर्य समाप्त हो जायगा। विकल्प है कि उत्तराखण्ड सरकार सॉफ्टवेयर कम्पनियोंको राज्यमें आकर्षित करनेका प्रयास करे। इससे दीर्घकालीन, स्थायी और ऊँचे कदके रोजगार उत्पन्न होंगे।

सुप्रीम कोर्टने तमाम निर्णयोंमें कहा है कि पर्यावरण एवं आर्थिक विकासमें सन्तुलन बनानेकी जरूरत है। आर्थिक विकासपर अधिक जोर देनेसे पर्यावरण नष्ट होगा, आगे चलकर विकास बाधित होगा, साथ-साथ सम्पूर्ण सभ्यता नष्ट हो सकती है। धर्मसंकट है कि पर्यावरणके नामपर लोगोंको अँधेरे और पिछड़ेपनमें रहनेको नहीं बाध्य किया जा सकता है, न ही नदियोंको मरते हुए देखा जा सकता है। जरूरत है जल-विद्युत् बनानेके ऐसे उपाय खोजे जायँ, जिनसे नदीका सौन्दर्य कायम रहे और पर्यावरण भी सुरक्षित रहे। सुझाव है कि नदीके एक हिस्सेको बेरोकटोक बहने दिया जाय। पानीके दूसरे हिस्सेको किनारेसे निकाल लिया जाय। वर्तमानमें नदीके पाटपर बराज बनायी जाती है। बराजके पीछे पानीका जलस्तर ऊँचा हो जाता है। बराजसे पानीको टनलमें बहाकर नीचे पावर हाउसतक लाया जाता है। वहाँ बिजली बनाकर इसे नदीमें वापस डाल दिया जाता है। नदीके पाटपर बराज बनानेसे मछलियोंका पलायन और मिट्टीका बहाव अवरुद्ध हो जाता है। बिना बराज बनाये किनारेसे पानीको निकालना सम्भव है, जैसे खेतमें बहते पानीको नाली खोदकर विशेष दिशामें ले जाया जाता है। हरियाणामें पूर्वी यमुना नहरके लिये ताजेवाला बराजसे इसी प्रकार पानी निकाला जाता है। श्रीनगर एवं दूसरी हाइड्रोपावर परियोजनाओंके लिये पानीको किनारेसे निकाला जा सकता है। ऐसा करनेसे नदीके मुख्य बहावमें बाधा नहीं पड़ेगी। पर्यावरण सुरक्षित रहेगा, नदीका सौन्दर्य कायम रहेगा। इसके अलावा टूरिज्म एवं सेवा-क्षेत्रोंमें उत्पन्न हो रही रोजगारकी सम्भावनाओंको स्थानीय लोग पकड़ सकेंगे। ऐसी ही परिस्थिति उत्तराखण्डकी ही नहीं, बल्कि विभिन्न राज्योंमें बन रही तमाम जल-विद्युत् परियोजनाओंकी है।

अन्ततः जल-विद्युत् परियोजनाएँ किसी भी तरहसे स्थानीय लोगोंके हितमें नहीं हैं। पर्यावरणके दुष्प्रभाव इन्हें ही झेलने पड़ते हैं। इनके पुश्तैनी रोजगार समाप्त हो जाते हैं। इनकी मछली, बालू एवं कृषि समाप्त हो जाती है। वदबू और मलेरियाका प्रकोप इन्हें झेलना पड़ता है। इनके मकानोंमें दरारें पड़ती हैं, परंतु स्थानीय लोगोंका एक वर्ग इन परियोजनाओंसे लाभान्वित होता है। कम्पनियाँ प्रभावी लोगोंको ठेके देकर खरीद लेती हैं। जैसे श्रीनगर बाँधमें जलमग्न होनेवाले सिद्धपीठ धारीदेवी मन्दिरको उठानेका ठेका मन्दिरके पुजारियोंको ही दे दिया गया है। स्थानीय समाज दो वर्गोंमें बँट जाता है। एक ओर ९० प्रतिशत मासूम जनता मौन खड़ी रहती है, जो कि पर्यावरणके दुष्प्रभावको सर्वाधिक झेलती है। दूसरी ओर दस प्रतिशत प्रभावी लोग खड़े होते हैं, जो रोजगार एवं ठेके पाते हैं। इन प्रभावी लोगोंको खरीदकर कम्पनी जनताके बहुमतको दबा देती है। मन्त्रियोंको भी यह प्रक्रिया रास आती है। हाइड्रोपावर कम्पनियोंको ठेके देनेमें उनके लिये कमाईके अवसर खुलते हैं। जनताका गला घुटनेसे इन्हें सरोकार कम ही है। जिस प्रकार ब्रिटिश हुकूमतने एक वर्गको नौकरीका लालच देकर स्वतन्त्रता-सेनानियोंपर गोलियाँ चलवायी थीं, उसी प्रकार स्वतन्त्र भारतकी केन्द्र एवं राज्य सरकारें एक प्रभावी वर्गको ठेकोंका लालच देकर देशके पर्यावरणको तो हानि पहुँचा ही रही हैं, पर्यटन एवं सेवा-क्षेत्रमें आर्थिक विकासकी सम्भावनाओंको नष्ट भी कर रही हैं।

गंगापर 'वाटर वे'* का संकट

(श्रीरमेशकुमारजी मुमुक्षु)

सरकारकी योजना है कि गंगापर हल्दियासे इलाहाबादतक बड़े जहाजोंसे मालकी ढुलाई की जाय। वर्तमानमें पानी कम होनेसे गंगापर केवल छोटे जहाज ही चल पाते हैं। बड़े जहाजको चलानेके लिये पानीकी गहरायी अधिक चाहिये। इस उद्देश्यकी पूर्तिके लिये हर सौ किलोमीटरपर बराज बनाया जायगा। इन बराजोंपर 'लाक' बनाकर बड़े जहाजको पार कराया जायगा। गंगाको सौ-सौ किलोमीटरके १६ तालाबोंमें तब्दील कर दिया जायगा। इससे ढुलाईके खर्चमें बचत होगी। ट्रकसे १.५० रुपया प्रति किलो ढुलाई पड़ती है, ट्रेनसे एक रुपया और बड़े जहाजसे पचास पैसे। गंगापर बराज बनानेसे जहाजोंसे कम खर्चमें ढुलाई हो सकेगी।

संकेत हैं कि इस हेतु भारत सरकारकी स्वीकृति नहीं है। दरअसल बराज बनानेसे पर्यावरण और संस्कृतिपर तमाम दुष्प्रभाव पड़ेंगे। कई मछलियाँ अण्डे देने दूर जाती हैं। जैसे हिलसा समुद्रमें रहती है, परंतु अण्डा देनेके लिये वह एक हजार किलोमीटर नदीमें ऊपर जाती है। पूर्वमें इलाहाबादतक हिलसा पायी जाती थी। फरक्का बराजके बननेके बाद इसका ऊपर आना अवरुद्ध हो गया है। तमाम नयी बराज बनानेसे हिलसाके पूर्ण नष्ट हो जानेकी सम्भावना है। मछलीका महत्त्व भोजनतक सीमित नहीं है। जलकी गुणवत्ता बनाये रखनेमें मछलीका विशेष योगदान होता है। शृंगेरी-जैसे तीर्थस्थानोंपर बड़ी मछलियाँ साफ पानीमें तैरती दिखती हैं। नदीमें बहकर आनेवाली पत्तियों आदिको खाकर मछली पानीको शुद्ध रखती है। बराजोंके बननेसे हिलसाके साथ-साथ गंगाकी शुद्धता नष्ट हो जायगी।

दूसरा प्रभाव बालूपर पड़ेगा। नागपुर-स्थित नेशनल इनवायरनमेण्टल इंजीनियरिंग रिसर्च इन्स्टीट्यूटने पाया है कि गंगाकी बालूमें ताँबा, क्रोमियम तथा सूक्ष्म मात्रामें रेडियोधर्मी थोरियम कई गुना अधिक है। इन तत्त्वोंमें कीटाणुओंको मारनेकी क्षमता होती है। गंगाजलके शुद्ध रहनेका एक और कारण बताया है। पानीमें कालीफॉज नामक लाभप्रद कीटाणु तथा कालीफॉर्म नामक हानिकारक कीटाणु दोनों पाये जाते हैं। कालीफॉर्म मनुष्यके मलसे पानीमें प्रवेश करते हैं। ये स्वास्थ्यके लिये विशेष हानिप्रद होते हैं। साधारणतः एक प्रकारके कालीफॉज एक विशेष प्रकारके कालीफॉर्मको खा लेता है और नदीको साफ कर देता है। गंगाके कालीफॉजकी विशेषता है कि इसमें पाये जानेवाले कालीफॉज कई प्रकारके कालीफॉर्मको खा लेते हैं। गंगाकी अपनेको स्वयं शुद्ध करनेकी क्षमताका रहस्य इन्हीं कालीफॉजमें है। ये कालीफॉज बालूमें रहते हैं। बराज बनानेसे बालूका बहाव अवरुद्ध होगा। ताँबा आदि तत्त्व तथा कालीफॉज कम मात्रामें नीचेके क्षेत्रमें पहुँच सकेंगे। गंगाकी अपनेको शुद्ध करनेकी क्षमताका ह्रास हो जायगा।

बराजोंमें बालूके रुकनेसे देशकी पावन भूमिपर आघात होगा। समुद्रके पानीमें बालूकी स्वाभाविक भूख होती है, जैसे—छोटा बच्चा स्वभावसे ही जो कुछ मिलता है, उसे अपने मुँहमें डालना चाहता है। सामान्य रूपसे समुद्र अपने तटोंको काटकर बालूकी अपनी भूखको पूरा करता है। इसलिये विश्वके अधिकतर समुद्रतट पथरीले होते हैं। इनकी बालूको समुद्र खा चुका होता है, लेकिन किन्हीं स्थानोंपर नदीके द्वारा प्रचुर मात्रामें बालू लानेसे समुद्रकी यह भूख शान्त हो जाती है और नयी भूमि बनने लगती है। हरिद्वारसे गंगासागरतकका हमारा देश इसी प्रकार गंगाद्वारा लायी गयी अपार बालूसे बना है। ज्ञात हो कि विश्वकी तमाम नदियोंमें भारतकी गंगा और चीनकी पीली नदीमें अधिकतम बालू आती है।

बराज बनानेसे गंगाकी बालू अब समुद्रतक नहीं जायगी। बालू बराजोंके पीछे रुककर जमा हो जायगी। ऐसा फरक्कामें होता देखा जा सकता है। फरक्काके बननेके समय बराजके पीछे पानीकी गहराई पचहत्तर फुट थी। बालू जमा हो जानेके कारण आज यह मात्र १५ फुट रह गयी है। जो बालू समुद्रमें जानी चाहिये

* बड़े जहाजोंके लिये जलमार्ग।

थी, वह बराजमें रुक जानेसे समुद्र इससे वंचित हो गया है। उसकी बालूकी भूख शान्त नहीं हो रही है और वह देशकी भूमिको काटने लगा है। पिछले सौ वर्षोंमें गंगासागर द्वीपका लगभग तीन किलोमीटर क्षेत्र इसी कारण समुद्रमें समा चुका है।

आधुनिक रिसर्चसे पता चलता है कि पानीमें विचारोंको याद रखनेकी क्षमता होती है। बदरीनाथ और केदारनाथके पवित्र मन्दिरोंसे गंगाजल शिव तथा विष्णुके प्रसादको लेकर आता है। इसलिये साधक बताते हैं कि गंगाके किनारे आसानीसे ध्यान लग जाता है। अन्य नदियोंके किनारे ऐसा नहीं होता है। गंगाकी यह आध्यात्मिक शक्ति उसके अविरल बहावसे रक्षित होती है। सौ-सौ किलोमीटर लम्बी झीलोंमें पानी लगभग शिथिल रहेगा और गंगाकी यह आध्यात्मिक शक्ति जाती रहेगी। इन कारणोंको देखते हुए ही महामना मालवीयजीने ब्रिटिश सरकारको भीमगोड़ा बराजमें एक हिस्सेको खुला रखनेको मजबूर किया था कि नीचेके लोगोंको आध्यात्मिक लाभ मिल सके। काल-क्रममें भारतकी सरकारोंने इस द्वारको बन्द ही नहीं किया, अपितु अलकनन्दापर विष्णुप्रयाग तथा श्रीनगर बाँध बनाये और भागीरथीपर टिहरी बाँध बनाकर गंगाकी मूल आध्यात्मिक शक्तिको नष्ट कर दिया है।

मुझे बताया गया है कि टिहरी बाँधमें डेढ़ इंचकी पाइपके माध्यमसे पानी लगातार बहता है। टिहरी झीलके सड़े हुए पानीकी इस धागे-जैसी धाराको 'अविरल' मान लिया गया है। अब नया भ्रम बनाया जा रहा है कि पन्द्रह प्रतिशत पानीको लगातार छोड़ा जायगा, लेकिन झीलसे यदि सौ प्रतिशत पानी भी छोड़ दिया जाय तो भी वह अविरल नहीं होता है, जैसे ट्यूबवेलके पानीको टंकीमें भरनेके बाद उसकी अविरलता तथा ताजगी नष्ट हो जाती है। गंगाको अविरल बनानेके लिये चीला, भीमगोड़ा, बिजनौर, नरोरा तथा फरक्का-जैसे पूर्वमें बने हुए तमाम अवरोधोंको हटानेका काम हाथमें लेना चाहिये। सिंचाईके लिये पुराने भीमगोड़ा-जैसे बराज बनाये जा सकते हैं जिससे मूल धारा अविरल बहती रहती थी।

बड़े जहाजोंसे पचास पैसा प्रति किलो ढुलाई खर्च पड़ता है। मेरा अनुमान है कि छोटे जहाजोंसे सत्तर पैसा पड़ेगा। एक ओर यह बचत है तो दूसरी ओर पूरे देशवासियोंको गंगाके अविरल प्रवाहसे मिलनेवाला लाभ है। बीस पैसेकी बचतके लिये अपने देशकी संस्कृतिको खण्डित नहीं करना चाहिये। यदि बड़े जहाज चलाने ही हैं, गंगामें अधिक पानी छोड़ना चाहिये। फिलहाल छोटे जहाजसे ढुलाई करनेकी योजना बनानी चाहिये।

गंगा कहे पुकार के

(डॉ० श्रीशुभंकर बाबूजी एम० ए०)

हे प्रभो! हे शिवशंकर! मैं गंगा हूँ। मैं आपकी शरणमें आयी हूँ। हे भोलेनाथ! समाधिसे जगिये, मेरे अपराधोंको क्षमा कीजिये और कृपापूर्वक अपनी जटाओंमें मुझे वापस बुला लीजिये।

हे आशुतोष! मैं भगवान् श्रीहरिके वामपादांगुष्ठकी नखमणियोंसे निकलकर चिरकालतक पितामह ब्रह्माके कमण्डलुमें सुखपूर्वक निवास करती रही। भगवान् वैकुण्ठनाथका मुझपर अगाध स्नेह था, किंतु हरिवल्लभा श्रीसरस्वतीजी इसे सह न सकी थीं और उन्होंने मुझे भूलोकमें चले जानेका शाप दे दिया था। उधर राजर्षि सगरके वंशज राजा भगीरथने अपने पूर्वजोंको तारनेहेतु मुझे भूलोकमें भेजनेके लिये ब्रह्माजीको राजी कर लिया था। मैं लाचार थी। वैकुण्ठसे निष्कासनकी पीड़ासे मेरा हृदय अत्यन्त व्यथित था। हालाँकि सगरपुत्रोंको तारनेसे सम्पादित होनेवाले लोकमंगलका चिन्तनकर मैं किंचिद् उल्लसित भी थी, किंतु विरह-वेदना तो थी ही। मैंने सरस्वती बहनके शापको शिरोधार्य किया और ब्रह्माजीके आदेशानुसार मैं भूलोकको चल पड़ी।

मार्गमें विभिन्न लोकोंके निवासियोंद्वारा पूजित और सत्कृत होनेसे मेरी विरह-वेदना कुछ कम हुई और मैं पूर्णतः निर्विकार भावसे (सामान्य गतिसे) नीचे उतरने लगी। अचानक मैंने पर्वतराज कैलासपर आपको खड़े

देखा। मेरे स्वागतार्थ देवाधिदेव महादेव खड़े हैं, यह जानकर मैंने अपना सौभाग्य न माना, अपितु मैं रोषसे भर गयी। मेरे मनमें अभिमान जग गया। मुझे अपने वेगपर गर्व हो आया। मैंने आपको अपनी तरंगोंसे बहा ले जानेका विचार किया। हे देवाधिदेव! आपने मेरे इस कुविचारको जान लिया तथा मेरे दम्भको तोड़ने हेतु आपने अपनी जटाओंमें मुझे इस तरह बाँधकर लपेट लिया कि मैं उसमें कैद होकर रह गयी। वर्षोंतक मैं बाहर निकलनेका मार्ग ढूँढ़ती रही, पर पा न सकी। अन्ततः भगीरथने आपसे विनती की। तब आपने अपनी जटाका एक बाल खोलकर मुझे बाहर निकाला। लोक मंगलको उतावली मैं आपको धन्यवाद कहे बिना भगीरथके रथके पीछे चल पड़ी और कपिलमुनिके आश्रममें जाकर मैंने सगरपुत्रोंको तार दिया।

कृतज्ञ सगरपुत्रोंने मेरी वन्दना की। सांसारिकोंने मेरा यश गाया। अपनी यशोगाथाकी कर्णप्रिय स्वरलहरियोंको सुनकर मैं आनन्दविभोर हो गयी और मर्त्यलोकके निवासियोंके हितमें तन-मनसे जुट गयी। मैंने इन्हें अपना सुधोपम नीर पिलाकर जिलाया और सुस्वास्थ्य दिया। मैंने इनके खेतोंको सींचकर उर्वर बनाया। अपने नीर-शरीरमें होनेवाली असह्य वेदनाओंको सहकर भी मैं इनकी नौकाओंको गन्तव्यतक पहुँचाती रही। मैंने इन्हें मुँहमाँगा आशीर्वाद देकर इनके इहलोकको सँवारा तथा इनकी तीनों पीढ़ियोंके पापोंका प्रक्षालन करते हुए इनका परलोक सुधारा। इन्हें मुक्ति दिलायी, किंतु हे प्रभो! ये तो महाकृतघ्न निकले। इन्हें मेरी यह उदारता तनिक भी न सुहाई। इन्होंने मेरे सभी अहसानोंको भुला दिया और मेरे नीरशरीरका व्यापार करना आरम्भ कर दिया।

हे प्रभो! इन्होंने पहले तो मेरे नीरशरीरको कई जगहोंपर बाँध डाला और फिर उसमेंसे मेरा जल निकाल-निकालकर बोतलोंमें भरकर बेचने लगे। मेरी धमनियाँ सिकुड़ गयीं। विशेषतः टिहरीमें, जो मेरे सम्पूर्ण शरीरके कण्ठप्रदेश-सा है, इन्होंने मुझे इस प्रकार बाँध रखा है, मानो मैं कोई पालतू पशु हूँ। मेरी स्वतन्त्रतापर परतन्त्र भारतमें भी ऐसा अंकुश नहीं लगाया गया था, जैसा कि आज लगा दिया गया है।

आज भारत स्वतन्त्र है, किंतु उसे वैश्विक पहचान देनेवाली उसकी गंगा माँ बेड़ियोंमें जकड़ी हुई परतन्त्र है। न खुलकर साँस ले सकती है और न मनमाना चल-फिर सकती है। आज रोज हजारों टन कूड़ा-करकट मेरे आँचलमें डाल दिया जाता है। नगरों और कल-कारखानोंका लाखों गैलन अपशिष्ट जल मेरी धारामें नित्य बहा दिया जाता है। मुक्तिकी लालसामें असंख्य पशुओं और मनुष्योंके लावारिस शवोंको मेरे आँचलमें कन्दुकवत् फेंक दिया जाता है। मेरे आँचलमें फेंकी जानेवाली अर्धदग्ध अस्थियों और राखकी तो तौल ही नहीं की जा सकती। मेरी माँका आँचल फट गया है, उसकी साड़ीके किनारे (तटबन्ध) तार-तार हो चुके हैं, उसका कण्ठ अवरुद्ध हो गया है, उसे श्वास लेनेमें कष्ट हो रहा है, अनेक जगहोंसे बँधे होनेसे उसके शरीरमें पीड़ा हो रही है और उसके नीर-शरीरमें जगह-जगह कूबड़ (रेतीले प्रदेश) निकल आये हैं—इन सब बातोंकी चिन्ता आज किसीको नहीं है।

गत सदीमें धर्मात्मा महामना मदनमोहन मालवीयजीने मेरी आजादीके लिये प्राणपणसे वकालत की थी, किंतु आज कोई इस ओर ध्यान नहीं देता। किसीकी मुझमें भक्ति नहीं रही। सब मुफ्तमें मुक्ति चाहते हैं। मुझे टिहरीके बन्धनसे कब मुक्ति मिलेगी?—यह कोई नहीं बतलाता। आजके कलियुगी पुत्र (आधुनिक पीढ़ी) घाटोंपर जमा थोड़ी-बहुत मिट्टी हटाकर अपनेको गंगा माँका सेवक कहलवाना चाहते हैं। ये निर्लज्ज पुत्र अपनी माँका सौन्दर्य दिखा-दिखाकर विदेशियोंसे धन ऐंठना और अपनी कमाई बढ़ाना चाहते हैं। हे प्रभो! अब यह सब मुझसे नहीं सहा जाता। लोग जब आपको मेरा दूषित जल चढ़ाते है, तो मेरा कलेजा फट जाता है। मैं रो पड़ती हूँ। आज श्रद्धा और भक्ति बिलकुल खो गयी है। कृतज्ञताका भाव नहीं रहा। इसलिये हे प्रभो! अब आप कृपापूर्वक अपनी जटाओंमें मुझे पुनः वापस बुला लीजिये।

हे भूलोकनिवासियो! तुम्हारी धरती तुम सम्हालो, अब मैं जा रही हूँ।

क्या गंगाका प्रवाह पुनः निर्मल होगा ?

(श्री वी० पी० नैनवाल)

गंगाजीकी महिमा, पवित्रता, मुक्तिदातृत्व, स्वर्गदातृत्व इत्यादि बातें जन-जनको आकर्षित करती हैं। जिस नदीके जलको अमृत कहा गया है, इसके लिये भारतीयोंमें ही नहीं, विदेशियोंमें भी भारी जिज्ञासा उत्पन्न करा दी है कि आखिर इस नदीके जलमें क्या विशेषता है? एक जर्मन वैज्ञानिक इस अद्भुत पहेलीको समझनेके लिये आठ वर्षतक अलग-अलग समयमें जल एकत्रित करके प्रयोगशालामें देखता था। उसने बदरीनाथ, विष्णुप्रयाग, नन्दप्रयाग, कर्णप्रयाग, रुद्रप्रयाग तथा देवप्रयाग, जहाँपर भागीरथी अलकनन्दामें मिलकर गंगाजी बन जाती हैं—इन स्थानोंसे जलके नमूने एकत्रित किये और वह अपनी प्रयोगशालामें परीक्षण करता रहा। भारतकी तथा संसारकी सभी बड़ी-बड़ी नदियोंका जल भी एकत्रितकर वह परीक्षण करता रहा, उस वैज्ञानिकको यह जानकर अचम्भा हुआ कि गंगाजीके जलमें कुछ विशिष्ट खनिज विद्यमान हैं, जो अन्य नदियोंके जलमें उपलब्ध न थे। गंगाजीके जलमें प्राणवायु (ऑक्सीजन)-की मात्रा भी अधिक पायी गयी। इसका विशेष कारण यह है कि जलधाराएँ बड़ी-बड़ी चट्टानोंसे टकराती हैं और जलमें प्राणवायु, जो प्रकृतिमें उपलब्ध है, इस जलमें घुल जाती है। इस जलकी गुणवत्ता बढ़ जानेसे ही गंगाजलको अमृतजल कहा गया है, एक अन्य कारण भी है कि गंगाजी (भागीरथी)-में अलकनन्दाकी तुलनामें जलराशि कम है, अलकनन्दाकी सहायक नदियाँ विष्णुगंगा (विष्णुप्रयाग), नन्दाकिनी (नन्दप्रयाग), पिण्डर नदी (कर्णप्रयाग), मन्दाकिनी (रुद्रप्रयाग) तथा भागीरथी देवप्रयागमें मिलती हैं। सभी नदियोंका उद्‌गम हिमाच्छादित पर्वतशिखरों, हिमखण्डों आदिसे है। ये सब नदियाँ बर्फका जल लेकर बहती हैं और भागीरथीमें मिलकर गंगा कहलाने लगती हैं।

जर्मन वैज्ञानिकने अपने शोधमें लिखा कि गंगाजी तथा उसकी सहायक नदियोंकी तलहटीमें कुछ खनिज हैं, जो जलकी गुणवत्ता बढ़ाते हैं, ये खनिज भारतकी अन्य नदियों तथा संसारकी अन्य नदियोंमें उपलब्ध नहीं हैं, उस वैज्ञानिकने यह भी लिखा है कि इस जलकी गुणवत्ता ऋषिकेशतक ही है। हरिद्वारमें प्रदूषणके कारण यह गुणवत्ता प्रायः समाप्त हो जाती है। यह विदित है कि हिमालयकी पर्वत घाटियोंमें अनेक प्रकारकी औषधियाँ उपलब्ध हैं, जो प्राणदायिनी एवं शक्तिवर्धक हैं। इन औषधियोंके सूखनेपर तथा इनकी जड़ोंसे जो जलराशि नदियोंमें मिलती है, वह भी गुणवत्ता बढ़ानेमें सहायक है।

अलकनन्दा की घाटी (बदरीनाथसे ऋषिकेश)-में बहनेवाली इस नदीको काफी समय पहले धवली कहा जाता था। आज भी पुराने वृद्ध लोग इसे धवली (अपभ्रंश नाम धौली गंगा) ही कहते हैं। धवल (सफेद)-से धवली शब्द बना है, जिसे स्थानीय भाषामें धौली कहा जाता है। इस नदीमें जलराशि भागीरथीसे अधिक है। बदरीनाथसे आनेवाली जलराशि बड़ी-बड़ी चट्टानोंसे टकराती है। पानी धवल दिखायी पड़ता है, इसलिये इसका धवली नाम पड़ गया है। अपने पथमें यह धवली विष्णुगंगा, पिण्डर नदी, नन्दाकिनी, मन्दाकिनी और भागीरथीको अपनी जलराशिमें समाहितकर एक विशाल नदी गंगाजीके नामसे प्रसिद्ध है।

अब समस्या है कि जिस पतितपावनी अमृतमयी जलराशि गंगाजीकी मनुष्य पूजा-वन्दना करता है, वही जलराशि आज देशके सामने एक नालेके रूपमें दिख रही है। जिस जलधाराकी महिमा, गरिमा विश्वविख्यात है, वही गंगाजी आज अपने अस्तित्वके लिये कराह रही है, सिसक रही है। उसमें रहनेवाले जीव-जन्तु भी पीड़ामय जीवन जी रहे हैं या मर गये हैं। एक समय था, जब मछलियाँ नदीमें बहुतायतसे दिखती थीं, अब

यह नदी मत्स्यविहीन है। जबतक यह नदी पहाड़ोंकी घाटियोंमें रमण करती है, वहाँ बहुत सारी मछलियाँ शवोंको खाती हैं। देखा गया है कि बहुत कम शव ऋषिकेश एवं हरिद्वार पहुँचते हैं। गंगाजीकी सहचरी यमुनाजीका तो गंगाजीसे भी बुरा हाल है। स्थिति अवर्णनीय है। दिल्लीके निगमबोध घाटपर तो यमुनाजी और शहरका मैला ले जानेवाले बड़े नाले एक-जैसे लगते हैं, कोई भी व्यक्ति यमुनामें नहाना तो रहा अलग, वह जलको छूना भी नहीं चाहता, जिस यमुनाजीको गंगाजीकी सहचरी माना जाता है, वह देशकी राजधानीके मध्यसे एक गन्दा नाला-जैसे बहती है।

एक समय लन्दन तथा मास्को शहरोंके बीचों-बीच बहनेवाली टेम्स और वोल्गा नदियाँ भी इसी रूपमें बहती थीं, किन्तु वहाँकी सरकारोंने सशक्त अभियान चलाया, नियम बनाया, जन-जागरण किया, आवश्यकतानुसार दण्ड भी दिया प्रदूषण करनेवालोंको; परिणाम यह हुआ कि आज दोनों नदियाँ स्वच्छ धाराके साथ बहती हैं, वहाँके देशवासी जलक्रीडा करते देखे जाते हैं। क्या ऐसा अभियान इस देशमें नहीं चलाया जा सकता? पहले लोग शवोंको गाँव या नगरोंके पास ही जलाकर केवल राख ही गंगामें विसर्जित करते थे, किंतु अब आर्थिक स्थिति तथा उपलब्ध साधनोंसे शवोंको गंगाजीके पास जलानेको ले जाते हैं। लकड़ी पर्याप्त मात्रामें न होनेसे अधजली लाश पानीमें बहा दी जाती है, इतना ही नहीं लोग अपने मृत पालतू पशुओंको भी नदीमें डाल देते हैं, कुछ कहते हैं कि वे भी स्वर्ग पहुँच जायँगे, किंतु ऐसा व्यापक अभियान चलाना होगा कि जो गंगाजीमें गन्दगी डालेगा, वह स्वर्ग नहीं अपितु नरक जायगा, उसके लिये कुम्भीपाक नरक आरक्षित है। गंगाजीमें किसी भी प्रकारका अपशिष्ट यथा मालाएँ, मूर्तियाँ, केश, पुस्तकें इत्यादि डालनेकी पाबन्दी होनी चाहिये।

गंगाप्रदूषण—कारण और निवारण

(स्वामी श्रीशिवानन्दजी महाराज, कनखल)

अंशुमान्, दिलीप एवं भगीरथकी तपस्यासे स्वर्गसे पृथ्वीपर लायी गयी गंगा, पूरे उत्तर भारतकी जमीनको उर्वरा शक्ति प्रदान करनेवाली गंगा, अपने किनारे वास करनेवाले अनेक साधु-सन्तों-विचारकों-भक्तों एवं ऋषि-मुनियोंको अपने आगमनके पश्चात्से ही शान्ति और सिद्धि प्रदान करनेवाली गंगा, अपने किनारे होनेवाले दो-दो महाकुम्भ एवं अर्द्धकुम्भमें करोड़ों लोगोंको अपनी आस्थाकी डुबकी लगाकर कृतकृत्य अनुभव करानेवाली गंगा, अनेक पुराणों-रामायण-महाभारत एवं आधुनिक कालके अनेक कवि-लेखक एवं चिन्तकोंके विचारोंमें प्रवेशकर उसे वर्णित करानेवाली गंगा, आज भी उसी शक्ति-सामर्थ्य-पावनतासे अपने स्रोतसे निकलनेवाली गंगा आज अतिभोगवादी दृष्टिकोण रखनेवाले लोभी व्यक्तियों, व्यापारियों एवं राजनेताओंकी उपेक्षासे अपनी महत्ताको खोती प्रतीत हो रही है।

हमारा यह कर्तव्य बनता है कि अपने पूर्वजोंसे प्राप्त इस अमूल्य निधिको हम अपनी आनेवाली पीढ़ीको उसी रूपमें प्रदान करें। कहीं ऐसा न हो कि भविष्य इस समयके रहनेवालेको लोभी, लालची, भोगी एवं अन्य कई उपाधियोंसे वर्णित करे और आनेवाली पीढ़ीको किसी नदीकी परिभाषा जाननेके लिये विदेशमें जाकर अध्ययन करना पड़े कि नदी अपने उद्गमस्थानसे चलकर लगातार, अबाधित, कलकल करती हुई, इठलाती हुई अनेक जलजीव, किनारेके पशु-पक्षी, मनुष्य एवं अन्यको शीतलताका बोध कराती हुई बहती है और अपने लयस्थान समुद्रमें समा जाती है।

गंगा सजीव है, जीवन्त है। आधिभौतिक, आधिदैविक एवं आध्यात्मिक गुणोंसे युक्त है। अभी भी इसकी

आधिदैविक एवं आध्यात्मिक शक्ति उसी तरह अक्षुण्ण है, परंतु आधिभौतिक रूपको नष्ट करनेकी चेष्टा की जा रही है।

वस्तुस्थिति यह है कि गंगा अपनी पूर्ण पवित्रता, जीवनदायिनी शक्तिके साथ पूर्ववत् अपने उद्गमस्थानसे निकलती है और उसे हम प्रदूषित कर रहे हैं। हम यदि उसे प्रदूषित करना बन्द कर दें तो वह अभी भी सत्ययुगकालीन अपनी समर्थ शक्तिके साथ पृथ्वीपर मौजूद रहेगी।

गंगाको प्रदूषित करनेके साथ-साथ उसकी जीवन-रक्षक शक्तियोंको भी कमजोर किया जा रहा है।

गंगाको प्रदूषित करनेवाले कारण एवं उनका निवारण

१. गंगा-किनारे बसे हुए शहरका समस्त मलबा, मल आदिको गंगामें डाला जाना एवं उसके शोधनके नामपर हजारों करोड़ रुपये लेकर उसका बन्दरबाँट करना। इसके निवारणके लिये जो शहर गंगाके किनारे या कहीं भी बसे हों—उन शहरोंके म्युनिसपैलिटी या नगरनिगमका यह कर्तव्य है कि वह अपने अपशिष्टका शोधनकर उसे गंगा या अन्यत्र नदीमें न डालकर उस परिष्कृत जलका स्वयं अपनी बागवानी या अन्य कार्योंमें प्रयोग करें। शोधित या अपशिष्ट मलको नदीमें न डालें।

२. गंगाके किनारे लगे चमड़ा उद्योग या अन्य उद्योग गंगाको सबसे ज्यादा प्रदूषित कर रहे हैं, इसके निदानके लिये गंगाके किनारेसे कम-से-कम ५ किलोमीटर दूर ले जाकर इनके कचरेको ये उद्योग स्वयं शोधित करें और उस शोधित जलको भी गंगाजीमें न छोड़ें।

३. गंगाके किनारेकी जमीनमें जो रासायनिक खाद और कीटाणुनाशकका प्रयोग किया जाता है, वह भी गंगाको दूषित करनेमें अहम भूमिका निभा रहा है। इसके लिये गंगाके किनारेके ५ किलोमीटरके दायरेमें औरगेनिक खेतीका ही प्रावधान हो तथा इसका कड़ाईसे पालन करवाया जाय।

४. गंगा-किनारेके श्मशानघाटोंमें जो अधजली लाशोंको गंगामें डाल दिया जाता है, यह गंगामें जलजीवोंके अभावके कारण जलको दूषित करता है, इसपर भी पूर्ण पाबन्दी लगनी चाहिये।

५. गंगामें स्नान करनेवाले कपड़े एवं अन्य सामग्रीको गंगामें फेंक देते हैं। इससे भी गंगाकी पवित्रतापर असर पड़ रहा है। इसपर भी पाबन्दी लगनी चाहिये।

६. हरिद्वारमें गंगासे होकर हजारों ट्रक-ट्रैक्टर इसके जलको रौंदते हुए अपने ईंधन/डीजलको जलमें छोड़ते हुए जिस तरहसे थोड़े बचे हुए जलको प्रदूषित करते हैं, उससे उसमें रहनेवाले जीव-जन्तुओंका जीवन असुरक्षित हो रहा है, इसपर पूर्ण पाबन्दी लगनी चाहिये।

यह तो हुआ गंगाको प्रदूषित करनेका कारण, परंतु गंगाको प्रदूषित ही नहीं किया जा रहा है, अपितु इसकी जीवनी शक्तिको भी नष्ट किया जा रहा है।

जीवनी शक्तिको नष्ट करनेवाले कारक

१. नदीकी शक्ति उसकी अबाध, अविरल गतिमें ही वास करती है, परंतु गंगाको बाँधोंमें अनेक जगह बाँध देना उसकी अबाध गतिको रोकना ही नहीं हुआ, बल्कि गंगा जो अपने साथ गाद लाती है, जिसमें अनेक तत्त्व हैं, जो अपनी शक्तिसे गंगाके जलमें वह सामर्थ्य उत्पन्न करती है कि इसका यह जल यदि हम बाहर भी रखते हैं तो यह संक्रमित नहीं होता है, उस गंगाको बाँधोंमें बाँध देनेसे वह शक्ति कमजोर हो जा रही है। साथ-ही-साथ गंगाकी शीतलतापर भी असर पड़ रहा है। टिहरी बाँधके पूर्व एवं बादमें हरिद्वारके गंगाजलकी शीतलतापर काफी असर हुआ है।

२. गंगाको सुरंगोंमें ले जानेसे उसका भूमि एवं आकाशसे सीधा सम्पर्क टूट जाता है, जिसका आधिदैविक एवं आध्यात्मिक प्रभावके साथ-साथ आधिभौतिक प्रभाव भी पड़ता है।

३. हरिद्वारमें करीब नौ महीना गंगामें जल नहींके बराबर ही रहता है। इस समयमें नील धारासे मात्र ४००

क्यूसेक और दक्षधारासे २०० क्यूसेक यानि कुल ६०० क्यूसेक जल ही मुख्य धारासे होकर जाता है और वहीं जगजीतपुर (हरिद्वार)-में पूरे हरिद्वारका मलजलमेंसे मात्र कुछ शोधितकर पूरा गंगामें डाल दिया जाता है। वहीं गंगनहरसे १०५०० (साढ़े दस हजार) क्यूसेक जल बह रहा होता है और अब टिहरी डैमसे जो ज्यादा जल छोड़ा जायगा, उसके लिये उसकी क्षमताको १५००० क्यूसेक कर दिया गया है यानी मुख्य धारामें गंगाका मात्र ४ प्रतिशत जल ही रहता है, वह भी अपनी जीवनी शक्तिका ९० प्रतिशत खोकर।

४. हरिद्वारमें गंगामें पत्थरका रहना अति आवश्यक है। इसके दो कारण हैं। पहला गंगा जब पहाड़से अपने प्रबल वेगसे उतरती है तो यह पत्थर उसकी मिट्टीके कटानको रोकता है, साथ-साथ ये पत्थर इसकी जीवनी शक्तिको मजबूत करते हैं। यहाँके ये पत्थर साक्षात् शिवके प्रतीक हैं। कहा तो यहाँतक जाता है कि एक बार भगवान् परशुराम हरिद्वारकी गंगाके पत्थरको लेकर कहीं शिवलिंग स्थापित करने जा रहे थे, परंतु शिवतुल्य यह पत्थर हरिद्वारके पवित्र गंगाजलको छोड़कर कहीं बाहर जानेके लिये तैयार नहीं था, इस कारण रोने लगा, परंतु ऋषि परशुरामने उसे आश्वस्त किया कि श्रावण कृष्ण चतुर्दशीको हरिद्वारके गंगाजलसे ही उसे अभिषिक्त किया जायगा और यह परिपाटी आज भी इस इलाकेमें चलती हुई मौजूद है।

ऐसे शिवतुल्य पत्थरको पूरे हरिद्वारमें गंगाके किनारे मौजूद २० से ज्यादा स्टोन-क्रेशर रात-दिन खोदकर नष्ट कर रहे हैं। कल्पना करनेकी बात है कि एक भी पत्थर ऊपरसे बहकर हरिद्वार नहीं आता है। अब यदि इसी तरह यह जारी रहा तो एक दिन हरिद्वारमें ही गंगा पातालगामिनी हो जायँगी।

५. हरिद्वारमें ही गंगाकी मुख्य धारामें मात्र ६०० क्यूसेक जल होना, ऊपरसे पूरे हरिद्वारका शोधित और विना शोधित मल, १००० ट्रक-ट्रैक्टरसे गंगाके जलको रौंदना तथा वहीं गंगामें रहनेवाले जल-जीवों जैसे मछली आदिका करीब-करीब नष्ट हो जाना—इस सबने गंगाके अस्तित्वको विलीन-सा कर दिया है।

इस तरह एक तरफ इसकी जीवनदायिनी शक्तिको नष्ट करना तथा दूसरी तरफ इसे अपने स्वार्थके लिये प्रदूषित करना, साथ ही साथ यह ढोंग करना कि हम गंगाको साफ कर रहे हैं, इसे कैसे व्यक्त किया जाय?

अतः यदि गंगाको सही अर्थमें अपने पूर्व स्वरूपमें लाना है तो—

१. समस्त प्रस्तावित बाँधोंका प्रस्ताव निरस्त किया जाय।

२. निर्माणाधीन बाँधोंका निर्माण रोका जाय।

३. निर्मित बाँधोंको धीरे-धीरे नष्ट किया जाय।

४. हरिद्वारमें ६० प्रतिशत जल मुख्य धारामें तथा ४० प्रतिशत जल गंगनहरमें प्रवाहित हो।

५. हरिद्वारमें गंगासे होकर कोई भी ट्रक-ट्रैक्टर न जाय तथा पत्थरके खननपर पूर्ण प्रतिबन्ध हो।

६. समस्त उद्योगोंको गंगासे कम-से-कम ५ कि०मी० दूर रखना एवं उसके अपशिष्टोंको किसी भी रूपमें गंगामें न जाने दिया जाय।

७. गंगा किनारे बसे शहर अपने सीवर/मलजलको शोधितकर किसी अन्य रूपमें प्रयोग करें तथा गंगामें न डालें।

८. गंगा-किनारेसे ५ किलोमीटरतक केवल औरगेनिक खेती ही की जाय।

९. गंगामें अधजले शवोंको न डाला जाय।

१०. गंगामें मछली आदि जन्तुओंका संरक्षण किया जाय।

यदि उपर्युक्त बातोंपर ध्यान दिया जाय तो गंगा अपने पूर्वरूपमें हमारे साथ होगी और इसके इस रूपमें मौजूदगीमात्रसे आज समाजमें जो अनेक बुराइयाँ आ गयी हैं, उनका भी बहुत हदतक निराकरण होगा, तभी 'गङ्गे तव दर्शनान्मुक्तिः' सही अर्थमें प्रत्यक्ष होगा।

गंगाजलपर वैज्ञानिक अनुसन्धान

(श्रीश्रीकृष्णजी श्रीवास्तव)

भारतीय वाङ्मयमें गंगाजल एवं परमपावनी भागीरथीकी अपार महिमा है। भारतीय एवं विदेशी मनीषियोंने भी इससे प्रभावित होकर अपनी भावनाओंकी पुष्पांजलियाँ अर्पित की हैं। गोस्वामी तुलसीदासजीने तो एक ही चौपाईमें सब कुछ कह दिया है—

गंग सकल मुद मंगल मूला। सब सुख करनि हरनि सब सूला॥

भारतकी प्राचीनतम सभ्यता एवं संस्कृतिने जिस किसी भी विषयका धार्मिक गुणगान किया है, उसमें लोकहितकी दृष्टिसे कुछ रहस्य छिपा है, जो वैज्ञानिक अनुसन्धानसे स्पष्ट हो सकता है। गंगाजलपर वैज्ञानिक मत भी यही प्रमाणित करते हैं।

सन् १९३१ ई० में प्रख्यात जल-विशेषज्ञ डॉ० एफ० कोहिमान भारत आये। उन्होंने परीक्षाके लिये वाराणसीसे गंगाजल लिया और सन् १९३२ ई० में उन्होंने जो कुछ लिखा, उसका आशय यही था कि गंगाजल अत्यन्त स्वच्छ और पवित्र है, जिसमें रक्त बढ़ानेकी शक्ति और कीटाणु-नाश करनेकी अद्भुत क्षमता है। शरीरके सर्वथा अशक्त होनेपर गंगाजल देनेसे जीवनीशक्ति बढ़ती है और रोगी आश्चर्यजनक आनन्दका अनुभव करता है। विख्यात फ्रांसीसी डॉ० डी० हेरेल और अमेरिकाके एक प्रसिद्ध लेखक मार्क ट्वेनने अपने शोध एवं अनुभूतियोंके आधारपर कहा है कि संक्रामक रोगोंको नष्ट करनेवाला सर्वश्रेष्ठ प्रयोग गंगाजल है। सन् १९२४ ई० में बर्लिनके प्रसिद्ध डॉ० जे० ओलिवर भारत आये। यहाँ उन्होंने प्रायः सभी प्रसिद्ध नदियोंके जलकी परीक्षा की। अन्तमें उनका एक लेख न्यूयार्कके 'इन्टरनेशनल मेडिकल जर्नल' (International Medical Journal) में प्रकाशित हुआ। उसमें उन्होंने अपना स्पष्ट मत व्यक्त किया था कि गंगाका जल संसारके सब जलोंसे स्वच्छ, कीटाणुनाशक तथा स्वास्थ्यकर है। विज्ञानाचार्य श्रीहैनवरीने भी अनेक परीक्षणोंके उपरान्त गंगाजलकी प्रशंसामें अपना ऐसा ही मत व्यक्त किया था।

गंगाभक्त पं० श्रीगंगाशंकरजी मिश्र, लिखते हैं— 'हैजाके रोगियोंके शव गंगा एवं यमुनामें फेंके जाते हैं। कहीं तो शव अधजले होते हैं और कहीं वैसे ही फेंक दिये जाते हैं—इस दृष्टिसे भी इन जलोंकी रासायनिक परीक्षा की गयी, जिससे पता चला कि इनके जलमें कुछ ऐसे तत्त्व विद्यमान हैं, जिनमें हैजेके कीटाणुओंको नष्ट कर देनेकी शक्ति है। पहली परीक्षामें जल आधे घण्टेतक गरम किया गया, फिर उसे गंगा, यमुना तथा आगरेके नलके पानीको बराबर मात्रामें लेकर नलियोंमें भरा गया और उनमें कीटाणु छोड़े गये। परिणाम इस प्रकार हुआ—यमुनाजलमें १२५०० कीटाणु ४८ घण्टेमें ५००० रह गये, नलके पानीमें १४००० कीटाणु उतने ही कालमें १५००० हो गये और गंगाजलमें १०००० के ११००० हो गये। इसके बाद गंगाजल तथा कूपजलको बिना गरम किये हुए ही केवल अच्छी तरह छानकर परीक्षा की गयी तो फल इस प्रकार हुआ— गंगाजलमें ५५०० कीटाणु तीन घण्टेमें ही साफ हो गये और कूपजलमें ८५०० के ४९ घण्टेमें १५०० हो गये। इससे यह सिद्ध हुआ कि गंगाजलको गरम करनेसे उसमें कीटाणुओंको नष्ट करनेकी शक्ति जाती रहती है। इसलिये गंगाजलको गरम करना दोष माना जाता है।'

व्रजभाषाके महाकवि पद्माकरजी कुष्ठरोगसे ग्रस्त हो गये थे; किंतु गंगाके पावन तटपर रहकर गंगाजलके सेवन करते रहनेसे वे इस कठिन रोगसे मुक्त हुए।

गंगाजीके भक्त पं० श्रीदयाशंकर दुबे, एम्० ए०, एल-एल० बी० ने लिखा है कि हम अपने अनुभवसे कह सकते हैं कि जब हमने गंगाजलका सेवन आरम्भ किया, तबसे हम कभी बीमार नहीं पड़े। सचमुच गंगाजलमें कुछ ऐसे तत्त्व हैं कि रोगी और दुर्बल मनुष्यको टॉनिक पीनेकी आवश्यकता नहीं रहती, गंगाजल पीने और स्नान करनेसे ही शरीरमें अपूर्व शक्ति और क्षमता आ जाती है। गंगाजल पीनेसे अजीर्ण रोग, जीर्ण ज्वर तथा संग्रहणी, राजयक्ष्मा, दमा आदि रोग नष्ट हो जाते हैं और गंगाजलसे स्नान करनेसे मस्तिष्कके समस्त रोग तथा चर्मरोग अच्छे हो जाते हैं।

मेरे परमपूज्य पिताजीको लकवा मार दिया था। वह अपंग हो गये, स्मरणशक्ति जाती रही और सब विद्याका ज्ञान, यहाँतक कि वर्णमालाके अक्षरोंका भी

ज्ञान नहीं रहा। इसपर उन्होंने गंगाजलका सेवन आरम्भ किया तो कुछ मासके अन्दर ही स्वस्थ हो गये तथा शक्ति एवं ज्ञान लौट आया।

आयुर्वेदकी दृष्टिसे भी गंगाजलमें रोग-निवारणकी अद्भुत क्षमता है। यात्री इब्नबतूता लिखता है—'सुल्तान मुहम्मद तुगलकके लिये गंगाजल बराबर दौलताबाद जाया करता था। अबुलफजलने आइने अकबरीमें लिखा है कि बादशाह अकबर गंगाजलको अमृत समझता था। घरमें, यात्रामें वह गंगाजल ही पीता था।' फ्रांसीसी यात्री बर्नियरने लिखा है—'दिल्ली और आगरामें औरंगजेबके लिये खाने-पीनेकी सामग्रीके साथ गंगाजल भी रहता था। स्वयं बादशाह ही नहीं दरबारके अन्य लोग भी गंगाजल प्रयोग करते थे।'

जिज्ञासा होती है कि गंगाजलमें कौन-से वैज्ञानिक गुण एवं तत्त्व हैं, जिनसे रोग नष्ट हो जाते हैं, शक्ति मिलती है और इसका इतना गुणगान किया जाता है?

रुड़की विश्वविद्यालयमें कुछ वर्ष पहले गंगाजलपर कुछ प्रयोग हुए थे, जिनसे यह निष्कर्ष निकला था कि गंगाजलमें बैक्टीरिया (रोगाणु) मारनेकी शक्ति अन्य जलोंसे अधिक है। डॉ० के० एल० रावने अपनी पुस्तक 'भारतके जल-साधन' में गंगाजलके विषयमें इतना लिखा है कि गंगाजलमें बैक्टीरियोफैज (जीवाणुभक्ष) अधिकतासे पाये जाते हैं। इसलिये वह बैक्टीरियाको खाकर गंगाजलको शुद्ध कर देते हैं और गंगाजलमें बैक्टीरिया जीवित नहीं रह सकते।

बिहार स्टेट कन्सट्रक्शन कारपोरेशन लि०के तत्कालीन अध्यक्ष सह प्रबन्ध-निदेशक डॉ० विभूति प्रसन्नसिंहने 'गंगाजल—एक वैज्ञानिक आचमन' शीर्षकसे 'धर्मयुग' १५ जनवरी, सन् १९७८ ई० के अंकमें एक लेख लिखा था। उसमें उन्होंने गंगाजलपर चल रहे अपने शोध और वैज्ञानिक पक्षका रहस्योद्‌घाटन किया है। इनके परीक्षणोंसे इसकी पुष्टि हुई है कि गंगाजलमें बैक्टीरिया जीवित नहीं रह सकते। बैक्टीरियोफैज अपना वंश बैक्टीरियाकी उपस्थितिमें ही बढ़ा सकते हैं, अर्थात् बैक्टीरियोफैज अपनी वृद्धि दूषित जलमें ही कर सकते हैं, जबकि गंगाजल गुण-धर्मकी वृद्धि साफ जलमें भी करता है। जो तत्त्व इलेक्ट्रान माइक्रास्कोपद्वारा कुछ मात्रामें कहीं-कहीं गंगाजलमें देखे गये और जिन्हें सिन्दरीके साधारण जलमें न देखा जा सका, उसी तत्त्वके जैसे दृश्य उस सिन्दरीके जलमें ३४००० गुना अधिकतासे देखे गये, जिसमें गंगाजलकी कुछ बूँदें डाली गयी थीं।

अब प्रश्न यह उठता है कि गंगाजलमें वे कौन-से गुण हैं, जिसकी कुछ बूँदें किसी भी जलके दूषित रोगाणुओंका नाश कर देती हैं और उस जलमें रोग-निरोधक शक्ति रखनेवाले तत्त्वकी वृद्धि कर देती हैं।

गंगाजलमें पाये जानेवाले ये अज्ञात तत्त्व डॉ० सिंहके मतानुसार पूर्णतया बैक्टीरियोफैज न होकर उससे कहीं अधिक सक्षम कोई अन्य तत्त्व हैं, जिनका अलग नामकरण किया जाना चाहिये, नहीं तो भविष्यका अनुसंधान-कार्य सीमित दिशामें होने लगेगा। डॉ० सिंह गंगाजलमें प्राप्त उन तत्त्वोंके लिये, जो स्वयं अपने आपको रोगाणुओंके आक्रमणसे विमुक्त कर सकते हैं तथा जो दूसरे जलमें जाकर अपनी वृद्धिद्वारा उसके दूषणको समाप्तकर उसमें जीवाणुओंके आक्रमणसे विमुक्त हो सकनेकी शक्ति पैदा कर देते हैं, प्रति-विषाणु या अमृताणुका नाम प्रस्तावित करते हैं।

अन्तमें डॉ० सिंहने प्रस्ताव किया है कि अमृताणुओंके गुण-धर्मका व्यापक अध्ययन तथा शरीर एवं मनपर इनके प्रभावकी पूरी जाँच होनी चाहिये। बहुत सम्भव है कि भविष्यमें किसी नगर या विशेषकर ग्राम्य जलापूर्ति योजनाओंके लिये गंगाजल मिश्रण तथा थोड़ा विश्राम देनेके बाद जलकी पम्पिंग लाभदायक प्रथा सिद्ध हो सकती है और इससे जल पीनेवालोंमें रोग-निरोधक शक्तिकी वृद्धि हो सकती है। कई दशाओंमें सम्भव है कि फिटकिरी या क्लोरीन डालनेकी आवश्यकता ही न पड़े। गंगाजल डाल देनेसे तेलचट अव्यय समाप्त हो जायँ और रजःकण बिना फिटकिरीके स्वतः बैठ जायँ तथा यह जल अपनी रोगाणुनाशक क्षमताके कारण अन्य जलको क्लोरीनके बिना ही रोगाणु-मुक्त कर दे। लेकिन इन दशाओंका तकनीकी तथा आर्थिक पहलुओंसे पूर्णतया परीक्षण आवश्यक है।

इसी प्रकार भारतकी प्राचीनतम सभ्यता एवं संस्कृतिने जिन विषयों या पदार्थों—जैसे तुलसी, गोदुग्ध, बिल्व-पत्र इत्यादिको विशेष महत्त्व दिया है, उनपर अनुसन्धान करके वैज्ञानिक तथ्योंसे अवगत कराकर मानव-मात्रका हित किया जाना चाहिये।

माँको बचा लो

(श्रीविनोद जम्भदासजी कड़वासरा)

किसी प्रकारका भवन-निर्माण करनेसे पूर्व भूमि-पूजन किया जाता है, उसकी शुद्धि की जाती है। सम्पूर्ण पृथ्वीपर भारतवर्षकी भूमिको अत्यन्त पवित्र माना जाता है। प्रारम्भमें ऐसा नहीं था, यह भी सामान्य भूमि थी। जिस प्रकार किसी बालकके ज्ञानार्जन करनेके लिये गुरुके पास जानेपर सबसे पहले उसका उपनयन-संस्कार होता है, उसे यज्ञोपवीत धारण करवाया जाता है, इस सबके बिना वह ज्ञानप्राप्तिका अधिकारी नहीं है, ठीक उसी प्रकार कोई भूमि भी तबतक पवित्र नहीं मानी जाती, जबतक उसका समुचित संस्कार न हो जाय और जिस धरतीपर बैठकर ऋषिगण शास्त्रोंकी रचनाएँ करने जा रहे हों तो उस धरतीका भी उपनयन-संस्कार करवाकर उसे भी यज्ञोपवीत धारण करवाया जाना अनिवार्य था और ऐसा हुआ भी था। इस पुण्य भारतभूमिके साथ जब गंगा हिमालयसे प्रकट होकर शोर करती हुई आगे बढ़ी तो निश्चय ही उसका शोर उपनयन-संस्कारके समय होनेवाला मन्त्रोच्चार ही था, इस बातकी गवाही देता भारतका मानचित्र जिसमें गंगा भारतभूमिके शरीरपर लिपटे यज्ञोपवीतके समान दिखायी दे रही है।

विदेशी आक्रान्ताओंका जब भारतवर्षमें शासन हुआ तो उन्होंने युगोंसे बहती आ रही सनातन-धर्मकी पावन अजस्र धाराको अवरुद्ध करनेके लिये अनेकों प्रयास किये। छल-बलसे बलात् लोगोंका धर्मान्तरण किया गया। कुछ शासकोंका तो यह आदेश था कि उन्हें नित्य सवा मन या इससे ज्यादा जनेऊ भेंट किये जायँ, ये जनेऊ या तो धर्मान्तरण करके उतार दिये जायँ या उनके सिरके साथ ही उतार लिये जायँ। करोड़ों लोगोंका जनेऊ-हरण हुआ, असंख्य लोगोंने उस समय सिरके साथ ही जनेऊ देना श्रेयस्कर समझा था। हजार सालके उस भयानक दौरसे गुजरनेके बाद देश आजाद हुआ। भारतीय संस्कृतिने सोचा कि अब अपने लोग शासन करेंगे तथा पुराने दिन लौट आयेंगे, पर तब उसे घोर आश्चर्य हुआ जब इस नये जमानेमें लोग स्वेच्छासे जनेऊ उतारकर फेंकने लगे तथा इसे धारण करनेमें शर्म महसूस करने लगे तथा इस पावन भूमिका गंगारूपी यज्ञोपवीत भी उतार फेंकनेमें कोई कसर नहीं छोड़ी।

गंगासागरतक पहुँचते-पहुँचते यह पवित्र नदी मृतप्राय हो जाती है, मरे हुओंको मुक्ति प्रदान करनेवाली पतितपावनी आज खुद व्यथित है। भयानक प्रदूषणसे इसका दम घुट रहा है, यह अपने जीवनके लिये संघर्ष कर रही है, यह रो रही है, चीख-चिल्ला रही है और हम इसके तटपर खड़े इसका तमाशा देख रहे हैं। क्योंकि हमें बिजली चाहिये, हमें अपने कूड़े-करकट और मल-मूत्रके निस्तारणका आसान उपाय चाहिये, हमें हमारे कल-कारखाने चाहिये, हमें अपना विकास चाहिये, इसके लिये चाहे कितनी ही बड़ी बलि देनी पड़े, हमें स्वीकार है। इसके लिये एक गंगा तो क्या हम सैकड़ों गंगाओंका भी मूल मिटानेके लिये तैयार हैं, हमें किसीकी नहीं सुननी है, जो हमारे इस तथाकथित विकासमें आड़े आयेगा, वह मारा जायगा। यह आज हमारी मानसिकता है। केवल गंगा ही नहीं, आज भारतवर्षकी सम्पूर्ण नदियाँ अपना वजूद बचानेके लिये जूझ रही हैं। अपना जीवन बचानेके लिये ये इतना संघर्ष इसलिये कर रही हैं; क्योंकि इन्होंने माँकी उपाधि धारण की है, माँ अपने पुत्रोंका बुरा कभी नहीं देख सकती, इसलिये जबतक सम्भव है, ये इस धरतीपर बने रहनेकी भरसक कोशिश करेंगी। अब भी समय है, हमें चेत जाना चाहिये और अपनी माँके प्राण बचा लेने चाहिये। इस माँने हमें जन्म तो नहीं दिया, पर इसके पास आनेपर यह जन्म-मरणके चक्करको ही मिटा देनेवाली माँ है। यह अद्भुत है, विलक्षण है। कहीं ऐसा न हो कि कल कोई हमारे अवशेष लेकर, हमारी मुक्तिकी कामनासे हरकी पैड़ी आये तो उसे दूरतक उड़ती धूल और केवल पत्थर ही मिले, तीर्थपुरोहितसे पूछनेपर पता चले कि गंगा तो अब वापस हरिके चरणोंमें लौट गयी हैं।

धन-धन मातु गंग, मुनि जन चाहत प्रसंग

(डॉ० श्रीभानुजी मेहता)

गंगा मेरी माँ है! बहुत प्यारी माँ है। गंगाकी गोदमें खेलना, गंगाजलका पान करना कितना सुखद है। गंगातटपर जाते ही मन हर्षित हो किलोल करने लगता है। इतना ही नहीं, उस कलकलप्रवाहिणी माँका नाममात्र लेनेसे मन धुला-धुला-सा लगता है। हाँ, ऐसी महिमामयी है मेरी माँ।

आदि शंकराचार्यने इसे त्रिभुवनमाता कहा है। गंगास्नानका अर्थ है, भारतकी समस्त नदियोंमें एक साथ स्नान करना। 'गम्' धातुसे बनी गंगा, स्त्रष्टाकी अन्तःसलिला सृजन-कामना है, जो अच्युत-चरणसे निःसृत हो, धरा-धामपर अवतरित होती है। ब्रह्माके कमण्डलुसे शिवकी जटापर उतरनेवाली भागीरथी अद्भुत है। गंगा बिना काशी और काशी बिना गंगाकी कल्पना ही नहीं की जा सकती। हाँ, ऐसी महिमामयी है मेरी माँ।

इस गंग-तरंगको 'विलोकत भये निहाल' सूर, तुलसी 'त्रिपथगासि पुन्यरासि पापछालिका' तटपर बैठे भजन करते रहे। एक शायरके लिये यह आकाशसे उतरा हुआ एक गीत है, रसखानने देखा कि सुधामयी भागीरथीके भरोसे ही शिव विष खाते हैं। बनारसी तो चना-चबैनाके साथ केवल गंगजलकी माँग करता है। यह गंगामैया पूत-कपूतका पोषण करनेवाली अन्नपूर्णा है। ऐसी महीयसी महती महिमामयी माँकी महिमा 'किमि जाय बखानी ?' कहते हैं 'मानवका दुःख देख, स्वर्गको बिसार, ममतामयी माँ, मृत्युलोकको चली आयी है।' यह जग-जननी, निरमल-नीर, सुधा-समशीतल, सकल-सुमंगल-खानी कल्याणी है। हाँ, ऐसी महिमामयी है मेरी माँ!

पर लोग कहते हैं मेरी माँ गन्दी हो गयी है! प्रदूषित हो गयी है!! कलिमलहारिणी, कलुषभंजिनी, निर्मला माँ गन्दी! प्रदूषित!! जिसका नाम लेनेमात्रसे शरीर निर्मल हो जाता है, जिसकी महिमा गानेमात्रसे, सुयश-नहायेसे कोई पीर नहीं रहती, ऐसी माँ गन्दी! प्रदूषित!! सबका भार उठाकर चलनेवाली माता गंगा गन्दी! प्रदूषित!! यह क्या हुआ ? त्रयतापहारी, मोह-महिष कालिका, कोटि-कोटि जन्मकी कुगन्धि मेटनेवाली माँ इतनी असहाय कैसे हो गयी ? क्या 'मोक्ष' के द्वार बन्द हो गये ? स्वर्गके द्वार मूँद दिये गये ? वे कहते हैं, गंगातट गन्दा हो रहा है। तटका जल गन्दा हो रहा है, गंगाजल गन्दा हो रहा है। वे बताते हैं कि गंगाके पवित्र तटकी मर्यादा, शुचिता भंग की गयी है। पाप-पंकमें आकण्ठ डूबे, धर्मकर्महीन बेहूदे बनारसी तटपर ही निपटते हैं, मलमूत्र विसर्जन करते हैं, कूड़ा-कतवार फेंकते हैं और उनकी गौरतलब रायमें गंगातट अच्छा कूड़ादान है। वे गंगातटकी दीवारोंपर भोंड़े विज्ञापन लिखते हैं, कलाविहीन, कुरूप, कुरुचिपूर्ण चित्र बनाते हैं, जिससे मन गन्दा होता है। पहले लोग गंगाकी सेवा करते थे, टूट-फूटकी मरम्मत करते थे, स्वर्गसोपान धो-पोंछकर साफ रखते थे, गन्दगी करनेवालोंपर कड़ी नजर रखते। अब गंगा किसीकी मिल्कियत नहीं है; सेतीकी गंगामें हर कोई हरामीका गोता लगा सकता है। पद्माकरने कहा था कि 'माँ तेरे तटतक आते-आते ही मेरे पापपुंज लुटि लुटि गै', लेकिन अब तटपर हाथ-पाँव बचाकर, नाकपर रूमाल रखकर आनेपर भी तबीयत भिन्ना जाती है। धन्य हैं तटवासी, तट-विहारी; क्योंकि उन्होंने पावनीको त्यागकर अपावनीका वरण किया है। वे गन्दगी करते हैं, करवाते हैं, करने देते हैं। ये संयमनीपुरीके द्वारपाल प्रणम्य हैं, इन्होंने कलियुगके पापियोंको स्वर्गमें घुसनेसे रोकनेका महत् पुण्य कार्य किया है।

वे तटकी गन्दगीको लाँघकर जलमें प्रवेश करते हैं, बिना एक क्षणको भी यह विचार किये कि यह अमृतकी धारा है—गंगा है। नहीं, उनके लिये यह नदी है, नाला है, पनाला है। यहाँ वे वस्त्र धोते हैं, सबुनियाते हैं, बरतन माँजते हैं, गैया, गोरू, कुक्कुरको अन्हवाते हैं। नहाते बादमें हैं, पहले मंजन (टूथपेस्टसे ब्रश) करते हैं,

खाँसते हैं, खँखारते हैं, थूकते हैं, ओकाते हैं, मूत्र-विसर्जन भी कर लेते हैं, नाक छिनक-छिनककर गोता मारते हैं, खुद नहाते हैं, बीमारको, मरणासन्नको गोता लगवाते हैं। कुछ लोग आर-पारकी माला, फूल-पत्ती, बिल्वपत्र चढ़ाते हैं, कुछ लोग कूड़ा-करकट चढ़ाते हैं। कुछ लोग मरे हुए चूहे, कुत्ते, बिल्ली चढ़ाते हैं। माँ, सबको सुगति प्रदान करती है। कुछ लोग 'शव' प्रवाह करते हैं! आह! कैसी शोभा होती है माँकी गोदकी, जिसमें फूले दुर्गन्धभरे गिद्धसेवित 'मड़' शानसे धारामें विहार करते हैं! ताजिन्दगी जिस गाय या भैंसने दूधकी धारा बहायी, वही मरणोपरान्त दुग्ध धवल गंगधारमें बहती दिखायी देती है। अद्भुत है माँका यह अघोरी शृंगार! सीढ़ियाँ उतरकर, श्रद्धालु गंगाजलका आचमन करना चाहता है, पर सहसा रुक जाता है—जलमें तैरता मल सारी भक्तिभावना, श्रद्धा हर लेता है। एक आघात लगता है, कभी गंगा शवको शिव बना देती थी, अब शिवको अशिव बना देती है! कलियुगका चमत्कार है, देखो और नयनको धन्य बना लो। सन्तोंको सैटन बनानेवाली मलिना की जय हो।

वे कहते हैं गंगा रोगकारिणी हो गयी है! उसके जलमें रोगकारक जीवाणु, फफूँदी और एक-कोषी परजीवी हैं। गंगाका जल जो कभी भव-भेषज था, अमृत था, अब अतिसार, मोतीझरा, विशूचिका, खाज, खुजली-जैसे अनेक रोग पैदा करता है। गंगाजल पान करनेसे कभी मोक्ष (सायुज्य) प्राप्त होता था, अब भी मोक्ष होता है, पर केवल शरीरका और आत्मा कीट-पतंगका शरीर तलाशती भ्रमण करती है। कहाँसे आ गयी यह रोग-सरिता, भवभोगकरिता? प्रकाशमयी, पुण्यपुरी काशीका समूचा मल सीवर-सरितासे बहता हुआ गंगासे संगम करता है। पंचगंगा तो पहलेसे ही है, अब छठी गंगा बहने लगी है। महिमा गानेवालोंने कभी कहा था कि 'मैलो नीर भरे नदी नाले, जब सुरसरिमें आ मिलते हैं तो उनका जल भी गंगाजल हो जाता है।' 'गंगाजलकी महिमा देख शासनने सीवर-सरिताको भी गंगाजल बना देनेका भगीरथ सुकर्म किया है। पर वाह रे कलियुगका प्रभाव, चमत्कार हुआ है, गंगा गायब हो गयी और सीवर-जलमें मिलकर स्वयं 'सीवर' हो गयी। धन्य हैं, वे जो सीवरमें स्नान करते हैं; क्योंकि उनकी भवबाधा शीघ्र हर ली जायगी और वे कुम्भीपाकमें विश्राम करेंगे।'

वे कहते हैं, गंगामें मोटरबोट जहाज चलायेंगे। कैसी विडम्बना है, जो गंगा सहज भावसे जीवको धरतीसे उठाकर कैलासपर बिठा देती थी, अब उस तरण-तारिणीपर संतरण करनेके लिये 'जहाज' चलाने होंगे। रामनामका जहाज जो कभी किसी 'तुलसी' ने चलाया था, न जाने कब पछुवाकी चपेटमें डूब गया। अब डीजल-पेट्रोल थूकते यान चलेंगे और सभी जलजीवोंको शीघ्र ही 'मुक्ति' प्राप्त होगी। धन्य हैं वे जो 'बोट' द्वारा गंगा-यात्रा करेंगे, गयासे काशी और काशीसे प्रयाग जायँगे और गंगाजलको मलिनतासे सुवासित करेंगे। वे सच्चे अर्थमें नदीकी छातीपर कोदो दरेंगे। वे बिना तरे प्रयागसे काशी-गया तीरथ करेंगे, लगता है आगे वैतरणीमें भी मोटर बोट चलेंगे।

वे तो यह भी कहते हैं कि गंगातटपर उद्योग स्थापित होंगे तो समूचा जल रासायनिक प्रदूषणसे कलुषित हो जायगा। जलमें प्राणघातक विष होंगे, दुर्गन्ध होगी, गंगातलपर विश्वनाथके नीलकण्ठके प्रत्यक्ष दर्शन होंगे। तब आचमन, स्नान तो खैर सम्भव ही नहीं होगा, दर्शन भी आँखमें जलन पैदा करेगा। वे बहुत दूरतक सोच गये हैं। रासायनिक खाद, डिटर्जेण्ट, कारखानेके अवशेष जलमें विस्तार-प्रसार पायेंगे, विभीषण भीषण खरदूषण बनेंगे, दशशीश रावण बनेंगे। वे इसे 'बायोलॉजिकल मैग्निफिकेशन' कहते हैं। यह रक्त-बीज राक्षस जलसे निकलकर धरतीके जीवोंका भक्षण करेगा और फिर इसका नाश करनेके लिये हमें एक दिव्य शक्तिके अवतारकी प्रतीक्षा करनी होगी। धन्य हैं वे जो उद्योगी हैं, धन्य हैं वे जो उद्योगका मैला गंगामें गिराकर जड़ पदार्थोंको मुक्ति दिलायेंगे, साथ ही जीव-

जगत्का मुक्तिपथ भी प्रशस्त करेंगे। वे कहते हैं 'हे काशीनाथ! अब आपकी पुरीमें गंगा नहीं, विसंगा बहती है। एक नदी जरूर है, पर उसमें गंगा कहाँ है? वह तो हरिद्वारसे ही चुपकेसे दूसरे पथसे भागकर कहीं छुप गयी है। गंगा होती तो उसमें रोगाणु पलते? कभी विज्ञानी हैरान थे कि इस गंगाजलमें क्या है, जो यह सड़ता नहीं, प्रदूषित नहीं होता? और अब इसी 'गंगा' में रोगाणु घर बना रहे हैं। यदि यह त्रिभुवनतारिणी, तरल-तरंगवाली, सुरसरि-गंगा होती, क्या तब भी यही हालत होती? शायद नहीं और जो 'नदी' है, वह भी अपने भागपर रोती है। उसे बाँधा गया है, काटा गया है, छाँटा गया है। वृक्षविहीन पर्वतीय-वनोंसे होते क्षरणसे उसका उदर उथला हो गया है। वह बीमार है, उसके पेटमें हलचल मची है, वह पीड़ासे उफनती है तो तट हाहाकार कर उठते हैं। लगता है बाढ़में सृष्टि बह जायगी और फिर जब ऐंठकर वह सूख जाती है तो कूप-सरोवरका भी पानी उतार देती है। मेरी माँ बीमार है।'

काशीवासी अब गंगजलका पान नहीं करते, नगरके प्रशासक जलपति अब उन्हें भूमिगंगाका जल 'नलकूप' से पिलाते हैं। धरतीमाताका पेट खाली होता जा रहा है। लगता है एक उपक्रम हो रहा है, उस अद्भुत प्रलय-लीलाका, जब धरती धँसेगी और गंगा उछलकर पुनः शिवके मस्तकपर जा विराजेंगी। माँ! हम तो निमित्तमात्र हैं, तेरी लीलाके खिलौने हैं। उस ताण्डवकालमें हमारी रक्षा करना। माँ, हम कितने ही दूषित क्यों न हों तू 'कुमाता' नहीं हो सकती। हमें केवल तेरा ही भरोसा है।

सूखा, बाढ़, प्रदूषण, दुर्गन्ध, अशिव-दृश्य और विनाशके ताण्डव रचती ओ मेरी माँ, तुझको क्या हो गया है? ऐसी तो तू न थी माँ? कहीं कोई मायाविनी तो तेरे स्थानपर नहीं आ बैठी है? नहीं तो तू कहाँ छिप गयी है? क्या हमें भी रामकी भाँति कोई अग्नि-परीक्षा करनी होगी? मेरी माँको अपने सत्की परीक्षा देनी होगी? नहीं माँ नहीं, इस कलुषको अपनी उत्ताल तरंगोंसे धो डाल। माँ, ममतामयी, बच्चे रो रहे हैं, अब लौट आ! हम तेरे बिना जी नहीं सकते। लौट आ माँ, लौट आ। वे कहते हैं बच्चोंके गन्दगी करनेसे माँ गन्दी नहीं होती। तू नहा-धोकर, नूतन शृंगारकर, मकरपर सवार हो फिर लौट आ माँ! अब हम गन्दगी नहीं करेंगे, हमारे कसूर माफ कर दे माँ! हमें सद्बुद्धि प्रदानकर कि हम तेरी महिमा समझ सकें। माँ गंगे, माँ जननी, तू धन्य है। बस, अब छहरकर विहँस दे। हमें अपने अंकमें ले ले, अपनी ममता दे! [सन्मार्ग]

मानवजीवनका साफल्य—भगवती गंगाका सेवन

तौ पादौ सफलं नृणां जाह्नवीतटगामिनौ॥
गङ्गाकल्लोलनिनदश्राविणौ श्रवणौ च तौ। सा जिह्वा या च जानाति स्वादुभेदं तदम्भसः॥
ते नेत्रे जाह्नवीचारुतरङ्गदर्शने च ये। तल्ललाटमिति प्रोक्तं गङ्गामृत्पुण्ड्रधारि यत्॥
तौ हस्तौ जाह्नवीतीरे हरिपूजापरायणौ। शरीरं सफलं तच्च विमले जाह्नवीजले॥
पतितं यद् द्विजश्रेष्ठ चतुर्वर्गफलप्रदे।

मनुष्योंके वे ही पैर सफल हैं, जो गंगातटकी ओर जानेवाले हैं। वे ही कान सफल हैं, जो गंगाके कल-कल निनादका श्रवण करनेवाले हैं, वही जिह्वा धन्य है, जो भगवती गंगाके जलके आस्वादको पहचानती है, वे नेत्र सफल हैं, जो गंगाकी रमणीय तरंगोंका दर्शन करते रहते हैं, वह ललाट ही सफल कहलाता है, जो गंगाजलकी मिट्टीका तिलक धारण करता है, वे हाथ धन्य हैं, जो गंगातटपर भगवान्की निरन्तर पूजा करते रहते हैं और वही शरीर सफल है, जो मृत्युके अनन्तर चतुर्वर्ग प्रदान करनेवाली भगवती जाह्नवीके पवित्र जलको प्राप्त होता है। [पद्मपुराण क्रियायोगसार खण्ड]

धर्मशास्त्रोंमें गंगा *

(भारतरत्न महामहोपाध्याय डॉ० श्रीपाण्डुरंग वामनजी काणे)

गंगा पुनीततम नदी है और इसके तटपर हरिद्वार, कनखल, प्रयाग एवं काशी-जैसे परम प्रसिद्ध तीर्थ अवस्थित हैं। प्रसिद्ध नदीसूक्त (ऋग्वेद १०।७५।५)-में सर्वप्रथम गंगाका ही आह्वान किया गया है। ऋग्वेद (६।४५।३१)-में 'गाङ्ग्य' शब्द आया है, जिसका सम्भवतः अर्थ है 'गंगापर वृद्धि प्राप्त करता हुआ।' शतपथ ब्राह्मण (१३।५।४।११ एवं १३) एवं ऐतरेय ब्राह्मण (३९।९)-में गंगा एवं यमुनाके किनारेपर भरत दौष्यन्तिकी विजयों एवं यज्ञोंका उल्लेख हुआ है। शतपथ ब्राह्मण (१३।५।४।११ एवं १३)-में एक प्राचीन गाथाका उल्लेख है—'अप्सरा शकुन्तलाने भरतको गर्भमें धारण किया, जिसने सम्पूर्ण पृथिवीको जीतनेके उपरान्त इन्द्रके पास यज्ञके लिये एक सहस्रसे अधिक अश्व भेजे।' महाभारत (अनुशासन० २६।२६—१०३) एवं पुराणों (नारदीय, उत्तरार्ध, अध्याय ३८—४५ एवं ५१।१—४८; पद्म० ५।६०।१-१२७; अग्नि० अध्याय ११०; मत्स्य० अध्याय १८०-१८५; पद्म०, सृष्टिखण्ड, अध्याय ३३-३७)-में गंगाकी महत्ता एवं पवित्रीकरणके विषयमें सैकड़ों प्रशस्तिजनक श्लोक हैं। स्कन्द० (काशीखण्ड, अध्याय २९।१७-१६८)-में गंगाके एक सहस्र नामोंका उल्लेख है। अधिकांश भारतीयोंके मनमें गंगा-जैसी नदियों एवं हिमालय-जैसे पर्वतोंके दो स्वरूप घर कर बैठे हैं—भौतिक एवं आध्यात्मिक। विशाल नदियोंके साथ दैवी जीवनकी प्रगाढ़ता संलग्न हो ही जाती है। टेलरने अपने ग्रन्थ 'प्रिमिटिव कल्चर' (द्वितीय संस्करण, पृ० ४७७)-में लिखा है—'जिन्हें हम निर्जीव पदार्थ कहते हैं, यथा नदियाँ, पत्थर, वृक्ष, अस्त्र-शस्त्र आदि, वे जीवित, बुद्धिशाली हो उठते हैं, उनसे बातें की जाती हैं, उन्हें प्रसन्न किया जाता है और यदि वे हानि पहुँचाते हैं तो उन्हें दण्डित भी किया जाता है।' गंगाके माहात्म्य एवं उसकी तीर्थयात्राके विषयमें पृथक्-पृथक् ग्रन्थ प्रणीत हुए हैं। यथा गणेश्वर (१३५० ई०)-का गंगापत्तलक, मिथिलाके राजा पद्मसिंहकी रानी विश्वासदेवीके लिये विद्यापति-विरचित गंगावाक्यावली, गणपतिकी गंगाभक्तितरंगिणी एवं वर्धमानका गंगाकृत्य-विवेक।

वनपर्व (अध्याय ८५)-ने गंगाकी प्रशस्तिमें कई श्लोक (८८—९७) दिये हैं, जिनमें कुछका अनुवाद यों है—'जहाँ भी कहीं स्नान किया जाय, गंगा कुरुक्षेत्रके बराबर है, किंतु कनखलकी अपनी विशेषता है और प्रयागमें इसकी परम महत्ता है। यदि कोई सैकड़ों पापकर्म करके गंगाजलका अवसिंचन करता है तो गंगाजल उन दुष्कृत्योंको उसी प्रकार जला देता है, जिस प्रकार अग्नि ईंधनको। कृतयुगमें सभी स्थल पवित्र थे, त्रेतामें पुष्कर सबसे अधिक पवित्र था, द्वापरमें कुरुक्षेत्र एवं कलियुगमें गंगा। नाम लेनेपर गंगा पापीको पवित्र कर देती है, इसे देखनेसे सौभाग्य प्राप्त होता है, जब इसमें स्नान किया जाता है या इसका जल ग्रहण किया जाता है तो सात पीढ़ियोंतक कुल पवित्र हो जाता है। जबतक किसी मनुष्यकी अस्थि गंगाजलको स्पर्श करती रहती है, तबतक वह स्वर्गलोकमें प्रसन्न रहता है। गंगाके समान कोई तीर्थ नहीं है और न केशवके सदृश कोई देव। वह देश, जहाँ गंगा बहती है और वह तपोवन जहाँ गंगा पायी जाती है, उसे सिद्धिक्षेत्र कहना चाहिये; क्योंकि वह गंगातीरको छूता रहता है।' अनुशासनपर्व (२६।२६, ३०-३१)-में आया है कि वे जनपद एवं

* 'धर्मशास्त्रका इतिहास' पुस्तकसे सम्पादित अंश। मूलतः यह ग्रन्थ अँगरेजी भाषामें रचित है।

देश, वे पर्वत एवं आश्रम, जिनसे होकर गंगा बहती है, पुण्यका फल देनेमें महान् हैं। वे लोग, जो जीवनके प्रथम भागमें पापकर्म करते हैं, यदि गंगाकी ओर जाते हैं तो परम पद प्राप्त करते हैं। जो लोग गंगामें स्नान करते हैं, उनका फल बढ़ता जाता है, वे पवित्रात्मा हो जाते हैं और ऐसा पुण्यफल पाते हैं, जो सैकड़ों वैदिक यज्ञोंके सम्पादनसे भी नहीं प्राप्त होता।

भगवद्गीता (१०। ३१)-में भगवान् श्रीकृष्णने कहा है कि धाराओंमें मैं गंगा हूँ—**स्रोतसामस्मि जाह्नवी**। मनुने साक्षीको सत्योच्चारणके लिये जो कहा है, उससे प्रकट होता है कि मनुस्मृतिके कालमें गंगा एवं कुरुक्षेत्र सर्वोच्च पुनीत स्थल थे।[१] कुछ पुराणोंने गंगाको मन्दाकिनीके रूपमें स्वर्गमें, गंगाके रूपमें पृथिवीपर और भोगवतीके रूपमें पातालमें प्रवाहित होते हुए वर्णित किया है। (पद्म० ६। २६७। ४७), विष्णु आदि पुराणोंने गंगाको विष्णुके बायें पैरके अँगूठेके नखसे प्रवाहित माना है। कुछ पुराणोंमें ऐसा आया है कि शिवने अपनी जटासे गंगाको सात धाराओंमें परिवर्तित कर दिया, जिनमें तीन (नलिनी, ह्लादिनी एवं पावनी) पूर्वकी ओर, तीन (सीता, चक्षुस् एवं सिन्धु) पश्चिमकी ओर प्रवाहित हुईं और सातवीं धारा भागीरथी हुई। मत्स्यपुराण, ब्रह्माण्डपुराण, कूर्मपुराण एवं वराहपुराणका कथन है कि गंगा सर्वप्रथम सीता, अलकनन्दा, सुचक्षु एवं भद्रा नामक चार विभिन्न धाराओंमें बहती है; अलकनन्दा दक्षिणकी ओर बहती है, भारतवर्षकी ओर आती है और सप्त मुखोंमें होकर समुद्रमें गिरती है। ब्रह्मपुराणमें गंगाको विष्णुके चरणसे प्रवाहित एवं शिवके जटाजूटमें स्थापित माना गया है।

विष्णुपुराणने गंगाकी प्रशस्ति इस प्रकार की है—'जब इसका नाम श्रवण किया जाता है, जब कोई इसके दर्शनकी अभिलाषा करता है, जब यह देखी जाती है या इसका स्पर्श किया जाता है या जब इसका जल ग्रहण किया जाता है या जब कोई इसमें डुबकी लगाता है या जब इसका नाम लिया जाता है (या इसकी स्तुति की जाती है) तो गंगा दिन-प्रति-दिन प्राणियोंको पवित्र करती है; जब सहस्रों योजन दूर रहनेवाले लोग 'गंगा' नामका उच्चारण करते हैं तो तीन जन्मोंके एकत्र पाप नष्ट हो जाते हैं।'[२]

मत्स्यपुराण, कूर्मपुराण, गरुडपुराण एवं पद्मपुराणका कहना है कि गंगामें पहुँचना सब स्थानोंमें सरल है, केवल गंगाद्वार (हरिद्वार), प्रयाग एवं वहाँ जहाँ यह समुद्रमें मिलती है, पहुँचना कठिन है, जो लोग यहाँ स्नान करते हैं, स्वर्ग जाते हैं और जो लोग यहाँ मर जाते हैं, वे पुनः जन्म नहीं पाते।[३] पद्मपुराणने प्रश्न किया है—बहुत धनके व्ययवाले यज्ञों एवं कठिन तपोंसे क्या लाभ? जबकि सुलभरूपसे प्राप्त होनेवाली एवं स्वर्ग-मोक्ष देनेवाली गंगा उपस्थित है! नारदीयपुराणमें भी आया है—आठ अंगोंवाले योग, तपों एवं यज्ञोंसे क्या लाभ? गंगाका निवास इन सभीसे उत्तम है। मत्स्यपुराण (१०४। १४-१५)-के दो श्लोक यहाँ वर्णनके योग्य हैं—'पाप करनेवाला व्यक्ति भी सहस्रों योजन दूर रहता हुआ गंगा-स्मरणसे परम पद प्राप्त कर लेता है। गंगाके नाम-स्मरण एवं उसके दर्शनसे व्यक्ति क्रमसे पापमुक्त हो जाता है एवं सुख पाता है, उसमें स्नान करने एवं जलके पानसे वह सात पीढ़ियोंतक अपने कुलको पवित्र कर देता है।' काशीखण्ड (२७। ६९)-में ऐसा आया है कि गंगाके तटपर सभी काल शुभ हैं, सभी देश शुभ हैं और सभी लोग दान ग्रहणके योग्य हैं।

---

१. यमो वैवस्वतो देवो यस्तवैष हृदि स्थितः। तेन चेदविवादस्ते मा गङ्गां मा कुरून्गमः॥ (मनु० ८। ९२)

२. श्रुताभिलषिता दृष्टा स्पृष्टा पीतावगाहिता। या पावयति भूतानि कीर्तिता च दिने दिने॥
गङ्गा गङ्गेति यैर्नाम योजनानां शतेष्वपि। स्थितैरुच्चारितं हन्ति पापं जन्मत्रयार्जितम्॥ (विष्णुपु० २।८।१२०-१२१)

३. सर्वत्र सुलभा गङ्गा त्रिपु स्थानेषु दुर्लभा। गङ्गाद्वारे प्रयागे च गङ्गासागरसङ्गमे॥
तत्र स्नात्वा दिवं यान्ति ये मृतास्तेऽपुनर्भवाः॥

वराहपुराण (अध्याय ८२)-में गंगाकी व्युत्पत्ति 'गां गता' (जो पृथिवीकी ओर गयी हो) है। पद्मपुराण (सृष्टिखण्ड ६०। ६४-६५)-ने गंगाके विषयमें निम्न मूलमन्त्र दिया है—'ॐ नमो गङ्गायै विश्वरूपिण्यै नारायण्यै नमो नमः।'

कुछ पुराणोंमें गंगाके पुनीत स्थलके विस्तारके विषयमें व्यवस्था दी हुई है। नारदीयपुराण (उत्तर ४३। ११९-१२०)-में आया है—गंगाके तीरसे एक गव्यूतितक क्षेत्र कहलाता है, इसी क्षेत्र-सीमाके भीतर रहना चाहिये, किंतु तीरपर नहीं, गंगातीरका वास ठीक नहीं है। क्षेत्र-सीमा दोनों तीरोंसे एक योजनकी होती है अर्थात् प्रत्येक तीरसे दो कोसतक क्षेत्रका विस्तार होता है।* यमने एक सामान्य नियम यह दिया है कि वनों, पर्वतों, पवित्र नदियों एवं तीर्थोंके स्वामी नहीं होते, इनपर किसीका प्रभुत्व (स्वामीरूपसे) नहीं हो सकता। ब्रह्मपुराणका कथन है कि नदियोंसे चार हाथकी दूरीतक नारायणका स्वामित्व होता है और मरते समय भी (कण्ठगत प्राण होनेपर भी) किसीको उस क्षेत्रमें दान नहीं लेना चाहिये। गंगाक्षेत्रमें गर्भ (अन्तर्वृत्त), तीर एवं क्षेत्रमें अन्तर प्रकट किया गया है। गर्भ वहाँतक विस्तृत हो जाता है, जहाँतक भाद्रपदके कृष्णपक्षकी चतुर्दशीतक धारा पहुँच जाती है और उसके आगे तीर होता है, जो गर्भसे १५० हाथतक फैला हुआ रहता है तथा प्रत्येक तीरसे दो कोसतक क्षेत्र विस्तृत रहता है।

अब गंगाके पास पहुँचनेपर स्नान करनेकी पद्धतिपर विचार किया जायगा। गंगास्नानके लिये संकल्प करनेके विषयमें निबन्धोंने कई विकल्प दिये हैं। प्रायश्चित्त-तत्त्वमें विस्तृत संकल्प दिया हुआ है। मत्स्यपुराण (अध्याय १०२)-में जो स्नान-विधि दी हुई है, वह सभी वर्णों एवं वेदके विभिन्न शाखानुयायियोंके लिये समान है। तदनुसार बिना स्नानके शरीरकी शुद्धि एवं शुद्ध विचारोंका अस्तित्व नहीं होता, इसीसे मनको शुद्ध करनेके लिये सर्वप्रथम स्नानकी व्यवस्था होती है। कोई किसी कूप या धारासे पात्रमें जल लेकर स्नान कर सकता है या बिना इस विधिसे भी स्नान कर सकता है। 'नमो नारायणाय' मन्त्रके साथ बुद्धिमान् लोगोंको तीर्थस्थलका ध्यान करना चाहिये। हाथमें दर्भ (कुश) लेकर, पवित्र एवं शुद्ध होकर आचमन करना चाहिये। चार वर्गहस्त स्थलको चुनना चाहिये और निम्न मन्त्रके साथ गंगाका आवाहन करना चाहिये; 'देवि! तुम विष्णुके चरणसे उत्पन्न हुई हो, तुम विष्णुसे भक्ति रखती हो, तुम विष्णुकी पूजा करती हो, अतः जन्मसे मरणतक किये गये पापोंसे मेरी रक्षा करो। स्वर्ग, अन्तरिक्ष एवं पृथिवीके साढ़े तीन करोड़ तीर्थ हैं; हे जाह्नवी गंगा! ये सभी देव तुम्हारे भीतर हैं। देवोंमें तुम्हारा नाम नन्दिनी (आनन्द देनेवाली) और नलिनी भी है तथा तुम्हारे अन्य नाम भी हैं, यथा दक्षा, पृथ्वी, विहगा, विश्वकाया, अमृता, शिवा, विद्याधरी, सुप्रशान्ता, विश्वप्रसादिनी, क्षेया, जाह्नवी, शान्ता और शान्तिप्रदायिनी।' स्नान करते समय इन नामोंका उच्चारण करना चाहिये, तब तीनों लोकोंमें बहनेवाली गंगा पासमें चली आयेगी (भले ही व्यक्ति घरपर ही स्नान कर रहा हो)। व्यक्तिको उस जलको, जिसपर सात बार मन्त्र पढ़ा गया हो, तीन, चार, पाँच या सात बार सिरपर छिड़कना चाहिये। नदीके नीचेकी मिट्टीका मन्त्र-पाठके साथ लेप करना चाहिये। इस प्रकार स्नान एवं आचमन करके व्यक्तिको बाहर आना चाहिये और दो श्वेत एवं पवित्र वस्त्र धारण करने चाहिये। इसके उपरान्त उसे तीन लोकोंके सन्तोषके लिये देवों, ऋषियों एवं पितरोंका यथाविधि तर्पण करना चाहिये। पश्चात् सूर्यको नमस्कार एवं तीन बार प्रदक्षिणाकर तथा किसी ब्राह्मण, सोना एवं गायका स्पर्शकर स्नानकर्ताको विष्णुमन्दिर या अपने घर (पाठान्तरके अनुसार)-में जाना चाहिये।

विष्णुधर्मसूत्र आदि ग्रन्थोंने अस्थि-भस्म या जली

* तीराद् गव्यूतिमात्रं तु परितः क्षेत्रमुच्यते। तीरं त्यक्त्वा वसेत्क्षेत्रे तीरे वासो न चेष्यते॥
एकयोजनविस्तीर्णा क्षेत्रसीमा तटद्वयात्। (नारदीयपुराण उत्तर ४३। ११९-१२०)

हुई अस्थियोंका प्रयाग या काशी या अन्य तीर्थोंमें प्रवाह करनेकी व्यवस्था दी है। इस विषयमें एक ही श्लोक कुछ अन्तरोंके साथ कई ग्रन्थोंमें आया है।[1] अग्निपुराणमें आया है—'मृत व्यक्तिका तब कल्याण होता है, जब उसकी अस्थियाँ गंगामें डाली जाती हैं; जबतक गंगाके जलमें अस्थियोंका एक टुकड़ा भी रहता है, तबतक व्यक्ति स्वर्गमें निवास करता है।' आत्मघातियों एवं पतितोंकी अन्त्येष्टि-क्रिया नहीं की जाती, किंतु यदि उनकी अस्थियाँ भी गंगामें रहती हैं तो उनका कल्याण होता है। तीर्थचिन्तामणि एवं तीर्थप्रकाश अस्थि-प्रवाहके कृत्यको संक्षेपमें इस प्रकार देते हैं—'अस्थियाँ ले जानेवालेको स्नान करना चाहिये; अस्थियोंपर पंचगव्य छिड़कना चाहिये, उनपर सोनेका एक टुकड़ा, मधु एवं तिल रखना चाहिये, उन्हें किसी मिट्टीके पात्रमें रखना चाहिये और इसके उपरान्त दक्षिण दिशामें देखना चाहिये तथा यह कहना चाहिये 'नमोऽस्तु धर्माय'—'धर्मको नमस्कार।' इसके उपरान्त गंगामें प्रवेशकर यह कहना चाहिये 'स मे प्रीतः' 'धर्म (या विष्णु) मुझसे प्रसन्न हों' और अस्थियोंको जलमें बहा देना चाहिये। इसके उपरान्त उसे स्नान करना चाहिये; बाहर निकलकर सूर्यको देखना चाहिये और किसी ब्राह्मणको दक्षिणा देनी चाहिये। यदि वह ऐसा करता है तो मृतकी स्थिति इन्द्रके समान हो जाती है।'

काशीखण्डने व्यवस्था दी है कि विशिष्ट दिनोंमें गंगास्नानसे विशिष्ट एवं अधिक पुण्यफल प्राप्त होते हैं, यथा—साधारण दिनोंकी अपेक्षा अमावसपर स्नान करनेसे सौ गुना फल प्राप्त होता है, संक्रान्तिपर स्नान करनेसे सहस्र गुना, सूर्य या चन्द्रके ग्रहणपर स्नान करनेसे सौ लाख-गुना और सोमवारके दिन चन्द्रग्रहणपर या रविवारके दिन सूर्य-ग्रहणपर स्नान करनेसे असंख्य फल प्राप्त होता है।[2]

[अनु०—श्रीअर्जुनजी चौबे काश्यप]

संस्कृतके प्राचीन वाङ्मयमें गंगाका उल्लेख

(आचार्य श्रीकरुणापतिजी त्रिपाठी)

सामान्य रूपमें यह सर्वमान्य मत है कि भारतीय पुरातन संस्कृत-वाङ्मयमें 'ऋग्वेदसंहिता' प्राचीनतम है। उसके प्रसिद्ध नदीसूक्तमें एक अत्यन्त प्रसिद्ध ऋचा है—

इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या।
असिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तयार्जीकीये शृणुह्या सुषोमया॥

(ऋग्वेदसंहिता १०।७५।५)

इसमें सर्वप्रथम नाम लिया गया है 'गंगा' का। इससे 'गंगा' नदीकी वैदिक आर्योंमें सर्वोच्च महत्ताका आभास तो मिलता ही है—इससे यह भी सूचित होता है कि 'ऋग्वेद'-संहिता-कालसे ही—अति प्रत्नयुगसे ही गंगाकी सर्वोच्च महिमा सर्वमान्य है। उक्त संहिता (६।४५।३१)-में 'गाङ्गय' पदका भी प्रयोग मिलता है।

'शतपथ-ब्राह्मण' (१३।५।४।११ तथा १३)-में एवं 'ऐतरेय-ब्राह्मण' (३९।९)-में 'गंगा' एवं 'यमुना' के तटोंकी चर्चा है। वहाँ बताया गया है कि दुष्यन्तपुत्र 'भरत' ने विजयप्राप्तिके पश्चात् 'अश्वमेध-यज्ञ' किया था।

'वाल्मीकिरामायण' में भी रामवनगमनके प्रसंगमें गंगाकी चर्चा तो है ही, आदिकविका 'गंगाष्टक' भी अत्यन्त विख्यात है।

महाभारतके अनेक प्रसंगोंमें गंगाकी महिमा गायी गयी है। वनपर्वके ८५वें अध्यायमें गंगाके महत्त्वकी अनेक श्लोकों (८८—९७)-में वर्णन मिलता है। वहाँ बताया गया है कि गंगामें कहीं भी यदि स्नान किया जाय, तो वह 'कुरुक्षेत्र' में स्नानके समान फलद है।

---

१. यावदस्थि मनुष्यस्य गङ्गायाः स्पृशते जलम्। तावत्स पुरुषो राजन् स्वर्गलोके महीयते॥ (महा० वनपर्व ८५।९४, पद्मपु० १।३९।८७)

२. दर्शे शतगुणं पुण्यं संक्रान्तौ च सहस्रकम्। चन्द्रसूर्यग्रहे लक्षं व्यतीपाते त्वनन्तकम्॥
'''सोमग्रहः सोमदिने रविवारे रवेर्ग्रहः। तच्चूडामणिपर्वाख्यं तत्र स्नानमसंख्यकम्॥ (स्कन्दपु० काशीखण्ड २७।१२९—१३१)

[यतः द्वापरमें 'कुरुक्षेत्र' तीर्थका अतिविशिष्ट माहात्म्य था—अतः उपर्युक्त कथन हुआ है।] वहीं 'कनखल' और 'प्रयाग' तीर्थोंको क्रमशः श्रेष्ठ और श्रेष्ठतर कहा गया है। यह भी बताया गया है कि सैकड़ों पापोंका कर्ता गंगामें स्नान आदि कर ले, तो उसके पापपुंज भस्मसात् हो जाते हैं। इसी प्रसंगमें उक्त है कि 'सत्ययुग' में सभी तीर्थ अपने-अपने स्थानपर पवित्र हैं, 'त्रेता' में 'पुष्कर' की विशिष्ट महिमा है, 'द्वापर' में 'कुरुक्षेत्र' और 'कलियुग' में 'गंगा' का माहात्म्य वर्णनातीत है।

इसी 'महाभारत' के अनुशासन पर्व (अध्याय-२६।२६, ३०-३१)-में 'गंगा' की महिमाका स्तवन किया गया है। श्रीमद्भगवद्गीता (१०।३१)-में तो भगवान्ने स्वयं अपने आपको 'जाह्नवीस्वरूप' ['स्रोतसामस्मि जाह्नवी'] बताया है। 'मनुस्मृति' के भी आठवें अध्यायके बानबेवें श्लोकमें गंगाकी चर्चा करते हुए कहा गया है—

'तेन चेदविवादस्ते मा गङ्गां मा कुरून् गमः॥'

अनेकानेक पुराणों, उपपुराणों, निबन्ध-ग्रन्थों, त्रिस्थलीसेतु एवं तीर्थमाहात्म्यपरक अन्य ग्रन्थोंमें गंगाकी महिमा भरी पड़ी है। (१) 'विष्णुपुराण' (२।८।१०९ तथा २।८।१२०-१२१)-में, (२) 'पद्मपुराण' के अनेक खण्डोंमें (५।२५।१८८; ६।२६७।४७; १।३।६५-६६) एवं काशीमाहात्म्यपरक तृतीय-खण्डमें प्रसंगतः तथा अन्यत्र भी, (३) 'मत्स्यपुराण' (१२१।३८—४१) तथा अन्य 'काशी' या 'वाराणसी' की महिमासे सम्पृक्त वर्णनोंमें, (४) 'ब्रह्माण्डपुराण' (२।१८।३९—४१), (५) 'कूर्मपुराण' (१।४६।३१; १।३७।३४), (६) 'ब्रह्मपुराण' (६३।६८-६९), (७) 'नारदीयपुराण' (३९।१६-१७, ३०-३१), (८) 'वराहपुराण' (अध्याय ८२ गद्यमें), (९) 'गरुडपुराण'-पूर्वार्ध (८१।१-२) इत्यादि। यहाँ कुछ पुराणोंके नामोल्लेखमात्र किये गये हैं, सन्दर्भ भी दिये गये हैं। इन्हीं पुराणोंमें गंगाका अनेक प्रसंगोंमें अन्यत्र भी वर्णन है। इनके अतिरिक्त 'लिङ्गपुराण', 'शिवपुराण', 'श्रीमद्भागवतपुराण', 'भविष्यपुराण' आदिमें विविध प्रसंगोंमें 'गंगा' की पुण्यशीलता, पावनता, पापविमोचन-क्षमता, मुक्ति-प्रदायकता-प्रभृति माहात्म्यके वर्णन भरे पड़े हैं। स्कन्दपुराणान्तर्गत 'काशीखण्ड' में काशी, विश्वनाथ और उत्तरवाहिनी 'गंगा' का कीर्तिगान आद्यन्त भरा पड़ा है। पुराणकार उनकी महिमा गाते नहीं अघाते। वहाँ परोक्षरूपसे गंगा-माहात्म्य तो ओत-प्रोत है ही, प्रत्यक्षतः भी २७वें अध्यायसे २९वें अध्यायतक गंगा-माहात्म्य गुम्फित है।

संस्कृतके कतिपय प्रवन्ध-ग्रन्थों और अनेक स्वतन्त्र ग्रन्थोंमें गंगाकीर्तन एवं उसकी महिमा भरी पड़ी है। कुछ ग्रन्थोंके उल्लेख नीचे किये जाते हैं—

(१) लक्ष्मीधरके 'तीर्थकल्पतरु' (रचनाकाल-१११० ई० से ११२० ई० के आसपास)-में वाराणसी-चर्चाके प्रसंगमें 'गंगामाहात्म्य' मिलता है।

(२) तीर्थमाहात्म्यपरक परमप्रसिद्ध 'त्रिस्थलीसेतु'-शीर्षक ग्रन्थमें प्रायः समस्त प्रमुख तीर्थों और वहाँके अनुष्ठेय कृत्योंका वर्णन है, पर आगे चलकर (क) प्रयाग, (ख) काशी और (ग) गयासे सम्बद्ध तीन तीर्थों और वहाँ विधेय कृत्योंकी विस्तृत चर्चा है। प्रसंगतः वहाँ काशीके साथ गंगाका माहात्म्य भी मिलता है।

(३) वाचस्पतिमिश्र-रचित पाँच प्रकाशवाला 'तीर्थचिन्तामणि' ग्रन्थ विशिष्ट महत्त्वका है। उसमें भी गंगा-महिमा-प्रसंगमें कहा है—

दर्शनात् स्पर्शनात्पानात्तथा गङ्गेति कीर्तनात्।
स्मरणादेव गङ्गायाः सद्यः पापैः प्रमुच्यते॥

लगभग इसी आशयके पद्य 'गंगावाक्यावली' एवं 'गंगाभक्तितरङ्गिणी' में भी हैं। इस वर्गके अनेक ग्रन्थोंमें अनेकानेक ऐसे वचन बिखरे पड़े हैं, जिन्हें विज्ञजन देख सकते हैं।

केवल गंगाके माहात्म्य और पावनकारिताको केन्द्रमें रखकर छोटे-बड़े बहुत-से ग्रन्थ भी भारतकी संस्कृत

और सभी प्रादेशिक भाषाओंमें निर्मित हैं। अनुशीलक इस वर्गकी रचनाओंको ढूँढ़ सकते हैं। यहाँ संस्कृतकी कतिपय प्रमुख गंगामाहात्म्यपरक कृतियोंका नामोल्लेख नीचे किया जा रहा है—

१. **गंगाधरपद्धति**—गंगाधररचित।

२. **गंगाकृत्यविवेक**—कहा जाता है कि इसका निर्माण ई० सन् १४५०—१५०० के मध्य वर्धमानने किया।

३. **गंगाभक्तितरंगिणी (प्रथम)**—धारेश्वरके पुत्र गणपतिद्वारा संवत् १७६६ (सन् १७१० ई०)-के लगभग इसका निर्माण किया गया।

४. **गंगाभक्तितरंगिणी (द्वितीय)**—इसके निर्माता चतुर्भुजाचार्य हैं। (इसका निर्माण-काल ज्ञात न हो सका।)

५. **गंगामृत**—इसके रचनाकारोंमें दो संयुक्त नाम हैं—(१) वर्धमान, (२) रघुनन्दन। समय वही वर्धमानका (सन् १४५०—१५००)-के मध्य।

६. **गंगावाक्यावली**—भवसिंह, देवसिंह, शिवसिंहके वंशज मिथिलाराज पद्मसिंहकी महिषी विश्वासदेवीके लिये विद्यापतिद्वारा विरचित।

७. **गंगाभक्तिप्रकाश**—रचना-काल सम्वत् १८५२, (सन् १७९५-९६)। संस्कृत-भाषाकी कुछ प्रमुख कृतियोंका केवल नामोल्लेख करते हुए प्रसंगका उपसंहार करता हूँ, जो विशिष्ट हैं।

संस्कृत-भाषाके अतिरिक्त उत्तर और दक्षिणकी प्राचीन-नवीन-भाषाओंमें गंगामाहात्म्यके आधारपर अनेकानेक स्वतन्त्र ग्रन्थ रचित हैं।

गंगामाहात्म्यसे ही सम्बद्ध सैकड़ों स्तोत्र संस्कृतमें और सहस्रों संस्कृतेतर भाषाओंमें हैं। 'वाल्मीकि' का 'गंगाष्टक' कदाचित् लौकिक संस्कृतका आदि स्तव है। कालिदास, शंकराचार्यके गंगाष्टक भी प्राय: सभी स्तोत्र-संग्रहपरक ग्रन्थोंमें हैं। अनेकानेक पुराणादि एवं आगम-ग्रन्थोंमें भी गंगास्तोत्र बिखरे पड़े हैं। पण्डितराज जगन्नाथकी 'गंगालहरी' अनुपम, इक्यावन ललित श्लोकोंकी है। हिन्दीमें भी महाकवि 'पद्माकर' और 'रत्नाकर' के स्तोत्र सुन्दर हैं। भारतेन्दु हरिश्चन्द्रने भी बहुत कुछ लिखा है।

संस्कृत साहित्यमें गंगा

(श्रीमधुसूदनप्रसादजी मिश्र 'मधुर')

'संस्कृत साहित्यमें गंगा'—यह एक ऐसा विषय है, जिसपर इने-गिने पृष्ठोंमें कुछ लिख सकना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। ऋग्वेद (१०।७५।५)-से संस्कृत-सरस्वतीकी जो धारा फूटी और बड़े-बड़े 'आरण्यकों' की राह होती हुई आगे बढ़ी, वह गंगाकी धारासे मिलकर दिन दूनी-रात चौगुनी चमकती हुई बढ़ती ही चली गयी। 'ब्राह्मणों' ने पुण्यसलिलाके स्पर्शसे अपनेको धन्य माना और उपनिषदोंने उसके रहस्य बतलाये। पुराणों, स्मृतियों एवं काव्योंके अपार पारावारमें वह धारा सौगुने आकार और वेगसे आकर मिल गयी। ऐसी दशामें इस विशाल धाराका परिचय यह तुच्छ लेखनी क्या दे सकेगी, जब यह उसकी एक बूँदमें ही डूब सकती है। तो भी परखनेके लिये एक बूँद काफी है। अत: मैं इसपर कुछ लिखनेका साहस करता हूँ।

कथा, रूप-वर्णन, माहात्म्य, प्रायश्चित्तविधान, भक्ति-भाव, काव्यकला एवं छोटे-मोटे प्रासंगिक वर्णनोंके रूपमें गंगाजीका समूचे संस्कृत साहित्यमें दर्शन होता है। इनके सम्बन्धकी कथाओंका उल्लेख एक स्वतन्त्र लेखका विषय होगा। इसलिये मैं इसपर कुछ नहीं लिखना चाहता। रामायण, महाभारत एवं सभी पुराणोंमें जगह-जगहपर अनेक प्रकारकी कथाएँ भरी पड़ी हैं। शेष वर्णनोंके बारेमें मैं थोड़ा-बहुत लिखनेकी चेष्टा करूँगा।

राम-वनवासके अवसरपर आदिकविका गंगा-

वर्णन बड़ा ही सुन्दर है। वहाँ आपने गंगाजीका एक सजीव चित्र खींच दिया है। वैसा विलक्षण और अपूर्व चित्र अन्यत्र देखनेको नहीं मिलता। १७ श्लोकोंके इस छोटेसे वर्णनमें ही आदिकविने प्रासंगिक वर्णनके सिवा सब प्रकारके वर्णनोंको बड़ी कुशलतासे कर डाला है।

कुल चार विशेषणोंमें गंगाजीकी सारी कथा ही कह डाली है। बानगी लीजिये—

(१) विष्णुपादच्युताम्

(२) दिव्याम्

(३) सागरतेजसा शंकरस्य जटाजूटाद् भ्रष्टाम्

(४) समुद्रमहिषीम्

चारोंका क्रमशः अर्थ होगा—

(१) विष्णुके चरणसे गिरी हुई।

(२) स्वर्गलोककी रहनेवाली।

(३) सागर अर्थात् सगरवंशी राजा भगीरथकी तपस्याद्वारा शंकरके जटाजूट (में आकर वहाँ)-से (पृथ्वीपर) गिरी हुई।

(४) समुद्रकी रानी

(अर्थात् समुद्रसे मिलकर रहनेवाली)।

इन्हीं चार बातोंमें गंगाकी सारी कथा आ जाती है।

अब रूप-वर्णन देखिये—

जलाघाताट्टहासोग्रां फेननिर्मलहासिनीम्।
क्वचिद्वेणीकृतजलां क्वचिदावर्तशोभिताम्॥
क्वचित् स्तिमितगम्भीरां क्वचिद्वेगसमाकुलाम्।
क्वचिद् गम्भीरनिर्घोषां क्वचिद्भैरवनिःस्वनाम्॥
(वा०रा० २।५०।१६-१७)

कहीं तो जलकी टक्करोंके रूपमें ठठाकर हँसनेसे (गंगाजी) उग्र मालूम पड़ रही थीं और कहीं फेनोंके रूपमें निर्मल हँसी हँस रही थीं। कहींपर जलकी वेणी बना रखी थी और कहींपर (तरंगोंके घूमनेके कारण) भँवरसे शोभित हो रही थीं। कहींपर प्रवाहके स्थिर होनेसे गम्भीर और कहीं प्रवाहमें वेग होनेके कारण व्याकुल मालूम पड़ती थीं। कहीं तो उनका गम्भीर शब्द हो रहा था और कहीं भयानक।

ऋषिनिषेविताम् (ऋषियोंसे सेवित), देवदानवगन्धर्वैरुपशोभिताम् (समीप रहकर देव, दानव और गन्धर्व जिसकी शोभाको बढ़ाते थे) और विख्याताम् (अत्यन्त प्रसिद्ध)—ये विशेषण गंगाके माहात्म्यको बतला रहे हैं।

अब प्रायश्चित्त-विधानकी ओर दृष्टि डालिये। इसपर भी कुछ विशेषण प्रकाश डाल रहे हैं।

(१) अपापाम् (पापसे रहित)

(२) पापनाशिनीम् (पापोंको नष्ट करनेवाली)

(३) पुण्याम् (पवित्र अथवा पवित्र करनेवाली)

(४) व्यपेतमलसंघाताम् (मल-समूह जहाँसे दूर निकल भागते हैं)

इसमें काव्यकलाका दिग्दर्शन कराना अनावश्यक है; क्योंकि इस वर्णनमें एक भी ऐसी शब्द-योजना नहीं मिलेगी, जिससे काव्यके रसास्वादनमें कमी हो। वैसे ही उस समूचे वर्णनको हम भक्ति-भावमें भी स्थान दे सकते हैं।

महाभारतमें गंगाका वर्णन प्रधानतः दो स्थानोंमें मिलता है। एक तो आदिपर्वमें शन्तनुकी कथाके प्रसंगमें और दूसरा सगर-पुत्रोंके उद्धारके अवसरपर वनपर्वमें। आदिपर्ववाले वर्णनको छोड़कर मैं वनपर्ववालेको ही लेता हूँ; क्योंकि वर्णनकी सुन्दरता जैसी इसमें है, वैसी उसमें नहीं। शंकरजी अपनी जटा फैलाकर खड़े हैं। उस समय आकाशसे शंकरके ललाटदेशपर गंगाजीके गिरनेका जो दृश्य है, वही भगवान् व्यासके वर्णनका विषय है। आप लिखते हैं—

ईशानं च स्थितं दृष्ट्वा गगनात्सहसा च्युता।
तां प्रच्युतामथो दृष्ट्वा देवाः सार्द्धं महर्षिभिः॥
गन्धर्वोरगयक्षाश्च समाजग्मुर्दिदृक्षवः।
ततः पपात गगनाद् गङ्गा हिमवतः सुता॥
समुद्धूतमहावर्ता मीनग्राहसमाकुला।
तां दधार हरो राजन् गङ्गां गगनमेखलाम्॥
ललाटदेशे पतितां मालां मुक्तामयीमिव।

अर्थात् 'शंकरजीको खड़े देख आकाशसे एकाएक गंगाजी गिरीं। उन्हें आकाशसे गिरते देख देवता, महर्षि, गन्धर्व, सर्प, यक्ष सब देखनेकी इच्छासे वहाँ आ गये। उस समय गंगाजीमें बड़े-बड़े भँवर पड़ रहे थे। उनमें बहुत-सी मछलियाँ और घड़ियाल खलबलाहट पैदा कर रहे थे। आकाशकी मेखला-सी मालूम पड़नेवाली हिमवान्‌की कन्या उस गंगाको शंकरजीने सिरपर यों धारण किया, जैसे मोतीकी माला धारण की जाती है।'

इस वर्णनमें महाभारतकार वाल्मीकिके वर्णनसे बहुत-कुछ प्रभावित मालूम पड़ते हैं।

अब कालिदासके रघुवंशको लीजिये! उन्होंने प्रयागकी गंगाका जो वर्णन किया है, उसे पढ़कर कोई भी पाठक मुग्ध हुए बिना नहीं रह सकता।

क्वचित्प्रभालेपिभिरिन्द्रनीलैर्मुक्तामयी यष्टिरिवानुविद्धा।
अन्यत्र माला सितपङ्कजानामिन्दीवरैरुत्खचितान्तरेव॥
क्वचित्खगानां प्रियमानसानां कादम्बसंसर्गवतीव पंक्तिः।
अन्यत्र कालागुरुदत्तपत्रा भक्तिर्भुवश्चन्दनकल्पितेव॥
क्वचित्प्रभा चान्द्रमसी तमोभिश्छायाविलीनैः शबलीकृतेव।
अन्यत्र शुभ्रा शरदभ्रलेखा रन्ध्रेष्विवालक्ष्यनभःप्रदेशा॥
क्वचिच्च कृष्णोरगभूषणेव भस्माङ्गरागा तनुरीश्वरस्य।
पश्यानवद्यांगि विभाति गंगा भिन्नप्रवाहा यमुनातरङ्गैः॥

रामचन्द्रजी सीताजीके साथ पुष्पकपर लंकासे लौट रहे थे। मार्गमें प्रयाग आ पड़ा तो आपने सीताजीसे गंगा-यमुनाको दिखाते हुए कहा*—

'सुन्दरी, जरा गंगाकी शोभा तो देखो, किस प्रकार यमुनाजीकी तरंगोंसे उनका प्रवाह अलग-अलग दिखलायी दे रहा है। कहीं तो ऐसी मालूम पड़ रही हैं—जैसे इन्द्रनीलमणियोंसे जड़ी हुई मोतियोंकी चमकती हुई छड़ी हो। दूसरी जगह सफेद कमलोंकी माला-सी जान पड़ती हैं, जिसके बीच-बीचमें नील कमल गूँथे गये हों। कहींपर मान-सरोवरके प्रेमी हंसोंकी कतार-सी मालूम पड़ रही हैं, जिसमें नील हंस भी मौजूद रहें। अन्यत्र तगरके चिह्नित पत्रोंसे सुशोभित सफेद चन्दनकी बनी हुई पृथ्वीकी भंगि रचना-सी जान पड़ती हैं। कहीं छायामें छिपकर बैठे हुए अन्धकारसे चित्रित चन्द्रमाकी चाँदनी हो रही है। कहींपर शरद्-ऋतुके सफेद मेघोंकी रेखा जान पड़ती है, जिसके बीच-बीचसे आकाशके नीले प्रदेश दिखलायी देते हों। कहीं काले साँपोंको आभूषण बनाये, भस्म रमाये शंकरका शरीर जान पड़ती है।

कालिदासके इस वर्णनमें कितनी सजीवता एवं मार्मिकता है।

भवभूतिने भी 'उत्तररामचरित' में रामके मुखसे भगवती भागीरथीके सम्बन्धमें कहलाया है—

'देवि रघुकुलदेवते! नमस्ते, तुरगविचयव्यग्रानुर्वीभिदः सगराध्वरे कपिलमहसामर्षात् प्लुष्टान् पितुश्च पितामहान् अगणिततनूतापं तप्त्वा तपांसि भगीरथो भगवति तव स्पृष्टानद्भिश्चिरादुदतीतरत्।'

अर्थात् 'हे रघुकुलकी देवता देवि भागीरथि! मैं आपको नमस्कार करता हूँ। सगरके यज्ञमें घोड़ेको खोजनेमें व्यग्र, पृथिवीको खोद डालनेवाले, कपिलके भयंकरकोपसे भस्म हुए पितरोंको भगीरथने अगणित शारीरिक कष्टोंको झेलते हुए तप करके आपके जलसे स्पर्श कराकर तारा था।' अर्थगौरवके गुरु महाकवि भारविका श्रीगंगाजीपर प्रासंगिक वर्णन सुनिये—

विततशीकरराशिभिरुच्छ्रितै-
रुपलरोधविवर्तिभिरम्बुभिः;
दधतमुन्नतसानुसमुद्धतां
धृतसितव्यजनामिव जाह्नवीम्।

अर्थात् शिलाओंमें रुकनेसे पीछेकी ओर लौटनेवाले जलके कारण बिखरे हुए जल-कण ऊपरकी ओर उछल रहे थे, इसलिये ऊँचे शिखरोंसे टकराई हुई गंगा ऐसी

* गोस्वामी तुलसीदासजीने भी इसी प्रकार श्रीरामचरितमानसमें वर्णन किया है—
बहुरि राम जानकिहि देखाई। जमुना कलि मल हरनि सुहाई॥
पुनि देखी सुरसरी पुनीता। राम कहा प्रनामु करु सीता॥

मालूम पड़ती थी, जैसे चँवर डुला रही हों।

पण्डितराज जगन्नाथकी गंगालहरीके साथ कई-कई गंगाष्टक भी उपलब्ध हैं। उनसे मैं यहाँ एक-एक पद्य दे देना उचित समझता हूँ।

पंडितराजकी 'गंगालहरी' संस्कृत-साहित्यकी एक जगमगाती ज्योति है। कितना सुन्दर है यह पद्य—

अपि प्राज्यं राज्यं तृणमिव परित्यज्य सहसा
विलोलद्वानीरं तव जननि तीरं श्रितवताम्।
सुधातः स्वादीयः सलिलमिदमातृप्ति पिबतां
जनानामानन्दः परिहसति निर्वाणपदवीम्॥

'माँ! जो लोग सहसा अपने बहुत बड़े राज्यको तिनकेकी तरह छोड़कर तुम्हारे तटपर, जहाँ सदा हिलते हुए सरकण्डे दिखायी पड़ते हैं, आश्रय लेते हैं और अमृतसे भी बढ़कर मीठे तुम्हारे जलको छककर पीते हैं, उन लोगोंका आनन्द मोक्षकी पदवीका परिहास करता है।'

एक गंगाष्टक वाल्मीकिजीका लिखा हुआ है। उसमें जो प्रांजलता, सरसता और मनोहरता है, उसे अनेक अनुकरण करनेवालोंने भी नहीं पाया! बानगी लीजिये—

गाङ्गं वारि मनोहारि मुरारिचरणच्युतम्।
त्रिपुरारिशिरश्चारि पापहारि पुनातु माम्॥

विष्णुके चरणसे गिरा हुआ, शंकरके सिरपर विचरनेवाला, पापोंको दूर करनेवाला मनोहर गंगाजल मुझे पवित्र करे।

श्रीशंकराचार्यने जो गंगाष्टक लिखा है, उसका रस क्या कम है!

कुतो वीचिर्वीचिस्तव यदि गता लोचनपथं
त्वमापीता पीताम्बरपुरनिवासं वितरसि।
त्वदुत्संगे गङ्गे पतित यदि कायस्तनुभृतां
तदा मातः शातक्रतवपदलाभोऽप्यतिलघुः॥

'माँ! यदि तेरी तरंगें देख ली जायँ तो फिर संसारकी माया कैसी? यदि कोई तेरे जलका पान कर ले तो उसे तू रहनेके लिये अन्तमें विष्णुलोक देती है। माँ गंगे, तेरी गोदमें यदि किसी भी प्राणीका शरीर पहुँच जाय तो इन्द्रपद भी उसके लिये अति तुच्छ है।'

लेखका कलेवर बहुत बढ़ रहा है, अतः मैं अनेक उद्धरणोंको इच्छा रहते भी नहीं दे सकता। अन्तमें पण्डितराज जगन्नाथकी एक समस्या-पूर्ति और रहीमके एक गंगा-सम्बन्धी श्लोकको देकर मैं इस लेखको समाप्त करूँगा।

एकबार विषयमें डूबे हुए बूढ़े पंडितराज जगन्नाथ गंगाके किनारे सोये हुए थे। दिन चढ़ आया था। लोग स्नान करने आ-जा रहे थे। उसी समय अप्पय दीक्षित वहाँ आ निकले और यह आधा श्लोक कहा—

'किं निःशङ्कं शेषे शेषे वयसि त्वमागते मृत्यौ।'

भले आदमी! क्यों निःशंक होकर सो रहे हो? अवस्था अन्तिम है (मौत नजदीक आ पहुँची है।)

ये शब्द कानोंमें पड़ते ही पण्डितराज जग पड़े और उन्होंने चादरसे अपना सिर बाहर किया। अप्पय दीक्षितकी दृष्टि उनपर पड़ी और वे डर गये। पण्डितराजने तुरंत ही आधेकी यों पूर्ति की—

'अथवा सुखं शयीथा निकटे जागर्ति जाह्नवी भवतः।'

(सोनेसे कोई हानि नहीं; आपके पास ही माँ गंगा जाग रही हैं।)

रहीमने भी मुसलमान होते हुए गंगाजीके बारेमें कितना सुन्दर कहा है—

अच्युतचरणतरङ्गिणि
शशिशेखरमौलिमालतीमाले!
मम तनुवितरणसमये
हरता देया न मे हरिता।

माँ! तू तो विष्णुके चरणोंकी निकली हुई तरंगिणी ठहरी ही। उधर तू महादेवके सिरकी मालती-माला भी है, अतः अन्तमें मुझे जब शरीर देना तो शिवका ही, विष्णुका नहीं, जिसमें मैं तुझे अपने सिरपर धारण कर सकूँ। [गीताधर्म]

संस्कृत वाङ्मयमें भगवती गंगा

(डॉ० श्रीगिरिजाशंकरजी शास्त्री)

याविर्भूता मुरहरपदाच्छम्भोः शिरोराजिनी
या त्रैलोक्ये विहरणपरा कुण्ड्यां विधेः स्थायिनी।
या खं गर्भं समधिवसतां गर्भाप्तिविध्वंसिनी
सा मन्दस्य प्रभवतु ममानन्दाय मन्दाकिनी॥*

संस्कृत भाषा विश्वकी प्राचीनतम भाषा है। देवताओंका प्रत्यक्षीकरण करानेके कारण यह देवभाषा है। इसके अध्ययनसे चतुर्वर्गफलप्राप्ति होती है। जैसे संस्कृत वाङ्मयके अध्ययन-अध्यापनसे धर्म, अर्थ, काम और मोक्षकी प्राप्ति होती है, उसी प्रकार भगवती गंगाकी सेवासे चारों पुरुषार्थ सहज प्राप्त हो जाते हैं। यद्यपि गंगाजीकी महिमाका वर्णन अन्यान्य भाषाओंमें भी है तथापि संस्कृत भाषाके कवियोंने गंगाजीके सन्दर्भमें अपने जिन भावपूर्ण उद्‌गारोंकी अभिव्यक्ति की है, वह अद्वितीय है।

आचार्य मम्मट अपने ग्रन्थ काव्यप्रकाशमें चित्रकाव्यके उदाहरणमें गंगाजीकी स्तुति उद्धृत करते हुए कहते हैं—

स्वच्छन्दोच्छलदच्छकच्छकुहरच्छातेतराम्बुच्छटा-
मूर्च्छन्मोहमहर्षिहर्षविहितस्नानाह्निकाह्नाय वः।
भिद्यादुद्यदुदारदर्दुरदरी दीर्घादरिद्रद्रुम-
द्रोहोद्रेकमहोर्मिमेदुरमदा मन्दाकिनी मन्दताम्॥

अर्थात् स्वच्छन्दरूपसे उछलती हुई, अच्छ अर्थात् निर्मल और कच्छ-कुहर अर्थात् किनारेके गड्ढोंमें (छात दुर्बल, छातेतर) अत्यन्त वेगसे प्रवाहित होनेवाली जो जलकी धारा (अम्बुच्छटा), उससे जिनके मोह—अज्ञान (मूर्च्छा)-का नाश हो गया है, ऐसे महर्षियोंके द्वारा जिसमें आनन्दपूर्वक स्नान तथा आह्निक (सन्ध्या-वन्दन आदि) कार्य किये जा रहे हैं। जिनमें बड़े-बड़े मेढक दिखलायी पड़ रहे हैं, इस प्रकारकी कन्दराओंसे युक्त और दीर्घकाय एवं अदरिद्र अर्थात् बड़े ऊँचे तथा शाखा, पत्र-पुष्प आदिसे लदे हुए जो वृक्ष उनके गिराने (द्रोह)-के कारण ऊपर उठनेवाली बड़ी-बड़ी लहरोंसे मेदुरमदा अर्थात् अत्यन्त गर्वशालिनी गंगाजी आप सभीके पाप या अज्ञान आदिको नष्ट कर दें।

महाकवि पण्डितराज जगन्नाथने पाप-प्रक्षालनहेतु गंगालहरीकी रचना की है, जो बावन श्लोकोंमें निबद्ध है। कहा जाता है कि उनके एक-एक श्लोकको रचना एवं भावपूर्ण स्तुतिसे काशीमें गंगाजी एक-एक सीढ़ी ऊपर आ जाती थीं और जब बावन श्लोक पूरे हुए तब गंगाजीने पण्डितराजको अपने अंकमें समाहित कर लिया। पण्डित-राजने गंगालहरीको पीयूषलहरी कहा है। अर्थात् गंगाजीको वे साक्षात् अमृत ही स्वीकार करते हैं। यथा—

इमां पीयूषलहरीं जगन्नाथेन निर्मिताम्।
यः पठेत्तस्य सर्वत्र जायन्ते सुखसम्पदः॥

पण्डितराजजी गंगालहरीके एक श्लोकमें कहते हैं कि हे माँ! राजाओंकी स्त्रियाँ जब अपने वक्षःस्थलमें कस्तूरी लगाकर आपके इस जलमें स्नान करती हैं तो जैसे ही कस्तूरी गंगाजलका स्पर्श करती है, उसी क्षण जिस मृगकी कस्तूरी होती है, वह हिरण दिव्यदेह धारण करके विमानमें बैठकर देवताओंके बीचमें नन्दनवनमें विहार करने लगता है। यथा—

प्रभाते स्नान्तीनां नृपतिरमणीनां कुचतटीं
गतो यावन्मातर्मिलति तव तोयैर्मृगमदः।
मृगास्तावद्वैमानिकशतसहस्रैः परिवृता
विशन्ति स्वच्छन्दं विमलवपुषो नन्दनवनम्॥

कवि उद्भटसागर कहते हैं कि हे माँ गंगे! मैं आपको पतितपावनी नहीं मानता; क्योंकि जो शूली (शूल रोगसे पीड़ित) तथा गदी अर्थात् रोगी हैं, वे तुम्हारे तटपर मरनेके पश्चात् जब जलका स्पर्श पाते हैं, तब वे शूली अर्थात् शंकरजी तथा गदी अर्थात् भगवान् विष्णु हो जाते हैं। इसका भावार्थ है कि गंगाजीके स्पर्शमात्रसे मोक्ष मिल जाता है—

* जो मुरदैत्यका विनाश करनेवाले भगवान् श्रीहरिके चरणोंसे प्रकट हुई हैं, भगवान् शंकरके शिरोदेशमें विराजमान हैं। जो स्वर्ग, भूतल तथा पाताल—इन तीनों लोकोंमें स्वच्छन्द विहार करती हैं तथा ब्रह्माजीके कमण्डलुमें निवास करती हैं। जो स्वर्गमें निवास करनेवालों तथा मर्त्यलोकनिवासी मनुष्योंके आवागमनका निवारण करनेवाली हैं—ऐसी वे भगवती मन्दाकिनी मुझ मन्द जनके लिये आनन्द-प्रदायिनी हों।

जननि सुरतटिनि भवतीं कदाचन न पतितपावनीं मन्येऽहम्।
शूली गदी च तीरे नीरेऽपि मृतः पुनरपि शूली गदी च॥

एक अन्य श्लोकमें वे कहते हैं कि माँ गंगाके गर्भमें जो भी जीवात्मा पहुँच जाता है, वह सुखपूर्वक स्थित होता हुआ पुनः कभी भी दुःख देनेवाले गर्भमें प्रवेश नहीं करता। गर्भमें रहनेपर कितना कष्ट होता है—इसका बोध करानेके लिये जह्नुमुनिने गंगाजीको अपने गर्भमें धारण कर लिया था ताकि गंगाजी कभी भी अपने भक्तको गर्भजन्य दुःखको न भोगने दें। सेवित होनेपर जो सेवकके नामको स्वयं धारण कर लेती हैं, जैसे भगीरथके कारण भागीरथी कहलायीं और जो सेवकको पुत्रकी भाँति गोदमें बैठा लेती हैं। ऐसी देवताओंसे वन्दित चरणोंवाली माँ गंगा सदैव मेरी माता बनी रहें—

यद् गर्भे सुखदे स्थितस्य न पुनर्गर्भागतिर्दुःखदा
गर्भक्लेशनिवेदनाय मुनिना गर्भे धृतायैकदा।
या सेव्याऽपि च सेवकोपपदगा पुत्रस्य या क्रोडदा
सा वृन्दारकवृन्दवन्दितपदा माताऽस्तु मे सर्वदा॥

एक प्रसिद्ध किंवदन्तीके अनुसार किसी समय तीर्थराज प्रयागनिवासी एक सौ बारह वर्षीय गंगातटवासी न्यायशिरोमणि जगन्नाथ तर्कपंचाननके समीप उनके प्रधान नैयायिक छात्रने आकर प्रश्न पूछा—हे गुरुदेव! ईश्वरतत्त्वके विषयमें आपने अनेक प्रकारसे शिक्षा प्रदान की है, किंतु किसी एक उक्तिके द्वारा ईश्वरके स्वरूपका निर्णय नहीं किया है, क्या यह सम्भव है कि किसी एक वाक्यमें ईश्वरतत्त्व जाना जाय? तब तर्कपंचानन महोदयने अपने उत्कृष्ट ज्ञानके बलसे अधोलिखित श्लोकमें अपना उत्तर दिया। कहा जाता है कि उसी श्लोकके पाठ करनेके पश्चात् ही उन महापुरुषकी प्राणवायु उनके शरीरसे निकल गयी। श्लोक इस प्रकार है—

नराकारं वदन्त्येके निराकारञ्च केचन।
वयं तु दीर्घसम्बन्धाद् नाराकाराम् (नीराकाराम्) उपास्महे॥

इसका अर्थ है कोई कहते हैं कि ईश्वर नराकार है अर्थात् मनुष्यके आकारका (सगुण रूपमें) है और दूसरे कोई कहते हैं निराकार है अर्थात् निर्गुण रूपमें है, किंतु गंगाजीसे बहुत समयसे सम्बन्ध होनेके कारण मैं नराकारको नाराकार (नारा=जल) तथा निराकारको नीराकार अर्थात् जलाकार (भगवती गंगाजी)-की ही उपासना करता हूँ। नारा तथा नीर दोनों शब्दोंका अर्थ संस्कृत भाषामें जल ही होता है। इससे यह सिद्ध है कि गंगाजी प्रत्यक्ष ईश्वर हैं।

कोई गंगाका भक्त कवि भंगीभणितिके द्वारा गंगाजीके माहात्म्यको बताता हुआ कह रहा है कि हे माँ गंगा! तीन प्रकारके दोष आध्यात्मिक, आधिभौतिक तथा आधिदैविक (अथवा वात, पित्त, कफ)—इन त्रिदोषोंके नाशके लिये जो तुम्हारे जलमें स्नान करता है, उसे तुम चौथे दोषवाला बना देती हो अर्थात् त्रिदोष तो नाश किया, पर चतुर्दोष कर दिया। संस्कृत भाषामें दोषका अर्थ भुजा भी होता है, अतः भक्तका कथन है कि चतुर्दोष अर्थात् चार भुजाओंवाला चतुर्भुज भगवान् विष्णुका स्वरूप दे देती हो—

गङ्गे त्रिदोषनाशाय त्वयि मज्जति यो जनः।
तं करोषि चतुर्दोषं मातः कथं विकत्थसे॥

तीर्थराज प्रयागमें गंगा, यमुना, सरस्वतीके समागमसे त्रिवेणी संगम बना है, जिसे युक्तत्रिवेणी भी कहते हैं। त्रिवेणीसे आगे चलनेपर गंगाजीका यमुना और सरस्वतीसे वियोग हो जाता है, इसलिये इस स्थानको मुक्तवेणी भी कहते हैं। यहींसे गंगाजी काशीके लिये प्रस्थान करती हुई बहुत धीरे-धीरे आगे बढ़ती हैं। इसी स्थलपर गंगाजीके वेगकी मन्दताका कारण किसी जिज्ञासुके द्वारा पूछे जानेपर बाणेश्वर विद्यालंकार नामक किसी कविने कहा है कि राजा सगरकी सन्तानोंको तारनेकी इच्छासे गंगाजी हिमालयके गोमुख स्थानसे बड़े वेगसे चलीं। दोनों बहनोंसे मिलकर अत्यन्त हर्षित हुईं, परंतु यहाँसे आगे जानेपर बहनोंसे वियोग होगा, अतः प्रयागमें सरस्वती और यमुनासे विरह होनेके कारण गंगाजीकी गति मन्द पड़ गयी—

सगरसन्ततिसन्तरणेच्छया प्रचलिताऽतिजवेन हिमाचलात्।
इह हि मान्द्यमुपैति सरस्वतीयमुनयोर्विरहादिव जाह्नवी॥

कमलसे जलकी उत्पत्ति क्या सम्भव है? इसको विषय बनाकर एक कवि कहता है कि एक बार

राधाजीने भगवान् श्रीकृष्णसे पूछा कि हे भगवन्! कमलकी उत्पत्ति तो जलसे देखी जाती है, किंतु कभी भी कमलसे जल नहीं उत्पन्न होता है? हे श्रीकृष्ण! तथापि आपके लिये यह बात विपरीत दिखायी देती है। कारण आपके चरण-कमलसे ही जलरूपिणी त्रिपथगा भगवती गंगाजी प्रकट हो गयी हैं—

अम्बुजमम्बुनि जातं क्वचिदपि न तु जातमम्बुजादम्बु।
त्वयि मुरहर विपरीतं पदाम्बुजात् त्रिपथगा जाता॥

किसी अन्य कविकी रचना है—भगवान् शंकरके शिरका त्याग करके गंगाजी कैसे इस पृथ्वीतलपर आ गयीं? क्या पार्वतीजीको रुष्ट देख करके क्रोधके कारण भगवान् शंकरने अपने शिरसे सुन्दर तरंगोंवाली गंगाका त्याग किया है, नहीं-नहीं; केवल बहुत सारे पापियोंको मुक्ति प्रदान करनेके लिये तथा त्रैलोक्यकी रक्षाके लिये भगवान् शंकरजी-जैसे बड़े देवताके शिरको भी छोड़कर भगवती गंगाजी पृथ्वीपर चली आयीं—

शिवां रुष्टां दृष्ट्वा प्रमथपतिना मूर्द्धकलिता
परित्यक्ता गङ्गा बहुतरतरङ्गा किमु रुषा।
जनेभ्यः पापिभ्यः प्रमथपतितां दातुमधुना
समायाति क्षोणीं त्रिभुवनजनत्राणसलिला॥

एक अन्य कविका कथन है—हे गंगाजी! तुम्हारी महिमाको वर्णन करनेमें शेषनागजी भी समर्थ नहीं हैं, कारण भगवान् विष्णुके चरणोंसे च्युत होनेवाली होती हुई भी माँ! आप भगवान् विष्णुके ही पदको प्रदान कर देती हो—

गङ्गे तव महिमानं वक्तुमनीशः फणीशोऽपि।
वितरसि तत् पदमच्युतमच्युतचरणच्युताऽपि त्वम्॥

गंगाजीके दर्शनसे ही मुक्ति हो जाती है जैसा कि कहा भी गया है—'गङ्गे तव दर्शनात् मुक्तिः।' इसीको लक्ष्य करके कोई कवि कह रहा है—हे मित्र! यदि तुम्हें अपने इस शरीरसे प्रेम है तो हमारे वचनका अवश्य पालन करना। गंगाजीको किसी भी प्रकारसे मत देखना और न उनके समीपमें जाना; क्योंकि मुक्तिरूपी बाघिन गंगाजीके दोनों तटोंपर विचित्र रूपमें रहती है। वहाँ जाते ही वह लोगोंको निगल लेती है, जिससे फिर कभी भी किसी देहका सम्बन्ध नहीं हो पाता—

देहस्नेहो यदि तव सखे मद्वचः पालनीयं
गङ्गां द्रष्टुं कथमपि न तत्सन्निधिं यास्यसि त्वम्।
मुक्तिव्याघ्री तदुभयतटव्यापिनी चित्ररूपा
तत्रायान्तं ग्रसति न पुनर्देहसम्बन्धगन्धः॥

एक अन्य कवि कहता है कि शंकरजीके शिरपर स्थित चन्द्रकला क्षीण होती हुई भी नष्ट क्यों नहीं हो जाती? शंकरजीके नेत्राग्निसे तथा सर्पराजके गर्जनसे भयभीत शशिकला क्षीण होती हुई भी नष्ट इसलिये नहीं होती; क्योंकि वहीं स्थित गंगाजी नित्य उसे अमृतरूपमें जल प्रदान करती रहती हैं, जिससे उसका प्राणान्त नहीं होता—

वासः समं नेत्रहुताशनेन गर्जन् फणीन्द्रो भयमातनोति।
किं पृच्छसि त्वं वपुषः कृशत्वं भागीरथी जीवनमादधाति॥

एक अन्य कविकी उक्ति है। गंगाजीके तटपर जल पीकर ही पेट भरना पड़े, शाक-पात ही मिलता रहे तो इन्द्रके पदका लाभ भी काक अर्थात् तुच्छ ही है। भावार्थ यह है कि शाकका लाभ एवं गंगाजल तथा गंगातटका निवास इन्द्रपदसे भी श्रेष्ठ है—

वरं भागीरथीतीरे नीरेणोदरपूरणम्।
तत्र चेल्लभ्यते शाकः कः काकः पाकशासनः॥

अधोलिखित श्लोकमें भंगीभणितिके द्वारा कोई कवि कह रहा है कि जब-जब मनुष्य गंगा-स्नानके लिये चलना आरम्भ करते हैं, तब उनके पाप रोते हुए यह कहते हैं कि ये अधम नर बड़े कृतघ्न हैं, स्वयं हम लोगोंको उत्पन्न करके गंगा-स्नानके द्वारा हमें नष्ट करनेपर उतारू हैं—

यदा यदा यान्ति नरा हि जाह्नवीं
रुदन्ति पापानि वदन्ति चाप्रियम्।
अरे कृतघ्ना नितरां नराधमाः
स्वयं समुत्पाद्य निहन्तुमुद्यताः॥

कविवर राजकुमार न्यायरत्नने कालीघाटपर गंगाजीकी कृशता एवं मलिनताको देख करके निम्नलिखित श्लोकमें कहा है कि इस कलिकालमें पापसमूहको नष्ट कर देनेवाली गंगाजी यहाँ कालीघाटमें काली अर्थात् पार्वतीजीके वैभवको देखकर अत्यन्त मलिन और दुबली हो गयीं।

ध्यातव्य है कि कवियोंके द्वारा गंगाजी एवं पार्वतीजीको परस्पर सौत कहा गया है—

कालीघट्टे कलौ काले किल्विषौघनिकृन्तनी।
सपत्नीविभवं दृष्ट्वा गङ्गाऽभून्मलिना कृशा॥

श्रीशंकराचार्यजी गंगाजीकी स्तुति करते हुए कहते हैं—ब्रह्माण्डको तोड़कर आती हुई, महादेवके जटाजूटको सुशोभित करती हुई, स्वर्गलोकसे गिरती हुई, सुमेरु पर्वतके समीप पाषाणोंमें टकराती हुई, पृथ्वीपर बहती हुई, पापोंकी प्रबल सेनाको त्रास देती हुई, समुद्रको पूर्ण करती हुई—यह दिव्य गंगा नदी हम सबको पवित्र करे—

ब्रह्माण्डं खण्डयन्ती हरशिरसि जटावल्लिमुल्लासयन्ती
स्वर्लोकादापतन्ती कनकगिरिगुहागण्डशैलात्स्खलन्ती।
क्षोणीपृष्ठे लुठन्ती दुरितचयचमूर्निर्भरं भर्त्सयन्ती
पाथोधिं पूरयन्ती सुरनगरसरित् पावनी नः पुनातु॥

महाकवि कालिदासजी गंगाजीकी स्तुति करते हुए कहते हैं कि—हे गंगे! तुम्हारे शरीरके संसर्गसे साँप, घोड़े, हरिण और बन्दर आदि भी कामारि शिवके समान वर्णवाले, शिवके संगी और (उन्हींके समान) कल्याणमय शरीरवाले होकर, अंगमें भुजंगराजोंको लपेटे हुए सानन्द विचरते हैं, अतः तुमको प्रणाम है—

नमस्तेऽस्तु गङ्गे त्वदङ्गप्रसङ्गाद्
भुजङ्गास्तुरङ्गाः कुरङ्गाः प्लवङ्गाः।
अनङ्गारिरङ्गाः समङ्गाः शिवाङ्गा
भुजङ्गाधिपाङ्गीकृताङ्गा भवन्ति॥

श्रीमद्भगवद्गीता (१०।३१)-में भगवान् श्रीकृष्णने अपनेको नदियोंमें गंगा कहा है—'स्रोतसामस्मि जाह्नवी।' ऋग्वेदके नदीसूक्त (१०।७५।५)-में गंगाको नदियोंमें प्रथम स्थान प्राप्त है। स्कन्दपुराणके काशीखण्डमें गंगाके अकारादि क्रमसे एक हजार नाम (गंगासहस्रनाम) दिये हैं। वराहपुराणमें गंगा शब्दकी व्युत्पत्ति करते हुए कहा गया है—'गाम् गता' अर्थात् जो पृथ्वीकी ओर गयी है और जिसके स्मरणसे ही पातक नष्ट हो जाते हैं। भविष्यपुराणका कथन है कि जो गंगाका दर्शनमात्र करता है, उसके सभी पाप नष्ट हो जाते हैं, जो स्पर्श कर लेता है, वह मृत्युके पश्चात् स्वर्गका अधिकारी बन जाता है, किंतु जो स्नान भी करता है, वह परमपुरुषार्थ मोक्षको अवश्य प्राप्त कर लेता है। यथा—

दृष्ट्वा तु हरते पापं स्पृष्ट्वा तु त्रिदिवं नयेत्।
प्रसङ्गेनापि या गङ्गा मोक्षदा त्ववगाहिता॥

विष्णुपुराणका कथन है कि सरस्वती नदी रजोगुण-प्रधान हैं, यमुनाजी तमोगुणी हैं जबकि गंगाजी सत्त्वगुणी हैं, जो निर्गुण ब्रह्मको प्राप्त करा देती हैं—

सरस्वती रजोरूपा तमोरूपा कलिन्दजा।
सत्त्वरूपा च गङ्गाऽत्र नयन्ती ब्रह्म निर्गुणम्॥

पद्मपुराण सृष्टिखण्डमें कहा गया है कि गंगा ही एकमात्र ऐसी नदी हैं, जो किसी भी प्रकारसे पापग्रस्त पतितका उद्धार कर देती हैं।

महाभारतके अनुशासनपर्वमें गंगाकी महिमा विस्तारपूर्वक आयी हुई है। इसे बताते हुए वेदव्यासजी कहते हैं। ब्रह्मन्! वे ही देश, जनपद, आश्रम और पर्वत पुण्यकी दृष्टिसे सर्वश्रेष्ठ हैं, जिनके बीचसे होकर सरिताओंमें उत्तम भागीरथी गंगा वहती हैं—

ते देशास्ते जनपदास्तेऽऽश्रमास्ते च पर्वताः।
येषां भागीरथी गङ्गा मध्येनैति सरिद्वरा॥

(महा० अनु० २६।२६)

इस प्रकार संस्कृत साहित्यमें श्रीगंगाजीके माहात्म्यसे सम्बन्धित विपुल सामग्री संकलित है। अन्तमें अपने भावोंको उद्भटसागरके श्लोकसे मिलाता हुआ मैं माँ भगवती गंगाजीसे प्रार्थना करता हूँ—

पायं पायमपायसञ्चयहरं गङ्गे त्वदीयं जलं
नायं नायमनायकोऽहमसकृन्मूर्तिञ्च नेत्रे तव।
स्मारं स्मारमसारसंसृतिहरं गङ्गेति वर्णद्वयं
चारं चारमितस्ततस्तव तटे मुक्तो भवेयं कदा॥

हे देवि गंगे! अनिष्टोंकी राशिका हरण करनेवाले आपके जलका बार-बार पानकर, अनेक बार आपकी श्रीमूर्तिको अपने नेत्रोंमें ला-लाकर, नश्वर संसारका विलय करनेवाले आपके 'गंगा' संज्ञक दो नामाक्षरोंका बार-बार स्मरण करता हुआ तथा आपके पवित्र तटपर इतस्ततः बार-बार विचरण करता हुआ दीन-हीन मैं कब मुक्तिलाभ करूँगा!

योगवासिष्ठमें प्राप्त राजर्षि भगीरथका आख्यान

[ब्रह्मर्षि वसिष्ठ एवं भगवान् श्रीरामके संवादके रूपमें उपनिबद्ध योगवासिष्ठ महारामायण अध्यात्मज्ञानके निरूपणका अति प्रौढ़ ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ (१) वैराग्य, (२) मुमुक्षु-व्यवहार, (३) उत्पत्ति, (४) स्थिति, (५) उपशम तथा (६) निर्वाण नामसे छः प्रकरणोंमें विभक्त है। भगवान् श्रीरामद्वारा पूछे गये दार्शनिक प्रश्नोंका उत्तर महर्षि वसिष्ठजीने अत्यन्त ही रोचक आख्यान शैलीमें कथानकोंके माध्यमसे दिया है। पारमार्थिक उपदेश होनेपर भी इसमें व्यावहारिक ज्ञानकी बातें निरूपित हैं। इस दृष्टिसे यह बड़ा ही उपयोगी ग्रन्थ है। संसार-वासना तथा मनोनाशके उपायोंमें इसमें शम, विचार, सन्तोष और साधुसंगपर विशेष बल दिया गया है और इन चारोंको मोक्षका द्वारपाल बताया गया है। इस ग्रन्थका अन्तिम प्रकरण निर्वाण प्रकरण है, जो पूर्वार्ध तथा उत्तरार्ध दो भागोंमें विभक्त है। मुख्यरूपसे इस प्रकरणमें देह और आत्माके विवेकका निरूपण, अविद्याके कार्य, परमात्माकी सर्वव्यापकता, प्राण-अपानकी गति, संसारचक्रके अवरोधका उपाय, वासना-आसक्ति और अज्ञानके नाशसे मनका विनाश, श्रीकृष्णार्जुन-आख्यान, जीवन्मुक्तका स्वरूप, राजा शिखिध्वज और चूडालाका वृत्तान्त, समूल कर्मत्यागका स्वरूप, जीवका स्वरूप, निर्वाणकी स्थिति, वैराग्यकी दृढ़ता, स्वप्नजगत् और सत्संगका महत्त्व आदि बातें निरूपित हैं। इसी निर्वाण-प्रकरण (पूर्वार्ध)-में राजर्षि भगीरथका एक मनोरम आख्यान आया है, जिसमें उनके वैराग्यकी स्थिति तथा पुनः तपस्या और गंगा-आनयनकी कथा है, जो यहाँ संक्षेपमें प्रस्तुत है—सम्पादक]

महर्षि वसिष्ठजी श्रीरामजीको बताते हैं—हे राजन्! प्राचीनकालमें इस पृथ्वीमण्डलमें एक अत्यन्त ही धर्मात्मा एवं न्यायप्रिय चक्रवर्ती सम्राट् हो चुके हैं, उनका नाम था भगीरथ, उनके राज्यमें प्रजा सब प्रकारसे सुखी थी। वे चिन्तामणिके सदृश अभीष्ट अर्थोंको प्रदान करनेवाले थे। राजा भगीरथने पातालवासी अपने पूर्वजोंको गंगारूपी सीढ़ी लगाकर ब्रह्मलोकमें पहुँचाया। गंगाजीको यहाँ लानेके लिये उन्होंने अपनी कठोर तपस्यासे ब्रह्मा, शंकर और जह्नु ऋषिको प्रसन्न किया।

श्रीराम! राजर्षि भगीरथकी युवावस्थाकी बात है, जब वे संसारमें प्रवृत्तिमार्गमें थे, तब भवभीतिका कष्ट तथा भोगैश्वर्यकी नश्वरता देख उन्हें तीव्र वैराग्य हो गया। उनका मन अत्यन्त उद्विग्न हो उठा, वे राजकार्यसे भी विरत हो उठे, तब वे अपने गुरु महर्षि त्रितलके पास गये और बोले—विभो! संसारकी स्थिति देखकर मुझे बड़ी खिन्नता होती है, इसका निवारण कैसे हो? भगवन्! संसारमें फँसानेवाले जरा-मरण मोहादिरूप दुःखोंका अन्त कैसे हो, इसे बतानेकी कृपा करें।

त्रितल बोले—निष्पाप राजन्! बिना परमात्माके ज्ञानके दुःखोंका नष्ट होना असम्भव है। तत्त्वज्ञान हो जानेपर सारी ग्रन्थियाँ सब ओरसे टूट जाती हैं, सारे संशय तथा कर्म शान्त हो जाते हैं, अतः उसी अविनाशी परमात्माको जाननेका प्रयत्न करना चाहिये।

इसपर **भगीरथ बोले**—मुनीश्वर! आपकी बात सत्य है, किंतु ज्ञेयस्वरूप परमात्माके स्वरूपमें मेरी अचल स्थिति नहीं हो रही है, इसका क्या कारण है?

त्रितलने कहा—राजन्! हृदयाकाशमें यह चित्त जब ज्ञानके द्वारा ज्ञेयस्वरूप परमात्मामें स्थिर हो जाता है, तब यह जीव सर्वात्मरूप परमात्माको प्राप्त होकर पुनः संसारमें उत्पन्न नहीं होता। पुत्र, स्त्री, घर और धन आदिमें आसक्तिका अभाव, ममताका भान होना तथा प्रिय और अप्रियकी प्राप्तिमें सदा ही चित्तका सम रहना, आत्मा ही ब्रह्म है—ऐसा निश्चय करना, अध्यात्मज्ञानमें नित्यस्थिति तथा सर्वत्र परमात्माको व्याप्त देखना—यह ज्ञान है और जो इसके विपरीत है, वह अज्ञान है। राजन्! अहंभावके नाश हो जानेपर परमार्थका यथार्थ ज्ञान हो जाता है।

पुनः भगीरथजीने पूछा—हे महाभाग! दीर्घकालसे इस देहमें सुदृढ़ रूपसे स्थित अहंभावका कैसे त्याग हो?

त्रितल बोले—राजन्! पौरुष-प्रयत्नसे विषय-भोगोंकी भावनाका त्यागकर फिर परमात्माकी सत्ताका अनुभव करनेसे अहंकारका विनाश हो जाता है। यदि

तुम्हारे सम्पूर्ण राजचिह्नोंका त्याग हो जाय, तुम धनादि इच्छाका त्याग कर दो, अकिंचन भावको प्राप्तकर अहंभावसे निवृत्त होकर देहके अभिमानसे, ऐश्वर्यके अभिमानसे निवृत्त हो जाओ तो तुम परमपदको प्राप्त कर लोगे।

गुरुजीके मुखसे ऐसा उपदेश सुनकर राजर्षिका मन शान्त हो गया। कुछ समय बाद राजा भगीरथने सर्वैश्वर्य-त्यागकी सिद्धिके लिये अग्निष्टोम यज्ञका अनुष्ठान किया, उसमें उन्होंने ब्राह्मणोंको तथा अपने बन्धु-बान्धवोंको गौ, पृथ्वी, सुवर्ण आदि समस्त धन दे दिया और अपना समस्त राज्य शत्रुराजाओंको समर्पित कर दिया। तब राजा भगीरथ एकमात्र कटिवस्त्र धारणकर राजपाटका परित्यागकर वनमें चले आये। यहाँ राजाको कोई पहचानता नहीं था। राजा एकान्त वनमें रहकर परमात्माका ध्यान करने लगे। बहुत समय ऐसे ही व्यतीत हो गया। एक बार राजा घूमते-घूमते संयोगसे अपने ही नगरमें आ पहुँचे और भिक्षा माँगने लगे। वहाँके नागरिकों तथा मन्त्रियोंने राजा भगीरथको पहचान लिया और बड़े प्रसन्न मनसे उनका स्वागत-सत्कार किया; किंतु राजा केवल भिक्षा ग्रहणकर वहाँसे अन्यत्र

चले गये और पुनः अपने गुरु महर्षि त्रितलके पास जा पहुँचे तथा उन्हींके पास रहकर साधन-भजन करने लगे।

उन्हीं दिनोंकी बात है, समीपके ही देशमें एक पुत्ररहित राजाकी मृत्यु हो गयी। शासकके अभावमें राज्यमें उच्छृंखलता व्याप्त हो गयी, सभी मर्यादाएँ टूट गयीं। प्रजाजन बड़े दुखी हो गये, तब वे किसी अन्य शासककी खोजमें इधर-उधर भ्रमण करने लगे। संयोगसे वे भगीरथके पास आ पहुँचे और उन्हें सब प्रकारसे योग्य जानकर उनसे राज्यपद ग्रहण करनेकी प्रार्थना करने लगे। गुरुकी आज्ञा प्राप्तकर भगीरथ उनके साथ आये और उनका पुनः राजा पदपर अभिषेक हुआ। राजा भगीरथ सप्तद्वीपा वसुमतीके पुनः राजा हो गये। राजा भगीरथ सर्वत्र समभाववाले, शान्तचित्त तथा वीतराग थे। जब उन्हें ज्ञात हुआ कि कपिलकी क्रोधाग्निसे उनके पितर भस्मीभूत हुए हैं, तब भूतलपर गंगाजीको लानेके लिये पृथ्वीपति भगीरथ मन्त्रियोंको राज्यभार सौंपकर तपके लिये निर्जन अरण्यमें चले गये। उस अरण्यमें उन्होंने हजार वर्षतक ब्रह्माजी, शंकरजी तथा जह्नुमुनिकी

बार-बार आराधना की और उनकी कृपासे वे गंगाजीको पृथ्वीपर लाये तथा अपने पितरोंका उद्धार किया। तभीसे त्रिपथगा गंगा भागीरथी नामसे कही जाने लगीं और राजर्षि भगीरथकी कीर्तिपताका बनकर आज भी अविरल धाराके रूपमें विश्वका कल्याण कर रही हैं।

गोस्वामी तुलसीदासनिरूपित गंगाकी यशोगाथा

(विद्यावाचस्पति डॉ० श्रीदिनेशचन्द्रजी उपाध्याय, एम०एस-सी०, पी-एच०डी०)

भारतीय सांस्कृतिक ग्रन्थोंमें ब्रह्मद्रवके रूपमें वर्णित, ब्रह्माके कमण्डलुसे निःसृत, भगवान् विष्णुके चरणकमलोंको पखारनेवाली, भगवान् आशुतोषके मस्तकपर विराजमान रहनेवाली, त्रिपथगामिनी, कैवल्यप्रदायिनी माँ गंगाकी महिमाका विस्तृत वर्णन मिलता है। गोस्वामी तुलसीदासने अपने ग्रन्थोंमें आपकी महिमाका विस्तृत उल्लेख किया है। गोस्वामी तुलसीदासने अपने सर्वोत्कृष्ट ग्रन्थ मानसको तो गंगाके समान ही लोकोपकारी बतलाया है—*'सुरसरि सम सब कहँ हित होई॥'* (रा०च०मा० १।१४।९)। गंगाजी, अमृत, चन्द्रमा और साधु—ये अपने सत्कर्म तथा जनकल्याणकारी भावनोंके कारण ही यशके भागी होते हैं (रा०च०मा० १।५।८)। आगे आप कहते हैं कि सन्त-समाज रामभक्तिरूपी गंगा एवं ब्रह्मविचारसे युक्त सरस्वती तथा पापापहारिणी सूर्यतनया यमुनासे युक्त तीर्थराज प्रयागस्थित त्रिवेणीसदृश है—

राम भक्ति जहँ सुरसरि धारा। सरसइ ब्रह्म बिचार प्रचारा॥

(रा०च०मा० १।२।८)

भगवान् शिवका वचन है कि वह देश धन्य है, जहाँ गंगाजी बहती हैं तथा पतिव्रत-धर्मका पालन करनेवाली स्त्री धन्य है—

धन्य देस सो जहँ सुरसरी। धन्य नारि पतिब्रत अनुसरी॥

(रा०च०मा० ७।१२७।५)

गोस्वामीजी मानसके प्रारम्भमें ही सरस्वती तथा देवनदी गंगाकी वन्दना करते हुए कहते हैं कि गंगाजी स्नान एवं जल पीनेसे पापोंको हरती हैं, वहीं सरस्वतीजी गुण एवं यश कहने एवं सुननेसे अज्ञानका नाश कर देती हैं—

पुनि बंदउँ सारद सुरसरिता। जुगल पुनीत मनोहर चरिता॥
मज्जन पान पाप हर एका। कहत सुनत एक हर अबिबेका॥

(रा०च०मा० १।१५।१-२)

तुलसीदासजी कहते हैं कि रामकथा हमारे मनको पवित्र करनेमें गंगाके समान है—*'पावन गंग तरंग माल से॥'* (रा०च०मा० १।३२।१४)

आगे रामकथारूपी मानसरोवरका तथा गंगाजीकी भौगोलिक स्थितिका वर्णन करते हुए गोस्वामीजी कहते हैं कि मानसरोवरसे निकली कवितारूपिणी सरयूका रामभक्तिरूपी गंगामें मिलन होता है, जिसमें आगे लक्ष्मण-सहित रामजीके युद्धका पवित्र यशरूपी सुहावना महानद सोन मिल जाता है। दोनोंके बीचमें भक्तिरूपी गंगाकी धारा ज्ञान-वैराग्यसहित शोभित है, यह त्रिताप (दैहिक, दैविक एवं भौतिक कष्ट)-नाशक त्रिमुहानी नदी आगे रामस्वरूप समुद्रकी ओर जा रही है। भगवान्‌की कीर्तिरूपी सरयूका मूल मानस—श्रीरामचरित है, जो रामभक्तिरूपी गंगासे मिली है, जो सुननेवालेके मनको पवित्र कर देती है—

रामभगति सुरसरितहिं जाई। मिली सुकीरति सरजु सुहाई॥
सानुज राम समर जसु पावन। मिलेउ महानदु सोन सुहावन॥
जुग बिच भगति देवधुनि धारा। सोहति सहित सुबिरति बिचारा॥
त्रिबिध ताप त्रासक तिमुहानी। राम सरूप सिंधु समुहानी॥
मानस मूल मिली सुरसरिही। सुनत सुजन मन पावन करिही॥

(रा०च०मा० १।४०।१—५)

गोस्वामीजी तो बार-बार यही कहते हैं कि कलियुगमें जहाँ पाप और पाखण्ड बढ़ा है, रामनाम एवं देवनदी गंगाजी ही आधार हैं—

कलि पाषंड प्रचार प्रबल पाप पावँर पतित।
तुलसी उभय अधार राम नाम सुरसरि सलिल॥

(दोहावली ५६६)

लेकिन ध्यान दें, जिसको देश, काल, कर्ता, कर्म और वचनका ध्यान नहीं रहता, उसे गंगाका सान्निध्य भी पापोंसे बचा नहीं सकता—

देस काल करता करम बचन बिचार बिहीन।
ते सुरतरु तर दारिदी सुरसरि तीर मलीन॥

(दोहावली ४१४)

वैसे गंगा तथा सत्संगति—ये बिना रामकृपाके सम्भव ही नहीं हैं और ये दोनों सेवन करनेवालेको अपने समान बना देते हैं—

राम कृपाँ तुलसी सुलभ गंग सुसंग समान।
जो जल परै जो जन मिलै कीजै आपु समान॥

(दोहावली ३६३)

रामविमुख जीव तथा गंगासे अलग हुआ जल मदिराके समान हो जानेसे सर्वथा त्याज्य है—

तुलसी रामहि परिहरें निपट हानि सुन ओझ।
सुरसरि गत सोई सलिल सुरा सरिस गंगोझ॥

(दोहावली ६८)

गोस्वामीजीने मानसमें भी कहा है कि जिस प्रकार गंगाजलसे बनायी हुई मदिरा त्याज्य है, परंतु वही यदि गंगाजीमें मिल जाय तो पवित्र हो जाती है, ईश्वर और जीवमें वैसा ही भेद समझना चाहिये—

सुरसरि जल कृत बारुनि जाना। कबहुँ न संत करहिं तेहि पाना॥
सुरसरि मिलें सो पावन जैसें। ईस अनीसहि अंतरु तैसें॥

(रा०च०मा० १।७०।१-२)

चित्रकूटमें माँ कौसल्याजी अपने चारों पुत्रों एवं पुत्रवधुओंको गंगाके समान ही पवित्र बताती हैं, यहाँ कौसल्याकी वाणीको भी गंगाके समान पवित्र बतलाया गया है। तपस्विनी वेषमें सीताजीको देखकर जनकजी कहते हैं कि पुत्रि! तूने दोनों कुल पवित्र कर दिये, तेरी कीर्तिरूपी नदी देवनदी गंगाजीको भी जीतकर (जो एक ब्रह्माण्डमें ही बहती है) करोड़ों ब्रह्माण्डमें बह चली है, गंगाजीने तो पृथ्वीपर तीन बड़े तीर्थ (हरिद्वार, प्रयाग और गंगासागर) बनाये हैं, परंतु तेरी इस कीर्तिनदीने अनेकों तीर्थस्थान बना दिये हैं—

जिति सुरसरि कीरति सरि तोरी। गवनु कीन्ह बिधि अंड करोरी॥
गंग अवनि थल तीनि बड़ेरे। एहिं किए साधु समाज घनेरे॥

(रा०च०मा० २।२८७।३-४)

अयोध्याकाण्डमें चित्रकूट आयीं गुरुपत्नी अरुन्धती तथा अन्य ब्राह्मण स्त्रियोंका भगवान् रामद्वारा गंगा और गौरीकी तरहका सम्मान देनेका प्रसंग ध्यान देनेयोग्य है—

गंग गौरि सम सब सनमानी। देहिं असीस मुदित मृदु बानीं॥

(रा०च०मा० २।२४४।२)

महर्षि वाल्मीकिकी तरह तुलसीदासजीने भी विश्वामित्रके द्वारा भगवान् राम-लक्ष्मणके जनकपुर प्रथम आगमनके समय गंगाजीके पृथ्वीपर आगमनकी कथाका वर्णन प्रस्तुत किया है, यथा—

चले राम लछिमन मुनि संगा। गए जहाँ जग पावनि गंगा॥
गाधिसूनु सब कथा सुनाई। जेहि प्रकार सुरसरि महि आई॥

(रा०च०मा० १।२१२।१-२)

गोस्वामीजी कहते हैं कि वनगमनके समय सचिवसहित भगवान् राम, लक्ष्मण और सीता शृंगवेरपुर पहुँचते ही गंगाजीको देखकर रथ छोड़कर दण्डवत् प्रणाम करते हैं, आप कहते हैं कि गंगाजी समस्त आनन्द-मंगलोंकी मूल हैं, ये सब सुखोंको देनेवाली तथा सब पीड़ाओंको हरनेवाली हैं—

उतरे राम देवसरि देखी। कीन्ह दंडवत हरषु बिसेषी॥
लखन सचिवँ सियँ किए प्रनामा। सबहि सहित सुखु पायउ रामा॥
गंग सकल मुद मंगल मूला। सब सुख करनि हरनि सब सूला॥
कहि कहि कोटिक कथा प्रसंगा। रामु बिलोकहिं गंग तरंगा॥
सचिवहि अनुजहि प्रियहि सुनाई। बिबुध नदी महिमा अधिकाई॥

(रा०च०मा० २।८७।२—६)

आगे सुमन्त्रजी कहते हैं कि नाथ! मुझे महाराज दशरथजीने वन दिखाकर और गंगास्नान कराकर आप लोगोंको अयोध्या लौटा लानेकी आज्ञा दी है—'*बनु देखाइ सुरसरि अन्हवाई। आनेहु फेरि बेगि दोउ भाई॥*' आगे वर्णन मिलता है कि गंगाजीको पार करनेके बाद भी सीताजीने सुरसरि-वन्दना की, तब माँ गंगाने पति और देवरसहित सकुशल लौटनेका आशीर्वाद दिया है—

सियँ सुरसरिहि कहेउ कर जोरी। मातु मनोरथ पुरउबि मोरी॥
सुनि सिय बिनय प्रेम रस सानी। भइ तब बिमल बारि बर बानी॥

(रा०च०मा० २।१०३।२, ४)

देवि! तुम्हारी सारी मनोकामना पूर्ण होगी और तुम्हारा सुन्दर यश जगत्‌भरमें छा जायगा। मंगलके मूल गंगाजीके वचन सुनकर और देवनदीको अनुकूल देखकर सीताजी आनन्दित हुईं—

गंग बचन सुनि मंगल मूला। मुदित सीय सुरसरि अनुकूला॥

गोस्वामी तुलसीदासजी रुद्राष्टकमें शिवस्तुति करते हुए कहते हैं कि जिनके सिरपर सुन्दर नदी गंगाजी विराजमान हैं, उनको मैं नमस्कार करता हूँ। 'स्फुरन्मौलि कल्लोलिनी चारु गङ्गा।' वहीं राज्याभिषेकके अवसरपर श्रीरामकी स्तुति करते हुए वेद प्रकट होकर कहते हैं कि जिन चरणोंके नखसे मुनियोंद्वारा वन्दित, त्रैलोक्यको पवित्र करनेवाली गंगाजी निकली हैं, उन चरणोंकी हम वन्दना करते हैं—

नख निर्गता मुनि बंदिता त्रैलोक पावनि सुरसरी॥

(रा०च०मा० ७।१३। छंद ४)

अब नीतिसम्बन्धी वचनोंको देखें तो गोस्वामीजी कहते हैं कि जैसे बढ़ जानेपर गंगाजी अपने आश्रित वृक्षोंको उखाड़ देती हैं, बगुलोंके लिये हंसों को भगा देती हैं, परिणामतः बरसातमें कमल तथा हंसोंसे रहित मलिन जलवाली हो जाती हैं, उसी प्रकार ऐश्वर्य बढ़ जानेपर अभिमानी जन अपने आश्रित कुटुम्ब, पड़ोसी तथा सज्जनोंको हटाकर दम्भियोंको आश्रय देते हैं।

तुलसी तोरत तीर तरु बक हित हंस बिडारि।
बिगत नलिन अलि मलिन जल सुरसरिहू बढ़िआरि॥

(दोहावली ४९८)

कर्मनाशानदी और गंगाजीके बहाने तुलसीदासजी वेदविधियों तथा निषेधकर्मोंका वर्णन करते हैं, हमें अवश्य ही भले-बुरे कर्मोंका भेद समझना चाहिये—

सुजन कहत भल पोच पथ पापि न परखइ भेद।
करमनास सुरसरित मिस बिधि निषेध बद बेद॥

इसका दूसरा रूप मानसमें देखें—

कासी मग सुरसरि क्रमनासा। मरु मारव महिदेव गवासा॥

(रा०च०मा० १।६।८)

व्यवहारमें हमें केवल अच्छेको ही ग्रहण करना चाहिये; क्योंकि ईश्वर और जीवकी तुलना नहीं हो सकती। ऐसा व्यवहारमें गंगाजी, अग्नि, सूर्यके साथ देखा जाता है—

समरथ कहुँ नहिं दोषु गोसाईं। रबि पावक सुरसरि की नाईं॥

(रा०च०मा० १।६९।८)

अन्तमें गोस्वामी तुलसीदासजीद्वारा निरूपित गंगाकी यशोगाथामें विनयपत्रिकाके चार पदोंका सन्दर्भ लेना उचित होगा, जिसमें गोस्वामीजीने मानो संक्षिप्त गंगा-पुराणका ही सारांश दे दिया, यद्यपि प्रकीर्णरूपमें मानसकी तरह बहुतेरे पदोंमें आप गंगाका उद्धरण देना नहीं भूले हैं—

पद-संख्या १७ में गोस्वामीजीने भगीरथनन्दिनी, मुनिगण-देव-दनुज-नर-नाग आदिकी आराध्या, भगवान् विष्णुके चरणोंसे उत्पन्न, शिवजीके मस्तकपर विराजित, स्वर्ग-भूमि और पातालमार्गसे त्रिपथगामिनी, पुण्यवर्धिनी, पापविनाशिनी, त्रयतापहारिणी, अत्यन्त शीतल, मृदु एवं निर्मल जल धारण करनेवाली, जन्म-मरणके भयका नाश करनेवाली, भगवद्भक्तिको बढ़ानेवाली, पशु-पक्षी-कीट-पतंग-जलचर तथा थलचर आदि सबकी आश्रयभूता एवं मोहरूपी महिषासुरको मारनेके लिये कालिकास्वरूपा माँ गंगासे ऐसी सद्‌बुद्धि माँगी है कि रघुनाथजीका स्मरण करते हुए गंगाके घाटोंपर विचरण करता रहूँ—

जय जय भगीरथनन्दिनि, मुनि-चय चकोर-चन्दिनि,
नर-नाग-बिबुध-बन्दिनि जय जह्नु बालिका।
बिस्नु-पद-सरोजजासि, ईस-सीसपर बिभासि,
त्रिपथगासि, पुन्यरासि, पाप-छालिका॥
बिमल बिपुल बहसि बारि, सीतल त्रयताप-हारि,
भँवर बर बिभंगतर तरंग-मालिका।
पुरजन पूजोपहार, सोभित ससि धवलधार,
भंजन भव-भार, भक्ति-कल्पथालिका॥
निज तटबासी बिहंग, जल-थर-चर पसु-पतंग,
कीट, जटिल तापस सब सरिस पालिका।
तुलसी तव तीर तीर सुमिरत रघुबंस-बीर,
बिचरत मति देहि मोह-महिष-कालिका॥

एक दूसरे पद (सं० २०)-में गोस्वामीजी शिवजीके

मस्तकपर विराजित, त्रिपथगामिनी, प्राणिमात्रका उद्धार करनेवाली, दुःख, दोष, दरिद्रता, पाप और तापका नाश करनेवाली, सगरके साठ हजार पुत्रोंको यम-यातनासे छुड़ानेवाली, जलनिधि समुद्रको भी अपने जलसे तृप्ति प्रदान करनेवाली माँ गंगाकी आराधना करते हुए कहते हैं कि माँ! आपने ब्रह्मकमण्डलुमें रहकर, विष्णुचरणोंसे निकलकर तथा शिवजीके मस्तकपर विराजमान होकर तीनोंकी महिमा बढ़ा रखी है। आप अपने निर्मल एवं पापनाशक जलके समान तुलसीकी वाणीको भी निर्मल बना दें, जिससे वह पापनाशक रामचरितका गान कर सके—

ईस-सीस बससि, त्रिपथ लससि, नभ-पताल-धरनि।
सुर-नर-मुनि-नाग-सिद्ध-सुजन मंगल-करनि॥
देखत दुख-दोप-दुरित-दाह-दारिद-दरनि।
सगर-सुवन साँसति-समनि, जलनिधि जल भरनि॥
महिमाकी अवधि करसि बहु विधि हरि-हरनि।
तुलसी करु बानि बिमल, बिमल बारि बरनि॥

एक अन्य पद (सं० १९)-में पूरी स्तुतिके बाद तुलसीदासजी कहते हैं कि माँ! यदि आप न होतीं तो कलियुग न जाने क्या-क्या अनर्थ करता और तुलसीदास घोर अपार संसार-सागरसे कैसे तरता?

तो बिनु जगदंब गंग कलिजुग का करित?
घोर भव अपारसिंधु तुलसी किमि तरित॥

एक अन्य पद संक्षेपमें देखें, क्या सुन्दर भाव है—

जयति जय सुरसरी जगदखिल-पावनी।
विष्णु-पदकंज-मकरंद इव अम्बुवर वहसि,
दुख दहसि, अघवृन्द-विद्राविनी।
देहि रघुबीर-पद-प्रीति निर्भर मातु,
दासतुलसी त्रासहरणि भवभामिनी।

महाकवियोंकी दृष्टिमें गंगा

(श्रीउमेशप्रसादजी सिंह)

भारत भव्य नदियों और विशाल पर्वतोंका देश है। प्राचीनकालसे ही देशवासियोंने अपने जीवनमें इनका महत्त्व समझा और इनकी पूजा आरम्भ की। उनका विश्वास था कि बर्फसे ढके और बादलोंसे घिरे विशाल पर्वतोंमें देवताओंका वास है एवं पहाड़ोंसे निकलकर आनेवाली नदियाँ देवताओंका आशीर्वाद लेकर आती हैं। तभी तो हमारे प्राय: सभी तीर्थस्थल नदियोंके तटपर हैं। प्राचीनकालसे लेकर आजतक ऋषियों, मुनियों, विद्वानों, महाकवियोंने जितना गंगापर लिखा, उतना अन्य विषयोंपर नहीं।

आदिकवि वाल्मीकिने इसे त्रिपथगा कहा है। यह स्वर्गलोक, मृत्युलोक और पाताललोकको पवित्र करती हुई प्रवाहित होती है।

गङ्गा त्रिपथगा नाम दिव्या भागीरथीति च।
त्रीन् पथो भावयन्तीति तस्मात् त्रिपथगा स्मृता॥
(वा०रा० १।४४।६)

महाकवि विद्यापतिकी गंगा-भक्ति प्रसिद्ध है। उन्होंने जीवनपर्यन्त सिर्फ गंगाजलका पान किया। वे गंगातटपर मिलनेवाले सुखोंका वर्णन करते हुए वहींपर अपनी जीवन-लीला समाप्त करनेकी अभिलाषा व्यक्त करते हैं—

बड़ सुख सार पाओल तुअ तीरे। छोड़इत निकट नयन बह नीरे॥
करजोरि बिनमओं विमल तरंगे। पुन दरसन होए पुनमति गंगे॥
एक अपराध छेमब मोर जानी। परसल माय पाए तुअ पानी॥
कि करब जप-तप जोग धेआने। जनम कृतारथ एकहि सनाने॥

गोस्वामी तुलसीदासने विनय-पत्रिकामें गंगाको सभीका पालनहार बताया—

निज तटबासी बिहंग, जल-थर-चर पसु-पतंग,
कीट, जटिल तापस सब सरिस पालिका।
तुलसी तव तीर तीर सुमिरत रघुबंस-बीर,
बिचरत मति देहि मोह-महिष-कालिका॥

आधुनिक हिन्दी-साहित्यके प्रणेता भारतेन्दु

हरिश्चन्द्रके यशस्वी पिता और ब्रजभाषाके श्रेष्ठ कवि बाबू गोपालचन्द्र 'गिरिधारन'जीने यम-यातनाके भयसे मुक्त करनेवाली गंगाके महत्त्वका वर्णन इस प्रकार किया है—

जम की सब त्रास विनासकरी
मुख ते निजनाम उचारन में।
सब पाप प्रतापहिं दूर दर्यो
तुम आपन आप निहारन में॥
अहो गंग अनंग के शत्रु करे
बहु नेकु जलै मुख डारन में।
'गिरिधारन' जू कितने बिरचे
गिरिधारन धारन धारन में॥

श्रीजगन्नाथदास 'रत्नाकर' की दृष्टिमें ब्रह्माकी समृद्धि, शंकरकी सिद्धि, सगरके साठ हजार पुत्रोंको तारने और राजा भगीरथके पुण्यको स्थायी रखनेवाली गंगा यमके त्रास एवं अन्धकारको नष्ट करती है—

विधि वरदायक की सुकृति समृद्धि-वृद्धि
संभु सुरनायक की सिद्धि की सुनाका है।
कहै रतनाकर त्रिलोक सोक नासन कौं
अतुल त्रिविक्रम के बिक्रम की साका है॥
जमभय भारी तम तोम निरवारन कौं
गंग यह रावरी तरंग तुंग राका है।
सगर कुमारनि के तारन की स्रेनी सुभ
भूपति भगीरथ के पुन्य की पताका है॥

हिमालयसे ऋद्धि-सिद्धि लाकर भारत भूमिमें उर्वरता भरनेवाली भारत माँको धन-धान्यसे परिपूर्ण करनेवाली माँ गंगाके सम्बन्धमें जयशंकर प्रसादका कहना है कि जबतक गंगा प्रवाहित होती रहेगी, तबतक इस देशमें कोई भूखा-नंगा नहीं रहेगा—

ऋद्धि-सिद्धि तू अचल हिमालय से ले आयी।
उर्वर भारत वसुन्धरा तू करने आयी॥
सींच रही है स्नेहमयी दे जीवन धारा।
सकल ताप तेरी पुनीत लहरों से हारा॥
कानन मुखरित हुए द्विजों के श्रुति कलरव से।
पुण्य हुए कितने प्रवचन भव-अभिनव से॥
रह न सकेगा कभी देश यह भूखा नंगा।
मंगल जल जब तक तुम में बहती गंगा॥

गंगामें एक डुबकी लगानेमात्रसे मानव स्वर्गलोकका अधिकारी होता है। गंगा लोक-परलोकका मार्ग प्रशस्त करती है। महाकवि गोपालसिंह नेपालीके अनुसार—

सिर्फ एक ही डुबकी लेकर लाखों ही उस पार गए।
रोक-रोक कर जिन्हें यहीं पर जग के बंधन हार गए॥
इस पर तुमसे अधिकारी 'यम' रूठ गए मन मार गए।
फिर भी तेरे मन से जननी ये न उदार विचार गए॥

श्रीसुमित्रानन्दन पन्त गंगाको न केवल विष्णुपदी, शिवकी जटामें निवास करनेवाली जह्नुसुता मानते हैं, वरन् पातालगामिनी, स्वर्गगंगा और सगरके पुत्रोंको तारनेमें प्रसिद्धिकी घोषणा करते हैं—

वह विष्णुपदी, शिव मौलि स्नुता वह भीष्म प्रसू 'औ' जह्नुसुता।
वह देव निम्नगा, स्वर्गंगा वह सगरपुत्र तारिणी श्रुता॥

इसके अतिरिक्त सूरदास, केशवदास, मतिराम, रहीम, रसखान, पद्माकर, हरिऔध तथा मैथिलीशरण गुप्त आदि कवियोंकी भी स्फुट भावपूर्ण रचनाएँ गंगाजीपर प्राप्त होती हैं। कवियोंके अतिरिक्त आधुनिक भारतके निर्माता हमारे प्रथम प्रधानमन्त्री पण्डित जवाहरलाल नेहरूने लिखा है— 'गंगा भारतकी नदी है। भारतकी प्रिय है, जिसमें लिपटी हुई हैं, भारतकी जातीय स्मृतियाँ, उसकी आशाएँ और उसका विजय-गान। यह गंगा मेरे लिये निशानी है भारतकी प्राचीनताकी, यादगारकी, जो बहती हुई आयी है वर्तमानतक और बहती चली जा रही है भविष्यके महासागरकी ओर।'

हजारों वर्षोंसे भारतको धन-धान्यसे पूर्ण करनेवाली गंगा आज स्वयं अपने अस्तित्वके संकटसे गुजर रही है। जल-प्रदूषणके गम्भीर संकटको नहीं रोका गया तो एक दिन गंगा समाप्त हो जायगी और बिना गंगाके भारतकी कल्पना भी नहीं की जा सकती।

गंगा और हिन्दी साहित्य

(श्रीकमलाप्रसादजी अवस्थी 'अशोक' बी० ए०, विशारद)

नदियोंमें एक अपूर्व हृदय-मोहक शक्ति होती है। उनकी वक्रगति, कलकल ध्वनि और कूलोंको चूमकर लहरानेकी प्रवृत्ति भावुकोंको बरबस विमुग्ध कर लेती है। फिर प्रकृतिकी इस सजीवताके साथ-ही-साथ सरिताके रूप एवं प्रवाहमें भी हम सौन्दर्य और शक्तिके जिन नाना अंगोंको प्रतिष्ठित पाते हैं, वे अवर्णनीय हैं। यही कारण है कि अवर्ण्यका वर्णन करनेवाले 'कवियों' ने अपने काव्यक्षेत्रके लिये सारा विश्व रहते हुए भी इस प्रकारके वर्णनको एक सम्मानपूर्ण स्थान प्रदान किया है। इसके महत्त्वका अनुमान इसी बातसे किया जा सकता है कि पाश्चात्य देशोंमें, अधिकांशमें कवियोंको इन्हीं पयस्विनियोंका पयःपान करके संवर्धित होते देखकर, लोगोंने ऐसे अनेक स्थानोंको कवितापीठ (Seat of muses)-तक लिख डाला है।

यूरोपमें जिस प्रकार 'राइन' और 'टेम्स' ने अनेक कवियोंके मानसको आप्लावित किया है, उसी प्रकार भारतमें भी गंगा, यमुना, सिन्धु, नर्मदा आदि नदियोंने भारतीके कितने ही लड़ैते लालोंके भावविपिनको सींचा है। हिन्दी साहित्यमें भी गंगा, यमुना और त्रिवेणीके शब्द-चित्र बहुत-से कलाकारोंने प्रस्तुत किये हैं। व्रजभूमिकी परमप्रिया यमुनापर व्रजवासियोंका अपार प्रेम था ही, किंतु पतितपावनी जाह्नवीपर भी कम कवियोंकी वाणी कृतार्थ नहीं हुई है। हाँ, गद्यमें अवश्यमेव अन्य भारतीय नदियोंकी ही भाँति गंगाके सम्बन्धमें भी ज्ञातव्य बातोंका कोई संकलन नहीं किया गया है; यद्यपि हम आशा करते हैं कि निकट भविष्यमें यह कार्य निश्चय ही सम्पन्न हो जायगा तथापि सम्प्रति तो हमें गंगा-विषयक साहित्यके लिये कविताओंपर ही संतोष करना पड़ेगा। अँगरेजीमें जरूर सौ वर्ष पूर्व, एक पुस्तक गोमुखसे हरद्वारतकके वर्णनकी प्रकाशित हुई थी, पर वह भी सम्भवतः अप्राप्य है, साथ ही सर्वोपयोगी भी नहीं।

लेकिन हिन्दी-काव्यमें, जैसा पहले कह चुके हैं, बहुत प्राचीनकालसे ही भगवती भागीरथीका यशोगान मिलता है। किसी कविने गंगापर पद लिखे, किसीने मुक्तक तैयार किया और किसीने प्रबन्धकाव्य ही लिख डाला। एक गंगाकी शोभा वर्णन करता है, तो दूसरा स्वर्गसे उसके अवतरणकालका वेग ही मूर्तिमान् करता है। कहीं सगरसुतोंकी कथासे रंजित जह्नुजाकी पतितपावनी शक्तिका स्मरण किया जाता है, तो अन्यत्र केवल भक्तिभावसे इसका नामोच्चार ही होता है। सारांश यह कि गंगा हमारे जीवनके अंग-प्रत्यंगसे दूध और पानीकी तरह मिलजुल गयी है।

इस व्यापक प्रभावके अतिरिक्त अपने साहित्यमें आदिकालके समीपसे ही हम गंगा-सम्बन्धी काव्यकी एक अविच्छिन्न धारा भी अद्यपर्यन्त बहती हुई पाते हैं। चन्दबरदाईका समय युद्ध और राजनीतिक विप्लवका था। उस कालमें गंगाके सम्बन्धमें उद्‌गार कर पाना ही स्वभाव-विरुद्ध था। भक्तिकालका आविर्भाव होते ही हम अनेक सगुणोपासक भक्तोंकी वाणीसे गंगाके विषयमें कुछ-न-कुछ अवश्य सुनते हैं। केवल गंगाके तटपर रहनेवाले कवियोंने ही इस पुण्यसलिलाका गुणगान किया हो, यह बात नहीं; बल्कि यमुनाकी कछारोंमें कृष्णकी लीलाका कीर्तन करनेवाले महात्मा सूरदासतक भी अछूते न बच सके थे। भक्तिसे गद्‌गद होकर एक बार उन्होंने कह ही डाला—

गंग-तरंग विलोकत नैन।
अति पुनीत विष्णु पादोदक, महिमा निगम पढ़त गुन चैन।
परम पवित्र मुक्ति की दाता, भागीरथी भई वर दैन।
त्रिभुवन-हार-सिंगार भगवती, सलिल चराचर जाके एंन।
'सूरदास' विधना के तप ते, प्रकट भई संतत सुख दैन।

इस कालके सबसे प्राचीन कवि मैथिल-कोकिल विद्यापति ठाकुरके हृदयमें भी भागीरथीके लिये अप्रतिम

अनुराग भरा था। गंगाकी अद्वितीय पतितपावनी शक्ति कविके हृदयमें, उससे बिछुड़ते समय भी, साहसका संचार करती है। वियोग-चिन्तासे उद्भूत सारी व्यथा एक बार ही इस स्मृतिसे धुल जाती है कि गंगाका एक स्नान ही जीवन-साफल्यके लिये पर्याप्त है। इसी भावको कविने निम्नांकित पद्यमें व्यंजित किया है। देखिये—

बड़ सुख सार पाओल तुअ तीरे।
छोड़इत निकट नयन बह नीरे॥
करजोरि बिनमओं बिमल तरंगे।
पुन दरसन होए पुनमति गंगे॥
एक अपराध छेमब मोर जानी।
परसल माय पाए तुअ पानी॥
कि करब जप-तप जोग धेआने।
जनम कृतारथ एकहि सनाने॥
भनइ विद्यापति समदओं तोही।
अन्तकाल जनु बिसरह मोही॥

कविकुल-चूड़ामणि गोस्वामी तुलसीदासका कहना ही क्या? उनके तो सभी काव्योंमें गंगाका वर्णन किसी न किसी रूपमें आ गया है। 'विनयपत्रिका' के चार पद तो बहुत ही अनूठे हैं। भाषा, भाव एवं संगीत-योजनाकी दृष्टिसे तो उनका वर्णन करना ही वृथा है। गंगा-वर्णनमें प्राकृतिक सुषमाकी ओर दृष्टि, जहाँतक किसी भी कविकी नहीं पहुँची है, इन पदोंमें विशेषतया लक्षित होती है। इस शक्तिका, 'जयति जय सुरसरी जगदखिल-पावनी' वाले पदमें—

हरित गंभीर वानीर दुहुँ तीरवर,
मध्य धारा विशद, विश्व अभिरामिनी।
नील-पर्यंक-कृत-शयन-सर्पेश जनु,
सहस सीसावली स्रोत सुर-स्वामिनी।

—जैसी पंक्तियाँ लिखकर, अच्छा निदर्शन दिया है। भक्तिभावसे भी ये पद पूर्णतः ओतप्रोत हैं। तुलसीके लिये रामसे बढ़कर दूसरा श्रेष्ठ आदर्श संसारमें न था। अतः गंगाकी शुभ्र तरंगकी रामके साथ तुलना कविको विवश होकर उपमाके अभावमें ही करनी पड़ी है। इस सम्बन्धका पद देखिये—

हरनि पाप त्रिबिध ताप सुमिरत सुरसरित।
बिलसति महि कल्प-बेलि मुद-मनोरथ-फरित॥
सोहत ससि धवल धार सुधा-सलिल-भरित।
बिमलतर तरंग लसत रघुबरके-से चरित॥
तो बिनु जगदंब गंग कलिजुग का करित?
घोर भव अपारसिंधु तुलसी किमि तरित॥

गोस्वामीजीके अमर काव्य 'श्रीरामचरितमानस' में भी कुछ स्थलोंपर गंगाका वर्णन आ गया है। एक स्थानपर आपने गंगाकी महत्ता यों कही है—

गंग सकल मुद मंगल मूला। सब सुख करनि हरनि सब सूला॥

लेकिन तुलसीको गंगा अथवा उसका जल केवल नामके लिये ही प्रिय नहीं है अपितु प्रियताका कारण उसका ब्रह्मद्रव तथा सर्वसुलभ होना है; क्योंकि—

ब्रह्मु जो व्यापक बेद कहैं, गम नाहिं गिरा गुन-ग्यान-गुनीको।
जो करता, भरता, हरता, सुर-साहेबु, साहेबु दीन-दुनीको॥
सोइ भयो द्रवरूप सही, जो है नाथु बिरंचि महेस मुनीको।
मानि प्रतीति सदा तुलसी जलु काहे न सेवत देवधुनीको॥

आचार्य केशवदासने गंगाका सीधा वर्णन तो नहीं किया है, किंतु त्रिवेणी-वर्णनके प्रसंगमें लिखित निम्न दण्डक प्रधानतः गंगाके वर्णनमें ही आ जाता है—

चतुरवदन पंचवदन षटवदन,
सहसवदन हू सहसगति गाई है।
सात लोक सात द्वीप सातहू रसातलनि,
गंगाजी की शोभा सबही को सुखदाई है॥
यमुना को जल रह्यो फैलि कै प्रवाह पर,
'केशोदास' बीच बीच गिरा की गोराई है।
शोभन शरीर पर कुंकुम विलेपन को,
श्यामल दुकूल झीन झलकत झाईं है॥

केशवदासके बाद रीतिकार कवियोंकी एक बाढ़-सी आ गयी थी। भक्तिपरक कविताओंके स्थानपर विलासी मनोवृत्तिकी तृप्तिकारी कविताने इन रीतिकारोंको लुभाया, पर इस क्षेत्रमें पूजनीया गंगाको घसीट लाना

कोई भी भारतीय हृदय स्वीकार नहीं कर सकता था। यही कारण है कि इस कालमें पद्माकरके समयके पहले हमें गंगा-सम्बन्धी कविताएँ बहुत कम मिलती हैं। केवल एक मतिराम ऐसे हैं, जिनकी गंगापर कविता मिलती है। वह भी किसी भक्ति-भावनाका परिणाम न होकर केवल रचना-कौशलका एक नमूनामात्र है। ये लिखते हैं—

पारावार प्रीतम कौ प्यारी ह्वै मिली है गंग,
बरनत कोऊ कवि कोविद निहारि कै।
सो तो मतो 'मतिराम' के न मन माने,
निज मत सों कहत यह बचन बिचारि कै॥
जरत बरत बड़वानल सों वारिनिधि,
बीचिन के सोर सो जनावत पुकारि कै।
ज्यावत विरंचि ताहि प्यावत पियूष निज,
कलानिधि-मंडल-कमण्डल तें ढारि कै॥

जहाँ इस कालके हिन्दू कवि समयकी धारामें बहे जा रहे थे, वहीं कतिपय मुसलमानोंको व्रज और राम-कृष्णकी माधुरीने ऐसा अभिभूत कर लिया था कि गंगा-यमुना आदिपर उन्हींकी कविताएँ अधिकांशमें प्राप्त होती हैं। गंगापर इस युगके तीन प्रधान मुसलमान कवियोंने शुद्ध भक्तकी हैसियतसे लिखा है।

रहीमका एक दोहा—

अच्युत-चरन-तरंगिनी, सिव-सिर-मालति-माल।
हरि न बनायो सुरसरी, कीन्ह्यो इन्दवभाल।

—मिलता है, जो भाषा, भाव और उक्ति-वैचित्र्यकी दृष्टिसे गंगाके सम्बन्धमें लिखी गयी उच्चकोटिकी कविताओंमेंसे एक है।

रसखान तो वास्तवमें मुसलमान होकर भी हृदयसे हिन्दू थे। कौन साहित्य-प्रेमी इनकी रसवर्षिणी काव्य-कादम्बिनीका आस्वाद न ले चुका होगा। नीचेके सवैयेमें देखिये, कविका गंगाके प्रति कितना आत्मविश्वास झलकता है। शिव-सदृश कुपथ्याहारीकी रक्षिणी गंगा उनकी दृष्टिमें संजीवनी सुधासे ही भरी हैं—

बैद की औषधि खाऊँ कछू न करौं व्रत संजम री सुन मोसे।
तेरोई पानी पियौं 'रसखानि' सँजीवनलाभ लहौं सुख तोसे।
एरी सुधामयी भागीरथी, कोउ पथ्य कुपथ्य करै तऊ पोसे।
आक-धतूरे चबात फिरैं विष खात फिरैं सिव तेरे भरोसे।

स्त्री कवि 'शेख' ने भी गंगाके सम्बन्धमें दो कवित्त लिखे हैं। अन्तरका शुद्ध प्रेम इनकी प्रत्येक पंक्तियोंसे टपकता है। एक कवित्त पढ़िये—

जौंही भौंह भींजी आँखि ताकिहै सुतीजिये से,
जीबी कहे ज्याइहै अमर पद आइ लै।
अंबर पखारे ते दिगंबर बनैहै तोहि,
छलक छुआए गज-छाल तन छाइ लै।
'शेख' कहै स्रापी कोऊ जैनी है कि जापी बड़ो,
पापी है तो नीर-पैठि नागन लिवाइ लै।
अंग बोरि गंग में निहंग ह्वै कै बेगि चलि,
आगे आउ मैल थोड़ बैल गैल लाइ लै।

मध्य प्रदेशके कवि श्रीअमीरअली 'मीर' ने भी स्वयं मुसलमान होते हुए गंगापर कविता लिखी है, यह हमारे लिये कम गर्वकी बात नहीं; परंतु आपकी रचनामें वह तन्मयता और अनुभूति नहीं है जो कि रसखान और रहीमकी कविताओंमें हमें प्राप्त है।

हाँ तो, मतिरामके उपरान्त पद्माकरका काल आता है। पद्माकर वस्तुतः एक महान् आत्मा थे। उनकी काव्यके सभी क्षेत्रोंमें अप्रतिहत गति थी। अपने जीवनका पूर्वभाग यद्यपि उन्होंने शृंगारिक काव्यकी साधनामें व्यतीत किया था, फिर भी उनकी उत्तरभागकी कृतियोंमें भक्ति पद-पदपर प्रतिबिम्बित होती है। गंगापर लिखकर तो उन्होंने एक नूतन मार्ग-प्रदर्शकका काम किया। जिस प्रकार संस्कृतमें पण्डितराज जगन्नाथके उपरान्त गंगालहरीके अनुकरणपर बहुत-सी कविताएँ लिखी गयीं, उसी प्रकार पद्माकरकी 'गंगालहरी' के अनुकरणपर ग्वालकी 'यमुना-लहरी', लछिरामकी 'सरजू-लहरी' आदि अनेक काव्यपुस्तकें इसी शैलीपर प्रणीत हुईं। गंगाके विषयमें लिखनेका प्रचार यहाँतक बढ़ा कि

राजे-महाराजे भी इस क्षेत्रमें लिखनेका लोभ संवरण न कर सके। महाराज रघुवीरसिंहने 'गंगाशतक' लिखा, जो साहित्यकी दृष्टिसे अपना एक अच्छा स्थान रखता है। महाराज यशवन्तसिंहने भी गंगापर कुछ कविताएँ लिखी हैं।

बादके रीति-ग्रन्थकारोंपर भी पद्माकरका यथेष्ट प्रभाव पड़ा। 'लेखराज' ने यद्यपि अलंकार-निरूपणमें एक ग्रन्थ लिखा है, फिर भी उसके समस्त उदाहरणके छन्द गंगाविषयक ही हैं। छोटे-मोटे कवियोंकी तो अनेक रचनाएँ मिलती हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि पद्माकरका हमारे साहित्यपर बहुत व्यापक प्रभाव पड़ा है। उनकी कृतिमें यद्यपि हृदय-पक्षकी अवहेलना की गयी है तथापि गंगा-विषयक कविताओंमें हृदयकी निष्कपटताका अभाव नहीं है। गंगा-लहरीके छप्पन छन्दोंके अतिरिक्त उनके कुछ और भी छन्द इस विषयके मिलते हैं। यों यह भी स्पष्ट है कि अपने सभी पूर्ववर्ती कवियोंसे इस मार्गमें अधिक लिखनेका श्रेय सर्वप्रथम पद्माकरको ही प्राप्त है। गंगाकी अतुल शक्तिपर पद्माकरके हृदयमें कितना अटूट विश्वास था, देखिये—

काम अरु क्रोध लोभ मोह मद मातसर्य,
इनकी जँजीरन को जारिहै पै जारिहै।
कहै 'पदमाकर' पसारि पुन्य चारौ ओर,
चारौ फल धामन में धारिहै पै धारिहै॥
छोभ छलछंदन को बाढ़े पापवृंदन को,
फिकिर के फंदन को फारिहै पै फारिहै।
एकै बार बारि जिन गंगाको पियो है तिन्हैं,
तारनि तरंगिनी या तारिहै पै तारिहै।

इसी विश्वासका फल है कि वे दूसरोंको भी अनुक्षण गंगाका कीर्तन करनेके लिये कहते हैं—

योग हू में भोग में वियोग में सँयोग हू में,
रोग हू में रस में न नेकौ बिसराइए।
कहै 'पदमाकर' पुरी में पुन्य, रौरव में,
फैलन में फैल-फैल गैलन में गाइए॥
बैरिन में बंधु में बिथा में बंसवालन में,
विषय में रन हू में जहाँ जहाँ जाइए।
सोच हू में सुख में सुरी में साहबी में कहूँ,
गंगा गंगा गंगा कहि जनम बिताइए।

एक स्थानपर कविवर रसखानकी ही भाँति वे भी शिवके माहात्म्यका कारण गंगाको ही मानते हैं। वह कवित्त यों है—

लोचन असम अंग भसम चिता को लाइ,
तीनों लोक नायक सो कैसे कै ठहरतो।
कहै 'पदमाकर' बिलोकि इमि ढंग जाके,
वेदहू पुरान गान कैसे अनुसरतो॥
बाँधे जटाजूट बैठि परवत-कूट माँहिं,
महाकालकूट कहौ कैसे कै ठहरतो।
पीवै नित भंगै रहै प्रेतन के संगै,
ऐसे पूछतो को नंगै जो न गंगै सीस धरतो॥

इस प्रतिभाशाली कविके उपरान्त दूसरे महाकवि भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र तथा उनके पिता बाबू गोपालचन्द्र 'गिरिधारन' का समय आता है। इन लोगोंने भी गंगाविषयक कविताएँ रची हैं। पिता और पुत्रमें अन्तर इतना ही है कि जहाँ दूसरेकी कविता अधिक वर्णनात्मक, मधुर और हृदयग्राही है, वहीं पहलेकी शब्दालंकारोंसे कसी और कम वर्णनात्मक है। गिरिधारनजीकी निम्नलिखित कविता बहुत प्रसिद्ध है—

जम की सब त्रास विनास करी
मुख ते निजनाम उचारन में।
सब पाप प्रतापहिं दूर दर्यो
तुम आपन आप निहारन में॥
अहो गंग अनंग के शत्रु करे
बहु नेकु जलै मुख डारन में।
'गिरिधारन' जू कितने बिरचे
गिरिधारन धारन धारन में॥

भारतेन्दुजीका 'नव उज्ज्वल जलधार' वाला गंगा-वर्णन विशुद्ध प्राकृतिक वर्णन न होकर यद्यपि उपमा, उत्प्रेक्षासे रंजित है, फिर भी तुलसीके 'विनयपत्रिका'

वाले पदके सिवा अन्य किसी भी रचनासे यह तुलनीय नहीं है। तुलनात्मक दृष्टिसे वस्तुवर्णनमें इन्होंने रुचि दिखायी है। कुछ अंश देखिये—

नव उज्ज्वल जलधार, हार हीरक सी सोहति।
बिच-बिच छहरति बूँद, मध्य मुक्तामनि पोहति।
लोल लहर लहि पवन, एक पै इक इमि आवत।
जिमि नर-गन मन विविध मनोरथ करत मिटावत।
सुभग-स्वर्ग-सोपान-सरिस सबके मन भावत।
दरसन मज्जन पान त्रिविध भय दूर हटावत।
श्री हरिपद-नख-चंद्रकांत-मनि-द्रवित सुधारस।
ब्रह्म-कमंडल-मंडन, भव-खंडन सुर-सरबस।
शिव-सिर-मालति-माल, भगीरथ-नृपति-पुन्य-फल।
ऐरावत-गज गिरि-पति-हिम-नग-कंठहार कल।
सगर-सुवन सठ सहस परस जल मात्र उधारण।
अगनित धारा रूप धारि सागर संचारण।
कासी कहँ प्रिय जानि ललकि भेंट्यो जब धाई।
सपनेहूँ नहिं तजी, रही अंकम लपटाई।
कहूँ बँधे नव घाट उच्च गिरिवर-सम सोहत।
कहुँ छतरी कहुँ मढ़ी, बढ़ी मन मोहत जोहत।
धवल धाम चहुँ ओर फरहरत धुजा पताका।
घहरत घंटा धुनि धमकत धौंसा करि साका।
मधुरी नौबत बजत, कहूँ नारी-नर गावत।
वेद पढ़त कहुँ द्विज, कहुँ जोगी ध्यान लगावत।

स्वर्गीय पण्डित अम्बिकादत्त व्यासने भी भारतेन्दुजीके अनुकरणपर गंगातटका एक मनोरम शब्द-चित्र खींचा है। भारतेन्दुजी-सा भाव-सौकर्य न होते हुए भी कविता वर्णनात्मक दृष्टिसे अच्छी बन पड़ी है। कतिपय पंक्तियाँ पढ़िये—

प्रात समय गंगा की शोभा नहिं कहि जाती।
देखत ही में उमगि प्रेम भरि आवत छाती॥
'बं बं हर हर' करत भीड़ आती अरु जाती।
नौका केती चलत मंद लहरनि लहराती॥
केते मज्जन करत मनहुँ गंगहिं आलिंगत।
केते इत उत मुदित होय जल ही में रिंगत॥

स्वर्गीय राय श्रीदेवीप्रसाद 'पूर्ण' ने भी पद्माकरी शैलीमें गंगाकी लहरका सुन्दर आलंकारिक वर्णन किया है। यथा—

चामर-सी चंदन-सी चंद्रिका-सी चंद ऐसी,
चाँदनी चमेली चारु चाँदी-सी सुघर है।
कुंद-सी कुमुद-सी कपूर-सी कपास ऐसी,
कल्पतरु-कुसुम-सी कीरति-सी वर है॥
'पूरन' प्रकाश ऐसी काम ऐसी हास ऐसी,
सेख के सुपास ऐसी सुखमा को घर है।
पाप को जहर ऐसी मुख की गहर ऐसी,
सुधा की लहर ऐसी गंगा की लहर है॥

पद्माकरके बाद गंगाकी सफल साधना करनेवाले स्वर्गीय बाबू जगन्नाथदास 'रत्नाकर' ही हुए हैं। गंगापर लिखा भी इन्हींने सबसे अधिक है। इनका 'गंगावतरण' नामक प्रबन्ध-काव्य हिन्दी-साहित्यमें अपना अलग स्थान रखता है। यद्यपि वस्तुवर्णनकी वह विशदता और भावोंका गाम्भीर्य जो वाल्मीकि और माघ आदि संस्कृतके कवियोंमें मिलता है, वह यहाँ नहीं है, फिर भी 'गंगावतरण' काव्यकलाके चामत्कारिक रूपका अच्छा निदर्शन है। उदाहरणार्थ स्वर्गसे गंगाके उतरते समयका दृश्य देखिये—

निज दरेर सौं पौन-पटल फारति फहरावति।
सुर-पुर के अति सघन घोर घन घसि घहरावति॥
चली धार धुधकारि धरा-दिसि काटति कावा।
सगर-सुतनि के पाप-ताप पर बोलति धावा॥
बिपुल बेग सौं कबहुँ उमगि आगे कौं धावति।
सौ सौ जोजन लौं सुढार ढरतिहिं चलि आवति॥
फटिकसिला के बर बिसाल मन बिस्मय बोहत।
मनहु बिसद छद अनाधार अंबर मैं सोहत॥

मर्त्यलोकमें आकर गंगा इधर-उधर लड़ती-टकराती बही जा रही है। इस वर्णनमें कविने कितनी सफलतासे गंगाकी घहरतक शब्दोंद्वारा प्रतिध्वनित कर दी है। उदाहरणार्थ नीचेका छन्द देखिये—

कहुँ कोउ गह्वर गुहा माहिं घहरति घुसि घूमति।
प्रबल बेग सौं धमकि धूँसि दसहूँ दिसि दूमति॥

कढ़ति फोरि इक ओर घोर धुनि प्रतिधुनि पूरति।
मानहु उड़ति सुरंग गूढ़ गिरि-सृंगनि चूरति॥

'गंगावतरण' के अलावा 'रत्नाकर' जीने गंगापर एक अष्टक तथा और भी अनेक स्फुट छन्द लिखे हैं। गंगासम्बन्धी सभी कविताओंसे इनमें कवित्वकी मात्रा भी बहुत अधिक विकसित हुई है। एक नमूना लीजिये—

पानी कौ सुढार किधौं पावक की झार लसै,
थार कौ तिहारी सार समुझि न आवै है।
कहै 'रतनाकर' सुभाव लच्छ लच्छनि कौ,
रावरौ प्रभाव लै बिलच्छन बनावै है॥
सुकृत फरावै झरसावै झार दुःकृत कौ,
ताप सियरावै जन-पापहिं जरावै है।
गंग तव नोखौ ढंग जगत उजागर है,
सागर भरावै भवसागर सुखावै है॥

जहाँ रत्नाकरजीके काव्यमें कलापक्षकी प्रधानता है, वहीं स्वर्गीय पण्डित सत्यनारायण कविरत्नकी कविताएँ सुकुमारता, सरसता और भावसौष्ठवसे सराबोर हैं। यद्यपि शोकका विषय है कि ऐसे सुकविको अकालमें ही कालद्वारा कवलित होना पड़ा तथापि उनका स्मृति-चिह्न—उनकी कृतियोंका अक्षयकोष, हमारे पाससे जानेका नहीं। इनकी गंगा-विषयक कविताओंमें भी कल्पना और भावनाका कैसा सुन्दर सामंजस्य हुआ है, यह बतलानेके लिये नीचेकी दो पंक्तियाँ पर्याप्त हैं—

किधौं भेद-पाषाण भेदि, नित द्रवत सुधा कौं।
बहति हिलोरति बोरित, सुरसरि हिय-बसुधा कौं॥

आधुनिक युगके दो सर्वश्रेष्ठ कवि पण्डित अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' और श्रीमैथिलीशरण गुप्तकी भी गंगापर कतिपय पंक्तियाँ मिल जाती हैं। इन दोनों ही कवियोंकी कविताके विषयमें कुछ कहना वृथा है। भाषा, भाव और वस्तुवर्णन आदि सभी दृष्टियोंसे इनकी कविता आधुनिक खड़ी बोलीमें सर्वश्रेष्ठ मानी जाती है। एक बात जरूर देखनेमें आती है कि जहाँ 'हरिऔध' जीकी कवितामें कुछ प्राचीनताकी झलक है, वहीं गुप्तजीका वर्णन नवीन दिशाकी ओर संकेत करता रहता है। इसका मूल कारण 'हरिऔध' जीका गुप्तजीसे बहुत अधिक वयोवृद्ध होना मात्र ही हो सकता है। यहाँ दोनों ही महाकवियोंकी कविता दी जाती है।

'हरिऔध'जी कितने कलापूर्ण और हृदयहारी ढंगसे गंगाके सम्बन्धमें कहते हैं—

पूजन भजन कर कुजन सुजन बने,
भारत का जन जन जानता है इसको।
भव में भवानीपति सा ही भूतिमान किया,
भाव से भरित भावना दे जिस तिसको।
'हरिऔध' सगर-सुवन का सँवारा जन्म,
तारा उसे कोई तार पाता नहीं जिसको।
सुधा को उधार बसुधातल सहारा बनी,
सुरसरि-धारा ने सुधारा नहीं किसको।

गुप्तजीके 'साकेत' महाकाव्यमें दो स्थलोंपर गंगाका वर्णन आया है। एक स्थानपर गंगाके विषयमें की गयी उनकी कल्पना देखिये—

यह थी एक विशाल मोतियों की लड़ी।
स्वर्गकंठ से छूट धरा पर गिर पड़ी।
सह न सकी भवताप अचानक गल गई।
हिम होकर भी द्रवित रही कल जलमई।

अन्यत्र गंगासे कवि कितनी भावुकताके साथ प्रार्थना करता है—

जय गंगे आनंदतरंगे कलरवे!
अमलअंचले पुण्यजले दिवसंभवे!
सरस रहे यह भरतभूमि तुमसे सदा।
हम सबकी तुम एक चलाचल संपदा।

इन लोगोंके अलावा पण्डित जगन्नाथप्रसाद 'भानु' तथा स्वर्गीय श्रीअर्जुनदास केडियाने भी अपने 'छन्दःप्रभाकर' और 'भारती-भूषण' में लक्षणोंके उदाहरणमें गंगाविषयक छन्दोंको रचकर रखा है, पर कवित्वकी दृष्टिसे उनका कोई विशेष मूल्य नहीं आँका जा सकता।

श्रीकन्हैयालाल पोद्दारने पण्डित जगन्नाथकी

'गंगालहरी' का हिन्दी पद्यमें समश्लोकी अनुवाद किया है, पर हिन्दीमें संस्कृत वृत्तोंके लिखनेकी कठिनताके कारण पूर्णतः सफल नहीं हो सके हैं।

संस्कृतके यशस्वी विद्वान् स्वर्गीय महामहोपाध्याय पण्डित देवीप्रसाद शुक्ल कविचक्रवर्तीने भी गंगाके सम्बन्धमें बीस-पचीस छन्द लिखे थे। उन्हींमेंसे एक यहाँ दिया जाता है। कविने प्राचीन शैलीकी, संस्कृत-गर्भित भाषाके साथ भी कैसा सुन्दर निर्वाह किया है, यह अवलोकनीय है—

हरिपद-पंकज को मंजु मकरंद वृंद,
शंकर को मौलिदाम उत्तम अभंग है।
पापपुंज-कानन को कठिन कुठार तीव्र,
सुरपुर-सीढ़ी को परंपरा प्रसंग है।
उदित वसुंधरा को उज्ज्वल उदार हार,
विश्व को विशेष पुण्य प्रकट उतंग है।
भूपति भगीरथ को सुयश-समूह-रूप,
अमरतरंगिणी को तरल तरंग है।

इन लोगोंके उपरान्त हिन्दीमें जो छायावादकी काव्य-धारा बही, उसमें 'प्रसाद' जीने वरुणापर, 'निराला' जीने यमुनापर और पन्तजीने गंगापर कविताएँ लिखी हैं। प्रोफेसर मनोरंजन, एम० ए० बदरीनाथ-यात्राके समय राजघाटके पुलपरसे गंगाका दर्शन करके उद्वेलित हो पड़े थे और उन्होंने एक कविता लिखी भी थी। जिसकी कुछ पंक्तियाँ यों हैं—

भूल पितृगृह के सारे सुख, पगली सी हो प्रेम-विभोर,
उतावली सी सुधबुध खोकर, जाती है यों किसकी ओर?
अथवा हम संतप्तजनों के, हरने को सारे संताप,
विभवों से मुँह मोड़ दूसरों-हित भूतल पर आती आप।

× × ×

जाता हूँ तेरे पीहर को, कह जो कहना हो संदेश।
तेरी बातें सुनने को आकुल होगा तव पितृ-प्रदेश।
तेरी सुख-दुख की सब गाथा जाकर वहाँ सुनाऊँगा।
नानिहाल के नाते मैं भी कुछ तो आदर पाऊँगा।

पर इस प्रकारकी कविताएँ 'प्रसाद' जीके स्कूलसे सम्बन्धित न मानकर 'हरिऔध' जी तथा गुप्तजीके स्कूलमें ही शामिल की जा सकती हैं।

विशुद्ध गंगाके वर्णनके अलावा शुभ्रता, पवित्रता आदिके लिये भी साहित्यमें जगह-जगह गंगासे उपमा दी गयी है। कवियोंने इसका नाना रूपोंसे वर्णन किया है। यहाँतक कि *'गंग भंग दोउ बहिन'* तक कह डाला है। इस प्रकार साहित्यपर दृष्टिपात करनेके बाद स्पष्ट विदित हो जाता है कि जिस प्रकार हमारे जीवनके प्रत्येक अंगपर गंगाका पानी चढ़ा है, ठीक उसी प्रकार हमारा साहित्य भी सुरसरिताके पुण्य तोयसे धुलकर अनुक्षण निखर रहा है। गंगा हिन्दुत्व और भारतीयत्वकी अमिट निशानी होती हुई भी देश और कालसे आच्छन्न नहीं। वही तो सबकी समान धात्री है। आज वह देवीके रूपमें, सरिताके रूपमें, हमारी माताके रूपमें तथा और भी अनेक प्रकारसे सर्वत्र व्याप्त हो रही है। अतः साहित्यमें अतीतकी ही भाँति भविष्यमें भी वह आदृत होती रहेगी; अपनानेका रूप, चाहे हमारे दृष्टिकोणके परिवर्तित होनेके साथ भले ही बदल जाय। [गीताधर्म]

पंच पुण्य

पुण्या भागीरथी लोके पुण्या वाराणसी पुरी। पुण्या वेदाः शिवः पुण्यः पुण्यं तिर्यक्त्रिपुण्ड्रकम्॥
पञ्च पुण्यानि यो मर्त्यः प्रातरुत्थाय कीर्तयेत्। सर्वपापविनिर्मुक्तः स याति परमां गतिम्॥

प्रातः उठकर जो मनुष्य इन पाँच पुण्योंका कीर्तन करता है, वह सब पापोंसे रहित हुआ परागति पाता है—१. लोकमें भागीरथी पुण्य है, २. वाराणसीपुरी पुण्य है, ३. वेद पुण्य हैं, ४. शिव पुण्य है और ५. त्रिपुण्ड्र पुण्य है। [सूतसंहिता यज्ञवैभव ४२।८१-८२]

गंगाकी गरिमाके गायक कतिपय हिन्दी-कवि

(डॉ० श्रीतारकेश्वरजी उपाध्याय)

प्रकृति-पूजा हिन्दू-संस्कृतिकी प्रमुख पहचान है। नदियोंसे इस संस्कृतिका अनन्य सम्बन्ध है। सच तो यह है कि हिन्दू-जीवन-पद्धतिका उद्भव और विकास नदीतटपर ही हुआ है। जन्मसे लेकर मृत्युपर्यन्त ये नदियाँ हमारे जीवनमें परोक्ष या प्रत्यक्ष रूपसे समाहित हैं। इन नदियोंमें गंगामैया सर्वोत्तम हैं। पुनर्जन्म और मोक्षमें आस्था रखनेवाली इस संस्कृतिने गंगा, गाय, गायत्री और गीताको गोविन्दतक पहुँचनेका सक्षम स्रोत माना है। इसलिये ये चारों मातृस्वरूपा हैं। प्रत्येक हिन्दू स्नान करते समय, चाहे वह घरके अन्दर स्नानागारमें हो या बाहर कुएँपर, तालाबमें हो या किसी भी नदीमें, उसके मुखसे 'गंगा' शब्द अनायास ही निकल जाता है। अधिकाधिक लोग स्नानार्थ जलको 'गङ्गे च यमुने चैव…।' मन्त्रसे मन्त्रपूतकर उसे गंगाजल बनाकर ही स्नान करते हैं।

हमारे आर्षग्रन्थोंसे लेकर पालि, प्राकृत, अपभ्रंश, अवधी, व्रजभाषाके साहित्यकारोंने अपनी-अपनी बोली एवं भाषामें गंगामैयाकी महिमाका गायन किया है। हिन्दीके आदिकालीन कवि विद्यापतिने *'कि करब जप-तप जोग धेआने। जनम कृतारथ एकहि सनाने॥'* कहकर, तो मध्यकालीन कवि गोस्वामी तुलसीदासजीने जगज्जननी जानकीमैयाद्वारा गंगामैयासे आशीर्वादकी याचना *'सियँ सुरसरिहि कहेउ कर जोरी। मातु मनोरथ पुरउबि मोरी॥'* कराकर और आधुनिक कालके कवि भारेतन्दुजीने *'दरसन मज्जन पान त्रिविध भय दूर मिटावत'* कहकर गंगामैयाकी अपार महिमा भारतीय जनमानसके समक्ष प्रस्तुत की है।

मैथिलकोकिल विद्यापति, गोस्वामी तुलसीदास, सूरदास, पण्डितराज जगन्नाथ, जगन्नाथदास रत्नाकर, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र आदि प्रसिद्ध महाकवियोंके गंगा-गरिमा-वर्णनसे प्राय: सभी अभिज्ञ हैं। इन सुविख्यात महाकवियोंके अतिरिक्त हिन्दीके कुछ ऐसे भी जाने-अनजाने कवि हैं, जिनकी गंगा-भक्ति गोप्य है। उन्हीं गोपनीय कवियोंकी गंगामैयाके प्रति समर्पित श्रद्धा-भाव-भक्तिको उजागर करना इस निबन्धका उद्देश्य है।

इनमेंसे एक कविराज पूरनमलका रचनाकाल बीसवीं शताब्दीके प्रारम्भिक दो-ढाई दशक हैं। इनकी भक्तिपरक अनेक स्तुतियाँ मिलती हैं। तत्सम शब्दावलीमें उक्त, सामासिक पदावलीयुक्त, संस्कृत वर्ण-वृत्तोंमें रचित यह गंगा-स्तुति, कितनी सारी पौराणिक कथाओंको अपनेमें समाहित की है; इसकी सारगर्भित शब्द-योजनापर विचारकर देखिये—

सा जयति सुरसरिदमर दानवनागनर वरदायिनी।
कासकुसुम मृणाल मुक्ता धवल धार प्रवाहिनी॥
तिलतुलिततण्डुल कुसुमचन्दन विबुध पूज्यसुधाविनी।
सुरनगर वीथी विष्णु-पद-नख ब्रह्महस्त निवासिनी॥
पुरमथनमस्तक कलितशोभा कृष्ण चरण तरङ्गिनी।
जगधम्म सरसिज सोम भासा सलिल रासि सोहाउनी॥
जह्नुकन्या भीष्मजननी धरणि मध्य विभूषिणी।
कविराज पूरनमल भाषित पतित पामर पाविनी॥

भोजपुरी भाषामें नदी-तट यानी किनारेको 'कान्ही' कहा जाता है। उन्नीसवीं शताब्दीके उत्तरार्द्धमें बिहारमें एक संत हुए हैं। इन्होंने किशोरावस्थामें ही पूर्ण वैरागी होकर, गंगातटपर अपनी एक पर्ण-कुटी बनायी। जबसे वे गंगातटपर आये तबसे मृत्युपर्यन्त वे किसी गाँवमें नहीं गये। भगवान् श्रीराम इनके इष्ट थे, साध्य थे। इन्होंने अपनी इष्ट-साधनाहेतु गंगामैयाको अपना साधन बनाया। अहर्निश गंगाकी ओर एकटक देखते रहना, इनकी दिनचर्या थी। चातककी भाँति इन्होंने प्रण किया था कि गंगाजलके अतिरिक्त मैं अपने मुखमें दूसरे जलस्रोतका एक बूँद भी जल नहीं डालूँगा। कोई सज्जन समीप आ गये, तो उन्हें वे राम और गंगा-भक्तिका सरस उपदेश देते। दाता स्नानार्थियोंसे जो धन मिलता, उसे भिक्षुक स्नानार्थियोंमें मुक्तहस्त बाँटकर पूर्ण अपरिग्रही बने रहे।

कान्हीपर वास करनेके चलते लोग उन्हें कान्हरदास कहते। उन्होंने भी लोक-उच्चरित इस नामको स्वीकार कर लिया था। गंगामैयाकी भक्तिमें उन्होंने स्तुतियों एवं भक्तिपरक पदोंकी रचना की। उनके द्वारा रचित एक गंगा-स्तुति प्रस्तुत है—

जय गंगाजी जय जगजननी जय संतन सुखदायी।
चरन-कमल-अनुराग भाग सौं लय ब्रह्मा उर लायी॥
चारि पदारथ आछि जग-जीवन वेद विमल जस गाई।
भक्त भगीरथ के कारन तू प्रगटि अवनि महँ आई॥
तेज प्रताप कहाँ धरी बरनब शंकर सीस चढ़ाई।
हेम-शिखर पर ललित मनोहर उर जयमाल सोहाई॥
ताकर नाम लेत जम किंकर करुना करि फिरि जाई।
राम-नाम गंगा कलि केवल दास न और उपाई।
कान्हरदास आस रघुवर के हरखि निरखि गुन गाई॥

गिद्धौरनरेश श्रीगुरुप्रसाद सिंहके आदर्श भारतके पौराणिक राजा थे। वे प्रजावत्सल और गंगा-भक्तके साथ एक सहृदय कवि भी थे। अपनी आराध्याका गुण-कथन, शास्त्रोक्त नवधाभक्तिका एक सोपान है। अपने निम्नलिखित पदमें उक्त कविने गंगा-मैयाका गुणगान किया है—

गंगाजी की विषमता लखि मो मन हरखात।
स्नातक पठवति स्वर्ग को आपु निम्नगति जात॥
आप निम्नगति जाति ताहि गिरि शिखर पठावे।
आप मकर आरूढ़ ताहि दै वृषभ चढ़ावे॥
आप सलिल तनुधारि ताहि दै दिव्य जु अंगा।
जगत-ईस करि ताहि सीस चढ़ि बिहरति गंगा॥

महाकवि पद्माकर हिन्दी साहित्यके रीतिकालीन कवियोंमें अग्रगण्य हैं। गंगा-भक्तिपरक उनके दो पद मुझे प्राप्त हुए। इन मुक्तकोंको पढ़कर मेरे मनमें साहित्यका सातवाँ रस यानी आश्चर्य प्रकट हुआ। पर ऊपर वर्णित दोनों कवियों—संत कान्हरदासजी एवं महाराजा गुरुप्रसादसिंहजीकी कुछ सहमति महाकवि पद्माकरकी मतिके साथ मिली, तब मैं कुछ आश्वस्त हुआ। पद्माकरजीके दोनों पद प्रस्तुत हैं, सुधी पाठक इनकी गंगा-भक्ति और काव्य-वैशिष्ट्यपर स्वयं विचार करते हुए यह निष्कर्ष निकालेंगे कि महाकवि पद्माकरके ये पद उन्हें अपने हास्य-रससे गुदगुदाते हैं या उनकी गहरी गंगा-भक्ति-सरिताके शान्त रसमें मज्जन कराते हैं—

(१)

लोचन असम अंग भसम चिता को लाइ
तीनों लोक नायक सों कैसे को ठहरतो।
कहे 'पद्माकर' बिलोकि इमि ढंग जाके
वेदहु पुरान गान का को अनुसरतो॥
बाँधे जटाजूट बैठे परवत कूट माँहि
महाकाल कूट कहौ कैसे को ठहरतो।
पीवै नित भंग रहे प्रेतन के संग ऐसे
पूछतको नंग जो न गंग सीस धरतो॥

(२)

अधम अजान एक चढ़ि कै विमान भाख्यो,
पूछत हौं गंगा तोहि परि परि पाइ हौं।
कहै 'पद्माकर' कृपाकरि बतलावे साँची,
देखी अति-अदभुत रावरे सुभाई हौं॥
तेरे गुनगान हूँ कि महिमा महान मैया,
कान-कान जाइके जहान मँह छाई हौं।
एक मुख गाये ताको पंचमुख पायो अब,
पंचमुख गाइहौं तो केते मुख पाई हौं॥

मिथिलानरेश महाराज रमेश्वरसिंहके दरबारी कवि तेजनाथ झा, महाकवि विद्यापतिकी परम्पराके कवि हुए हैं। इनके पदोंके भावपक्ष एवं कलापक्ष दोनोंपर विद्यापतिकी पूर्ण छाप गोचर होती है। भक्त कवि तेजनाथ झाजीने गंगा-भक्ति-परक अनेक पदोंकी रचना मैथिली भाषामें की है। प्रस्तुत पदमें कविने गंगामैयाका गुण-कथन करते हुए उनके चरणोंमें अपनी शरणागति निवेदित की है—

गंगे विनति सुनिअ दय कान।
हम सन पतित जतेक जगतमें ताहि सरन नहिं आन॥
तोर सुजस के कवि बरननकर महिमा अपरम्पार।
पतित उधार करय बसुधा में अमिय वारि बही धार॥
जे जन तन त्यागथि तुअ तट में ताहि विमान चढ़ाए।
त्वरित जाथि लय सुरपुर सब सुर सुमन माल पहिराए॥

आढ़ति कर सुरतिय प्रमुदित भईं निज कर चवर डोलाव।
अमर राज में सुखहिं बास कए दिन-दिन मोद बढ़ाव॥
तेजनाथ मतिमंद कहाँ धरि तोहर सुजस करु गान।
अन्तकाल में हमरो जननी करब एहि विधि त्रान॥

बिहारके छपरा जिलेमें स्थित सरयू-गंगा-संगमस्थलका प्राचीन नाम दर्दरक्षेत्र है। इस संगम-स्थलवासी गंगाभक्त एक साधु थे। वे अपना परिचय 'दास' के नामसे ही बताते। उन्होंने विविध देवी-देवताओंकी भक्तिमें अनेकों पदोंकी रचना की है। सधुक्कड़ी भाषामें यह पद उनकी गंगा-भक्तिका प्रमाण है—

जन के पीर हरीं सुरसरी हे।
देस-देस के यात्री आयल दर्दर-क्षेत्र भरे।
सरयू आवि मिललि संगम भए, त्रिकुटी स्थान धरे॥
ब्रह्मकमण्डलु जटाशंकरी, विष्णुक चरण परे।
बहु सेवा कय भगीरथ लायल, पतित अनेक तरे॥
धरमक देनी पापक छेनी, संतक चरन परे।
सकल पतित के तारलु गंगा, दास कि यक ने तरे॥

छायावादके शीर्षस्थ कवियोंमेंसे एक श्रीसुमित्रानन्दन पन्तजीके श्रेष्ठ काव्य-संकलन 'गुंजन' में 'नौका-विहार' शीर्षक एक कविता संकलित है। अभिधा शक्तिवाले पाठक तो इस कवितामें चाँदनी रातकी धवल-धार-प्रवाहिणी गंगामें नौका-विहारका आनन्द लेकर ही रसमग्न हो जाते हैं, पर छायावादी कविताके चतुर पारखी, जो काव्यार्थकी लक्षणा तथा व्यंजना शक्ति-सम्पन्न हैं, केवल चाँदनी रातमें नावमें बैठकर सुखद यात्राकर सन्तुष्ट नहीं होते। वे जानते हैं कि छायावादकी 'छाया' के लिये शास्त्रोंने 'तस्य छाया अमृता:' की घोषणा की है। इस सूत्रके आलोकमें विचार करनेपर यह पूरी कविता सृष्टि, ब्रह्म और गंगामैयाके शाश्वत सम्बन्धकी ओर इंगित करती है। इस कविताकी निम्नांकित पंक्तियोंका अभिधार्थ भी उक्त रहस्यात्मक सम्बन्धको प्रदर्शित करता है—

इस धारा-सा ही जगका क्रम,
शाश्वत इस जीवनका उद्गम,
शाश्वत है गति शाश्वत संगम!
शाश्वत नभ का नीला विकास,
शाश्वत शशि का यह रजत हास,
शाश्वत लघु लहरोंका विलास!
हे जग जीवनके कर्णधार!
चिर जन्म-मरणके आर पार,
शाश्वत जीवन-नौका विहार!
मैं भूल गया अस्तित्व ज्ञान,
जीवन का यह शाश्वत प्रमाण,
करता मुझको अमरत्व दान!

छायावादके मेरुदण्ड—'महाप्राण' श्रीसूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' के 'अर्चना' काव्य-संकलनमें उनकी गंगा-भक्तिपरक एक कविता मिलती है। जीवनभर विषय-वासनाओं और कामनाओंके पीछे दौड़ते-दौड़ते जब मानवकी इन्द्रियाँ शिथिल पड़ जाती हैं; तब जाकर कहीं वह भगवान्‌की शरणमें अपनेको प्रणिपात करता है। काश! आजका आदमी जवानीमें ही अपनी इस अन्तर्दशाका विचार करता। निरालाजीने गंगामैयाके चरणोंमें अपनेको समर्पितकर इस युगके मानवको अपना सन्देश दिया है—

हे जननि, तुम तपश्चरिता,
जगतकी गति सुमति भरिता।
कामना के हाथ थक कर
रह गये मुख विमुख, बककर,
नि:स्व के उर विश्व के सुर
बह चली हो तमस्तरिता।
विवश होकर मिले शंकर
कर तुम्हारे हैं विजयवर,
चरण पर मस्तक झुकाकर
शरण हूँ, तुम मरण सरिता॥

जानकी वल्लभ शास्त्री एक चर्चित कवि हुए हैं। उन्होंने अपने 'पाषाणी' गीति-नाट्य संकलनमें 'रत्नाकर' जीकी भाँति 'गंगा-अवतरण' शीर्षकसे एक लम्बे गीति-नाट्यकी रचना की है। शास्त्रीजीका तपस्वी भगीरथ

गंगामैयासे धरतीपर अवतरित होनेकी प्रार्थना करता है। अपनी प्रार्थनामें वह अपने पितरोंके उद्धारके साथ गंगामैयासे राष्ट्र-कल्याणकी कामना भी करता है—

शत-शत पितरों की भस्मराशि करो सुशीतल हे।
संताप भूतलका हरो, हो स्फीत महितल हे॥
एकावली-सी स्वर्ग की गंगा यहाँ उतरें।
कर परस ज्योतिर्धार मेरे पितर उबरें॥
मेरे पितर क्या? भस्म ही उनका अरे अब शेष
उनके बहाने हो हमारा परम पावन देश।

भारत कृषि-प्रधान देश है। भारतकी नदियाँ यहाँके कृषकोंके लिये प्रकृतिका वरदान हैं। भारतीय कृषिको समुन्नत बनानेमें गंगामैयाका महत् योगदान है। मदन वात्स्यायनके प्रयोग-काव्य-संकलनमें 'गंगा' शीर्षकसे उनकी एक कविता मिलती है। इस कवितामें उन्हें भारतीय सांस्कृतिक और आध्यात्मिक महत्त्ववाली गंगामैयासे कुछ लेना-देना नहीं है, लेकिन सूखेके कारण हताश, उदास, कृषक, मजदूरोंके आँसू पोंछनेवाली वात्सल्यमयी गंगामैयाकी ममता देखकर तो उनका शुष्क हृदय भी पिघल जाता है। वे गंगामैयाका यशोगान करते हुए कह पड़ते हैं—

पीले धान देख सावन में मुँह थे पीले,
हम लोगों के दिल-सी तुम सूखी जाती थी।
भादों में तुम उमड़ पड़ी हर्षातिरेक-सी।
उमड़ पड़ी तुम, उभर पड़ी, तुम उपट पड़ी
कृषकों के आँसू-सी तुम रोके न रुकी।
आती हो तो प्रलय बुलाती तुम खेतों में,
पर जाती हो सोना छोड़े।

पर युग-युगसे जो गंगामैया अपनी संतान भारतवासियोंके आर्थिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक उत्थानमें निरत रहीं, वे आज अत्यन्त दीन-हीन और उदास हो गयी हैं। उनका अविरल प्रवाह मन्द पड़ गया है। उनकी पावनतापर संकट आ गया है। उनकी स्फीत धवल-धारा मैली होकर सिमट गयी है। वे हताश हैं; क्योंकि उनकी इस दुर्दशाके कारक हम उनकी संतान भारतवासी ही हैं। हमने अपनी झूठी उन्नति और विकासके लिये जगह-जगहपर बाँध बाँधकर उनका सनातन मार्ग अवरुद्ध किया है। अपने भौतिक सुख-भोगकी सामग्रियोंका निर्माण करनेवाली फैक्ट्रियोंका लाखों टन कचरा उनमें रोज-रोज बहाकर अपनी गंगामैयाकी महत्ताको मलिन किया है। गंगामैयाकी इस स्थितिको देख, आँसू बहाते हुए गंगातटवासी कवि श्रीसुरेन्द्र वाजपेयीजी हम भारतीयोंसे पूछते हैं—

मोक्षदायिनी स्वयं मोक्ष के द्वार खड़ी।
पतित पावनी हैं दूषित बेजार बड़ी॥
वैतरनी-सी हालत ठहरी
कभी रही जो तारनी गंगा।
बची हुई अब इतनी गंगा,
कहाँ गयी वह अपनी गंगा?

प्रत्येक क्रान्तिका नेतृत्व कोई युवक ही करता है। काशीवासी युवा कवि श्रीअनुराग तिवारीने 'गंगा केवल नदी नहीं है' शीर्षक कविता लिखकर, हिन्दी काव्य-गंगामें स्नान करनेवाले प्रबुद्ध वर्गके मनमें एक तरंग तथा 'गंगा बचाओ' अभियानमें जुटे सम्पूर्ण भारतीयोंके मनमें उत्साह और उमंग ला दिया है। निःसन्देह कविकी यह काव्य-क्रान्ति, वैसे भारतीयोंकी भ्रान्ति दूर करेगी; जो गंगामैयाके अस्तित्वको मिटाकर भी अपनी सुख-समृद्धिके सपने देख रहे हैं। कवि ऐसे लोगोंको सावधान करते हुए कहता है—

श्री हरि के चरणों का अमृत,
गंगा केवल नदी नहीं है।
सदियों से बहती संस्कृति है
केवल जल की धार नहीं है॥
ध्यान रहे, यदि इस धरती पर
गंगा नहीं रहेगी।
जन-जीवन नहीं बचेगा,
धर्म-संस्कृति नहीं रहेगी॥
हे पाप नाशिनी गंगा माँ,
दो जन को सुविचार।
विचलित और शर्मिन्दा हूँ
मैं तेरी दशा निहार॥

हिन्दी काव्योंमें गंगा-वर्णन

(डॉ० श्रीसूर्यप्रसादजी दीक्षित)

भारतीय संस्कृतिमें गंगा मात्र नदी नहीं है, बल्कि एक उदात्त-अवदात चैतन्य धारा है। यही कारण है कि सृजन और चिन्तनसे जुड़े हुए प्रत्येक भारतीयने गंगाके प्रति अपनी भक्ति-भावना अर्पित की है। हिन्दी कवियोंने गंगा-स्तवनकी यह परम्परा विद्यापतिसे आरम्भ हुई मानी है। कविवर विद्यापतिने अपने अनेक छन्दोंमें गंगाकी उत्पत्ति और उसके माहात्म्यपर प्रकाश डाला है। *'ब्रह्म कमण्डल बास सुबासिनि सागर नागर गृहबाले। जय गंगे जय गंगे।—शरणागत भय भंगे'*—ये भावोद्गार किसी न किसी रूपमें संस्कृत कवियोंकी गंगा-स्तुतिसे प्रेरित प्रतीत होते हैं। हिन्दी कवियोंमें गंगाके आगमनका विस्तृत वर्णन सर्वप्रथम महाकवि सूरदासने किया है। सूरसागरके पूर्वार्धके नवम स्कन्धमें कविने भाव-विभोर होकर कहा है—*'गंग तरंग विलोकत नैन।'*

सूरदासकी अपनी उद्भावना है कि शिवने अपना ताप-शाप दूर करनेके लिये गंगाजीको सिरपर धारण किया था। वे कहते हैं—

पीव पद कमल को मकरन्द।
अमृत हूँ ते अमल अति गुन श्रवननिधि आनन्द।
परम सीतल जानि संकर सिर धर्‌यौ ढिग चंद।

एक अन्य प्रसंगमें सूरने यह उद्गार व्यक्त किया है—*'गंग प्रवाह माहि जो न्हायी। सो पवित्र होइ हरिपुर जायी॥'* तात्पर्य यह है कि सूरदासने एक ओर गंगाके अवतरणकी कथा लिखी है और दूसरी ओर उसके माहात्म्यका मुक्त-कण्ठसे गान किया है। हिन्दी कवियोंने कृष्ण-काव्य-परम्परा मुख्यतः यमुनासे सम्बन्धित रखी है और राम-काव्य-परम्परा गंगासे, किंतु प्रतिनिधि कवियोंने इन दोनों नदियोंके प्रति काव्यांजलियाँ अर्पित की हैं।

गोस्वामी तुलसीदासने अपनी अनेक कृतियोंमें गंगाजीका वर्णन किया है। रामकथाके विविध प्रसंगोंमें गंगा-अवतरणका उल्लेख है। 'मानस' के बालकाण्डमें मिथिलाकी ओर जाते हुए मार्गमें जब गंगाजी पड़ती हैं तो मुनि विश्वामित्र श्रीरामको गंगाजीके पृथ्वीपर आनेकी कथा सुनाते हैं—

गाधिसूनु सब कथा सुनाई। जेहि प्रकार सुरसरि महि आई॥

इस प्रसंगमें धरतीपर गंगाके आगमनका सम्पूर्ण पुराख्यान वर्णित किया गया है। एक अन्य प्रसंगमें भी गोस्वामीजीने गंगाके माहात्म्यपर प्रकाश डाला है—

कहि कहि कोटिक कथा प्रसंगा। रामु बिलोकहिं गंग तरंगा॥
सचिवहि अनुजहि प्रियहि सुनाई। बिबुध नदी महिमा अधिकाई॥

गोस्वामीजीने इन पंक्तियोंमें रामको गंगाकी छविपर मनोमुग्ध चित्रित किया है और सभी पात्रोंको गंगा-स्नानका आनन्द-लाभ करते दिखाया है। कविके शब्दोंमें—

मज्जनु कीन्ह पंथ श्रम गयऊ। सुचि जलु पिअत मुदित मन भयऊ॥

एक अन्य प्रसंगमें तुलसीने सीताद्वारा गंगाकी पूजा-अर्चना करायी है। सीता मनौती कर रही हैं कि मैं अपने पति और देवरके साथ सकुशल वनवास पूरा करके लौटूँगी तो विधिवत् आपकी पूजा करूँगी—

सियँ सुरसरिहि कहेउ कर जोरी। मातु मनोरथ पुरउबि मोरी॥
पति देवर सँग कुसल बहोरी। आइ करौं जेहिं पूजा तोरी॥

गोस्वामीजीने गंगाकी स्तुतिमें कई स्तोत्रोंकी रचना की है। 'विनयपत्रिका' का यह छन्द इस दृष्टिसे स्मरणीय है—

जय जय भगीरथनन्दिनि, मुनि-चय चकोर-चन्दिनि,
नर-नाग-बिबुध-बन्दिनि जय जह्नु बालिका।
बिस्नु-पद-सरोजजासि, ईस-सीसपर बिभासि,
त्रिपथगासि, पुन्यरासि, पाप-छालिका॥

स्पष्ट है कि गंगाके गौरव-गायनमें सर्वोपरि हैं तुलसीदास। हिन्दीके मध्यकालीन कवियोंमें सबसे प्रभावी स्वर रहा है पद्माकरजीका। उन्होंने 'गंगालहरी' के छप्पन छन्दोंमें गंगाजीके माहात्म्यका वर्णन किया है। वे उक्ति-वैचित्र्यका आश्रय लेते हुए यह सिद्ध करते हैं कि गंगाके आगमनसे इस लोकके सभी पापी स्वतः पाप-मुक्त हो गये हैं। हमारे शास्त्रोंने जैसी घोषणा की थी—

गङ्गा गङ्गेति यो ब्रूयाद् योजनानां शतैरपि।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति॥

अर्थात् सौ योजनकी दूरीसे भी कोई यदि दो बार

'गंगा' शब्दका उच्चारण कर देता है तो सभी पापोंसे मुक्त होकर विष्णुलोकमें स्थान पा जाता है। पद्माकरजीने अपने अनेक छन्दोंमें यमराज और चित्रगुप्तके बीच यह संवाद कराया है कि गंगाके कारण नरकका सारा विधान अर्थात् उनका कारोबार ही नष्ट हुआ जा रहा है। कविका उद्घोष है—

दाह दोष दल के मिटे हैं थल-थल के,
रहे न मल कलि के बिलोके गंग जल के।

कवि कहता है कि गंगाकी लहर तो बड़ी ही अद्भुत है। यह महा-मंगलकारिणी है। कलिकालको नष्ट कर देनेवाली और यमराजको अपदस्थ कर देनेवाली यह कोई परमाशक्ति है—

छेम की छहर, गंगा रावरी लहर,
कलिकाल को कहर, जमजाल को जहर है।

'पद्माकर' ने गंगाकी महिमाका बखान करते हुए अनेक कथा-सन्दर्भ दिये हैं। उनका यह भी कथन है कि यदि गंगाको शीशपर न धारण किये होते तो शिव सबके उपास्य न हो पाते—

पीवै नित भंगै, रहै प्रेतन के संगै,
ऐसे पूछती को नंगै, जो न गंगै सीस धरतौ।

कविने एक छन्दमें गंगाके सहारे अपने पापोंको चुनौती दी है; क्योंकि उसका यह विश्वास है कि परम पातकी होते हुए भी मैं गंगाकी कछारमें उनको पछाड़ दूँगा—

ऐरे दगादार मेरे पातक अपार तोहि,
गंगा की कछार में पछार छार करिहौं॥

'पद्माकर' की यह 'गंगालहरी' पण्डितराज जगन्नाथकी 'गंगालहरी' से बहुत मेल खाती है। वस्तुतः इन कृतियोंमें केवल वर्णन ही नहीं है, बल्कि प्रगाढ़ आस्थाका प्रगल्भ स्वर भी है।

हिन्दीके आधुनिक कवियोंने गंगाका चित्रण कई दृष्टियोंसे किया है। इनमें प्रथमतः स्मरणीय हैं भारतेन्दुजी। उन्होंने गंगाके बाह्य सौन्दर्यका वर्णन पूरी मनोमुग्धताके साथ किया है। काशीको तीन ओरसे अपने अंकपाशमें समेटे हुए गंगा भारतेन्दुको आकृष्ट करती रही है। गंगाकी उज्ज्वल धाराको देख-देखकर वे सम्मोहित होते रहे हैं और इसीलिये इन पंक्तियोंमें वे कह पड़ते हैं—

'नव उज्ज्वल जलधार हार हीरक सी सोहति।'

गंगाकी धवल धारको हीरकहार अथवा मुक्तामालकी उपमा कई कवियोंने दी है। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्तने 'साकेत' में ऐसी ही उद्भावना करते हुए लिखा है—

यह थी एक विशाल मोतियों की लड़ी।
स्वर्ग-कण्ठ से छूट धरा पर गिर पड़ी॥
सह न सकी भव ताप अचानक गल गई।
हिम होकर भी द्रवित रही कल जल गई॥
जय गंगे आनन्द तरंगे कलरवे।
अमृत-अंचले, पुण्य-जले, दिवसम्भवे॥

इसी प्रकारकी कल्पना 'निराला' जीने अपने प्रसिद्ध गीत 'भारति जय विजय करे' में की है। कविने भारतमाताका मानवीकरण करते हुए गंगाकी धाराको उनके गलेमें सुशोभित हारके रूपमें चित्रित किया है, जो स्वयंमें एक विराट् बिम्ब है—

गंगा ज्योतिर्जल कण धवलधार हार गले।
भारति, जय विजय करे!

भारतेन्दुजीने पारम्परिक ढंगसे भागीरथीके अवतरणका विवरण प्रस्तुत किया है। भगीरथकी साधना, ब्रह्माके कमण्डलसे गंगधारका प्रवाहित होना, धरतीपर शिवद्वारा गंगाको अपने जटा-जूटमें धारण करना और फिर सगर-सुतोंकी मुक्ति-हेतु उन्हें धरतीपर उतारना—ये वृत्तान्त भारतेन्दुद्वारा इस कवितामें प्रस्तुत किये गये हैं—

श्रीहरि-पद-नख-चन्द्रकान्त-मणि द्रवित सुधारस।
ब्रह्म कमण्डल मण्डन, भव-खण्डन सुर सरबस॥
शिव-सिर-मालतिमाल, भगीरथ नृपति-पुन्यफल।
ऐरावत गज गिरि-पति हिमनग कंठहार कल॥

इस प्रसंगमें 'रत्नाकर' जीकी रचना 'गंगा-अवतरण' तो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसमें विस्तारपूर्वक पूरा आख्यान प्रस्तुत किया गया है और गंगाकी धारा, उसके प्रवाह अर्थात् उसके बहिरंगका सजीव चित्रण किया गया है। 'रत्नाकर' जीने ओजगुणसमन्वित भाषा-शैलीमें स्वर्गसे धरतीकी ओर आती हुई गंगा-धाराका जो वर्णन किया है, वह असाधारण कोटिका है—

ब्रह्म कमण्डल ते उमंडि नभमण्डल खण्डित।
धायी धार अपार बेग सो बायु बिहंडित॥

यह धारा हरहराती हुई धरतीकी ओर आ रही है। इसके रूप, रंग, गति, वर्ण आदिको देखते हुए 'रत्नाकर' जी ने सैकड़ों उत्प्रेक्षाएँ और उपमाएँ दी हैं। उनके शब्दोंमें अद्भुत ध्वन्यात्मकता है, जिसमें नदीकी गर्जना सुनी जा सकती है। उन्होंने गंगाके बाह्य आकारको लेकर अनेकानेक चाक्षुष बिम्ब, नाद-बिम्ब तथा गत्वर बिम्ब प्रस्तुत किये हैं। सचमुच, अत्यन्त उत्कृष्ट कोटिकी है यह कविता।

छायावादी कवियोंमें प्रकृति-चित्रणके सन्दर्भमें गंगाका सर्वाधिक वर्णन किया है 'पन्त' जीने। उनके पूर्व यद्यपि 'प्रसाद' जीने मन्दाकिनी और आकाशगंगाका प्रतीकात्मक चित्रण किया था, पर 'पन्त' जीने इसको शिखरपर पहुँचा दिया है। 'गंगा' नामक कवितामें वे कहते हैं—*'यह गंगा; यह जीवन छाया, यह लोक-चेतना, यह माया।'* 'पन्त' जीने 'नौका-विहार', 'एक तारा', 'गंगाका प्रभात' आदि कविताओंमें गंगाके विभिन्न रूप चित्रित किये हैं। एक ओर वे गंगाका मानवीकरण करते हुए कहते हैं—

अब आधा जल निश्चल पीला। आधा जल चंचल औ नीला॥
गीले तन पर मृदु सन्ध्यातप। वह विष्णुपदी शिवमौलि स्रुता॥
वह भीष्म प्रसू औ जन्हुसुता। वह देव निम्नगा स्वर्गंगा।
वह सगरपुत्र तारिणी श्रुता॥

इसी प्रकार *'गंगाके नव नीर निकषपर पड़ी स्वर्गकी रेख'* जैसा बिम्ब-विधान करते हुए 'पन्त' जीने गंगाको अपने प्रकृति-चित्रणका प्रिय आलम्बन बनाया है।

छायावादोत्तर कवियोंमें गंगाके प्रति सर्वाधिक आस्था व्यक्त की है 'दिनकर' जीने। उन्होंने 'कुरुक्षेत्र' में गांगेय भीष्मको और 'रश्मिरथी' में गंगामें फेंके गये शिशु कर्णको महिमा-मण्डित करते हुए गंगाके पौराणिक मिथकीय चरित्रको सविस्तार उजागर किया है। अपनी एक कविता 'पाटलिपुत्रकी गंगासे' के अन्तर्गत दिनकरजीने गंगाको भारतीय इतिहासका साक्षी बनाया है। कवि पूछता है—

तुझे याद है चढ़े पदोंपर कितने जय फूलों के हार।
तुझे याद है समुद्रगुप्त ने धोयी है तुझमें तलवार॥

समकालीन हिन्दी कवि गंगाके प्रदूषणको लेकर क्षुब्ध दिखायी देते हैं। यों पिछले दशकोंमें गंगा-विषयक रचनाओंका औसत बहुत कम हो गया है। देशके इतिहास, भूगोल और संस्कृति-बोधसे कटा हुआ सम-सामायिक काव्य इसी कारण उपेक्षित-सा है।

पं० नेहरूने अपनी अन्तिम इच्छा व्यक्त करते हुए लिखा था कि मेरे शरीरकी भस्म जगह-जगह गंगाकी धारामें विसर्जित की जाय, किसी धार्मिक भावनाके कारण नहीं; बल्कि इसलिये कि गंगा समस्त भारतीय जन-मानसका प्रतीक है। हिमालयमें गंगोत्रीके गोमुखसे निकलकर ऋषिकेश, बिठूर, प्रयाग, काशी आदि तीर्थोंके मध्यसे गुजरती हुई, सैकड़ों नदियोंको अपनेमें आत्मसात् करती हुई गंगासागरमें तिरोहित होनेवाली यह गंगा भारतकी शोभा है। इस कृषिप्रधान देशके लिये यह वरदान है। वह पतित-तारिणी तो है ही, साथ ही अनेक आर्थिक, राजनीतिक कारणोंसे भी महिमा-मण्डित की गयी है।

डॉ० लोहियाकी स्थापना थी कि इस देशमें विदेशी सभ्यता यमुनाके किनारे-किनारे विकसित हुई है, जैसे दिल्ली और आगरा, जबकि स्वदेशी संस्कृति गंगाके किनारे-किनारे बढ़ी है। बड़े-बड़े औद्योगिक नगर जलमार्ग या परिवहन-सुविधाके कारण गंगाके किनारे स्थापित हुए हैं। इसीलिये गंगा भारतीय जीवनके साथ घुलमिल गयी है। वैज्ञानिकोंका मत है कि गंगाजल अनेक असाधारण औषधियोंसे ओतप्रोत है। शायद इसीलिये वह पवित्रताका प्रतीक हो गया है।

इस प्रकार हिन्दी कवितामें गंगाकी अनेक छवियाँ प्रतिबिम्बित हुई हैं। गंगाकी पौराणिक महिमा, गंगधारकी प्राकृतिक सुषमा, गंगाकी ऐतिहासिक सत्ता और लोक वाङ्मय-लोक-जीवनमें उसकी महत्तामें गहरे डूबे हुए विभिन्न हिन्दी कवियोंने गंगाको पूरी आस्थाके साथ अपनी रचनाओंमें उतारा है। इस कविता-गंगामें रस-स्नात होकर हम अपने मन-वचन-कर्मको वैचारिक-प्रदूषणसे बचा सकते हैं। [मानसचन्दन]

आयुर्वेद और गंगाजल

(प्रो० श्रीअनूपकुमारजी गक्खड़)

गंगा हमारे देशकी सबसे पवित्र नदी है। हमारे शास्त्रोंमें इस नदीके सम्बन्धमें अनेक गाथाएँ गायी गयी हैं। आज इतनी गन्दगीको आत्मसात् करनेके उपरान्त भी इसकी पवित्रतापर आँच नहीं आयी। गंगोत्रीसे लेकर समुद्रतक अपनी यात्रामें न जाने कितने लोगोंको विभिन्न दृष्टिकोणोंसे उपकृतकर यह अपनी सार्थकताको साकार करती है। वर्तमानमें गंगा केवल श्रद्धालुओंकी मात्र आस्थाका प्रतीक नहीं, अपितु एक रोजगारपरक, व्यवसायपरक, स्वास्थ्यपरक, दूसरे लोककी सिद्धिपरक आदि रूपोंमें भी प्रतिष्ठित है। भौतिक गन्दगी भी इसके आध्यात्मिक गुणोंको परिवर्तित नहीं कर सकती।

इतिहास साक्षी है कि प्राचीन कालमें सभ्यताका विकास नदियोंके किनारेपर ही पनपा है, वह भी इसलिये कि पानी मनुष्यकी ही नहीं, सभी प्राणियोंकी मूलभूत आवश्यकता है। जल वेदोंमें अप्के नामसे उल्लिखित है। वेदोंमें कहा है कि '**आपो भवन्तु पीतये।**' पानीय, सलिल, नीर, कीलाल, जल, अम्बु, आप्, वारि, तोय, पयः, उदक, अर्णः, अमृत तथा घनरसके नामसे जाना जानेवाला जल श्रमको दूर करता है, क्लान्तिका नाश करता है, मूर्च्छा तथा प्यासको नष्ट करता है। तन्द्रा, वमन, विबन्धको दूरकर बलकी वृद्धि करता है। जलके सेवनसे निद्रा दूर होती है, शरीरमें तृप्ति होती है। यह हृदयको अच्छा लगनेवाला, अव्यक्त रसयुक्त, अजीर्णका शमन करनेवाला तथा सदा हितकारक, शीतल, लघु, स्वच्छ, सम्पूर्ण मधुरादि रसोंका कारण होता है। यह अमृतके समान जीवनदाता होता है।

जलके सुलभ स्रोतके रूपमें नदियोंका अपना अलग महत्त्व है। दैवीय गुणोंसे युक्त होनेसे नदियोंकी पूजा की जाती रही है। नदियोंके साथ अनेक उत्सवोंकी सम्पन्नता पूर्ण होती है। ज्ञानका प्रवाह सतत रूपसे बना रहे, इसके लिये नदियाँ साक्षी रही हैं। आयुर्वेदके प्रसिद्ध ग्रन्थ काश्यपसंहिताकी समाजमें स्वीकृतिके लिये भी गंगा नदीका योगदान है।

वृद्धजीवकीय तन्त्रमें लिखा है कि महर्षि कश्यपने पितामह ब्रह्माके नियोग एवं अपने ज्ञानचक्षुओंसे देखकर तपस्याके प्रभावसे इस तन्त्रका निर्माण किया तथा ऋषियोंने उसका प्रतिपादन किया, इसीलिये इसे काश्यपसंहिता भी कहते हैं। इसके बाद ऋचीकके पुत्र जीवकने इस तन्त्रको संक्षिप्त किया, पर उसे बालभाषित कहकर उसकी प्रशंसा नहीं की गयी। तब उस पाँच वर्षकी आयुवाले एवं पवित्र जीवकने सब ऋषियोंके समक्ष कनखलस्थित गंगाके कुण्डमें डुबकी लगायी और क्षणभरमें झुर्रियों एवं सफेद बालोंसे युक्त होकर बाहर निकल आया। इस प्रकारके अद्भुत गुणोंसे युक्त गंगा नदीका जल निश्चित रूपसे ही अद्वितीय है—

ततः समक्षं सर्वेषामृषीणां जीवकः शुचिः।
गङ्गाह्रदे कनखले निमग्नः पञ्चवार्षिकः॥
वलीपलितविग्रस्त उन्ममज्ज मुहूर्तकात्॥

(का०सं० भूमिका)

वाग्भटने गङ्गाम्बुके गुण बताते हुए कहा है कि गंगाजल जीवनदायक, ओजवर्धक, तृप्तिकारक, हृदयको अच्छा लगनेवाला और बुद्धिको निर्मल करनेवाला है। अव्यक्त रसवाला होते हुए भी यह स्पर्श एवं वीर्यमें शीत होता है। यह रुचिकारक एवं पचनेमें हल्का होता है।

जीवनं तर्पणं हृद्यं ह्लादि बुद्धिप्रबोधनम्।
तन्वव्यक्तरसं मृष्टं शीतं लघ्वमृतोपमम्॥
गङ्गाम्बु नभसो भ्रष्टं स्पृष्टं त्वर्केन्दुमारुतैः।

(अ०हृदय सूत्र० ५।१-२)

इसी ग्रन्थमें आगे स्पष्ट किया गया है कि चाँदीके पात्रमें रखे शालिधान्य भातको आकाशसे बरसते हुए जलद्वारा सिंचित करनेपर अगर भात स्वच्छ, क्लेदरहित विवर्णतारहित बना रहे तो उस जलको गंगाजल समझना चाहिये। यदि भात मलिन, विवर्णयुक्त और क्लिन्न हो

जाय तो उसे सामुद्रजल अर्थात् समुद्रसे उठे मेघोंद्वारा बरसाया हुआ जल समझना चाहिये।

येनाभिवृष्टममलं शाल्यन्नं राजते स्थितम्।
अक्लिन्नमविवर्णं च तत्पेयं गाङ्गमन्यथा॥
सामुद्रं तन्न पातव्यं मासादाश्वयुजाद्विना।

(अ०हृदय सूत्र० ५। ३-४)

गंगानदीका उद्गम-स्थान हिमालय है और हिमालयसे उत्पन्न नदियोंका जल पथ्य एवं पुण्यप्रद अर्थात् पापका नाश करनेवाला है। इसका जल देवताओं और ऋषियोंद्वारा सेवित होता है। पत्थरोंसे टकराते हुए उछल-कूदकर बहनेसे जल निर्मल हो जाता है—

नद्यः पाषाणविच्छिन्नविक्षुब्धाभिहतोदकाः।
हिमवत्प्रभवाः पथ्याः पुण्या देवर्षिसेविताः॥

(चरकसंहिता सू० २७। २०९)

इसके विपरीत पारियात्र, विन्ध्य, सह्य—इन पर्वतोंसे निकलनेवाली नदियोंके जलका सेवन करनेसे शिरोरोग, हृदयरोग, कुष्ठरोग और श्लीपदरोग हो जाते हैं।

वस्तुतः जो नदियाँ तीव्र गतिसे बहती हैं और जिनका जल स्वच्छ होता है, वे लघु गुणवाली होती हैं, जो नदियाँ शैवालसे ढँकी रहती हैं, धीरे-धीरे बढ़ती हैं, जिनका पानी गँदला रहता है, वे गुरु होती हैं। मरु, रेतीले मैदानकी नदियोंका जल तिक्त होता है और वे लवण रसवाली होती हैं। इनमें कषाय रस का संयोग होता है तथा विपाक मधुर होता है। इनका सेवन बलकी वृद्धि करता है।

गंगानदीका वेग तीव्र होता है तथा इसका जल स्वच्छ होता है। इसकी यात्राके दौरान इसमें दुर्गन्ध पैदा करनेवाला कूड़ा-करकट मिल जाता है तो भी गंगाजलके मौलिक गुण नष्ट नहीं होते हैं। वस्तुतः गंगाजल अपने-आपमें सशक्त गुणोंसे सम्पन्न है।

ज्योतिषशास्त्रमें तीर्थयात्रा एवं गंगास्नानके योग

(श्रीशिवनाथजी पाण्डेय, शास्त्री, एम०ए०)

मनुष्य पूर्वजन्मके संचित कर्मोंकी गठरी लेकर इस धराधामपर आता है। प्रारब्धवशात् उसका जन्म किसी कुल, जातिमें होता है। यद्यपि इस जन्ममें वह कर्म करनेके लिये स्वतन्त्र है तथापि उसे कुछ भोग तो भोगने ही पड़ते हैं। प्रारब्धवशात् भोगे जानेवाले इन्हीं कर्मोंका दिशा-निर्देश करती है—जन्म-पत्रिका। ज्योतिषशास्त्रकी इस विधाके द्वारा भविष्यमें घटनेवाली शुभाशुभ घटनाओंका संकेत मिलता है। जन्म-पत्रिकामें तीर्थयात्रा एवं गंगास्नानके पड़नेवाले कुछ योग ज्योतिर्विदोंद्वारा विरचित विभिन्न ज्योतिष-ग्रन्थोंमें वर्णित हैं। उन्हींमेंसे कतिपय योगोंका समावेश इस लेखमें करनेका प्रयास किया गया है।

तीर्थयात्राके योग

१-भारतीय ज्योतिषमें तीर्थयात्रा आदि धार्मिक कृत्योंके लिये नवम भाव तथा गुरु ग्रहसे प्रमुख रूपसे विचार किया जाता है; क्योंकि नवमको धर्मभाव, पुण्यभाव तथा भाग्यभाव भी कहा जाता है। पुण्य तथा भाग्यसे ही तीर्थयात्राका सौभाग्य प्राप्त होता है।

उदाहरणके लिये भगवान् श्रीरामका ही जन्मांग पर्याप्त होगा।

कर्क लग्नमें जन्म, लग्नमें चन्द्र-गुरु, नवमेश गुरु

अपनी उच्चराशि कर्कमें स्थित होकर प्रथम भावमें बैठा है तथा नवमभाव धर्मस्थानको पूर्णदृष्टिसे देख रहा है। फलतः वनवासके समय भगवान् श्रीरामने भी विविध तीर्थोंका भ्रमण, नदियोंमें स्नान किया था। सन्त, महात्माओं, ऋषियों,

मुनियोंके दर्शनकर उनके सांनिध्यसे पुण्यार्जन किया था। जिन-जिन स्थानोंपर निवास किया, वे सभी तीर्थ बन गये।

वनवासगतो रामो यत्र यत्र व्यवस्थितः।
तानि चोक्तानि तीर्थानि शतमष्टोत्तरं क्षितौ॥

(बृहद्धर्मपुराण, पूर्वखण्ड १४। ३४)

रामेश्वरम्‌में तो श्रीरामने विधिवत् शिवलिंगकी स्थापना भी की थी।

आनन्दरामायणमें तो रावण-वधके पश्चात् प्रायश्चित्त-स्वरूप ब्रह्महत्यासे मुक्त होनेके लिये भगवान् रामके तीर्थयात्राप्रसंगका पूरा एक काण्ड ही है। पुष्पक विमानद्वारा सीता तथा लक्ष्मणसहित विभिन्न तीर्थोंमें जाकर स्नान, दान, पिण्डदान, तर्पण आदि कृत्योंका उल्लेख मिलता है। इस प्रसंगमें भारतके सभी तीर्थोंका वर्णन तथा यात्रा-क्रम भी निर्धारित है। इससे तीर्थोंकी प्राचीनता स्वयंसिद्ध है।

२-गुरु ग्रहको धार्मिक कृत्योंका कारक माना गया है। (कल्याणवर्मा)

३-धार्मिक कार्योंमें मनकी प्रवृत्ति, सौभाग्य, विमलशील, तीर्थयात्रा, पुराणों आदिमें अभिरुचि इन सबका विचार पुण्यालय (नवमभाव)-से किया जाता है। (जातकसंग्रह नवमभाव १)।

४-नवमभावसे तीर्थयात्रा, धर्म आदिका विचार करना चाहिये। (बृहत्पाराशरहोराशास्त्रम्)

५-नवमभावस्थ गुरु अनेक तीर्थोंका यात्राकारक होता है। (गर्गाचार्य)

६-नवमभावस्थ गुरुवाला व्यक्ति भाग्यशाली, शक्तिसम्पन्न, तीर्थयात्रा और अन्य धार्मिक कार्योंमें रुचि रखनेवाला होता है। (जागेश्वर)

७-यदि चन्द्रमासे नवम स्थानपर गुरु स्थित हो तो भी जातक सुमार्गी, देवता तथा गुरुमें भक्ति-भाववाला होता है।

८-'यत्प्रसूतौ नैधनस्थाः सौम्याः सौरिनिरीक्षिताः। तस्य तीर्थान्यनेकानि भवन्त्यत्र न संशयः॥' (होराशास्त्र)

जिसके जन्मांगमें अष्टम भावमें कोई शुभ ग्रह, चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र बैठे हों तथा शनि उन्हें देखता हो तो उसे अनेक तीर्थोंकी प्राप्ति होती है।

९-जातकतत्त्व—जातकतत्त्वके अनुसार तीर्थयात्राके योग इस प्रकार हैं—

१-अष्टम भावमें स्थित बुध शुभ ग्रहोंसे दृष्ट हो।

२-यदि नवम तथा दशम स्थानके स्वामी परस्पर योग करते हों।

३-यदि नवम स्थानपर कई शुभ ग्रहोंकी दृष्टि हो और नवमेश केन्द्र, त्रिकोण या एकादश स्थानपर हो।

४-चन्द्रमासे नवम स्थानका स्वामी यदि केन्द्र स्थानमें हो।

५-चन्द्रमासे नवम स्थानपर यदि कई शुभ ग्रहोंकी दृष्टि हो या वह स्थान शुभग्रहोंसे युक्त हो।

१०-बृहद्यवनजातकके अनुसार—

१-यदि नवम भावमें कर्क राशि हो तो जातक तीर्थका आश्रय लेनेवाला होता है। (नवम भाग, श्लोक ४)

२-यदि नवम भावमें मीन राशि हो तो तीर्थाटनका योग होता है। (नवम भाग, श्लोक १२)

३-यदि नवम भावमें चन्द्र स्थित हो तो श्रेष्ठ तीर्थाटनका योग बनता है।

४-यदि नवमेश चतुर्थ स्थानमें हो तो जातक तीर्थोंका प्रेमी होता है।

गंगास्नानके योग

'गम् गतौ' धातुमें उणादि गन् प्रत्यय, फिर स्त्रीलिंग टाप् होकर गंगा शब्द निष्पन्न होता है। गंगाजी भक्ति और मुक्ति प्रदान करने-करानेवाली हैं। (गमयति प्रापयति ज्ञापयति वा भगवत्पदं या शक्तिः, गम्यते प्राप्यते ज्ञाप्यते मोक्षार्थिभिर्वा।)

गंगाजल तापत्रयका विनाशक भी माना गया है। गंगाजलका उपयोग निम्नलिखित मन्त्रसे ओषधिके रूपमें भी किया जाता है। 'शरीरे जर्जरीभूते व्याधिग्रस्ते कलेवरे। औषधं जाह्नवीतोयं वैद्यो नारायणो हरिः।'

नित्यकर्ममें तो प्रायः सभी हिन्दू स्नानके समय श्रद्धापूर्वक 'गंगे च यमुने चैव' आदि मन्त्रका उच्चारण करते हैं; क्योंकि प्रतिदिन स्नान करते समय इनका नाम स्मरण करना श्रेयस्कर है।

१-भावार्थरत्नाकर (रामानुजाचार्य)-में गंगा-स्नानयोग (प्रकरण १० तीर्थस्नान)

(क) यदि सप्तम, पंचम, नवम और दशम भावके स्वामी और गुरु जलीय राशि (कर्क, वृश्चिक तथा मीन)-में एकत्र हों तो जातकको गंगा आदि पुण्य नदियोंमें स्नानका लाभ मिलेगा।

(ख) मिथुन लग्नमें जन्म लेनेवाले जातकके जन्मांगमें यदि शनि और गुरु नवम भावमें हों तो वे अपनी दशामें गंगास्नान कराते हैं।

(ग) मेष लग्नमें जन्मे जातकके जन्मांगमें यदि शुक्र, गुरु और सूर्य दशम भावमें हों तो वे अपनी दशामें गंगा-स्नान कराते हैं।

(घ) यदि पंचम, सप्तम और नवम भावके स्वामी अपनी-अपनी राशियोंमें उन्हीं भावोंमें स्थित हों तो एककी महादशा और दूसरेकी अन्तर्दशामें गंगा-स्नानका फल मिलता है।

२-जातकपारिजात (दैवज्ञ वैद्यनाथ)-के अनुसार गंगा-स्नानके योग—

(क) मानेश्वरे शुक्रयुते च केन्द्रे
तुङ्गस्थिते तादृशतोयपूतः।
व्यये बुधे तद्भवनाधिपे वा
स्वोच्चान्विते तादृशपुण्यभाक् स्यात्॥

१-यदि दशमेश केन्द्रमें अपनी उच्च राशिका हो तथा शुक्रके साथ हो तो जातकको गंगास्नानका पुण्य मिलता है।

२-द्वादश भावमें बुध स्वराशि (मिथुन, कन्या) या उच्चराशि (कन्या)-में स्थित हो तो भी यही फल मिलता है।

(ख) 'चन्द्रे कर्मणि जाह्नवीसलिलतःपूतो हि पूर्णद्युतौ।' (जा०पा० १५।४)

यदि पूर्णचन्द्र दशमभावमें स्थित हो तो गंगास्नानका पुण्य मिलता है।

३-जातकतत्त्वके अनुसार गंगा-स्नानके योग—

(१) यदि दशम स्थानमें राहु या सूर्य हो।

(२) दशम स्थानमें पूर्ण चन्द्र तथा गुरु हो।

(३) दशम स्थानमें गुरु हो।

(४) केन्द्रमें गुरु और शुक्रकी युति हो।

(५) द्वितीयेश, गुरु तथा शुक्र अपनी-अपनी उच्च राशियोंमें स्थित हों।

(६) बुध जिस राशिमें है, उसका स्वामी द्वादश भावमें हो।

(७) कर्क, वृश्चिक अथवा मीन राशिका चन्द्रमा तृतीय स्थानमें स्थित हो।

(८) केन्द्रगत नवम स्थानका स्वामी कर्क, वृश्चिक अथवा मीन राशिमें हो तथा बुधसे दृष्ट हो।

(९) नवम स्थानको गुरु देखता हो।

४-सर्वार्थचिन्तामणिके अनुसार गंगास्नानके योग—

(१) यदि बुध, गुरु, शुक्र नाशस्थान (अष्टमभाव)-में हों अथवा ये जिस भावमें स्थित हैं, उस भावके स्वामी अष्टम भावमें हों तो भागीरथीके स्नान-फलको देनेवाले होते हैं।

(२) राहु अथवा सूर्य दशम स्थानमें हों।

(३) दशम भावमें मीन राशि शुभ ग्रह अथवा मंगलसे युक्त हो।

(४) दशम भावमें कर्क, वृश्चिक अथवा मीन राशिमें पूर्ण चन्द्र गुरुके साथ हो।

(५) दशम स्थानमें गुरु, शुक्र हों अथवा अपनी उच्चराशिमें केन्द्रके किसी भावमें हों।

(६) द्वितीय भावमें गुरु, शुक्रकी युति हो।

(७) बुध बारहवें भावमें हो अथवा व्ययेश अपनी उच्च राशिमें हो।

(८) कर्क, वृश्चिक अथवा मीन राशिगत चन्द्र तीसरे भावमें शुभग्रहसे युक्त हो।

(९) दशमेश जलराशि (कर्क, वृश्चिक अथवा मीन) केन्द्रमें हो और उसे शुभ ग्रह देखते हों तो गंगा आदिके पवित्रजलसे जातक पवित्र होता है।

यह नहीं समझना चाहिये कि इन योगोंके बिना तीर्थयात्रा अथवा गंगा-स्नानका सौभाग्य नहीं मिलेगा। ये कुछ योग हैं, जिनका विश्लेषण किया गया। इसके अतिरिक्त भी अन्य कई योग और हो सकते हैं।

पंडितराज जगन्नाथकी गंगोपासना

(डॉ० श्रीशशिधरजी शर्मा, वाचस्पति, आचार्य, एम०ए० (हि०, सं०), डी-लिट०)

सामान्य परिचय—यद्यपि संस्कृत-साहित्यके वैदिक एवं पुराणवाङ्मयमें गंगा-सम्बन्धी साहित्य बहुत विशाल है, तथापि पंडितराज श्रीजगन्नाथजीकी गंगालहरीकी प्रचार-प्रसिद्धि अद्वितीय है। उसकी स्थितिसे गंगासाहित्यकी सौरभता मानो सुवर्णमय कलश-सी है। सामान्य भक्ति-साहित्यमें भी इस 'लहरी' का स्थान नितान्त सम्मान्य है, पर इतना ही नहीं, उनका यह उच्छलित भक्तिविगलित हृदयका रस रसगंगाधरमें भी खूब प्रविष्ट हुआ, जो अलंकारवाङ्मयमें एक मानदण्डके रूपमें प्रतिष्ठित हुआ।

गंगाका स्वरूप—इस सन्दर्भमें सर्वप्रथम देखने-योग्य है—श्रीगंगाका स्वरूप। ऋतम्भरा-प्रज्ञासम्भृत प्राचीन महर्षियोंने श्रीगंगाको कभी सामान्य नदी नहीं समझा। यह साक्षात् द्रवीभूत ब्रह्म[१] चैतन्यरस है। गंगा तो ब्रह्मा, विष्णु, महेशकी भी आराधनीया, वेदवेद्या एवं परम रहस्यरूपा हैं। पुराणवाङ्मय इस सम्बन्धमें एक स्वरसे मुखरित है। इसीलिये तो पंडितराजने लिखा है—

समृद्धं सौभाग्यं सकलवसुधायाः किमपि तन्-
महैश्वर्यं लीलाजनितजगतः खंडपरशोः।
श्रुतीनां सर्वस्वं सुकृतमथ मूर्तं सुमनसां
सुधासाम्राज्यं ते सलिलमशिवं नः शमयतु[२]॥
(गंगालहरी १, रसगंगाधर)

पंडितराज श्रीगंगाजीसे प्रार्थना करते हैं कि 'भगवति! आपका जल सम्पूर्ण वसुन्धराका वर्णनातीत समृद्ध सौभाग्य है। यह बिना प्रयासके संसारकी सृष्टि करनेवाले महादेवजीका महान् वैभव और वेदोंका सर्वस्व है। यह सुधापूर्ण साम्राज्य और देवगणोंका मूर्तिमान् पुण्य है। यह जल हमारे अमंगलका शमन करे।'

उनकी गंगामें और कितनी तथा कैसी दृष्टि है—यह देखना भी कम रुचिकर नहीं। यथा—

नरैर्वरगतिप्रदेत्यथ सुरैः स्वकीयापगे-
त्युदारतरसिद्धिदेत्यखिलसिद्धसंघैरपि ।
हरेस्तनुरिति श्रिता मुनिभिरस्तसङ्गैरियं
तनोतु मम शन्तनोः सपदि शन्तनोरङ्गना[३]॥
(रसगंगाधर)

अर्थात् गंगाजी—मनुष्योंद्वारा 'उनको उत्तम गति (मुक्ति) देनेवाली हैं—इस कारणसे, देवताओंद्वारा 'उनकी अपनी नदी है'—इस रूपमें, समस्त सिद्धसमूहोंद्वारा 'उन्हें बहुत बड़ी सिद्धि देनेवाली है'—इस रूपमें और अनासक्त मुनियोंद्वारा 'भगवान् विष्णुका श्रीविग्रह ही है'—इस रूपमें 'सेवित होनेवाली शन्तनुकी पत्नी (भीष्मकी माता) गंगा मेरी देहका कल्याण करें।'

सबकी शरण—श्रीगंगाजीके प्रति ये भावनाएँ क्यों न हों; क्योंकि वे सबके लिये शरणदात्री हैं। अत्यधिक तापवाले, करोड़ों पाप किये हुए रोगोंसे

---

१. ब्रह्मद्रवीति विख्याते पापं मे हर जाह्नवि। (पद्मपुराण)

२. यहाँ अनुपात (अनुक्त) अनुगामी साधारण धर्मके स्थलमें भी रूपककी स्थितिकी सिद्धिके निमित्त प्रस्तुत उदाहरण दिया गया है। उपमेय गंगाजल और उसके पाँच उपमानोंमें समान धर्म क्या है? गंगाजल ही वसुधाका सौभाग्य मुख्य है। जहाँ-जहाँ सौभाग्यका अभाव है, वहाँ-वहाँ उससे सौभाग्यकी प्राप्ति है। गंगाजल और महादेवके महैश्वर्यमें साधर्म्य और अति गोपनीयत्व है तथा गंगाजल एवं सुकृतके साधर्म्यमें सर्वाधिक सुखजनकता है तो सुधासाम्राज्य और गंगाजलके साधर्म्यमें नीच-ऊँच प्राणिमात्रके जरा-मरण एवं संसृति-हरणकी सामर्थ्य है। ये सभी धर्म अनुपात और अनुगामी हैं—

'अत्र सौभाग्यभागीरथ्योः स्वाभावव्यापकदौर्भाग्यत्वपरमोत्कर्षाधायकत्वादिरनुपातः प्रतीयमानो धर्मः। एवमीश्वरासाधारणधर्मत्वपरमगोप्यत्व-निरतिशयसुखजनकत्वान्यापामरसकलजनजरामृत्युहरणमक्षमत्वं चोत्तरोत्तरारोपेष्वनुगामीति।' (रसगंगाधर)

३. यहाँ उल्लेख नामक अलंकारका उदाहरण है। जहाँ एक ही वस्तुको निमित्तवश अनेक ग्रहीता अनेक प्रकारसे गृहीत करें, वहाँ यह अलंकार होता है—'एकस्य वस्तुनो निमित्तवशाद् यदनेकैर्ग्रहीतृभिरनेकप्रकारकं ग्रहणं तदुल्लेखः।' (रसगंगाधर)

अपनी-अपनी लाभेच्छा और रुचिके कारण सुर-नर-सिद्ध-मुनियोंद्वारा श्रीगंगाके अनेकविध ग्रहण उनमें रतिभावके पोषक होते हुए शुद्ध उल्लेखका उदाहरण बनाते हैं।

जर्जरित, संसारके दुःखोंसे विताडित—ये सभी लहराती हुई गंगाजीको देखकर सुखी होते हैं—

अनल्पतापाः कृतकोटिपापा
गदैकशीर्णा भवदुःखजीर्णाः।
विलोक्य गङ्गां विचलत्तरङ्गा-
ममी समस्ताः सुखिनो भवन्ति[१]॥

अन्तिम आश्रय—केवल इतना ही नहीं कि गंगा अपने दर्शनोंसे सबको आह्लादित करती हैं, अपितु वे उन्हें भी सहारा देती हैं, जिन्हें सब तीर्थोंसे जवाब मिल जाता है, जिनके पाप दुरन्त हैं और जिनका प्रायश्चित्त असम्भव है—

कृतक्षुद्राघौघानथ झटिति संतप्तमनसः
समुद्धर्तुं सन्ति त्रिभुवनतले तीर्थनिवहाः।
अपि प्रायश्चित्तप्रसरणपथातीतचरितान्
नरानूरीकर्तुं त्वमिव जननि त्वं विजयसे[२]॥
(गंगालहरी १७)

'माँ गंगे! छोटे-छोटे पापसमूहोंको करनेके अनन्तर जिनके हृदयमें पश्चात्तापका अनुभव होता है, ऐसे लोगोंका उद्धार करनेके लिये त्रिलोकीमें तीर्थोंके ढेर लगे हैं, किंतु जिनके आचरण विस्तृत प्रायश्चित्तोंकी पहुँचसे परे हैं, उन महापातकियोंको भी अपना बनानेवाली तो आप ही हैं। इस विषयमें आपकी तुलना दूसरेसे नहीं हो सकती—इसमें आप ही सबसे बढ़कर हैं।

और भी देखिये। जब किसीको सभी देवता त्याग देते हैं, तब श्रीगंगाजी ही उसकी रक्षा करती हैं—

जडानन्धान् पङ्गून् प्रकृतिबधिरानुक्तिविकलान्
ग्रहग्रस्तानस्ताखिलदुरितनिस्तारसरणीन्।
निलिम्पैर्निर्मुक्तानपि च निरयान्तर्निपततो
नरानम्ब त्रातुं त्वमिह परमं भेषजमसि॥
(गंगालहरी १५)

'माँ! जो ज्ञानरहित, अन्धे, लँगड़े, जन्मसे ही बहरे, गूँगे और ग्रहोंसे ग्रस्त हैं, जिनके सम्पूर्ण पापोंके विनाशका मार्ग (प्रायश्चित्त आदि) समाप्त हो चुका है, जिन्हें देवता भी छोड़ चुके हैं और जो नरकमें पड़नेवाले ही हैं, उन समस्त रोगियोंकी रक्षाके लिये आप सर्वोपरि औषध हैं।'

अनुपमेया—इसी दृष्टिसे उन्होंने सिद्धान्तकी घोषणा की कि इतने बड़े विश्वमें तीर्थ जितने हैं—सभी पवित्र हैं; पर तात्त्विक दृष्टिसे विचार करनेपर तो गंगादेवी गंगादेवी ही हैं। अर्थात् उनकी तुलना कोई नहीं कर सकता—

इयति प्रपञ्चविषये तीर्थानि कियन्ति सन्ति पुण्यानि।
परमार्थतो विचारे देवी गङ्गा तु गङ्गेव॥
(रसगंगाधर)

अन्ततः तीर्थोंकी महिमा नदियोंसे होती है, पर गंगाकी उपलब्धियोंतक अंशतः भी पहुँचनेवाली दूसरी नदी है ही कौन?

नगेभ्यो यान्तीनां कथय तटिनीनां कतमया
पुराणां संहर्तुः सुरधुनि कपर्दोऽधिरुरुहे।
कया च श्रीभर्तुः पदकमलप्रक्षालिसलिलै-
स्तुलालेशो यस्यां तव जननि दीयेत कविभिः[३]॥
(रसगंगाधर)

१-यहाँ भी उल्लेखालंकार ही है; क्योंकि पूर्वार्धमें उल्लिखित अत्यधिक संतप्तों, करोड़ों पापकर्मियों, रोग-गलितांगों तथा काम-क्रोधादिजन्य भवदुःखजर्जरितोंको श्रीगंगाके दर्शनसे सुख-प्राप्तिके वर्णनसे गंगाजी तापनाशिनी, पापनाशिनी, रोगनाशिनी एवं भवनाशिनी हैं, ऐसे चतुर्विध ज्ञानोंकी ध्वनि होती है और एतादृश ज्ञानोंका समूह ही 'उल्लेख' होता है।

२-यहाँ 'अनन्वय' अलंकार है। जिस वर्णनमें सदृशान्तरका व्यवच्छेद पर्यवसित होता है और जिसमें उपमान तथा उपमेय अभिन्न होते हैं, वह अनन्वय कहलाता है—जैसे 'भरत भरत सम जानि।' 'द्वितीयसदृशव्यवच्छेदफलकवर्णनविषयीभूतं यदेकोपमानोपमेयकं सादृश्यं तदनन्वयः।' यहाँ 'विषय' रूप धर्म अनुगामी है।

३. इस श्लोकके उत्तरार्धका वाच्यार्थ है—'जननि! भला तुमसे भिन्न किस नदीने अपनी जलधारासे श्रीपतिका चरणकमल पखारा है, जिसके साथ कविगण तुम्हारी तुलनाका अंश भी दे सकें? इससे व्यंजित होता है कि तुमने तो अपनी सलिलराशिसे श्रीपतिके चरणकमल धोये ही हैं, अतः तुम्हारे साथ तुम्हारी ही तुलना अवश्य की जा सकती है।' यह अनन्वयरूप है। इसकी परिणति गंगाकी निरुपमतामें होती है। सुतराम् अनन्वय यहाँ व्यंग्य है और 'इतर' पदपर टिका है—

'अत्र कया वा त्वदितरया श्रीभर्तुः पदं सलिलैरक्षालि यस्यामितरस्यां कविभिस्तव तुलालेशोऽपि दीयेतेत्यर्थेन त्वयि पुनः सलिलक्षालितश्रीरमणचरणायां तव तुला दीयेतैवेत्यर्थोऽनन्वयात्मा श्रीगंगागतनिरुपमत्वपर्यवसायी हीतरपदमहिम्ना व्यज्यते।' (रसगंगाधर)

'माँ गंगे! पर्वतोंसे निकलकर प्रवाहित होती हुई नदियोंमेंसे तुम्हारे सिवा किस नदीने त्रिपुरारिके जटाजूटपर आरोहण किया है? और किसने श्रीपतिके चरणकमलको अपनी जलधारासे पखारा है कि कविगण जिसके साथ तुम्हारी उपमाका अंश भी दे सकें?'

रमणीया भी पावन भी—कुछ वस्तुएँ नयनाभिराम या मनोऽभिराम होती हुई भी पावन नहीं होतीं। कुछ पावन ही होती हैं, अभिराम नहीं होतीं; पर गंगा दोनों हैं। फिर है भी ऐसे कि दूसरा कोई उस-जैसा नहीं। वह अपनी उपमा आप ही है। तभी तो पण्डितराजने लिखा—'गंगा गंगाके सदृश ही रमणीय है, गंगा गंगाके समान ही पावन है। ऐसे ही जैसे हरिके सदृश बन्धु केवल हरि हैं और गुरुवत् आराधनीय केवल गुरु हैं'—

गङ्गा हृद्या यथा गङ्गा गङ्गा गङ्गेव पावनी।
हरिणा सदृशो बन्धुर्हरितुल्यः परो हरिः॥
गुरुवद्गुरुराराध्यो गुरुवद् गौरवं गुरोः[1]।

(रसगंगाधर)

गंगा जब जागरूक हैं, तब दूसरे देवगण उनके भरोसे निश्चिन्त रह सकते हैं; प्रायश्चित्त, तप, दान सब गौण हैं—

विधत्तां निःशङ्कं निरवधि समाधिं विधिरहो
सुखं शेषे शेतां हरिरविरतं नृत्यतु हरः।
कृतं प्रायश्चित्तैरलमथ तपोदानयजनैः
सवित्री कामानां यदि जगति जागर्ति भवती[2]॥

(रसगंगाधर)

'ब्रह्माजी सब चिन्ता छोड़कर अनन्तकालतक समाधि लगाये रहें, हरि शेषनागपर आनन्दपूर्वक सोते रहें, शिव भी निरन्तर ताण्डवमें लगे रहें; क्योंकि उनका सारा कर्तव्य (लोक-कल्याण) श्रीगंगाजी ही कर देंगी। अब प्रायश्चित्त भी अनावश्यक हैं, तप, दान, यज्ञ भी रखे रहें—यदि सब कामनाओंको देनेवाली तू (शरणागतोंकी रक्षाके लिये) जाग रही है।'

भगवती गंगाकी श्रीविष्णु-चरणोंसे उत्पत्ति

पुराणोंके अनुसार गंगाजीका उद्भव श्रीनारायणके चरणकमलोंसे हुआ है। पण्डितराजने इसपर कल्पना की कि वह श्रीमन्नारायणके कमलतुल्य चरणोंकी नखपंक्तिके समान हैं। उनकी प्रार्थना है कि निरतिशय निर्मल भीष्मपितामहकी जननी देवी गंगा मेरी आँखोंको शीतल करें—

हरिचरणकमलनखगणकिरणश्रेणीव निर्मला नितराम्।
शिशिरयतु लोचनं मे देवव्रतपुत्रिणी देवी॥

(रसगंगाधर)

श्रीविष्णुके चरणकमलके नाखूनोंकी कान्तिकी धारा-सी निकल रही है। अपने भावना-नयनोंसे उसे देखकर पण्डितराजको उन श्रीचरणोंकी उस समयकी शोभा स्मरण हो आयी, जब उनसे गंगा-प्रवाह निकल रहा था। उन्होंने लिखा—

नखकिरणपरम्पराभिरामं
किमपि पदाम्बुरुहद्वयं मुरारेः।
अभिनवसुरदीर्घिकाप्रवाह-
प्रकरपरीतमिव स्फुटं चकासे॥

(रसगंगाधर)

'प्रभुका अवर्णनीय वह चरणकमल-युगल उनके नाखूनोंकी किरणोंकी श्रेणीसे रमणीय बनकर शोभित हुआ, जैसे (जब उससे श्रीगंगा निकल रही थीं उस समय) नवीन गंगाधाराओंसे शोभित होता था।'

गंगाजीका स्वाभाविक सामर्थ्य

ऐसा होनेपर भी श्रीगंगा-सलिलकी जो अद्भुत पावनी क्षमता है, वह तो सम्भूत ही मानना चाहिये। अवश्य ही कुछ लोगोंके अनुसार श्रीहरिके चरणकी या

---

१. यहाँ प्रथम पादमें श्रौती वाक्यगता पूर्णा अनन्वय है तो दूसरेमें श्रौती समासगता पूर्णोपमा है। तृतीयमें आर्थी वाक्यगत पूर्णा है, चतुर्थमें समासगतार्थी पूर्णा, पाँचवेंमें आर्थी तद्धितगता पूर्णा, तो छठेमें श्रौती तद्धितगता पूर्णा है।

२. प्राचीनसम्मत दस अर्थगुणोंमेंसे यह माधुर्यका दृष्टान्त है। जब एक ही उक्तिको प्रकारान्तरसे पुनः कहा जाय, तब 'माधुर्य' गुण होता है—एकस्या एवोक्तेर्भङ्ग्यन्तरेण पुनः कथनात्मकमुक्तिवैचित्र्यं माधुर्यम्। (रसगंगाधर)

यहाँ ब्रह्मादिक देवता या प्रायश्चित्तादि विधियाँ निष्प्रयोजन हैं, यह एक ही बात अनेक प्रकारसे कही गयी है। नहीं तो 'आवीकृतत्व' नामक दोष आ जाता।

श्रीहरके सिरकी संगतिसे उसमें महिमा आयी है, किंतु दूसरोंके अनुसार तो श्रीगंगाने ही हरि और हरकी महिमा बढ़ायी है। पण्डितराजने लिखा है कि 'हे देवनदि! कुछ लोग नारायणके चरणनखके संसर्गके कारण, दूसरे शिवजीके सिरपर रहनेके कारण आपको पवित्रतम कहते हैं। पर अन्य जन तो तत्त्वतः आप ही ऐसी वस्तु हैं, इस कारण आपको पवित्रतम मानते हैं'—

हरिचरणनखरसङ्गादेके　　हरमूर्धस्थितेरन्ये।
त्वां प्राहुः पुण्यतमामपरे सुरतटिनि वस्तुमाहात्म्यात्॥

(रसगंगाधर)

गंगासेवन

जो जन सदा गंगाजल पान करते हैं, पण्डितराजकी दृष्टिमें वे तो पृथ्वीपर भी देवताओंकी तरह निवास करते हैं—

निरपायं सुधापायं पयस्तव पिबन्ति ये।
जह्नुजे निर्जरावासं वसन्ति भुवि ते नराः॥

(रसगंगाधर)

पंडितराजने अपनेको सर्वात्मा श्रीगंगाके अनुग्रहपर छोड़ दिया था; क्योंकि वे भलीभाँति समझते थे कि उनके अतिरिक्त इनका उद्धार कोई नहीं कर सकता। अपने कल्मषोंकी निबिडता उन्हें खूब विदित थी। वे जानते थे कि यह बात अन्य देवताओंके वशकी नहीं है। वे तो गंगाजीको भी सावधान करते हैं कि इनके उद्धारके लिये उन्हें भी पूरी तैयारी करनी पड़ेगी। यह कोई सरल काम नहीं है। वे कहते हैं—

बधान द्रागेव द्रढिमरमणीयं परिकरं
किरीटे बालेन्दुं नियमय पुनः पन्नगगणैः।
न कुर्यास्त्वं हेलामितरजनसाधारणतया
जगन्नाथस्यायं सुरधुनि समुद्धारसमयः॥

(रसगंगाधर तथा गंगालहरी ४७)

'हे देवधुनि देवि गंगे! दूसरे साधारण मनुष्योंके समान समझकर तुम मेरी उपेक्षा न करना; क्योंकि यह जगन्नाथके उद्धार करनेका समय है, अतः तुरंत दृढ़तासे अपनी मनोहर रमणीय रूप फेंट बाँधकर कमर कस लो तथा मुकुटपर बालचन्द्रमाको भी सर्पसमूहोंसे कसकर बाँध लो।'

इस प्रकार कहीं-कहीं उनके एक ही श्लोकमें गंगालहरीमें और 'रसगंगाधर' में भी और कहीं भिन्न-भिन्न श्लोकोंमें गंगाकी महिमाके बहुत-से दृष्टान्त भरे पड़े हैं। पण्डितराजके इस ग्रन्थके तीन भाग लुप्त एवं अप्राप्य हैं, यदि वे सब मिलते तो पता नहीं कितने अन्य और भाव सामने आते। यहाँ केवल थोड़ा दिग्दर्शनमात्र कराया गया है। विस्तृत जानकारीके लिये विद्वान् एवं श्रद्धालु पाठक स्वयं उन ग्रन्थोंका पीयूषलहरी व्याख्यादिसहित मननकर लाभ उठा सकते हैं।

रंगीन चित्र पृ० ८ का परिचय—

माता गंगाका सर्वभूतहितैषिणी स्वरूप

महाभारतकी एक कथा है कि परम पराक्रमी भीष्म काशिराजकी पुत्रियों—अम्बा, अम्बिका और अम्बालिकाका हस्तिनापुरनरेश विचित्रवीर्यके लिये स्वयंवर-सभासे हरण कर लाये थे। उनमेंसे अम्बिका और अम्बालिकाने विचित्रवीर्यका वरण कर लिया, परंतु अम्बाने कहा कि वह शाल्वनरेशके प्रति अनुराग रखती है। तब भीष्मने उसे आदरपूर्वक शाल्वनरेशके पास भिजवा दिया, परंतु शाल्वने उसे भीष्मद्वारा जीती गयी कहकर अस्वीकृत कर दिया। अम्बाने पुनः हस्तिनापुर आकर भीष्मसे पाणिग्रहणका आग्रह किया, जिसे उन्होंने अपने आजीवन ब्रह्मचर्यव्रतके कारण अस्वीकृत कर दिया। इस बातकी शिकायत अम्बाने भीष्मके गुरु परशुरामजीसे की। इसपर परशुरामजीने भीष्मसे अम्बाको स्वीकार करने अथवा युद्ध करनेका आदेश दिया। भीष्मके अम्बाको स्वीकार न करनेसे क्रुद्ध परशुरामजीने भीष्मसे घोर युद्ध किया, जिसमें ब्रह्मास्त्रसहित अनेक दिव्यास्त्रोंका प्रयोग हुआ, जिससे समस्त सृष्टिके लिये संकट उत्पन्न हो गया। इस अवसर सर्वभूतहितैषिणी माता गंगाने साक्षात् प्रकट होकर भीष्मको युद्ध करनेसे रोका।

भारतीय मूर्तिकलामें देवनदी गंगाका शिल्पांकन

(प्रो० डॉ० ए० एल० श्रीवास्तव)

भारतीय संस्कृतिमें नदियोंको माताके समान माना गया है; क्योंकि वे प्राणिमात्रका पोषण और संवर्धन करती हैं। इतना ही नहीं, उन्हें देवीतुल्य पूजनीया और आदरणीया माँ भी समझा गया है। भारतीय नदियोंमें गंगाको सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। इसे देवनदी भी कहा गया है।

हिमालयकी कोखसे जन्म लेनेके कारण गंगाको हिमालयसुता कहते हैं। गंगोत्रीमें गोमुखसे प्रकट होकर मन्दाकिनी, अलकनन्दा आदि नदियोंसे मिलकर हरिद्वारमें गंगा अपने पूर्ण नदीस्वरूपमें आ जाती हैं। इसीलिये हरिद्वारको गंगाद्वार भी कहा जाता है। प्रयागमें यमुना और अदृश्य सरस्वतीसे मिलकर त्रिवेणी तीर्थ बनाती हुई गंगा बंगालमें ब्रह्मपुत्रसे मिलकर पद्मा और मेघना नामसे सागरमें जा मिलती हैं। इस स्थानको गंगासागर कहते हैं। उद्गमसे लेकर सागरपर्यन्त गंगातटपर अनेक तीर्थ हैं, जहाँ धार्मिक विश्वाससे हजारों यात्री आकर गंगा-दर्शन, मार्जन और स्नानसे अपने जीवनको पापमुक्त बनाते हैं। कहा भी गया है—'गङ्गे तव दर्शनात् मुक्तिः।'

उद्भवसे लेकर सागर-मिलनतक गंगाके कई नाम हैं, जो विभिन्न पौराणिक कथाओंसे सम्बद्ध हैं। सगर-नरेशके सौवें अश्वमेधयज्ञके अश्वके अन्वेषणके क्रममें सगरपुत्रोंद्वारा तप-भंग होनेसे क्रुद्ध हुए कपिलमुनिने शाप देकर सगरके सभी साठ हजार पुत्रोंको भस्म कर दिया था। उसी वंशमें उत्पन्न राजा भगीरथ घोर तपस्या करके स्वर्गसे गंगाको पृथ्वीपर लाये और गंगाके पावन जलसे अपने सभी पूर्वजोंको मोक्ष दिलाया। इसीलिये गंगाको भागीरथी नाम मिला। पौराणिक आख्यान है कि स्वर्गतक उठे त्रिविक्रम (वामन-विष्णु)-के पैरके अँगूठेको ब्रह्माने देवनदीके जलसे पखारा था, अस्तु उसे विष्णुपदी नाम मिला। भगीरथकी तपस्यासे प्रसन्न होकर गंगाने भूतलपर आना तो स्वीकार कर लिया, पर उनके वेग-प्रवाहसे पृथ्वीपर संकट न आये, इसलिये भगीरथने शिवकी आराधना करके उनसे आश्वासन ले लिया कि वे गंगाके प्रवाहको अपनी जटाओंमें लेकर कम कर देंगे। शिवकी जटाओंमें विश्राम करनेके कारण गंगा शिव-पत्नी भी कहलायीं।

महाभागवतमें गंगाके १०८ नाम गिनाये गये हैं और कहा गया है कि हजारों नामोंमें १०८ नाम स्मरणीय हैं। इनमें भी दश नाम गंगाकी महिमामें गिनाये गये हैं—

ॐ गङ्गा त्रिपथगा देवी शम्भुमौलिविहारिणी।
जाह्नवी पापहन्त्री च महापातकनाशिनी॥
पतितोद्धारिणी स्रोतस्वती परमवेगिनी।
विष्णुपादाब्जसम्भूता विष्णुदेहकृतालया॥

गंगा स्वर्ग, पृथ्वी और सागर तीनोंमें होनेसे त्रिपथगा कहलायीं। वह स्वर्गमें मन्दाकिनी, पृथ्वीपर भागीरथी और सागरमें भोगवतीके नामसे जानी जाती हैं। वायुपुराण (४७।२६—४१; ७७।१११)-के अनुसार गंगा अन्तरिक्ष, द्युलोक एवं भूमि—तीनों स्थानोंमें प्रवाहित होनेके कारण त्रिपथगा कहलायीं। त्रिपथगा नामके इस रूपको रामायण, महाभारत, अमरकोश, शब्दकल्पद्रुम आदि ग्रन्थोंमें प्रतिपादित किया गया है।

गंगा-दशमी पर्व या गंगा-दशहरा देवनदी गंगाके प्राकट्य दिवसके रूपमें मनाया जाता है। ज्येष्ठ मासके शुक्ल पक्षकी दशमीको गंगाका प्रादुर्भाव समस्त प्राणियोंके कल्याणके लिये हुआ था।

'गंगा सर्वत्र सुलभा' उक्तिके माध्यमसे यह पर्व सभी नदियों और उनके जलको आदर देनेके लिये, उनके संरक्षण और संवर्धनके संकल्पका भी अवसर प्रदान करता है। शंकराचार्यकृत गंगाष्टकमें गंगाकी 'सकलकलुषभङ्गे स्वर्गसोपानसङ्गे तरलतरतरङ्गे देवि गङ्गे प्रसीद' कहकर

प्रार्थना की गयी है। कूर्मपुराणके अनुसार, गंगामें जो स्नान करते हैं, वे स्वर्ग जाते हैं और आवागमन-चक्रसे मुक्त हो जाते हैं, उनका पुनर्जन्म नहीं होता है—'**अत्र स्नात्वा दिवं यान्ति ये मृतास्तेऽपुनर्भवाः**'। स्कन्दपुराणमें कहा गया है—मधुमास-जैसा कोई मास नहीं, कृतयुगके समान कोई युग नहीं, वेदके समान कोई शास्त्र नहीं और गंगाके समान कोई तीर्थ नहीं है—

न माधवसमो मासो न कृतेन समं युगम्।
न च वेदसमं शास्त्रं न तीर्थं गङ्गया समम्॥

देव-दर्शनके लिये मन्दिरमें प्रवेश करनेसे पहले दर्शनार्थीको पवित्र जलमें स्नानकी परम्परा बड़ी पुरानी है। किंतु सभी मन्दिरोंके समीप पवित्र जल (नदी अथवा सरोवर)-की उपस्थिति न होनेपर सोचा गया कि मन्दिरके प्रवेशद्वारके दोनों पक्खोंपर पवित्र नदियों—गंगा और यमुनाकी मूर्तियाँ स्थापित की जायँ ताकि उनके दर्शनसे पवित्र होकर दर्शनार्थी मन्दिरमें प्रवेश करे। गुप्तकालमें गंगा और यमुनाकी मूर्तियोंको प्रवेशद्वारके पक्खोंपर स्थापित करनेकी परम्परा रूढ़ हो गयी थी। उस समय उन नदियोंके वाहन भी सुनिश्चित हो गये

गंगा एवं यमुनाकी मृण्मय मूर्तियाँ

थे—मकरवाहिनी गंगा और कच्छपवाहिनी यमुना। ऐसा इसलिये निर्धारित किया गया, क्योंकि गंगानदीमें मकर और यमुनामें कच्छप पाये जाते थे।

गंगा-यमुनाके इन वाहनोंके आधारपर कतिपय विद्वान् गुप्तकालसे पहले बनी कुछ मूर्तियोंकी पहचान गंगा और यमुनासे करते हैं। कुछ विद्वानोंने तो इन नदी-देवियोंके अंकन हड़प्पाकालीन मृण्मुद्राओंपर स्वीकार करनेकी चेष्टा की है, किंतु शुंगकालीन भरहुत और साँची-शिल्पमें कुछ अंकनोंमें गंगा और यमुनाका अंकन स्वीकार्य हो सकता है। मकरासीन होनेके कारण सुदर्शना यक्षीको कथमपि गंगा माना जा सकता है। साँचीके स्तूप सं० २ के वेदिका-स्तम्भ सं० ८८ और ७१ पर क्रमशः मकर और कच्छपके मुखसे निःसृत पद्मलतापर एक-एक पद्महस्ता देवी कमलगट्टेपर बैठी हैं और दूसरे स्तम्भपर गजलक्ष्मी उत्कीर्ण हैं। वाहनके आधारपर यह पहचान विचारणीय है।

अमरावती शिल्पके एक फलकमें नागराजके दोनों पार्श्वोंमें एक-एक नारी तश्तरी और जलपात्र लिये खड़ी हैं और दोनों मकरारूढ़ हैं। प्रारम्भिक गुप्तकालीन बाघकी गुफा सं० ४ के प्रवेशद्वारके दोनों पक्खोंपर मकरवाहिनी नारियोंका अंकन है। मध्यप्रदेशकी उदयगिरिकी

मकरवाहिनी गंगा

भी कुछ गुफाओं (सं० ३, ५, ६ और ९)-में दोनों पक्खोंपर मकरवाहिनी देवियाँ ही उत्कीर्ण हैं और इन्हें ही गंगा तथा यमुना माना गया, किंतु अजन्ताकी गुफा

सं० २० के प्रवेशद्वारपर एक ओर मकरवाहिनी और दूसरी ओर कच्छपवाहिनी उकेरी गयी हैं। वस्तुतः प्रारम्भमें वाहनोंके अंकनमें यत्किंचित् भ्रमात्मक स्थिति रही, किंतु कालान्तरमें गंगाका मकर और यमुनाका कच्छप वाहन सुनिश्चित हो गया, जो मध्यकालपर्यन्त कालान्तरमें पाये गये हैं।

उत्तरप्रदेश

उत्तरप्रदेशमें अहिच्छत्र गुप्तकालीन कलाका एक प्रसिद्ध केन्द्र था। यहाँ एक ऊँचे अधिष्ठानपर एक शिव-मन्दिर था, जिसके गर्भगृहका शिवलिंग अब भी अपने स्थानपर है। लेखकने उसे १९८६ ई० में स्वयं देखा था। इस मन्दिरकी भित्तियोंपर बड़े-बड़े मृत्फलक जड़े थे, जिनमें शिवके विविध रूपके अंकन थे। इस मन्दिरके प्रवेशद्वारके पक्खोंपर विशाल आदमकद मकरवाहिनी गंगा और कच्छपवाहिनी यमुनाकी मूर्तियाँ स्थापित थीं। गंगा-यमुनाकी ये मृण्मूर्तियाँ अन्य मृत्फलकोंके साथ सम्प्रति नई दिल्लीके राष्ट्रीय संग्रहालयमें संरक्षित हैं। दोनों नदी देवियोंके स्कन्धतक उठे एक हाथमें जलकलश है, जो उन्हें नदीकी पहचान देता है। दोनों मूर्तियाँ अलंकृत हैं। उनकी साड़ीकी सलवटें दर्शनीय हैं। गंगा, यमुना तथा उनकी छत्रधारिणी परिचारिकाओंके स्तनपट्ट कालिदासके वर्णनके अनुरूप जान पड़ते हैं।

मध्यप्रदेश

मध्यप्रदेशमें उदयगिरिकी वराह गुफामें भित्तिपर गंगा और यमुनाको क्रमशः मकर और कच्छपपर जलकुम्भ लिये हुए प्रवाहित नदियोंके बीच सागरतक जाते हुए अंकित किया गया है। दोनों नदियाँ पहले एक संग मिलती हैं और फिर सागरमें प्रवेश करती हुई उत्कीर्ण हैं। सागरमें वरुणदेवको भी घट धारण किये हुए मानवाकारमें ही उकेरा गया है। यह चित्रांकन प्रयागके गंगा-यमुनाके संगमका दृश्य उपस्थित करता है और गंगासागरका भी।

नदीरूपा गंगा, यमुनाका संगम एवं सागरसे मिलन

महाराष्ट्र

महाराष्ट्रके अन्तर्गत एलोराकी गुफा सं० २२ और २४ में मकरवाहिनी गंगाके अंकन हैं।

मध्यप्रदेश

विष्णुपुराण एवं श्रीमद्भागवतमहापुराणमें कहा गया है कि सागर-मन्थनसे जब श्रीलक्ष्मी सागरसे आविर्भूत हुईं तो उससे पहलेसे अपने पवित्र जलके साथ गंगा आदि नदियाँ मूर्तिमती होकर वहाँ उपस्थित थीं, जिनके पवित्र जलसे दिग्गजोंने श्रीका अभिषेक किया था—

ततः स्फुरत्कान्तिमती विकासिकमले स्थिता।
श्रीर्देवी पयसस्तस्मादुद्भूता धृतपङ्कजा॥
गङ्गाद्याः सरितस्तोयैः स्नानार्थमुपतस्थिरे।
दिग्गजा हेमपात्रस्थमादाय विमलं जलम्।
स्नापयाञ्चक्रिरे देवीं सर्वलोकमहेश्वरीम्॥

(विष्णुपुराण १।९।१००, १०३)

मूर्तिमत्यः सरिच्छ्रेष्ठा हेमकुम्भैः जलं शुचि॥
ततोऽभिषिषिचुर्देवीं श्रियं पद्मकरां सतीम्।
दिगिभाः पूर्णकलशैः.......... ॥

(श्रीमद्भा० ८।८।१०, १४)

इस प्रसंगका अंकन भी भारतीय मूर्तिकलामें प्राप्त होता है। मध्यप्रदेशके मन्दसौर जनपदमें इन्द्रगढ़से चतुर्गजाभिषिक्ता लक्ष्मीकी एक सुन्दर मूर्ति मिली है। देवीके दोनों पार्श्वोंमें एक-एक नारी आकृति खड़ी है। इनमेंसे एक मकरपर तथा दूसरी कच्छपपर आरूढ़ होनेसे

वे गंगा और यमुनाकी पहचान प्रदर्शित करती हैं।
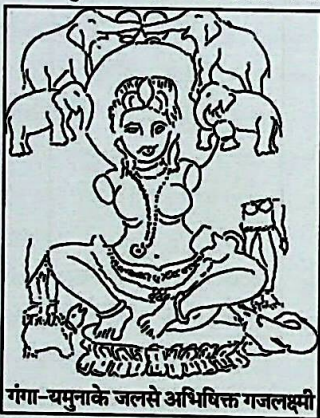
गंगा-यमुनाके जलसे अभिषिक्त गजलक्ष्मी

जैसा कि ऊपर बताया गया है कि गंगावतरणमें उनके वेगसे जगत्‌को कोई हानि न हो, इसलिये भगीरथने शिवसे गंगाके वेगको कम करनेकी प्रार्थना की थी। हुआ भी वैसा ही। स्वर्गसे वेगवती गंगधारको शिवने अपनी जटाओंमें रोक लिया और फिर धीरे-धीरे उन्हें नीचे पृथ्वीपर जाने दिया। गंगावतरण और शिवके इस गंगाधरस्वरूपके कई मनोहर अंकन भी भारतीय मूर्तिकलामें पाये गये हैं।

कर्नाटक एवं महाराष्ट्र

त्रिपथगा गंगा
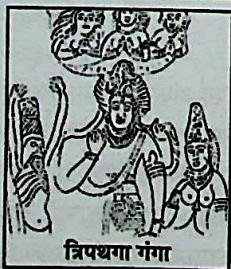
त्रिपथगा गंगा

छठी शती ई० की ऐहोल (कर्नाटक) तथा ८वीं शती ई० की एलीफैण्टाकी गुफाओंमें गंगाधर शिवकी एक-एक मूर्तिमें उनकी जटाओंमें प्रवेश करनेसे पूर्व गंगाके त्रिपथगास्वरूपका अंकन मिला है। एलीफैण्टा (महाराष्ट्र)-की गुफामें गंगाके अंगमें ऊपर तीन मुखोंको उकेर करके शिल्पीने गंगाका त्रिपथगारूप दर्शाया है, किंतु ऐहोल गुफामें शिवकी जटाओंमें प्रवेशकी अनुमति माँगती वक्षपर्यन्त तीन नारी आकृतियोंको करबद्ध उकेरकर गंगाके त्रिपथगारूपको प्रदर्शित किया गया है। ऐहोलवाले फलकमें शिवके दायें पार्श्वमें तपस्यासे दुर्बल हुए भगीरथ और बायें पार्श्वमें पार्वतीका अंकन है। पार्वतीका अंकन एलीफैण्टावाली मूर्तिमें भी है।

तंजौर

गंगाधर शिवकी एक चोलकालीन मूर्ति तंजौरके कलेक्टर-कोर्टके निकट रखी बतायी गयी है, जिसमें शिवने अपने दोनों निचले हाथ आगे खड़ी पार्वतीके कन्धोंपर रखे हुए हैं, शायद स्वर्गसे उतरती और उनकी जटाओंमें आती गंगाके प्रवाह-वेगका सन्तुलन बनाये रखनेके लिये उन्होंने ऐसा किया हो। शिवने अपने दायें ऊपरी हाथमें अपनी एक जटाको फैलाया

गंगाधर शिव

हुआ है, जिसपर नमस्कार मुद्रामें गंगा नारीरूपमें बैठी उकेरी गयी हैं।

नेपाल

नेपालके पाटन नामक स्थानसे मिले गंगावतरणके दो मूर्ति-शिल्प उल्लेखनीय हैं। ये दोनों मूर्तियाँ उमामहेश्वरकी हैं, जिनमें शिवके शीशके ऊपर स्वर्गसे उतरती वेगवती गंगाके अंकन हैं। कुम्भेश्वर सरोवरके निकटवाली उमामहेश्वरकी प्रतिमामें शिवके शीशपर चतुर्भुजा गंगाको नमस्कार मुद्रामें ऊपरसे नीचे उतरते हुए दर्शाया गया है। गंगाने अपने दोनों ऊपरी हाथोंमें उत्तरीय पकड़ा हुआ है। शिल्पीने उत्तरीयके दोनों छोरोंको ऊपरकी ओर फहराते

शिवकी जटाओंमें स्वर्गसे उतरती गंगा

बनाकर गंगावतरणको नितान्त स्वाभाविक स्वरूप प्रदान किया है। इतना ही नहीं, गंगाके पैरोंको भी शिल्पीने ऊपरकी ओर उकेरा है ताकि उनके नीचे आनेका भाव स्पष्ट हो सके। पाटनकी दूसरी उमामहेश्वरकी प्रतिमा मूल चौकमें मिली है। इस प्रतिमामें भी गंगा चतुर्भुजा हैं। सामान्य हाथ नमस्कार मुद्रामें हैं और ऊपरी हाथोंमें उत्तरीय पकड़ रखा है। इस प्रतिमाका उत्तरीय भी ऊपरकी ओर फहराता बनाकर गंगावतरणका वेग प्रदर्शित किया गया है। इस प्रतिमामें देवी गंगाके ऊपर भव्य छत्रका अंकन भी है। इन दोनों मूर्तियोंमें शिल्पीने

शिवकी जटाओंमें स्वर्गसे उतरती गंगा

गंगावतरणके वेगको साकार कर दिया है।

प्राचीन भारतीय सिक्कोंपर गंगा

(डॉ० मेजर श्रीमहेशकुमारजी गुप्ता)

वस्तु-विनिमयके लिये विभिन्न राजाओं एवं सरकारोंद्वारा मुद्राके रूपमें सिक्कोंको चलाया जाता है, परंतु सिक्के वस्तु-विनिमयके साधनमात्र नहीं होते, वरन् भारतीय सिक्के प्राचीन इतिहास एवं भारतीय संस्कृतिको जाननेके स्रोत भी हैं। इनपर अंकित चित्र या लिखित सामग्री तत्कालीन संस्कृतिकी परिचायक होती है। भारतमें सिक्कोंका प्रचलन ६०० ईसापूर्वसे है। शुरुआतमें किसी भी सिक्केपर किसी भी लिपिमें कोई लेख नहीं मिलता कि किस शासकने ये सिक्के चलाये।

भारतीय सिक्कोंपर शुरूसे ही पर्यावरणको महत्त्व दिया गया है। पंचमार्क सिक्कोंपर नदी, पहाड़, वृक्ष, गाय, हाथी, पक्षी, सूर्य, चन्द्र आदिका चित्रण मिलता है। इसी तरहके चिह्न एरण, उज्जयिनी, सातवाहन, विदिशा आदिसे प्राप्त सिक्कोंपर मिलते हैं।

नदीका महत्त्व आदिकालसे है। पहले बस्तियाँ पानीकी उपलब्धताके लिये नदीके किनारे बसती थीं या

जानवरोंसे सुरक्षाके लिये पहाड़ोंपर गुफाओंमें लोग बसते थे। भारतकी प्राचीन सभ्यताका दर्शन 'नदी सभ्यता' के रूपमें होता है। नदीके किनारे बसनेसे और पूजनीय होनेसे नदीका इतना महत्त्व था कि उस समयके शासक नदीको सिक्कोंपर चित्रित करते थे। कुछ सिक्कोंपर तो नदीमें रहनेवाले जलचर—मछली, कछुआ, मेंढक, मकरतकको नदीमें चित्रित किया गया है।

गंगा नदीके किनारे बसे नगर इलाहाबाद, बनारस आदिसे जो पंचमार्क या अन्य सिक्के मिले, उनपर नदीका अंकन है, पर लिपि न होनेसे गंगा नदीका नाम लिखा नहीं मिलता, परंतु गंगा नदीके किनारे बसे नगरोंसे प्राप्त शासकोंके सिक्कोंपर उत्कीर्ण नदीको गंगा ही मानना समीचीन होगा। यहाँ गुप्तवंशके कतिपय सम्राटों और उनके द्वारा चलाये गये गंगापरक स्वर्ण-सिक्कोंका विवरण प्रस्तुत है—

समुद्रगुप्त

गुप्तवंश प्राचीन भारतीय इतिहासमें स्वर्णयुगके नामसे अभिहित है। समुद्रगुप्त गुप्तवंशके संस्थापक सम्राट् चन्द्रगुप्त प्रथमका पुत्र और गुप्तवंशका द्वितीय सम्राट् था। उसने उत्तरी भारतके कई राजाओं, पश्चिमी भारतके गणराज्यों तथा शकों एवं कुषाणोंको पराजित किया था। पूर्वी बंगाल, आसाम, पंजाब और मालवा भी उसके अधीन थे। उसने एक विशाल सैन्यबलके द्वारा दक्षिणापथपर भी विजय प्राप्त की। अपनी महान् विजयोंके कारण समुद्रगुप्तको 'भारतका नेपोलियन' कहा जाता है। उसके शासनकालमें देश धन-धान्यसे सम्पन्न था।

समुद्रगुप्त (३३५-३७६ ईसवी)-ने सोनेका लगभग ८.० ग्रामका सिक्का निकाला, जिसपर गंगा नदीको 'देवी' (स्त्री) रूपमें मकरपर खड़े दिखाया गया है। इस सिक्केको मुद्राशास्त्रमें गंगाका सिक्का ही माना गया है।

गंगा जब भगीरथके सामने प्रकट हुईं तब वे सुन्दर, श्वेत मकरपर सवार थीं, वे श्वेत साड़ी पहने, माथेपर चन्द्र धारण किये, सिन्दूरकी बिन्दी लगाये, एक हाथमें जलकुम्भ और दूसरेमें नालयुक्त कमल पकड़े थीं, यही रूप समुद्रगुप्तके सिक्केपर गंगाका मिलता है। इस पर

ब्राह्मीलिपिमें 'राजा समुद्रगुप्त' लिखा है। सिक्केके दूसरी ओर राजाको व्याघ्रपर बाण चलाते हुए दिखाया गया है और ब्राह्मीलिपिमें 'व्याघ्रपराक्रम' लिखा है।

कुमारगुप्त प्रथम

कुमारगुप्त प्रथम गुप्तवंशका चौथा सम्राट् और सम्राट् चन्द्रगुप्त द्वितीय विक्रमादित्यका पुत्र था। उसने उत्तराधिकारमें प्राप्त विशाल गुप्त साम्राज्यकी अखण्डताको कायम रखते हुए साम्राज्यका विस्तार किया। इतिहासकारोंने उसका शासनकाल ४१३ से ४५३ ई० माना है। उसके शासनकालमें हूणोंने भारतपर आक्रमण किया था, जिसे उसके पुत्र स्कन्दगुप्तने बुरी तरह कुचल दिया।

कुमारगुप्त प्रथमने सोनेके दो सिक्के चलवाये।

लगभग आठ ग्रामवाले पहले सिक्केके एक ओर खड़ी मुद्रामें गंगाकी प्रतिमा अंकित है, जो अपने वाहन मकरपर खड़ी हैं तथा अपने बायें हाथमें नालयुक्त कमल लिये हुई हैं और दाहिने हाथसे मोरको दाना चुगा रही हैं। सिक्केके दाहिनी ओर ब्राह्मी लिपिमें 'कुमारगुप्ताधिराज' लिखा हुआ है। सिक्केके दूसरी ओर राजा खड़े हैं, जो सिंहपर बाण चला रहे हैं।

कुमारगुप्तके दूसरे सिक्केपर एक ओर देवी गंगाकी

खड़ी प्रतिमा अंकित है, जो मकरपर स्थित है। उन्होंने अपने दाहिने हाथमें कमल ले रखा है और उनके समीप स्थित सेविकाने हाथमें छोटा छत्र ले रखा है। सिक्केके दूसरी ओर घोड़ेकी पीठपर बैठे राजा म्यानयुक्त तलवार लिये हैं और गैंडेपर वार कर रहे हैं तथा ब्राह्मीलिपिमें 'श्रीमहेन्द्रखड्ग' लिखा है।

शास्त्रीय संगीतकी बंदिशोंमें गंगा-वर्णन

(श्रीकैलाश पंकजजी श्रीवास्तव)

उत्तर भारतीय अथवा हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीतमें राग तथा तालमें निबद्ध गीतोंको 'बंदिश' कहते हैं। गायनकी विभिन्न शैलियों ध्रुपद, धमार, ख्याल, ठुमरी आदिमें बंदिश ही गीतके रूपमें होती है। गाते समय इसीका विस्तार आलाप, तान आदि द्वारा किया जाता है। इन बंदिशोंके रचनाकार कोई साहित्यकार नहीं थे, अपितु संगीतकार थे। इनको संगीतमें 'वाग्गेयकार' की संज्ञा प्रदान की गयी है। अधिकतर बंदिशें छन्दःशास्त्रके मापदण्डोंपर खरी नहीं उतरतीं; क्योंकि इनका प्रयोजन 'पाठ' हेतु नहीं था। ये गानेके लिये थीं, अतः इन्हें तालकी मात्राओंके अनुसार रागोंमें निबद्ध किया गया था।

प्रस्तुत लेखमें अधिकांश बंदिशें कृष्णानन्द व्यासदेव रागसागरद्वारा संग्रह किये गये और रचे गये ग्रन्थ 'संगीतरागकल्पद्रुम' से हैं, जिसका रचनाकाल सन् १८४३ ई० है। इनमें कहीं-कहीं भाषा एवं शब्द-विन्यास-सम्बन्धी अशुद्धियाँ हैं। यथासम्भव रचनाएँ अपने मूल रूपमें ही प्रस्तुत हैं।

अधिकांश बंदिशें श्रृंगार, भक्ति, प्रकृति-वर्णन आदिसे सम्बन्धित हैं। भक्ति-सम्बन्धी बंदिशोंमें विभिन्न देवी-देवताओंकी स्तुतियाँ उपलब्ध हैं। गंगासम्बन्धी बंदिशोंकी संख्या अधिक नहीं है। इस प्रकारकी बंदिशोंमें गंगासम्बन्धी वर्णन तथा उनसे भवसागरसे मुक्ति प्रदान करनेकी प्रार्थना की गयी है।

'धीरज' रचित एक बंदिशमें गंगा-उत्पत्तिका क्रमशः उल्लेख करते हुए उसके तटपर स्थित प्रमुख तीर्थोंको भी बताया गया है—

राग भैरव-चौताल

विष्णु चरण जल ब्रह्मा के कमण्डल
शिव जटा राजत देवी गङ्गे।
भागीरथी जू सकल जगतारनी भू भार उतारनी
अपघन बेली कटाक्षन के तारन तरङ्गे॥
हरिद्वार प्रयाग सागर बेनी त्रिवेणी
सरस्वती विद्या देवी करत दुखभङ्गे।
'धीरज' के प्रभु तुम रोग दोष दूर करो
पाप हरो निरमल करो यह अङ्गे॥

इस बंदिशकी अन्तिम पंक्तियोंमें जिस प्रकार गंगासे आरोग्यकी याचना की गयी, वह इस बंदिशकी विशेषता है; क्योंकि अन्य बंदिशोंमें ऐसी प्रार्थना उपलब्ध नहीं होती।

संगीतसम्राट् तानसेनरचित बहुसंख्यक बंदिशें प्राप्त होती हैं। इनकी एक रचनामें गंगाको वैकुण्ठकी सीढ़ी (नसेनी) बताया गया है तथा गंगाको विविध नामोंसे सम्बोधित किया गया है—

राग भैरव-चौताल

जै गङ्गा जगतारनी जगजननी पापहरनी
वेद वरणी वैकुण्ठ निशानी।
भागीरथी विष्णुपदा पवित्रा त्रिपथगा
जाह्नवी जगपावनी जगजानी॥

ईस सीस मथ विराजत त्रई लोक पावन किये
जीव जन्तु खगमृगसुरनर मुनि मानी।
'तानसेन' प्रभु तेरो अस्तुत करता
दाता भक्त जनन की मुक्ति की वरदानी॥

वेद हिन्दू-धर्म और संस्कृतिके आधार हैं। गंगाको 'वेद वरणी' (वेदोंमें वर्णित)-के रूपमें उल्लेख करना गंगा और वेद दोनोंके प्रति आस्थाको प्रकट करता है। अन्य बंदिशोंमें भी इस शब्दका प्रयोग हुआ है। कुछ बंदिशोंमें 'वेद वरणी' के स्थानपर 'ग्रंथन बरनि' कहा गया है; जैसा कि प्रस्तुत बंदिशमें है। यह बंदिश 'इच्छाबरस' नामक रचनाकारकी रचना है—

राग देसी टोड़ी-ढिमा तेताला

श्री गङ्गा पातक हरनि तारिनी दायिनी मुक्त जनन की।
नारदादि वानि बैकुण्ठ की निसानी इच्छा पुजावत हौ और हार मनन की॥
ग्रंथन बरनि जात उत्तम जल तेरो तन परस जात ताप तनन की।
चरन स्तुति तेरो कहाँ लौं बखानों कर दाता असरन सरन की॥

अगली बंदिशमें भी इसी प्रकारके भाव हैं। बहुधा सांसारिक प्राणीकी उपमा किसी मँझधारमें फँसी नावसे दी जाती है तथा इससे मुक्तिको 'पार उतरने' के रूपमें दिखाते हैं। यदि गंगामैयासे ही अपनी नाव पार उतारनेकी याचना की जाय तो उससे उपयुक्त रूपक क्या हो सकता है!

राग भैरव-त्रिताल

पतित जन तारो मात गङ्गे पाप विनाशनी
ताप उदारणी करुणा कर निस्तारो।
मोह तरी बही भवसागर में पवन चलत मँझधारो
तारण तरण तू ही वरदाता मइया पार उतारो॥

एक प्रसिद्ध वाग्गेयकार हैं 'ख्याल खुशाल'। इनकी एक बंदिशमें कार्तिकमासमें गंगाके घाटोंपर विशेष आयोजनोंका उल्लेख करते हुए गंगा-आरतीके उपरान्त गंगाके जयकारोंका सजीव शब्दचित्र प्रस्तुत है—

देख मन गङ्गा की धारा।
प्रगट भई हरि के चरणन ते सकल लोक निस्तारा॥
कातिक माह बिराजत अति छवि घाटन घाट अपारा।
आरति करत सकल नर नारी जय जय कहत पुकारा॥
चार पदारथ भक्तन के घर होत न लागत बारा।
'ख्याल खुशाल' सभी बन आए भाई भगत उदारा॥

एक छोटी-सी बंदिश जो लोकगीतके समान है—

राग बरवा-तिताला

जियरा मोरा लाग रह्यो रे मैं जइहूँ बजारे बजार।
गङ्गा पूजो देवी पूजो और पूजो भैरवनाथ॥

कई बंदिशोंकी शब्द-रचनाएँ छन्दोंमें कसी हुई भी प्राप्त होती हैं। 'माधव छितिपाल' रचित ऐसी ही एक सुन्दर गंगा-सम्बन्धी बंदिश इस प्रकार है—

राग हुसैनी-ध्रुपद-चौताल

धन्य जह्नुजा दयाल शंकर शिर थिर बिलास
पाप दलनि मोक्ष करनि ज्ञान की प्रकाशी।
काक गृध्र स्वान आदि त्याग तन स्वच्छ होत
सुर पुर संग देव नारि सुखद युत बिलासी॥
मुक्ति दान तीर बटत चाहै खल अधम होइ
परम धाम वास होत निरखि काल त्रासी।
सूर्य बंस तरन हेतु आई तू धरनि बीच
सुनिये 'छितिपाल' आस होउ बिन्ध्य बासी॥

यह बंदिश मात्र अपने काव्य-सौष्ठवहेतु ही नहीं अपितु विषय-वस्तुके कारण भी महत्त्वपूर्ण है। गंगास्नानका महत्त्व सभीके लिये है। सभी नर-नारियोंको गंगा तारती है, ऐसी आस्था जनमानसमें है, किंतु इस रचनामें तो काक, गृध्र, श्वान आदि (तिर्यक् योनि)-को भी गंगाद्वारा तरकर स्वच्छ स्वरूपकी प्राप्ति बतायी गयी है। गीतकी अन्तिम पंक्तियोंमें गंगाके धरापर अवतरणका मूल कारण बताते हुए *'सूर्य बंस तरन हेतु'* जो कहा गया है, यह उक्ति सगर-संततिसे प्रत्यक्षरूपमें सम्बन्धित है, किंतु इसकी रोचकता यह है कि बंदिश रचनाकार नृप माधवसिंह छितिपाल भी स्वयं सूर्यवंशी (दिनकरकुल) हैं। अतः यह उक्ति उनपर व्यक्तिगत रूपसे भी चरितार्थ होती है प्रार्थनाके रूपमें। इस बंदिशमें यह भी कहा गया है कि गंगाके किनारे

मुक्ति बँटती है, सभीको, *'चाहे खल अधम होइ।'* इतना ही नहीं, जो गंगाकी शरणमें आ जाता है, उसे तो *'निरखि काल त्रासी।'* इसी तथ्यका अगली बंदिशमें और अधिक रोचक रूपमें उल्लेख है—

राग मुलतानी धनाश्री-चौताल

गङ्गा की तरङ्ग देखि सब जग तरो जात
सुर नर मुनिन को लागत हित चिते।
केतेक छल लम्पट कायर कपूत पापी
तिनहूँ के पाप भाजत किते॥
ब्रह्म लोक विष्णु लोक रुद्र लोक कथा
जाकी जैसी भावना ताके काज सुफल निते।
गङ्ग भक्त आगे पाप रोवै यमदूत रोवै
चित्र औ गुप्त रोवे कागद चित चिते॥

तृतीय पंक्तिमें पापियोंको श्रेणियाँ दी हैं, इन सबके भी पाप भाग जाते हैं। अन्तिम दो पंक्तियाँ तो किसी भी गंगाभक्तके लिये बहुत बड़ा सम्बल हैं! ब्रह्म, विष्णु, रुद्रलोकोंका क्रमशः उल्लेख करके कविने कितनी चतुरतासे गंगा-उत्पत्ति एवं अवतरणकी ओर क्रमशः इंगित किया है! जनमानसमें गंगाके सम्बन्धमें प्रसिद्ध उक्ति है 'गङ्गे तव दर्शनात् मुक्तिः।' इस बंदिशकी प्रथम पंक्तिमें इसी तथ्यको कितने अच्छे ढंगसे व्यक्त किया गया है।

गंगाकी महिमा शब्दातीत है, अगम, अपरम्पार है। तीन धाराओंवाली इस त्रिपथगाकी महिमाका गान तानसेनद्वारा इस प्रकार किया गया है—

राग मुलतानी धनाश्री-तिताला

ब्रह्मगत अपरम्पार न पाऊँ।
पृथी पार पताल धरा और गगन लों धाऊँ॥
लों गहीय सुदिष्ट तुम्हारी मन इच्छाफल ही पाऊँ।
तीरथ प्रयाग सरस्वती त्रिवेणी सब तीरथ होकर गुरद्वार जाऊँ।
भागीरथी गौतमी और गङ्गा तानसेन गावै हरिद्वार चाऊँ॥

अगली बंदिशमें गंगाके त्रिपथगा होनेका उल्लेख तो है ही, साथ ही बंदिशके पूर्वार्द्धमें 'तीन' अंकका प्रयोग देखनेयोग्य है। दूसरे भागमें गंगाके कुछ बहुत सुन्दर अभिधानोंका उल्लेख है, जैसे—हरशेखरा, विष्णुपदा, भीष्मसुविहङ्गा आदि। बंदिश प्रस्तुत है—

राग भैरव-झप ताल

त्रिविध गामनी त्रिहु लोक उधारणी
त्रई ताप वारणी ततछिन गङ्गे।
त्रई देवमणि त्रिसोता त्राणी पापहरणी
त्राहि त्राहि त्रई लोचन त्रई त्रिवेणी सङ्गे॥
सुर नदी सुरेश्वरी जाह्नवी गङ्गा
मंदाकिनी त्रिपथगा अङ्गे।
भागीरथी पवित्रा हरशेखरा
विष्णुपदा सुरदीर्घिका भीयमसुविहङ्गे॥

साहित्य तथा संगीतमें ऐसी रचनाएँ भी हैं, जिनमें सर्वश्रेष्ठ, सर्वप्रथम या पवित्रतम वस्तुओंको बताया गया है। कदाचित्—इस प्रकारके गीतोंकी रचनाके प्रेरणा-स्रोत श्रीमद्भगवद्गीतामें श्रीकृष्णके वचन ही हैं। इनमें भी 'स्रोतसामस्मि जाह्नवी' ही कहा गया है।

ऐसी एक छोटी बंदिशकी दो पंक्तियाँ प्रस्तुत हैं, जिससे यह ज्ञात होता है कि भारतीय संस्कृति एवं समाजमें गंगाको क्या स्थान प्राप्त है।

राग टोड़ी-चौताल

शब्द प्रथम ओङ्कार वर्ण प्रथम आकार
जाति प्रथम ब्राह्मण प्रणाम कर लीजिए।
× × × ×
नदी प्रथम गङ्गा पर्व्वत प्रथम सुमेर
साज प्रथम वीणा भक्तन प्रथम नारद कहि दीजिए॥

राग गुंड मल्हार (राजस्थानी बंदिश)

नदिया में गंगा बड़ी, तीरथ बड़ो केदार।
रूखा में चन्दन बड़ो, रागा गुंड मल्हार॥

उपर्युक्त बंदिश एक राजस्थानी बंदिश है।

किसी भी नदीकी चर्चा करें तो उसके तटवर्ती स्थानोंकी चर्चा स्वाभाविक ही है; क्योंकि दोनों ही परस्पर प्रभावित होते हैं। गंगाके सम्बन्धमें तो यह तथ्य

विशेष महत्त्वपूर्ण है। वैसे तो उपर्युक्त बंदिशोंमेंसे कुछमें प्रयाग, हरिद्वार आदिका नाम आया है, किंतु कुछ बंदिशोंमें विशिष्ट रूपसे किसी तीर्थस्थानका ही वर्णन है। गंगाके तटवर्ती तीर्थोंमें प्रयाग (इलाहाबाद) इसलिये सर्वाधिक महत्त्व रखता है; क्योंकि यहाँ गंगा, यमुना तथा अदृश्य सरस्वतीका संगम 'त्रिवेणी' है। मानसमें गोस्वामीजीकी तत्सम्बन्धी पंक्तियाँ पाठकोंको सुविदित ही हैं। इसी प्रकारसे इसे तीर्थराज भी कहा जाता है। प्रयाग-सम्बन्धी एक बंदिश इस प्रकार है—

राग बरवा-कहरवा ताल

चल मन रे तिरवेणी न्हाय॥
कोटि जनम के पाप कटत हैं भरद्वाज के दरसन पाय।
मकर मास में परे अमावस ब्रह्मादिक को मन ललचाय॥
जो तिरवेणी में देहो बुड़की सुरपुर लोक बैकुण्ठे जाय।
पूरणानन्द आश रघुवर की, पितरन को वैकुण्ठ पठाय॥

कृष्णसनेहीरचित राग बरवा (कहरवा ताल) एक बंदिश है। 'चल मन मेरे काशी बस जाय।' यही बंदिश अधिक पूर्ण रूपमें इस प्रकार है—

राग झिंझोटी-तिताला (पंजाबी भाषामें)

काशी शहर निमाना चल बसणावे।
मणिकर्णिका पंचगङ्गा माधो रामघाट दा न्हाणा।
ज्ञान खान अघ हानि मुक्ति तहाँ सेवत राजा राणा।
योगी जती और विप्र सन्यासी बाचत वेद पुराणा॥
घर घर कामधेनु चिंतामणि दूध भात दा खाना।
दास 'ऊधो' आनन्द वनका झूले रामचरण चित लाना॥

वास्तवमें इस पंजाबी बंदिशमें बनारसका मनोरम चित्रण है। एक अन्य बंदिश जो गंगाको सम्बोधित करती हुई है, वह बँगला भाषामें है। बंदिश इस प्रकार है—

राग भैरवी-जल्द तिताला (बँगला भाषामें)

भीष्म जननी भागीरथी मा गङ्गे गो।
तारण कारण भवभय तारण स्थावर जङ्गम कीट पतङ्गे गो॥
हरिद्वारावती अतिद्रुतगती अनुमनी धन गङ्गे गो।
सागर संतति जारे दिते गति विरह सागर सङ्गे गो॥
कारणवारणी पतित उधारणी नारायणी दुव शङ्गे गो।
कलुखे कातर काली कलेवर पड़े शच पाप तदङ्गे गो॥

आजका समाज भौतिकताकी अन्तहीन अन्धी दौड़में व्यस्त है। अपने अज्ञानवश आजका तथाकथित मानव अपना हित और अनहित पहचाननेमें अक्षम है। वह यह भी नहीं देख रहा अथवा देखकर भी अनदेखा कर रहा है कि अपने स्वार्थ-साधनहेतु उसने अपनी गंगा माँको, धरती माँको किस दशामें पहुँचा दिया है! अन्ततोगत्वा इसके क्या परिणाम होंगे, यह सोचनेका उसके पास अवकाश ही कहाँ है। पर्यावरण, समाज, संस्कृति, नैतिकता किस-किसकी बात करें? सभीको तो प्रदूषणकी विकराल लपटें लीले ले रही हैं। गंगा सब कुछ सह रही है। माँ है न, हर माँ सहती ही है। **'कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति।'** (पूत कपूत भले हो जाय माता हो न कुमाता।) गंगा सह तो रही है किंतु साथ ही कुछ कह भी रही है। यदि हम सुन सकें तो गंगाकी पुकारको सुनें, अभी भी समय है सुधरनेका! चेत जानेका! शायद हम भूल गये हैं भगीरथकी तपस्याको! कैसे-कैसे प्रयासोंसे तो गंगाको धरापर लाया गया।

अगली बंदिश इसी पृष्ठभूमिपर है। यह गंगावतरणसे पूर्व शिव और गंगाके संवादरूपमें है। 'गंगादास' रचित यह अत्यन्त रोचक एवं विचारोत्तेजक बंदिश एक प्रश्नचिह्नके रूपमें सजग पाठकोंके समक्ष उपस्थित है तथा उन्हें इस दिशामें कुछ सोचने और करनेके लिये कदाचित् प्रेरित कर सकेगी।

राग परज-तिताल

मृत मण्डल नहीं जइहों गंगा शिव सों कहे॥
शम्भू मृतमण्डल के लोग महा अति अधम विकारी।
गाय जगतकी माता ताहि वह दे हैं गारी॥
सोच विचार न आवही मूढ़ अधम वे जीव।
महा अधरमी एसे तिनको दरशन होयगो शीव॥
गंगा शिव सों—

गंगा उत्तम जीव सोई तेरे दरशन पैहैं।
पापी पूरण पतित निकट कबहूँ नहिं जैहैं॥
सुमरण भजन करेंगे तेरो लहेंगे लहर तरङ्ग।
आवा गवन ते रहित होय गए बसत तिहारे सङ्ग॥
गंगा शिव सों...

शम्भू सत्य कोई नहीं कहिहै असत्य सभी नर भखिहैं।
कुल की वधू निकाल वन में घर में दासी रखिहैं॥
पिता भक्त कोउ विरला होइहै हरि गुरु सेवा नाहीं।
सुरापान सब कोइ करिहैं कोई बिरले तीरथ नाहीं॥
गंगा शिव सों...

शम्भू करिहैं करम कुकरम सभी उठ मोपे धोहिहैं।
हुइहै बहुत अपराध आन मोरे सलिल में वहहिहैं॥
तिने देख मैं काँपिहों जैसे सिंघ सों गाय।
उनके हृदय कल्पेंगे होइहैं दुख अधिकाय॥
गंगा शिव सों...

गंगा मुनि माधो अस्थान तहाँ तुमको ले जैहैं।
कोटि यज्ञ के किए तुरन्त नर सो फल पैहैं॥
सात खण्ड नव दीप में तुम समान नहीं कोय।
जो नर तेरे आश्रित होयेंगे शिवपुरवासी होय॥
गंगा शिव सों...

सत्य शरण होय रौह निकट तोहे ध्यान लगावे।
विमुख जाने न देहों काहू के दरशन पावे॥
भागीरथ तपस्या कीनी चोवीस गई बिताय।
तिनके पित्र वैकण्ठ तरेंगे परिहैं तिहारे पाँय॥
गंगा शिव सों...

शम्भु वचन कर जोरि गंगा आगे है आई।
भली करी भोलानाथ निकट ते दूर बहाई॥
पिछली प्रीत न छाड़िओ यही बड़ों की रीत।
एसी प्रीत करी हर हमसों ज्यों बालू की भीत॥
गंगा शिव सों...

महावैष्णव जपी तपी सिद्ध मुनी जो तो में नहिहैं।
पातकी जन के पातक तेरे ते दूर सब हो जैहैं॥
अघरहरणी वैकुण्ठनिसैनी किते पतित उधरिहैं।
जीव जंत खग पन्नग पशु नर जो परसे सोइ तरिहैं॥
गंगा शिव सों...

शम्भु कुमत कही नहीं जाई सुमत हर भली विचारी।
तुमरो कछु न दोष करम की रेख हमारी॥
आज्ञा माँग के चलि है कलि में वेग लीजो बोलाय।
'गंगादास' तिहारे दरस को बार बार बलि जाय॥
गंगा शिव सों...

रहीमका संस्कृत स्तोत्र—गंगाष्टकम्

(डॉ० श्रीसत्यव्रतजी वर्मा)

मुगल सम्राट् अकबरके सेनापति एवं नवरत्नोंमेंसे एक अब्दुर्रहीम खानखाना (सन् १५५६-१६२८ ई०) जो रहीम अथवा रहीमदास नामसे अधिक प्रसिद्ध हैं, भारतीय इतिहास और साहित्यके ऐसे अनूठे पात्र हैं कि समस्त वैभव, राजप्रतिष्ठा तथा यशके बावजूद भी जिनके जीवनका नाटक किसी दुःखान्तिकासे कम नहीं है। रहीमके बहुमुखी व्यक्तित्वमें सेनानी, योद्धा, रणनीतिकार, बहुभाषाविद्, कवि, विद्वान् और भक्तका दुर्लभ संगम है। वे तलवार और कलम दोनोंके प्रयोगमें समानरूपसे सिद्धहस्त थे और दोनोंसे उन्हें प्रभूत यशकी प्राप्ति हुई, किंतु उन्हें वास्तविक अमरता कलमसे ही मिली है। वे तुर्की, अरबी और फारसीके पारगामी विद्वान् थे और उन्होंने 'वाकयाते बाबरी' तथा 'तुज्के बाबरी' का फारसीमें अनुवाद भी किया था। अनेक महत्त्वपूर्ण युद्धोंमें उनकी कुशल रणनीति तथा चमत्कारी विजयोंसे अकबर भी आश्चर्य-चकित रह गया था। रहीमके व्यक्तित्वका कदाचित् सबसे आकर्षक तथा प्रशंसनीय पक्ष यह है कि उन्होंने मुसलमान होते हुए भी, हिन्दू-संस्कृति और साहित्यकी महान् धरोहरको पूर्णतया आत्मसात् कर लिया था और वह उनके चिन्तन और लेखनमें इस प्रकार रच-बस गयी थी कि उनके साहित्यको पढ़कर यह

आभासतक नहीं होता कि यह रचना किसी मुसलमानद्वारा की गयी है। उन्होंने हिन्दीके पूर्ववर्ती साहित्यके अतिरिक्त, संस्कृतके प्राचीन आध्यात्मिक, दार्शनिक तथा इतर साहित्यका भी गम्भीर अध्ययन किया था, जिसकी झलक उनकी कृतियोंमें पग-पगपर दिखायी देती है। किंतु इसे विरोधाभास ही कहा जायगा कि रहीमकी हिन्दी कविता विशेषकर उसके भावपूर्ण तथा ज्ञानवर्द्धक दोहोंने जन-जनको इतना मोहित तथा अभिभूत किया है कि उन्हें उनके संस्कृत काव्यकी सुध भी नहीं रही। उनके साहित्यसे स्पष्ट है कि रहीम संस्कृतके सुधी विद्वान् थे और उन्होंने ललित साहित्यके अतिरिक्त वेद, उपनिषद्, रामायण, महाभारत आदि आधार-भूत उपजीव्य ग्रन्थोंका सूक्ष्मतासे परिशीलन किया था।

रहीमके सैकड़ों दोहे प्राचीन संस्कृत पद्यों/सुभाषितोंके अनुवादमात्र हैं तथा अन्य सैकड़ोंमें प्राचीन संस्कृत-साहित्यकी भाव-सम्पदा निर्भ्रान्त रूपसे प्रतिबिम्बित है और वे पूर्णतया हिन्दू-संस्कृतिके परिवेशसे परिस्पन्दित हैं। उन दोहोंकी सांस्कृतिक पृष्ठभूमिको देखकर आश्चर्य होता है कि अपनी धार्मिक प्रतिबद्धताको अक्षुण्ण रखते हुए भी रहीमने स्वयंको किस कुशलतासे हिन्दू-संस्कृति तथा चिन्तन-पद्धतिसे एकाकार कर लिया था। संस्कृतिके इन दो घोड़ोंपर एक साथ सवार होना रहीम-जैसे निपुण अश्वारोही योद्धाके लिये ही सम्भव था।

हिन्दीके इस सुकविने संस्कृत काव्यकी रचनामें भी अपने कौशलका परिचय दिया है। रहीमद्वारा पूर्णतया संस्कृतमें विरचित पद्योंकी संख्या तो अधिक नहीं है, किंतु भावप्रवणता, रचना-शैली तथा अभिव्यक्ति-कौशलकी दृष्टिसे वह संस्कृत-साहित्यकी अमूल्य निधि है। रहीमकी संस्कृत-काव्यको कदाचित् सबसे बड़ी देन यह है कि उन्होंने संस्कृत, अरबी, फारसी, ब्रजभाषा, खड़ी बोली आदि विभिन्न भाषाओंकी उस मिश्रित रचना-विधिको पुष्पित-पल्लवित किया, जिसे मणिप्रवाल शैली कहा जाता है। रहीमके ज्योतिष ग्रन्थ 'खेटकौतुकम्' तथा 'त्रयस्त्रिंशद्योगावलि' इसी शैलीमें लिखे गये हैं। इनमें छन्द तथा व्याकरण संस्कृतका है, किंतु शब्दावली मिश्रित है। इस सधुक्कड़ी शैलीका प्रवर्तन रहीमसे पहले ही हो गया था।[१] उन्होंने इस बिरवेको सींचकर हरे-भरे वृक्षका रूप दिया है, जो उनकी रचना-कुशलताकी सफलताका परिचायक है। यह मिश्रित रचना-प्रणाली कितनी भी रोचक अथवा चमत्कारजनक हो, इसके मर्मको विविध भाषाओंके पण्डित ही पूर्णतया ग्रहण कर सकते हैं।

'खेटकौतुकम्' में संस्कृत, फारसी आदिका गड्डमड्ड प्रयोग है[२], जबकि 'त्रयस्त्रिंशद्योगावलि' में केवल योगोंके नाम फारसीमें हैं, शेष शब्दावली संस्कृत की है।[३] कुछ फुटकर पद्योंमें तो रहीमने एक अथवा दो पूरे चरणोंकी रचना खड़ी बोलीमें की है,[४] यद्यपि इससे छन्दको कोई क्षति नहीं होती। 'खेटकौतुकम्' १२४ पद्योंकी सामान्य आकारकी कृति है। इसके अन्तिम तीन पद्योंमें अरबी छन्दका प्रयोग किया गया है। 'त्रयस्त्रिंशद्योगावलि' में केवल ३५ पद्य हैं। मुस्लिम धर्मावलम्बी होते हुए भी रहीमने हिन्दू-संस्कृतिको भारतीय जीवन-पद्धतिका पर्याय मानकर उसके प्रायः सभी प्रतीकोंके प्रति अगाध श्रद्धा व्यक्त की है। यह उसकी अनुपम उदारता तथा सहृदयताका द्योतक है। एक ओर रहीमने गणेश, शंकर, हनुमान्, कृष्ण आदि देवताओंकी हिन्दी अथवा संस्कृतमें पूर्ण तन्मयता तथा निष्ठासे वन्दना की है,[५] दूसरी ओर हिन्दूधर्मकी प्राण-सरिता भगवती गंगाकी स्तुतिमें एक अष्टककी रचना की है, जो उन्हें प्राचीन

---

१. फारसीयपदमिश्रितग्रन्थाः खलु पण्डितैः कृताः पूर्वैः। (खेटकौतुकम्)

२. करोम्यब्दुर्रहीमोऽहं खुदातालाप्रसादतः। फारसीयपदैर्युक्तं खेटकौतुकजातकम्॥ (खेटकौतुकम्)
आयुखाने चश्मखोरा मालखाने च मुश्तरी। राहु जो पैदामकाने शाह होवे मुल्कका॥ (खेटकौतुकम्)

३. भवति रिपुविवादो मान-सौख्यं च जातौ। क्षणक्षणमपि सौख्यं योग 'लत्ता' समाहै॥ (त्रयस्त्रिंशद्योगावलि, ६)

४. एकस्मिन्दिवसावसानसमये मैं था गया बाग में।
काचित्तत्र कुरंगबालनयना गुल तोड़ती थी खड़ी॥

५. बन्दौ बिघन बिनासन ऋधि-सिधि ईस। निर्मल बुद्धि प्रकासन, सिसु ससि सीस॥
ध्यावौं बिपद-बिदारन सुवन समीर। खल-दानव-बन-जारन, प्रिय रघुबीर॥
क्षीरसारमपहृत्य शंकया स्वीकृतं यदि पलायनं त्वया। मानसे मम नितान्ततामसे नन्दनन्दन! कथन्न लीयसे॥

स्तोत्रकारोंकी श्रेणीमें स्थापित करती है।

विक्रम संवत् १९४३ ई० में पं० रामबक्सद्वारा लिखित 'गङ्गाष्टकम्' की एक प्रति राजस्थानके भरतपुरसे प्राप्त हुई थी, जो प्रयागकी त्रैमासिक संस्कृतपत्रिका 'संगमनी' में प्रकाशित की गयी थी। यह 'गङ्गाष्टक' अव दुष्प्राप्य है। अतः पाठकोंके लाभार्थ इस दुर्लभ स्तोत्रको यहाँ प्रकाशित किया जा रहा है। इससे पुण्यसलिला गंगाके प्रति रहीमकी भक्ति तथा श्रद्धाका भरपूर परिचय मिलता है। स्तोत्रमें आठके स्थानपर दस पद्य हैं। संख्यारहित ग्यारहवें पद्यमें फलादेशका कथन है। गंगाष्टकका प्रथम पद्य आर्या छन्दमें निबद्ध है, शेष पद्योंकी रचना पंचचामर छन्दमें हुई है।

साहित्यिक दृष्टिसे गंगाष्टक उच्चकोटिकी रचना है। नादपूर्ण अन्त्यानुप्रास, पदलालित्य, मनोरम शब्दशय्या और भावसम्पदाने इसके काव्य-सौन्दर्यको दूना कर दिया है। भाषाका प्रवाह स्वयं गंगाके प्रवाहके समान ही निर्मल तथा शान्तिदायक है।

श्रीविरामखानसूनुरहीमखानखानाकृत(म्) गंगाष्टकम्*

अच्युतचरणतरङ्गिणि मदनान्तकमौलिमालतीमाले।
त्वयि तनुवितरणसमये हरता देया न मे हरिता॥ १॥

भगवान् श्रीहरिके चरणनखसे आविर्भूत तथा कामारि भगवान् शिवके मस्तकपर मालतीके पुष्पोंकी मालाके समान शोभायमान हे देवि गंगे! जब मुझे सारूप्य मुक्ति प्रदान करना, तब श्रीहरिका स्वरूप मुझे न देना, अपितु मुझे शिवस्वरूप प्रदान करना, जिससे मैं आपको सर्वदा मस्तकपर धारण कर सकूँ॥ १॥

चिरं विरञ्चिविष्णुपूज्यपादवारिधारिणे (णी)
प्रतापकेतुपट्टिकाम्बुयष्टिकाविहारिणी।
शशाङ्ककान्तिपूरकेण पापकूटकन्दिनी
जगत्त्रिदोषतस्तनुं पुनातु जह्नुनन्दिनी॥ २॥

जो ब्रह्माजीके द्वारा निरन्तर पूजित भगवान् विष्णुके चरणसे प्रादुर्भूत जलमय देहको धारण करनेवाली हैं, जिनकी जलधारा अप्रतिम प्रभावरूप ध्वजपट्टिकाके दण्डकी भाँति भूतलपर विहार कर रही है, जो अपने श्रीविग्रहकी उज्ज्वल कान्तिसे पापराशिको उसी प्रकार विनष्ट कर देती हैं, जिस प्रकार कि पूर्णचन्द्रका आलोक तिमिरराशिको छिन्न-भिन्न कर देता है, ऐसी जह्नुनन्दिनी भगवती गंगा सांसारिक त्रिविध दोषोंसे दूषित मेरे शरीरको पवित्र करें॥ २॥

शिवोत्तमाङ्गवेदिका-विहारसौख्यकारिणी
ततो भगीरथाङ्गसङ्गमर्त्यलोकचारिणी।
त्रिमार्गगा त्रितापहा त्रिलोकशोकखण्डिनी
जगत्त्रिदोषतस्तनुं पुनातु जह्नुनन्दिनी॥ ३॥

भगवान् शिवकी शिरोवेदिकामें सुखपूर्वक विहार करनेवाली तदनन्तर राजर्षि भगीरथका अनुगमन करते हुए भूलोकमें विचरण करनेवाली, स्वर्ग-भूलोक तथा पाताल—इन तीनों ही मार्गोंसे बहती हुई आधिदैविक, आधिभौतिक तथा आध्यात्मिक तापोंका हरण करनेवाली और त्रिलोकीके शोकका शमन करनेवाली जह्नुनन्दिनी भगवती गंगा सांसारिक त्रिविध दोषोंसे दूषित मेरे शरीरको पवित्र करें॥ ३॥

हिमाद्रिकन्दराविहारसिद्धचारणाङ्गना
सुगीतनृत्यतालभेदकामकेलिनन्दना।
सुकुञ्जपुञ्जवञ्जुलप्रफुल्लसूनगन्धिनी
जगत्त्रिदोषतस्तनुं पुनातु जह्नुनन्दिनी॥ ४॥

हिमालयकी गुफाओंमें विहार करनेवाले सिद्धों तथा चारणोंकी भार्याओंके संगीत-नृत्य आदि ललित विलासोंसे आनन्दित होनेवाली, तटवर्ती लताकुंजोंमें खिले हुए पुष्पोंकी गन्धसे सुरभित जलवाली जह्नुनन्दिनी भगवती गंगा सांसारिक त्रिविध दोषोंसे दूषित मेरे शरीरको पवित्र करें॥ ४॥

सरस्वतीप्रपूरसूरकन्यकाम्बुसङ्गिनी
मुनीन्द्रवृन्दवन्दिता त्रिवेणिका तरङ्गिणी।
मुमुक्षुसङ्घसेविता सुतीर्थवृद्धिवन्दिनी
जगत्त्रिदोषतस्तनुं पुनातु जह्नुनन्दिनी॥ ५॥

* 'संगमनी' पत्रिकासे उद्धृत यह मूल 'गंगाष्टक' श्रीलक्ष्मणनारायणजी शुक्लके आलेखके रूपमें प्रकाशित है। इस उपलब्ध गंगाष्टकमें व्याकरण तथा छन्द-सम्बन्धी कुछ त्रुटियाँ प्रतीत होती हैं तथापि श्लोकोंका एक सम्भावित भावार्थ पाठकोंकी सुविधाके लिये यहाँ प्रस्तुत है।

सरस्वती तथा सूर्यतनया यमुनासे संगम करनेवाली, मुनिजनोंसे वन्दित, यमुना तथा सरस्वतीसे संगमित होकर त्रिवेणीरूप धारण करनेवाली, तरंगमालाओंसे शोभायमान तथा मुक्तिकी कामनावाले साधकोंके द्वारा निरन्तर सेवित होनेवाली तथा श्रेष्ठ तीर्थरूपमें वन्दित होनेवाली जह्नुनन्दिनी भगवती गंगा सांसारिक त्रिविध दोषोंसे दूषित मेरे शरीरको पवित्र करें॥ ५॥

चकोरचक्रवाकहंसवृन्दकूलराजिता
मृणालखण्डधूमवायुपूतसत्त्वसंजिता।
शवाङ्गगन्धपूतहारि-वारि-राशि-स(स्य)न्दिनी
जगत्त्रिदोषतस्तनुं पुनातु जह्नुनन्दिनी॥ ६॥

चकोर, चक्रवाक, हंस आदि पक्षियोंसे सुशोभित तटवाली, अपनी पवित्र जलराशिके द्वारा मृणालखण्ड, यज्ञीय धूम तथा पवित्र वायुके सत्त्वको भी तिरस्कृत करनेवाली, शवोंके देहकी दुर्गन्धका हरण करनेपर भी पवित्र जलराशिवाली जह्नुनन्दिनी भगवती गंगा सांसारिक त्रिविध दोषोंसे दूषित मेरे शरीरको पवित्र करें॥ ६॥

रसालवेतसीतमालसालकुञ्जपावनी
मयूरकोकिलप्रमत्ततीरशोभितावनी।
अनेकदेशकूलवातकालभीतिदण्डिनी
जगत्त्रिदोषतस्तनुं पुनातु जह्नुनन्दिनी॥ ७॥

तटवर्ती आम्र, बेंत, तमाल, साल आदि वृक्षोंके कुंजोंको पवित्र करनेवाली, आनन्दमें निमग्न होकर कलरव करनेवाली कोयलों तथा मयूरोंसे शोभायमान तटवाली, अनेक देशोंसे होकर बहते हुए अपने तटवर्ती पावन वायुके प्रभावसे कालको भी भयभीत करनेवाली जह्नुनन्दिनी भगवती गंगा सांसारिक त्रिविध दोषोंसे दूषित मेरे शरीरको पवित्र करें॥ ७॥

नरेन्द्रपुत्रमुक्तिदा सुरेन्द्रलोकसाधनं
स्वसेवकाय दात्रिका मृतं [सुतं] सुमित्रकं धनम्।
नदीशपूरसङ्गमेन विश्वतापकन्दिनी
जगत्त्रिदोषतस्तनुं पुनातु जह्नुनन्दिनी॥ ८॥

महाराज सगरके भस्मीभूत साठ हजार पुत्रोंको मोक्ष प्रदान करनेवाली, देवलोकको प्राप्त करानेवाली, अपने भक्तोंको पुत्र-बन्धु और धन-धान्यादि देनेवाली, सागरके साथ संगमित होकर इस जगत्के समस्त पाप-तापोंका विनाश करनेवाली जह्नुनन्दिनी भगवती गंगा सांसारिक त्रिविध दोषोंसे दूषित मेरे शरीरको पवित्र करें॥ ८॥

नवप्रवाहसंचलद्विलोलवीचिदोलितं
श्वमीनकंककर्चितं (चर्वितं) शृगालकाकभक्षितम्।
नरं विलोक्य सादरं विकुण्ठलोकगामि (नं)
वदन्ति देवि! देवता भृशं त्वदीयविस्मयम्॥ ९॥

हे देवि गंगे! आपके जलप्रवाहसे उठती हुई चंचल तरंगोंसे आन्दोलित होते हुए और श्वान, मीन, गृध्र आदिसे चबाये तथा शृगाल, काक आदि जीवोंसे खाये जाते हुए शवको वैकुण्ठकी ओर गमन करते हुए देखकर देवगण आपके लोकोत्तर सामर्थ्यका बड़े ही समारोहपूर्वक गान करते हैं॥ ९॥

विदेहि देवि मे मतिं त्वदीयवारिसेवने
शुभेततरेकदा (?) प्रतीतिरस्तु मां (=या) बुधे।
तवाम्बुपानादरात् प्रकुप्यति प्रतिक्षणं
त्वदीयवीचिवीक्षित: (=तै:) प्रपा (=या) तु देवि मे दिनम्॥ १०॥

हे देवि गंगे! मैं आपके जलका सर्वदा सेवन करूँ—ऐसी निर्मल बुद्धि मुझे प्रदान करें, हे देवि! एकमात्र आप ही परमकल्याणकी दात्री हैं—ऐसा दृढ़ विश्वास मुझे प्रदान करें, हे गंगे! आपके पवित्र जलका आदरपूर्वक सेवन करते हुए तथा आपकी तरल तरंगोंका अवलोकन करते हुए मेरा प्रत्येक दिन व्यतीत हो॥ १०॥

मुरारिपादसेविना विरामखानसूनुना
सु (शु) भाष्टकं शुभं कृतं मया गुरुप्रभावत:।
पठेदिदं सदा शुचि: प्रभातकालतस्तु य:
लभेत् (त) वाञ्छितं फलं स जाह्नवीप्रभावत:॥ ११॥

भगवान् विष्णुके चरणोंके सेवक, विरामखान (बैरमखाँ)-के पुत्र मुझ अब्दुर्रहीम खानखानाके द्वारा गुरुदेवके कृपा-प्रभावसे इस मंगलमय गंगाष्टकका प्रणयन किया गया। जो मनुष्य प्रात:काल पवित्र होकर श्रद्धापूर्वक इस स्तोत्रका पाठ करता है, उसे भगवती जाह्नवीकी कृपासे इच्छित फलोंकी प्राप्ति हो जाती है॥ ११॥

[विश्वज्योति]

अँगरेज कवियोंका गंगा-प्रेम

(श्रीकिशोरीलालजी खन्ना)

गंगाका जादू केवल भारततक ही सीमित नहीं रहा, वह सारे संसारमें फैला हुआ है। आज गंगा इस देशकी ही नहीं, विश्वभरकी विभूति हो गयी है। वह तो समस्त मानव-जातिके लिये ही ईश्वरीय देन, ईश्वरीय वरदान है। उसके भौतिक लाभका भी सौभाग्य भारतने अवश्य पाया है, परंतु उसका प्रेरणा-पूर्ण सन्देश तो देश और जातिकी दीवारें छेदता हुआ प्रत्येक मानवके लिये है। हम लोग भले ही प्रकृतिके टुकड़े-टुकड़ेकर अपनी-अपनी अलग दुनिया बनाकर आपसमें बँट जायँ और एक-दूसरेको गैर समझने लगें; परंतु इससे हम सम्पूर्ण प्रकृतिके एकत्वको कदापि नष्ट नहीं कर सकते।

खेदका विषय है कि हम भारतीयोंमें इस सम्बन्धमें बड़ी संकीर्णता है। दूसरोंकी अच्छी वस्तुओंकी उचित परख और सराहना तो दूर, हम अपनी ही वस्तुओंसे अनभिज्ञ रहते हैं। इसके विपरीत अँगरेज, चाहे अन्य विषयोंमें उनमें ऐब हों, सराहनाके विषयमें बड़े ही उदार हैं। उनमें ऐसे कई उच्च कोटिके साहित्यकार और कलाकार हुए हैं और हैं, जिन्होंने बड़ी तन्मयता और सुन्दरतासे हमारे देशके सौन्दर्यका वर्णन किया है। गंगाकी मोहिनीने भी उनपर असर किया, जिससे उसके प्रति अँगरेजी-साहित्यमें बड़े सुन्दर उद्गारोंका सृजन हुआ और वह समृद्ध बना।

जिन सहृदय अँगरेज कवियोंने भारतवर्षको देखा—गंगाको निरखा—उन्होंने तो श्रीगंगाके सौन्दर्यको अपनी कवितामें बाँधा ही; परंतु उन अँगरेज कवियोंपर भी गंगाकी माया चली, जिन्होंने वस्तुतः भारतवर्षके कभी दर्शन भी नहीं किये, परंतु कल्पनाद्वारा अन्तरमें उसके सौन्दर्यकी अनुभूति की और काव्य-वाणीके रूपमें उसे व्यक्त किया। महाकवि शैली (Shelley) इन्हींमेंसे एक थे।

एच० एच० विलसन (H. H. Wilson) एक सुप्रसिद्ध कवि हुए हैं, जो अपने भारतीयसाहित्यानुरागके लिये विख्यात हैं। इन्होंने महाकवि कालिदासके मेघदूत (Cloud Messenger) का सुन्दर अनुवाद भी किया है। श्रीगंगाजीपर इन्होंने बड़ी भावपूर्ण और उच्च रचनाएँ की हैं। वे एक जगह कहते हैं—

Upon Gange's ample breast
The signet is alike imprest,
That manifests the will divine
Ever in Nature to combine—
The fair and good, and use and grace
For all the haunts of human race.

'गंगाके विशाल वक्षःस्थलपर मानो एक छाप-सी पड़ी हुई है, जो मानव-जातिके हितार्थ प्रकृतिमें 'शिवं और सुंदरम्' का 'उपयोग और शोभा' के साथ सम्मिश्रण करनेकी ईश्वरीय इच्छाको प्रकट करती है।'

एक दूसरे स्थानपर भारतके प्रति अनुराग और आदर दरसाते हुए लिखा है—

India's simple daughters
Assemble in those hollowed waters,
With rase of classic model laden
Like Grecian or Tuscan maiden.

'भारतकी सरल बालाएँ (गंगाकी) उथली जल-राशिमें इकट्ठी होती हैं। वे ग्रीस या टस्कन कुमारियोंकी भाँति कलापूर्ण कलशोंको लिये हुए होती हैं।'

एक जगह आप गंगाकी जोरदार हिमायत करते हुए लिखते हैं—

Such are the scenes the Ganges shows,
As to the sea it rapid flows,
And all who love the works to scan
Of Nature, or the thoughts of man,
May here unquestionably find
Pleasure and profit for the mind.

'ऐसे गंगाके दृश्य हैं, जब वह वेगसे समुद्रकी ओर बहती हैं। वे लोग, जो प्रकृतिकी कृतियों या मनुष्यके विचारोंकी जाँच करना पसन्द करते हैं, यहाँ मनके लिये निस्सन्देह आनन्द और लाभ पायेंगे।'

आनन्द और लाभ दोनों ही प्रदान करनेमें गंगाकी श्रेष्ठता है। इनके अतिरिक्त पानेके लिये और है ही क्या?

श्रीविलसनने गंगाका वर्णन बड़ी बहुलतासे किया है। यहाँ स्थानाभावसे सबका उल्लेख नहीं किया जा सकता। इतनेपर भी वे एक जगहपर लिखते हैं—

Many a gleam I fail to catch

'अनेक दृश्योंको पकड़नेमें मैं असफल ही रहा।' इससे श्रीगंगाका सौन्दर्य-प्राचुर्य ही प्रकट होता है।

रेजिनाल्ड हेबर (Reginald Heber), रैटरे (Rattray), एटकिंसन (Atkinson), एच० एम० पारकर (H. M. Parker) प्रभृति अनेक कवियोंने भी गंगापर अपने-अपने भावनानुसार खूब लिखा है। डब्ल्यू० एफ० थांपसन (W. F. Thompson) नामक कविकी गंगाविषयक कविताएँ विशेष उल्लेखनीय हैं। यह कवि गंगापर विह्वल-विमुग्ध है और इसने बड़ी तन्मयतासे गंगापर लिखा है। इसके लिये उसने एक रूपकका सहारा लिया है, जिसमें एक योगी—जिसका गंगा ही सर्वस्व है—उसे पानेके लिये अति आतुर है। गंगाजीके दर्शन न पानेपर वह कह उठता है—

In every haunted spot,
I've sought thee till my spirit sunk,
For oh! I found thee not.

'प्रत्येक जन-संकुल स्थानपर मैं तुझे खोज चुका हूँ—यहाँतक कि मेरे प्राण हार चुके हैं; क्योंकि उफ्! मैंने तुझे नहीं पाया।'

फिर भी, कवि हृदयस्पर्शी भाषामें कहता है—

For thee we burn and die,
But let us find thee first.

'तुम्हारे लिये हम जलते और मरते हैं (सब कुछ सह और सब कुछ त्याग रहे हैं!), किंतु पहले तुम्हें पा तो लें।'

एक जगह गंगाकी सुषमाका कितना सुन्दर वर्णन किया है—

And when upon thy glassy stream,
Descends the glow of even,
It seems—oh does it only seem—
Thy wave to mix with heaven.

'और जब तेरी चमकीली धारापर सन्ध्याकी छाया उतरती है, तो ऐसा जान पड़ता है कि तेरी तरंग आकाशसे मिल गयी।' [गीताधर्म]

मुसलिम विद्वानोंकी दृष्टिमें गंगा मइया

(श्रीबद्री नारायणजी तिवारी)

भारतीय अस्मिताकी पहचान गंगासे होती है, हिन्दी साहित्यके महान् कविने भागीरथी गंगाकी स्तुतिमें तल्लीन होते हुए कितनी भावपूर्ण रचना की, जिनका नाम सैयद गुलाम नबी था। और 'रसलीन' उपनामसे बहुचर्चित हुए।

विश्नु जू के पग तें निकस संभू सीस बसि,
भगीरथ तप तें कृपा करी जहान पैं,
पतितन तारिबे की रीति तेरी ऐसी गंगा
पायी रसलीन आन्ह तेरेई प्रमाण पै...
कालिमा कालिंदी सुरसती अरुनाई दौड़,
मेटि-मेटि कीन्हें सेतु आपने विधान पैं
तोंही तमोगुन, रजोगुन सब जगत के,
करिके सतोगुन चढ़ावत विमान पैं

देशके सुविख्यात राष्ट्रीय शायर नजीर बनारसी भी गंगाके रंगमें इतने डूबे थे कि उनकी प्रस्तुत पंक्तियाँ उसको प्रमाणित करनेहेतु पर्याप्त हैं, जो मध्य रात्रिके बादका तथा प्रातःकालका दृश्य नजीर साहबके भावोंको

अभिव्यक्त करता है—

अगर कभी आये दिलकी टूटी, लहर-लहरने दिया सहारा।
भरी है ममतासे माँकी गोदी, नहीं है गंगाका ये किनारा॥
जो थपकियाँ मौत दे रही है, तो लोरियाँ भी सुना रही है।
और इस तरहसे कि जैसे माँ, अपने बालकोंको सुला रही है॥
मिला है गंगाका जल जो निर्मल, उतरके ऊषा नहा रही है।
हवा है या रागिनी है कोई, टहलके वीना बजा रही है॥

प्रात:कालका एक दृश्य द्रष्टव्य है—

काशी नगरीके मन्दिरोंके कलश सूर्य किरणोंसे चमक रहे हैं।
अँधेरे करते हैं साफ रसता, सवारी सूरजकी निकल रही है॥
किरन-किरन अब कलस-कलसको, सुनहरी माला पिन्हा रही है।
है रात बाकी हवाके झोंके, अभीसे कुछ गुनगुना रहे हैं॥
अगर कथा कह रहे हैं तुलसी, कबीर दोहे सुना रहे हैं।
अमर हैं वे संत और साधु, जो मरके भी याद आ रहे हैं॥
जो काशी नगरीसे उठ चुके हैं, वो मनकी नगरी बसा रहे हैं।
पहनके आबे रवाँ की साड़ी, रवाँ है सीमाबवार गंगा॥
रवाँ है मौजें कि माँके दिलकी तरहसे है बेकरार गंगा।
यहाँ नहीं ऊँच-नीच कोई, उतारे है सबको पार गंगा॥
नजीर अन्तर नहीं किसीमें, सब अपनी माताके हैं दुलारे।
यहाँ कोई अजनबी नहीं है, न इस किनारे न उस किनारे॥

वाह, आगराके तेजस्वी कवि वहीद बेग 'शाद' की कलम तथा ओजस्वी वाणीसे कवि-सम्मेलनोंमें राष्ट्रभक्तिका जज्बा छा जाता था, उन्होंने गंगाको किस रूपमें देखा है—

इस माँने बेटोंको इतना प्यार दिया है।
पापविनाशी गंगा-जैसा दरिया बहा दिया है॥
भारत माताकी धरतीने ऐसे लाल जने हैं।
जिनने खेलों-खेलोंमें शेरोंके दाँत गिने हैं॥
जब-जब इस धरतीपर कोई विपदा आन पड़ी है।
तब बेटोंने खून दिया है, इसकी लाज रखी है॥
गद्दारोंको हरगिज सपने नहीं संजोने देंगे।
कैसे अपनी माँके टुकड़े-टुकड़े होने देंगे॥
शाद काश्मीरपर बच्चा-बच्चा कट जायगा।
अब भारतमें कोई खालिस्तान न बन पायेगा॥

देशके स्वाधीनता वर्ष सन् १९४७ ई० के रामनवमी महापर्वपर 'रामनौमी' शीर्षकका मुस्लिम विद्वान् जनाब सैयद मुहम्मद रिजवी मख्मूरद्वारा लिखा लेख आज इतने वर्षों बाद भी राष्ट्रीय एकता और अखण्डताकी मशाल है, जो वर्तमान समयमें भी धार्मिक उन्मादके आतंकवादके गहन अन्धकारमें भटकते समाजको भरपूर रोशनी दिखानेमें समर्थ होगा, उनके रामनौमी शीर्षक विस्तृत लेखकी कुछ पंक्तियाँ ही भारतीय अस्मिताको रेखांकित करनेके लिये पर्याप्त हैं—

'जो मुझे अर्ज करनी है, यह है कि मैं गरीब भी आप सबकी तरह हिन्दी हूँ।'

हिमालय और विन्ध्याचल, गंगा और जमुना, पुष्कर और अजमेर, द्वारिकाधीश और जामा मस्जिद, इलोराके ग़ार और ताज बीबीका रौज़ा भारत मन्दिरकी मूर्तियाँ हैं और उन सब मतवालोंकी तरह, जो वतनका जमाल पूजते हैं, मैं भी इन देवताओंका पुजारी हूँ, मैं भी इसी एक सरजमींका गेहूँ खाता हूँ, इसीका पानी पीता हूँ और यहींकी हवासे मेरी जिन्दगी कायम है, मेरा गोश्त, मेरी हड्डियाँ इसी जमीनकी पवित्र मिट्टीकी दूसरी शक्ल हैं, यहाँके मुनाजिर, यहाँका तमद्दुन, यहाँका साहित्य, यहाँका आर्ट मेरे खूनमें मिला हुआ है, मेरी फितरतका जुवा है, यहाँ मेरा पैदायशी हक है... 'रामायण सबसे पहले वाल्मीकि और फिर तुलसीदासने लिखी जहाँतक रामचन्द्रजीसे मुहब्बतका ताल्लुक है, मुझे तो हिन्दोस्तानका हर जीव, हर वाशिंदा वाल्मीकि और तुलसीदास ही नजर आता है...'

युवा कवि वाहिद अली वाहिदने गंगाकी उत्पत्तिसे लेकर उसके माहात्म्यकी कितनी सुन्दर व्याख्या प्रस्तुत पंक्तियोंमें की है—

ब्रह्मकमंडल से निकली तब रुद्र जटा में समा गयी गंगा,
राजा भगीरथ के तप से इस भारत भूमि पे छा गयी गंगा।
तारनहार कहाने लगी जनमानस के मन भा गई गंगा,
विश्व में देश कई थे परंतु, ये राम के देश में आ गयी गंगा॥

माँ के समान जगे दिन रात जो, प्रात हुई तो जगाती है गंगा,
कर्म प्रधान सदा जग में, सब को श्रम पंथ दिखाती है गंगा।
संत असंत या मुल्ला महंत सभी को गले से लगाती है गंगा,
ध्यान, अजान, कुरान, पुरान से भारत एक बनाती है गंगा॥
प्यारी हुई गुरुभूमि को सींच के धूल में फूल खिला रही गंगा,
घोर प्रदूषण को सहके अभी लाखों को वारि पिला रही गंगा।
ढीमर, केवट के परिवार को जीविका नित्य दिला रही गंगा,
बाँट रहे कुछ लोग हमें पर विंध्य से कंध मिला रही गंगा॥

कविवर वाहिद गंगा-प्रदूषणको मानसिक विभाजनसे सम्बद्धकर उसे सद्भावमें परिवर्तित करनेहेतु हृदयस्पर्शी पंक्तियोंमें कहते हैं—

बात राम की करते हैं तो रमजानी की बात करें,
या कुरान की बात करें तो गुरुवानी की बात करें।

वाहिद चेतावनी देते हुए सचेत करते हैं—

गंगा जल की बातें करते, स्वयं गटर में बैठे हैं,
मरा आँख का पानी जिनके, मत पानी की बात करें।

बस्ती जनपदके श्रमजीवी कविवर रहमान अली 'रहमान'ने रामकथाके 'गंगा तटपर सुमंत' शीर्षक रचनाके मार्मिक प्रसंगके भाव कुछ पंक्तियोंमें व्यक्त किये हैं—

कुछ लौट चले थोड़ा चल कर, कुछ ने तमसा को पार किया,
शेष को छोड़ चले सोते, प्रभु ने ऐसा व्यवहार किया।
फिर पहुँच गये गंगा तट पर, केवट को प्यार अपार किया,
मैं रहा देखता खड़ा-खड़ा तीनों ने गंगा पार किया॥

वर्तमान रचनाकार भी अपनी रचनाओंमें गंगाजीको स्मरण करते रहते हैं, युवा शायर जावेद गोंडवीके शब्दोंमें—

सारे हिंदोस्ताँ की दीपावली हो जायगी,
प्यार के दीपक जलाओ रोशनी हो जायगी।
अपनी आशाओं पे टपकाते रहो गंगा का जल,
एक दिन सूखी हुई डाली हरी हो जायगी॥

राष्ट्रीय कवि दीन मुहम्मद दीनका भारत-प्रेम राष्ट्रीय एकताके भावोंसे कितना ओत-प्रोत है, जिसमें उनका स्वदेश प्यार कण-कणमें व्याप्त है—

गीता, रामायण हो या फिर हो कुरान की वाणी,
प्रेमसहित रहना सिखलाये करे न वह मनमानी।
नदियों का पानी अमृत है पावन गंगा जल है,
पग-पग जिसका पूजनीय है वन्दनीय हर स्थल है।

बहुचर्चित साहित्यकार राही मासूम रजा सुविख्यात राष्ट्रीय शायरके रूपमें विख्यात हैं। 'महाभारत' धारावाहिकसे वह जन-जनमें रच बस गये थे। 'रामायण' तथा 'महाभारत' जैसे दो कालजयी महाकाव्य भारतकी अस्मिताकी पहचान हैं। उत्तर प्रदेशके गंगातटपर बसे गाजीपुरके असीम प्यारने राही मासूम रजाकी इन हृदय-स्पर्शी पंक्तियोंमें गंगा मइयाके प्रति किस समर्पित भावसे-काव्याजंलि प्रस्तुत की, वह द्रष्टव्य है—

मुझे ले जाके गाजीपुर में गंगा की गोदी में सुला देना, वो मेरी माँ है, वह मेरे बदनका जहर पी लेगी।
जहाँ से मुझको गाजीपुर ले जाना, हो न मुमकिन तो फिर मुझको,
अगर शायद वतन से दूर, इतनी दूर मौत आये, अगर उस शहर में छोटी सी इक नदी भी बहती हो।
तो मुझको उसकी गोदी में सुलाकर उससे कह देना कि यह गंगा का बेटा आज से तेरे हवाले है।

बहुभाषाविद् अब्दुल रहीम खानखाना 'रहीम' नामसे बहुचर्चित हैं, रहीम मुगलकालमें प्रधानमन्त्री तथा सेनापति थे, वे संस्कृत, फारसी, अरबी, तुर्की तथा हिन्दीके विद्वान्, काव्य-सृजनमें अग्रिम पंक्तिके महाकवि एवं विश्वकवि संत तुलसीदासके घनिष्ठ मित्रोंमें थे, उनका संस्कृतमें रचित गंगाष्टक बहुत ही सुन्दर है, प्रथम श्लोककी भावपूर्ण पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

अच्युतचरणतरङ्गिणि मदनान्तकमौलिमालतीमाले।
त्वयि तनुवितरणसमये हरता देया न मे हरिता॥

[केरल हिन्दीसाहित्य अकादमी]

फारसी कवितामें गंगाका महत्त्व-वर्णन

(विद्यासागर श्रीदेवीनारायणजी बी० ए०, एल-एल० बी०)

संस्कृत, हिन्दी आदि भाषाओंमें तो गंगाजीके महत्त्वका विशेष रूपसे वर्णन है ही परंतु फारसी भाषाके अनेक विख्यात हिन्दू तथा मुसलमान कवियोंने भी गंगापर अत्यन्त मनोरम, भक्तिपूर्ण एवं हृदयग्राही कविताएँ लिखी हैं।

फारसी भाषाके परम प्रसिद्ध कवि एवं फकीर शेखअली हर्जी जब ईरानसे काशी आये और यहाँ रहने लगे तो वे काशी और गंगाके अत्यन्त भक्त हो गये। उन्होंने लिखा है—

परीरुखाने बनारस बसद करश्मः व रंग,
बराये करदन अश्नान चूँ कुनन्द आहंग।
कुनंद सिज्दह ब महदेव तन देहन्द ब आब,
जहे शराफते संग व जहे लताफते गंग॥

अप्सराओं-जैसी मुखाकृतिवाली काशीकी सुन्दरियाँ वस्त्राभूषणोंसे अलंकृत होकर जब गंगास्नानके लिये जाती हैं, तब पहले महादेवजीके सामने सिर झुकाती और जलमें गोते लगाती हैं। अहा! उस समय महादेवकी मूर्तिकी महिमा और गंगाजीके जलकी लोकप्रियताका वर्णन कौन कर सकता है!

फारसीके प्रसिद्ध कवि शेख सुभानी, जो प्रायः औरंगजेबके समयमें हुए थे, काशीका वर्णन करते हुए गंगाजीपर भी लिखते हैं—

खुशा गुल्जारो बुस्ताने बनारस,
खुशा अजहारे रैहाने बनारस।
किनारे गंगो संगीं फर्श हायश,
सफे खूबाँ दर अश्नाने बनारस॥

अर्थात् बनारसके बाग, फूल, कलियाँ, तुलसीके वृक्ष आदि क्या ही सुन्दर हैं। गंगाके किनारे पत्थरकी सीढ़ियोंपर भक्तोंकी टोलियाँ स्नान कर रही हैं।

उर्दू-फारसीके प्रसिद्ध कविसम्राट् दिल्लीनिवासी गालिबने काशीकी प्रशंसामें एक मस्नवी लिखी है, जिसका नाम 'चिरागे दैर' अर्थात् मन्दिरका दीपक है, जिसके कुछ पद्योंमें बतलाया गया है कि गंगाके कारण ही काशीकी यह अपार महिमा है—

सु खुनरा नाजिशे मीनो कामाशी,
जेगुलबाँगे सितायश हाय काशी।
तआलल्लह बनारस चश्म बद दूर,
बिहिश्ते खुरम्मो फिरदौस मामूर।
बनारस रा कसे गुफ्ता चुनीनस्त,
हनोज अज गंग चीनश बर जबींनस्त।
मगर गोई बनारस शाहिदे हस्त,
जे गंगश सुबह वो शाम आईन दर दस्त॥
ब गंगश अक्सता पर तो फगन शुद,
बनारस खुद नजीरे खेश्तन शुद।

अर्थात् काशीकी प्रशंसासे कविताको भी अपनी सुन्दरतापर गर्व हो जाता है। परमात्मन्! बनारस क्या ही मनोरम और आनन्ददायक स्वर्गस्थान है। बनारसपर किसीने कटाक्ष किया कि ऐसा है, इस कारणसे अबतक उसके मस्तकपर गंगाकी लहररूपी सिकुड़न पड़ी हुई है। अर्थात् जब कोई आदमी किसीपर क्रोध करता है तब उसके ललाट-पटपर सिकुड़न पड़ जाती है। बनारसपर किसी व्यक्तिने कटाक्ष किया इसलिये उसके मस्तकपर गंगाजीकी लहररूपी सिकुड़न अबतक बराबर पड़ी हुई है।

यदि काशीकी उपमा एक सुन्दरी स्त्रीसे दी जाय तो गंगाजल सबेरे-साँझ उसके देखनेका आईना है। जैसे कोई सुन्दरी जब प्रातः-सायं शृंगार करनेको बैठती है तब वह हाथमें दर्पण लेकर अपने रूप, यौवन और शृंगारको उसमें देखकर प्रसन्न होती है। उसी प्रकार काशी भी अपने सौन्दर्यको सबेरे-साँझ हमेशा गंगाजीके जलमें देखा करती है।

काशीका प्रतिबिम्ब जिस समय गंगाजीमें पड़ता है, उस समय उसकी कोई दूसरी उपमा नहीं दी जा सकती।

फारसीके प्रसिद्ध कवि लाला मित्तनलाल, जिनका तखल्लुस 'आफरीं' था और जो इलाहाबादके रहनेवाले थे, अपनी प्रसिद्ध मस्नवीमें लिखते हैं—

विहिश्ते गंग गर मीनू सरिश्तस्त,
कुजा मानिन्द ईं गंगे विहिश्तस्त।
वहारश री कशे गुलजार मीनू,
कि अज गंगास्त आँरा आबदरजू।
जे बरना ता असी शक्ले कमानस्त,
चो चिल्लह आबे गंगा दरमियानस्त।
विनायश आँ चुना नजदीक गंगस्त,
कि बाहम मुत्तसिल चूँ आबो रंगस्त।
दर औवल सैर ईं गुल्जार राना,
चो आवज सर रवाँ शौसूये गंगा।
कि बर दरिया दिलाने पाके किरदार,
सफा शर्तस्त दर आगाज हरकार।
बेह कि जनम गोतः बदरियाये गंग,
ता गोहरे फैज दर आरम बचंग।
मफर्स अज फैज गुस्लश ऐ खिरदवर,
चो लवरा बा नमे आबश कुनीतर।
न बाशी तिश्नदर बहराये महशर,
न गरदी तफ्तः दर गरमाये महशर।
खुदावन्दा न दानम ताचे आबस्त,
कि अज वै अब्रे रहेमत कामयाबस्त।

अर्थात् यदि स्वर्गकी गंगाकी प्रशंसा इस बातमें है कि वह स्वर्गमें है तो वह इस गंगाकी कदापि बराबरी नहीं कर सकती; क्योंकि यह गंगा तो स्वयं स्वर्ग प्रदान करनेकी शक्ति रखती है।

गंगाके तटका सौन्दर्य स्वर्गके सौन्दर्यके समान है; क्योंकि स्वर्गमें भी जो नहरें बह रही हैं, उनका सम्बन्ध इस गंगासे है।

वरणासे असीतक बनारसका आकार धनुष-जैसा है और बीचमें गंगाकी धारा प्रत्यंचा (धनुषकी डोरी)-जैसी सुशोभित होती है।

गंगाके तटपर विशाल भवन इस प्रकार आपसमें सटे हुए हैं कि जैसे पानी और रंग आपसमें मिल जाते हैं।

यदि गंगास्नानका पूर्ण रूपसे फल प्राप्त करना हो तो पहले श्रद्धासहित गंगाजीको सिर झुकाना चाहिये, जैसे गंगाजी स्वयं हिमालयसे काशी नमस्कार करती हुई आती हैं; क्योंकि पहले पुण्यात्मा लोगोंको प्रत्येक कार्यमें शुद्धता अपेक्षित है।

क्या ही अच्छा है कि गंगाजीमें गोता लगाया जाय, ताकि पुण्यका मोती हाथ लगे।

गंगा-स्नानका माहात्म्य मुझसे न पूछो। यदि तुम अपने होठोंको उसके पानीसे तर कर लोगे तो महायात्रा (मृत्यु)-के वनमें प्यासे न रहोगे और प्रलयके भयंकर तापमें पड़कर न जलोगे।

हे परमात्मन्! इस गंगाके पानीमें कहाँसे ऐसी विलक्षणता आयी कि दया-धर्मके मेघोंने भी इसीसे उदारताका जल ग्रहण किया। [गीताधर्म]

'गंग नहाओ'

(श्रीदेवीचरणजी पाण्डेय 'चरण')

नव प्रभात जल गंग नहाओ।
पावन परिमल जल बहता है, कंठ-कंठ मन मोद बढ़ाओ॥
कल-कल शीतल जल की धारा, तन-मन मधु रस सरस बहाओ।
नव रस सजग सरोज पर्ण पुट, चन्दन चर्चित नेह जगाओ॥
लहर-लहर पर बगर जाय मन, अंजलि भर अनुराग लगाओ।
अन्तर मल धुल जाय एक क्षण, रग-रग में संसार बसाओ॥
सगर सुतन सों तर जाये तन, महा भगीरथ मन को बनाओ।
जड़ जंगम जाह्नवी युक्त हो, कर फल पाकर ज्योति जलाओ॥
पावन हुआ प्रयाग गंग से, सुधा धार में नित्य नहाओ।
'चरण' बालुका परिपूरित हो, धन्य-धन्य सिर गंग चढ़ाओ॥

योग-साधनामें गंगाका महत्त्व

(ब्रह्मचारी श्रीआनन्दजी)

शरीरका आत्माके साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है। बिना शरीरका आश्रय लिये आत्माकी तो अभिव्यक्ति ही नहीं हो सकती और न आत्माकी प्राप्ति ही। इसीलिये ब्रह्मोपासना, आत्म-साक्षात्कार आदिके लिये शरीरकी साधना अत्यन्त आवश्यक होती है।

शरीरकी स्थिति अन्नपर निर्भर है और आत्माकी स्थिति प्राणपर। आत्माका स्थूल रूप जिस प्रकार शरीर है, उसी प्रकार प्राणका स्थूल रूप अन्न है। आत्माकी उन्नति तथा उसकी अभिव्यक्ति होनेमें शरीरकी जितनी आवश्यकता है, शरीरसे भली-भाँति काम लेनेके लिये प्राणकी भी उतनी ही आवश्यकता है। कहना चाहिये कि अन्नका सूक्ष्मांश ही प्राण है और प्राण ही समस्त शरीरमें आत्मारूपसे व्याप्त है अथवा इसे हम यों भी कह सकते हैं कि आत्माकी शक्तिका नाम ही प्राण है और प्राण ही अपनी क्रियाद्वारा शरीरादि रूपमें व्यक्त होता है।

यह तो सभीको अनुभव है कि प्राण निकल जानेपर शरीर मिट्टीमें मिल जाता है, अपने असली रूपमें नहीं रहता, परंतु मिट्टी भी तो आखिर किसीमें जाकर मिलती ही होगी। शास्त्रोंमें ऐसा पाया जाता है कि मिट्टी अपने कारणमें लीन होती हुई अन्तमें प्राणकी अवस्था प्राप्त कर लेती है। जब प्राणसे ही तमाम शरीरकी उत्पत्ति हुई है या प्राणका ही यह शरीर रूपान्तर है तब सबका तिरोभाव प्राणमें ही होगा, यह स्वतः सिद्ध है। प्राणको कर्त्ता, हर्त्ता और कारण मान लेनेके पश्चात् यह माननेमें कभी आगा-पीछा नहीं किया जा सकता कि प्राणको वशमें कर लेना ही जीवन और मृत्युको वशमें कर लेना है।

समस्त संसारमें हम तीन बातें प्रत्यक्ष देखते हैं, जिनमेंसे पहलीका नाम इच्छा, दूसरीका नाम ज्ञान और तीसरीका नाम क्रिया है, परंतु यदि विज्ञानकी दृष्टिसे देखा जाय तो ये तीनों ही इच्छाका रूपान्तर दिखायी देंगी।

किसी कामके करनेके पूर्व मनुष्य इच्छा करता है, फिर कैसे किया जाय और क्या करे? इसे समझता है तब वह उसको कर डालता है। इन तीन रूपोंमें इच्छाका विकास स्पष्ट दिखायी दे रहा है। यद्यपि अवस्था-विशेषके कारण हम तीन रूप देख रहे हैं, परंतु वास्तवमें है सब एक ही।

प्राण ही तो इच्छा है। इसीको अपने-अपने स्थानपर कार्य-भेदसे अनेक नाम दिये गये हैं। यही शक्ति-समूह बनकर मूलाधार चक्रपर अवस्थित है। यह स्थान गुदा और शिश्नके मध्यका भाग है। यहींसे पृष्ठवंशका प्रारम्भ होता है, जिसके आधारसे प्राण अपने अनेक रूपोंमें नाड़ियोंद्वारा समस्त शरीरमें क्रिया कर रहा है।

मूलाधारसे पृष्ठवंश या मेरुदण्डका आश्रय लेकर प्राणकी तीन शक्तियाँ अपना-अपना काम करनेके लिये या अपनी अभिव्यक्ति करनेके लिये सहस्रारकी ओर बढ़ती हैं। यह सहस्रार ही ब्रह्माण्डकी समस्त शक्तियोंका केन्द्र है।

मूलाधारमें व्यष्टिगत प्राण रहते हैं और सहस्रारमें समष्टिगत। व्यष्टि और समष्टिगत प्राणोंका संयोग होनेपर ही प्राणकी पूर्ण अभिव्यक्ति होती है अथवा इसे हम यों भी कह सकते हैं कि आत्मा अपना पूर्ण विकास कर सकता है। बात एक ही है, केवल कहनेके ढंग भिन्न-भिन्न हैं।

मूलाधारके समीपका प्राणपिण्ड सुप्तावस्थामें रहता है। उसे जगाकर उसकी पृथक्-पृथक् शक्तियोंका सहस्रारमें एकीकरण कर देना—बस, यही योगका एकमात्र ध्येय है।

मूलाधारमें प्राण सुप्तावस्थामें रहनेपर भी कुछ न कुछ काम करता ही रहता है। इस बातको हम अगर यों कहें तो अच्छी तरह समझमें आ जायगा कि व्यष्टिगत प्राण समष्टिगत प्राणसे पूर्ण एकत्व अवस्थामें सम्बन्धित न रहनेके कारण पूर्ण शक्तिसे काम नहीं कर पाता है अर्थात् सोया-सा रहता है।

पृष्ठवंश, मेरुदण्ड या रीढ़की हड्डीका आश्रय लेकर प्रधान तीन नाड़ियाँ आज्ञाचक्र अर्थात् भ्रूमध्यतक प्रवाहित होती हैं। ये तीनों नाड़ियाँ वास्तवमें प्राण-शक्तिके ऊपर

जानेके मार्ग हैं।

पाठकोंको अनुभव होगा और यदि न हो तो अनुभव करें कि कभी बायीं नाकसे श्वास निकलती है और कभी दायीं नाकसे। कभी-कभी दायीं और बायीं दोनों ओरसे एक साथ श्वास निकलती है। श्वास चलनेका यह क्रम ही प्राणकी तत्तत् शक्तिके प्रवाहित होनेका परिचय देता है।

श्वास-प्रवाहिका इन्हीं तीनों नाड़ियोंको इडा, पिंगला और सुषुम्ना कहते हैं जो कि क्रमशः ज्ञान, क्रिया और इच्छात्मिका हैं। दूसरे शब्दोंमें इन्हीं नाड़ियोंको गंगा, यमुना और सरस्वती कहते हैं जैसा कि ज्ञान-संकलनी तन्त्रमें लिखा हुआ है—

इडा नाम सैव गङ्गा यमुना पिङ्गला स्मृता।
गङ्गायमुनयोर्मध्ये सुषुम्ना च सरस्वती॥

यही तीनों नाड़ियाँ क्रमशः मेरुपृष्ठके वाम, दक्षिण और मध्य भागमें स्थित हैं, षट्चक्रभेदमें बताया गया है कि—

मेरोर्बाह्यप्रदेशे शशिमिहिरशिरे सव्यदक्षे निषण्णे।
मध्ये नाडी सुषुम्ना त्रितयगुणमयी चन्द्रसूर्याग्निरूपा॥

इसका अर्थ करते हुए व्याख्याकार लिखते हैं कि—

मेरोर्मेरुदण्डस्य बाह्यप्रदेशे बहिर्भागे सव्यदक्षे वामदक्षिणे पार्श्वे शशिमिहिरशिरे चन्द्रसूर्यात्मिकइडा-पिङ्गलानाडीद्वयमिति फलितार्थः—निषण्णे वर्तते।

अर्थात् मेरुदण्डके बाह्य भागके वामभागमें चन्द्रात्मिका इडा, दक्षिण भागमें सूर्यात्मिका पिंगला और मध्यमें अग्न्यात्मिका सुषुम्ना नाड़ी प्रवाहित हो रही है।

पहले लिखा जा चुका है कि मूलाधारपर एक प्राणपिण्ड है—वहींपर उसीको एक विद्युत् लहर त्रिवलययुता कुण्डलिनी प्रसुप्तावस्थामें स्थित है। इसी प्राण-शक्तिको, विद्युत्-तरंग-मालाको प्रवाहितकर सहस्रारसे सम्बन्धित करनेमें उपर्युक्त नाड़ित्रयकी साधना करना आवश्यक होता है। इस साधनाका नाम है—स्वर-साधना।

मेरुपृष्ठके मध्य भागसे सुषुम्ना नाड़ी प्रवाहित होती है। इसी नाड़ीमेंसे कुण्डलिनीको सहस्रारतक पहुँचाया जाता है। इस क्रियामें इडा और पिंगला इन दो नाड़ियोंके द्वारा प्रवाहित श्वासकी साधना करनी होती है।

प्रकारान्तरसे यह पूर्व ही स्पष्ट किया जा चुका है कि इडा ज्ञान-प्रधाना, पिंगला कर्म या क्रियाप्रधाना तथा सुषुम्ना इच्छाप्रधाना है। इच्छाप्रधाना सुषुम्नासे प्राण-शक्ति या इच्छा-शक्तिको प्रवाहित करनेका अर्थ है—प्राण-शक्तिको या इच्छा-शक्तिको जाग्रत् करके बलवती बनाना या सहस्रारसे सम्बन्ध कराना या व्यष्टिगत प्राणको समष्टिगत प्राणसे सम्बन्धित कर देना। कुछ भी कहिये, है सब एक ही बात। इसीको दूसरे ढंगसे हम कह सकते हैं कि ज्ञान और कर्मके समन्वयसे समष्टिकी सेवा करनेकी शक्ति प्राप्त करना।

ज्ञान और कर्मके समन्वयसे भक्तिकी सृष्टि होती है। जिस समय साधक भक्तिकी साधनामें होता है, उस समय उसके चारों ओर पीले रंगका ज्योतिर्मण्डल रहता है। कुण्डलिनीका मार्ग भी पीले रंगका चमकीला है। विद्युत् भी इसी रंगकी होती है। इसका हमारे पाठकोंको भली-भाँति अनुभव ही होगा।

बिना ज्ञानके कर्म नहीं होता और इसके बिना इच्छा भी कैसे हो सकती है? इससे मालूम होता है कि इच्छाके गर्भमें ज्ञान पहलेसे मौजूद रहता है, परंतु प्रकट होता है इच्छाके बाद ही। सबके अन्तमें कर्म होता है, जबकि इच्छा और ज्ञान दोनोंमें कर्म बराबर बना रहता है। तात्पर्य यह है कि तीनों, तीनोंमें परस्पर ओत-प्रोत हैं। इसी प्रकार इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना परस्पर हैं तो ओत-प्रोत, एक-दूसरेके साथ सम्बन्धित और एक दूसरेकी सहायक हैं।

योग-साधनामें प्राणायामका बड़ा भारी महत्त्व है, जिसकी साधनाकी सहायक ये ही नाड़ियाँ हैं। प्राणको लानेवाली इडा, गंगा या चन्द्रनाड़ी है और अपानको ले जानेवाली पिंगला, यमुना या सूर्य नाड़ी है। प्राण और अपानके संयमको, ज्ञान और कर्मके समन्वयको, गंगा और यमुनाके संगमको ही प्राणायाम कहते हैं, यहीं सिद्धि मिलती है और यहीं मुक्ति मिलती है। पुराण-शास्त्रके साथ-साथ योगशास्त्रमें भी इसी महिमाका वर्णन है।

इडा भोगवती गंगा पिङ्गला यमुना नदी।
इडापिङ्गलयोर्मध्ये सुषुम्ना च सरस्वती।
त्रिवेणीयोगः स प्रोक्तस्तत्र स्नानं महाफलम्॥

वस्तुतः यदि देखा जाय तो ज्ञान-कर्म-समन्वित क्रिया सच्ची त्रिवेणी है। इस त्रिवेणीमें स्नान करनेसे ही सच्ची मुक्ति मिलती है।

जीवनकी तमाम साधनाओंमें सर्वत्र प्राण-साधनाका ही उल्लेख दिखायी देता है; क्योंकि इसीकी साधनासे बलकी प्राप्ति होती है। बिना बलके कभी किसीको आत्माकी प्राप्ति नहीं हुई। भगवती श्रुतिने इसीसे स्पष्ट घोषणा की है—

नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः।

प्राणकी साधनाका मतलब है गंगाकी साधना, ज्ञानकी साधना। गंगाका सम्बन्ध चन्द्रमासे है, चन्द्रमाका सम्बन्ध मनसे है और मनका सम्बन्ध ज्ञानसे है; इसीलिये इसी एक इडा नाड़ीका नाम गंगा, चन्द्र और ज्ञान नाड़ी पड़ा है।

स्थूल गंगाका जल मनको शुद्ध बनाता है, यौगिक गंगा प्राणको संयमित करती है और आध्यात्मिक गंगा ज्ञानद्वारा समष्टिके प्रति आत्म-समर्पण करना सिखाती है। इस प्रकार मनकी शुद्धि, बलकी प्राप्ति और निःस्वार्थ मनसे अपनी शक्तिको जनता-जनार्दनके लाभार्थ लगानेकी सच्ची साधना गंगा-सेवनसे ही प्राप्त होती है।

इडाकी साधना प्राणकी साधना है, यह हम पहले ही लिख चुके हैं। इस साधनामें श्वासको इडाद्वारा खींचकर सुषुम्नामें रोककर और पिंगलाद्वारा बाहर निकालकर तथा पिंगलाद्वारा ग्रहण करके सुषुम्नाद्वारा रोककर इडाद्वारा निकालकर प्राण-संयम किया जाता है। आध्यात्मिक भावमें इसीको हम यों कह सकते हैं कि ज्ञानसे कर्मकी उत्पत्तिकी और भक्तिके साथ उसका प्रयोग किया, तदनन्तर ज्ञानमें ही उसको लीन कर दिया, प्रायाणामका यही तो रहस्य है।

आध्यात्मिक और आधिदैविक प्राणायामके साथ आधिभौतिक प्राणायामद्वारा जब मनुष्य सच्ची साधना करता है तब उसे नाड़ी-सिद्धि होती है। अकेली इडासे ही समस्त दिन श्वास लेते रहना या अकेली पिंगलासे ही समस्त दिन श्वास लेते रहना अथवा सुषुम्नाद्वारा ही श्वास प्रवाहित करना—ये सब प्राण-जय होनेपर ही होते हैं। इतनी शक्ति प्राप्त हो जानेपर उस मनुष्यके समस्त काम सफल होते रहते हैं और उसके सामने किसी भी बातका अभाव नहीं आने पाता।

ज्ञान, कर्म और भक्तिमयी शक्तियाँ इडा, पिंगला और सुषुम्नाद्वारा निरन्तर इस प्रकार प्रवाहित होती रहती हैं—

आदौ चन्द्रः सिते पक्षे भास्करस्तु सितेतरे।
प्रतिपत्तौ दिनान्याहुस्त्रीणि त्रीणि क्रमोदये॥

(पवनविजय स्वरोदय)

शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे तृतीयातक, सप्तमीसे नवमीतक और त्रयोदशीसे पूर्णिमातक सूर्योदयसे एक घण्टेतक पहले बायीं नाड़ी अर्थात् इडा चलती है फिर एक घण्टेतक दायीं नाड़ी अर्थात् पिंगला चलती है। इसी प्रकार कृष्णपक्षकी प्रतिपदासे तृतीयातक, सप्तमीसे नवमीतक और त्रयोदशीसे अमावस्यातक सूर्योदयसे एक घण्टातक सूर्य-नाड़ी अर्थात् पिंगला चलती है। एक घण्टेके बाद दूसरे घण्टे इडा चलती है। मध्यके दिनोंमें अर्थात् शुक्लपक्षकी चतुर्थी, पंचमी, षष्ठी, दशमी, एकादशी, द्वादशीमें सूर्योदयसे एक घण्टेतक पिंगला और बादको एक घण्टेतक इडा; इसी प्रकार कृष्णपक्षमें चतुर्थी, पंचमी, षष्ठी, दशमी, एकादशी तथा द्वादशीमें सूर्योदयसे एक घण्टेतक इडा चलती है और दूसरे घण्टेमें पिंगला चलती है। यह एक-एक घण्टेका क्रम बराबर चलता रहता है। यह क्रम स्वस्थ व्यक्तियोंका ही होता है। अस्वस्थ व्यक्तियोंके लिये इस क्रममें उलट-फेर हो जाता है। प्राण-साधक व्यक्ति—जैसे ही उलट-फेर होना प्रारम्भ होता है वैसे ही वे सीधी और नियमित गतिपर प्राणको चलाकर अपनेको रोगी होनेसे बचा लेते हैं। इस क्रममें भी उन्हें इडाकी साधना ही सहायता देती है। अर्थात् गंगा ही उन्हें रोगी होनेसे बचा लेती है। इसलिये इस आधिदैविकवादमें भी **'औषधं जाह्नवीतोयम्'** कहा जाता है।

गंगाके प्रवाहित होनेपर कौन-कौनसे काम करने चाहिये। इसका भी योगशास्त्रमें एक अच्छा खासा विधान है। शिवस्वरोदयशास्त्रमें लिखा हुआ है कि जिस समय ज्ञान-प्रवाहिका इडा नाड़ी चलती हो, उस समय मनुष्यको स्थिर कार्य ही करने चाहिये; जैसे अलंकार-धारण, दूरकी यात्रा, आश्रममें प्रवेश, राजमन्दिर या महल बनवाना,

द्रव्यादिका ग्रहण करना, जलाशय तथा देवस्तम्भकी प्रतिष्ठा करना, यात्रा, दान, विवाह, नया कपड़ा पहनना, शान्ति तथा पौष्टिक कर्म, दिव्यौषधिसेवन, रसायन-कार्य, प्रभु-दर्शन, मित्रता-स्थापन आदि शुभ कर्म करने चाहिये। इसी प्रकार इन्हीं शुभ भावनाओंको रखकर—जिनसे देश और समाजका बहुकालव्यापी कल्याण हो सकता है—गंगास्नान करना चाहिये। ऐसा करनेपर सिद्धि और आनन्द दोनोंकी ही प्राप्ति होती है। हाँ, एक बात यह ध्यान देनेकी है कि ज्ञानकी अवस्थामें कभी-कभी क्रूर कर्म भी हो जाते हैं, जैसे इडा-स्वरके समय अग्नि आदि तत्त्वोंका उदय। इसलिये इडा-स्वरमें जिस समय जल और पृथ्वी-तत्त्वका उदय हो, उसी समय उक्त कार्य करना चाहिये।

इडाकी साधनासे योग-शक्तिकी प्राप्ति होती है। इसलिये संयमकी नितान्त आवश्यकता है। जो लोग बिना संयम किये ही इडाकी या गंगाकी साधना करते हैं, उन्हें उसकी साधनाका शुभ फल कभी नहीं मिलता, परंतु अनिष्ट होनेकी सम्भावना और हो जाती है। यही कारण है कि भौतिक गंगामें असंयमी और भावना-शून्य व्यक्तियोंके स्नान-पान आदि करनेपर भी उन्हें गंगा-स्नानका फल नहीं मिलता। गंगाकी चाहे आध्यात्मिक साधना हो, चाहे आधिदैविक या आधिभौतिक, संयमकी सब स्थानपर आवश्यकता है। संयमसे ही सम्पूर्ण सिद्धियाँ मिलती हैं। जिन लोगोंको विश्वास न हो वे संयमपूर्वक एक बार गंगाकी इस यौगिक-साधनाको करके देखें। निश्चय ही भारतकी इस गंगाकी महत्ताका ज्ञान उन्हें हो जायगा। [गीताधर्म]

जाह्नवीदण्डकम्

(आचार्य श्रीविन्ध्येश्वरीप्रसादजी मिश्र 'विनय')

सन्नीराकारधीरा भुवनमनुगता ब्रह्मणः काऽपि मूर्तिः स्फूर्तिश्चिच्चन्द्रिकायाः शिवशिरसि समुल्लासलीलोल्लसन्ती।
सम्पूर्तिर्धर्मकर्मप्रगुणगुणमयी पुण्यपीयूषधारा धन्या मान्या वदान्या जगति जनिमतां जाह्नवी नः पुनातु॥

सुजननि! जय, जह्नुकन्ये! हरिस्वङ्घ्रिनिर्णेजनाम्भःप्रजन्ये! सुरज्येष्ठपात्रस्थितत्वादनन्ये! शिवस्यापि मूर्धन्यवस्थानपुण्यक्षणाद् धन्यधन्ये! सदाऽऽखण्डलाखण्डसन्मण्डलप्राज्यसाम्राज्यसभ्यस्तुते! भूरिभव्यस्तुते! प्रत्नव्यस्तुते! हव्यकव्यस्तुते! प्रस्तुतेऽस्मिन्स्तुतेः सुप्रसङ्गे, शिवे! देवि गङ्गे! स्वयं ब्रह्मवारिस्फुरत्सत्तरङ्गेऽस्तु ते मङ्गलं मञ्जुले! त्वां नमामो वयं, त्वां नमामो वयं, त्वां नमामो वयम्॥*

जो पवित्र जलका आकार धारण करके ब्रह्माण्डमें व्याप्त परब्रह्मकी कोई अनिर्वचनीय मूर्ति हैं, चैतन्यरूपी चन्द्रिका (चाँदनी)-की जो स्फूर्ति हैं एवं भगवान् शंकरके शिरोभागमें जो उल्लासमयी लीला करती हुई शोभायमान हो रही हैं। धर्म और कर्मकी अत्यधिक समृद्धिकी साधनभूत जो उनकी इतिकर्तव्यतारूप सम्पूर्ति अर्थात् परिणति हैं—ऐसी पुण्यमयी अमृतकी धारा, 'जह्नु' नामक राजर्षिकी पुत्रीके रूपमें विख्यात, जो इस संसारमें जन्म लेनेवाले सभी प्राणियोंके लिये धन्य, सम्माननीय और अत्यन्त उदार हैं, वे हम सभीको पवित्र करें।

हे हम सबकी सुन्दर माता जाह्नवी! भगवान् श्रीविष्णुके सुन्दर चरणोंके प्रक्षालन-जलसे प्रकट होनेवाली! ब्रह्माजीके कमण्डलुमें निवास करनेके कारण अन्य देवियोंसे भिन्न माहात्म्यवाली! भगवान् शिवके मस्तकमें स्थान प्राप्त करनेके रूप पवित्र-क्षणके कारण अत्यन्त धन्यताको प्राप्त! देवराज इन्द्रके अखण्ड सभामण्डपमें विराजमान, सभी सभ्योंद्वारा सदैव स्तवन की जाती हुई, अत्यन्त श्रेष्ठजनों, प्राचीन एवं नवीन सभी लोगोंके द्वारा संस्तुत कल्याणमयी देवि गंगे! आप स्वयं प्रकाशित होते हुए ब्रह्मद्रवकी तरंगवाली हैं, इस स्तुतिके प्रसंगमें हे मंजुले! हम मंगलाभिनन्दन करते हुए आपको बारम्बार नमस्कार करते हैं।

* सानुवाद जाह्नवीदण्डकका प्रथम दण्डक।

लोकसंस्कृतिमें गंगा-दर्शन

गांगी संस्कृति

(डॉ० श्रीप्रणवदेवजी)

संसारके समस्त महान् राष्ट्रोंकी संस्कृति उनकी नदियोंसे प्रादुर्भूत, पालित और पोषित है। जिस प्रकार नील नदीसे पुरातन मिस्र, दजला-फरातसे मेसोपोटामिया (सीरिया) तथा ह्वांगहो-यांग्टिसीक्यांगसे चीनकी पुरातन संस्कृति सम्पोषित हुई है, उसी प्रकार भारतकी महान् संस्कृति सिन्धु-सरस्वतीके साथ ही गंगासे प्रादुर्भूत होकर सम्पुष्ट एवं प्राणवती परिलक्षित होती है।

भारतीय संस्कृति जिस मानवीय आदर्श—त्याग, तपस्या, ज्ञान, कर्म, अध्यवसाय, यज्ञ, दान प्रभृति उच्च उपादानोंपर आधृत है, गंगा इन्हें अनादिकालसे अविकल रूपमें प्रादुर्भूत, प्रभावित और अनुप्राणित करती रही है। भौतिक साधनविहीन मानव अपने अप्रतिहत अध्यवसाय, श्रम एवं साधनासे जिस उत्तुंग सफलताको अधिगत करता है, वह राजा भगीरथके प्रयासपूर्ण पुरुषार्थके प्रतीक 'भागीरथ-प्रयास' (भागीरथी)-रूपमें आज भी लोकजीवनको त्याग-तपोमय बनाकर अनवरत कर्म-साधनामें प्रवृत्त करता है।

महाभारतके देवव्रत गांगेय भीष्मके सर्वांग शुचिता, सत्यवादिता, ब्रह्मचर्य, पितृभक्ति, ज्ञान, शूरवीरता, शील आदि मानवीय आदर्श ही इस गांगी संस्कृतिके श्रेष्ठ निदर्शन बन गये। वेदव्यासने गंगा-गौरवको हृदयंगमकर विभिन्न स्थलोंपर इसका संदर्शन कराया।

आर्यावर्तके अनेक तीर्थ (नगर) गांगेय संस्कृतिके अभिन्न और अविस्मरणीय अंग हैं, जिन्होंने राष्ट्रके राजनैतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्वरूपको समुन्नत बनाया। उत्तरापथके पुरातन सोलह महाजनपदोंमें कुरु, पंचाल, शूरसेन, कोसल, वत्स, काशी, मगध, लिच्छवि, वंग आदि गंगाके पावन प्रवाहसे प्राणवन्त होकर कृषि, पशुपालन, वाणिज्य, उद्योग-धन्धोंसे जहाँ भौतिक समृद्धिके केन्द्र-बिन्दु बने, वहाँ इन्होंने सांस्कृतिक समुत्कर्षका संस्पर्शकर संसारको धर्म, दर्शन, साहित्य, विज्ञान (आयुर्वेद, ज्योतिर्विज्ञान) और ललित कलाओंका अद्भुत अवदान दिया। साहित्य, इतिहास और पुराण-ग्रन्थोंमें गंगातटीय गंगाद्वार (हरिद्वार या मायापुरी) कनखल, गढ़मुक्तेश्वर, सोरों, कम्पिल, फर्रुखाबाद, कान्यकुब्ज (कन्नौज), बिठूर, शिवराजपुर, कानपुर, प्रयाग, मिर्जापुर, काशी, मुंगेर, पाटलिपुत्र (पटना), कलकत्ता आदि अनेक नगरोंका पुरातन गांग्य सांस्कृतिक समुत्कर्ष वर्णित है, जिसमें उत्कृष्ट वास्तुशिल्पके कलात्मक मूर्तियुक्त अनेक सुन्दर मन्दिर, पक्के सोपानयुक्त रम्यघाट, सेतु (पुल), सुदृढ़ विशाल पुरातन दुर्ग, शिक्षाकेन्द्र, विश्वविद्यालय, न्यायालय, कारखाने, बहुमंजिले पक्के भवनों, चौड़े राजमार्गोंवाले नयनाभिराम नगर उल्लेखनीय हैं।

गांगी संस्कृतिका क्षेत्र उत्तरापथका विशाल गंगाबेसिन है, यहाँ पुरातात्त्विक एवं सांस्कृतिक महत्त्वकी विपुल सामग्री विविध स्रोतोंसे समुपलब्ध हुई है, जिनमें विविध रूपके शिवलिंग, उमामहेश्वर, विष्णु, गणेश, कार्तिकेय, दुर्गा, लक्ष्मी, गंगा आदि देवी-देवताओंकी मूर्तियाँ, ऐतिहासिक महत्त्वके अनेक राजवंशोंके सिक्के, ताम्रपत्र, शिलालेख, सीलें, खिलौने, बर्तन, अस्त्र-शस्त्र आदिके अवशेष महत्त्वपूर्ण हैं। मूर्तिकलामें कंकरीले पत्थरपर प्रथम शती ई० से ९वीं शती ई० के बीच बनी कम्पिलसे प्राप्त महिषमर्दिनी दुर्गाके साथ 'मकरवाहिनी गंगा' की मूर्ति गांगेया संस्कृतिको रेखांकित करती है।

तीर्थस्थल भी गांगेया संस्कृतिके मेरुदण्डके समान महत्त्वपूर्ण अंग हैं। गंगा अपनी सहायक सरिताओंको समेटकर संगम-स्थलको सामान्यत: 'प्रयाग' अभिधान देकर त्याग एवं दानमें प्रवृत्त करनेके लिये यज्ञादि धार्मिक अनुष्ठान भी धर्मप्राण जनतासे कराती है। ऐसे

पावन धार्मिक यज्ञीय संस्कृतिके प्रतीक स्थलोंमें प्रयाग, कर्णप्रयाग, देवप्रयाग, रुद्रप्रयाग, विष्णुप्रयाग आदि पंचप्रयाग उल्लेखनीय हैं। काशीके दशाश्वमेधघाट-जैसे अन्य पुण्य स्थल भी इसी अवधारणाकी सम्पुष्टि करते हैं।

गांगी लोक संस्कृति और लोकजीवनकी चारु छटा गंगातटीय ऋतु या पुण्य तिथियोंके पर्वों, मेलों, दशहरा, कुम्भादि पर्वोंके धार्मिक स्नानों यज्ञिय अवभृथों (स्नानों)-में परिलक्षित होती है। कोटि-कोटि नर-नारी, आबाल-वृद्ध देश-विदेशके कोने-कोनेसे सिमटकर गंगाकी अमृत जलधारामें डुबकी लगाकर आनन्दविभोर होकर, समस्त भेदभाव भूलकर आंचलिक वेशभूषा, खान-पान, लोकगीत, लोकनृत्य, लोकवाद्यों आदिसे गांगेया संस्कृतिकी असीम समन्वयात्मक सुषमाको प्रकट करते हैं। चाहे हरिद्वारका कुम्भ पर्व हो अथवा प्रयाग या ज्ञान-विज्ञानकी सांस्कृतिक राजधानी विश्वनाथपुरी काशीका गंगाभक्त जनसंमर्द, महिमामयी गांगी संस्कृतिने पुरातन कालसे लोकमानसको अपने अंचलमें समेटकर परम सुख-शान्ति प्रदान की है।

अनेक आंचलिक ग्राम्य गंगा-गीतोंसे गांगेया संस्कृति लोकजीवन और लोकसंस्कृतिको प्रतिबिम्बित करती हुई, इसकी विराट् भावनात्मक एकतापूर्ण गौरव-गरिमाको आत्मसात्कर इन्द्रधनुषी रंग ग्रहण करती है। जहाँ संस्कृतके मूर्धन्य महाकवियों वाल्मीकि, वेदव्यास आदिने गांगी संस्कृतिके विविध पक्षोंको उजागर किया, वहीं हिन्दी साहित्यके गोस्वामी तुलसीदास, पद्माकर-जैसे अनेक यशस्वी कवियोंने अपने सरस भावोद्गारोंसे अतीतके आलोकमें गांगेया संस्कृतिका संदर्शनकर उसकी पौराणिक, धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं ऐतिहासिक महत्ताको प्रतिपादित किया।

गांगेया संस्कृति महामनीषी ऋषि-मुनियोंकी प्रातः-सायं समुपासना-साधनासे समृद्ध, सुमनसुरभिसे सदैव सुरक्षित है, जिसमें भारतीय जनजीवनकी अद्भुत भगवद्भक्ति, आस्तिकता, पुनर्जन्म तथा इससे आगे परम पद (मोक्ष)-प्राप्तिकी मनोकामना परिलक्षित होती है, जिसमें शाक्तों, शैवों एवं वैष्णवोंका परस्पर अन्तर्द्वन्द्व स्वतः समाप्त हो जाता है। श्रीशंकराचार्य इस भव्यभावनाको इस प्रकार अभिव्यक्त करते हैं—

मातर्जाह्नवि शम्भुसङ्गवलिते मौलौ निधायाञ्जलिं
त्वत्तीरे वपुषोऽवसानसमये नारायणाङ्घ्रिद्वयम्।
सानन्दं स्मरतो भविष्यति मम प्राणप्रयाणोत्सवे
भूयाद्भक्तिरविच्युता हरिहराद्वैतात्मिका शाश्वती॥

हे शिवकी संगिनी मातः गंगे! शरीर शान्त होनेके समय प्राण-यात्राके उत्सवमें, तुम्हारे तीरपर, सिर नवाकर हाथ जोड़े हुए, आनन्दसे भगवान्के चरणयुगलका स्मरण करते हुए मेरी अविचल भावसे हरि-हरमें अभेदात्मिका नित्य भक्ति बनी रहे।

श्रीशंकराचार्यके शब्दोंमें भारतके आस्तिक जनमानसमें कितनी असीम आस्था, श्रद्धा एवं भक्ति समायी है, इस सर्वातिशायिनी संस्कृतिकी सृष्टि करनेवाली पतितपावनी, गतिशालिनी गंगा माँके प्रति—

तव जलममलं येन निपीतं परमपदं खलु तेन गृहीतम्।
मातर्गङ्गे त्वयि यो भक्तः किल तं द्रष्टुं न यमः शक्तः॥

अर्थात् हे माँ गंगे! जिसने तुम्हारा निर्मल जलपान किया, उसने परम पद पा लिया। उसे कभी यम भी नहीं देख सकता है।

गांगेया संस्कृतिका सर्वाधिक वैशिष्ट्य संसारी जनोंमें परस्पर सद्भाव, समानता, सौहार्द आदि सद्गुणोंको सम्बन्धितकर कुकृत्योंको करनेकी कुमति दूर करते हुए उनका विवेक जाग्रत्कर सुखशान्ति-समृद्धि प्रदान करना है। गंगाके एकान्त, शान्त, रम्य कुंजपुंज, तट-गह्वरोंमें पहुँचकर दशानन रावण-सा दुरात्मा दुर्मति दूरकर भक्ति-भावनासे भूतभावन भगवान् शंकरका एकाग्रमनसे चिन्तन, पूजन, जप करता हुआ परम शान्तिकी कामना करता कहता है—

कदा निलिम्पनिर्झरीनिकुञ्जकोटरे वसन्
विमुक्तदुर्मतिः सदा शिरःस्थमञ्जलिं वहन्।
विलोललोललोचनो ललामभाललग्नकः
शिवेति मन्त्रमुच्चरन् कदा सुखी भवाम्यहम्॥
(शिवताण्डवस्तोत्र १३)

सुन्दर ललाटवाले भगवान् चन्द्रशेखरमें दत्तचित्त

हो अपने कुविचारोंको त्यागकर गंगाजीके तटवर्ती निकुंजके भीतर रहता हुआ सिरपर हाथ जोड़ डबडबायी हुई विह्वल आँखोंसे 'शिव' मन्त्रका उच्चारण करता हुआ मैं कब सुखी होऊँगा?

इस गांगेया संस्कृतिने अपनी अप्रतिहत गतिमयता, आस्तिकता, उदारता, शुचिता, निश्छलता, स्निग्धता, व्यापकता आदि अनन्त गुणोंसे आदर्शोन्मुख भारतीयताको इतना अधिक अनुप्राणित किया कि न केवल नाना नर-नारियोंके गंगा, गंगाप्रसाद, गंगाधर, गंगादत्त, गंगेश, भागीरथ, गंगोत्री आदि नाम, अपितु नगरों (गंगाद्वार, गंगानगर) एवं तीर्थस्थलों (गंगासागर, गंगोत्री) आदिके नाम भी प्रगति एवं पावनताके प्रतीक गंगा-अभिधानके साथ जुड़ गये।

१३००० फीट उत्तुंग उत्तराखण्ड एवं भारतके किरीट नगराज हिमालयकी १६ मील लम्बी हिमकन्दरा गोमुख (गंगोत्री)-से प्रादुर्भूत गांगेया संस्कृति-सलिलधाराने न केवल गंगासागरतकके उत्तरापथ (आर्यावर्त्त)-के १५५० मील लम्बे भूखण्डको अपितु विन्ध्याचलपार दक्षिणापथसे बाहर दिग्दिगन्तके देशोंके विश्वमानव हृदयको परमपुरुषार्थी बनाकर अनवरत अभिसिंचित किया, जिससे उनमें करुणा, क्षमा, दया, अहिंसा, उदारता, परोपकार, परिश्रम आदि सद्‌गुणोंके बीज सहज ही अंकुरित, पल्लवित और प्रस्फुटित हो गये। इनकी सुरभि आज भी संसारको सुरभित कर रही है।

संसारकी संस्कृतियोंमें शिरोमणीभूत भारतीय संस्कृतिकी हृदयरूपिणी यह गांगेया संस्कृति आज पापोन्मुखी परुष-प्रवृत्तियोंसे प्रतिदिन प्रदूषित हो रही है। पाश्चात्य सभ्यतासे प्रभावित, प्रभ्रंश्यमान नैतिक मूल्योंवाली आधुनिक आँधीसे, पावन गंगाधाराके समान इसे हम यदि प्रदूषणमुक्तकर विश्वमानवको सन्तापमुक्तकर सुख, शान्ति, समृद्धि प्रदान कर सकें, तभी पूर्ववत् पुरातनी गांगेया संस्कृति गौरवान्वित होकर जनकल्याणकारिणीरूपमें चरितार्थ हो सकेगी।

भारतीय लोकसंस्कृतिमें गंगा

(आचार्य डॉ० श्रीपवनकुमारजी शास्त्री, साहित्याचार्य, विद्यावारिधि, एम०ए०, पी-एच०डी०)

ब्रह्माजीके कमण्डलुसे निकलकर भूतलपर अवतरित भगवती भागीरथी भारतवर्षकी पहचान हैं और उनकी लहरें भारतीय संस्कृतिकी संवाहिका हैं। भारतवर्षमें पतितोद्धारके लिये गोलोकसे सर्वसन्तापहारिणी गंगा उतरी हैं—यह जानकर भारत ही नहीं, अपितु भारत-भावके किसी भी देशमें जन्म लेनेवाला मनुष्य गंगाकी कामना करने लगा। जिसे गंगा नहीं मिलीं, केवल जल ही मिला तो उसने गंगाकी भावना करके उस जलको ही तीर्थोदक बना दिया। असंख्य-असंख्य मरणधर्मा जीवोंको तारनेके लिये, उनका सन्ताप निवारनेके लिये और उनके भीतर जीवनका उल्लास जगानेके लिये भूलोकमें आयीं गंगा यहाँके निवासियोंके जीवन एवं मृत्यु दोनोंसे जुड़ गयीं। सहस्रों वर्षोंसे मुनि-कोपसे दग्ध भस्ममात्रावशिष्ट सगरपुत्रोंकी मुक्तिसे जहाँ गंगाका तारकत्व विख्यात हुआ, वहीं लोकमंगलके लिये हिमाच्छादित शिखरोंसे नीचे चली आयी गंगाके सौहार्दको देखकर जनमानसमें गंगाके प्रति मातृवत् आदर-भाव जगा। गंगाके दुग्धोपम धवल-जलके सुधोपम गुणोंसे उसकी जीवनदायिनी शक्ति प्रसिद्ध हुई। गंगातटपर होनेवाली मृत्यु जहाँ मृतकको मोक्ष-लाभ करानेवाली मानी गयी, वहीं गंगाके तटपर निवास करने और उनके नीर-शरीरकी सेवा-पूजा करनेसे जीवनके समस्त अभावों एवं अभिलाषाओंकी पूर्ति सुनिश्चित मानी गयी। जनताने गंगाजलमें अष्टमूर्ति परब्रह्म*के जलीय स्वरूपका स्पष्ट दर्शन किया तथा अपने पूजाघरोंमें गंगाजलपूरित कलशको देववत् स्थापित करके उसका नित्य पूजन करना प्रारम्भ कर दिया। लोगोंने गंगा-किनारे

* सूर्यो जलं मही वह्निर्वायुराकाशमेव च। दीक्षितो ब्रह्मणः सोम इत्येतास्तनवः स्मृताः॥ (विष्णुपुराण)

बसने, नित्य गंगास्नान करने, गंगाजलका पान करने तथा गंगातटपर शरीर-त्याग करनेके लिये नाना प्रकारके यत्न आरम्भ कर दिये।[1] भारतीय जनताने नीराकारा गंगाके अमृतोपम जलसे न केवल अपनी तृषा बुझायी और खेतोंको सींचकर उन्हें उपजाऊ ही नहीं बनाया, अपितु गंगाके तटपर स्नान-दान-तर्पणादि धर्म-कर्म करके अपना परलोक भी सँवारा।

गंगाकी पावन लहरियोंमें उनकी नीराकारा वात्सल्यमूर्तिके दर्शनकर भारतीय जनमानसमें गंगाके प्रति अत्यन्त आत्मीय भाव जगे और लोगोंने अपने जीवनकी दैनन्दिनकी गतिविधियोंमें गंगासे ऐसे सगेपनका सम्बन्ध जोड़ लिया, मानो वे उनके परिवारकी कोई वरिष्ठ एवं आदरणीया सदस्या हों। जनताने गंगाके प्रत्येक गुणको उपमान बनाकर मुहावरे[2] रचे तथा लोकोक्तियाँ[3] गढ़ीं। उसने सांसारिक सुख-दुःखोंको गंगाकी लहरोंसे उपमित किया।[4] जीवनमें सुख-दुःखोंको झेलते हुए अपने पैरोंपर खड़ा होने तथा स्वावलम्बी बननेकी शिक्षा देनेहेतु युवा पीढ़ीको बिना किसी पैतृक सहायताके गंगा पार करनेका निर्देश दिया जाता है।

अंगिका बोलीके एक गीतमें उपनयनका आकांक्षी एक ब्रह्मचारी गंगा पार करनेहेतु नौकाकी माँग करता है। इसपर उसका पिता उससे तैरकर गंगा पार करनेको कहता है। आशय यह है कि ब्रह्मचारी जीवनरूपी नदीको तैरकर सकुशल पार उतरे और अपने पैरोंपर खड़ा होकर स्वावलम्बी बने—

गंगाहि आरिओ पारिओ, बरुआ पुकारै हे।
भेजु कवन बाबा नाव, बरुआ चढ़ि आयत हे॥ १॥
नै मोरा नाव नबेरिया, नै करुआरियो हे।
जिनका जनेउआ के काज, गंगा हेलि आबत हे॥ २॥
भींजतै काछ कछौटा, पदुम रँगल चादर हे।
भींजतै हिरदै मुख चन्नन, ओहि जनेउआ लाए हे॥ ३॥
हमें देबो काछ कछौटा, पदुम रँग चादर हे।
हमें देबो हिरदै मुख चन्नन, पौरि चलऽ आबहु हे॥ ४॥

अंगिका बोलीके एक दूसरे गीतमें काशीका पण्डित भी ब्रह्मचारीसे यही बात कहता है—

कासी में बरुआ पुकारे, हाथ जनेउआ लेल हे।
कासी में छै कोई पंडित, बरुआ जनेउआ दिय हे॥ १॥
कासी के पंडित कवन पंडित, हुनि उठि बोलै हे।
हमहिं छेकाँ कासी केर पंडित, बरुआके जनेउआ देबऽ हे॥ २॥
जिनका जनेउआ केर काज, गँगा हेलि आयत हे॥ ३॥

कुछ परिवर्तनोंके साथ यही गीत मैथिली भाषामें भी गाया जाता है—

गंगा के आरे पारे, बरुआ पुकार ए हे।
भेजि दिय बाबा केर नाव, बरुआ चढ़ि आओत हे॥ १॥
नए घर नाव नबेलिया, नए घर केवट हे।
आहे, जिनका जनेउआ के काज, गंगा पैसि आवथु हे॥ २॥

भारतके नारी-समाजने अत्यन्त आदर-भावसे गंगाको अपने ऐहलौकिक एवं पारलौकिक जीवनकी मातृतुल्य परम हितैषिणी माना और जीवनमें किसी भी प्रकारका संकट उपस्थित होनेपर उसने गंगाकी शरण ली। नारियोंने दिल खोलकर गंगा माँको अपना सुख-दुःख सुनाया। करुणाकी प्रतिमूर्ति गंगाने अपनी लहरोंसे हुंकार भरते हुए बेटियोंका दुखड़ा सुना और अपनी ऊर्मियोंकी कल-कल ध्वनिसे पुत्रियोंको मनोरथपूर्तिका आशीर्वाद देकर विदा किया।

सन्तानहीनताका कष्ट नारीके लिये सर्वाधिक दुःखद होता है। भोजपुरी अंचलके एक गीतमें सन्तानहीनताके कष्टसे दुखी हो कौसल्या गंगास्नानको आती हैं तथा इस बहाने देहत्याग करना चाहती हैं। उनकी देहत्यागकी कामनाको भाँपकर गंगा इसका कारण पूछती हैं। कौसल्या बतलाती हैं कि सब सुख प्राप्त रहनेपर भी सन्तान न होनेसे संसार व्यर्थ लगता है। कौसल्या गंगासे

१-जीवनके अन्तिम समयमें काशीवास करना आदि। ये प्रयत्न आज भी जारी हैं।
२-मुहावरे—गंगा उठावल, गंगा पियल, गंगा-लाभ भइल, गंगा-लाभ लीहल आदि।
३-लोकोक्तियाँ—गंगाके असनान, सीरामपुर के पेठिया, गंगाके धार आ हाकिमके न्याव जानल न जाला आदि।
४-बाबाके रोअले रे गंगा बढ़ि अइली, अम्माके रोअले अन्हार। (भोजपुरी संस्कार गीत)

सन्तानकी याचना करती हैं और गंगासे कहती हैं कि यदि मुझे पुत्रकी प्राप्ति हुई तो मैं एक हजार मुनियोंको भोजन कराकर उनका जूठन बटोरूँगी—

गंगा के ऊँच अररवा चढ़त डर लागेला हो।
रामा ताहि चढ़ि कौसिला नहालिन, मुकुती बनावैलीं हो।
हँसि के जे बोलैलीं गंगा माई सुना रानी कौसिल्या हो।
ए रानी कवन संकट तोरे परलैं जे मुकुति बनावे चाहा हो।
सोनवा के बाटइ ढेर त रूपवा के के पूछै हो।
गंगा मोरे संततिया क चाह, संतति तोहसे माँगी ला हो।
ए गँगाजी जहुँ मोरे बबुआ जनमिहें, अवरू जनमिहें नू हो।
ए गँगाजी एक सहसर मुनि नेवतबि, जूठन बटोरबि हो।

भोजपुरी अंचलकी प्राय: सभी बोलियोंके सोहर गीतमें सन्तानहीनताके कष्टसे दुखी नारीद्वारा गंगाको अपनी व्यथा-कथा सुनाने और उनसे आशीर्वाद पानेकी बात गायी गयी है—

सोरह बरिस कै तिरियवा त गंगा से अरज करै हो,
गंगा अपनी लहर हमें देतिउ गुपुत होइ जातिउँ हो।
किय तोरे सास ससुर दुःख किय नैहर दूर बसै हो,
तिरिया किय तोर कंत बिदेस कवन दुःख डूबहु हो।
नाही मोरे सास ससुर दुःख नाहीं नैहर दूर बसै हो,
गंगा नाही मोर हरि परदेस ललन दुःख डूबीला हो।
सासु मोर कहैले बझिनियाँ ननद ब्रजवासी कहै हो,
गंगा वोहू हिर कहैले बझिनियाँ होरिल दुःख डूबीला हो।
जाहु भवन धनियाँ अपने त आजु से गरभ सेवहु हो,
धनियाँ आजु के नवयें महिनवाँ ललन तोहं होइहैं हो॥

गंगासे लोकके इस हार्दिक जुड़ावको सन्तशिरोमणि गोस्वामी तुलसीदासजीने भी अपने महाकाव्य श्रीरामचरितमानसमें प्रस्तुत किया है। भारतीय लोक-जीवनके मर्मवेत्ता गोस्वामीजी जानते हैं कि भारतका नारी-समाज अपने अहिवातके दीर्घायुष्य एवं सन्ततियोंके कुशल-क्षेमहेतु गंगाके आशीर्वादका अभिलाषी रहा है। अत: अयोध्यासे निकलकर और गंगा पार कर लेनेपर उन्होंने सीताद्वारा गंगाकी आराधना करने एवं वनवासके पश्चात् सकुशल वापसीहेतु गंगाजीसे प्रार्थना करनेका अत्यन्त मनोहारी प्रसंग उपस्थित किया है।[१] गोस्वामीजीने गंगाद्वारा बड़े ही मुदित मनसे सीताकी प्रार्थना सुनने तथा उन्हें मनोरथपूर्तिका आशीर्वाद देनेकी बात भी लिखी है।[२] अवधी भाषाकी ये मनोहारी पंक्तियाँ गंगासे लोकके गाढ़े लगावको पुष्ट करती हैं।

भारतकी नारियाँ अपने सुख-सौभाग्यहेतु न केवल गंगाके आशीर्वादकी अभिलाषिणी रही हैं, अपितु अभिलाषाएँ पूर्ण होनेपर वे कृतज्ञ-भावसे फल-फूल, साड़ी, नैवेद्य और आर-पारकी माला आदि चढ़ाकर गंगाकी सविधि पूजा भी करती रही हैं। ऐसे अवसरोंपर शहनाइयाँ 'गंगा-द्वारे बधइया बाजे' के सरगम छेड़ती हैं और कोकिल-कण्ठी नारियाँ सुमधुर सोहर गाती हुई गंगासे उनकी एक लहर माँगती हैं ताकि वे उनकी पूजा कर सके।

नव रे महिनवा के बितते होरिलवाँ जनमलैं हो,
रामा बाजै लागै आनंद बधइया अँगन उठै सोहर हो।
गंगा किनारे उठै तिरिया हँसइ और बिहँसइ हो,
गंगा आपन लहर हमैं देतू पूजन हम करबइ हो॥

भारतीय नारियाँ अपनी कन्याओंपर गर्व करती हैं कि उनकी बेटी गंगाका आशीर्वाद है। वे विवाहादि मांगलिक अवसरोंपर गाये जानेवाले गीतोंके माध्यमसे कान्तासम्मित शैलीमें जामाताको समझा देती हैं कि उसे ऐसी पत्नी गंगास्नान करने और हरिवंशपुराण सुननेसे प्राप्त हुई है।

मैथिली भाषाके विवाह-गीतोंमें ससुरालमें सलहजें अपनी ननदकी प्रशंसा करते हुए उसे गंगाका प्रसाद बतलाती हैं तथा जामाताको आगाह करती हैं कि उसने गंगा-स्नान करने तथा हरिवंशपुराण सुननेके पुण्यसे ऐसी

१. सियँ सुरसरिहि कहेउ कर जोरि। मातु मनोरथ पुरउबि मोरी॥
पति देवर सँग कुसल बहोरी। आइ करौं जेहिं पूजा तोरी॥ (रा०च०मा० २।१०३।२-३)

२-तदपि देबि मैं देबि असीसा। सफल होन हित निज बागीसा॥
दो०—प्राननाथ देवर सहित कुसल कोसला आइ। पूजिहि सब मनकामना सुजसु रहिहि जग छाइ॥ (रा०च०मा० २।१०३।८, २।१०३)

सुलक्षणा पत्नी पायी है—

दिनुका जे काजर रतुका जे कोवर,
लिखु गे कोबर घर दुआरि हो।
ताहि कोबर सुतै गेला कओन दुलहा,
कनिया सुतल सँग साथ हे॥ १॥
घुमि सुतू फिरि सुतू कनिया सुहबे, तोहरे देह उखम बहूत हे।
एतबे बचन जब सुनलनि कनियाँ सुहबे,
सेजि छोड़ि भुइयाँ में लोटाए हे॥ २॥
अँगना बहारइते सेलखी गे चेरिया,
आनि दियौ सरहोजि वजाय हे।
आवथु सरहोजि बैसथु पलँग चढ़ि, बुझि लेथु ननदो गेयान हे॥ ३॥
हमरो ननदिया गंगा क माँगल, नहिं छैनि बुद्धि गेयान हे।
पुरुखक जतिया बड़ रे अजतिया, पुरुखक नहिं बिसवास हे॥ ४॥

× × × ×

रामजी क कोहबर सब रँग पटिया,
ताहि कोहबर फुल छिरिआए हे।
ताहि कोहबर सुतलनि दुलहा से कओन दुलहा,
पातर धनि पीठि लागि हे॥ १॥
पातर धनि क सुतहू न अबइन, खाट छोड़िए भुइयां लोटू हे।
अँगना बहारइत सेलखी गे चेरिया, सरहोजि दिअ न बजाए हे॥ २॥
आवथु सरहोजि बैसथु पलँग चढ़ि, देखि लेथु ननदो चरित्र हे।
गंगा नहैलें ननदोसी हरिबंस सूनल, तोहें पयल ननदो हमार हे॥ ३॥

गंगा भारतीय भावधारामें काफी गहराईतक समायी हुई हैं। कोई स्वयंको पापी स्वीकार करते हुए भी गंगाके पड़ोसमें बसनेसे यह भरोसा रखता है कि मैं पापोंसे तर जाऊँगा।[१] कोई गंगा-जलको संजीवनी मानता है[२] तो कोई शंकरजीद्वारा सतत धतूरा आदि विष खानेके पीछे गंगाजलके अमृतत्वका दृढ़ भरोसा बतलाता है।[३] सन्त कहते हैं कि गंगास्नान करनेवाला त्रिदेव (ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश)-रूप हो जाता है। गंगास्नान करनेवाला गंगाजलमें पैर रखते ही चरणोंसे गंगाजलका स्पर्श होनेके कारण विष्णुरूप, गंगामें डुबकी लगाते ही सिरपर गंगा धारण करनेसे शिवरूप तथा गंगास्नान करके घर लौटते समय कमण्डलुमें गंगाजल धारण करनेसे ब्रह्मारूप हो जाता है।

हमारे मानसमें गंगाकी छवि पापोंका उद्धार करनेवाली शक्तिकी छवि है। गंगा हमारे अभावोंकी प्रतिपूर्ति करती हैं। वे हमारे जीवन एवं मृत्यु दोनोंसे जुड़ी हुई हैं। हिन्दू-धर्मकी सबसे बड़ी साध होती है कि जन्म कहीं भी हो, पर वह पूरा हो गंगा किनारे। गंगा जीवनकी पूर्णता है। विद्वानोंने तो यहाँतक कहा है कि 'गंगा मृत्युका निषेध है।' गंगा-किनारे शरीर छोड़नेकी इच्छा जीवनकी निरन्तरताकी सूचक है। हम शरीरके साथ मरना नहीं चाहते अपितु अपने शरीरकी भस्मके माध्यमसे गंगामें मिलकर सनातन प्रवाहमें रहना चाहते हैं।[४] गंगा भीतरका विश्वास है, उपयोगमें लाया जानेवाला पानी पानीमात्र नहीं। यह पानी केवल हिन्दूको ही नहीं, अपितु भारत-भावसे जुड़नेवाले गैर हिन्दूका मन भी ऊँचा रखता है और अब्दुर्रहीम खानखाना-जैसा अकबरके शासनका स्तम्भ भी यह कहता है कि मेरा शरीरपात गंगाके किनारे हो तथा मुझे शिव-सारूप्य मिले। यह कटु सत्य है कि गंगाका नीर-शरीर आज काफी कृश और रुग्ण (प्रदूषित) हो गया है, किंतु आवश्यकता इस बातकी है कि गंगाके जलीय प्रदूषणको दूर करने और उसकी कृशताको भरनेके साथ-ही-साथ भारतीय जनमानसमें व्याप्त गंगाकी इस जीवन्त भावधाराको अक्षुण्ण बनाये रखनेके प्रयास भी किये जायँ। गोस्वामीजीने सत्य ही लिखा है कि *धन्य देस सो जहँ सुरसरी।*

---

१. नाम लिये कितने तरि जात, प्रनाम किये सुरलोक सिधारे। तीर गये तो तरे कितने, कितने तरि जात तरंग निहारे। तरंगिनि! तेरो सुभाव यही, कवि केशव तव गुन-गन उर धारे। भागीरथि! हम दोष भरे पै भरोस यही कि परोस तिहारे॥ (केशवदास)

२. बैदकी औषध खाऊँ कछू न, करौं व्रत संजम ही सुन मोसे। तेरोइ पानी पियौं रसखानि, सजीवन लाभ लहौं सुख तोसें। (रसखान)

३. ऐ री सुधामयी भागीरथि! कोउ पथ्य कुपथ्य करै तउ पोसे। आक धतूर चबात फिरैं, बिष खात फिरैं सिव तेरे भरोसें॥ (रसखान)

४. पद्मभूषण पं० श्रीविद्यानिवास मिश्र।

लोकमंगलके रंगमें रँगी गंगामाता

(स्वामी श्रीरामराज्यम्‌जी)

लोकमंगलकी भावना अनेक उक्तियोंमें व्यक्त हुई हैं, यथा लोकरंजन, लोकोपकार, 'स्व' नहीं, 'पर'; भोगें नहीं, बाँटें; 'दें, दें और दें'; 'सर्वेषां मङ्गलं भवतु', 'लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु', 'बहुजनहिताय, बहुजन-सुखाय', 'सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः', सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्' अधिक-से-अधिक प्राणियोंका अधिक-से-अधिक हित।

अपनी उत्पत्तिके पूर्वससे लेकर धरतीपर अपने अवतरण-तक गंगामाता लोकमंगलकी सन्देशवाहिनी बनकर रही हैं। वर्तमान समयमें भी उनकी यह भूमिका अक्षुण्ण है।

गंगामाताकी उत्पत्तिके पूर्व—यह एक सार्थक संयोग है कि गंगामाताकी उत्पत्तिकी पृष्ठभूमिमें जो घटना घटित हुई, वह भी लोकमंगलका सन्देश दे रही है। आइये, पहले उस घटनाका सिंहावलोकन करें।*

असुरराज बलिद्वारा किये जा रहे यज्ञमें वामन-भगवान् पधारे और बलिसे बोले—'धन्य हैं वे, जो आप-जैसे पुरुषोंके पास जाते हैं। आप याचकोंको उनकी आवश्यकतासे अधिक देते हैं।'

प्रसन्न होकर बलि बोले—'आप क्या चाहते हैं?'

वामनभगवान्‌ने कहा—'यदि आप मुझपर प्रसन्न हैं तो मुझे तीन पग धरती…।'

उनका वाक्य पूरा होनेसे पहले ही बलिने हाथ उठाकर कहा—'ठीक है, ठीक है।'

तभी वहाँ उपस्थित बलिके कुलगुरु शुक्राचार्य बोल पड़े—'रुको बलि! यह साधारण वामन नहीं हैं। ये भगवान् विष्णु हैं। इनके कपट-जालमें मत फँसो। ये देवताओंका काम बनानेके लिये इस रूपमें यहाँ आये हैं।'

बलिने कहा—'यदि ये भगवान् विष्णु हैं, जिन्हें कभी कुछ नहीं चाहिये और यदि वे ही मेरे उठे हुए हाथके नीचे खड़े हुए कुछ माँग रहे हैं तो मेरे लिये इससे अधिक गौरवकी बात और क्या होगी? नीतिशास्त्र कहते हैं कि देनेका अवसर आये तो शत्रु-मित्रमें भेद नहीं करना चाहिये। गुरुजनोंका आदेश है कि यदि कोई अपने प्राण माँगे तो उसे भी दे देना चाहिये। गुरुवर! माँगनेकी अपेक्षा 'देना' श्रेष्ठ होता है। जो माँगते हैं, वे नहीं, प्रत्युत जो याचकोंकी माँगें पूरी नहीं करते, वे ही वास्तवमें मृत हैं। अपने पास जो कुछ है, उसे तत्परतापूर्वक याचकोंको दे देनेसे लोक-परलोक—दोनोंमें आनन्दकी प्राप्ति होती है। जो देनेको उद्यत हो, उसे देनेसे रोकना क्या शोभनीय है? मैं एक बार देनेका वचन दे चुका हूँ, अब मैं क्यों कहूँ कि मैं नहीं दूँगा? मैं असत्यवादी नहीं कहलाना चाहता। धरती सब कुछ सह लेती है, परंतु असत्यवादी मनुष्योंका भार उससे नहीं सहा जाता।'

शुक्राचार्यके आदेशकी उपेक्षा करके बलिने वामन-

भगवान्‌की विधिवत् पूजा की और हाथमें जल लेकर तीन पग भूमिका संकल्प कर दिया। (श्रीमद्भागवतके अनुसार) उस समय उनके शत्रु देवताओंने उनके ऊपर पुष्पोंकी वर्षा की। गन्धर्व और किन्नर गान करने लगे—'धन्य हैं बलि! देखो तो सही, यह जानते हुए भी कि वामन भगवान् इनके शत्रुओंके पक्षधर हैं, इन्होंने अपने वचनको पूरा किया।'
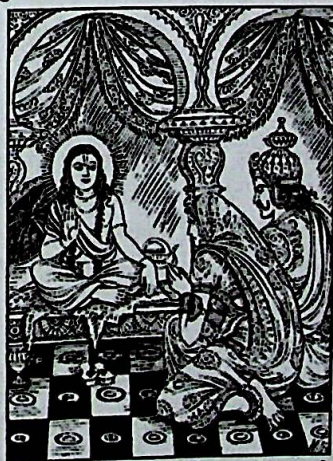
*कम्बनकृत 'कम्ब रामायण' में प्रस्तुत विवरणके आधारपर।

इस घटनाका सार है—'देना, देना और देना' दूसरोंके लिये अपना सब कुछ दे डालना।

इस घटनाका सन्देश है—जो 'देता' है, वह वन्दनीय हो जाता है। शत्रु भी उसकी वन्दना करते हैं।

उपर्युक्त घटनाका शेषांश गंगामाताकी उत्पत्तिसे जुड़ा हुआ है।

देखते-ही-देखते वामनभगवान्‌का रूप बहुत बड़ा हो गया। अपने एक पगसे उन्होंने समूची धरतीको नाप लिया। दूसरे पगसे उन्होंने स्वर्गको नाप लिया। स्वर्गको नापनेवाला पग ऊपरकी ओर उठता गया और सत्यलोकतक पहुँच गया। उनके उठे हुए चरणके अँगूठेके नखसे ब्रह्मकटाह फट गया। वहाँसे निकले हुए जलको ब्रह्माजीने अपने कमण्डलुमें ले लिया। उस जलसे ब्रह्माजीने वामनभगवान्‌के उठे हुए चरणका प्रक्षालन किया। वही जल वामनभगवान्‌के चरण पखारनेसे पवित्र हो जानेके कारण गंगामाताके रूपमें परिणत हो गया।

इस प्रकार गंगामाताके धरतीपर अवतरणके सभी पात्र लोकमंगलमें रत रहे हैं।

गंगामाता स्वर्गसे धरतीपर परार्थके लिये आयीं, स्वार्थवश नहीं, वे राजा सगरके साठ हजार पुत्रोंको मोक्ष प्रदान करनेके लिये धरतीपर आयीं। जब धरतीपर उनका अवतरण हो रहा था, तब जो शापभ्रष्ट होनेके कारण धरतीपर आ गये थे, वे गंगाजलमें स्नान करके शापमुक्त हो गये और अपने-अपने लोकोंको चले गये। इतना ही नहीं, अनेक भूतलनिवासी गंगामें स्नान करके निष्पाप* हो गये। (श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण, बालकाण्ड ४३वाँ सर्ग)

राजा भगीरथके रथके पीछे-पीछे चलती हुई गंगामाता जहाँ-जहाँ प्रवाहित हुईं, वहाँ-वहाँकी भूमि हरी-भरी और शस्य-श्यामल होती गयी। परहितमें रत गंगामाताकी यह भूमिका उन्हें एक साधारण नदीके स्तरसे बहुत ऊँचा उठा देती है।

आइये, अब गंगावतरणकी कथाके अन्य पात्रोंकी चर्चा करते हैं।

राजा सगरके साठ हजार उद्दण्ड पुत्रोंकी कपिलमुनिके मुँहसे निकले हुए हुंकारसे जलकर होनेवाली मृत्यु सम्पूर्ण जगत्‌के मंगलके लिये हुई थी। यह बात पक्षिराज गरुड (जो सगरपुत्रोंके मामा थे)-ने सगरके पौत्र अंशुमान्‌से कही थी (श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण, बा०का० ४१)। यदि उनकी मृत्यु न हुई होती तो उनके मोक्षके लिये राजा भगीरथ गंगामाताको स्वर्गसे धरतीपर लानेका प्रयास ही क्यों करते? यदि गंगामाताका धरतीपर अवतरण न हुआ होता तो मनुष्योंके पापोंका मल कैसे धुलता? पापियोंके उद्धारका मार्ग कैसे प्रशस्त होता?

राजा भगीरथकी तपस्यासे प्रसन्न होकर ब्रह्माजीने उनसे कहा था—'तुम्हारा मनोरथ पूरा होगा। परंतु गंगाजीके गिरनेका वेग पृथ्वी सह न सकेगी। तुम भगवान् शंकरको प्रसन्न करो। वे ही गंगाजीके वेगको धारण कर सकते हैं।' तत्पश्चात् राजा भगीरथने एक वर्षतक भगवान् शंकरकी उपासना की। उस अवधिमें

* गंगामाताके जलमें स्नान करनेसे दस प्रकारके पाप नष्ट हो जाते हैं—तीन प्रकारके शारीरिक पाप (बिना दिये हुए दूसरेकी वस्तु लेना, हिंसा करना, परस्त्रीगमन करना), चार प्रकारके वाचिक पाप (झूठ बोलना, कटु बोलना, निष्प्रयोजन बातें करना, परोक्षमें किसीके दोष कहना) तथा तीन प्रकारके मानसिक पाप (दूसरोंके द्रव्यको अन्यायसे लेनेका विचार करना, दूसरेका अनिष्ट-चिन्तन करना, नास्तिक बुद्धि रखना)।

भगवान् शंकर तपस्यामें रत थे। तथापि राजा भगीरथके समक्ष प्रकट होकर वे बोले—'तुम्हारा कार्य मैं अवश्य करूँगा। मैं गंगादेवीको अपने मस्तकपर धारण कर लूँगा।'

भगवान् शंकरको श्रीमद्भागवतमें 'सम्पूर्ण विश्वका हितैषी' (९।९।९) और 'प्राणियोंका अकारण बन्धु' (८।७।३६) कहा गया है। अपनी तपस्यामें रत होते हुए भी राजा भगीरथकी प्रार्थनापर पर-कल्याणके लिये उद्यत हो जाना उनकी अहैतुकी हितैषणाको दर्शाता है। यह हितैषणा लोकमंगलका ही एक रूप है।

राजा भगीरथ ही नहीं, उनके पिता राजा दिलीप तथा उनके (राजा भगीरथके) पितामह राजा अंशुमान् भी सगरपुत्रोंके मोक्षके लिये तपस्यामें रत रहे थे। उन तीनोंकी तपस्यामें 'स्व' की मंगलकामनाके लिये लेशमात्र भी स्थान नहीं था। उनकी तपस्याका एकमात्र उद्देश्य था सगरपुत्रोंको मोक्ष दिलाना। 'स्व' को नकारकर परहितके विषयमें सोचना और करना लोकमंगलमें रत होना है। आज अपनी तपस्यामें सफल हुए भगीरथका नाम उन समस्त दुष्कर कार्योंका प्रतीक बन गया है, जो लोकमंगलके लिये किये जाते हैं। श्रीमद्वाल्मीकीय रामायणमें राजा भगीरथको 'नरश्रेष्ठ' शब्दसे सम्बोधित किया गया है। मानवीय उत्कृष्टताके ज्वलन्त उदाहरण राजा भगीरथने वह कर दिखाया, जिसकी अपेक्षा नरश्रेष्ठोंसे की जाती है।

वर्तमान समयमें गंगामाताका लोकमंगलकारी रूप—आज गंगामाताका दर्शन करनेसे ही आध्यात्मिक साधकोंका आत्मोन्नयन होने लगता है। जो साधक गंगा-तटपर बैठकर ध्यान करते हैं, वे यह अनुभव करते हैं कि वे सहज ही सांसारिकताके स्तरसे ऊपर उठ गये हैं और उनके मानस वहाँ उत्पन्न आध्यात्मिक स्पन्दनोंसे रूपान्तरित हो गये हैं तथा वे एक अकथनीय आनन्दसे सराबोर हो गये हैं।

धरतीपर गंगोत्रीसे सागरतककी यात्रा करनेवाली सदा-सर्वदा गतिमान् गंगा एक गुरुकी भाँति आध्यात्मिक साधकोंसे कहती रहती हैं—कठिनाइयोंसे घबराना नहीं। आगे बढ़ते रहना, जबतक लक्ष्यकी प्राप्ति न हो जाय।

इस मूक गुरुसे प्राप्त यह प्रोत्साहन प्रत्येक साधकके लिये महत्त्वपूर्ण है।

आज भी आत्मशुद्धिके लिये गंगाजलका सेवन प्रतिदिन या विशेष अवसरोंपर किया जाता है। मृत्युशैय्यापर पड़े हुए व्यक्तियोंकी सद्गतिके लिये यह जल उनके मुँहमें बहुत आस्थापूर्वक डाला जाता है।

गंगाजलकी रोग-निवारक क्षमताको वैज्ञानिकोंने भी स्वीकार किया है। उनके अनुसार गंगाजलमें पूतिरोधी खनिज (Antiseptic Minerals) पाये जाते हैं। वे यह भी कहते हैं कि तीनसे पाँच घंटोंके अन्दर हैजारोगके कीटाणु गंगाजलमें मर जाते हैं। पश्चिमी देशोंमें चिकित्सक चर्मरोगोंसे प्रभावित शारीरिक अंगोंपर गंगाजलसे मर्दन (मालिश) करते हैं। यह एक सर्वविदित तथ्य है कि अनेक वर्षोंतक रखा गया गंगाजल भी कीटाणुमुक्त रहता है।

निष्कर्ष—गंगामाता कभी किसीसे कुछ माँगती नहीं, किसीसे कुछ लेती नहीं, दूसरोंसे अपेक्षा रखना उसे आता नहीं है। वह देती ही देती है—बिना किसी प्रकारका भेदभाव किये देती है। गंगामाता भगवान्के पावन चरणोंके स्पर्शसे पवित्र हुई एक देवनदी है। उसका जल साधारण जल नहीं है। वह जल पापोंकी निवृत्तिहेतु स्नान करनेके लिये है। उसके जलपर लोकमंगलकी रस-वर्षा हुई है। इस कारण वह जल हाथमें लेकर यह संकल्प करनेके लिये भी है—'भगवान्की कृपाके भरोसे मैं जो भी करूँगा, वह लोकमंगलकी भावनासे करूँगा। लोकमंगल करते-करते ही मैं अन्तिम साँस लूँगा।' इस संकल्पको पूरा करनेमें रत मनुष्य न केवल अपने जीवनको सार्थक करेंगे, वरन् संसारमें सुख-शान्तिका मार्ग भी प्रशस्त करेंगे।

हम सब सन्तानोंपर गंगामाताकी कृपा बनी रहे।

ब्रजमें गंगाजी

(श्रीमहावीरसिंहजी यदुवंशी)

श्रीगंगाजीकी महिमा अपार और अनन्त है। गंगाजीकी महिमाका वर्णन स्कन्दपुराण-काशीखण्ड पूर्वार्धमें इस प्रकार किया गया है—'स्कन्दजी कहते हैं—मुनिवर

अगस्त्य! गंगाजी द्रवके रूपमें भगवान् सदाशिवकी कोई पराशक्ति हैं। करुणारूपी अमृतरससे भरे हुए देवाधिदेव भगवान् शंकरने समस्त संसारका उद्धार करनेके लिये ही गंगाजीको प्रवृत्त किया है। मुने! गंगाधर शिवने दयावश श्रुतियोंके अक्षरोंको निचोड़कर उस ब्रह्मद्रवसे ही गंगाका निर्माण किया है। जो गंगाजीके तटकी मिट्टीको अपने मस्तकपर लगाता है, उसका अज्ञानान्धकार नष्ट हो जाता है। गंगा अपने नामका कीर्तन करनेसे पुण्यकी वृद्धि और पापका नाश करती है। दर्शन, स्पर्श, जलपान तथा उसमें स्नान करनेसे क्रमशः दसगुना फल होता है, ऐसा जानना चाहिये। ऋषियोंद्वारा सेवित, भगवान् विष्णुके चरणोंसे उत्पन्न, अति प्राचीन तथा परम पुण्यमयी धारासे युक्त भगवती गंगाजीकी जो लोग मनसे शरण लेते हैं, वे ब्रह्मधामको प्राप्त होते हैं। जो गंगा माताकी भाँति इस संसारके जीवोंको पुत्र मानकर सदा उन्हें स्वर्गलोकको पहुँचाती है और सम्पूर्ण उत्तम गुणोंसे सम्पन्न है, उत्तम ब्रह्मलोककी इच्छा रखनेवाले जितेन्द्रिय पुरुषोंको सदा ही ऐसी गंगाकी उपासना करनी चाहिये। जैसे ब्रह्मलोक सब लोकोंमें उत्तम है, उसी प्रकार गंगा समस्त सरिताओं और सरोवरोंसे श्रेष्ठ है। गंगाके जलमें स्नान करनेवाले पुरुषका समस्त पातक तत्काल नष्ट हो जाता है और उसे उसी क्षण महान् श्रेयकी प्राप्ति हो जाती है। गंगामें पुत्र-पौत्र आदि यदि अपने पितरोंके लिये श्रद्धापूर्वक जल देते हैं तो उस जलसे पितर तीन वर्षोंतक पूर्णतया तृप्त रहते हैं।'

ऐसे ही अनेक ग्रन्थोंमें गंगाजीकी महिमाका बहुविध तथा विस्तृत वर्णन मिलता है। भगवान् श्रीकृष्ण तो लीलाधारी हैं, अपने भक्तोंको आनन्द और सुख देनेमें ही उन्हें आनन्द और सुख मिलता है। अपनी माधुर्यमयी लीलाओंके द्वारा अपने भक्तोंको परमानन्दकी रसानुभूति कराते रहते हैं। मेरे प्यारे ब्रजवासियोंको गंगाजीके दुर्लभ दर्शन, स्पर्श तथा स्नान आदिके लिये दूरतक न जाना पड़े, इसी हेतु बालमुकुन्दने अपनी बाललीलाओंके माध्यमसे श्रीगंगाजीको अनेक स्थानोंपर प्रकट किया था, जिसका ब्रजवासी आजतक आनन्द ले रहे हैं। अनेक ग्रन्थों तथा पुराणोंमें इनका उल्लेख मिलता है। अध्ययनसे पता चलता है कि भगवान् श्रीकृष्णने बाललीला करते हुए ब्रजके पाँच स्थानोंपर गंगाको प्रकट किया था, जो आजकल निम्नलिखित स्थानोंपर स्थित हैं—१. कृष्णगंगा (मथुरा), २. मानसीगंगा (गोवर्धन), ३. अलखगंगा (आदि बदरी-काम्यवन), ४. चरणगंगा (नन्दगाँव) तथा ५. पाडल या पारलगंगा (कोकिलावन)।

१. कृष्णगंगा—वराहपुराणमें वर्णन है—

पञ्चतीर्थाभिषेकाच्च यत्फलं लभते नरः।
कृष्णगङ्गा दशगुणं दिशते तु दिने दिने॥

अर्थात् हरिद्वार, शुकताल, नैमिषारण्य, प्रयाग, पुष्कर—इन पंचतीर्थोंमें स्नानकर मानव जो फल वहाँ प्राप्त करते हैं, यहाँ कृष्णगंगामें स्नान करनेसे दसगुना अधिक फल प्राप्त कर लेते हैं। मथुरामें यमुनाके तटपर स्थित यह तीर्थ अत्यन्त सुन्दर है। कहा जाता है कि कंसको मारनेके बाद श्रीकृष्णने यहाँ विश्राम किया था। गंगा सभी तीर्थोंसे श्रेष्ठ है, परंतु श्रीकृष्णके विश्राम

करनेके कारण इसे गंगासे भी श्रेष्ठ माना जाता है। इसलिये इस तीर्थका नाम श्रीकृष्णगंगा है। यमुनाके तटपर सोमतीर्थ तथा वैकुण्ठतीर्थके मध्य कृष्णगंगा तीर्थ स्थित है। सरस्वती नदी इसी स्थानपर यमुनामें मिलती थी। ऐसी प्रसिद्धि है कि मथुरामें इसके निकट सोमतीर्थ घाटके नजदीक द्वीपमें महर्षि पाराशर और मत्स्यगन्धा (सत्यवती)-से व्यासका जन्म हुआ था तथा यहींपर देवर्षि नारदके उपदेशोंको सुनकर भक्तियोगके द्वारा पूर्णब्रह्म श्रीकृष्णकी समस्त लीलाओंका दर्शनकर श्रीकृष्णद्वैपायन वेदव्यासने परमहंससंहिता श्रीमद्भागवतकी रचना की थी। यहाँ स्नान करनेपर मनुष्य सब प्रकारके पापोंसे मुक्त होकर भगवत्प्रेम प्राप्त करते हैं।

२. मानसी गंगा—वराहपुराणमें वर्णन है—

स्नात्वा मानसगङ्गायां दृष्ट्वा गोवर्धने हरिम्।
अन्नकूटं परिक्रम्य किं जनः परितप्यते॥

'अर्थात् श्रीगोवर्धनमें मानसी गंगामें स्नान करके श्रीहरिदेवजीका दर्शन करके तथा अन्नकूटक्षेत्रकी परिक्रमा करनेके बाद मनुष्यका कौन-सा पाप शेष रह जायगा?'

गोवर्धन गाँवके बीचमें श्रीमानसी गंगा स्थित हैं। गिरिराजपरिक्रमा करनेमें ये दायीं ओर पड़ती हैं और पूछरीसे लौटनेपर भी दायीं ओर इनके दर्शन होते हैं। इनके प्राकट्यकी कई कथाएँ मिलती हैं। प्रथम, भगवान् श्रीकृष्ण वृषभासुरका वध करनेके पश्चात् श्रीराधाजी तथा ब्रजगोपियोंसे मिले तो सभी सखियोंने कहा कि श्यामसुन्दर! इस वृषभ-हत्याका प्रायश्चित्त करना आपके लिये अनिवार्य है, इसलिये गंगाजीमें स्नानकर अपनेको पवित्र बनाओ। भगवान् श्रीकृष्णने वृषहत्यासे मुक्त होनेके लिये अपने मनसे इसे प्रकट किया तथा इसमें स्नानकर पवित्र हुए। दूसरी, कथाके अनुसार एक बार श्रीनन्द महाराज आदि गोपगण तथा श्रीयशोदा आदि गोपियोंने कृष्ण-बलदाऊके साथ गंगास्नानके लिये यात्रा की। रात्रिको इन्होंने गोवर्धनके निकट विश्राम किया। श्रीकृष्णने सोचा कि सारे तीर्थ ब्रजमें विद्यमान हैं, फिर भला गंगास्नानहेतु ब्रजसे बाहर दूर जानेकी क्या आवश्यकता है? ऐसा सोचकर मन-ही-मन गंगादेवीका स्मरण किया। स्मरण करते ही भगवती भागीरथी गंगा साक्षात् प्रकट हो गयीं। गंगादेवीका दर्शनकर नन्द-यशोदा आदि गोप-गोपी एवं ब्रजवासी लोग आश्चर्यचकित हो गये। सभीने यहाँ स्नान किया। कार्तिक अमावस्याकी दीपावलीके दिन गंगाजी यहाँ प्रकट हुई थीं, इसलिये आजतक दीपावलीके दिन लाखों श्रद्धालुजन इसमें स्नानकर मानसी गंगाके चारों ओर दीपदान करते हैं। दीपदानका यहाँ विशेष महत्त्व है। तीसरी कथा है कि श्रीकृष्ण कभी अपने सखाओंके साथ, कभी गोपियोंके साथ यमुना-जलमें विहार करते थे। अपनी छोटी बहन यमुनाजीका सौभाग्य देखकर भगवती गंगाके हृदयमें भी श्रीराधाकृष्ण-युगलकी सेवा करनेकी तीव्र लालसा उत्पन्न हुई। उन्होंने अपनी छोटी बहन यमुनाजीसे अपने हृदयकी अभिलाषा प्रकटकर इस विषयमें सहायता करनेकी याचना की। कृष्णप्रिया यमुनाजीने गंगादेवीके ऊपर कृपा करनेके लिये प्रियतम श्रीकृष्णसे प्रार्थना की। श्रीकृष्णने प्रिया यमुनाकी प्रार्थना सुनकर उचित समयपर गंगाजीको भी ब्रजमें आवाहनकर कृतार्थ कर दिया।

श्रीकृष्णके मनसे आविर्भूत होनेके कारण यहाँ गंगाजीका नाम मानसी गंगा पड़ा। मानसी गंगाकी महिमा गंगानदीसे भी अधिक है; क्योंकि गंगा भगवान्‌के चरणोंसे उत्पन्न हुई है और मानसी गंगाकी उत्पत्ति भगवान्‌के मनसे हुई है। इसमें श्रीराधाकृष्ण सखियोंके साथ यहाँ नौका-विहारकी लीला करते हैं।

वर्तमानमें भी प्रतिवर्ष गोवर्धन-पूजाके अवसरपर मुकुटसे दूधकी धारा निकलकर मानसी गंगाके मध्यसे होती

हुई अन्तिम छोरतक जाती है, जो कई घण्टोंतक साधारण मनुष्यको भी दिखायी देती है। इस चमत्कार-पूर्ण घटनाके अनेक वृद्ध वैष्णवगण साक्षी हैं। इस प्रकार मानसी गंगा दुग्धमयी है, पवित्र है तथा समस्त पापोंको क्षय करनेवाली है।

मानसी गंगाके घाटोंको जयपुरनरेश मानसिंहके पिता राजा भगवानदासने पत्थरोंसे बनवाया था।

३. अलखगंगा—श्यामसुन्दरने ब्रजवासियोंको तीर्थदर्शनके लिये ब्रजसीमासे बाहर न जाना पड़े, इसलिये यहाँपर पृथ्वीके समस्त तीर्थोंको लाकर स्थापित कर दिया है। एक बार श्रीनन्दबाबा सभी ब्रजवासियोंके साथ भगवान् बदरीनारायणके दर्शनके लिये चल पड़े। तभी श्रीकृष्ण नन्दबाबासे बोले कि—'बाबा! इस पर्वतपर श्रीबदरीनाथजी विराजमान हैं, चलिये हम लोग वहाँ जाकर श्रीबदरीनाथजीका दर्शन करें।' तब श्रीकृष्णने नन्दबाबा तथा अन्य सभी ब्रजवासियोंको यहाँ लाकर श्रीबदरीनारायणजीके दर्शन कराये। इस घटनाके अनुसार इस गाँवका नाम 'आदिबदरी' के नामसे विख्यात है। जिस प्रकार बदरीनाथमें अलकनन्दा और तप्तकुण्ड हैं, उसी प्रकार यहाँपर अलखगंगा प्रवाहित है।

यह स्थान बदरीनारायणजीकी तपःस्थली कहलाती है। हिमालयमें स्थित बदरीविशालका भी यह उद्गम स्थान आदिबदरी है। कभी नर-नारायणजी जब यहाँ तपस्या कर रहे थे तो उसी समय उनकी तपस्या भंग करनेके लिये देवराज इन्द्रने कुछ सुन्दर अप्सराओंको
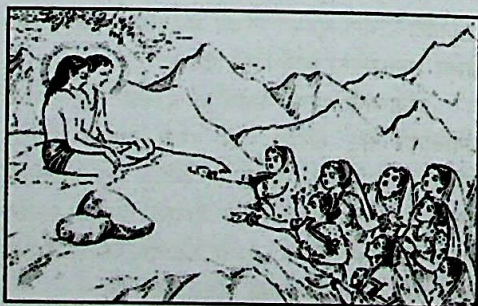
यहाँ भेजा था। श्रीनारायणजीने यह घटना जानकर अपनी बायीं जाँघसे अनेक अप्सराओंको उत्पन्नकर इन्द्रका घमण्ड चूर्ण किया था।

इस स्थानका प्राकृतिक दृश्य अत्यन्त मनोहर है। हिमालयपर्वतका सुन्दर प्राकृतिक दृश्य एवं यहाँका मनोरम प्राकृतिक दृश्य आपसमें तुलना करनेपर समान लगते हैं। यह स्थान राजस्थान-सीमामें काम्यवनके अन्तर्गत आता है।

४. चरणगंगा—छोटी बठैनसे एक मील उत्तरमें चरण पहाड़ी है। यहाँ गायों, गोपग्वालों, सुरभि गाय, ऐरावत हाथी, घोड़ेके खुर तथा श्रीकृष्ण एवं बलरामजीके पैरों एवं लाठीके चिह्न विद्यमान हैं, इसलिये इसे चरण पहाड़ी कहते हैं। लीला कुछ इस प्रकार मिलती है—एक बार श्रीकृष्ण-बलरामजी गोचारण-लीला करते हुए यहाँ आये थे। गायें दूर घास चर रही थीं। ग्वालबाल भी दूर थे। तभी श्रीकृष्णने अपनी भुवन-मोहिनी बाँसुरीकी धुन छेड़ दी। वंशीकी मोहक ध्वनिको सुनकर पर्वततक भी पिघल गया तथा सभी गायें, हाथी, घोड़ा एवं सभी सखागण यहाँ आ पहुँचे। इसलिये यहाँ, इन सभीके चरण-चिह्न अंकित हो गये। ये सब चरण-चिह्न एक ओर केवल आते समयके हैं, जाते समयके नहीं है; क्योंकि लौटते समय वंशीकी धुन बन्द हो गयी थी और फिर पत्थर पूर्व स्थितिमें आ गये थे। इसके बाद श्रीकृष्णने अपने मनमें कुछ सोचा और उस पहाड़ीमेंसे एक जलस्रोत फूट पड़ा, जिससे इस पहाड़ीके पास एक कुण्ड बन गया, जहाँ श्रीकृष्ण तथा ग्वालबालोंने अपने पैर धोये हैं, जिसके कारण यह चरणगंगा कहलाती है। यहाँ आज भी चरण-चिह्न दिखायी देते हैं।

५. पारलगंगा—यह जावट (जाब) गाँवके उत्तर-पश्चिम दिशामें स्थित है। इस कुण्डके बारेमें कहते हैं कि यह पारलगंगा एक सिद्ध सरोवर है। श्रीराधाजीने यहाँ भगवती गंगाकी एक धाराको प्रकट किया था। इस कुण्डके पश्चिम तटपर एक प्राचीन पारिजात नामक वृक्ष है। वैशाख माहमें इसपर फूल लगते हैं। ऐसी मान्यता है कि इसे राधाजीने स्वयं अपने हाथोंसे लगाया था, तभीसे यह वृक्ष शाखा-प्रशाखाओंसहित अभीतक विराजमान है।

श्रीक्षेत्रकी पुण्यतोया श्वेतगंगा

(डॉ० श्रीयुत श्रीनिवासजी आचार्य, एम० ए०, एम० एड०, पी-एच० डी०)

पुण्यसलिला गंगाजीका माहात्म्य अनिर्वचनीय है। भगवती गंगाका अवतरण पापनाश तथा परोपकारके लिये हुआ है। कहा जाता है कि त्रैलोक्यमें जितने तीर्थ हैं, वे सब गंगामें स्थित हैं। अतएव अपनी लीलाके परिप्रकाशके लिये विभिन्न स्थानोंपर गंगा विभिन्न नामोंसे आविर्भूत हुई हैं। उदाहरणतः आदिगंगा, गुप्तगंगा, वाणगंगा, गौतमीगंगा, श्वेतगंगा आदि तीर्थ पापनाशक बनकर देवनदी गंगाका स्मरण दिलाते हैं। उनमें भगवती गंगाकी महिमाका विस्तार है, फिर भी प्रत्येक तीर्थके ऐतिह्य और माहात्म्यमें स्वातन्त्र्य है।

ब्रह्मपुराण, स्कन्दपुराणादिके अनुसार महाप्रभु श्रीजगन्नाथजी कलियुगके पीठदेवता हैं। उनका धाम जगन्नाथधाम, श्रीक्षेत्र, नीलाचलक्षेत्र, पुरुषोत्तमक्षेत्र, शंखक्षेत्र और श्रीजगन्नाथपुरी आदि नामोंसे विख्यात है। यह धाम आदि शंकराचार्यजीके द्वारा प्रतिष्ठित चतुर्धामोंमेंसे अन्यतम है। यहाँपर स्थित पंचतीर्थोंमें स्नानपूर्वक श्रीजगन्नाथजीके दर्शनसे इहलोकमें सारे पापोंसे मुक्ति एवं परलोकमें वैकुण्ठकी प्राप्तिकी सूचना पुराणोंसे मिलती है।

श्रीक्षेत्रके पंचतीर्थोंमें मार्कण्डेयसर, श्वेतगंगासर, रोहिणीकुण्ड, महोदधि और इन्द्रद्युम्नसरको स्थान मिला है। इन पंचतीर्थोंमें स्नान करनेसे पुनर्जन्म नहीं मिलता अर्थात् पंचतीर्थस्नायी भक्तको जन्म-मरणके चक्रसे छुटकारा मिलता है।

मार्कण्डेयावटेऽकृष्णे रोहिण्यां च महोदधौ।
इन्द्रद्युम्नसरः स्नात्वा पुनर्जन्म न लभ्यते॥
(मुक्तिचिन्तामणि)

उपर्युक्त श्लोकमें 'अवटेऽकृष्णे' शब्दसे 'श्वेतगंगा पुष्करिणी' अर्थका बोध होता है।

श्रीजगन्नाथपुरीमें श्रीमन्दिरसे थोड़ी ही दूरीपर महोदधिके तटपर स्थित, स्वर्गद्वारके रास्तेपर श्वेतगंगा नामकी यह पुष्करिणी विद्यमान है। परमपावन तीर्थ श्वेतगंगासरकी उत्पत्तिके साथ त्रेतायुगके सत्यसन्ध विष्णुभक्त राजा श्वेतकी उपासना विजड़ित है।

राजा श्वेतके शासनकालमें कपालगौतम नामक तपस्वीके एकमात्र पुत्रका अकाल वियोग हो गया। पुत्रके वियोगसे तपस्वीको अतिशय दुखित देखकर राजाने मृत पुत्रका जीवन पुनः प्राप्त करनेके लिये सोचा। अतएव उन्होंने भगवान् शिवको सन्तुष्ट करके उक्त कार्यमें सफल होनेके लिये कठोर तपस्या की। उनकी

तपस्यासे शिवजी सन्तुष्ट होकर आविर्भूत हुए, शिवजीकी कृपासे पुत्रको जीवनदान मिला।

प्रजावत्सल राजा श्वेतने अत्यन्त निष्ठापूर्वक दक्षिण महोदधिके तटपर माधवकी उपासना की थी। श्वेतराजाके द्वारा पूजित माधव थे श्वेतमाधव। उक्त श्वेतमाधवका पूजनपूर्वक स्तोत्रोंसे उन्हें सन्तुष्ट करके उनमें श्रीजगन्नाथ, श्रीबलभद्र, देवी सुभद्रा और श्रीसुदर्शनके दर्शन प्राप्त करनेका परम सौभाग्य उसने प्राप्त किया था। चतुर्धा मूर्तिके दर्शनसे राजा श्वेत कृतकृत्य हुए। श्रीजगन्नाथजीने राजासे अभीष्ट वर माँगनेके लिये कहा। राजाने उनसे परम पवित्र वैष्णव भूमिकी प्रार्थना की, जिससे समस्त जीवोंका कल्याण होगा। महाप्रभुजीने राजा श्वेतकी अभिलाषा पूरी करके गंगाजीके आवाहनपूर्वक जिस तीर्थकी सृष्टि की थी, वह थी—श्वेतगंगा पुष्करिणी।

राजा श्वेतसे भगवान्ने कहा था कि 'उस पवित्र

तीर्थके समीपमें प्राणत्याग करनेवाले मानवके कर्णमूलमें शाश्वत ब्रह्मका उपदेश मैं प्रदान करूँगा। श्वेताख्य देवता जो मेरे रूपधर हैं, उनके पास वास करके, कल्पवट और सागरके मध्यस्थित पवित्र स्थानमें जिनका देहावसान होता है, उन्हें सायुज्य मुक्ति मिलती है।'

समीपे तस्य यो मर्त्यः प्राणांस्त्यजति मानवः।
तस्याहं कर्णमूले वै दिशामि ब्रह्म शाश्वतम्॥
श्वेताख्यां मे पुरीं याति मम रूपधरः स्वयम्।
पुरुषोत्तमं ततः प्राप्य वटसागरमध्यतः।
श्वेतमाधवसान्निध्ये मम सायुज्यमाप्नुयात्॥

(मुक्तिचिन्तामणि)

कपिलसंहितामें ऋषि भरद्वाजने कहा है कि उस नीलाचलक्षेत्रमें श्वेतगंगा नामसे एक विख्यात तीर्थ है। भगवान् वहाँपर श्वेतमाधवके रूपमें निवास करते हैं। उस स्थानपर मत्स्यमाधव भी हैं, दोनोंके दर्शनसे कीट भी मुक्तिलाभ करता है। ब्रह्महत्यारा, सुरापायी, गोहत्याकारी, भ्रूणहत्याकारी लोग भी श्वेतमाधव और मत्स्यमाधवके मध्यभागमें मुक्ति प्राप्त करते हैं। मनुष्य श्वेतगंगामें स्नान करके तथा श्वेतमाधवके दर्शनसे श्वेतद्वीपमें जानेमें समर्थ होता है।

तत्र नीलाचले विप्राः श्वेतगंगा इति श्रुता।
श्वेतमाधवरूपेण तत्रास्ते भगवान् प्रभुः॥
मत्स्यमाधवस्तत्रैव देवदेवाङ्गपार्श्वगः।
उभयोर्दृष्टियोगेन कीटो मुक्तिमवाप्नुयात्॥
ब्रह्महा च सुरापश्च गोघ्नो वा भ्रूणघातकः।
ते सर्वे मुक्तिमायान्ति मध्ये च श्वेतमत्स्ययोः॥
श्वेतायां च नरः स्नात्वा दृष्ट्वा च श्वेतमत्स्यकौ।
पापानि च परित्यज्य श्वेतद्वीपं व्रजेद्ध्रुवम्॥

(कपिलसंहिता ५।१२—१५)

स्कन्दपुराणके पुरुषोत्तममाहात्म्यमें उल्लेख है कि प्राचीनकालमें त्रेतायुगमें श्वेतनामके एक पुण्यश्लोक राजा थे। वे व्रतालम्बनपूर्वक भगवान् पुरुषोत्तमकी उपासना करते थे। उनकी उपासनासे सन्तुष्ट होकर भगवान्ने उनसे कहा था—'अक्षयवट और सागरमध्यस्थ दुर्लभ मुक्तिक्षेत्रमें मेरे आद्यावतार मत्स्यरूपी विष्णुके सम्मुखीन होकर स्फटिकमणितुल्य निर्मल शरीरमें तुम वास करोगे और भूलोकमें श्वेतमाधव नामसे विख्यात होगे।'

वटसागरयोर्मध्ये मुक्तिस्थाने सुदुर्लभे।
मदीयाऽऽद्यावतारस्य विष्णोर्मत्स्यस्वरूपिणः॥
सम्मुखीनो वस त्वं हि स्फटिकामलविग्रहः।
ख्यातिं यास्यसि भूर्लोके श्वेतमाधवसंज्ञया॥

(स्कन्दपुराण २७।५४-५५)

मनुष्योंके लिये क्या देवगण भी इस स्थानपर मुक्तिकी इच्छा करते हैं। तुम्हारे निवासके लिये जो स्थान निर्दिष्ट हुआ, उसकी उत्तरी दिशामें सर्वपापविनाशक जो सर (श्वेतगंगा) है, उसमें आचमनपूर्वक स्नानसे मुक्ति प्राप्त होती है—

अमरा यत्र मरणमिच्छन्ति किमु मानवाः।
तवोत्तरस्यां दिशि यत् सरः पापनिबर्हणम्॥
तत्र स्नात्वा उपस्पृश्य तदीये दक्षिणे तटे।
उभयोर्दृष्टिपूतः संस्त्यक्त्वा प्राणान् विमुच्यते॥

(स्कन्दपुराण २७।५७-५८)

'मठकर्मांगी' शीर्षक पुस्तकसे ज्ञात होता है कि ईसाकी नवीं सदीमें राजा नृपकेशरीके शासनकालमें गंगा नामसे अभिहिता भगवती गंगाजीकी एक उपासिका पुरुषोत्तमक्षेत्रस्थ वट और सागरके बीचवाली भूमिमें आश्रमका स्थापन करके वास करती थी। उसे श्रीक्षेत्रसे जाकर गंगाजीमें स्नान करनेका अवसर नहीं मिला। दुःखसे मर्माहत होकर वह देवी गंगाजीके स्मरणपूर्वक श्वेतमाधवजीके समीप ध्यानस्थ हुई। अचानक गंगाजी स्वयं मकरारूढ़ होकर उसके सामनेवाले जलाशयमें आविर्भूत हुईं। उपासिकाको आश्वासन देती हुई उन्होंने कहा कि उस सरोवरमें वे सदा निवास करके हरिकैवल्यमन्थन दोषसे भक्तोंका उद्धार करेंगी। पासवाले श्रीजगन्नाथमन्दिरमें भक्तलोगोंको परिक्रमा करते समय जाने या अनजानेमें महाप्रसादपर पदचालनासे दोष लगता है; जो श्वेतगंगाके जलसे पदप्रक्षालनसे दूर होता है। गंगादेवीके आविर्भावसे उपासिका कृतार्थ हो गयी। तदनन्तर देवी गंगा अन्तर्धान हो गयीं। इस विषयसे अवगत होनेके बाद राजाने जलाशयके तीर प्रदेशमें एक मठकी स्थापना की थी, जो अद्यापि गंगामातामठ नामसे प्रसिद्ध है।

श्वेतगंगाके तटपर मुक्तिशिला विद्यमान है। उक्त

शिलाके रक्षक उग्रेश्वर भैरव हैं। प्राणप्रयाणके समय मुमूर्षु व्यक्तिका कष्टलाघव करके उसे मुक्ति प्रदान करनेके निमित्त यहाँपर विराजित उग्रेश्वर भैरवजीको प्रपाणक नैवेद्य अर्पण करके उसे मुमूर्षु व्यक्तिको पिलाया जाता है, जिससे उसके सारे पापोंका खण्डन होता है और वह भवबन्धनसे मुक्त हो जाता है। उस 'मुक्तिशिला' को 'विष्णुपाद' भी कहा जाता है। श्वेततीर्थके दक्षिणमें स्थित उस गोप्य स्थानके बारेमें नीलमणिपुराणमें वर्णन है।

'नीलाद्रि-महोदय' ग्रन्थमें ब्रह्माजी कहते हैं कि समस्त पापोंकी शान्तिके निमित्त श्रीजगन्नाथजीके दर्शनके बाद भक्तिपूर्वक शुभदात्री श्वेतगंगामें जाकर प्रार्थना करे—

दर्शनान्ते ततो गच्छेत् श्वेतगङ्गां शुभोदयाम्।
प्रार्थयेत् परया भक्त्या सर्वपापोपशान्तये॥

(नी०म० २१।१)

हे गंगादेवि! हे जगद्धात्रि! हे विष्णुवल्लभे! आपको नमस्कार करता हूँ। आपने श्रीमन्दिरके दक्षिण पार्श्वमें अवस्थान किया है। आपके जलमें मग्न होता हूँ—

गङ्गे देवि जगद्धात्रि नमस्ते विष्णुवल्लभे।
दक्षपार्श्वे स्थिते मातः मज्जयामि तवाम्भसि॥

(नी०म० २१।२)

हे देवनदि! हे अनघे! मेरे पापोंका नाश करें। ऐसा कहकर बार-बार नमस्कार करे। वहाँपर विधिपूर्वक स्नान करके गंगा एवं माधवका दर्शन करे। श्वेत और मत्स्यक नामवाले समस्त कामनाओंको पूरा करनेवाले दोनों देवोंका दर्शन करके प्रार्थना करे—

पापं नाशय मे नित्ये देवनद्यनघे शुभे।
प्रार्थयित्वेति तां गङ्गां नत्वा चैव मुहुर्मुहुः॥
स्नानं च विधिवत् कुर्यान्माधवौ तौ विलोकयेत्।
श्वेतमत्स्यकनामानौ पश्यतां सर्वकामदौ॥

(नी०म० २१।३-४)

वामदेवसंहितामें श्रीक्षेत्रपरिक्रमाके प्रसंगमें उल्लेख है कि तदनन्तर वहाँपर बाहुकम्प न करते हुए (बिना तालीसे) श्रीजगन्नाथ महाप्रभुकी केवल प्रणामांजलि मुद्रामें चार बार प्रदक्षिणा करके उसके बाद पाप-प्रशमन-निमित्त श्वेतगंगातटपर जाय। वहाँपर प्रार्थना करे कि हे मातः! गंगे! श्रीजगन्नाथजीके दक्षिण भागमें आपका अवस्थान है। आपके जलमें मैं स्नान करता हूँ। करोड़ जन्मोंमें संचित मेरी पापराशिका आप शीघ्र नाश करें—

चतुः प्रदक्षिणं कृत्वा न कुर्याद् बाहुकम्पनम्।
ततो गच्छेच्छ्वेतगङ्गां स्तुवीत पापशान्तये॥
दक्षपार्श्वस्थिते देवि निमज्जामि तवाम्भसि।
कोटिजन्मार्जितं पापं देवि मे नाशय द्रुतम्॥

(वा०सं० २३।३७—३९)

'श्वेतगंगा' श्रीक्षेत्रकी गंगा हैं। यहाँपर दशाह-क्रियाएँ, श्राद्ध, तर्पण, पिण्डदान आदि करनेका शास्त्रीय विधान है।

श्वेतगंगाका क्षेत्रफल दो एकड़ है। इस सरोवरकी लम्बाई २५४ फुट और चौड़ाई १८४ फुट है। 'मादलापांजि' से ज्ञात होता है कि गोविन्दकेशरी नामक एक राजाने इस सरोवरके चारों ओर पावच्छश्रेणियाँ और तटप्रदेशस्थ मत्स्यमाधव और श्वेतमाधवके दो छोटे मन्दिरोंका निर्माण करवाया था। भक्तोंके कथनानुसार गंगाजीके साथ इस सरोवरका अन्तःसंयोग होनेके कारण गंगाजीमें पावन स्नानयोगके समय इसका पानी श्वेत रंगका हो जाता है, साधारणतः इसके पानीका रंग नील है।

इस प्रकार परम पवित्र श्रीपुरुषोत्तम नामक सुमहत् क्षेत्रमें, जहाँपर श्रीश जगन्नाथ मानवीय लीलाकी रचनाके लिये दारुमय कलेवर धारणकर विराजमान रहते हैं और दर्शनमात्रसे साक्षात् मुक्ति और सकल तीर्थाटनका फल प्रदान करते हैं—

पुरुषोत्तमाख्यं सुमहत् क्षेत्रं परमपावनम्।
यत्रास्ते दारवतनुः श्रीशो मानुषलीलया।
दर्शनात् मुक्तिदः साक्षात् सर्वतीर्थफलप्रदः॥

(स्कन्दपुराण, श्रीपुरुषोत्तमक्षेत्रमाहात्म्य १।३)

—उस क्षेत्रमें परमपावनी श्रीगंगाजी भी भक्तोंकी मनोवांछाकी पूर्तिके निमित्त आविर्भूत होकर 'श्वेतगंगा' नाम धारण करके, परम तीर्थके रूपमें पावनताका संचार करके अनिर्वचनीय माहात्म्यका परिप्रकाश करती हैं।

मिथिलाकी परम्परा और संस्कृतिमें गंगा

(डॉ० श्रीबासुदेवलाल दासजी, एम० ए०, पी-एच० डी०)

गंगानदी मिथिलाके सीमावर्ती क्षेत्रमें प्रवाहित है। मिथिलाके अन्य नामोंमें विदेह और तीरभुक्ति भी प्रचलित हैं। तीरभुक्ति शब्द ध्वन्यन्तरसे तिरहुत हो गया है। भौगोलिक रूपमें मिथिलाकी सीमाओंके वर्णनक्रममें बृहद्विष्णुपुराणके मिथिला-खण्डमें उल्लेख मिलता है,* तदनुसार मिथिलाक्षेत्रकी लम्बाई २४ योजन अर्थात् १९२ मील तथा चौड़ाई १६ योजन अर्थात् १२८ मील थी। इसके उत्तरमें पर्वतराज हिमालय, दक्षिणमें पुण्यसलिला गंगा नदी, पूर्वमें परम चंचला कोशी नदी तथा पश्चिममें गण्डकी नदी प्रवाहित थीं। गण्डकी नदीको नारायणी, सदानीरा तथा शालग्रामी भी कहा जाता है, जो बिहारकी राजधानी पटना (प्राचीन पाटलिपुत्र)-के निकट गंगा नदीमें मिल जाती है।

मिथिलाक्षेत्रके प्रख्यात विद्वान् कविवर पं० चन्दा झा मिथिलाकी सीमाओंका अंकन करते हुए लिखते हैं—

गंगा बहथि जनिक दक्षिणदिशि पूर्व कौशिकी धारा।
पश्चिम बहथि गण्डकी उत्तर हिमवत वन विस्तारा॥

मिथिलाक्षेत्रमें प्रचलित एक लोकनाट्य है—'लोरिक-मनियार'। इसका मंचन करते समय मिथिलाकी चौहद्दीका वर्णन इस प्रकार गाया जाता है—

पूरब जे पुरनियाँ पुजली पछिम रे बिहार।
उत्तर जे नेपाल पुजलियै दक्षिण गंगाधार॥

सम्राट् अकबरने मिथिलाका जो राज्य दरभंगा महाराजाके पूर्वज पं० महेश ठाकुरको प्रदान किया था, उसका विस्तार कोशीसे गण्डकीतक एवं गंगासे हिमालयके वन्यप्रदेशतक था।

इसी तरह १७वीं शताब्दीके कवि गंगानन्द झा-लिखित 'भृंगदूत' ग्रन्थमें तीरभुक्ति (मिथिला)-विषयक उल्लेखमें गंगा नदीके तीरवर्ती क्षेत्रमें इसके अवस्थित होनेकी बात आती है—

गंगातीरावधिरधिगता यद् भुवो भृंगभुक्तिः।
नामा सैव त्रिभुवनतले विश्रुता तीरभुक्तिः॥

इस प्रकार मिथिलाक्षेत्रके अन्तर्गत वर्तमान भारतके बिहार राज्यके अनेक जिले तथा नेपालके दक्षिणी-पूर्वी तराई प्रदेशके क्षेत्र आते हैं। गंगा नदी मिथिलाकी दक्षिणी सीमा होनेसे इस क्षेत्रपर इसका अत्यधिक प्रभाव देखा जाता है।

मिथिलाक्षेत्रकी परम्परा और संस्कृतिमें गंगा-तत्त्व व्यापकरूपसे समाहित है। इस क्षेत्रमें गंगाको 'गंगाजी' बोला जाता है तथा इनके प्रति बड़ी श्रद्धा एवं भक्ति प्रदर्शित की जाती है। गंगाजलको शुद्धिका प्रतीक माना जाता है। मिथिलाक्षेत्रमें स्नान करते समय गंगाजीका नाम उच्चारण करनेकी परम्परा पायी जाती है। इसके साथ ही स्नानके बोधक पर्यायवाची शब्दके रूपमें 'गङ्गे-गङ्गे' शब्दका व्यवहार देखा जाता है।

मिथिलाकी परम्परामें स्वीकार किया जाता है कि गंगाजीमें अनेक तीर्थोंका निवास है। अतः गंगाजीमें स्नान करनेसे अक्षय और अनन्त पुण्यकी प्राप्ति होती है। मिथिलाक्षेत्रमें किसी प्रकारके सांस्कारिक कार्य, उत्सव, यज्ञ, अनुष्ठान, देव-पितृकार्य इत्यादि सम्पन्न होनेके पश्चात् अनिवार्य रूपसे गंगा-स्नान करनेका प्रचलन है। गंगाजीमें स्नान करनेके पश्चात् ही आनुष्ठानिक कार्यकी सिद्धि होनेकी बात मानी जाती है।

मिथिलाक्षेत्रके समाजमें जब कोई व्यक्ति सार्वजनिक अथवा सामाजिकरूपमें किसी महत्त्वपूर्ण कार्यको सम्पादित करता है, तब उसे बड़ोंके द्वारा आशीर्वाद प्रदान करते

* गङ्गाहिमवतोर्मध्ये नदी पञ्चदशान्तरे। तैरभुक्तिरितिख्यातो देशः परमपावनः॥
गङ्गाप्रवाहमारभ्य यावद्धैमवतं वनम्। विस्तारः षोडशः प्रोक्तो देशस्य कुलनन्दन॥
कौशिकीन्तु समारभ्य गण्डकीमधिगम्य वै। योजनानि चतुर्विंशद् व्यायामः परिकीर्तितः॥
मिथिला नाम नगरी तत्रास्ते लोकविश्रुता। पञ्चभिः कारणैः पुण्या विख्याता जगतीत्रये॥

हुए कहा जाता है कि तुम्हें गंगा-स्नानका पुण्य प्राप्त हो। गंगाजीके निकट मासव्रत करनेकी परम्परा मिथिलाक्षेत्रमें पायी जाती है। गंगा-स्नानको पवित्रताका पर्याय मानकर मिथिलाकी बोलीमें 'गंगा नहाएब' मुहावरा प्रचलित है।

इस क्षेत्रके समाजमें मान्यता पायी जाती है कि गंगाजलको स्पर्श करते ही सभी प्रकारके पापोंका नाश हो जाता है। मिथिलाके एक परम्परागत लोकगीतमें गाया जाता है—

जय गंगाजी जय जगजननी, जय सन्तन सुखदायी।
देखहु हो गंगाजीक महिमा, छुवति पाप दूर जायी॥

मिथिलाकी परम्परा तथा संस्कृतिमें गंगाजीको मातासदृश पूजनीय माना जाता है। इस क्षेत्रमें एक लोकोक्ति प्रचलित है—

माय भेंटैत त कहिकए सुनबितहुँ। गंगा भेंटैत त पैसिकए नहइतहुँ॥

उपर्युक्त लोकोक्तिमें सन्निहित भावोंका तात्पर्य यह है कि हम सभी कथाओं-व्यथाओंको अपनी माताको ही सुना सकते हैं। इसी प्रकार हमारे सारे कल्मषोंको गंगाजी ही धो सकती हैं।

मिथिलाकी परम्परामें कहा जाता है कि दक्षिण दिशाकी ओर पैर रखकर नहीं सोना चाहिये; क्योंकि गंगामाता हमारी दक्षिणी सीमापर प्रवाहित हैं। शपथ लेते समय 'जय गंगाजी' शब्दका उच्चारण करवानेका प्रचलन पाया जाता है। शपथको मैथिली भाषामें 'किरिया' कहा जाता है। 'जय गंगाजी' शब्दोंके साथ बोली जानेवाली बातें सत्य होनेका विश्वास किया जाता है। इसी प्रकार, जब किसी व्यक्तिको प्रायश्चित्त करना होता है, तब उसे गंगाजीका जल, बालू आदि ग्रहण करने होते हैं। प्रायश्चित्तको मैथिली भाषामें 'पतिया' कहते हैं। समाजमें यह अटल विश्वास पाया जाता है कि गंगाजीके द्वारा ही अपवित्रको पवित्र किया जा सकता है, अन्यथा नहीं।

इस क्षेत्रमें गंगाजीका इतना प्रभाव है कि गंगाजीके नामोच्चारणमात्रसे ही प्रेतबाधासे मुक्ति मिल जाती है। मिथिलाके ग्रामीण क्षेत्रमें प्रेतबाधाके शमनहेतु शरीरपर देवताके आह्वान करनेकी प्रथा है, जिसको 'बैसकी' अथवा 'बैठकी' कहते हैं। इतना ही नहीं मिथिलाक्षेत्रमें लोकदेवीके रूपमें पूजित गंगिया, गंगाजलीसदृश देवियाँ भी गंगाजीका स्मरण कराती हैं।

मिथिलाकी संस्कृतिमें गंगाजल और तुलसीदल दोनोंको परम श्रद्धाके साथ देखा जाता है। जब किसी मरणासन्न व्यक्तिके प्राण नहीं निकल रहे होते हैं, तब उन्हें एकादशी देनेकी परम्परा मिथिला क्षेत्रमें पायी जाती है। ऐसे अवसरपर जो व्यक्ति देनेवाला होता है, वह अपने दाहिने हाथकी अंजलिमें तुलसीदलके साथ गंगाजल लेकर अपने द्वारा किये गये एकादशीव्रतका पुण्य अमुक (मरणासन्न) व्यक्तिको प्रदान किये जाने-जैसे वाक्यांश उच्चारणकर उसे पिला देता है। ऐसा करनेसे मरणासन्नकी सहज मृत्यु होनेका विश्वास समाजमें पाया जाता है।

मिथिलाकी परम्परामें कहा जाता है कि यहाँके सभी व्यक्ति गंगालाभकी कामना करते हैं, परंतु अनेक कारणोंसे सभीकी यह इच्छा पूरी नहीं हो पाती है। अतः मरणोपरान्त उनकी अस्थियोंको अनिवार्य रूपसे गंगाजीमें विसर्जित करनेकी प्रथा प्रचलित है। इस प्रकार अस्थियाँ गंगाजीमें विसर्जित होनेसे उस व्यक्तिका गंगालाभ होने अर्थात् उसके सभी पापोंका नाश होनेका विश्वास किया जाता है।

गंगाजीकी धारा जिस स्थानपर प्रवाहित होती है, वह स्थान अतिपवित्र हो जाता है। अतः कतिपय व्यक्ति गंगाजीके समक्ष भगवान् श्रीसत्यनारायणकी पूजा, अनेक प्रकारके यज्ञ, अनुष्ठान, अष्टयाम कीर्तन इत्यादि करते-करवाते हैं। समाजके बहुत लोग अपने बच्चोंके मुण्डन, चूड़ाकरण आदि संस्कार गंगाजीके निकट सम्पन्न करवाते हैं। गंगाजीको वरदान देनेवाली पूजनीया माताके सदृश मानकर कतिपय व्यक्ति विभिन्न प्रकारकी मनौतियाँ करते हैं। मिथिलाकी बोलीमें इसको 'कबुला' कहा जाता है। लोग गंगामातासे कहते हैं कि मेरी अमुक मनोकामना पूरी होगी, तब मैं अमुक प्रकारसे पूजन,

अर्पण आदि करूँगा। इस प्रकार सन्ततिकी कामना पूरी होनेपर उसके मुण्डन आदि सांस्कारिक कार्य गंगाजीके किनारे किये जाते हैं। इस सन्दर्भमें मिथिलाक्षेत्रके समाजमें गंगा नामकी बालिका तथा गंगाप्रसाद नामक बालक अनेकको संख्यामें द्रष्टव्य हैं।

गंगाजीकी मिट्टीको 'गंगोट' कहा जाता है। गंगोटको चन्दनके रूपमें ललाटपर धारण किया जाता है।

गंगाजीसे सम्बन्धित अनेक गीत, भजन, लोकगीत, प्रभाती आदि इस क्षेत्रमें गाये जाते हैं। मैथिली भाषाके कविकोकिल विख्यात महाकवि विद्यापतिने 'गंगावाक्यावली' सदृश ग्रन्थकी रचना की है। विद्यापतिकी माता गंगाजीके प्रति भक्तिभावपूर्ण एक यह रचना द्रष्टव्य है—

बड़ सुख सार पाओल तुअ तीरे। छोड़इत निकट नयन बह नीरे॥
करजोरि बिनमओं बिमल तरंगे। पुन दरसन होए पुलमति गंगे॥
एक अपराध छेमब मोर जानी। परसल माय पाए तुअ पानी॥
कि करब जप-तप जोग धेआने। जनम कृतारथ एकहि सनाने।
भनहि बिद्यापति समदओं तोही। अन्तकाल जनु बिसरह मोही॥

उपर्युक्त पदमें कवि कहते हैं कि अनेक विधि जप, तप, योग, ध्यान इत्यादिसे जो उपलब्धि नहीं होती, वह गंगाजीमें केवल एकबार स्नान करनेसे हो जाती है। महाकवि विद्यापतिकी गंगा-भक्तिके प्रसंगमें स्वयं उनके जीवनकी एक घटना उद्धृत की जाती रही है, जिसमें कहा जाता है कि उन्होंने अपने जीवनके अन्तिम भागमें गंगाजीकी शरणमें जानेका निश्चय किया था। विद्यापतिने अपनी कुलदेवता विश्वेश्वरीदेवीको प्रणामकर अपने परिजनोंके साथ गंगातटकी ओर प्रस्थान किया। वे अपने गाँव विसफी (बिहारके मधुबनी जिला)-से चलकर तीन दिनकी यात्राके पश्चात् मऊ बाजितपुर (बिहारके समस्तीपुर जिला) पहुँचे। यह स्थान गंगा नदीसे ४ मीलकी दूरीपर अवस्थित था। उस स्थानतक पहुँचनेपर शाम हो गयी। कहते हैं कि महाकवि विद्यापतिने उपस्थित सभी लोगोंके समक्ष कहा था कि मैं तो घरसे चलकर अपने भक्तिभावसे इतनी दूरतक आ गया हूँ, अब माता गंगाजी स्नेहकर कुछ दूर आकर इस पुत्रको अपने अंकमें लेती हैं कि नहीं, यह देखना है। इतना कहकर वे माता गंगाजीकी प्रार्थना करने बैठ गये। इस अवसरपर महाकवि विद्यापतिद्वारा की गयी माता गंगाजीकी प्रार्थना इस प्रकार थी—

सुनिय डमरु धुनि, शिव शिव पुनि पुनि, आब एत करू बिसराम।
पूजा उपचार लिअ, सत्वर गंगाकैं दिअ, कहि देब हमरो प्रणाम॥
करतीहि कृपा गंगा, सकल कलुख भंगा, आब जीव परसन भेल।
एत औतीह सुरधुनि, अपन किंकर गुनि, सब पातक दुर गेल॥
थाकि गेलि जनी जाती, बेटा बेटी पोता नाती, कमती कहार संगी साथी।
मोर हेतु आऊ एत, धन्यवाद लोक देत, सभ जन हरखि नहाथी॥
भव कवि विद्यापति, दिअ देवि दिव्य गति, पशुपतिपुर पहुँचाय।
गौरी संग देखि शिव, कि सुख पाओत जीव, से आब कहल न जाय॥

मिथिलाकी परम्परामें सुरक्षित कथामें सुना जाता है कि सत्यसंकल्पसिद्ध पुरुषकी प्रार्थना सुनकर उसी रात्रिकालमें ही गंगाजीकी धारा उस स्थानतक पहुँच चुकी थी। प्रातःकाल सभी लोग गंगाजीकी धारा देखकर आश्चर्यचकित हुए थे। महाकवि विद्यापति प्रतिदिन गंगा माताका दर्शन, प्रणाम, स्नान, पूजन आदि करते हुए कुछ समयतक उसी स्थानपर निवास करते रहे।

इस प्रकार देखा जाता है कि मिथिलाकी परम्परा तथा संस्कृतिमें गंगा-तत्त्व अत्यन्त सघन रूपसे समाहित है। इस क्षेत्रमें एक कहावत प्रचलित है—'गंगा न तोयं कनकं न द्रव्यम्।' अर्थात् जिस प्रकार सुवर्ण साधारण द्रव्य नहीं, उसी तरह गंगाजल साधारण जल नहीं। यह गंगा नदी साक्षात् भगवान् शिवकी जटासे निकली हुई है और भगवान् शिवको मिथिलाकी धरतीपर देवाधिदेव महादेवके रूपमें प्रतिष्ठा प्राप्त है। मिथिलाक्षेत्रका शायद ही कोई ऐसा गाँव हो, जहाँपर भगवान् शिव प्रतिष्ठित न हों। भगवान् शिवके प्रत्येक भक्तिगीतमें गंगाकी चर्चा अवश्य की जाती है। मिथिलाक्षेत्रके सभी लोग माता गंगाजीसे अपने कल्याणहेतु सदैव प्रार्थना करते हैं।

बिहार प्रदेश और पतितपावनी माँ गंगा

(डॉ० श्रीराकेशकुमारजी सिन्हा 'रवि')

भारतवर्ष संसारभरके पुरातन देशोंमें गण्य एक प्रकृतिसम्पन्न देश है, जिसे प्रकृतिने अपने हाथोंसे रचा, सजाया और बसाया है। यह गौरवकी बात है कि आदिम युगमें जहाँ-जहाँ नदीतटपर मानवीय सभ्यता एवं संस्कृतिका विकास हुआ, उनमें अपना विशाल देश सर्वाग्रणी है। वर्तमानमें भारतवर्षकी शताधिक छोटी-वड़ी नदियोंके मध्य गंगाजी ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं भारतीय धर्मतत्त्वको आत्मसात् करती एक ऐसी नदी हैं, जिनके नामसे पूरा विश्व परिचित है। इस नदीको 'पतितपावनी', 'पुण्यसलिला', 'देवसरिता' 'स्वर्गकी तोया' एवं 'भारतकी पहचान' के रूपमें भी जाना जाता है।

युगों-युगोंसे जिस राज्यको माँ गंगाने शस्य-श्यामल बनाकर भारतवर्षके इतिहास-निर्माणमें अमूल्य भूमिका अदा की है, वह पुण्यधरा बिहार ही है। गंगाजी जो १५ नवम्बर, सन् २००० ई० को झारखण्ड राज्य बँटवारेके पूर्व, सम्पूर्ण प्रान्तको दो भागोंमें (उत्तर एवं दक्षिण बिहारके रूपमें) विभक्त करती रहीं, आज पुरातन प्रज्ञाके प्रदेश बिहारके उत्तरी मैदानी भागको सिंचितकर दो भागोंमें बाँटती हैं।

गंगोत्रीसे निकलकर हरिद्वारसे आगे मैदानी भागमें बहती हुई गंगामें बिहारतक आनेके पहले अलकनन्दा, मन्दाकिनी, धौली, पिण्डार, रामगंगा, यमुना और गोमती आदि नदियोंका मिलन हो जानेसे ये अति वेगवती बन जाती हैं और भोजपुर तथा सारण जिलेकी सीमा बनाती हुई चौसासे राज्यमें प्रवेश करती हैं। यहीं उत्तरकी ओरसे सरयू (घाघरा) तथा दक्षिणकी ओरसे सोन नदीका मिलन होता है।

गंगाजीके मार्गमें आगे चलते हुए दक्षिणमें चौसाके पास कर्मनाशा, बक्सरके पास ढोरा, थोड़ा पूर्वमें काव, छेर और बनास, आगे मनेरके पास सोनघाट, फतुआके पास पुनपुन, सूर्यगढ़ाके पास मोहिनी, फल्गु, धनऊन, किउल, थोड़ा पूर्वमें मोहाने और भागलपुरके निकट बहुआ चानन, कहलगाँवके पास घोघा, गेरुआ, काया और थोड़ा दक्षिण पूर्वमें गुमानी आदि नदियाँ आकर मिलती हैं। पटनासे आगे सारण और वैशाली जिलोंकी सीमा बनाती गण्डकनदी गंगाजीसे सोनपुरमें मिलती है। गंगासे मुँगेरके उत्तरमें बागमती, कुरसेलाके पास कोशी, मनिहारीके पास काली कोशी तथा थोड़ा पूर्वमें पनार और महानन्दा उत्तरसे मिलती हैं। इस तरह मूलरूपसे उत्तरकी ओरसे घाघरा, गण्डक, बागमती, कमला, वलान, बूढ़ी गण्डक और महानन्दा तथा दक्षिणमें कर्मनाशा, सोन, पुनपुन, हरोहर, फल्गु तथा किउल नदियोंका सम्मिलन गंगासे बिहारमें ही होता है।

बिहार प्रदेशमें गंगाजीसे सम्बद्ध कितने ही लोकाख्यान एवं लोककथाएँ जन-जनके बीच प्रसिद्ध हैं, जिसे बिहारके मगही, मैथिली, अंगिका एवं भोजपुरी-जैसी क्षेत्रीय भाषाओंके गीत-गानोंमें सहजरूपसे सुना जा सकता है। गंगा भी बिहारमें प्रवाहित एक ऐसी नदी है, जिसने यहाँके चारों पुरातन सांस्कृतिक क्षेत्र यथा—मगध, मिथिला, अंग एवं भोजपुरको किसी-न-किसी रूपमें प्रभावित किया है; और-तो-और बिहारके सबसे बड़े लोकपर्व एवं आस्थाके जीवन्त प्रतीक महापर्व छठ (सूर्यषष्ठी व्रत)-के आधे गीत-गानोंका मूलाधार मातृरूपा गंगाजी ही हैं।

बिहारमें ही गंगा-किनारे वैदिक कालीन गज-ग्राहके संग्रामका ऐतिहासिक स्थल सोनपुर (हरिहर क्षेत्र) विद्यमान है, जहाँ रामायणकालमें महर्षि विश्वामित्रका आश्रम था और इसी क्षेत्रमें ताड़का-वधस्थली भी स्थित है। बक्सरमें गंगाकिनारे रामरेखाघाटमें रामायणकालीन स्मृतिचिह्न आज भी सुशोभित हैं। महाभारतकालीन महादानी कर्ण, जिनकी

राजधानी गंगाकिनारे मुँगेर नगरीमें थी,-के कर्म-कृत्योंमें भी गंगाजीकी महिमाका अक्षुण्ण महत्त्व है।

बिहारमें भगवान् बुद्धके कालमें भी गंगाजीकी प्रतिष्ठा यथावत् कायम रही। पाटलिग्राम (प्राचीन पाटलिपुत्र एवं आजके पटना)-में इसी नदीके किनारे आम्रवनके सघन क्षेत्रमें तथागतका विश्राम होता था। उन्होंने अपने वर्षावास एवं स्थलीके रूपमें गंगाजीको खूब महत्त्व दिया है। चन्द्रगुप्तमौर्यके प्रधानमन्त्री और अर्थशास्त्रके प्रणेता महाविद्वान् श्रीचाणक्य इसी गंगाके किनारे अपनी कुटिया बनाकर रहते थे और प्रायशः गंगाजलका ही प्रयोग किया करते थे। मौर्य सम्राट् अशोकने बोधगयाके पवित्र बोधिद्रुमको पाटलिपुत्रसे ही गंगानदीके माध्यमसे नावद्वारा अपने पुत्र महेन्द्र एवं पुत्री संघमित्राके साथ सिंघल देश (श्रीलंका) भेजा था। पटनामें गंगाकिनारे विद्यमान महेन्द्रघाट आज भी इस ऐतिहासिक घटनाका साक्षी है। विवरण है कि बौद्ध-धम्म अपनानेके उपरान्त सम्राट् अशोककी आस्था एवं श्रद्धा श्रीगंगाजीके प्रति बढ़ गयी थी।

इतिहासके हरेक कालखण्डमें गंगाजीने सम्पूर्ण बिहारको उपकृत किया है। बिहारका सर्वप्रमुख पुरास्थल चिराँद (सारण) इसी गंगाघाटी क्षेत्रमें पुष्पित-पल्लवित हुआ तो मध्यकालमें अभ्युदित हुए पालवंशके जमानेमें इन्हीं गंगाजीके किनारे विक्रमशिला (कहलगाँव)-में विशाल शिक्षण संस्थान खोले गये, जिसके भग्नावशेष आज भी देखे जा सकते हैं।

समयके साजपर गंगानदीकी धाराका मार्ग-परिवर्तन भी बिहारक्षेत्रमें खूब हुआ है। लगभग दो हजार वर्ष पूर्व सोन नदी गंगासे पटनाके एकदम करीब मिलती थी। मार्ग-परिवर्तन हुआ और अब यह हरदी छपराके नजदीक गंगामें विलीन हो जाती है। पहले सोनपुरके पास गंगा-नदीसे जहाँ सोननदीका मिलन होता था, उसी भूमिपर आज संसारका सबसे बड़ा पशु मेला लगा करता है।

सम्पूर्ण बिहारमें गंगाजीने सर्वाधिक कल्याण पाटलिपुत्रका किया है और सच कहिये तो पाटलिपुत्रके इतिहास-निर्माणमें गंगाजीकी अमूल्य भूमिकासे इनकार नहीं किया जा सकता। पटनामें गंगाजीके किनारे विशाल एवं कलात्मक राजप्रासाद विराजमान थे, जिनका वर्णन पहले मेगस्थनीज और बादमें फाह्यानने किया, जो क्रमशः मौर्यकाल एवं गुप्तकालमें यहाँ आये थे। इन दोनोंने यहाँके विशाल राजमहलको देवनिर्मित लिखा है। भले ही आज इतने वर्षोंके बाद गंगाजीका बहाव क्षेत्र बदल गया हो, पर किसी जमानेमें यह आर्यभट्टकी वेधशालाके सन्निकट बहा करती थीं।

ऐसे तो सम्पूर्ण बिहारके नगरोंमें जहाँ-जहाँ गंगा-नदी प्रवाहित है, नदी-किनारे घाटोंका समृद्ध संसार है, पर सर्वाधिक गंगाघाट पटना नगरमें ही विराजमान हैं। इनमें उत्तरकी ओरसे एल सी टी घाट, बाँसघाट, बुद्धघाट, मिश्रीघाट, श्रीकृष्णघाट, महात्मा गाँधीघाट, रानीघाट, गुलाबीघाट, धाधाघाट, रौशनघाट, पथरीघाट, नरकटघाट, गोसीनघाट, मालगंजघाट, गायघाट, कन्टाहीघाट, बदरघाट, महावीरघाट, नौजरघाट, सिराहीघाट, दुलीघाट, मितनघाट, बक्शीघाट, ख्वाजाघाट, महाराजघाट, मिरचाईघाट, श्रीगुरुगोविन्दसिंहघाट, पाथाघाट, अदरकघाट, नूरुद्दीनगंजघाट एवं नूरपुरघाटकी स्थिति है। पटनाके इन घाटोंमें कला-संस्कृतिके प्राचीनतम चिह्न आज भी देखे जा सकते हैं। यहाँ गंगानदीके किनारे सन् १६२१ ई०

में जहाँगीरके पुत्र परवेजशाहद्वारा निर्मित सैफखानकी मस्जिद (पत्थरकी मस्जिद)-का विशेष महत्त्व है। पटनाका गोलघर भी गंगानदीसे सन्निकट है, जिसके शिखरसे नदीका विशद दर्शन किया जा सकता है। पटनाका हरमन्दिर साहिब भी गंगानदीसे सन्निकट है और माता छोटी पटनदेवीका प्राचीन स्थान भी गंगाके पासमें ही है। महाराजघाटमें प्राचीन इस्लामिक स्मारक भी देखे जा सकते हैं। पटनाके बाँसघाटमें ही देशके प्रथम राष्ट्रपति भारतरत्न डॉ० राजेन्द्रप्रसादजीकी समाधि है और पटना सिटीमें मिटनघाट (मितानघाट)-में मुगल राजकुमार आजिमद्वारा निर्मित दो मंजिला मस्जिद है, जिसे अव दरगाहशरीफ कहा जाता है। पटनामें ही गंगानदीपर बिहारका सबसे बड़ा सड़क पुल महात्मा गाँधी सेतु बनाया गया है, जो ५.५७५ कि०मी० लम्बा है।

बिहारमें गंगाजीकी महिमाका आख्यान मैथिल-कोकिल विद्यापतिके काव्यमें मिलता है, उनकी कृतियाँ 'गंगास्तुति' एवं 'गंगामहिमा' आज भी गंगाजीके भक्तोंके लिये रामायणके सदृश हैं। कहते हैं उनके जीवन-कर्म एवं साहित्य-निर्माणमें गंगाजीका अभिन्न योगदान रहा, और-तो-और विद्यापतिजीकी मृत्युके समय भी गंगा इनकी पुकार सुनकर अपना मार्ग बदलकर इनके स्थानके काफी सन्निकट आ गयीं। इसे आज भी देखा जा सकता है।

जगदीशपुर, आराके बाबू कुँवरसिंहका नाम प्रथम स्वतन्त्रता संग्रामके शीर्ष योद्धाओंमें गण्य है। विवरण है कि फिरंगियोंकी गोली लगनेके बाद इन्होंने अपने एक हाथसे दूसरे हाथको काटकर माँ गंगाको अर्पित कर दिया, ताकि गोली-बारूदका जहरीला अंश पूरे शरीरमें न फैल सके।

बिहारमें गंगाजीके किनारे शताधिक गाँव एवं नगर आबाद हैं; उनमें पटनाके साथ बेगूसराय, भागलपुर, बक्सर, मुँगेर, मोकामा, फतुहा, सूर्यगढ़ा, पहलेजा, सिमरिया, बाढ़, कहलगाँव, विक्रमशिला आदिका बहुत नाम रहा है। यह जानकारीकी बात है कि २५१० कि०मी० लम्बी गंगानदी पूरे बिहारमें लगभग ४४५ कि०मी० प्रवाहित होती हैं। उत्तर प्रदेश एवं बिहार राज्यकी सीमा-रेखा बनकर राज्यमें प्रवेश करनेवाली गंगा आगे बिहार तथा बंगाल राज्यकी सीमा बनकर पश्चिम बंगालमें प्रवेश कर जाती हैं। बिहारमें गंगानदीका जल-ग्रहण-क्षेत्र १५,१६५ वर्ग कि०मी० के करीव है। बिहारमें गंगाजीकी ढाल बहुत कम तीन इंच प्रति कि०मी० पूरब है, इस कारण बरसातके दिनोंमें प्रायः बाढ़की समस्या बनी रहती है, पर इसमें एक फायदा भी होता है कि साल-दर-साल नदीके साथ आयी जलोढ मिट्टीसे उर्वरता बढ़ती जाती है।

प्रदेशमें पुरातन कालसे आजतक यातायात और व्यापारके लिये गंगानदी एक उत्तम साधन प्रदान करती हैं; क्योंकि बिहारके सभी भागोंमें यह नदी नौकागम्य है। प्राचीनकालसे ही वाणिज्य-व्यापार और यातायातके क्षेत्रमें इस नदीने कितने ही आयाम स्थापित किये हैं, जिसका कोई लेखा-जोखा नहीं है। बिहारके तीनों जलीय परिवहन मार्ग यथा महेन्द्र-पहलेजाघाट, मोकामा-बरौनी और वराटीघाट- महादेवपुरघाटका मुख्य आधार मार्ग गंगा ही है। बिहार राज्यमें प्राचीन कालसे ही गंगाका किनारा अखाड़ों, कुश्ती एवं मल्लविद्या-स्थलोंसे समृद्ध रहा है। आज भी मुँगेरमें 'अन्तर्राष्ट्रीय योग विश्वविद्यालय' इसी नदीके किनारे शोभायमान है।

बिहारके धर्म, संस्कृति-विषयक तत्त्वके निर्माणमें गंगानदीके विशिष्ट महत्त्वको इनकार नहीं किया जा सकता। उत्तरवाहिनी गंगा सभी पातकोंका नाश करनेवाली, परममंगलकारिणी एवं सायुज्यमोक्षदायी हैं और बिहारको यह सौभाग्य प्राप्त है कि यहाँ गंगाजी अपने प्रवाह-क्रममें पाँच बार उत्तरवाहिनी हुई हैं, जिनमें तीनका अतिशय धार्मिक महत्त्व है। उत्तर भारतमें सुल्तानगंज (बिहार)-में गंगा उत्तरवाहिनी ही हैं, जहाँसे जल लेकर १०५ कि०मी० की यात्रा सम्पन्नकर लोग वैद्यनाथ महादेवको जलार्पण करते हैं। यहाँ गंगाघाटके मध्य श्रीअजगैबीनाथका दर्शन किया जा सकता है, जहाँ सालों-भर खासकर पूरे श्रावणमासमें भक्तोंका जमावड़ा

लगा करता है। बिहारमें पटना एवं मोकामाके मध्य अवस्थित बाढमें उत्तरवाहिनी गंगाके किनारे ही उमानाथ महादेवजीका ऐतिहासिक देवालय है और मुँगेरमें कष्टहरणी घाटपर गंगाजी उत्तरवाहिनी हैं। यहाँ घाटके जलसे परिवृत उस पहाड़ी टीलेको देखा जा सकता है, जो रामायणकालीन है। घाटके सामने मीरकासिमकी गुफा और शाह शुजाका महल भी दर्शनीय है।

सम्पूर्ण बिहार प्रदेशमें गंगाजीके किनारे या प्रवाह-क्षेत्रमें बदलावके कारण एकदम करीब एक-से-बढ़कर-एक मान्यताप्राप्त देवालय विराजमान हैं, जिनमें भागलपुरका बुढ़वा महादेव, सोनपुरका श्रीहरिहरनाथ मन्दिर, मोकामाका परशुराम मन्दिर, मुँगेरका श्रीसीता-चरण मन्दिर, सूर्यगढ़ाका श्रीविष्णु मन्दिर, दिधवाराका भवानी स्थान, कहलगाँवका वटेश्वर स्थान, पण्डारकका सूर्य मन्दिर, सुल्तानगंजका अजगैबीनाथ, फतुहाका सिद्धनाथ और बैकठपुरका राजा मानसिंहकालीन गौरीशंकर महादेव आदि मन्दिरोंका विशेष महत्त्व है। इनमें कुछ-कुछ स्थानोंपर हरेक वर्ष विशेष तिथियोंमें मेले एवं धार्मिक समागम भी हुआ करते हैं, जिनमें दूर-देशके लोग आकर कृत-कृत्य हो जाते हैं। हालके वर्षोंसे गंगाके किनारे सिमरियाघाट (बेगूसराय)-में कल्पवास-मेलाकी प्रसिद्धि खूब बढ़ रही है और इसे बिहार प्रदेशके 'कुम्भ मेला' के रूपमें मान-सम्मान दिया जा रहा है।

नये जमानेमें भी गंगाके किनारे कितने ही मन्दिर, घाट एवं धर्म स्मारक बनाये गये हैं और कितनोंकी स्थिति आज भी जार-बेजार है। समय-समयपर बिहारके भूमिपुत्रोंने गंगानदीके उद्धारार्थ कल्याणकारी कार्य किये हैं, इस क्रममें पटनाक्षेत्रमें 'गंगा-आरती' का नाम लिया जा सकता है।

पूर्वांचलके इतिहासमें माँ गंगा

(श्रीउमेशप्रसादजी सिंह)

भगवती गंगाकी महिमामें एक श्लोक कहा गया है—

धन्यः स देशो यत्रास्ति गङ्गा त्रैलोक्यपावनी।
गङ्गाहीनस्तु यो देशो न प्रदेशः स भण्यते॥

अर्थात् वह देश धन्य है, जहाँ तीनों लोकोंको पवित्र करनेवाली गंगा बहती हैं। जिस देशमें वे नहीं बहतीं, वह प्रकृष्ट देश नहीं है।

सौभाग्यकी बात है, गंगा बिहार प्रदेशकी प्रमुख नदी है। यह हिमालय पर्वतके गोमुखसे निकलकर गंगा-सागरतक २६८८ किलोमीटरकी यात्रा तय करती है। अकेले बिहारमें इसका यात्रापथ ५५२ कि०मी० का है। इस यात्रामें गंगा बिहारके भूगोल, इतिहास, अर्थशास्त्र और संस्कृतिमें भारी परिवर्तन करती है। गंगा बिहारके मध्य भागसे निकलकर राज्यकी दो भौगोलिक इकाइयाँ उत्तर और दक्षिण बिहार बनाती है। बिहारकी लगभग सभी अन्य नदियाँ विभिन्न स्थानोंपर गंगामें समाहित होती हैं। इनमें प्रमुख हैं—सरयू, कर्मनाशा, गण्डक, बूढ़ी गण्डक, बागमती, कमला, व्याघ्रमुखी, बलान, तिलयुगी, धेमुरा, कोशी, पनार, कंकई, महानन्दा आदि। इन सभी नदियोंकी अपार जलराशि भरनेसे अनेक स्थानोंपर गंगा समुद्र-सदृश विशाल दिखायी देती हैं।

बिहारमें गंगाके दोनों किनारोंपर लगभग एक हजार गाँव बसे हैं। ये सभी गाँव तीर्थस्थल हैं। इनका इतिहास और इनकी लोकोक्तियाँ माँ गंगासे जुड़ी हैं। कार्तिक पूर्णिमा, गंगा दहशरा और छठ-जैसे मौकोंपर इन गाँवोंमें मेला-जैसा दृश्य होता है। झुण्डमें विभिन्न परिधान पहने जब महिलाएँ गंगा माँके गीत गाते हुए चलती हैं तो सौन्दर्य देखते बनता है। तभी तो बिहारके प्राचीन महाकवि विद्यापति गंगाके किनारे ही जीवन बितानेकी कामना करते हैं—

बड़ सुख सार पाओल तुअ तीरे। छोड़इत निकट नयन बह नीरे॥
करजोरि बिनमओं विमल तरंगे। पुन दरसन होए पुनमति गंगे॥
एक अपराध छेमब मोर जानी। परसल माय पाए तुअ पानी॥
कि करब जप-तप जोग धेआने। जनम कृतारथ एकहि सनाने॥

अर्थात् विद्यापति कहते हैं कि हे माँ! तुम्हारे तटपर बहुत सुख मिलता है, छोड़ते समय दुःख होता है। हे माँ! अब कब दर्शन होंगे? आपकी धारामें हमने पैर रखके भारी गलती की है, इसे क्षमा करना। आपके जलमें एक ही स्नानसे जन्म सफल हो गया।

बिहारमें गंगा नदीपर मात्र दो पुल हैं। दोनों आजादीके बाद बने हैं। इससे पहले स्टीमर और नौकासे गंगापार करनेकी सुविधा थी। पहला पुल आजादीके तुरंत बाद मोकामा और बरौनीके बीच बना था। इसका उद्घाटन प्रथम राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्र प्रसादने किया था। उन्हींके नामपर इसका नाम राजेन्द्र पुल हो गया। दूसरा पुल पटना और हाजीपुरके मध्य है, इसे महात्मा गाँधी पुल कहते हैं।

विहार प्रदेशमें गंगाका उचित मूल्यांकन तभी सम्भव है, जब बताया जायगा कि गंगाने अपने तटपर स्थित किन जनपदों, नगरों, तीर्थों और भूभागोंको ऐतिहासिक गरिमा प्रदानकर धन्य बनाया। पद्मपुराणके अनुसार 'वे जनपद, पशु-पक्षी, कीट, तथा स्थावर आदि धन्य हैं, जो गंगाके तटपर स्थित हैं।' बिहारमें गंगाके किनारे बड़े-बड़े सम्राटों, नगरों और राज्योंका उदयास्त हुआ। इसीके किनारे इतिहासने आँखमिचौलीका खेल खेला।

काशीसे उत्तरवाहिनी गंगा जब बिहारकी ओर चलती है तो सबसे पहले उत्तर प्रदेश और बिहारके मध्य ४२ कि०मी० की सीमा निर्धारित करती है। इस राज्यके प्रमुख स्थल जो गंगाकिनारे बसे हैं, वे पश्चिमसे पूर्वकी ओर हैं—सिताबदियारा, चौसा, बक्सर, आरा, नैनीजोर, बहोरनपुर, छपरा, सिन्हाघाट, दिघवारा, आमी, हरदी छपरा, पहलेजाघाट, सब्बलपुर, हाजीपुर, पटना, दीघा, मारुफगंज, फतुहा, बख्तियारपुर, बाढ, मोकामा, मुँगेर, सेमरियाघाट, सूर्यगढ़ा, खगड़िया, भागलपुर, सुल्तानगंज आदि। अँगरेजी कालमें मालवाही स्टीमर इन्हीं स्थानोंपर रुकते हुए जाते थे। माँ गंगा जहाँ समुद्रमें मिलती हैं, उस स्थानको गंगासागर कहते हैं। यहाँका दृश्य बहुत अच्छा है। गंगा समुद्रमें काफी दूरतक अपनी धारा बनाकर चलती हैं। बादमें समुद्रमें विलीन होती हैं।

चौसामें सत्ता-परिवर्तन

गंगाके बिहारमें प्रवेश करते ही चौसा नामक स्थान मिलता है। इसी चौसामें हुमायूँ और शेरशाहका निर्णायक युद्ध सन् १५३९ ई० में हुआ था। हुमायूँ अपनी सेनाके साथ गंगाके प्रवाहसे ही गौड़ देशसे आगराकी ओर लौट रहा था। शेरशाहके लोगोंने उसका रास्ता रोक लिया, भयंकर लड़ाई शुरू हो गयी। शेरशाह यहाँका स्थानीय निवासी था। उसे आम जनताका समर्थन मिला। यहाँकी लड़ाईमें मुगलोंके आठ हजार सैनिक मारे गये। उनके रक्तसे माँ गंगाका पानी लाल हो गया। स्वयं हुमायूँ घायल हो गया। वह जान बचानेके लिये गंगामें कूद गया। जब वह डूबने लगा तो एक भिश्तीने उसकी जान बचायी। इस युद्धमें शेरशाहने हुमायूँकी बड़ी दुर्गति की। उसके महल और सेनानायकोंकी सैकड़ों बेगमें और बच्चे गंगामें डूबकर मर गये। चौसामें गंगाके तटपर भारतके भाग्यका फैसला हुआ। शेरशाहके माथेपर दिल्लीका ताज पहनाया गया। इस घटनाके बहुत समय बाद सन् १७६४ ई० में अँगरेजोंसे लड़नेवाली अवधके नवाब शुजाउद्दौलाकी सेना जब बक्सरकी लड़ाईमें हार गयी और पीछेकी ओर भागी तब चौसामें ही गंगाके दलदलमें फँसकर कुछ तो स्वयं मर गयी और हजारों नौजवान अँगरेजोंकी गोलियोंसे भून डाले गये। भारतमें सत्तापर पूर्णरूपसे कब्जा करनेके लिये अँगरेजोंकी यह निर्णायक लड़ाई थी। इसमें विजयी होकर उन्होंने भारतपर एकछत्र राज्यकी स्थापना की। बक्सरके किलेपर उनका अधिकार हो गया।

प्राचीनकालमें चौसासे एक मार्ग गंगा पार करके गाजीपुर पहुँचता था। वहाँसे वह मार्ग दो भागोंमें चलता था। एक गंगाके वाम पार्श्वके किनारे-किनारे काशी जाता था और दूसरा पश्चिम उत्तरकोणमें चलता हुआ अयोध्या होकर तक्षशिला पहुँचता था। मगधके राजगृहसे तक्षशिला जानेका यही सबसे छोटा और सीधा मार्ग था। चौसाके पासमें ही कर्मनाशा नदीका संगम गंगासे होता है।

बक्सरमें भगवान् राम

चौसासे चालीस कि०मी० पूरबकी ओर बक्सर है। यहाँ गंगाके तटपर चरित्रवन है। कहा जाता है कि इसी

वनमें त्रेतायुगमें विश्वामित्रमुनिका आश्रम था। यहीं उनसे राम और लक्ष्मणने शस्त्र और शास्त्रकी विद्या प्राप्त की थी। इसी वनमें गंगातटपर ऋषिकी यज्ञस्थली थी, जिसकी रक्षाके लिये राम-लक्ष्मणको विश्वामित्रजी अयोध्यासे लाये थे। यहाँकी गंगाके रामरेखा घाटके सम्बन्धमें कहा जाता है कि सिद्धाश्रममें रहते हुए राम-लक्ष्मण यहीं स्नान करते थे। घाटपर स्थित गौरीशंकर मन्दिरके शिवलिंगकी प्रतिष्ठा रामने स्वयं अपने हाथोंसे की थी। भगवान् रामने मुनियोंकी रक्षाके लिये बक्सरमें ताड़का, सुबाहु-जैसे राक्षसोंको मार डाला था। 'श्रीरामचरितमानस' में लिखा है—

प्रात कहा मुनि सन रघुराई। निर्भय जग्य करहु तुम्ह जाई॥
होम करन लागे मुनि झारी। आपु रहे मख कीं रखवारी॥
सुनि मारीच निसाचर क्रोही। लै सहाय धावा मुनिद्रोही॥
बिनु फर बान राम तेहि मारा। सत जोजन गा सागर पारा॥
(रा०च०मा० १। २१०। १—४)

भगवान् राक्षसोंका संहार करके मुनिजीके साथ जनकपुर चले गये।

महाकवि विद्यापतिके अनुसार बक्सरके पास ही गंगाके किनारे भृगु-आश्रम था। उनके अनुसार भृगु ऋषिको विष्णुभगवान्‌की छातीमें लात मारनेका जो पाप लगा, वह कई तीर्थोंपर स्नान करनेसे भी नहीं धुला। उन्हें एक महात्माने एक सूखी डाल दी। वह सूखी डाल कहीं हरी नहीं हो सकी, लेकिन वह बक्सर पहुँचते ही हरी हो गयी। अत: अतिपवित्र तीर्थ जानकर भृगु ऋषिने यहीं आश्रम बना लिया और स्थायीरूपसे रहने लगे।

गंगाके तटपर स्थित आराक्षेत्रमें प्राचीनकालमें घना जंगल था। इसी अरण्यसे आरा नगर बना। भगवान् बुद्धके समय यहाँ अगलाव नामक चैत्य था। यहाँ एक यक्ष रहता था। आरा नगरमें सिद्धनाथ महादेव और अरण्यदेवीका प्राचीन मन्दिर है। महाभारतके अनुसार इसी अरण्यमें बकासुर राक्षस रहता था। वनवासकालमें भीमने इस राक्षसको मारा था।

सन् १८५७ ई० में जब देशमें स्वतन्त्रता संग्राम छिड़ा, उस समय जगदीशपुरनिवासी बाबू कुँवरसिंहके साथ अँगरेजोंकी लड़ाई आरामें हुई थी। युद्धमें अँगरेजोंका पूरा सफाया हो गया। अँगरेजी सेनाका कैप्टन डनवर यहीं मारा गया। आरामें विजयके पश्चात् कुँवर सिंह आजमगढ़ चले गये। वहाँके युद्धके पश्चात् लौटते समय मनियार गाँवमें उनकी सेना गंगा पार कर रही थी। सभी नौकाएँ किनारे लग गयीं। जब उनकी नौका बीच धारामें थी तभी उनकी एक भुजामें दुश्मनकी गोली लग गयी। बाबू कुँवर सिंहने तुरंत उस भुजाको अपनी ही तलवारसे काटकर माँ गंगाको अर्पित कर दिया। बादमें इसी घावसे उनकी मौत हो गयी।

पाटलिपुत्रकी स्थापना

बिहारकी राजधानी पटनाके गौरवपूर्ण इतिहासकी रचना गंगातटपर हुई। मगध-सम्राट् अजातशत्रुके पौत्र उदायीभद्रने गंगाके किनारे कुसुमपुरकी स्थापना की, जो बादमें बृहत्तर पाटलिपुत्रका भाग बन गया। उसने इस नगरके चारों ओर गहरी खाई बनवायी, जिसमें हमेशा गंगाजल भरा रहता था। इसी पाटलिपुत्रमें सम्राट् अशोकने अपनी कन्या संघमित्राको बौद्ध-धम्मके प्रचारके लिये गंगाके प्रवाहमार्गसे श्रीलंका भेजा था। उस दिन गंगामें एक अभूतपूर्व दृश्य था, जब सम्राट् अशोक रानीघाटपर हाथमें बोधिवृक्षकी शाखा लिये आकण्ठ गंगाप्रवाहमें खड़े थे और मन्त्रोच्चारके बीच नावमें बैठी संघमित्राने अपने पिताके हाथसे बोधिवृक्षकी शाखाको ग्रहण किया था। पाटलिपुत्रके लोगोंने दुखी मनसे 'धर्मकी जय' के नारेके साथ संघमित्राकी नावको पाटलिपुत्रसे बिदा किया था। भगवान् बुद्धने ज्ञानप्राप्तिके पश्चात् पटनाके गायघाटसे गंगा पारकर वैशालीमें कदम रखा था। इसी गंगाके तटपर राजशक्तिके प्रतीक मगध और गणशक्तिके प्रतीक वैशालीमें भयंकर युद्ध हुआ। इस युद्धमें मगध-सम्राट् अजातशत्रुने भेदनीतिका सहारा लेकर वैशालीके गणतन्त्रको नष्ट कर दिया।

मुँगेरका किला

गंगातटपर बसा मुँगेर भारतका अति प्राचीन नगर है। महाभारतके सभापर्वसे ज्ञात होता है कि उस कालमें इसका नाम मोदगिरि था। मुँगेरका किला रमणीक स्थान है। यह किला चार हजार फीट लम्बा और तीन हजार फीट चौड़ा है। इस किलेकी दीवारसे सटकर गंगाका

प्रवाह है। तीन ओर गहरी खाइयाँ हैं, जिनमें गंगाजल भरा रहता है। किलेके पास कष्टहरणी घाट है। कहते हैं लंका-विजयसे लौटते समय श्रीरामने सीता और लक्ष्मणके साथ यहाँ विश्राम किया था। जहाँ उन्होंने स्नान किया था, उसे सीताकुण्ड कहते हैं। दस्तावेजोंसे पता चलता है कि मुँगेरके किलेका निर्माण पालवंशके राजा धर्मपालने कराया था। धर्मपालके पुत्र देवपालने मुँगेरमें बड़ा भारी विजयोत्सव मनाया था। इस अवसरपर उसने गंगामें एक नौका-सेतुका निर्माण कराया था। इस सेतुसे बहुत-से नागरिक मुँगेरमें आये थे। सम्पूर्ण भारतमें गंगापर यह पहला पुल था।

महाभारतकालमें भागलपुरके क्षेत्रको अंग देश कहते थे। कौरवनरेश दुर्योधनने कर्णको यहाँका राजा बनाया था। उसकी राजधानी गंगाकिनारे चम्पामें थी। कर्ण प्रतिदिन प्रातःकाल गंगास्नानके पश्चात् स्वर्ण-मुद्राएँ दान करता था।

गंगा नदीमें जलीय जन्तुओंका अक्षय भण्डार है। किनारोंपर स्थित विशाल वृक्षोंके ऊपर पक्षियोंका मेला लगा रहता है। वे गंगामें डुबकी लगाते हैं। अब जनसंख्याके दबाव और प्रदूषणके कारण सब कुछ समाप्त हो रहा है, लेकिन इससे निराश होनेकी कोई बात नहीं है। महाकवि जयशंकर प्रसादका कहना है कि जबतक गंगा प्रवाहित होती रहेगी, तबतक इस देशमें कोई भूखा-नंगा नहीं रहेगा—

ऋद्धि-सिद्धि तू अचल हिमालय से ले आई।
उर्वर भारत वसुन्धरा तू करने आई॥
सींच रही स्नेहमयी जीवन धारा।
सकल ताप तेरी पुनीत लहरों से हारा॥
रह न सकेगा कभी यह देश भूखा नंगा।
मंगल जल जब तक तुम में बहती गंगा॥

बिहारमें गंगाकी महिमा बहुत विशाल है। किनारेपर आज भी बड़ी संख्यामें साधु, तपस्वी, योगी सिद्धि-प्राप्तिके लिये साधनारत हैं। जब हम 'हर-हर गंगे' बोलते हैं तो मनमें एक स्फूर्ति पैदा होती है। वास्तवमें गंगा ही परम बन्धु हैं, गंगा ही परम सुख हैं, गंगा ही परम धन हैं, गंगा ही परम गति हैं, गंगा ही परम मुक्ति हैं और गंगा ही परम तत्त्व हैं। सच्चे मनसे गंगाकी आराधना करके हम मनोवांछित फलोंकी प्राप्ति कर सकते हैं।

रंगीन चित्र पृ० ९ का परिचय—

माता गंगाका वात्सल्यभाव

महाभारतकी कथा है कि कुरुश्रेष्ठ महाभागवत भीष्म उत्तरायणकी प्रतीक्षा करते हुए कुरुक्षेत्रकी रणस्थलीमें शरशय्यापर लेटे हुए थे। सूर्यके उत्तरायण होनेपर ब्रह्मरन्ध्र फोड़कर उनके प्राणोंने महाप्रयाण किया। उस समय युधिष्ठिरादि कुरुवंशी उनका दाह-संस्कारकर उन्हें जलांजलि देने परम पवित्र श्रीगंगाजीके तटपर गये। इन सबके साथ भगवान् श्रीकृष्ण, महर्षि व्यास, देवर्षि नारद आदि मुनिगण और नगरवासी भी थे। जब उनके महात्मा भीष्मको जलांजलि दी तो पुत्रस्नेहसे शोकाकुला गंगाजी जलसे प्रकट हो गयीं और विलाप करते हुए कौरवोंसे कहने लगीं—निष्पाप पुत्रगण! महान् व्रतधारी भीष्म कुरुकुलवृद्ध पुरुषोंका सत्कार करनेवाले और अपने पिताके बड़े भक्त थे। परशुरामजी भी अपने दिव्य अस्त्रोंद्वारा जिस मेरे महापराक्रमी पुत्रको पराजित नहीं कर सके, वही महाव्रती इस समय शिखण्डीके हाथों मारा गया! यह मेरे लिये कितने कष्ट की बात है।

तब भगवान् श्रीकृष्ण और व्यासजीने उन्हें आश्वासन देते हुए कहा—हे सरिताओंमें श्रेष्ठ देवि! सम्पूर्ण देवताओंसहित साक्षात् इन्द्र भी तुम्हारे पुत्रको मार नहीं सकते थे, वे तो अपनी इच्छासे शरीर छोड़कर उत्तम-लोकको गये हैं। क्षत्रिय धर्मके अनुसार युद्ध करते हुए वे अर्जुनके हाथसे मारे गये हैं, शिखण्डीके हाथसे नहीं।

इस प्रकार भगवान् श्रीकृष्ण और व्यासजीके समझानेपर नदियोंमें श्रेष्ठ गंगाजी शोक त्यागकर अपने जलमें उतर गयीं।

'काशीप्रान्तविहारिणी विजयते गंगा मनोहारिणी'

(पं० श्रीकृष्णानन्दजी उपाध्याय)

शैलेन्द्रादवतारिणी निजजले मज्जज्जनोत्तारिणी
पारावारविहारिणी भवभयश्रेणीसमुत्सारिणी।
शेषाहेरनुकारिणी हरशिरोवल्लीदलाकारिणी
काशीप्रान्तविहारिणी विजयते गङ्गा मनोहारिणी॥ *

(श्रीमद्भगवत्पाद शंकराचार्य)

उत्तुंगतुंगतरंगिणी भगवती भागीरथी गंगाजीका प्राकट्य 'रसो वै सः' के स्वरूपमें अनादिकालसे सृष्टिके कारणभूत जलरूपमें प्रकट है। अनन्तानन्त ब्रह्माण्डोंके उद्भावक भगवान्‌का दिव्य तत्त्व 'रस' ही ब्रह्मद्रव पदवाच्य है—यही भगवती गंगाजीका अनादि अखण्ड स्वरूप है—गंगा साक्षात् ब्रह्मकी प्रथम गुणमयी 'जलरूपा' मूर्ति हैं।

ब्रह्मवैवर्तपुराणपरिशिष्ट काशी-रहस्यमें गंगाजीके महत्त्वका प्रतिपादन दिव्यातिदिव्यरूपमें प्राप्त है। गंगा-सेवा या गंगाराधनाको प्रतिपादित करता हुआ निम्न श्लोक बताता है कि देखने, स्पर्श करने एवं स्नान-पानादि विविध कार्योंद्वारा मोक्षद्वार खोल देनेवाली गंगाजीकी काशीमें प्रयत्नपूर्वक सेवा करनी चाहिये—

काश्याङ्गङ्गा सेवनीया प्रयत्नैः सर्वैर्लोकैः सिद्धिसङ्घैर्दुरापा।
दृष्टा स्पृष्टा स्नानपानादिभिश्च मोक्षद्वारं सम्प्रयच्छेद्वृषाढ्या॥

(काशीरहस्य २१। ३३)

एक तो स्वयं गंगाजी परम पवित्र हैं, पुनः श्रीविष्णुपदी हैं, पुनः ब्रह्माके लोकसे उतरी हैं, पुनः शम्भुकी जटामें समाहित होकर उत्तुंग तुंग हिमशिखरोंकी हृदयगुहासे प्रचलित होकर भगीरथके प्रयाससे काशीमें गंगाका आगमन एवं सेवन महत्त्वकी महनीय पराकाष्ठा है, यथा—

पवित्रमाद्यं स्वयमेव गङ्गा पुनश्च्युता विष्णुपदात्ततोऽपि।
ब्रह्मादिलोकादपि मूर्ध्नि शम्भोर्निपातनाद्भूतिसुपाण्डुराङ्गी॥

(काशीरहस्य २१। ३४)

प्रायश्चित्त-सम्बन्धी कार्योंमें बाह्यान्तर शुचिके हितार्थ गंगाके दर्शन-स्पर्श-जलपान-स्नानादिके विधान विधिग्रन्थोंमें प्राप्त हैं। विधि-निषेधात्मक कर्मकाण्डभागमें गंगासेवनकी विधिके साथ ही तत्-तत् स्थलोंमें गंगाके समीप या गंगाजीके पार्श्व तट या क्षेत्रमें वर्ज्य-प्रकरण 'निषेधवाक्य' भी बहुलतासे प्राप्त हैं।

त्रिस्थलीसेतु, तीर्थेन्दुशेखर एवं काशीमृतिमोक्षविचार नामक प्रबन्धग्रन्थोंमें गंगाकी विशेष महिमा वर्णित है। काशीमृतिमोक्षविचारमें श्रीसुरेश्वराचार्यका गंगा-महिमामें निम्न प्रमाण द्रष्टव्य है—

गङ्गायां मरणं चैव दृढा भक्तिश्च केशवे।
ब्रह्मविद्याप्रबोधश्च नाल्पस्य तपसः फलम्॥

लेकिन यह नहीं भूलना चाहिये कि गंगा, काशी, सत्संग और विश्वेशका दर्शन—इस साधनचतुष्टयको प्राप्त करके पापोंकी छूट है।

काशीमें गंगाकी प्राप्ति विश्वेशकी महती कृपासे ही सम्भव है—

काश्यां गङ्गा प्राप्यते पुण्यभारैर्विश्वेशस्याऽनुग्रहः साधु चेत्स्यात्॥

(काशीरहस्य २१। ४५)

भगवती गंगा पुरुषार्थचतुष्टयकी दात्री हैं—

गङ्गैव धर्मः खलु मोक्षदायी
गङ्गासुखञ्चार्थरूपाऽपि गङ्गा।
चतुर्विधस्याऽपि सुखस्य दात्रीं
गङ्गां भजेद्विष्णुशिवप्रियो यः॥

(काशीरहस्य २१। ५२)

'गङ्गां भजेद्विष्णुशिवप्रियो यः' भगवान् विष्णु, भगवान् शिव अर्थात् हरिहरकी प्रसन्नताको प्राप्त करनेके लिये गंगा-सेवासे सुगम और कोई साधन नहीं है।

काशीमें गंगेश्वर लिंग गंगा एवं ईश्वरकी अनन्यताका सूचक है। श्रावण, सोमवार, पूर्णिमाको गौरीकुण्ड केदारघाट वाराणसीमें स्नान, दान, पूजनसे मनुष्य शिवस्वरूप हो जाता है, गंगाकी यह विशेषता है—गंगाजीको

* हिमालयसे उतरनेवाली, अपने जलमें गोता लगानेवालोंका उद्धार करनेवाली, समुद्रविहारिणी, संसार-संकटोंका नाश करनेवाली, [विस्तारमें] शेषनागका अनुकरण करनेवाली, शिवजीके मस्तकपर लताके समान सुशोभित, काशीक्षेत्रमें बहनेवाली मनोहारिणी गंगाजी विजयिनी हो रही हैं।

शिवजीका वरदान है—

त्वत्सङ्गतमहातीर्थे गौर्याख्ये मत्पुरः स्थिते।
नभोमासि विधोर्वारे राकायुक्ते विशेषतः॥
अत्र स्नानं पूजनं मे दुर्लभं प्राणिनां प्रिये।
लभेत् स्नानं यदि तथा सोऽहमेव न संशयः॥

(काशीकेदारमाहात्म्य १५।३६-३७)

साक्षात् शम्भुस्वरूपिणी भगवती गंगा, जिनके दर्शनमात्रसे मुक्ति हो जाती है तो फिर उनमें स्नानका क्या फल होगा, इसका वर्णन कौन कर सकता है!

कीदृशी सा महागङ्गा साक्षाच्छम्भुस्वरूपिणी।
यस्या दर्शनतो मुक्तिर्न जाने स्नानजं फलम्॥

(का०के०मा० १५।४५)

काशीमें गंगाका विशेष महत्त्व स्कन्दपुराणकाशीखण्ड तथा त्रिस्थलीसेतुके काशीप्रकरणमें विशेषरूपसे वर्णित है।

तदा संक्षीणपापः सन्दिव्यभोगसमन्वितः।
षष्टिवर्षसहस्राणि स्वर्गलोके महीयते॥
ईदृशी स्वर्णदी यत्र सर्वतीर्थसमन्विता।
तां काशीं को न सेवेत भीमसंसारमुक्तये॥

पुनः काशीवासको त्याग करके अन्यत्र जानेपर चेतावनी—

सम्प्राप्य काशीं शिवराजधानीं
क्व यासि रे मूढ दिगन्तराणि।
निधानकुम्भं चरणेन हत्वा
चाण्डालसेवां प्रकरोषि नित्यम्॥

पुनश्च—

देवो देवी नदी गङ्गा मिष्टमन्नं शुभा गतिः।
वाराणस्यां विशालाक्षि वासः कस्य न रोचते॥
गङ्गास्नानं विश्वनाथानुवृत्ति-
स्तत्ततीर्थस्नानदेवार्चनानि ।
दानं शक्त्या सत्कथा सत्प्रसङ्गः
पापत्रासः कीर्तनं शम्भुनाम्नाम्॥

ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष दशमीको 'गंगादशहरा' पर्वपर यहाँ दशाश्वमेधमें स्नान, कार्तिकमें पंचगंगामें स्नानके विशेष महत्त्वका प्रतिपादन भविष्यपुराण आदिमें वर्णित है।

शृंगवेरपुरकी गंगा

(डॉ० श्रीमती इन्दिरा तिवारी)

पतितपावनी, आह्लाददायिनी माँ गंगा मुझे बाल्यावस्थासे ही रोमांचित करती आयी हैं। शिवमन्दिरमें प्रणाम करनेके लिये दोनों हाथ अवश्य जुड़ जाते थे, पर आँखें उनकी जटासे प्रवाहित गंगधारपर टिक जाती थीं। जहाँ कहीं महादेवका चित्र नजर आता, आँखें केवल गंगधारपर ही स्थिर हो जातीं। गंगाजीके प्रति इस अगाध प्रेमको देखकर घरके लोग सोचने लगे कि अब इसे जल्दी ही गंगाजीके दर्शन करा दिये जायँ।

उस समय मेरे चाचाजी बनारसमें रहते थे। गर्मीकी छुट्टियाँ थीं। मैंने दूसरी कक्षा पास की थी। बस, बनारस जानेका प्रोग्राम बन गया। हम सब बनारस पहुँचे। दो-तीन दिनोंके बाद गंगादशहराका पर्व आया। पूरा परिवार गंगा-स्नानके लिये गंगातटपर पहुँचा। मेरी खुशीका ठिकाना नहीं था। जिन गंगाजीकी कल्पनामें मैं खोयी रहती, उन्हें अपने सामने देखकर बाल-हृदय मचल उठा। हम सब ऐसे तटपर उतरे थे, जहाँ गंगा गहरी नहीं थीं। हम बहुत दूरतक पानीमें खेल सकते थे। मेरी उम्रके अन्य भाई-बहन भी थे, अतः बड़ा मजा आ रहा था। हम सब बड़ी मुश्किलसे बाहर आये थे। उसके बाद मुझे कई बार बनारस जानेका मौका मिला तथा एक बार प्रयागमें त्रिवेणी-स्नानका भी अवसर मिला।

शनैः-शनैः समय व्यतीत होता गया और मेरा विवाह हो गया। मैं पारिवारिक जिम्मेदारियोंको निभानेमें ऐसी तल्लीन हो गयी कि स्मृति धूमिल पड़ गयी। फिर एक समय ऐसा आया कि टीवी चैनलपर गंगा-आरती शुरू हुई और अतीत फिर दस्तक देने लगा। मैं चाहे कितनी भी व्यस्त रहूँ, पर गंगाजीकी आरतीके समय सब काम छोड़कर टीवीके सामने बैठ जाती थी और उतनी ही देरमें सारी पुरानी स्मृतियोंको सँजोये रखती थी। उम्रके साथ बचपन पीछे छूट

जाता है और स्वभावमें परिपक्वता आ जाती है। अतः अब मन व्यग्र नहीं होता था।

एक बार मुझे इलाहाबादसे चालीस किलोमीटर दूर रामापुर गाँवमें जानेका अवसर मिला। यहाँ हमारे ससुराल पक्षकी पैतृक भूमि है। पहले सब यहीं रहा करते थे। मैं पहली बार यहाँ आयी थी। एक विशेष कार्यक्रम था। दो-तीन दिनोंमें कार्यक्रम पूरा हो गया। अब हमारे लौटनेके लिये दो दिन शेष थे। हमारे भतीजेने कहा—चलो चाची, तुमको और चाचाको शृंगवेरपुरकी गंगामें स्नान करवा लाऊँ। शृंगवेरपुर? जहाँ से भगवान् श्रीरामने वनवास जाते समय गंगा पार किया था। मैंने आह्लादित होते हुए पूछा।

हाँ चाची, शृंगवेरपुर यहाँसे पाँच किलोमीटरकी दूरीपर है। कहा जाता है कि वह भूमि आज भी उसी प्रकार स्थित है, जैसी श्रीरामके समय रही होगी। गंगाकी ऊँची-ऊँची कगारें हैं। तटपर उतरनेके लिये वही ढलानवाला मार्ग है। ऊपर कगारपर निषादराज केवट, जिन्होंने श्रीरामको गंगा पार कराया था, उनका मन्दिर है। वहाँ नाव भी रखी है। मान्यता है कि यह वही नाव है, जिससे भगवान् श्रीराम गंगा पार गये थे। वहाँ केवल मछुआरोंकी बस्ती है। उनके सारे घर उसी पुरानी पद्धतिके बने हुए हैं। उन्होंने अपने इलाकेमें दूसरोंको प्रवेश नहीं करने दिया है। एक पुराना वट-वृक्ष है। उसके नीचे मिट्टीका चबूतरा बना हुआ है, जिसे मछुआरोंने उसी प्रकार सँजोकर रखा है। उनका कहना है कि उसपर श्रीराम एवं सीताजीने विश्राम किया था। इससे उनके शरीरसे स्पर्श हुई भूमिको वे तीर्थ मानते हैं। सरकारने तटको सुधारना चाहा, सीढ़ियाँ बनवानी चाहीं, पर नाविकोंने स्वीकृति नहीं दी। उनका कहना है कि उस मार्गपर उनके भगवान्‌की चरण-रज पड़ी है। अन्तमें सरकारने विवश होकर पाँच किलोमीटर दूर कृत्रिम शृंगवेरपुरका निर्माण किया है। चलिये, हम आपलोगोंको असली शृंगवेरपुरकी गंगामें स्नान करवाते हैं। इस कार्यक्रमके बनते ही पूरे परिवारमें खुशीकी लहर दौड़ पड़ी।

चलो सब जल्दी तैयार हो जाओ, नहीं तो धूप तेज हो जायगीकी ध्वनि गूँज उठी। मेरे मनमें बाल्यावस्थाकी सुप्त भावना जाग्रत् हो उठी, मानो वर्षोंसे बिछुड़ी हुई माँके पास जानेका अवसर मिला हो। सारा परिवार जानेकी तैयारीमें जुट गया। गंगामैयाकी पूजाके लिये सामग्री इकट्ठी की जाने लगी। उसी समय रसोईसे बेसनकी सोंधी-सोंधी महक आने लगी। मैं तैयार हो चुकी थी, अतः अपनी जेठानीजीको ढूँढ़ती हुई रसोईमें पहुँची तो देखा कि वे बेसनके लड्डू बना रही थीं।

मैंने पूछा—ये आप क्या करने लगीं? शृंगवेरपुर चलना है न? हाँ, उसीकी तो तैयारी कर रही हूँ। तुम पहली बार शृंगवेरपुरके गंगातटपर जा रही हो न। तुमसे विधिवत् पूजा करवाऊँगी। उसीके लिये प्रसाद बना रही हूँ। उनका मेरे प्रति इतना प्रेम देखकर मैं गद्‌गद हो उठी। आजके इस वातावरण में जहाँ अतिथि-सत्कार तो दूर, घरके बड़ोंका मान रखना भी लोग भूल रहे हैं, वहाँ जेठानीजीकी इतनी ममता देखकर हृदय भर आया। यह प्रेम, दूसरोंके प्रति समर्पण, कर्तव्य पालन आदि जितने भी सद्‌गुण होते हैं, सब उनमें दिखायी देने लगे। उनके भावोंके सौन्दर्यसे उनका मुखमण्डल द्विगुणित आभासे दीप्त हो उठा था।

अब हम सब तैयार होकर बाहर आ गये। लोग अधिक थे, अतः तीन गाड़ियोंका प्रबन्ध किया गया था। एडवांस बुकिंगके दौरमें केवल आधे घंटेमें गाड़ियोंका प्रबन्ध भी प्रेम और सौहार्दका द्योतक था। थोड़ी ही देरमें हम गंगा-दर्शनके लिये निकल पड़े। हमारी गाड़ीमें ससुरालसे आयी हुई लड़कियाँ एवं बहुएँ थीं। जेठानीजी मेरे पास बैठी थीं। उनके कहनेपर गंगाजीके भजन गाये जाने लगे। गंगाजीके भजन भक्तिसे पूर्ण थे। गंगाजीकी इतनी भक्ति देखकर मुझे मेरी भक्ति बहुत छोटी लगने लगी। एक भजनके बोल मुझे अबतक याद हैं, जिसको स्मरणकर मन झूम उठता है—

गंगा मैया तोरे दर्शन को भागी चली आयी हूँ।
नैहर से आयी हूँ मैं तो पीहर से आयी हूँ।
पियरी चढ़ाने मैं तो दौड़ी चली आयी हूँ॥

इस प्रकारके कई भावपूर्ण भजन गाये जा रहे थे। ऐसा लग रहा था, यह यात्रा चलती रहे और हम भक्ति-रसमें डूबे रहें। इतनेमें ही गंगामैयाकी जय ध्वनि करते हुए पीछेवाली गाड़ी सामने निकल गयी।

बाहर देखो, गंगामैया दिखायी दे रही हैं, जेठानीजीने बाहर संकेत किया। मैंने बाहर देखा। गंगाजीकी पवित्र धारा लहरा रही थी। गंगाजीकी लहरोंमें जो आभा थी, वह अन्य नदियोंमें दिखायी नहीं देती। मैंने कई बार गंगाजीके दर्शन किये थे, पर ऐसी चमक नहीं देखी थी। गंगाजलको स्पर्श करती हुई वायु शीतल हो चली थी। वातावरण कोलाहलसे दूर, एकदम शान्त था। मेरा मन आनन्दसे झूम उठा। शायद तट आ गया था। जय गंगा मैयाके साथ-साथ जय शृंगवेरपुर, जय श्रीरामके नारे लगने लगे। यह ध्वनि श्रीरामके प्रति अटूट प्रेम, आस्था एवं गंगामैयाके प्रति भक्तिसे परिपूर्ण थी। मेरा रोम-रोम रोमांचित हो उठा था। सब गाड़ियाँ रुक गयीं। हम सब बाहर निकले। हमारा भतीजा प्रकाश साथ हो लिया। मुझे सामने वटवृक्षके नीचे मिट्टीका चबूतरा दिखायी दिया। मुझे सारा दृश्य ऐसा प्रतीत हुआ मानो मैंने कभी देखा हो। ख्याल आया, रामायण सीरियलमें जब श्रीराम शृंगवेरपुर पहुँचे थे, तबका देखा हुआ यह दृश्य है। 'चाची! क्या देखने लगीं ? गहरी सोचमें दिखायी दे रही हो'—प्रकाशने पूछा।

'प्रकाश! मुझे ऐसा लग रहा है कि रामायणकी शूटिंग शायद यहीं हुई होगी।'

'हाँ मैया! रामायणकी शूटिंग यहीं हुई है और सामने चबूतरा दिखायी दे रहा है न, भगवान् श्रीराम सीता मैयाके साथ वहीं बैठे थे। इसीलिये रामायण सीरियलके श्रीरामको भी वहीं बैठाया गया था। उस समय हम सब नाविकोंको भी बुलाया गया था।' पास ही खड़े एक नाविकने बताया।

'आप कौन हैं ?' मैंने कौतूहलवश पूछा।

'हम नाविक हैं माई! कहते हुए उसने हाथ जोड़ लिये।'

'प्रकाश! चलो पहले हम सब उस चबूतरेका दर्शन कर आयें।' पतिदेवने इच्छा जाहिर की और हम सब चबूतरेके पास पहुँचे। हमने चबूतरेको स्पर्शकर प्रणाम किया और उसकी रज माथेपर लगायी। मैंने वहाँकी थोड़ी-सी मिट्टी रूमालमें बाँध ली।

'मैया! सब लोग चबूतरेपर बैठें। बड़ा पुण्य मिलता है।' उस नाविकने आग्रह किया।

जहाँ भगवान् बैठे हों, जिसपर नाविकोंने पूजाके फूल चढ़ाये थे, उसपर बैठनेमें मुझे कुछ झिझक-सी महसूस हुई।

प्रकाश बोला—चाची! बैठिये न, चाचा! आप भी बैठें। मैंने जेठानीजीको बुलाया और हम सब बैठ गये। प्रकाश भी बैठ गया।

कुछ देरके लिये मैंने आँखें मूँद लीं। मनको बड़ा सुकून मिल रहा था।

चलते-चलते हम उस नाविकको कुछ देना चाह रहे थे, पर उसने मना करते हुए कहा—बाबूजी! यह चौरा हमारे भगवान्का है। हम सबको उसपर बैठाकर पुण्य कमाते हैं। इससे बड़ी कमाई और क्या होगी? ऐसा कहते हुए उसने हाथ जोड़ लिये। मैं अवाक् रह गयी। इस युगमें जहाँ व्यवसायके लिये मन्दिर बनवाते हैं, ऐसे युगमें ऐसा निश्छल व्यवहार पहली बार देखा था। हृदयने कहा—यदि भक्ति सीखनी हो तो इनसे सीखो। इनकी भक्तिमें भक्तिका पूरा स्वरूप है, इसीलिये उनपर ईश्वरका वरदहस्त है कि आज भी उनके आराध्यका चबूतरा सुरक्षित है। जिसका दर्शन वे प्रतिदिन किया करते हैं, उसमें वे अपने आराध्यकी छवि देखते हैं।

हम आगे बढ़े। हम काफी ऊँचे कगारपर खड़े थे। नीचे गंगामैया लहरा रही थीं। जेठानीजीने मेरा हाथ पकड़ा और मैं उनके सहारे उतरने लगी। चन्द मिनटोंमें हम गंगातटपर पहुँच गये। दूधिया धारा तरंगित हो रही थी। ऊपरसे पड़ती सूर्य-रश्मियाँ गंगाजीकी धाराको द्विगुणित आभा प्रदान कर रही थीं। तटपर एक ओर लकड़ियोंका ढेर लगा हुआ था। थोड़ी दूरपर कगारके

ऊपरी भागसे लगा हुआ बड़ा-सा चबूतरा बना हुआ था। उसका कुछ अंश पानीमें डूबा हुआ था। मुझे इस प्रकार देखते हुए देखकर जेठानी बोलीं—वह जो चबूतरा देख रही हो न, उसपर शव जलाये जाते हैं। ये जो लकड़ियाँ हैं, उसी काममें आती हैं। वे लोग बड़े पुण्यात्मा हैं, जिन्हें मरनेके बाद अन्तिम संस्कारके लिये यहाँ गंगाजीका तट मिलता है।

फिर तो उनका अस्थि-विसर्जन भी यहीं होता होगा। मैंने पूछा।

उन्होंने उत्तर दिया—हाँ, बड़ी अस्थियाँ और राख यहाँ विसर्जित की जाती हैं और छोटी अस्थियोंको चुनकर इलाहाबादमें त्रिवेणी-संगममें विसर्जित किया जाता है।

कुछ देर हमलोग इसी प्रकार गंगातटका आनन्द लेते रहे, ताकि पुरुष-वर्ग स्नानकर तट सूना कर दें। पुरुष-वर्ग इस समस्याको समझ रहे थे, अतः जल्दी ही तट सूना हो गया। अब हम सास, बहुओंकी बारी थी। सारी बहुएँ तैरनेमें कुशल थीं। बहुत दिनोंके बाद गंगा नदीका तट मिला था, अतः शीघ्र ही पानीमें उतर आयीं और जलक्रीड़ा करने लगीं। मैं भी जेठानीजीका हाथ पकड़कर जलमें उतर आयी। मुझे नदीमें स्नान करनेकी आदत नहीं थी, अतः डरते-डरते आगे बढ़ने लगी। थोड़ी-थोड़ी दूरपर ढलान महसूस हो रही थी। अचानक एक बड़ेसे कपड़ेपर पैर पड़ा। मनमें गन्दगीका एहसास हुआ, पर क्या करूँ ससुरालकी मर्यादाने वाणीको जकड़ रखा था, इसीलिये घिनाहट व्यक्त नहीं कर पायी। मैंने चुपचाप पैर आगे बढ़ाया और गंगाजीके जलको माथेसे लगाकर आगे बढ़ी। कमरतक पानी आ गया था कि आवाज आयी—चाची! वहीं नहा लो, आगे गहराई है। मैं घबराकर रुक गयी और वहीं डुबकी लगाकर नहाने लगी। थोड़ी देरमें बाहर निकलनेके लिये पलटी। मुझे अभीतक उस कपड़ेका एहसास था, अतः थोड़ा हटकर पैर रखने लगी। अचानक मेरा पैर एक पतली लकड़ीपर पड़ा, जिसमें अस्थिका भ्रम हुआ; क्योंकि वह सामान्य लकड़ी नहीं थी। मेरे पैर लड़खड़ाए, पीछे आनेवाली बहुओंने सहारा दिया। मैं तटपर आ गयी। अभीतक उस कपड़े और अस्थिके स्पर्शसे शरीर सिहर रहा था। जिस पावन जलके स्पर्शके लिये मन व्याकुल था, अब वह उसीसे डर रहा था। मनुष्य-जीवनकी कैसी विडम्बना है कि वह अपने पापोंको धोनेवाली माँकी गोदको ही अपवित्र कर रहा है। स्वयंके बैठनेका स्थान साफ करनेवाले लोग माँका स्थान मैला कर रहे हैं। इसे नियतिका चक्र कहें या मानवताका पतन! कुछ समझमें नहीं आता। मनुष्यने अपने स्थान और पूजाके स्थानको ही दूषित कर रखा है।

मुझे इस प्रकार उदास देखकर जेठानीजीने पूछा—क्या बात है, आज इस आनन्दकी वेलामें उदासी क्यों? मैंने उन्हें सारा वृत्तान्त सुनाया।

वे एक गहरी साँस लेते हुए बोलीं—हाँ, मुझे भी ऐसा आभास हुआ था, पर क्या करें, इसमें अपना कोई वश नहीं। चलो ऊपर मन्दिर चलते हैं। हमने नाव की एवं मन्दिरमें गंगाजीकी पूजा की। वहाँ निषादराजकी भी प्रतिमा है, उनकी भी पूजा की और दो दिनों पश्चात् यात्रा पूरीकर हम घर पहुँचे। मनमें उदासी ही रही।

सरकार गंगाजीको शुद्ध करनेका बीड़ा उठा रही है, पर कैसे? यह क्या सम्भव हो सकता है! गंगाजी एक कुण्ड तो नहीं हैं, जिसे साफ किया जाय। उनका विस्तार अपार है। यह प्रयास सफल कैसे हो सकता है? जबतक कि जन-जनमें जागरण न आये, यह असम्भव ही लगता है। आजके परिवेशमें जहाँ हम अपने पूरे परिवारके सदस्योंको सही मार्गपर नहीं ला पाते, जिसके कारण सम्बन्धोंके विघटनकी समस्या खड़ी हो जाती है, वहाँ करोड़ों जनोंमें जागरण लाना तूफानको रोकने-जैसा कठिन कार्य है। इतना होनेपर भी हमें निराश नहीं होना चाहिये, अपनी शक्तिभर प्रयास करें, बाकी सब गंगामैया सँभाल लेंगी।

वृद्धगंगा, दक्षिणगंगा तथा गोदावरी

(डॉ० श्रीभीमाशंकरजी देशपाण्डे)

भारतीय संस्कृति, धर्म और परम्पराकी दृष्टिसे गंगा नदीका महत्त्व, पावित्र्य तथा श्रेष्ठत्व अनुपम है। इसी कारण भारतकी अन्य नदियोंका उल्लेख श्रेष्ठतम गंगाके नामसे ही होता है। दक्षिण भारतके दण्डकारण्यमें बहनेवाली गोदावरी नदीको गंगा नामाभिधान प्राप्त है। दक्षिणमें भीमा, कृष्णा आदि नदियाँ हैं, परंतु गोदावरीका महत्त्व विशेष है। वहाँ गोदावरीको दक्षिणकी गंगा ही कहा जाता है, इसी प्रकार कृष्णानदीको कृष्णगंगाके नामसे भी जाना जाता है। गोदावरीकी गौतमीगंगाके नामसे भी प्रसिद्धि है। पौराणिक वर्णनके अनुसार गौतम ऋषिकी तपस्यासे गंगाकी वह धारा पृथ्वीपर आयी थी। उत्तर भारतमें अत्रिनन्दन दत्तात्रेयका परिचय केवल पुराण-ग्रन्थोंसे ही है, परंतु दत्त-सम्प्रदाय दक्षिण भारतके महाराष्ट्र, कर्नाटक, तमिलनाडु, आन्ध्र एवं गोवा प्रान्तमें प्रमुखतासे प्रचलित है। श्रीक्षेत्र कुरवटपुर (गुरुद्वीप) धनपुर—गाणगापुर, नरसोबाची वाड़ी, औदुम्बर, पीठापुरम्, कारंजनगर आदि प्रमुख दत्तक्षेत्र हैं। नरसोबाची वाड़ी स्थानमें पाँच नदियोंका संगम है। उसे दत्तभक्त पंचगंगाका पवित्र स्थान मानते हैं।

इस दत्त-सम्प्रदायका सम्पूर्ण इतिहास श्रीगुरुचरित्र ग्रन्थमें ग्रथित है। यह मराठी भाषाका ग्रन्थ दत्त-सम्प्रदायमें नित्य पारायणके लिये वेदतुल्य माना जाता है। यह ग्रन्थ एकादश पंचक ११×५=५५ अध्यायका है। इसका विस्तार १२२५० श्लोक (ओवी)-में है।

इस ग्रन्थके १५वें अध्यायमें दत्तमहाराज अपने शिष्योंको यात्राका आदेश देते हैं। इस वर्णनमें दक्षिणकी गंगा गोदावरीका सम्पूर्ण वर्णन महत्त्वपूर्ण है। ऋषि-मुनि निर्देश करते हैं कि इस गोदावरीका उद्‌गम स्थान ब्रह्मगिरि एक पवित्र स्थान है। केवल गौतम मुनिके कारण यह गंगा धरतीपर लोककल्याणार्थ प्रकट हुई। यह स्थान धौम्यऋषिका तपःस्थान है। उनकी साधना इसी स्थानमें हुई। यह स्थान महाराष्ट्रके नासिक जिलेमें त्र्यम्बकेश्वर नामसे प्रसिद्ध है।

द्वितीय कल्पके आरम्भमें ब्रह्माजीने ब्रह्मगिरि स्थानमें प्रातःकर्म सम्पन्न किया। वहाँ जो प्रवाह निर्माण हुआ, वह तीर्थ ही वृद्धगंगा कहलाता है। यह वृद्धगंगा प्रसिद्ध भागीरथी गंगासे भिन्न है।

इस प्रकार दक्षिणकी अनेक नदियाँ अपने पवित्र स्वरूपके कारण जनमनमें गंगाकी भाँति सम्मानित हैं। दक्षिणकी गंगा गोदावरीनदी महाराष्ट्र, कर्नाटक, आन्ध्रको जोड़नेवाली है। ये नदियाँ धार्मिक, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक एकताकी प्रतीक हैं।

चित्रोत्पला गंगा

(महामण्डलेश्वर राजेश्री डॉ० महन्त श्रीरामसुन्दरदासजी)

भारतीय संस्कृति परमात्माकी ही भाँति उनकी प्रकृतिके प्रति भी पूज्यभाव रखती है। अनन्त आकाश, अगाध समुद्र, गगनचुम्बी पर्वत, ग्रह, नक्षत्र, वृक्ष-वनस्पतियाँ और विशाल नदियाँ—सभीमें उन्हीं परमात्मप्रभुका स्वरूप समाया हुआ है, इसीलिये प्रत्येक आस्तिक और भक्त इन सबमें परमात्माका ही रूप देखता है और उनके प्रति वैसा ही पूज्यभाव रखता है। परमात्माकी ही भाँति इनका भी स्मरण पुण्यजनक होता है। निम्नलिखित श्लोकमें पुण्यसलिला नदियोंका स्मरण करते हुए उनसे यह कामना की गयी है कि वे समुद्रसहित हम सबका मंगल करें—

गङ्गा सिन्धुसरस्वती च यमुना गोदावरी नर्मदा।
कावेरी सरयूर्महेन्द्रतनयाश्चर्मण्वती वेदिका॥
क्षिप्रा भोगवती तथा सुरनदी चित्रोत्पला गण्डकी।
पुण्याः पुण्यजलाः समुद्रसहिताः कुर्वन्तु वो मङ्गलम्॥

भारतवर्षमें अनेक पवित्र नदियाँ प्रवाहित होती हैं, पुण्यधरा छत्तीसगढ़ (दण्डकारण्य) कोसल प्रान्तमें भी

महानदी चित्रोत्पला गंगाके रूपमें जनमानसकी आस्थाका केन्द्र है। ऐतिहासिक सिहावा पर्वत, जिसे शृंगी ऋषिजीका पावन पवित्र आश्रम होनेका गौरव प्राप्त है, यही स्थल चित्रोत्पला गंगा (महानदी)-का उद्गम-स्थल है। यहाँसे प्रवाहित होकर यह प्रमुख धार्मिक स्थल भगवान् राजीवलोचनके कमलक्षेत्रमें पहुँचती है, जहाँ तीन प्रमुख नदियों—चित्रोत्पला गंगा, सोंढूर और पैरी नदीका संगम-स्थल है। यह स्थल पवित्र तीर्थस्थल है, यहाँ जगन्नाथजी, कुलेश्वर महादेव एवं महाप्रभु वल्लभाचार्यका प्राकट्य स्थल—चम्पारण्य धाम स्थित है।

चित्रोत्पला गंगा छत्तीसगढ़ प्रान्तकी जीवनदायिनी पवित्र नदी है तथा इसीके किनारे राजा मोरध्वजकी नगरी आरंग, शिवजीका प्रसिद्ध स्थल सिरपुर, नारायणपुर, श्रीस्वामी बालाजी भगवान्, अमेठी, कसडोल एवं भगवान् नर-नारायणकी पावन-पवित्र नगरी शिवरीनारायण एवं लक्ष्मणेश्वर महादेव हैं। शिवरीनारायण नगरको श्रीरामचरित-मानसके प्रसिद्ध नारीपात्र माता शबरीकी जन्मभूमि होनेका गौरव प्राप्त है। चित्रोत्पला गंगाके पावन तटपर भगवान् नर-नारायणका प्रसिद्ध शिवरीनारायण मन्दिर विद्यमान है। शिवरीनारायण नगरमें तीन पवित्र नदियों चित्रोत्पला गंगा, शिवनाथ नदी एवं जोंक नदीका पावन संगम-स्थल है, इसीलिये इस प्रसिद्ध पवित्रधामको गुप्त प्रयाग भी कहा जाता है। यहाँ तीनों नदियाँ प्रत्यक्ष रूपसे संगममें मिलती हैं। भगवान् शिवरीनारायणके चरणोंको 'रोहिणीकुण्ड' का पवित्र जल निरन्तर प्रक्षालित करता रहता है—

अत्र स्थिता न शोचन्ति जराजन्ममृतिष्वपि।
कुण्डं ह्येतद्रोहिणाख्यं कारुण्याख्यजलेन वै॥

(स्कन्दपुराण, वै०ख० २।४।१८)

जिस प्रकार भारतवर्षके चार प्रमुख तीर्थस्थलोंमें गंगा आदि नदियोंके पावन तटपर प्रसिद्ध कुम्भ मेलेका आयोजन होता है, उसी प्रकार श्रीशिवरीनारायणमें प्रत्येक वर्ष माघ पूर्णिमासे महाशिवरात्रिपर्यन्त मेलेका आयोजन होता है। प्रत्येक माघ मासमें अनेक सन्त एवं भक्तजन इस पावन स्थलमें पहुँचकर पूरे माहभर चित्रोत्पला गंगाके पावन तटपर कल्पवास करते हैं। चित्रोत्पला गंगाकी आरती प्रत्येक दिन उसी श्रद्धा-भक्ति एवं आस्थाके साथ शिवरीनारायणक्षेत्रमें की जाती है, जैसी ऋषिकेश, हरिद्वार, प्रयागराज, काशी आदि स्थानोंपर की जाती है।

चित्रोत्पला गंगामें छत्तीसगढ़वासी एवं भारतवर्षके विभिन्न प्रान्तोंमें निवास करनेवाले श्रद्धालु भक्तजन अपने परिवार एवं पूर्वजोंके विभिन्न संस्कार सम्पन्न कराते हैं। शिवरीनारायणकी यह नगरी अनादिकालसे आस्था एवं श्रद्धाका केन्द्र रही है। देश-विदेशके श्रद्धालु इसी मार्गसे भारतवर्षके चार धामोंमेंसे प्रमुख धाम श्रीजगन्नाथपुरी जाते हैं, क्योंकि यह सुलभ एवं सुगम मार्ग है। शिवरीनारायण धाममें विश्वका एकमात्र दुर्लभ वृक्ष 'कृष्णवट' स्थित है, जिसका प्रत्येक पत्ता दोने या सर्पके फनके आकारका होता है। किंवदन्ती यह है कि प्रलयके समय भगवान् श्रीकृष्णने बालरूपमें इसी पत्तेपर लेटकर अपने दाहिने पैरके अँगूठेको चूसते हुए महर्षि मार्कण्डेयजीको दर्शन दिये थे। यथा—

करारविन्देन पदारविन्दं
मुखारविन्दे विनिवेशयन्तम्।
वटस्य पत्रस्य पुटे शयानं
बालं मुकुन्दं मनसा स्मरामि॥

इसी तरह यह भी माना जाता है कि माता शबरीने प्रभु श्रीराघवेन्द्रसरकारजीको इसी वृक्षके पत्तेपर बेर खिलाये थे, इसलिये प्रत्येक पत्ता दोनेके जैसा होता है। चित्रोत्पला गंगाके पावन तटपर अनेक धार्मिक नगर विद्यमान हैं, चन्द्रहासिनी देवीका पावन स्थल चन्द्रपुर है, चित्रोत्पला गंगा छत्तीसगढ़की जीवनदायिनी नदी है, यदि चित्रोत्पला गंगाके कारण ही छत्तीसगढ़ प्रान्तको 'धानका कटोरा' कहा जाता है तो यह अतिशयोक्ति नहीं है। चित्रोत्पला गंगाके जलसे छत्तीसगढ़ प्रान्तकी लगभग आधी कृषिभूमि सिंचित होती है। महानदीके तटपर माँ सम्बलेश्वरीका प्रसिद्ध मन्दिर सम्बलपुर (उड़ीसा)-में स्थित है। उड़ीसाकी प्रसिद्ध आध्यात्मिक एवं व्यापारिक नगरी कटक भी इसी चित्रोत्पला गंगाके कारण प्रसिद्धिको प्राप्त है।

वैनगंगा

(श्री आर०के० श्रीवास्तव, एम०ए०)

मध्यप्रदेशके सिवनी जिलेमें सिवनी नगरसे लगभग १५ किलोमीटर दूर दक्षिण-पूर्वमें मुण्डारा नामक पवित्र स्थानसे वैनगंगा नदीका उद्गम हुआ है, इस वैनगंगा नदीका विभिन्न पुराणोंमें उल्लेख मिलता है। मत्स्यपुराण, श्रीमद्भागवतमहापुराण, श्रीमद्देवीभागवतमहापुराण तथा ब्रह्मपुराण आदिमें इस पवित्र वैनगंगा नदीको वेणा या वेण्याके नामसे सम्बोधित किया गया है।

यह वैनगंगा परम पावन गंगा नदी है, जो कि गंगाका अभिन्न स्वरूप है। श्रीमद्भागवतके पंचम स्कन्धके १९वें अध्यायमें नदियोंका वर्णन आया है, जिसमें वेण्याका उल्लेख है—

कावेरी वेणी पयस्विनी शर्करावर्ता तुङ्गभद्रा कृष्णा वेण्या भीमरथी गोदावरी निर्विन्ध्या।

अर्थात् भारतवर्षकी पुण्यदायिनी एवं पवित्र नदियोंमें इस वैनगंगा नदीको वेण्याके नामसे बताया गया है।

इसी प्रकार श्रीमद्देवीभागवतमहापुराणके अष्टम स्कन्धके ११वें अध्यायके श्लोक १४ में इस नदीका स्पष्टरूपसे वेणा नामसे उल्लेख किया गया है—

वैहायसी च कावेरी वेणा चैव पयस्विनी।
तुङ्गभद्रा कृष्णवेणा शर्करावर्तका तथा॥

इसी प्रकार १२वें एवं १३वें श्लोकोंमें इन नदियोंकी पवित्रताके विषयमें बताया गया है कि भारतवर्षमें पर्वतोंसे निकलनेवाली जो नदियाँ हैं, जिनमें वेणा नामकी नदीका भी उल्लेख किया गया है—इनकी पवित्रताके विषयमें बताया गया है कि इनका जल पीने, उसमें डुबकी लगाकर स्नान करने, दर्शन करने तथा उनके नामका उच्चारण करनेसे मनुष्योंके तीनों प्रकारके पाप नष्ट हो जाते हैं। ऐसी अद्भुत महिमा है वैनगंगाकी।

इसी प्रकार मत्स्यपुराणके ११४वें अध्यायके श्लोक २७ एवं २८वें श्लोकमें पुण्यतोया नदियोंको बताया गया है, जो इस प्रकार हैं—

तापी पयोष्णी निर्विन्ध्या क्षिप्रा च निषधा नदी।
वेण्या वैतरणी चैव विश्वमाला कुमुद्वती॥
तोया चैव महागौरी दुर्गा चान्तःशिला तथा।
विन्ध्यपादप्रसूतास्ता नद्यः पुण्यजलाः शुभाः॥

अर्थात् तापी, पयोष्णी (पूर्णानदी या पैनगंगा), निर्विन्ध्या, क्षिप्रा, निषधा, वेण्या, वैतरणी, विश्वमाला, कुमुद्वती, तोया, महागौरी, दुर्गा तथा अन्तःशिला—ये सभी पुण्यतोया जलवाली मंगलमयी नदियाँ विन्ध्याचलकी उपत्यकाओंसे निकली हैं।

उपर्युक्त पौराणिक आधारोंपर यह सिद्ध होता है कि वैनगंगा एक पवित्र पावन नदी है, क्योंकि वेण्यामें गंगा लगना उसकी पवित्रताका द्योतक है। यह वैनगंगा प्रसिद्ध भागीरथी गंगाका ही अभिन्न स्वरूप है। इसके सम्बन्धमें युगों-युगोंसे प्रचलित एक लोककथा है, जो इसको गंगासे अभिन्नरूप होनेका प्रमाण देती है। लोककथा इस प्रकार है—

महाराष्ट्र प्रान्तके भण्डारा नामक नगरमें वेण नामक राजा निवास करते थे। राजा वेण अत्यन्त धार्मिक एवं गंगाके परम भक्त थे। वे हमेशा गंगामें स्नान करते थे। उन्होंने आजीवन गंगा-स्नानरूपी व्रतका पालन किया, वृद्धावस्था होनेके कारण अन्तमें उन्हें गंगा-स्नानके लिये जानेमें कष्ट होने लगा, फिर भी उन्होंने अपना नियम नहीं छोड़ा। उनकी यह दशा देख गंगाजीको बहुत दया आयी और उन्होंने राजासे कहा—तुम्हें स्नान करनेके लिये बहुत कष्ट होता है। अतः मैं तुम्हारे महलके पास ही प्रकट हो जाऊँगी, एक कमण्डलुमें मेरा जल भर लो, इस जलसे परिपूर्ण कमण्डलुको जहाँ-कहीं भी धरतीमें रखोगे तो मैं वहीं प्रकट हो जाऊँगी। राजाने गंगाजीकी आज्ञाका पालन करते हुए ऐसा ही किया। जब वे जलसे पूर्ण कमण्डलु लेकर आ रहे थे, तब मार्गमें थकावटके कारण उन्हें विश्राम करनेकी इच्छा हुई। तब वर्तमानमें मध्यप्रदेशके

सिवनी जिलेमें स्थित मुण्डारा नामक स्थानमें वे विश्राम करने लगे। थकावटके कारण उन्होंने कमण्डलुको इसी स्थानपर रख दिया। विश्रामके बाद राजाने देखा कि वहाँ गंगाकी धारा प्रकट हो चुकी है, तब राजाने उनसे कहा कि हे माँ! मेरा महल तो अभी बहुत दूर है, तब गंगाजीने कहा कि तुम आगे-आगे चलो, मैं तुम्हारा अनुसरण करते हुए तुम्हारे महलतक पहुँच जाऊँगी। राजाने ऐसा ही किया और पवित्र गंगाने राजाके पीछे-पीछे चलते हुए मुण्डारासे पश्चिमवाहिनी होकर क्रमश: सिवनी नगरमें उत्तरवाहिनी होते हुए दिघौरी ग्राममें वर्तमानमें गुरुधाम, पितृधाम होते हुए छपारा नामक स्थानमें पूर्ववाहिनी होते हुए बालाघाट जिलेमें प्रवेश किया। उसके बाद महाराष्ट्रमें चन्द्रपुर, गढ़चिरौली, भण्डारा, गोंदिया, नागपुर जिलाके कुछ भागोंमें होते हुए अन्तमें महानदी गोदावरीमें मिल गयीं। इसकी प्रमुख सहायक नदी हिर्री है।

इस प्रकार वैनगंगा राजा वेणकी भक्तिसे प्रसन्न होकर मुण्डारामें प्रकट हुईं, अत: इनका नाम वेणगंगा हो गया, जिसका अपभ्रंशरूप वैनगंगा हो गया है। भले ही यह लोककथा हो, किंतु यह गंगाजीके व्यापक प्रभावको एवं उनकी सर्वव्यापकताको प्रकट करती है। यदि राजा वेणकी भक्तिसे प्रसन्न होकर गंगाजी मुण्डारा नामक स्थानमें प्रकट हो सकती हैं तो इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं है; क्योंकि सभी शास्त्रों एवं पुराणोंमें बताया गया है कि गंगा साक्षात् ब्रह्मस्वरूपा हैं, इनका जल साक्षात् ब्रह्मद्रव है।

गंगाको केवल भागीरथीके रूपमें मानना उनके माहात्म्यको संकुचित करना है; क्योंकि गंगा यत्र-तत्र अनेक रूपोंमें विद्यमान हैं। उनकी महिमा एवं प्रभाव सर्वव्यापक है। इसी तारतम्यमें यदि वैनगंगा भी गंगाका ही अभिन्न अंश है तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं।

लोकगीतोंमें गंगा

(श्रीकैलाश पंकजजी श्रीवास्तव)

गंगा भारतीय समाज और संस्कृतिका एक अभिन्न अंग हैं। विभिन्न भारतीय भाषाओंके साहित्यमें गंगाविषयक रचनाएँ प्राप्त होती हैं। लोकजीवनमें गंगाको लेकर अनेक लोकोक्तियाँ एवं मुहावरे प्रचलनमें हैं, जैसे 'मन चंगा तो कठौती में गंगा', 'आँखोंसे गंगा-जमुना बहना', 'गंगा नहा लेना' (कोई बड़ा कार्य सकुशल सम्पन्न कर लेना) इत्यादि। इस प्रकार धार्मिक, सांस्कृतिक और सामाजिक स्तरपर सामान्य जनमानस कहीं-न-कहीं गंगासे जुड़ा है। इसी जुड़ावसे जन्मे हैं गंगासम्बन्धी अनेक गीत।

लोकगीतों तथा साहित्यिक गीतोंमें प्रमुख अन्तर यह है कि जहाँ साहित्यिक गीत किसी एक व्यक्ति-विशेषकी रचनाएँ हैं, वहीं लोकगीत किसी समुदाय, समाज अथवा अंचलके समवेत उद्गार हैं, इस कारणसे इनमें व्यक्त भावोंका महत्त्व साहित्यिक रचनाओंसे अधिक ही है। ये गीत मौखिक परम्पराके माध्यमसे पीढ़ी-दर-पीढ़ी अपने अस्तित्वको न केवल बनाये रखते हैं, अपितु संवर्धित भी होते रहते हैं।

भारतके विभिन्न प्रदेशोंमें वहाँकी स्थानीय बोलियोंमें गंगाविषयक अनेक रोचक गीत प्रचलित हैं। उनमेंसे कुछ यहाँ प्रस्तुत हैं—

नेपाल

गंगाका उद्गम हिमालय पर्वतसे है। अत: यह चर्चा वहींसे प्रारम्भ करते हैं। भारतके पड़ोसी देश नेपालके 'देउसी गीत' में गंगासे कष्टोंको हरनेकी प्रार्थना की गयी है। इन गीतोंको निर्धन बालकोंकी टोलियाँ दीपमालाके दिनोंमें मिठाईकी याचना करते हुए घर-घर गाती-फिरती हैं। (हमारे यहाँ भी पश्चिमी उत्तर प्रदेशमें ऐसे ही 'हेखूके गीत' प्रचलित हैं।)

येसै घर को माती री ले, दूंगा छूंगा द्रव्यै हरून

× × ×

येसै घर को दुख नु पीर नु, गंगाजी ले बगाई लगुन

अर्थात् इस घरकी माता जिस कंकड़को छू दे, वह द्रव्य बन जाय। ×× इस घरके समस्त दु:ख गंगा बहाकर ले जाय।

गढ़वाल

गढ़वालमें आदिबदरी, गंगोत्री आदिमें गंगाके अनेक मन्दिर एवं प्रतिमाएँ हैं। एक गढ़वाली लोकगीतमें स्थानीय जनमानसकी गंगाके प्रति भावनाएँ बड़े अच्छे ढंगसे मुखरित हुई हैं—

गंगा माई गाडू रींग्या ओद/गंगा माई इनी मातमी माई/ गंगा त्वैन उत्पैइ लिने/गंगा हिमालय का गोद/गंगा अखोडू की सौंई/गंगा सोना की जटा/मोत्यों भरीले बाहीं/गंगा आंगडा की तेणीं/गंगा आग आग चले/ गंगा पीछ हीरो की कणी/ गंगा इनी मातमो माई/गंगा पीछ वल्दू की जोड़ी/ गंगा मंडुवा की पाणी/ गंगा चलक सी माता/गंगा सुहाग से स्वाणी॥

अर्थात् गंगा! तू ऐसी माहात्म्यमयी माँ है कि तूने हिमालयकी गोदमें जन्म लिया। गंगा तेरी सोनेकी अलकें हैं, बाहें मोतियोंसे भरी हैं। (जब तू धरतीपर आयी तो) आगे-आगे तू चली तेरे पीछे हीरोंके कण! तू ऐसी माहात्म्यमयी माँ है कि आगे-आगे तू चली, तेरे पीछे बैलोंकी जोड़ी। तू चाँदीकी तरह चमकती है और तू सुहागन-सी सुन्दर है।

छत्तीसगढ़ एवं बुन्देलखण्ड

छत्तीसगढ़ तथा बुन्देलखण्डमें भादोंके महीनेमें भोजली पर्व मनाया जाता है। मिट्टी अथवा पत्तोंके पात्रमें गेहूँ, धान, कोदों आदि बोये जाते हैं तथा प्रतिदिन इनमें जल चढ़ाकर पूजा करते हैं। इसे भोजली जगाना कहा जाता है। इन बीजोंसे जो छोटे-छोटे हरे पौधे निकलते हैं, उन्हीं को भोजली या भुजलिया कहते हैं। नागपंचमीसे प्रारम्भ होकर यह क्रम पूर्णिमातक चलता है पूजनके बाद उन पात्रों—भोजली देवीका किसी नदी या किसी अन्य जलाशयमें विसर्जन कर दिया जाता है। इसे भोजली ठण्डा करना कहते हैं। इन दिनों विसर्जनके लिये पात्रोंको सिरपर रखकर ले जाते समय महिलाएँ जो गीत गाती हैं, उसे भोजली गीत कहते हैं। भू-जल संरक्षणके इस पर्वसे सम्बन्धित एक छत्तीसगढ़ी भोजली-गीतकी कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

गंगा दरस करेब भोजली जगायेब हो भोजली जगायेब
जनम सुफल होइस गंगा नहायेब, अहो देवी गंगा
गाड़ी भर जोंधरा पोरिस कुसीयार, पोरिस कुसीयार
जल्दी जल्दी बाढ़ा भोजली होआ हुशियार, अहो देवी ... गंगा

(भुट्टे और गन्ने जल्दी-जल्दी बड़े हो जायँ, भोजली, आप भी जल्दी-जल्दी बड़ी हो जायँ।)

देबी गंगा, देवी गंगा लहर तुरंगा, हो लहर तुरंगा
तुम्हरे लहर भोजली, बहे आठों अंगा, अहो देवी गंगा

बिहार

बिहार प्रान्तकी एक लोकभाषा है वज्जिका। यह वैशाली अंचलकी लोकभाषा है। गंगाका उल्लेख करते हुए एक रोचक वज्जिका गीतकी कुछ पंक्तियाँ प्रस्तुत हैं, जिनमें समयका राही अपनी पलकोंसे युगोंको नापता हुआ चला आ रहा है—

समैया के राही, हती जुगवा के नापैत हती, पलक चदरिया बिछाये।
बरीस पचीस-सौ पाछे मोरा संग चल,
तोहरा के लाई बैसाली देखाये॥
गंगा-गंडक-हिमाचल से मिलन मनोहर प्रांत।
रहत रहे छत्री एक जाति जे लिच्छवि कहलात।

महाराष्ट्र

महाराष्ट्रके कुछ लोकगीतोंमें भी गंगाकी चर्चा है—

गंगा-जमुना दोघ्या बहिनी गो पानी झुल झुल वाय।
दर्या किनारी एक बंगला गो पानी झुल झुल वाय॥

एक अन्य मराठी गीतमें गंगाका उल्लेख इस प्रकार है—

डँगाव डँगाव रे पुनीच्या चाँदा।
× × ×
चाँदनी बोले मीं पाटाची रानी मीं पाटाची रानी,
येइल गंगा गो भरील पानी सो भरील.....पानी।
त्या बाय पान्याचा रांदलाय......भात,
जेवत जेवत रे तूला होइल......रात।

उत्तरप्रदेश

उत्तरप्रदेशके लोकगीतोंमें तो बहुसंख्यक गीत गंगाविषयक हैं। गंगाका उल्लेख अनेक गीतोंमें विविध रूपोंमें प्राप्त होता है। *'सोनेके गेड़ुआ गंगाजल पानी'* तथा *'गंगा तुमका हम पियरी चढ़इबे'*-जैसी पंक्तियाँ उत्तरप्रदेशके अनेक लोकगीतोंमें प्राप्त होती हैं। इन लोकगीतोंमें गंगाके लिये मैया, माई, माँ आदि सम्बोधन हैं, बहुधा केवल गंगा शब्दका ही प्रयोग हुआ है, जो अधिक आत्मीय तथा अनौपचारिक लगता है। अधिकतर गीतोंमें गंगा-यमुना साथ-साथ हैं।

वैसे तो अन्य देवी-देवताओंके समान गंगाकी भी कई आरतियाँ प्रचलित हैं, किंतु लोकगीतोंमें भी गंगा-आरती उपलब्ध है—

आरती गंगा जीव तुम्हारी।
भरि कै कमण्डलु भगीरथ लाये, सब देउतन के सीस चढ़ाये।
करि स्नान निर्मल भये मनुआ, छुटि जात आवागमन के तनवा॥
सब तिरथन की गंगा महारानी, नारद, सारद बेदु बखानी।

गंगाजीकी प्रार्थनाके रूपमें एक अन्य गीत है—

हो गंगा मइया अगम लहराय।
सिव की जटाजूट से निकसी, पाप औ ताप नसाय॥
एक लहर हमें देहु बरदानी, जुग जुग जीवन केरि कल्यानी।
जो पावै तरि जाय॥

संस्कार-गीत

बहुत-से संस्कार-गीतोंमें भी गंगाका उल्लेख है। उपनयन (यज्ञोपवीत)-संस्कारसे सम्बन्धित एक रोचक गीत है—

गंगा जमुन बिच आँतर चंदन एक रुखवा है हो
तेहि तर ठाढ़े फूफा उनके कातें जनेउवा हो
सात सखी मिल पूछैं किन कातें जनेउवा हो
आठ बरिस के राजा राम उन्हें पंडित करबै हो
हमरे दुलरुवा राजा राम उन्हें पंडित करबै हो

कन्याके विवाहहेतु वेदी-स्थापना सम्बन्धी एक गीतकी कुछ पंक्तियाँ हैं—

नदिया किनारे बाजन बाजइ नभ में होई अँजोर
× × ×
गंग कलस भरि आवैं मोरे बाबा गज मोती चौक पुराय

गंगास्नान

गंगा-स्नानसे सम्बन्धित एक अत्यन्त अनौपचारिक लोक-जीवनका चित्र इन पंक्तियोंमें है, जहाँ पति अपनी पत्नीसे कह रहा है—

अच्छे अच्छे जेवना बनाओ मोरी कामिनी
हमहूँ जाबै गंगा नहाय।

गंगासम्बन्धी लोकगीतोंमें जीवनके विविध पक्ष दृष्टिगोचर होते हैं। गंगास्नानको गयी एक स्त्रीकी समस्याका रोचक चित्रण इस गीतमें है—

गंगा मां किहेव अस्नान बिंदिया लै गै मछरिया।
जाइ कहेब मोरे बारे ससुर से, गंगा मा पुल बंधवाय। बिंदिया-
जाइ कहेब मोरे बारे देवर से, गंगा के जल उलियाव। बिंदिया-
जाइ कहेब मोरे बारे बलम से, गंगा के पूजा कराव। बिंदिया-

प्रसंग चाहे जो भी है, किंतु यहाँ भी जनमानसमें प्रतिष्ठित गंगाके दैवीस्वरूपके ही दर्शन होते हैं।

गंगा-जमुनी संस्कृति

लोकजीवनमें गंगाके प्रति इस भावनाकी व्यापकता इतनी अधिक है कि यह धर्मोंके बन्धन तथा सीमाओंका भी अतिक्रमण कर जाती है। अगला लोकगीत इसी तथ्य का परिचायक है—

अल्लाह मोरे अइहैं, मुहम्मद मोरे अइहैं।
आगे गंगा भामली, जमुना हिलोरें लेंय।
बीचे मां खड़ी बीबी फातिमा उम्मत बलैया लेंय।
उतरा पसीना नूर का, हुइगै चमेली फूल।
मलिनिया गूँथे सेहरा, दूलहा बने रसूल॥

हो सकता है गंगा-जमुनाके साथ बीबी फातिमा और रसूलका उल्लेख कुछ पाठकोंको अटपटा या असंगत-सा लगे। मैंने इसी अंचलके हिन्दुओंसे मोहर्रममें गाये जानेवाले स्थानीय लोकगीत जैसे—*'आये हसन रण खेल के'* भी सुने हैं। वस्तुतः इस श्रेणीके लोकगीत उस संस्कृतिके परिचायक हैं, जो 'गंगा-जमुनी तहजीब'के नामसे जानी जाती रही है। यह तथ्य ध्यान देनेयोग्य है कि देशी तथा विदेशी संस्कृतियोंके इस मेल को 'गंगा-जमुनी' कहा गया है। हमारे समाज और

संस्कृतिमें गंगा-यमुनाको क्या स्थान प्राप्त है, इससे यह स्वतः स्पष्ट है।

गंगाका आशीर्वाद

अन्तमें एक विशिष्ट लोकगीत प्रस्तुत है, जो थोड़े बहुत शब्दोंके हेर-फेरके साथ बहुत अधिक प्रचलनमें है। माँ न बन पानेसे दुखी एक विवाहिता गंगामें प्राण देने आती है। गंगा उसे माँ बननेका आशीर्वाद देकर घर वापस भेजती हैं—

गंगा जमुनवा के बिचवा तिवैया एक तप करै हो।
गंगा अपनी लैहर हमें देतिऊ तो मझधार डूबित हो॥
की तोरे सास ससुर दुख की नैहर दूर बसै।
तेवई कि तोरे हरि परदेस कवन दुख है है हो॥
ना मोरे सास ससुर दुख नाही नैहर दूर बसे।
गंगा ना मोरे हरि परदेस कोख दुख डूबौं हो॥
जाऊ तिवैया घर अपने हम ना लैहर देबै हो।
आज के नवमे महिनवा होरिल तोरे हुइहै हो॥
गहबर पियरी चढ़ैबै होरिल जब हुइहै हो।
देहु भगीरथ पूत जगत जस गावै हो॥

अधिकतर लोकगीत महिलाओंके ही उद्गारके रूपमें हैं। यह गीत भी महिलाओंद्वारा 'सोहर-गीत' के रूपमें गाया जाता है। यह एक प्रतिनिधि गीत कहा जा सकता है। इसके भावोंमें जो सरलता तथा संवादोंमें जो आत्मीयता एवं अनौपचारिकता है, मुझे लगता है वे ही लोकगीतोंके प्राण-तत्त्व हैं। जितना मार्मिक इसका शब्द-संयोजन है, उतनी ही मार्मिक इसकी धुन भी है। गीतकी अन्तिम पंक्तियोंमें भगीरथ-जैसे पुत्रकी कामना करना, जहाँ एक ओर समाज-कल्याणकी भावनाको दर्शाता है, वहीं लोकमानसमें गंगाके प्रति श्रद्धा एवं भक्तिका भी परिचय देता है।

आधुनिककालके कवियोंकी दृष्टिमें गंगा

(श्रीसदाराम सिन्हाजी 'स्नेही')

भगवती गंगाकी गौरव-गाथा वेद, पुराण, इतिहास-सहित समस्त सनातन धर्मग्रन्थोंमें वर्णित है। वेदव्यास, वाल्मीकि और कालिदासप्रभृति संस्कृत कवियोंने तो गंगाजीकी महिमाको विस्तार और ऊँचाई दी ही, हिन्दी साहित्यके भक्तिकालके साथ-साथ आधुनिककालके कवियोंने भी उनकी महिमाका विपुल गौरव-गान किया है।

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्तजीने वन-गमन-प्रसंगमें गंगाके सम्बन्धमें बड़ा ही सुन्दर सरस वर्णन किया है। वे कहते हैं—

जय गंगे आनन्द तरंगे कलरवे।
अमल अंचले पुण्य जले दिवसम्भवे॥
सरस रहे यह भरतभूमि तुमसे सदा।
हम सबकी तुम एक चलाचल सम्पदा॥

भगवान् श्रीराम वैदेहीसे कहते हैं कि हे प्रिये! ये भागीरथी अपने ही कुलकी कीर्तिरूपा हैं—

बोले तब प्रभु परम पुण्य पथ के पथी।
निज कुल की ही कीर्ति प्रिये भागीरथी॥

इतना ही नहीं गंगाकी शोभा देखकर स्वयं आकाशगंगा भी धरतीकी गंगासे मिलने चली आती है—

पृथ्वी पर मन्दाकिनी लेने लगी हिलोर।
स्वर्गंगा उसमें उतर डूबी अम्बर बोर॥
(साकेत, पंचम सर्ग)

कवि विनोदचन्द्र पाण्डेय 'विनोद' ने भी गंगा-गरिमा नामक कवितामें गंगाजीको सकल सुखोंकी दात्री कहा है तथा पतितपावनी वसुधाको कीर्ति देनेवाली बताया है।

गंगा तुम परम पुनीता हो, तुम सकल सुखों की दात्री हो।
धारण करती हो पुण्य तोय, तुम चिर सौभाग्य विधात्री हो॥
तुम करती पतितों को पावन, पापों को क्षार बनाती हो।
जितने भी श्रद्धालु भक्त उन पर निज कृपा दिखाती हो॥
गोमुख गंगोत्री से चलकर, तुम गंगासागर पहुँच गई।
तुमको मिलती ही जायेगी, इस वसुधा पर नित कीर्ति नई॥
है मूल तुम्हारा परम दिव्य, है कार्य तुम्हारा हितकारी।
तुमको पाकर भारत महान्, युग-युग तक होगा आभारी॥

डॉ० अजय जनमेजयने कुण्डलिया छन्दमें गंगा मैयाकी महिमाका वर्णन इस तरह किया है—

गंगा मैया है तुझे बारम्बार प्रणाम।
रहा सनातन माँ सदा तेरा ऊँचा धाम॥
तेरा ऊँचा धाम कलुष को हरने वाली।
माँ तू है धन धान्य सभी को भरने वाली॥
तेरे तट पर सब तीर्थ करें तन मन को चंगा।
जल को निर्मल शुद्ध लिये बहती माँ गंगा॥

प्रसिद्ध कवि ज्ञानेन्द्र साजने गंगा-महिमाके बारेमें एक गजल लिखी है, जो मनकी गहराईको छू जाती है—

भारत की पहचान है गंगा मेरे भाई।
अपनत्व की पहचान है गंगा मेरे भाई॥
सारे जहाँ में इसके जैसा जल कहीं नहीं।
जल तत्त्व की पहचान है गंगा मेरे भाई॥
हिन्दू हो या मुसलमान हो सिख हो या ईसाई।
भ्रातृत्व की पहचान है गंगा मेरे भाई॥
जल आचमन से मुक्ति मिल जाती इसी के।
अमरत्व की पहचान है गंगा मेरे भाई॥
शिवजी की जटाओं से निकलती है इसीसे
शिवतत्त्व की पहचान है—गंगा मेरे भाई।
भागीरथी मंदाकिनी सुरसरी औ जाह्नवी।
अस्तित्व की पहचान है गंगा मेरे भाई॥
यह देव भूमि साज है गंगा के सहारे।
देवत्व की पहचान है गंगा मेरे भाई॥

कवि हरीलाल 'मिलन' ने गंगा-महिमाके विषयमें लिखा है गंगाका आँचल करुणा और ममतासे भरा है एवं ये सदैव वरदान देनेवाली हैं—

गोमुखसे गंगासागर तक, बहती जाये कल-कल गंगा।
अविरल गंगा निर्मल गंगा॥
पूजती अहर्निश सदी-सदी, गुण गान कर रही नदी-नदी।
दी सगरसुतों को प्राणदान, स्वर्गसे उतर कर विष्णुपदी॥
करुणा ममता वरदान भरा तेरा पुनीत आँचल गंगा।
अविरल गंगा निर्मल गंगा॥
तेरे जल में सबसे पहले विस्तृत आकाश नहाता है।
सभ्यता संस्कृति भारत की बढ़ती जाये पल-पल गंगा॥
अविरल गंगा निर्मल गंगा॥

गंगा-अवतरण और ताप्ती माहात्म्य

(श्रीमती मेघा ओमजी गुप्ता)

सूर्यपुराणके 'ताप्ती' माहात्म्यमें गंगाके अवतरणसे सम्बन्धित एक कथा है—भगीरथके भगीरथ प्रयाससे गंगा इस धरापर आनेके लिये सहमत हुईं, पर उनको मालूम था कि सूर्यपुत्री 'ताप्ती' नदी, जिसका महत्त्व इस धरापर सबसे ज्यादा है, उनके सामने मेरा इस धरापर आना, उतना महत्त्वपूर्ण नहीं होगा। इसलिये उन्होंने शर्त रखी कि 'ताप्ती' अपना महत्त्व कम करें तो ही मैं अवतरित हूँगी।

नारदमुनिने इस जिम्मेदारीको स्वीकार किया एवं ताप्तीके किनारे नावथा ग्राम (जिला बुरहानपुर म०प्र०)-में जाकर, जो पुरातन नगर ब्रध्नपुर (ब्रध्न=सूर्य)-के समीप बसा है, कई वर्ष कठिन तपस्याकर ताप्ती माँको प्रसन्न किया एवं गंगाकी शर्त बतायी। लोककल्याणके लिये 'ताप्ती' ने सहर्ष स्वीकार कर लिया एवं ताप्ती जो सूर्यपुत्री हैं, जिनके दर्शनमात्रसे मोक्ष प्राप्त हो जाता है, उन्होंने अपना महत्त्व कम कर लिया एवं गंगाका अवतरण इस धरापर हो गया। ताप्तीके लिये बुरहानपुर (ब्रध्नपुर)-में मान्यता है कि इसके किनारे दाह-संस्कार होनेपर मोक्ष-प्राप्तिके लिये किसी भी अन्य नदीमें राख, अवशेषको विसर्जित करनेकी जरूरत नहीं। ताप्तीका सुन्दरतम रूप, दृश्य आज भी ब्रध्नपुर (बुरहानपुर म०प्र०)-में मनोहरकारी एवं आनन्दमय लगता है।

गंगापर बंगालके कवि

(श्रीआशुतोषजी मुकर्जी)

बंगालमें माँका स्थान सर्वोपरि है; क्योंकि बालककी रक्षाका ध्यान जितना माँको होता है, उतना अन्य किसीको नहीं। शताब्दियाँ गुजर गयीं, बंगालको दुःखके झूलेमें झूलते हुए, फिर क्यों न उसमें करुणाकी रागिनी उमड़े? बंगाल पुरुषार्थी है, परंतु यह पुरुषार्थ भी उसे अपनी करुणाकी कृपासे ही मिला है। दुःखका स्वाद चख लेनेके पश्चात् ही मनुष्यको अनुभव होता है कि दुःखमें कितनी वेदना होती है। इतिहास साक्षी है कि इस वेदनामय जीवनके मार्गपर न जाने कबसे बंगाल बढ़ता चला जा रहा है। इस वेदनाने ही बंगालको भक्तिका पाठ पढ़ाया है; इस वेदनाने ही प्रेमके मन्त्रसे दीक्षित किया है। आज इसीके कारण वह अपना सर्वस्व स्वाहा करके भी जान हथेलीपर लिये हुए अपनी माँकी सेवा करनेको तैयार है। उसे अपने पुराने गौरवका ज्ञान है। उसीकी माँने तो अपने प्यारे अज्ञ बालकोंकी रक्षा हिमगिरिसे स्वयं दुग्धरूप धर, ज्ञान-मन्दाकिनी बनकर की है—महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुरने बंगालकी इस भावनाको कितने अच्छे शब्दोंमें प्रकट किया है—

जाह्नवी जमुना विगलित करुना पुण्यपीयूषस्तन्यवाहिनी।

सचमुच ही यदि आज गंगा भारतमें न होती और उसने अपनी ज्ञानधारासे तथा प्रेमधारासे उसे न सींचा होता—जीवन न दिया होता तो भारत कबका नष्ट हो गया होता। माँ गंगाने अनेक रूप धारण किये हैं। उसने देश और कालसे अतीतको भी अपने बच्चोंके हितार्थ देश-कालसे आबद्ध कर दिया है। जब जिस तरहसे बच्चोंका हित हो सकता है और अहितका निवारण किया जा सकता है, माँको उसके करनेमें कभी विलम्ब नहीं हुआ। बंगालने माँके इस रूपको भलीभाँति देखा है। स्नेहमयी माँसे स्नेह पाकर क्या वह कृतघ्न बन सकता है? क्या वह उसकी उस मूर्तिको भूल सकता है? वह तो उसे महाकविके शब्दोंमें बारम्बार स्मरण करता हुआ हर्ष-विह्वल हो कहने लगता है—

देशे काले मुक्ति जिनि।
जटाय तोरि घुर्णी जड़ाय देश कालेरि मंदाकिनी॥

जो देश-कालसे अतीत हैं, उन्हींकी जटाओंमें देश और कालकी मन्दाकिनी चक्कर काटती है।

देश और कालसे अतीत पुरुषको कौन जान सकता है? कौन देख सकता है? परंतु उसे भी जाननेयोग्य और देखनेयोग्य बनानेकी शक्ति—उसे सीमामें ले आनेकी शक्ति—माँ गंगाके सिवा किसमें है? इसीसे तो उस प्रेम-रूप शिवको अपने बच्चोंतक ले आनेमें माँ समर्थ हो पायी हैं।

माँने बंगालको प्रेम-प्लावित ही नहीं किया, जीवन भी दिया है। यदि बंगालमें माँका पाँव न पड़ा होता तो क्या वह समृद्धि, जो आज उस देशमें दिखायी दे रही है; कभी दिखायी देती? या वह शान्ति, जो त्रिताप-तापित होनेपर भी बंगालमें दिखायी देती है, वहाँ रहती? बंगालके प्रसिद्ध नाटककार द्विजेन्द्रलाल राय तो एक बार मुग्ध होकर भावावेशमें नाचनेतक लगे थे। उस समय उनके मुँहसे निकला हुआ छन्द आज हम लोगोंको भी आनन्दित कर बना देता है—

पतितोद्धारिणि गंगे।
श्याम विटपि घन तट विप्लाविनि धूसर तरंग भंगे॥
कत नग नगरी तीर्थ हइल तव चुंबि चरण-युग भाई।
कत नर नारी धन्य हइल मा तव सलिले अवगाहि॥
बहिछ जननि ए भारतवर्ष कत शत युग युग बाह।
करि सुश्यामल कत मरु प्रांतर शीतल पुण्य तरंगे॥
अम्बर हइते सम शत धार ज्योतिः प्रपात तिमिरे।
नामि धराय हिमाचलमूले मिशिले सागर अंगे॥
वरिष शांति मम शंकित प्राणे वरिय अमृत मम अंगे।
माँ भागीरथि! जाह्नवि! सुरधुनि! कल कल्लोलिनि गंगे॥

गंगे, तुम पतितोंका उद्धार करनेवाली हो, हरित वृक्षोंसे आच्छादित तटोंका तुम प्लावन करती हो। हे तरंगोंकी चोटसे धूसर गंगे माँ! तुम्हारे चरणोंको चूमकर कितने ही नगर तीर्थस्थान हो गये। तुम्हारे जलमें स्नानकर कितने ही लोग धन्य हुए। माँ! अपनी पवित्र और शीतल तरंगोंसे बहुतेरे मरुप्रान्तोंको शस्य-श्यामला बनाती हुई तुम न जाने कितने युगोंसे इस भारतभूमिपर

बह रही हो। आकाशमें शतधारकी तरह अन्धकारमें प्रकाश-स्रोतकी तरह हिमालयके नीचे तुम उतरीं और सागरके साथ मिलीं। हे भागीरथि, जाह्नवि, देवि, हे देवनदि, हे कल-कल्लोलिनि गंगे! माँ! संसारके सब दुःखोंको छोड़कर जब अन्तिम शय्यापर सोने लगूँ तो तुम मेरे शंकापूर्ण हृदयमें शान्ति बरसाना, अंगोंमें अमृत बरसाना।

यह है माँकी महिमा! परंतु माँकी महिमा कैसे गायी जा सकती है? उसे तो अनुभव किया जा सकता है। बंगालने उसका अच्छी तरह अनुभव किया है। बंगालमें जितनी श्रद्धा और भक्ति मिलेगी, जितनी भावुकता मिलेगी, वह सब तो माँ गंगाका ही प्रसाद है। कहनेसे क्या होता है, जिन लोगोंको बंगालके सम्पर्कमें आनेका अवसर मिला है, वे इस बातको भलीभाँति जानते हैं।

बंगालको तो इस बातका गर्व है कि जिस माँसे उसने जीवन प्राप्त किया है, अपना कर्तव्य सीखा है, उस माँका चित्र उसके हृदयमें भलीभाँति अंकित है और भविष्यमें भी रहेगा। [गीताधर्म]

कर्नाटक-साहित्यमें गंगा

(श्रीवागीश शिवाचार्यजी)

हिन्दुओंमें गंगाका विशेष स्थान है। प्रातःकाल उठकर गंगाजीका नाम लेना बहुत ही शुभ देनेवाला माना जाता है। पहले इनके नामका स्मरण करके जो कार्य किया जाता है, वह अवश्य ही सफल होता है। तब कौन ऐसा व्यक्ति होगा जो इस सहज सुलभ लाभको पानेकी चेष्टा न करे? अपने आपको इससे वंचित रखे?

कर्नाटक भले ही गंगाजीसे दूर हो, परंतु है तो उसी भारतवर्षका एक प्रान्त, जहाँ भगवती भागीरथीने प्रकट होकर उसे दैवी-शक्तिसे सम्पन्न किया है, करुणाकी धारा बहायी है, ज्ञानका कोश दिया है। प्रत्येक साहित्य-रस-रसिक भ्रमर अपने-आपको इस रससे परिपूर्ण करनेका प्रयत्न करता है, इसमें डूब जाना चाहता है।

भारतकी संस्कृतिका चाहे उत्तरी भारतमें कभी अवश्य ही खूब प्रचार हुआ हो, परंतु यदि आज कहीं वह अपने पूर्ण रूपमें सुरक्षित है तो दक्षिण प्रान्तमें ही है।

सरलतासे प्राप्त वस्तुका प्रयोग करनेमें, उसका अनुभव लेनेमें, किसी व्यक्तिकी कोई उतनी विशेषता नहीं है, जितनी उस व्यक्तिकी विशेषता कठिनतासे प्राप्त होनेवाली वस्तुको प्राप्त करनेमें और उसके रसका स्वाद लेनेमें है। गंगाके रसास्वादन करनेवाले स्थानोंमें दक्षिण प्रान्तका भी नाम है।

मनुष्य भाव-प्रधान है। कठिनतासे प्राप्त होनेवाली गंगाके रसास्वादनमें तन्मयता प्राप्त करनेवाले, उसमें अपने-आपको डुबो देनेवाले—भावप्रधान कर्नाटकी कवियों और लेखकोंकी कमी नहीं है। कर्नाटक-साहित्यमें गंगाका भावमय प्रवाह ऐसा चलता है कि मनुष्य मुग्ध हुए बिना नहीं रह सकता।

कल्लकुरकीके राजा महामाहेश्वर मल्लरसने गंगाजीको मुक्तिका प्रथम सोपान मानकर अपने काव्य-ग्रन्थोंमें अपने-आपको मुक्ति-साधनाका साधक बताया है। धारवाड़ जिलेके अबलूरु सर्वज्ञ कविने शिवजीकी इच्छा-शक्तिको गंगा मानकर अपनेको कृतकृत्य बनाया है। 'सकल प्राणियोंका जीव गंगा है', की अनुभूति रखनेवाले एलन्दूरके प्रसिद्ध कवि शिवाचार्य षडक्षर हैं और 'गंगा सकल लोकका प्राण है' ऐसा समझनेवाले श्रीहरिहर राघवांक कवि पम्पाक्षेत्रके रहनेवाले हैं। पाठकोंको विदित होगा कि यह स्थान दक्षिणका वही पम्पाक्षेत्र है, जहाँसे भगवान् रामने सीताकी खोजका प्रबन्ध किया था, सुग्रीवसे मैत्री की थी, हनुमान्‌को अपना अनुचर बनाया था। गंगाको कलिमलविध्वंसिनी कहनेवाले श्रीनिजगुण शिवयोगीके विवेक-चिन्तामणिका एक उद्धरण अपनी भाषामें देकर उसकी वर्णन-शैलीका दिग्दर्शन कराता हूँ—

'गङ्गेयेम्बुदु चिदानन्दात्मकसुकृतप्रवाहदिदं शिवभक्तियेम्ब वेदसारवागि महाकैलासदल्लि

श्रीरुद्रलिङ्ग दिव्याभिषेक तीर्थवागिरुबुदु। अदक्के केळभागदल्लिरुव चतुर्मुख कमण्डलु विनल्लि अदु अउगि, त्रिविक्रमन पादहतियिन्द आकमण्डलु ओडेदु होगलु, अल्लिन्द भूकैलासक्के बन्दु बळिक पुत्रार्थियागि याचि सिद हिमालय दल्लि हुट्टि गौरिगे अक्कनेनिसि देवने गळु आनदियन्नु तावु स्वोपयोगक्कागि तेगेदु कोण्डु होगलु, सगरपुत्रर सद्‌गतिगागि भगीरथनु प्रार्थि सलु अल्लिदिळदु भूलोकवन्नु पावन माडुवुदक्कागि होरटु ईश्वरन जडाजूट दल्लि लीन वागि, पुनः अल्लिन्द बन्दु सरोवरक्किळिदु एळु प्रवाह गळागि ओडेदु मूरुपूर्वक्कं मूरु पश्चिमक्कं हरिद, दक्षिणवाहिनि याद भागीरथियु भरद्वाजाश्रमदल्लि कालिन्दी—सरस्वति गळोउने सेरि त्रिवेणियेनिसि, बन्दु वाराणसियेम्ब अविमुक्त तारकेश्वरन सन्निधियल्लि मणिकर्णिक योउने कूडे मूरुवरे कोटितीर्थंगळि उत्तरवाहिनियागि वरुवाग-पटलपुर प्रान्त दल्लि पदमासुरनिगागि ब्रह्मदेशबन्नु होक्कु, उळिदशुद्ध गङ्गेयु कालीखण्ड क्षेत्रदल्लि शतमुखवागि हरिदु पूर्वसागरबन्नु सेरितु। ई तीर्थ पुण्यनदियु महानदिगलल्लि मुख्य वादुदु, इदु गङ्गे, मन्दाकिनि, स्वर्धुनि, त्रिपथगे, भागीरथि, जाह्नवि येम्ब पुण्यनाम गलिन्द वेद प्रतिपाद्यमानवागिरुवुदु। सकलवाद निवर्तक प्रत्यक्षसिद्ध वादुदरिन्द कलि-तारकवागिरुवुदु।'

इसका अर्थ है—गंगा चिदानन्दात्मक सुकृत-प्रवाहसे शिवभक्तिरूप वेद-सार होकर महाकैलासमें श्रीरुद्रलिंगका दिव्याभिषेकतीर्थ हुई हैं। इस तीर्थकी धारा ब्रह्माजीके कमण्डलुमें आकर गिरी, त्रिविक्रमजीका पाँव लगनेपर जब वह कमण्डलु फूट गया तब गंगा हिमालयके प्रार्थनानुसार उनकी पुत्री होकर गौरीजीकी बड़ी बहन हुईं। हिमालयकी इस गंगाजीको देवता अपने पान-स्नानके लिये ले जाते हैं। वे सगर-पुत्रोंकी सद्‌गतिके लिये भगीरथकी प्रार्थनापर वहाँसे शिवजीके जटाजूटपर होती हुई सरोवरमें सप्त-प्रवाह-रूपमें गिरीं। उनमेंसे तीन प्रवाह पूर्वकी ओर गये, तीन पश्चिमकी ओर गये और एक भागीरथीके रूपमें भारद्वाज आश्रममें कालिन्दी और सरस्वतीसे मिलकर त्रिवेणी नामसे प्रसिद्ध होनेके अनन्तर वाराणसी (काशी)-में तारकेश्वरके समीप मणिकर्णिकासे मिलता हुआ साढ़े तीन कोटि तीर्थोंसे पूर्ण होकर उत्तरवाहिनी गंगाके रूपमें पाटलिपुत्र (पटना) प्रान्तमें होता हुआ पद्मासुरके प्रार्थनानुसार ब्रह्मदेशमें गया।

अवशिष्ट शुद्धांश गंगाजी, कालीखण्ड (कलकत्ता) क्षेत्रमें शतमुखी होकर पूर्वसागरमें लीन हुईं। यह गंगातीर्थ सकल पुण्य नदी-महानदियोंमें श्रेष्ठ है। यह पुण्यनदी वेदमें गंगा, मन्दाकिनी, स्वर्धुनी, त्रिपथगा, भागीरथी, जाह्नवी इत्यादि नामोंसे प्रतिपादित हुई है। सकल-वाद-निवर्तक प्रत्यक्षसिद्ध यह गंगा कलिमल-विध्वंसिनी है।

गंगाजीके विषयमें लिंगण कविका वर्णन, जिसे उन्होंने अपने केलदि-नृप-विजय-काव्यमें किया है, बड़ा ही रोचक है। बानगी लीजिये—

रंगत्कणिकाकलितोत्तुङ्ग तरङ्ग प्रसङ्गेयं सतत समा।
लिङ्गित शिवमौलि यनति।
मङ्गलमयि येनिप 'गङ्गेयं' नेरे कण्डम्॥
तेरेयिन्दावर्तदे बे ळ्नोरेयिं बोब्बुलिगळोलियिं शोभिप तुं।
तुरुदुरुगलिनेसेदुदु बां दोरे विचरद्वाश्चरप्रचयादिं रयदिं॥
नळनाळिसि बळवे नीर्वू गळसौरम केळसि बळसि बण्डुगळं को।
ळ् वलिगळ बळगगाळिं मिगे।
पोळेदुदु मण्डलिसि चलिप नीर्‌वकिक गलिं॥

मत्तमदल्लदा मन्दाकिनि तानधोगतिकळागियुं अत्युच्चस्थान मार्ग सहायनियुं, भङ्ग वितान विलुलिते आगियुं अभंग नित्य पदैकसहकारिणियुं, उत्कृष्टप्रति-कूलेयागियुं आनत जनानुकूले युमेनिशि विराजि सुत-मिर्दळु।

कवि कहता है कि शिव-मस्तकसे आयी हुई यह गंगा मंगलमयी है। सुवासित कमलपुष्पोंसे भरी हुई होनेके कारण भ्रमर इधर-उधर भ्रमण कर रहे हैं। हंस मन्दगतिसे चल रहे हैं। यद्यपि गंगा निम्नगा हैं, फिर भी मोक्षरूपी उच्च स्थानको देती हैं। तरंगोंके आघातसे छिन्न-भिन्न होनेपर भी अच्छिन्न और अभिन्न नित्य-पद देती हैं।

अनेक कवियोंने अनेक रूपसे गंगाका वर्णन किया है। इस छोटेसे लेखमें तो कर्नाटक-साहित्यकी यह बानगीमात्र है। [गीतार्थम]

शुक-चरणदासीय-सम्प्रदायमें गंगा-माहात्म्य

(श्रीब्रजेन्द्रकुमारजी सिंहल)

भारतीय जनमानस गंगाको नदीमात्र न मानकर पतितपावनी, अधमोद्धारिणी, मुक्तिप्रदायिनी, आरोग्य-दायिनी गंगामाता मानता है। सगुणमार्गी वैष्णव-भक्त-सम्प्रदायोंमें गंगाका महत्त्व अविवादित है, जबकि वृन्दावनीय-वैष्णव-जन कालिन्दी यमुनाको अधिक महत्त्व देते हैं।

इन्हीं वैष्णव-सम्प्रदायोंमें परमहंस-चक्र-चूड़ामणि श्रीशुकदेवमुनिके शिष्य स्वामी चरणदास (वि०सं० १७६०-१८३९)-द्वारा प्रवर्तित 'शुक-चरणदासीय-सम्प्रदाय' में भागीरथी गंगाको ही अपने सम्प्रदायका तीर्थस्थान माना गया है। यही कारण है कि सम्प्रदाय-प्रवर्तक स्वामी चरणदाससहित इनके अनेक शिष्य-प्रशिष्योंने गंगास्नान-विधि, गंगा-माहात्म्य आदि ग्रन्थोंका निर्माण किया है।

स्वामी चरणदासके प्रशिष्य और श्रीगुरुछौनाजीके शिष्य संत अखैरामजीने २० प्रकाशात्मक (अध्याय) गंगा-माहात्म्य नामक ग्रन्थ सम्वत् १८३२ माघ पूर्णिमा, रविवारको बनाकर पूर्ण किया। पाठकोंके लाभार्थ स्वामी चरणदासजी द्वारा वर्णित 'गंगा-माहात्म्य' एवं स्वामी गुरुछौनाजी द्वारा प्रस्तुत 'गंगास्नान-विधि'-सम्बन्धी कुछ अंश प्रस्तुत किये जा रहे हैं—

राग सोरठ

गंगा स्वर्ग सूँ आई।
बावनजी के पग सूँ प्रगटी, शिव की जटा समाई।
कलियुग मध्य बहुत पतितनके, निसतारनकूँ धाई॥
अधम उधारन पाप निवारन, तारन तरन कहाई।
तब भागीरथ करी तपस्या, शंकर भये सहाई॥
किरपा करि कर जबही दीन्हीं, भागीरथी कहाई।
अति ही पावन सब मन भावन, कहाँ लौं करूँ बढ़ाई॥
धूप दीप ले करौं आरती, फूलारु पान चढ़ाई॥
दरशन करके शीश नवावौ, अन्त परम पद पाई।
चरणदास हरि चरणोदक की, शुकदेव महिमा गाई॥

राग झंझोटी

ऐसे कीजे गंगा का असनान।
पाप प्रतिग्रह नाहीं लीजे, दया धरम उर आन॥
भजन ध्यान अरु कथा कीरतन, सेवा पूजा दान।
या विधि सों जो दरशन करिहैं, पावै मुक्ति निदान॥
अस ज्यों कूद करै जल गँदला, विषै वासना ठान।
मेला जान तमासे जावै, फल नहिं रंचक मान॥
हरि चरणोदक प्रगट भयौ है, यह निसचै जिय जान।
चरणदास शुकदेव कहत हैं, करौ प्रेम सूँ पान॥

राग हेला

गंगाजी की धार हेला, पाप कटन कूँ आर है।
जो कोइ न्हावै प्रीति सूँ रे, अरे हेला उतरै भव जल पार॥
जे ते तीरथ और हैं रे, अरे हेला तिनमें है सरदार।
प्रगटी प्रभु के चरण सों, महिमा अगम अपार॥
अकाल मौत पावै नहीं रे, अरे हेला मन में निश्चय धार।
शीश नवा दरशन करौ, मिटैं कष्ट के भार॥
बहुरि योनि आवै नहीं रे, अरे हेला कहैं शुकदेव पुकार।
चरणदास अँचवन करौ, हरि चरणोदक सार॥

राग आरती

आरति गंगा माँ की कीजे। बस वैकुंठ महा सुख लीजे॥
स्वर्गलोक सूँ गंगा आई। शिव की जटा में आन समाई॥
सेवा करि भागीरथ लीनी। मृत्युलोक में परगट कीनी॥
फूल पान मिष्ठान चढ़ावौ। कर कर दरसन सीस नवावौ॥
शीश छुवाय न्हाय जो कोई। पाप कटैं अरु निर्मल होई॥
चरणदास शुकदेव बखानी। पतित उधारन सुरसरि जानी॥
(स्वामी चरणदासकृत 'भक्तिसागर')

स्वामी गुरुछौना (सम्वत् १७७६-१८३८)-ने भी अपनी वाणीमें गुरु स्वामी चरणदासजी-जैसे ही गंगादि तीर्थों एवं तीर्थस्नानके सम्बन्धमें विचार व्यक्त किये हैं—

चरण पयादे तीरथ जइये। नीची पलक नाम मुख कइये॥
पाप प्रतिग्रह नाहिंन लीजे। चलते दया धरम मग कीजे॥
योजन परै ठौर कर वासा। तीरथ पर नहिं करै निवासा॥
परवी के दिन तीरथ जावै। पहले अपनी ठौरहि न्हावै॥

सकल सुद्ध होइ कीजे दरशन। तीरथ देव होय जव परसन॥
फूल पान मिष्टान्न चढ़ावौं। कर दरशन फिर शीश नवावौ॥
तीरथ माहिं पाँव नहिं दीजे। आवाहन कर कर जल लीजे॥
एक तीर वा वाहिर नहिये। वसन निचोड़ा ताहीं चहिये॥
जल छूवत पातक नसै, मन सुध निर्मल अंग।
छौना सब विधि युक्ति सौं, जो कोइ न्हावै गंग॥
उही ठौर आवै जहाँ उतरा। जव वहाँ वसन निचौड़े सुथरा॥
अपनी सरदा संत जिमावै। ऐसे करि तीरथ फल पावै॥
या विधि तीरथ हो तो कीजे। नहिं तो यामें चित्त न दीजे॥
तीरथ बरत करै नर लोई। तामें पाप पर पुण्य न होई॥
मेला जान तमासै जावै। तीरथ के फल कैसे पावै॥
कूद कूद जल गँदला करहीं। करत अवज्ञा नाहिं न डरहीं॥
समझै ना मूरख अज्ञानै। साधुन सूँ झगरौ बहु ठानै॥
ऐसे दुष्ट मुक्ति नहिं पावै। फिरि फिर योनी संकट आवै॥
तीरथ न्हावै युक्ति सूँ, मुक्त होन की रीति।
वरत कहूँ विधि दूसरी, जन छौना की प्रीति॥

गायत्री महामन्त्रमें सन्निहित शक्ति—'मन्दाकिनी'

(पं० श्रीराम शर्माजी आचार्य)

दृश्य गंगा और अदृश्य गायत्रीमें कई दृष्टियोंसे साम्य

है। गायत्रीकी शक्तिका नाम मन्दाकिनी भी है। गंगा पवित्रता प्रदान करती है। पापकर्मोंसे छुटकारा दिलाती है। गायत्रीसे अन्तःकरण पवित्र होता है। कषाय-कल्मषोंके कुसंस्कारोंसे त्राण मिलता है। गंगा और गायत्री—दोनोंकी ही जन्म-जयन्ती एक है—ज्येष्ठ शुक्ल दशमी। दोनोंको एक ही लक्ष्यका स्थूल एवं सूक्ष्म प्रतीक माना जा सकता है।

गंगाका अवतरण भगीरथके तपसे सम्भव हुआ। गायत्रीके अवतरणमें वही प्रयत्न ब्रह्माजीको करना पड़ा। मनुष्य जीवनमें गायत्रीकी दिव्य धाराका अनुग्रह उतारनेके लिये तपस्वी जीवन बितानेकी, तपश्चर्यासहित साधना करनेकी आवश्यकता पड़ती है। गायत्रीके द्रष्टा ऋषि विश्वामित्र हैं। उन्होंने भी तपश्चर्याके माध्यमसे इस गौरवास्पद पदको पाया था। विश्वामित्रने गायत्री महाशक्तिका उन्नयन, उपार्जनकर उसे राम-लक्ष्मणको हस्तान्तरित किया था। उन्हें गायत्रीकी बला और अतिबला विद्याओंको सिखाया था। इसीसे वे इतने महान् पुरुषार्थ कर सकनेमें समर्थ हुए।

गंगा शरीरको पवित्र करती है, गायत्री आत्माको, गंगा मृतकोंको तारती है, गायत्री जीवितोंको। गंगास्नानसे पाप धुलते हैं, गायत्रीसे पाप-प्रवृत्ति ही निर्मूल होती है। गायत्री-उपासनाके लिये गंगातटकी अधिक महत्ता बतायी गयी है। दोनोंका समन्वय गंगा-यमुना-संगमकी तरह अधिक प्रभावोत्पादक बनता है। ऋषियोंने गायत्री-साधनाद्वारा परमसिद्धि पानेके लिये उपयुक्त स्थान गंगातट ही चुना था और वहीं दीर्घकालीन तपश्चर्या की थी। गायत्रीके एक हाथमें जलभरा कमण्डलु है। यह अमृतजल गंगाजल ही है। उच्चस्तरीय गायत्री-साधना करनेवाले प्रायः गंगास्नान, गंगाजलपान, गंगातटका सान्निध्य-जैसे सुयोग तलाश करते हैं।

भक्तगाथामें रैदासकी कठौतीमें गंगाके उमगनेकी कथा आती है, अनसूयाने चित्रकूटके पास तप करके मन्दाकिनीको धरतीपर उतारा था। गायत्री-उपासनासे साधकका अन्तःकरण गंगोत्तरी गोमुख-जैसा बन जाता है और उसमेंसे प्रज्ञाकी निर्झरिणी सतत प्रवाहित होने लगती है।

गायत्रीकी अनेक धाराओंमें एक मन्दाकिनी है। इसका

अवगाहन पापोंके प्रायश्चित्त एवं पवित्रता-सम्वर्द्धनके लिये किया जाता है। पापोंका निवारण और पवित्रताका अर्जन होनेके बाद साधकमें गायत्री महाशक्तिका अवतरण ठीक उसी प्रकार होता है, जिस प्रकार कि भक्त रैदासकी कठौतीमें गंगा उमगी थीं। पवित्र और निष्कलुष अन्त:करणसम्पन्न व्यक्ति वैसी ही स्थितिमें पहुँच जाते हैं, जिसे योगसिद्धि अथवा ईश्वरप्राप्ति कहा जाता है। इस स्थितिमें पहुँचकर ऐसी स्थिति आ जाती है, जिसमें कि आत्माका परमात्माके साथ आदान-प्रदानका क्रम चल पड़ता है और इस क्रममें दिव्य उपलब्धियोंका लाभ मिलने लगता है।

संक्षेपमें मन्दाकिनीके ऋषि, देवता, बीजमन्त्र आदि इस प्रकार हैं—

'भ' वर्णस्य च देवी तु मता मन्दाकिनी वसुः।
देवता बीजं 'उं' चैव गौतमोऽसावृषिस्तथा॥
निर्मला यन्त्रमेवं च निर्मलाविरजे पुनः।
भूती सन्ति फलं चैव निर्माल्यं पापनाशनम्॥

अर्थात्—'भ' अक्षरकी देवी—'मन्दाकिनी', देवता—'वसु' बीज—'उं', ऋषि—'गौतम', यन्त्र—'निर्मलायन्त्र', विभूति—'निर्मला एवं विरजा' और प्रतिफल—'निर्मलता एवं पापनाश' हैं। [प्रेषिका—सुश्री सुधाजी टण्डन]

कवि पृथ्वीराज राठौड़विरचित 'भागीरथी रा दूहा'

(डॉ० श्रीकृष्णलालजी बिश्नोई)

गंगाके महत्त्वको समझनेकी आवश्यकता भारतीय जनताको नहीं है; क्योंकि हमारा रोम-रोम इससे परिचित है। गंगा हमारे देशकी अतिपवित्र सरिता है। सदियोंसे यह हमारी सभ्यता एवं संस्कृतिकी मूक साक्षी रही है।

वैसे तो ऋग्वेद, पुराणों और मनुस्मृतिमें, विभिन्न भाषाओंके साहित्यसे लेकर लोकगीतोंतकमें गंगाका उल्लेख हुआ है, परंतु जो उल्लेख बीकानेर (राजस्थान)-के कवि पृथ्वीराज राठौड़ (वि०सं० १६०६—१६५७)-ने राजस्थानी भाषामें सोरठा छन्दमें किया है, वह स्मरणीय एवं पठनीय है। श्रीपृथ्वीराजजी बीकानेरके राजा थे। इनके पिताजीका नाम कल्याणमलजी और माताका नाम जैतसी था। अकबरके प्रसिद्ध सेनापति महाराज रायसिंह इनके बड़े भाई थे। श्रीपृथ्वीराजजी उच्चकोटिके भक्त तो थे ही, साथ ही दर्शन, ज्योतिष, संगीत एवं छन्द:शास्त्रके प्रकाण्ड विद्वान् और महान् कवि थे। 'बेलि किसन रुक्मिनी री', 'दशरथ रावउत', 'भागीरथी रा दूहा' आदि इनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं। इन्होंने 'भागीरथी रा दूहा' गंगाजीकी स्तुतिमें लिखा है, जिसमें भागीरथीके ५८, जाह्नवी के २९ और मन्दाकिनीका एक सोरठा है। इस प्रकार कुल ८८ सोरठे हैं। इनमेंसे कुछ सोरठे पाठकोंके रसास्वादनहेतु भावार्थसहित यहाँ प्रस्तुत हैं—

हुवइ सु नामइ होई, ब्रह्म सरेसो वास तव।
तू नइ त्रीकम तोई, भेद नहीं भागीरथी॥

जो होता है, वह नामके प्रभावसे होता है। नाम ब्रह्मके समान होता है। तू ईश्वर नहीं है, फिर भी हे गंगा! तुझमें और ईश्वरमें कोई भेद नहीं है।

कीया पाप जिकेह, जनम जनम मइ जूजुवा।
तइ भांजिया तिकेह, भेण ही भागीरथी॥

जिन्होंने विभिन्न जन्मोंमें अलग-अलग पाप किये हैं। हे भागीरथी! वे सब तुम्हारे जलमें स्नान करनेसे एक साथ नष्ट हो जाते हैं।

कापालि कापालि, तीरथ सरगे ताहरइ।
पटंतरि पाताळि, तन भूतळि भागीरथी॥

शिवकी जटाओंसे निकलकर इस संसारमें बहते हुए तू पातालमें जाती है। हे भागीरथी! तुम्हारे जलमें स्नान करनेसे उसे स्वर्ग मिलता है।

सुरसरि, दीपें सात, नवे खंडे चहुंए निगम।
मानीजइ तउं मात, भवण त्रिहूँ भागीरथी॥

गंगाकी महिमा सप्तद्वीप, नवखण्ड और चारों वेदोंमें है। हे भागीरथी! तुझे तीनों भुवनोंमें माता ही माना गया है।

देवी तूं देवेह, जननी करि सारइ जगति।
मानी मानवियेह, भुवंगे हि भागीरथी॥

देवताओंने देवलोकमें तुझे देवी माना है और हे गंगा! पाताललोकमें नागोंने भी तुझे देवी ही माना है।

माई, पाय तणउ मुरारि, तणउ कंठ प्रिथमी तणउ।
तणउ सीस त्रिपुरारि, भूखण तउं भागीरथी॥

हे माता! तुम्हारा प्रथम आगमन तो विष्णुके चरणोंसे है। शिवके सिरसे होती हुई पृथ्वीके कण्ठोंमें बहती है। अर्थात् हे भागीरथी! तू विष्णु, शिव और पृथ्वीका आभूषण है।

परि केही परिवाह, सरिखां मत अम्ह सारिखा।
निज पथ रावत नाह, भागीरथी-भागीरथी॥

ऐसा कौन दातार है, जो भगीरथके समान हो, वह तो राजाओंका राजा महाराजा भगीरथ ही था। हे गंगा! उसके समान कोई दातार नहीं हुआ है।

सुरसरि वाँछउ स्त्रेव, भारइ तट कीयउ थकउ।
देवि न वांछउ देव, भूपति ही भागीरथी॥

हे गंगा! राजा भगीरथ यह कामना करता है कि वह तुम्हारे तटपर निवास करते हुए तुम्हारी सेवा करे। ऐसी कामना तो कोई देवी भी किसी देवकी सेवा करनेकी नहीं करती।

हींडोळी तउ हांस, छते विमाणे आव छव।
अव लहरी उजास, भळिस कदि भागीरथी॥

गलेके हारको हिलाते हुए विमानोंमें स्थित देवताकी जैसी शोभा होती है, ऐसे ही गंगाकी लहरोंका प्रकाश है। हे गंगा! ऐसा मैं कभी देखूँगा।

न्हाये गंग लवार, अणन्हाया फळ जो अम्हा।
सो खारी संसार, भीखारी, भागीरथी॥

अर्थात् गंगामें स्नान करनेसे दुःखोंका निवारण होता है। इसमें स्नान न करनेवाले लोग इस संसारमें बुरे बने रहते हैं। हे गंगा! ऐसे लोग हमेशा भिखारी ही रहते हैं।

भूखण चंद भुजंग, न्हाये तांइ पावइ निधू।
गऊ कितीकइ गंग, भंडारे भागीरथी॥

भूखा, अनुचर, राजा आदि जो भी गंगामें स्नान करेगा, उसे धन-सम्पत्ति मिलेगी। न जाने गंगाके पास कितनी गायें हैं। हे गंगा! तुम्हारे खजाने सदा भरे रहते हैं।

मंजण छेहै मात, सह सारीखा सुरसरी।
तजियै करमै तात, भला बुरा भागीरथी॥

अन्तिम समयमें जिस मनुष्यकी हड्डियाँ भी गंगामें प्रवाहित की जाती हैं। हे गंगा! इससे उसके सभी पापकर्म समाप्त हो जाते हैं।

गंगा निज जळ गात, धोयै आतम धोइयै।
महमा चीतइ मात, भामी हूँ भागीरथी॥

गंगामें स्नान करनेसे मनुष्यकी आत्मा उज्ज्वल बनती है। हे गंगा! तुम्हारी इस प्रकारकी महिमा मैं जानकर बलिहारी हूँ।

लाखां देवां लोय, मात न है भजतां मुगल।
हाडां पड़ियां होय, भीतर तोइ भागीरथी॥

लोग लाखों देवोंका स्मरण करे, किंतु गंगामाताके स्मरणके बिना उनकी मुक्ति नहीं होती है। हे भागीरथी! उनकी मुक्ति तुम्हारे जलमें स्नान करनेसे ही होगी।

सरसइ सिंध सपराइ, गोदावरि तू गोमती।
वीजी वीजी माइ, जणणी तू जाहरणवी॥

अर्थात् सरस्वती, सिन्धु, क्षिप्रा आदि अलग-अलग (नर्मदा, कावेरी) रूपोंमें गोदावरी, गोमती—इन सबकी जननी हे भागीरथी! तू ही है।

अवर कुवण आणीह, सरिता तोरी तूं सरिति।
पइ मिळि ले प्रामीह, जमना ही जाहरणवी॥

हे गंगा! तुमसे बढ़कर और कौन-सी नदी है। श्यामवर्ण जो तुममें मिलती है। हे भागीरथी! वह यमुना तू ही है।

मारग आपो माइ, सातइ हइ दीपां समद।
सकइ न तूं संमाई, जळनिधि हर जाहरणवी॥

हे माता! आपका रास्ता सात द्वीपोंसे होकर समुद्रतक है, फिर भी समुद्र तुझे अपनेमें समा नहीं सकता।

सिव करतां सेवाह, सब ही चौमासे सुबइ।
देवि मुगति देवाह, जागइ तू जाहरणवी॥

शिव भगवान्‌की सेवा करनेवाले सभी देव चातुर्मासमें सो जाते हैं। हे देवि! तुम तब भी मुक्ति देनेके लिये जाग्रत् रहती हो।

ताहरउ अदभुत ताप, मात, संसारे मानियउ।
पांणी मुंहडइ पाप, जाळइ तूं जाहरणवी॥

गंगाके अद्भुत तेजका लोहा संसार मानता है। प्रत्येक देवी-देवता अपने भक्तोंका उद्धार घोर तपस्याके

बाद परीक्षा लेकर करते हैं, पर गंगा मैया तो उसके पानीको मुँहमें डालनेवालोंके सारे पापोंका नाश कर देती है।

न्हाये पीयूं नीर, समरूं जपतां सुरसरी।
तपत वसूं तो तीर, जीवतां तो जाह्नवी॥

हे गंगामाता! मेरी (कवि पृथ्वीराजकी) यह इच्छा है कि स्नान करने बाद मैं गंगाजलका पान करूँ और सदा सुरसरिता गंगाका स्मरण करता रहूँ। तुम्हारे किनारेपर रहते हुए तपस्या करूँ और जितने दिनतक जीवित रहूँ, तुम्हारे दर्शन करता रहूँ।

पुळियै मम पुळियाह, दरस हुवां अदरस हुवा।
जळ मैठै जळियाह, मंदाक्रम मंदाकिनी॥

हे गंगा! तुम्हारे पास जानेसे पाप नष्ट हो गये। तुम्हारे दर्शन होनेसे वे पाप अदृश्य हो गये। तुम्हारे पवित्र जलमें स्नान करनेसे वे पाप सदाके लिये जल गये।

'गंगास्तुतिः'

(डॉ० श्रीगुणप्रकाश चैतन्यजी महाराज)

गोविन्दाङ्घ्रिभुवां विधेः करगतां शम्भोः सटाशोभितां
भक्तानां हृदि राजतां कलिमलप्रध्वंसिनीं शुद्धिदाम्।
भक्तिज्ञानविरागशान्तिसहितां सौभाग्यसिद्धिप्रदां
वन्दे तां भुवनेश्वरीं त्रिपथगां गङ्गां जगन्मातरम्॥

भगवान् विष्णुके चरणकमलोंसे प्रादुर्भूत, पितामह ब्रह्माके करस्थ कमण्डलुमें विराजित, सदाशिवके जटाजूटमें शोभित, भक्तजनोंके हृदयमें विराजमान, कलिके मलोंको नष्ट करके शुद्धि प्रदान करनेवाली, भक्ति-ज्ञान-वैराग्य एवं शान्तिसे युक्त सौभाग्यपरिपूरित सिद्धि प्रदान करनेवाली, सकल भुवनकी अधीश्वरी त्रिपथगा उन जगन्माता गंगाको मैं नमन करता हूँ।

भक्तानां भवभीतिभञ्जनपरां भव्यात्मभावप्रदां
भेदाभेदविवर्जितां भवकलां सौभाग्यसंवर्धिनीम्।
भूत्याभूषितभूतनाथशिरसि क्रीडारतां कामदां
वन्दे तां भुवनेश्वरीं त्रिपथगां गङ्गां जगन्मातरम्॥

भक्तोंकी सांसारिक भीतियोंका भंजन करनेमें निरत, भव्य आत्मभाव प्रदान करनेवाली, समस्त भेदों तथा अभेदोंसे परे, सदाशिवकी कला, सौभाग्यका सम्वर्धन करनेवाली, भस्मविभूषित भूतेश्वर सदाशिवके मस्तकपर खेलनेवाली, सभी कामनाओंको पूर्ण करनेवाली, सकल भुवनकी अधीश्वरी माँ गंगाको मैं नमन करता हूँ।

कारुण्यद्रववाहिनीं करुणया कालस्य कं मर्दिनीं
कुण्ठाग्रस्तजनान् विलोक्य सहसा वात्सल्यभावैर्भराम्।
कामक्रोधविलासितादिहरणे दिव्यौषधीं निर्मलां
वन्दे तां भुवनेश्वरीं त्रिपथगां गङ्गां जगन्मातरम्॥

करुणापरिपूरित हो करुणाधाराके रूपमें प्रवाहित होनेवाली, कालके मानका मर्दन करनेवाली, कुण्ठित जनोंको सहसा देखकर वात्सल्यसे भरी हुई, भक्तजनोंके काम, क्रोध, विलासिता आदि महारोगोंको नष्ट करनेके लिये निर्मल दिव्यौषधिरूपा माँ गंगाको मैं नमन करता हूँ।

दौर्भाग्यादिसमस्तदुःखदलनं यस्याः स्वभावः स्मृतो
दीनानां परिपालनं त्रिजगतां तत्सौख्यसम्पादनम्।
दोषादोषनिवारणैकतरणिं साद्गुण्यसंवर्धिकां
वन्दे तां भुवनेश्वरीं त्रिपथगां गङ्गां जगन्मातरम्॥

प्राणियोंके दौर्भाग्य आदि समस्त दुखोंका दलन करना जिनका स्वभाव कहा गया है तथा तीनों लोकोंके दीनजनोंका परिपालनकर उनके जीवनमें सौख्यका सम्पादन करनेवाली, दोषरूपी दुर्गम रात्रिके गहन अन्धकारको मिटानेके लिये जो सूर्यके समान हैं तथा समस्त सद्गुणोंका संवर्धन करनेवाली हैं, उन जगन्माता गंगाको मैं नमन करता हूँ।

साक्षात् साधुजनैः सुसेवितपदां सारप्रदां शाम्भवीं
सिद्धानामवदातसिद्धिमतुलां सम्पत्करां शाश्वतीम्।
शुद्धोदेन च शापशोधनपरां सत्याः सपत्नीं शिवां
वन्दे तां भुवनेश्वरीं त्रिपथगां गङ्गां जगन्मातरम्॥

साधुजनोंके द्वारा साक्षात् सेवित चरणकमलोंवाली, सारतत्त्व प्रदान करनेवाली, शंकरप्रिया, सिद्धोंतकको भी अतुलनीय सिद्धि प्रदान करनेवाली, शाश्वत सम्पत्ति प्रदान करनेवाली, अपने पावनतम निर्मल जलके द्वारा भक्तोंके शापका शोधन करनेवाली, भगवती सतीकी सपत्नी, अकारण कल्याणकारिणी माँ गंगाको मैं नमन करता हूँ।

[क] गंगाकृपाकी अनुभूतियाँ (घटनाएँ)*

गंगाजलका प्रभाव

यों तो आयुर्वेदमें गंगास्नान एवं उसके जलपानका विशेष महत्त्व बताया गया है; किंतु जिसकी चर्चा नहीं की गयी है, वह भी मेरे अपने जीवनमें प्रत्यक्ष हो गया है। बात यह है कि मेरे पेटमें अक्सर दर्द हो जाया करता था। उस समय 'सल्फा दवाइयों'का प्रचलन न हो सका था, जिसके कारण डॉक्टरोंकी शरणमें जाना आवश्यक हो जाता था और उसके लिये अनावश्यक व्यय करते-करते मैं तंग आ गया था। एक बार गाँवमें हैजेका प्रकोप हो उठा, इसलिये सभी कुओंमें 'ब्लीचिंग पाउडर' डाल दिया गया। फलस्वरूप कुएँका पानी पीना कठिन हो गया। बरसातका समय था, फिर भी मैंने गंगाजल (जो कि लाल रंगका हो जाता है) पीना शुरू कर दिया। स्वाद अच्छा लगनेके कारण मैं सालों वही पीता रहा और यह क्रम तबतक जारी रहा, जबतक मैं पटना न चला गया। वहाँ होस्टलमें रहकर पढ़ रहा था, अतः गंगाजल पीना कठिन था। बी०ए० (आनर्स) करनेके बाद एम०ए० की पढ़ाई समाप्त होनेपर आयी तो पेटमें पुनः दर्द आरंभ हो गया। अब मैं समझ गया कि इस छः सालमें दर्द न होनेका मुख्य कारण गंगाका पहलेका पिया हुआ पावन जल ही था, जिसका असर आजतक था। अतः मैंने फिर गंगाजल पीना शुरू कर दिया। माँ गंगाकी कृपासे फिर मेरे पेटमें दर्द नहीं हुआ।

यह मेरा वैयक्तिक प्रयोग था, किंतु मैंने इसे अपने गाँवके अन्य लोगोंको भी बताया और भगवती गंगाकी कृपासे उन्हें भी लाभ हुआ।

मेरा तो यह मानना है कि धर्मकी दृष्टिसे न भी हो तो स्वास्थ्यकी दृष्टिसे गंगाजलका सेवन बड़ा लाभप्रद है। इसे सभी जाति एवं सम्प्रदायके लोगोंको व्यवहारमें लाकर अवश्य लाभ उठाना चाहिये।

—रमेन्द्रप्रसादसिंह 'विद्यार्थी'

गंगामाईकी महिमा

बहुत पहलेकी बात है, मैं एक दिन बड़ा परेशान था। छोटे भाईकी बीमार स्त्री मृत्युसे लड़ रही थी। चार दिन बाद मेरी बहनकी शादी थी। रिश्तेदार आ गये थे। हम सबने मिलकर निश्चय किया कि सब रात्रि-जागरण करें और मिलकर परमपिता परमात्मासे प्रार्थना करें कि हमारी परेशानी दूर हो। जागरणके पश्चात् प्रातः आरती की गयी और मेरे मुँहसे स्वयं ही ये शब्द निकले कि 'यदि बहू भी बच जाय और शादी भी निर्विघ्न समाप्त हो जाय तो मैं सालभरतक प्रतिमास एक दिन गंगास्नान करूँगा।' इसी संकल्पके साथ बहूको अस्पतालमें भर्तीकर हम लोग शादीकी तैयारीमें लग गये। परमात्माकी ऐसी कृपा हुई कि बहू ठीक होने लगी और शादीके दिन उसकी इच्छा हुई कि कोठीपर ले चलो—मैं तो वरको देखूँगी। उसकी ऐसी इच्छा देख वरको अस्पताल भेजा गया। बहूने उसके पैर पूजे और माला पहनायी। आठ दिनके भीतर शादी भी निर्विघ्न हो गयी और बहू भी अच्छी होकर अस्पतालसे घर लौट आयी।

हमारा परिवार आर्यसमाजी है। उसी वातावरणमें रहनेके कारण मुझे गंगाजीमें कोई श्रद्धा नहीं थी, परंतु अचानक मुँहसे उस दिन जागरणके पश्चात् सालभर प्रतिमास एक दिन गंगास्नान करनेकी बात न जाने कैसे स्वयं ही निकल गयी थी, अतः उसी निश्चयके बन्धनमें फँसकर मैंने प्रतिमास एक दिन गंगास्नान करना शुरू कर दिया। गंगाजीके किनारे महात्माओंके दर्शन हुए। मुझे

---

* प्रस्तुत संकलनकी प्रारम्भिक कुछ घटनाएँ पहले कल्याणके साधारण अंकोंमें प्रकाशित हुई थीं, प्रासंगिक होनेके कारण उन्हें गंगा-अंकमें पुनः दिया जा रहा है, अतः उसी परिप्रेक्ष्यमें पढ़ना चाहिये।

गंगास्नान करनेमें बड़ा आनन्द आने लगा। प्रतिमास चारों ओरसे कुछ-न-कुछ शुभ समाचार आते रहे। तीन अमेरिकन साधुओंने और भारतवर्षके कई उच्चकोटिके महात्माओंने स्वयं कोठीपर पधारकर सेवकको अनुगृहीत किया। एक महात्मा 'ज्ञानेश्वरी' की पुस्तक मेरी मेजपर छोड़ गये। एक अमेरिकन महात्मा २१ दिन कोठीपर ठहरकर शिवलिंगकी मूर्ति मुझे दे गये। पूजाके कमरेमें एक महात्मा श्रीकृष्णका चित्र फ्रेम कराकर रख गये। इन सब बातोंसे और ज्ञानेश्वरीको पढ़ते-पढ़ते मैं एक मूर्तिपूजक बन गया। शंख, कीर्तनकी खड़तालें, इकतारा, झाँझ इत्यादि सभी चीजें मेरे पूजाके कमरेमें आ गयीं। पूजा करनेमें सेवकको बड़ा आनन्द आने लगा। प्रतिदिन गंगाजलका प्रात:काल आचमन करनेके पश्चात् ही खाने-पीनेका संकल्प कर लिया। गंगाजलकी एक छोटी शीशी मैं सदा अपनी जेबमें रखने लगा। इस प्रकार १२ मास गंगास्नान करनेमें मुझे इतना आनन्द आया कि मैंने निश्चय किया कि अब भविष्यमें प्रतिमासका गंगास्नान करना जीवनभर जारी रखूँगा। बहुत-से अद्भुत चमत्कार हुए, पर उनका यहाँ वर्णन करना ठीक नहीं जान पड़ता।

यों ही पाँच वर्ष गंगास्नान करते बीत गये। फिर मेरी बड़ी पुत्रवधू बहुत बीमार हुई। छ: महीने उसे अस्पतालमें रखना पड़ा। खर्च भी बहुत हुआ। एक दिन डाक्टरनियोंने जवाब दे दिया कि अब इसके बचनेकी आशा नहीं। सभी रो रहे थे। मैं एक कोनेमें एक छोटी-सी चारपाईपर बैठा था। एक हाथमें गंगाजलकी शीशी—दूसरे हाथमें गीताका सबसे छोटा गुटका और माला। शरीर काँप रहा था—आँखोंसे अश्रुधारा बह रही थी। मेरे मुँहसे निकला—'भगवन्! आपकी इच्छा—बहू आपने ही दी थी, आप ले जाना चाहते हैं तो ले जाइये—मेरे कोई पाप होंगे, जिनका दण्ड मुझे मिल रहा है। पर इस बार आप इसपर कृपा करके जीवनदान दें—तो मैं अब प्रतिमास दो दिन गंगास्नान किया करूँगा।' उधर डाक्टरनियाँ उपचार कर रही थीं। आधे घंटे बाद बड़ी डाक्टरनीने आकर कहा कि बहू अब बच गयी—यकीन मानो मरेगी नहीं, पर पूरी तरहसे ठीक होनेमें शायद कुछ महीने और लग जायँ। मुझे घरवालोंने चाय पिलायी, तब कहीं मैं होशमें आया। प्रभुका और गंगामाईका बहुत बड़ा धन्यवाद किया। बहूको घर लिवा लाये और उसकी दशा प्रतिदिन सुधरती गयी। मुझे छ: वर्षतक दमेकी बीमारी लग गयी। मैं सदा यह कहता रहता था कि जिस गलेमें प्रतिदिन गंगाजल जाता है, उस गलेमें दमेकी शिकायत नहीं रहेगी। किसी दिन गंगामाई कोई औषधि भेजेंगी और यह बीमारी चली जायगी। हुआ भी ऐसा ही—अनूपशहरके पास गंगास्नान करनेके एक दिन बाद किसीने मुझे धोखेसे ठंढाईकी जगह न जाने क्या खिला दिया। मैं १८ दिन सिरके दर्दमें पड़ा रहा, पर दमा ऐसे चला गया कि फिर कभी भी उसका दौरा नहीं पड़ा, मैंने इसे गंगाजीका प्रत्यक्ष प्रभाव ही माना।

श्रीराम कॉलेज ऑफ कॉमर्स, दिल्लीसे जब मैं सन् १९५४ ई० में रिटायर हुआ, तब मुझे युवराज श्रीकर्णसिंहजी सदरे रियासत जम्मू-कश्मीर अपने कॉमर्स कॉलेजका प्रिंसिपल बनाकर ले गये। कश्मीरसे प्रतिमास दो दिन गंगास्नान करने आना कठिन था। इसलिये पूज्य श्रीहरिबाबाजीके आज्ञानुसार मैंने प्रतिमास तीन दिनके हिसाबसे वर्षमें ३६ दिन गंगास्नान तीन महीनोंकी छुट्टियोंमें करनेका निश्चय किया और पाँच वर्ष ऐसा ही करता रहा और वहीं ३६ दिन गंगाके किनारे रहकर आनन्द लेता रहा। कश्मीरसे रिटायर होनेपर मेरी आयु ६५ वर्षकी हो गयी। तब फिर श्रीहरिबाबाजीके आज्ञानुसार यह नियम लिया कि प्रतिवर्ष १ दिन और अधिक गंगास्नानको बढ़ाता रहूँगा और गंगामाई सब निभा भी देंगी।

परिवारमें जब कोई बाहर जाता है, गंगाजलकी शीशी अपने साथ रखता है। मेरा छोटा भाई डॉ० आनन्दस्वरूप शर्मा बुलन्दशहरमें है—उसके लड़कियाँ

थीं—लड़का नहीं था। आर्यसमाजके मन्त्री होनेके नाते उसे गंगाजीमें श्रद्धा नहीं थी, पर मेरे कहनेपर एक वर्षतक प्रतिमास गंगास्नान करनेपर गंगामाईकी कृपासे उसे पुत्ररत्न प्राप्त हुआ। इसी प्रकार मेरे एक करीबी रिश्तेदार—पं० परमानन्द बेकल एक मुकदमेमें फँस गये—जीतनेकी कोई आशा नहीं थी। वे ज्योतिषी थे। मैंने उनसे कहा कि जबतक मुकदमा चले, प्रतिमास गंगास्नान करते रहो तो मेरा पूर्ण विश्वास है कि तुम्हारी जीत होगी। तीन वर्ष मुकदमा चला और अंतमें उनकी ही जीत हुई। वे जबतक जीवित रहे, प्रतिमास गंगास्नान करते रहे।

मुझे जब कोई परेशानी हुई या नौकरीके सम्बन्धमें तरक्की इत्यादि और दूसरी इच्छाएँ हुईं, तब मैं लिखकर अपनी अर्जीकी नकल गंगाजीमें डाल देता था। सच बात तो यह है कि जो कुछ भी मैंने गंगामाईसे माँगा, वह मुझे तुरंत ही मिला। प्रभुसे प्रार्थना है कि गंगामाई इसी प्रकार हमारे देशपर अमृतकी वर्षा करके सबको सुखी करती रहें। भगवान् श्रीकृष्णने गीतामें कहा है—

यो यो यां यां तनुं भक्तः श्रद्धयार्चितुमिच्छति।
तस्य तस्याचलां श्रद्धां तामेव विदधाम्यहम्॥
येऽप्यन्यदेवता भक्ता यजन्ते श्रद्धयान्विताः।
तेऽपि मामेव कौन्तेय यजन्त्यविधिपूर्वकम्॥

(७।२१, ९।२३)

श्रीगंगामाता! सबका उद्धार कर दे—दुखिया संसारको तू सुखिया संसार बना दे।—मदनलाल शाण्डिल्य

गंगामैयाका आशीर्वाद

घटना सन् १९८५ ई०की है। हमारे ग्राममें श्रीरामचरितमानसके १०८ सम्पुटित पाठ करनेका आयोजन हुआ। पाठ पूर्ण होनेके पश्चात् सवा लाख गायत्री तथा श्रीमद्भगवद्गीताके १०८ पाठ भी ब्राह्मणबन्धुओंके सहयोगसे सम्पन्न हुए। उसके पश्चात् हवनयज्ञका कार्य भी विधिवत् सम्पन्न हुआ। यज्ञान्त-स्नानके लिये हरिद्वार, ऋषिकेशयात्राकी तैयारी की गयी। निजी बसकी व्यवस्था करके हम सभी श्रद्धालु भक्त बसपर बैठकर चल दिये। ऋषिकेश पहुँचकर सभीने यज्ञविभूति गंगामैयामें विसर्जित की और स्नानोपरान्त गंगामैयाकी पूजा-स्तुति करके अन्य देवस्थानोंके दर्शन किये। हरिद्वारमें आकर सभीने गंगा-स्नानकर मनसादेवी, चण्डीदेवी, अंजनीमातामन्दिर, हनुमानमन्दिर, कनखल आदि स्थानोंके दर्शन किये और रात्रिमें धर्मशालामें हम सभी ठहरे। कुछ लोग समीपकी दूसरी धर्मशालामें ठहरे। रात्रिमें जागने तथा दिनमें घूमनेके बाद सायंकाल सभी लोग शयन करनेके लिये अपने-अपने आसनोंपर पहुँच गये और सो गये तथा मैं भी प्रगाढ़ निद्रामें सो गया। धर्मशालाके पीछे गंगाजी बह रहीं थीं। मैंने एक सफेद पिपियामें गंगाजल रख लिया था कि प्यास लगनेपर पी लेंगे। ठीक वैसी ही एक पिपियामें मिट्टीका तेल ले गया था कि स्टोव जलाकर कुछ चाय आदि बनानेमें सुविधा रहेगी। दोनों पिपिया अलमारीमें पास-पास रखी थीं। पूरी-पकवानका भोजन और पूर्वरात्रिमें जागनेसे नींद जोरोंकी लग रही थी और प्यासका भी जोर था। प्रातःकाल चार बजे नेत्र बन्द किये हुए, एक तरफ नींद, एक तरफ प्यास; झटसे पिपिया उठाई ढक्कन खोलकर अंजलि लगाकर जल पीने लगा। मनमें यह भाव आया कि गंगाजल तो शीतल और सुस्वादु होना चाहिये, यह गर्म और तीक्ष्ण क्यों है? इतना ही सोच पाया था कि मिट्टीका तेल पेटमें पहुँच गया। जब श्वास ली तो मिट्टीके तेलकी गन्धसे समझ गया कि मैंने गंगाजलकी बजाय मिट्टीका तेल पी लिया है। मैं घबराकर चीख पड़ा। सभी लोग जाग पड़े। मैंने गंगाजलके धोखेमें मिट्टीका तेल पीनेकी बात बतायी। सभी लोग घबरा गये। साथमें हमारे ही गाँवके एक डॉक्टर थे। उन्होंने दवा आदिकी व्यवस्था की और कहा—दादा! आप चिन्ता न करें, लेकिन मैंने गंगामैयाकी शरण ली और सबको समझा-बुझाकर आश्वासन दिया और कहा कि गंगामैयाका आशीर्वाद है। उन्होंने ही परीक्षा ली है। मैंने तो तेल नहीं पिया, मैंने तो गंगाजल जानकर ही पिया है। कोई अनिष्ट

नहीं होगा। आपलोग व्यथित न हों, पेटमें एक प्रकारकी गैस बनती थी। उबकाई आनेपर भी उलटी नहीं होती थी। बस, मैंने गंगामैयाके प्रभावको ध्यानमें रखते हुए दिनभर दस-दस मिनटके बाद गंगाजल पिया और शामतक सभी विकार दूर हो गये, मैं पूर्ण स्वस्थ और आनन्दित हो गया और सभी बन्धुवर प्रसन्न होकर गंगामैयाकी जय-जयकार करने लगे। उसके पश्चात् हमलोग गंगामैयाको नमन करके अपने स्थानके लिये चल पड़े, आनन्दपूर्वक यात्रा पूर्ण हुई। आज भी मैं गंगाजलका अमृतकी भाँति सेवन करता हूँ। परम पवित्र गंगाजल सभीके पाप-ताप और रोगोंका शमन करनेवाला है।

—चन्द्रभाल

गंगामैयाकी कृपा

सन् १९५४ ई० की बात है, मेरी शादी हुए तीन साल बीत गये थे। उन दिनों बाल-विवाहकी प्रथा बहुत प्रचलित थी और द्विरागमन लगभग चार-पाँच सालोंके बाद हुआ करता था। मेरी पत्नी मनोरमा उस समय मुश्किलसे तेरह-चौदह सालकी रही होगी। नारायणपुर स्टेशनके चौहद्दी-शाहपुर दियारामें गंगाके किनारे घर होनेके कारण घरका अधिकांश काम गंगाके जलसे ही किया जाता था। स्नान तो प्रायः लोग यहाँ गंगामें ही करते थे।

इसी क्रममें एक दिन नहानेके लिये मेरी पत्नी गंगा-किनारे गयी। उसकी बड़ी माँ एवं गाँव-समाजमें भौजाईके रिश्तेकी सुदामा नामक एक औरत स्नान करने गंगाकिनारे पहलेसे ही गयी हुई थीं। उन दोनोंको स्नान करते देख मेरी पत्नी भी पानीमें घुसकर दोनोंके समीप जाकर दोनोंका कन्धा दोनों हाथोंसे जोरसे पकड़कर लटक गयी और कहने लगी—मुझे तैरना सिखा दो। अचानक इस तरह लटक जानेके लिये वे दोनों तैयार नहीं थीं, इसलिये मनोरमाके वजनने उन दोनोंका सन्तुलन गड़बड़ा दिया और तीनों जमीनके ऊबड़-खाबड़ रहनेके कारण असन्तुलित होकर अधिक पानीमें चली गयीं और तीनों ही पानीके प्रवाहमें बह गयीं। तीनों इस तरह डूबीं कि किनारेपर स्नान कर रहे लोगोंको कुछ पता नहीं चला कि तीनों किधर चली गयीं। लोग डुबकी लगाकर खोजने लगे, परंतु तीनोंमेंसे कोई नहीं मिला। यह घटना दिनके करीब बारह बजे घटी। किनारेपर ही गाँव रहनेके कारण पूरे गाँवमें यह खबर फैल गयी। लोगोंने बहुत दूरतक गंगाके प्रवाहके साथ चलकर देखा कि कहीं पानी पीकर लाश पानीकी सतहपर आ जायगी, परंतु सब व्यर्थ हुआ। लोगोंने समझ लिया कि गंगाके तेज प्रवाहने तीनोंको सदाके लिये अपने अंकमें समा लिया।

इधर तीनों पानीके भीतर-ही-भीतर गंगाके प्रवाहके साथ एक-दूसरेको पकड़े हुए करीब चार-पाँच मील दूर सोनबरसा घाटके समीप बीच नदीमें बालूके एक टीकर (छाड़न)-पर लगीं। तीनों पानीसे ऊपर हुईं। किनारेके लोगोंने समझा कि कोई डूबा हुआ आदमी वहाँ आकर लगा है और जीवित हो गया है। नाव लेकर कई लोग उस टीकरपर आये और उन तीनोंसे वहाँ पानीसे निकलनेका कारण पूछा। तीनोंने सही-सही सारी बातें नाविकको बताते हुए अपना परिचय भी दिया। तब उस नाविकने तीनोंको नावपर बैठा लिया और वह दो-तीन आदमियोंको साथमें लेकर नावसे ही तीनोंको शाहपुर-चौहद्दी दियारा पहुँचानेके लिये चला। उधर चौहद्दीके कुछ लोग भी किनारे-किनारे लाशकी खोजमें आ रहे थे। बीच रास्तेमें ही दोनों पक्षोंकी मुलाकात हो गयी। तब चौहद्दी-निवासी, जो उन स्त्रियोंको खोजने जा रहे थे, वे उन तीनोंको साथ लेकर पैदल ही गाँव पहुँचे।

आश्चर्यकी बात तो यह थी कि पानीके भीतर-ही-भीतर तीनों उतनी दूर बहकर चली गयीं, पर सिवा एकके किसीने एक बूँद भी पानी नहीं पीया था। मेरी पत्नीकी बड़ी माँको कुछ घूँट पानी पीनेका मौका लगा था, परंतु पत्नी एवं सुदामाके मुँहमें एक घूँट भी पानी नहीं गया था। तीनों पूर्णरूपसे स्वस्थ थीं।

इस तरहकी घटना अप्रत्याशित ही थी कि इतनी लम्बी अवधितक पानीमें डूबे रहनेके बाद पानीका एक घूँट भी नहीं पिया जाना सिवा गंगामैयाकी कृपाके और क्या हो सकता है! यहाँ यह भी जानकारी अत्यावश्यक समझता हूँ कि मेरी पत्नी सिर्फ दो भाई-बहन थीं। भाई उम्रमें काफी बड़े थे। उनकी माँने गाँवकी ही एक वृद्धा ब्राह्मणीकी सलाहपर गंगामैयासे एक बेटीकी याचना की थी और उन्हींके प्रसादस्वरूप मेरी पत्नी मनोरमाका जन्म हुआ था। गाँवमें जब तीनोंके गंगामें डूबनेका समाचार पहुँचा तो मनोरमाकी माँ रोती हुई किनारे पहुँची और रो-रोकर गंगामैयासे अनुनय-विनय करने लगी कि मैया! मेरी बेटी तुम्हारा ही प्रसादरूप है, उसे फिरसे लौटा दो। रो-रोकर वह यही गुहार कर रही थी। वह वृद्धा ब्राह्मणी भी ढाँढ़स बँधा रही थी कि मनोरमाको कुछ नहीं होगा। जिसने दिया है वह कैसे उसका हरण करेगी। वह जरूर ही कुछ देरमें कहीं-न-कहींसे आ जायगी, परंतु माँको इससे सन्तोष कहाँ होने वाला था। वह तो रो-रोकर आकाश सिरपर उठाये हुई थी। अन्ततोगत्वा उनके करुण-क्रन्दनको सुनकर निश्चय ही गंगामैया द्रवित हो गयीं और चार मीलतक पानीमें डूबकर बहनेके बाद एक बूँद भी पानी मनोरमाके कण्ठके नीचे नहीं गया और वह सकुशल सोनबरसा घाटके समीप चार बजे शामको बालूके एक टीकरपर आ लगी। वह मनोरमा आज पूर्ण स्वस्थ है और लोगोंके बीच गंगामैयाद्वारा दी गयी जिन्दगीकी कहानी सुनाया करती है। धन्य है गंगामैया तेरी महिमा!

—रामकुमार मण्डल

गंगामैयाकी अहैतुकी कृपा

मेरी शादी कालाकाँकर राजपरिवारमें हुई है। कालाकाँकर जनपद प्रतापगढ़का एक छोटा-सा गाँव है, जो पवित्र गंगातटपर बसा हुआ है। घटना मेरी शादीके बीस वर्ष बाद सन् १९८४ ई० की है। लेकिन उसने मेरे मनमें इतना प्रभाव डाला कि वह मुझे अब भी याद है। गर्मीके दिन थे और अमावस्याकी रात। उसी रात ८ बजे मेरी जेठानीने एकाएक गंगास्नान करनेका कार्यक्रम बनाया। कार्यक्रमके अनुसार हमलोग (मेरी जेठानी, मेरी ननद, मैं, मेरे बच्चे तथा दो नौकरानियाँ) उत्साहपूर्वक गंगा नहानेके लिये चल पड़े।

जब हमलोग गंगास्नान कर रहे थे, तभी मेरी छोटी बिटिया रंजूने मुझसे तैरना सिखानेका आग्रह किया। मैं थोड़ी देर उसे तैरना सिखलाती रही। फिर नहाकर जैसे ही हमलोग जलसे बाहर निकले, मेरी जेठानीने मुझसे पूछा कि आपके दाहिने कानका बाला कहाँ है? यह सुनकर जब मैंने अपना दाहिना कान टटोला तो देखा कि बाला वास्तवमें गायब था। मेरे तो होश ही उड़ गये। वह नहाते समय जलमें कहीं गिर गया था। मैंने गंगामैयासे प्रार्थना की और फिर तुरन्त अपनी ननद, छोटी बिटिया रंजू तथा दोनों नौकरानियोंके साथ गंगाजलमें उतरकर बाला ढूँढ़ने लगी।

मैं तो पूर्णरूपेण निराश थी। केवल तारोंकी हलकी रोशनी और अथाह गंगाजलमें तो अब वह छोटा-सा बाला मिलनेसे रहा। तभी मेरी एक नौकरानी जोरसे चिल्लायी 'मेरे हाथमें कुछ आया है, जिसे मैंने अपनी हथेलीमें बन्द कर रखा है।' यह सुनते ही मेरी जेठानीने, जो गंगातटपर अभी बाहर ही खड़ी थीं, उस नौकरानीसे शीघ्र जलसे बाहर आनेको कहा। मैं भी जब उस नौकरानीके पीछे-पीछे बाहर आयी तो क्या देखती हूँ कि नौकरानीकी हथेलीमें मेरा वही बाला मौजूद है, जो छोटी बिटिया रंजूको तैरना सिखलाते समय जलमें कहीं गिर गया था।

गंगामैयाका यह चमत्कार देखकर मैं ही क्या, वहाँ उपस्थित सभी लोग आश्चर्यचकित हो गये। मुझे तो ऐसा लगा जैसे गंगामैयाने स्वयं अपने ही हाथों मेरे बालेको मेरी नौकरानीकी हथेलीपर लाकर रख दिया हो।

कुछ क्षण तो मैं विस्फारित नेत्रोंसे उस बालेको निहारती ही रही और फिर गंगामैयाके प्रति श्रद्धावनत

हो उन्हें बारम्बार प्रणाम किया। धन्य है गंगामैयाकी महिमा और धन्य है उनका चमत्कार! गंगामैयाकी इस अहैतुकी कृपाकी एक अमिट छाप आज भी मेरे मन-मस्तिष्कमें अंकित है और भविष्यमें भी सदा अंकित रहेगी।

यह तो हुई गंगामैयाकी कृपासे सम्बन्धित एक साधारण घटना। मातु गंगा तो कलिमलहारिणी और भुक्तिमुक्तिप्रदायिनी हैं—

नमामि गङ्गे तव पादपङ्कजं सुरासुरैर्वन्दितदिव्यरूपम्।
भुक्तिं च मुक्तिं च ददासि नित्यं भावानुसारेण सदा नराणाम्॥

प्रेषिका—कुँवरानी वेदना सिंह

गंगाजलसे मिला जीवनदान

बात १३ जनवरी, सन् २००३ ई० दोपहर २ बजे की है। मैं अपनी छतपर धूपमें बैठा था, वहाँ बहुत सारी गिलहरियाँ खेल रही थीं। मेरे पासमें मेरी माताजी और दो भतीजियाँ भी बैठी गिलहरीको मूँगफली खिला रही थीं। मेरा एक बेटा जो मन्दबुद्धि है, वह भी पासमें बैठा था। उसने अचानक ही अपने पैरसे जूता निकालकर गिलहरीको मार दिया, जो गिलहरीको लग गया और वह छटपटाती हुई लेट गयी, ऐसा लगता था कि लगभग उसके प्राण निकल चुके हैं। यह सब कुछ देख मनमें बहुत दुःख हुआ, दया भी बहुत आयी, पर कोई चारा नहीं था। इतनेमें मेरी पत्नी भी छतपर आ गयी। यह सब देखकर उन्हें भी बहुत दुःख हुआ और पानी लेने नीचे चली गयीं। इतनेमें मेरी माताजीने कहा—पानी नहीं, गंगाजल लाओ। अन्त समयमें गंगाजलके सेवनकी बड़ी महिमा है। गंगाजल लाया गया और मैंने मन-ही-मन गंगामैयासे करुणार्द्र हृदयसे प्रार्थना की कि मैया! मेरे इस मन्दबुद्धि बालकसे यह अज्ञानमें अपराध हो गया है, इसे क्षमा करते हुए आप इस गिलहरीको जीवनदान दें। माँ! इसकी मृत्युमें हम सभी निमित्त बन रहे हैं, इस पापसे हमको बचायें तथा इस बेचारी निर्दोष गिलहरीको जीवित कर दें। ऐसा कहते हुए मैंने गंगाजल उस मृतप्राय गिलहरीपर छिड़का और साँस रोके उस गिलहरीपर दृष्टि टिकाये रहा, सचमुच कुछ क्षणोंके पश्चात् गिलहरीमें स्पन्दन-सा हुआ और वह थोड़ा हिलने-डुलने लगी और फिर थोड़ी देर बाद सीधी बैठ गयी। हम सबके तो आश्चर्य एवं हर्षका ठिकाना न रहा। पुनः मैंने गंगाजल गिलहरीपर डाला तो अचानक ही हमलोगोंने देखा कि उस गिलहरीमें प्राण जैसे वापस लौट आये और वह पुनः अपने साथकी गिलहरियोंके साथ खेलने लगी और भाग गयी।

ऐसा सब देख मेरे मुँहसे निकला धन्य हैं गंगा माँ आप और धन्य है आपकी महिमा! आज आपके जीवनदानको हमने प्रत्यक्ष देखा। हमारा मन बहुत प्रसन्न हुआ और श्रद्धासे माँ गंगाके चरणोंमें नतमस्तक हो गया।—राजेन्द्र अरोरा

गंगा माँकी अद्भुत कृपा

२७ अप्रैल, सन् २००२ ई० को मैं सपरिवार ऋषिकेश गयी थी, प्रतिवर्ष मेरी सासूजी और उनके मायके तथा ससुरालका परिवार भी वहाँ आता है और सत्संग एवं गंगास्नानका आनन्द लेता है। माँ गंगामें ऐसी चुम्बकीय शक्ति है कि वे मुझे आकर्षित करती रहती हैं और गीताभवनके घाटपर नहानेमात्रसे ही उनके प्रति असीम श्रद्धा उमड़ पड़ती है।

इस वर्ष इन्दौरमें पानीकी अत्यधिक कमी रही और इसी वजहसे हमारे घरका दस वर्ष पुराना बोरिंग बिलकुल सूख गया था। हमने ३८७ फीट गहरा नया बोरिंग करवाया, किंतु उसमें भी दिनभरमें सिर्फ दो ड्रम पानी ही आता था।

मैंने ऋषिकेशमें गंगा माँकी भक्तिभावसे आराधना की और प्रार्थना की—'माँ! मेरे घर आ जाओ और सभीको तृप्त करो।' हमारे घरके बाहर गायोंको पीनेके पानीके लिये सीमेण्टकी हौद भी रखी हुई है और प्याऊ भी लगा रखा था, किंतु जब हमको ही पानीकी समस्या थी तो स्वभावतः उसमें पानी भरना भी बंद हो गया था।

प्यास बुझाये बगैर केवल हौदमें झाँककर निराश लौटते जानवरों और नल खोलनेपर पानी नहीं आनेके बाद प्याऊसे निराश होकर लौटते लोगोंको देखकर हमलोगोंका हृदय द्रवित हो जाता था, पर हमलोग मजबूर थे, क्या करते?

२ मई सन् २००२ ई० को गंगा माँकी प्रेरणासे मैंने मनमें संकल्प किया कि गंगाजल भरकर घट (मिट्टीके मटके) दान करूँ। इस हेतु खाली मटके मँगवाकर शामको घाटके किनारे मन्दिरमें रख दिये और सोचा कि सुबह पूजा वगैरह करवाकर यह कार्य कर लूँगी। इसी बीच मैंने शामको अपने घर-परिवारके अन्य सदस्योंको टेलीफोन लगाया तो ज्ञात हुआ कि आज नये बोरिंगमें इतना ज्यादा पानी आया कि छतके ऊपरकी टंकी पूरी भर गयी (लगभग ३००० लीटरकी) और बगीचेमें भी खूब सिंचाई हुई। पानी लगातार आ रहा है।

भगवती गंगाकी असीम अनुकम्पा जानकर मेरा हृदय गद्गद हो गया। जब हमारे सत्-संकल्पमात्रसे माँ इतनी अनुकम्पा कर देती हैं तो कदाचित् हम सत्कार्यमें प्रवृत्त हो जायँ, संलग्न हो जायँ तो फिर माँकी विशेष कृपा होनेमें क्या सन्देह?—मधुबाला मोहता

गंगाजलकी महिमा

अप्रैल सन् १९९६ ई० की बात है। एक दिन जब मैं प्रात:काल गोमाताकी सेवामें चारे-पानीका प्रबन्ध कर रहा था, उसी समय एक लड़केने दूरसे ही मुझे पुकारा। पहले तो मैंने उसकी ओर ध्यान ही नहीं दिया, इसलिये कि गोमाताकी सेवा छोड़कर कौन इधर-उधरकी बातें करे। लेकिन जब उसने पुनः पुकारा तो मैंने पूछा कि क्या बात है? तब उसने कहा कि चिड़ियाका एक बच्चा बेहोश पड़ा है। मैंने तुरंत झटपट हाथ धोया और उसके पीछे चल पड़ा। निकट आनेपर देखा कि एक छोटा-सा चिड़ियाका बच्चा पीठके बल लेटा है। उसके दोनों पैर ऊपर थे। ध्यानसे देखनेपर मालूम हुआ कि वह हिल-डुल रहा है, पर उसका पूरा शरीर थर-थर काँप रहा था। उस लड़केसे तथा अन्य लोगोंसे ही यह पता चला कि यह पक्षी ऊपरसे एकाएक गिरा और बेहोश हो गया। असहाय प्राणियोंकी सेवामें मुझे बहुत आनन्द मिलता है। मैं झट उसे उठाकर घर ले आया। कभी मैंने गंगाजलके माध्यमसे पक्षियोंको स्वस्थ करनेकी बात 'कल्याण'में पढ़ी थी। मैंने भी गंगाजलसे ही प्राथमिक उपचार शुरू किया और एक चम्मच गंगाजल लेकर उसे पिलाने लगा। यद्यपि उस चिड़ियाका मुख छोटा था, जिससे पहले पिलानेमें कठिनाईका सामना करना पड़ा तथापि बहुत यत्न करनेपर कुछ बूँदें उसके मुखमें पड़ीं, मुखमें गंगाजल पड़ते ही बिजलीकी भाँति उसका प्रभाव हुआ, धीरे-धीरे उसके शरीरका काँपना बन्द होने लगा, जो आँखें बन्द थीं, उन्हें वह धीरे-धीरे झपकाने लगा। कुछ ही मिनटमें पूरी आँखें खोल दीं तथा इधर-उधर देखने लगा। इतनेमें सीधे पैर खड़ा भी हो गया। शरीरकी स्थिति सामान्य होने लगी। गंगाजल पिलाते समय कुछ नीचे गिर जानेके कारण मैं पुनः जल लाने गया, जल लेकर अभी आ ही रहा था कि लड़केने ऊपर इशारा किया। मेरी आँखें आश्चर्यसे फैल गयीं, प्रसन्नतासे मैं खिल उठा। मैंने पूछा—यह कैसे हुआ? तब उस लड़केने बताया कि गंगाजल पिलानेके बाद जब आप पुनः गंगाजल लाने गये, उसी समय यह उड़कर ऊपर चला गया। मैंने देखा कि वह प्रसन्नतापूर्वक शीघ्रतासे आकाशमें उड़ रहा है, यह सब गंगाजलका ही प्रभाव है, जिससे वह पक्षी शीघ्र स्वस्थ हो गया।

—जीवेशकुमार 'जीवन-ज्योति'

गंगामाताकी कृपा

यह घटना सन् १९६६ ई० की है। मैं अपनी धर्मपत्नीके साथ महाकुम्भके अवसरपर प्रयाग गया था। अजमेरके कुछ साथियोंके साथ मैं झूँसीमें एक तम्बूमें ठहरा था। दो दिनके बाद मेरी धर्मपत्नी लगभग आधीरातको दो बजे प्रात:कालका समय जानकर स्नानके लिये अकेले ही निकल पड़ी और रास्ता भूलकर ऐसे

स्थानपर स्नानके लिये पहुँची, जहाँ अथाह जल था। उस स्थानपर उसे पहलेसे ही उपस्थित दो स्त्रियाँ दिखायी दीं। उन्हें देखकर ही उसने उस स्थानपर स्नान करनेका विचार किया। रातके धुँधलेपनमें मेरी पत्नीने देखा कि उनमें एक स्त्रीके सफेद वस्त्र थे और दूसरीके नीले। उस स्थानपर पानीमें एक मजबूत रस्सा लटक रहा था, जिसे पकड़कर मेरी पत्नीने अपना एक पैर पानीपर रखा, पर उसे जमीन नहीं मिली। जमीन मिल जानेकी आशासे उसने अपना दूसरा पैर भी पानीमें डाल दिया, फिर भी जमीन नहीं मिली। फलतः घबड़ाकर वह रस्सेको दोनों हाथोंसे पकड़कर पानीपर चित लेट गयी और गंगा मातासे प्रार्थना करने लगी। उन दोनों स्त्रियोंने जिसे मेरी धर्मपत्नीने गंगा और यमुना माना था, उसी समय हाथके तनिक इशारेसे पानीसे बाहर निकाल लिया। मेरी पत्नीने उन्हें प्रणाम किया और वे बिना कुछ बोले अदृश्य हो गयीं। आधी रातके समय उन दो स्त्रियोंका उस एकान्त स्थानपर मिलना और जीवन-रक्षा करना तथा फिर एकाएक अदृश्य हो जाना—यह एक आश्चर्यजनक बात ही थी। सचमुच उन गंगा-यमुना-रूप दो देवियोंने ही कृपाकर मेरी पत्नीको प्राणदान दिया था। वापस आकर जब मेरी स्त्रीने वह घटना सुनायी तो सभी लोगोंका माथा गंगामाताका नाम लेकर श्रद्धासे झुक गया।

ऐसी ही एक घटना और है। मैं स्वयं भी तीव्र गठिया रोगसे पीड़ित था और मेरी चिकित्सा कर रहे चिकित्सकोंने मुझे कुम्भ-स्नानके लिये जानेसे मना किया और बताया कि सर्दीका मौसम, ठण्डी हवा और ठण्डा जल—ये सब बीमारीको बढ़ानेवाले हैं। लेकिन मैंने उनसे कहा कि गंगा पापनाशिनी हैं, सभी रोग-शोकोंको दूरकर सुख-सम्पत्ति प्रदान करनेवाली हैं। इसपर एक चिकित्सक बोले—इस भौतिक युगमें आप कैसी बातें करते हैं? इन बातोंपर कौन विश्वास करेगा? दूसरे चिकित्सकने कहा कि 'आपको गंगापर इतना विश्वास है तो चले जाइये।' खैर, फिर मैं कुछ बोला नहीं और दैनिक प्रयोगमें ली जा रही दवाओंको साथ लेकर प्रयाग-कुम्भमें जा पहुँचा। किसी अज्ञात प्रेरणावश मैंने दवाओंका बिलकुल प्रयोग नहीं किया। मेरे अन्तरमें श्रद्धाका संबल प्रबल वेगसे हिलोरें ले रहा था। मैं गंगाके शीतल, निर्मल जलमें स्नानके अतिरिक्त वहाँके मैदानकी मुलायम तर मिट्टीपर भी नंगे पैर चलता था। अजमेरमें जबकि मुझे एक फर्लांग भी चलनेके बाद विश्रामके लिये बैठना पड़ता था, किंतु प्रयागमें मैं नंगे पाँव एक मीलसे भी अधिक आरामसे चल लेता था। मुझे ऐसा लगने लगा कि गंगामाताकी कृपासे मेरा रोग भी दूर हो रहा है। यह निःसन्देह आश्चर्यजनक ही था। कुम्भसे वापस लौटनेपर मैंने यह घटना एक परिचित सन्तको सुनायी तो उन्होंने कहा कि 'जब आपने गंगामातापर इतना विश्वास रखा तो उन्हें भी तो अपना विरद रखना था।'—बृषभान ओझा

गंगाजलसे रोगनाशकी आश्चर्यजनक घटना

एक कल्याणकारी घटनाकी ओर मैं 'कल्याण'के पाठकोंका ध्यान आकर्षित करना चाहती हूँ—

मेरी आँखोंके नीचे काले मूँगके समान एक बड़ा तथा छोटे-छोटे कई निशान हो गये थे। इनके उपचार-हेतु मैंने स्थानीय एस०एम०एस० के डॉक्टरोंसे परामर्श किया तथा करीब तीन महीनेतक उनकी दवाइयाँ भी लीं। अन्तमें डॉक्टरोंकी राय यह बनी कि इन निशानोंको ऑपरेशनके द्वारा ही हटाया जा सकेगा। चूँकि मेरी उम्र करीब ६२ वर्ष थी, अतः मैंने आँखके नीचेके ऑपरेशनको ठीक नहीं समझा। एक दिन मुझे खयाल आया कि 'क्यों न इन निशानोंपर गंगाजलका प्रयोग किया जाय।' करीब एक महीनेतक दिनमें दो-तीन बार मैं बराबर गंगाजलका प्रयोग करने लगी। भगवान्‌की कृपासे अब मेरे वे समस्त काले निशान समाप्त हो गये हैं। गंगाजलकी इस करामातसे मैं अत्यधिक प्रभावित हुई हूँ।

इसीलिये इस सच्ची घटनाको लिखकर भेजा है, जिससे देशके लाखों गरीब भाई-बहन गंगाजलकी इस उपयोगिताको समझकर लाभ उठा सकें।

—कलावती देवी ऐरन

गंगाजलका अनोखा प्रभाव

घटना शिवाला रोड, लुधियानाकी है। हमारे घरके ऊपर बहुत बड़ी छत है। हम वहाँ पक्षियोंके खानेके लिये बाजरा और मकई आदि अनाजके दाने डालते रहते हैं, जिस कारण बहुत-से पक्षी नियमित रूपसे वहाँ मँडराते रहते हैं और दाना भी चुगते रहते हैं। आजसे लगभग दो महीने पहलेकी बात है। मैं फैक्ट्री जा रहा था। जाते-जाते मैंने एक नजर छतकी ओर डाली तो देखा कि एक पक्षी कुछ अजीब ढंगसे उड़ रहा है। उस समय तो मैं उसे देखकर छतसे नीचे उतर गया, किंतु नीचे जाकर मैंने सोचा कि कम-से-कम ऊपर जाकर फिर देखना तो चाहिये कि आखिर बात क्या है? मैं वापस ऊपर आ गया। देखा, वह पक्षी नीचे गिर गया था और फड़फड़ा रहा था। मैंने उसे अपने हाथमें उठा लिया और अपने बेटेको आवाज देकर पानी लानेको कहा। मेरा बेटा पानी ले आया और मेरी पत्नी भी उसके साथ आ गयी। मैंने पानीकी कुछ बूँदें उस पक्षीकी चोंचमें डालनेका प्रयत्न किया, परंतु पानी बाहर आ गया और वह बेहाल-सा होकर मेरे हाथपर गिर गया, उसके पंजे तथा गरदन टेढ़े-से हो गये। मैंने अपनी पत्नी और बेटेसे कहा कि थोड़ा गंगाजल ले आओ, लगता है इसकी आखिरी साँसें चल रही हैं। मेरा बेटा दौड़कर गंगाजल ले आया। मैंने अपनी अँगुलीसे गंगाजलकी कुछ बूँदें उसकी चोंचमें डालीं, जो उसने निगल लीं। फिर मैंने कुछ और गंगाजल धीरे-धीरे उसे पिला दिया। हमने देखा कि उसमें कुछ-कुछ चेतना-सी आ रही है। तब मैंने उसे जमीनपर छोड़ दिया। वह एक-दो कदम चला और उड़कर मुँडेरपर बैठ गया तथा फिर थोड़ी ही देरके बाद फुर्रसे उड़ गया। हम सब उसे दूरतक उड़ते देखते ही रह गये। जब वह आँखोंसे ओझल हो गया तो हमलोगोंका ध्यान भी उस ओरसे हटकर घटना-चक्रकी तरफ हो आया। छतपर अनाजके दाने बिखरे पड़े थे। कहीं कोई ऐसी चीज नहीं दीखी कि जिससे पक्षीको चोट आदि लगी हो। फिर समझा कि किसी कारणसे वह कहीं चोट आदि खा गया हो या उसे कोई अन्दरसे तकलीफ हो, जिस कारण वह उड़ते-उड़ते गिर पड़ रहा हो और फिर बेहोश हो जा रहा हो। जो भी कारण रहा हो, कारण हमलोग नहीं समझ पाये, लेकिन हमलोगोंको यह मालूम हो गया कि साधारण जल और गंगाजलमें कितना अन्तर है। हमारे बार-बार प्रयास करनेपर भी साधारण पानी उसके मुँहमें जा ही नहीं रहा था, सब बाहर गिर जाता था; किंतु ज्यों ही गंगाजलका स्पर्श हुआ कि उसका मुँह खुल गया और उसने थोड़ा-सा गंगाजल पी भी लिया। हम सब लोगोंने तो इसे गंगाजीका प्रभाव और चमत्कार ही समझा। जिसने दम तोड़ते एक पक्षीको पुनः जीवित कर डाला। वास्तवमें देवनदी गंगाके पावन एवं पुण्यमय जलका ऐसा विलक्षण प्रभाव और उसकी ऐसी विलक्षण महिमा है, जिसका वर्णन करना सम्भव ही नहीं। न जाने कितने समयसे भगवती भागीरथी गंगामैयाकी अजस्र धारा इस भारतभूमिको पवित्र करते हुए प्राणियोंका उद्धार कर रही है।

बोलिये गंगामाताकी जय!—देवेन्द्रपाल गुप्ता

जंगलदासपर माता गंगाकी कृपा

घटना लगभग ८०-९० वर्ष पूर्वकी है। मेरे पितामहकी उम्रके लोग इसे सुनाया करते थे। पूर्णिया जिलेमें एक विशाल जंगल था। जंगलके निकट एक गाँवमें एक सम्पन्न कृषक रहते थे। उनके यहाँ जंगलदास नामका एक हलवाहा था। वह प्रतिदिन हल चलाने खेतपर जाया करता था। समयपर दूसरा नौकर उसके लिये जलपान लेकर जाया करता था। खाना-पानी जाते ही जंगलदास अपना कमण्डलु लेकर वृक्षकी ओटमें जाकर स्नान करता और पीनेके लिये पानी लेता

आता था। वही पानी पीता था। प्रतिदिन नौकर देरसे लौटता था। इसका कारण पूछनेपर नौकरने कहा—'मालिक! जलपान एवं पानी लेकर जानेके बाद जंगली स्नान करने चला जाता है और वहींसे कमण्डलुमें पानी लाकर वही पानी पीता भी है।'

एक दिन मालिक स्वयं गया। छिपकर देखा कि जलपानके आते ही जंगली स्नान करने चला गया है। मालिकको बहुत क्रोध हुआ और वह जंगलीको अपशब्द कहता हुआ हाथमें डण्डा लेकर मारनेके लिये तत्पर हो गया। पर एकाएक दिमागमें आया कि यह नहाता कहाँ है? जबकि आस-पासमें नदी-तालाब आदि कुछ भी नहीं है? आश्चर्यचकित होकर मालिकने जंगलदाससे पूछा—तुम कहाँ स्नान करते हो, जबकि निकटमें कहीं पानी नहीं है? जंगलदासने आँसू बहाते हुए मालिकका पैर पकड़ लिया और हाथ जोड़कर कहा—मालिक! मुझे मार लीजिये, वेतन काट लीजिये, पर यह कहनेके लिये बाध्य न कीजिये, इससे मेरी बहुत बड़ी क्षति होगी। पर मालिक अपनी बातपर अड़े रहे, अन्तमें जंगलदासने रोते हुए कहा—मैं गंगामाताका एकान्तमें स्मरण करता हूँ तो माता आ जाती हैं। पानीकी धारा बहने लगती है। मैं वहीं स्नान करता हूँ और पानी लाता हूँ। पर यह भेद प्रकट करनेके कारण मेरी पुकारपर अब वे नहीं आयेंगी, पानीका स्रोत भी नहीं बहेगा। आज मेरा सर्वनाश हो गया। यह सुनकर मालिकको बड़ा आश्चर्य हुआ, वह उसकी गंगाके प्रति अनन्य भक्ति देखकर बड़ा ही प्रसन्न हुआ, उसने उसका कर्ज माफ कर दिया। जंगलके निकट उसके लिये एक घर बनवा दिया। वहीं धीरे-धीरे गाँव बस गया है। इसीसे उस गाँवका नाम जंगलटोला पड़ा।

—अजय कुमार

गंगास्नानका प्रत्यक्ष फल

अभी कुछ दिनों पहले भारतसरकारने गंगाजीको राष्ट्रीय नदीके रूपमें घोषित किया, यह परम हर्षकी बात है। गंगाजीकी महिमाका शास्त्रोंमें जैसा वर्णन है, वे अक्षरशः वैसी ही हैं। इसी प्रसंगमें गंगाजीकी अनुकम्पासे मेरी धर्मपत्नीको जो अनपेक्षित लाभ हुआ, वह इस प्रकार है—

पिछले तीन वर्षोंसे मेरी धर्मपत्नीके मुँहमें छाले हो जानेसे असह्य पीड़ा थी। कई प्रसिद्ध डाक्टरों, वैद्यों एवं हकीमोंसे इलाज करवाया; किंतु कोई लाभ नहीं हुआ। स्थिति ज्यों-की-त्यों बनी रही और तीन वर्षोंतक दूध, दलिया एवं उपमा-जैसे पदार्थोंका सेवनकर किसी तरह पेट भरती रही।

एक-एक दिन निकालना दुष्कर हो रहा था। कहते हैं कि *'हारे को हरिनाम'*, संयोगवश १३ जून, सन् २००८ ई० को गंगादशमीका पर्व निकट था तो हमने साहस करके हरिद्वारकी यात्रा करनेका निर्णय किया और हरिद्वार पहुँचे, परंतु वहाँ मेरी पत्नीको बुखार आ गया। फलस्वरूप तीन दिनोंतक ज्वरके कारण वह स्नान नहीं कर पायी। चौथे दिन गंगादशमी थी और प्रभु-प्रेरणा हुई कि इतनी दूर आये हैं तो गंगास्नान तो करना ही चाहिये। ज्वरकी परवाह न करके भगवान्का स्मरणकर प्रेम और श्रद्धापूर्वक गंगास्नान किया। फिर क्या था, करुणामयी माँ गंगाकी ऐसी कृपा हुई कि स्नानके पश्चात् मुँहके छाले एकदम गायब हो गये एवं वह पूर्णरूपसे स्वस्थ हो गयी।

यह उल्लेखनीय है कि तीन वर्षोंमें इलाजपर लाखों रुपये व्यय करके कुछ भी लाभ नहीं हुआ; परंतु गंगास्नानसे ऐसा चमत्कार हुआ, जो हमारे जीवनकी अविस्मरणीय घटना बन गयी।

इससे मेरे एवं मेरे परिजनोंमें गंगाजीके प्रति श्रद्धाकी असीम वृद्धि हुई।—रामकिशन गङ्वानी

गंगाजलका महत्त्व

'पुण्य-गालवभूमि' (ग्वालियर)-में मैं अपनी छोटी बहन सौ० कमलाबाईकी रुग्णावस्थाके हेतुसे वहाँके एक प्रसिद्ध वैद्यके सम्पर्कमें आया। वे बड़े सरलहृदय सत्संगी सज्जन हैं।

एक बार मैं उनके साथ 'कतकी पूनो स्नान' (कार्तिक पूर्णिमा स्नान) करने माँ भागीरथीके तटपर, सरसइयाघाट, कानपुर गया था। सन्ध्याको गंगाकी थिरकती लहरोंपर झिलमिल-झिलमिल दीपोंकी पंक्तियाँ आकाशगंगासे प्रतिस्पर्धा करती-सी प्रतीत होती थीं। ब्राह्ममुहूर्तमें स्नान और सन्ध्यावन्दनकर प्रात: ८ बजे हमने वहाँसे प्रस्थान किया। गंगाजलके दो बड़े पीपे भरकर मैं ग्वालियर लाया। वैद्यजीने मुझे बताया था कि आप एक बूँद गंगाजल नित्य लिया कीजिये, इससे अनेक रोगोंका शमन होता है। साथ-ही-साथ भवरोगका भी। तबसे मैंने प्रतिदिन पूजाके समय एक बूँद गंगाजल लेनेका नियम बना लिया जो आज भी चालू है।

एक बार मेरे तीसरे बच्चे 'गोविन्द' के मुँहपर अनेकों मसा (चमड़ीका एक प्रकारका उभार) हो गये। लोगोंने इसके अनेक कारण एवं उपचार बताये। हमने भी अनेकों दवाएँ कीं, झाड़-फूँक भी करायी, किंतु कोई लाभ नहीं हुआ।

एक दिन पूजामें बैठे-बैठे ही गंगामाईका पूजन करते समय प्रेरणा हुई तथा वैद्यजीके वचन स्मरण हो आये। मैंने उसी समय अपने बच्चेको गंगाजल पिलाने और मसोंपर लगानेका संकल्प किया तथा ऐसा ही किया भी। चार दिन बाद ही बच्चेके मुँहपरसे मसोंकी भुर्री-सी उड़ने लगी और कुछ ही दिनोंमें बच्चेका चेहरा साफ-सुथरा हो गया।

गंगामाईके पावन सलिलामृतकी स्मृतिमात्रसे शरीर आनन्दित हो उठता है। गंगा भारतवर्षका मेरुदण्ड हैं। अब तो मैं हर साल गंगा-स्नानके लिये जाने लगा हूँ। किसी वर्ष (दुर्भाग्यसे) यदि नहीं जा पाता हूँ तो गंगाजलका पर्याप्त भण्डार अपने पास रखता हूँ।

—चतुर्भुज शर्मा 'पंकज'

शंकरजीको गंगाजलसे स्नान कराते ही वर्षा हुई

यह मिरजापुरमें २० जुलाई, सन् १९८२ ई० को घटित सत्य, चमत्कारपूर्ण दैवी घटना है। आजसे लगभग पचास वर्ष पूर्व भी इस वर्षकी तरह वर्षा न होनेसे श्रावणमासमें धूल उड़ रही थी, भीषण गर्मी और उमससे त्राण पाना कठिन हो गया था। बादलका एक टुकड़ा भी आसमानपर दिखायी नहीं पड़ता था। वर्षाके लिये सर्वत्र त्राहि-त्राहि मची थी। ऐसी भीषण स्थितिमें नगरके लोगोंने शंकरजीको गंगास्नान करानेका निश्चयकर लगभग दो सौ लोगोंकी टोली बनाकर घड़ोंमें गंगाजीका जल भरकर बदलीघाट-स्थित शंकरजीका अभिषेक प्रारम्भ किया। गंगा-किनारेसे मन्दिरतक लोगोंको दो पंक्तियोंमें खड़ा किया गया। एक तरफसे खाली घड़े गंगाके किनारेतक हाथों-हाथ पहुँचते थे तो दूसरी ओरसे गंगाजलसे भरे घड़े उसी प्रकार मन्दिरतक आते थे और शंकरजीपर गंगाजल चढ़ाया जाता था। भगवान् शंकरको प्रात:कालसे ही स्नान कराना आरम्भ हुआ। अपराह्नमें अचानक आकाश मेघाच्छादित हो गया और देखते-देखते वर्षाकी फुहार ही नहीं पड़ी, अपितु एक घण्टेतक मूसलाधार वृष्टि भी हुई। भक्तोंके साथ साधारण जन और पशु-पक्षी सभीको गर्मीके भीषण कष्टसे त्राण मिला। शिवजीकी इस कृपासे लोग चमत्कृत तथा धन्य हो गये।

शिव-अभिषेकके फलस्वरूप वर्षा होनेके पुराने प्रसंगको वयोवृद्धोंसे सुनकर, उससे उत्साहित और प्रेरित हो, नगरके श्रद्धालु, आस्तिक लोगोंने गंगाजीसे १२०० मीटरकी दूरी तय करते हुए बदलीघाट-स्थित मन्दिरमें गत १२ जुलाई, सन् १९८२ ई०-को शंकरजीका गंगाजलसे अनवरत अभिषेकसहित पूजन-अर्चन किया। शिवजीकी कृपासे थोड़ी ही देर बाद बादलोंसे विहीन आकाश मेघाच्छादित हो गया और अपराह्नमें लगभग ढाई बजेसे चार बजेतक खूब जमकर वर्षा हुई। शंकरजीकी इस कृपासे सर्वत्र प्रसन्नता छा गयी। आगे भी कई दिनोंतक वर्षा होते रहनेसे भीषण गर्मी तथा जलाभावके कष्टसे सभीको

मुक्ति मिली। इस प्रकार भगवान् आशुतोषकी कृपासे भगवद्विश्वासी, आस्तिक लोगोंके श्रद्धा-विश्वासकी विजय हुई।

—वल्लभदास बिन्नानी 'ब्रजेश'

गंगासम्बन्धी मेरी अनुभूति

आजसे एक दशक पूर्वकी घटना है। यह कोई कहानी नहीं, बल्कि स्वयंके जीवनमें घटी सत्य घटना है। घटनाका वर्णन करना हमारा अभीष्ट नहीं, अभीष्ट तो गंगाजीसे सम्बन्धित वह अनुभूति है एवं उनकी महत्ताका जो यत्किंचित् भान हुआ, उसका वर्णन है।

घटना रात्रिके लगभग १२ बजेकी है। बाह्य कक्षमें हम पति, पत्नी एवं छोटा बेटा सोये थे। तभी एकाएक बड़ा बेटा अन्दरसे आया और इतना ही कह पाया कि कोई चीज बाहरसे आयी और पंखेसे टपककर मेरे अन्दर घुस गयी। मेरे पाँव टूट रहे हैं, दम निकल रहा है। कहते-कहते गिर गया, आवाज बन्द हो गयी। हम तीनों प्राणी जग गये और बुरी तरह घबरा गये कि इस मध्य रात्रिके समय करें तो करें क्या? किसको बुलायें? कहाँ जायँ? डॉक्टरके पास जायँ या क्या करें?

ईश्वरीय प्रेरणासे मैं पूजाघरमें गया और वहाँ रखा गंगाजल लाया। मन्त्र स्मरण नहीं कौन-सा पढ़ा था। बेटेके ऊपर छींटे लगाये। उल्लेखनीय है कि बेटा सोनेसे पहले ठाकुरजीकी स्तुति करके ही सोता है। छींटे लगते ही उसके ऊपर तीव्र आवेश आया और आदेश मिला कि तुम सभी बाह्य कक्षमें नहीं, अन्दर जहाँ पूजागृह है, वहाँ जाकर लेटो। बेटेके शरीरमें अब कुछ जान आ चुकी थी, इसी मध्य एक घटना और घटी। मुख्य द्वारपर दो बार खटका हुआ, जिसे सभीने स्पष्ट सुना था। हम बाहर देखने जाने लगे। पुनः बेटेको आवेश आया और कहा कि कोई भी रात्रिभर देहलीसे बाहर नहीं जायगा। नींद रात्रिभर किसीको नहीं आयी, जैसे-तैसे रात्रि काटी गयी।

स्वाभाविक है, प्रातः होते ही इस घटनाकी चर्चा परिवारीजनोंमें की गयी। किसीने कुछ, किसीने कुछ सलाह दी। डॉक्टरको दिखाया, उन्होंने चिकित्सीय परीक्षणमें सब कुछ सामान्य बताया। बहुत ठोकरें खायीं, पैसे भी खर्च किये, पर कोई तथ्य हाथ नहीं आया, बस एक ही बात आती थी कि उस रात्रि बेटेपर मारण-प्रयोग किया गया था। कुछ आसुरी शक्तियोंको घरपर भेजा गया था। एक घरमें प्रवेश कर गयी, जिसने बेटेपर आक्रमण किया, दो बाहर थीं, जिससे दरवाजा खटका। यदि कोई जाता तो उसकी मौत हो सकती थी।

इस घटनाके समय स्वयंका भी स्वास्थ्य खराब चल रहा था और कभी-कभी ऐसा प्रतीत होता था शायद ये शरीर अब नहीं रहेगा। समय व्यतीत हुआ। कुछ शुभ-चिन्तकोंने कहा कि कुछ महीने गंगास्नान कर आओ। हमने प्रतिमाह अमावस्याको गंगा-स्नानहेतु जाना प्रारम्भ किया।

तबसे आजतक प्रतिमाह गंगाजी जाते हैं, अत्यन्त आनन्द आता है। कोई कामना नहीं है। परिवारमें सब ठीक है। हम भी स्वस्थ हैं, बेटा भी ठीक है। यही हमारी अनुभूति है। जो कुछ देखा, वह कितना सत्य है—यह तो हम नहीं कह सकते, किंतु इतना अवश्य कह सकते हैं कि रोग एवं दुष्ट आत्माओंसे ग्रसित बहुत-से लोगोंको भी गंगामाँकी कृपासे मुक्त होते देखा है। ऐसे लोग भी हैं, जो प्रतिमाह हजारों कि०मी० दूरसे स्नान करने आते हैं और कहते हैं कि हमें कुछ मिले अथवा ना मिले, आत्मशान्ति अवश्य मिलती है, जैसे—कोई बालक कितने ही कष्टमें क्यों न हो, जब माँकी गोदमें आकर कोमल हाथोंका स्पर्श प्राप्त करते ही कष्टोंसे मुक्तिका अनुभव करता है, ठीक इसी प्रकारकी मेरी अनुभूति है। गंगामाँ सबका कल्याण करें। यही हमारी प्रार्थना है।—कार्ष्णि डॉ० श्रीराधेश्यामजी अग्रवाल

मृत्युमुखमें पहुँची असाध्य रुग्णाकी जीवन-रक्षा

मैं पेशेसे चिकित्सक होनेके नाते पड़ोसकी एक स्त्रीको प्रथम प्रसवके दौरान उपचार देने गया। खानदानी

पेशा होनेके कारण हमारा क्षेत्रमें बहुत विश्वास किया जाता है, उस समय इतने छोटे गाँवोंमें बड़े डॉक्टर एवं अस्पताल नहीं थे। प्रसवमें स्त्रीको सन्निपात (एक्लोशिया) हो गया, उन्मादकी स्थिति बन गयी, बेहोशी एवं प्रलाप आदि तीव्र लक्षण परिलक्षित होने लगे। घरवाले घबरा गये। आयुर्वेदिक, ऐलोपैथिक ऊँची-से-ऊँची दवाओंका प्रयोग करनेपर भी सफलता नहीं मिली। मौसम वर्षाका था, घनघोर मूसलाधार वर्षा रुकनेका नाम नहीं ले रही थी, ऐसी परिस्थितिमें रुग्णा—सद्यःप्रसवाको कहीं बाहर बड़े अस्पतालमें पहुँचाना भी असम्भव हो गया, गाँवके चारों ओरके मार्ग नदियोंके उफानपर होनेके कारण अवरुद्ध हो गये थे, घरसे बाहर निकलना मुश्किल था। एक रात्रि एक दिन पूरा समाप्त हो गया। रुग्णाके बचनेकी कोई आशा नहीं थी, दूसरी रात्रि भी मैं उपचार करता रहा, वहीं रुग्णाके पास यह रात्रि भी व्यतीत हो गयी।

प्रातः शीघ्र नित्यकर्मसे निवृत्त हो स्नान-ध्यानके पश्चात् मुझे आत्मप्रेरणा हुई—'**औषधं जाह्नवीतोयम्**'। मैंने रुग्णाके पिताको स्नानकर शीघ्र आनेको कहा।

उनके आनेपर मैंने एक स्वच्छ पात्रमें ५० ग्रामके लगभग गंगाजल रखकर उनसे गंगोदकपानका संकल्प कराया और रुग्णाको पिलानेका निर्देश दिया।

एक घण्टे बाद चमत्कारिक रूपसे रुग्णा होशमें आकर बैठी और बातें करने लगी। मैंने देखा स्वास्थ्य-सुधार हो गया, इसके बाद कोई औषधि नहीं दी गयी, रुग्णा पूर्ण स्वस्थ होकर आज भी जीवित है। संतान मर चुकी थी, किंतु रुग्णाको कोई पता नहीं था, होशमें आनेपर खूब रोयी-चिल्लायी, परंतु अन्य लक्षण रोगके कोई भी न रहे।

इस प्रकार मात्र गंगाजलपानसे जीवनरक्षा एवं स्वास्थ्य-प्राप्ति हुई।

धन्य हैं गंगा माँ, धन्य है उनकी कृपा!

—वैद्य श्रीकृष्ण शर्मा

श्रीगंगाजीकी मिट्टीका प्रभाव

सन् १९९६ ई० की घटना है, मैं अपने गाँवसे एक शवकी अन्त्येष्टिके लिये ट्रैक्टरसे चन्दनघाट गंगाजी (उन्नाव) कानपुर गया। सितम्बर माहमें अनवरत बरसातके कारण मेरे पैरोंमें उँगलियोंके बीच चमड़ी कटकर 'खरवा' रोग हो गया था। दोनों पैर बहुत दर्द कर रहे थे, पैरोंमें हाथ लगाये हुए ट्रैक्टरमें बैठे लोगोंसे बार-बार पैरोंको दुखनेसे बचा रहा था। शव-दाहके पश्चात् स्नानके लिये किसी प्रकारसे दुखते-दुखाते लँगड़ाते पैरोंसे सड़कसे दायीं ओरसे प्रवाहके ऊपर बायीं ओर आया। गंगामाताकी बाढ़ घटकर किनारे गीली मिट्टी (गीली बालू)-का पचपचा था, जो पैरोंकी उँगलियोंके बीच भर रहा था। मैंने सोचा अब और दशा खराब हो जायगी। किसी प्रकारसे गंगा-स्नान करके फिरसे उसी गीले पचपचासे बचते-बचाते निकलते हुए ट्रैक्टरपर पैरोंको बचाकर बैठ गया। नाश्ता-पानीके बाद जब हम लोग एक-दो किलोमीटर चलकर रामा देवी चौराहा, कानपुर आये तब ध्यान आया कि अरे! पैरोंको बचाओ, लेकिन हुआ क्या कि अब मेरे पंजे दर्द ही नहीं कर रहे थे। उँगलियोंको अच्छी प्रकारसे दबाकर देखा तो भी दर्द नहीं था। तब मुझे ध्यान आया कि वह गंगाजल और गीली मिट्टीका पचपचा मेरे लिये दवाका काम कर गया; क्योंकि गंगाजल तो बैक्टीरियानाशक होता है, उसके प्रभावसे बैक्टीरिया नष्ट हो गये थे और दर्द जाता रहा, लेकिन आश्चर्य था कि इतनी जल्दी प्रभाव! दर्दका इलाज कैसे हो गया? यह सब गंगामैयाका ही प्रभाव है।

—श्रीप्रेमशंकरजी शर्मा 'विश्वकर्मा'

गंगाजलका चमत्कार
[दो सत्य घटनाएँ]

गंगा हमारी अस्मिताकी पहचान है। केवल हिन्दू ही नहीं, अपितु सभी धर्मावलम्बी गंगाका आदर करते

हैं। गंगा केवल एक नदी ही नहीं है, वरन् एक जीवन्त दैवी शक्तिके रूपमें, ममतामयी माँके रूपमें एवं परम तीर्थके रूपमें सर्वत्र व्याप्त है। गंगाजलमें अनेक औषधीय गुण हैं। श्रीरामचरितमानसमें भी गोस्वामी तुलसीदासजीने गंगाजीको—*'सब सुख करनि हरनि सब सूला।'* कहा है।

मैंने जीवनमें दो ऐसी घटनाएँ देखीं कि गंगा मइयाको श्रद्धा और विश्वासके साथ शत-शत नमन करती हूँ। पहली घटना सन् २००३ ई० की है। मैं और मेरी बहन दोनोंका घर इलाहाबादमें ही है। कार्तिकका महीना था। एक दिन मेरी बड़ी बहनके पुत्रका टेलीफोन आया कि माँको ब्रेन हेमरेज हो गया है और प्रीति अस्पतालमें भर्ती हैं। खबर सुनकर हमलोग अविलम्ब अस्पताल पहुँचे। बहनकी अवस्था पचहत्तर वर्ष और ऊपरसे ब्रेनहेमरेज। वे अस्पतालके सघन-कक्षमें एकदम अचेत पड़ी थीं। डॉक्टर बराबर उपचार कर रहे थे। परिवारके सदस्य एक-एक करके उन्हें देखने आ रहे थे। डॉक्टरने कहा कि उनके बचनेकी आशा नहीं-के बराबर है। किसी निकट सम्बन्धीको बुलाना हो तो बुला लें।

एक-दो दिनमें उनकी पुत्रियाँ और भाई आ गये। उनकी एक पुत्री डॉक्टर है। उसके पति भी डॉक्टर हैं। उसने देखा कि उनकी हालतमें कुछ भी सुधार नहीं है तो वह अपने उत्तरदायित्वपर घर ले आयी। उनका उपचार घरपर होता रहा। नाकमें एक नली डाली गयी थी, उसीसे उन्हें आवश्यक दवाएँ और भोजन तरलरूपमें दिया जाता था। दिनमें एक बार डॉक्टर भी देख जाता था। धीरे-धीरे सब लोग अपने घर चले गये।

लगभग एक महीने बाद मेरे बड़े भाई, जो जीजीसे छोटे थे, फिर आये। तबतक जीजी वैसी ही अचेत थीं। खाना-पीना यथावत् नाककी नलीसे ही दिया जाता था। मेरे भाईने उनकी बहूसे कहा कि उनके मुँहको खोलकर दो चम्मच गंगाजल डाल दिया करो। उनके घरमें गंगाजल हमेशा रहता था।

बहूने मामाजीके कहे अनुसार प्रतिदिन दो चम्मच गंगाजल उनके मुँहमें डालना आरम्भ किया। तीन-चार दिनतक तो गंगाजल डालते ही मुँहके बाहर निकल जाता था। तीन-चार दिनके बाद गंगाजल डालनेपर जीजीने जीभ चलायी। फिर दो दिन बाद लगा कि उन्होंने घूँट भी भरा। श्रद्धा और अपार विश्वासके साथ बहू धीरे-धीरे गंगाजलकी मात्रा बढ़ाती रही। चार-पाँच दिन बाद थोड़ी चाय भी ठण्डी करके उनके मुँहमें डालनी शुरू की। नाककी नली यथावत् रही, पर मुँहसे थोड़ा-थोड़ा तरल पदार्थ देती रही। पूरे दो महीने बाद वे कोमासे बाहर आयीं। सबको यही अटल विश्वास है कि गंगाजलके प्रभावसे ही उनको चेतना आयी थी। धीरे-धीरे वे पूर्ण स्वस्थ हो गयीं और फिर एक वर्षतक जीवित रहीं।

दूसरी घटना सन् २०१३ ई० की है। मेरी बहूकी बड़ी बहन भी इलाहाबादमें ही रहती हैं। चौकमें उनका मकान है और संयुक्त परिवार है। अगहनके महीनेमें सविताकी सासको हृदयाघात हुआ। यहाँ इलाहाबाद हार्ट सेण्टर अस्पतालमें दो दिन भर्ती रहीं। डॉक्टरने कहा कि दो धमनी ब्लाक हैं। तय हुआ कि लखनऊ ले चलते हैं। लखनऊमें उनका मायका भी है। एक भाई भी डॉक्टर हैं।

उनके दोनों पुत्र अपने एक मित्र और ड्राइवरके साथ सुबह पाँच बजे लखनऊके लिये रवाना हुए। सास पूजा-पाठ बहुत करती हैं और छूतपाक भी बहुत मानती हैं। इसलिये तैयारीके समय उनके साथ गंगाजल और ठाकुरजीका चरणामृत भी रख दिया गया। यह सोचकर कि अस्पतालमें जो भी खाना-पीना उन्हें दिया जायगा, उनके सन्तोषके लिये उसमें गंगाजल मिलाकर शुद्ध कर दिया जायगा। जब गाड़ी रायबरेलीके पास पहुँची, तब लगता है कि उन्हें फिर एक हृदयाघात हुआ। बदन ऐंठ गया, आँखें पथरा गयीं, मुँह भी अजीब-सा टेढ़ा हो

गया। लगता था कि वे बहुत पीड़ा झेल रही हैं। नब्ज देखी, वह भी नहीं मिल रही थी। बाहरसे कृत्रिम साँस देनेका प्रयत्न किया गया। एक पुत्र मुँहसे उनके मुँहमें साँस देने लगा, पर उसका भी कोई प्रभाव नहीं पड़ा। पेशाव भी निकल गयी थी। लगा कि उनके जीवनकी इहलीला रास्तेमें ही समाप्त हो गयी।

उन लोगोंने ऐसी स्थितिमें वापस घर जानेका निर्णय किया। सब घबड़ा गये। गाड़ी वापस घरकी ओर मोड़ दी गयी। लगभग २० किलोमीटर वापस आनेके बाद उन्हें स्मरण आया कि गंगाजल भी रखवाया था। मरते समय उनके मुँहमें गंगाजल तो डाल दिया जाय।

रोते-रोते एक पुत्रने गंगाजलकी शीशी निकाली और उनका मुँह खोलकर थोड़ा गंगाजल शीशीसे ही डाल दिया। उस समय चम्मच आदि निकालनेका किसे होश था। गंगाजल डालते ही एक चमत्कार हुआ। उनके शरीरमें थोड़ी हरकत हुई। फिर धीरे-धीरे और गंगाजल डाला। कुछ ही देरमें उन्होंने अपनी आँखें खोल दीं। कहने लगीं कि हमारे कपड़े कैसे गीले हो गये? इन लोगोंने कहा कि पानी गिर गया होगा।

लोगोंमें आशाका संचार हुआ। गाड़ी फिर लखनऊकी ओर मोड़ दी गयी। रास्तेमें एक स्थानपर एक डॉक्टरका घर भी दिखा तो गाड़ी रोककर उसे भी दिखाया गया। बड़ी कठिनाईसे डॉक्टर गाड़ीतक आया। देखकर बोला—'ले जाइये, पर रास्तेमें कुछ हो जाय तो मैं नहीं जानता।' गंगाजलका ही प्रभाव और उसमें सच्ची श्रद्धा और विश्वासके कारण ही वे गंगाजल पीती-पीती लखनऊ अस्पताल पहुँच गयीं। वहाँ उनका इलाज हुआ और चार-पाँच दिन बाद घर भी वापस आ गयीं।

जीवनकी इन दो घटनाओंके प्रत्यक्ष प्रमाणसे हमने गंगाजलके औषधीय गुणको समझा। गंगा मइयाको अपार श्रद्धा और विश्वाससे बारम्बार नमन करनेको मेरा शीश झुक जाता है।—श्रीमती शीला अग्रवाल

गंगातटपर गायत्री-साधनाका प्रत्यक्ष चमत्कार

शास्त्रोंमें गंगानदीके तटपर साधना, पुरश्चरण एवं अनुष्ठानका बहुत माहात्म्य बताया गया है। गंगानदी-तटपर चलनेवाले मन्द-मन्द समीर और आध्यात्मिक परिवेशके कारण जप-साधनामें मन अधिक नहीं भटकता और शीघ्र ही प्रशान्त होने लगता है। शास्त्रोंमें गंगानदीके तट और गंगाजलमें खड़े होकर गायत्रीजप या गायत्री-अनुष्ठानकी विशेष महिमा गायी गयी है। विष्णुपदी गंगाके सान्निध्यमें जप करनेसे हमारी चेतनाका प्रवाह भीतरकी ओर मुड़ता है और शीघ्र ही हम गायत्री या अपने इष्ट मन्त्रकी लयमें बँधने लगते हैं। यह बात शास्त्र, पुस्तक-पोथीमें लिखी कोरी कल्पना नहीं बल्कि प्रत्यक्ष एवं अनुभवगम्य है, जिसे कोई सामान्य व्यक्ति आज भी करके देख एवं समझ सकता है। गंगातटपर बैठकर साधु-सन्तों और महात्माओं ही नहीं आम जनोंने गायत्री-साधनासे बहुत-कुछ प्राप्त किया है। गायत्री-साधना सांसारिक स्तरपर ऐश्वर्योंका भोग एवं आध्यात्मिक स्तरपर मोक्ष—दोनों प्रदान करती है। गायत्रीको वेदमाता कहा गया है—अर्थात् वेदोंकी शिक्षाओंका निचोड़। गायत्री मन्त्र कितना रहस्यपूर्ण है और इसमें वेदोंकी सारी विद्या कैसे विद्यमान है, इस तथ्यको केवल जपके द्वारा ही समझा और पाया जा सकता है।

किशोरावस्थामें वाराणसीके एक महात्माने मुझे गायत्री-जपके लिये प्रोत्साहित करते हुए कहा था—'बेटा, गंगानदीमें कहीं भी सीधे उतरकर स्नान करना निरापद नहीं है। घाटके माध्यमसे गंगामें प्रवेश करना चाहिये। घाटसे गंगा-स्नान निरापद हो जाता है। ठीक इसी प्रकार गायत्री ब्रह्मविद्याके लिये घाट है। इस घाटपर बैठनेसे ब्रह्मविद्या उपलब्ध हो जाती है।' सम्भवतः इसीलिये शास्त्रोंमें कहा गया है—'जपात् सिद्धिः जपात् सिद्धिः।' जपके बिना सिद्धि मात्र दिवास्वप्न है।

जप चूँकि एक यज्ञ है, इसलिये इसे विधिपूर्वक करना चाहिये। अविधिपूर्वक कर्मको गीतामें न केवल अकुशल कर्म बल्कि आसुरी-कर्म भी बताया गया है। गायत्री-जपके लिये आता है कि इसे गंगा अथवा पवित्र नदियोंके तट या संगम, पवित्र जलाशयोंके समीप, पीपलवृक्षके नीचे या देवस्थानमें करना चाहिये। यह एक सामान्य अनुभवकी बात है कि गंगानदीमें स्नान करनेके बाद न केवल स्फूर्ति बढ़ती है, बल्कि भूख भी लगती है। यह लक्षण इस बातका संकेत है कि गंगाजल सद्गुणोंको बढ़ाता है। यही कारण है कि प्राण-त्याग रहे व्यक्तिको गंगाजलका सेवन करवाया जाता है। प्राण त्यागते समय यदि व्यक्तिके भीतर सद्गुणोंका प्राधान्य हो तो शास्त्रोंके अनुसार उस व्यक्तिको अगले जीवनमें सदाचारी परिवारमें जन्म मिलता है—ऐसा भगवान् श्रीकृष्णने कहा है।

गंगा एवं गायत्रीके बीच एक और सम्बन्ध विचारणीय है। प्राचीन मान्यता है कि भगीरथने अपने अथक प्रयासोंसे ज्येष्ठ शुक्ल दशमीके दिन ही गंगानदीका पृथ्वीपर अवतरण करवाया था। इसकी यादमें ही प्रतिवर्ष इसी तिथिपर गंगा दशहरा मनाया जाता है। लोग गंगा-स्नानका पुण्यलाभ लेते हैं। ऐसी भी मान्यता है कि ज्येष्ठ शुक्ल दशमीके दिन गायत्री मन्त्रका भी अवतरण हुआ था। गंगाको जिस प्रकार पृथ्वीपर लाकर करोड़ों भारतीयोंका कल्याण करनेका श्रेय भगीरथको जाता है, वैसे ही गायत्री-मन्त्रका साक्षात्कारकर इसे मानव-कल्याणके लिये सुलभ बनानेका श्रेय ऋषि विश्वामित्रको जाता है। जिस ऋषिने गायत्री-जैसे महामन्त्रको सुलभ करवाकर पूरी मानवताका कल्याण किया हो, उसका नाम विश्वामित्र होना पूरी तरहसे उपयुक्त है। गायत्रीकी तरह ही गंगा भी चराचर जगत्में प्राणियोंको सभी तरहके पापोंसे मुक्त कराती है।

प्रयागमें गंगातट या संगमपर गायत्रीजप एवं अनुष्ठानका विशेष माहात्म्य है। प्रयागमें गंगानदीका यमुना एवं पौराणिक नदी सरस्वतीमें संगम होता है। इसीलिये इस संगमको त्रिवेणी कहते हैं। गायत्री भी तीन शक्तियों सावित्री, लक्ष्मी एवं सरस्वतीका सम्मिलित स्वरूप है। हमारे परिवारमें गंगातटपर गायत्री-साधनाकी सुदीर्घ परम्परा रही है। मेरे प्रपितामह चतुर्वेदी द्वारिकाप्रसाद शर्मा आधुनिक हिन्दीके उन्नायक विद्वानोंमें एक थे, जिन्होंने जीवनभर गायत्री-साधना की। माता गायत्री अपने भक्तोंको किस प्रकार कष्टोंसे उबारती हैं, इसका एक उदाहरण द्वारिकाप्रसादजी भी थे। बात सन् १९१० ई० की है, चतुर्वेदीजी ब्रिटिश सरकारकी नौकरी करते थे और इसी दौरान उन्होंने वारेन हेस्टिंग्जपर एक पुस्तक लिखी। इस पुस्तकमें अँगरेज वाइसराय हेस्टिंग्जद्वारा ब्रिटिश शासनके विस्तारके लिये रचे गये तमाम कुचक्रों और भारतीय हितोंपर कुठाराघातके षड्यन्त्रोंका बेबाकीसे वर्णन किया गया। अँगरेजी शासनके लिये यह पुस्तक तो मानों खुली चुनौती थी। फिर तो जो होना चाहिये था, वही हुआ। ब्रिटिश सरकारने चतुर्वेदीजीके समक्ष दो प्रस्ताव रखे या तो अपनी पुस्तकको बाजारसे वापस लेकर सरकारसे माफी माँगो अथवा नौकरीसे त्यागपत्र दे दो। स्वाभिमानी एवं राष्ट्रभक्त होनेके कारण चतुर्वेदीजीने दूसरा ही रास्ता चुना।

उन्होंने जब सरकारी नौकरी त्यागी तो उनपर बहुत बड़े परिवारके निर्वाहकी जिम्मेदारी थी। उनके मित्रोंको जब उनकी सरकारी नौकरी जानेकी बात पता चली तो उन्होंने विभिन्न प्रकारकी सलाह दी, किंतु उन्होंने सभी लोगोंकी सलाहको मौन होकर सुना और किसीकी भी बातको नहीं माना। उन्होंने प्रभुके न्यायपर भरोसा करते हुए प्रयागमें गंगातटपर एक कुटिया बनवायी और करीब सवा माहके गायत्री-अनुष्ठानपर बैठ गये। गायत्री-अनुष्ठान सम्पन्न होनेके चार-पाँच दिनके भीतर उस समयके शहरके सबसे बड़े प्रकाशक उनके पास आये। उनसे कहा कि सुननेमें आया है कि आपने नौकरी छोड़ दी है, क्या आप हमारे लिये पुस्तकें लिखेंगे? चतुर्वेदीजीने

इस प्रस्तावको माता गायत्रीका आदेश मानते हुए स्वीकार कर लिया। इसके बाद उन्होंने इस प्रकाशकके लिये वृहद् आकारके कई कोश, वाल्मीकीय रामायण, महाभारत आदि ग्रन्थोंका अनुवाद तथा विभिन्न विषयोंपर पुस्तकें लिखीं।

इसके बाद चतुर्वेदीजीने लेखनीको ही अपनी आजीविका बना लिया तथा सौसे अधिक पुस्तकें लिखीं और स्वयं कई पत्रिकाएँ निकालीं। उनके कई आलेख कल्याण पत्रिका और उसके विशेषांकोंमें भी प्रकाशित हुए। चतुर्वेदीजीने इसके बाद भी कई बार गायत्री-अनुष्ठान किया। एक बार उन्होंने गंगा नदीमें नौकापर रहकर करीब सवा माहका गायत्री-अनुष्ठान किया। गंगातटपर गायत्री-साधनासे उन्हें क्या आध्यात्मिक उपलब्धियाँ हुईं, इसको उन्होंने कभी चर्चाका विषय नहीं बनाया। इतना अवश्य है कि उनके परिचयके दायरेमें जो भी द्विज आता है, उसे वे सन्ध्योपासन एवं गायत्रीजपके लिये अवश्य प्रेरित करते। उन्होंने वैदिक मन्त्रोंपर आधारित सन्ध्योपासनकी एक संक्षिप्त विधि निर्धारित की। इस विधिसे आजके व्यस्त जीवनमें भी मात्र दस मिनटमें सन्ध्योपासन किया जा सकता है। चतुर्वेदीजी अपनी सारी उपलब्धियोंके लिये प्रभु एवं माता गायत्रीकी कृपा बतलाते थे।

गायत्री-साधनाकी इस परम्पराको हमारे पितामह एवं चतुर्वेदीजीके सबसे छोटे पुत्र प्रतापनारायण चतुर्वेदीने आगे बढ़ाया। उन्होंने गायत्री-साधनासम्बन्धी अपने अनुभवको 'सन्ध्यायोग एवं भगवदाराधन' पुस्तकमें इन शब्दोंमें लिखा है—'लेखक सन् १९२५ ई० में पंजाबमें नौकरी करते थे। वहाँ उनकी नौकरी छूट गयी, वे लौटकर प्रयाग आ गये। यहाँ डेढ़ मासतक ढूँढ़नेपर कोई काम नहीं मिला। अन्तमें उन्हें निराश होते देख उनके पिताजीने कहा कि अब तुम जैसा हम कहें, वैसा व्यवसाय पानेका प्रयत्न करो। उन्होंने कहा कि कहीं गंगातटपर एकान्त स्थानमें जाकर सवा लक्ष गायत्रीका जप करो। पिताजीके आदेशानुसार उन्होंने जप किया। जप समाप्त करनेके उपरान्त उन्हें पायनियर प्रेसमें जहाँ तीन-चार बार नो वैकेन्सीसे उनका स्वागत हो चुका था, पहलेके वेतनकी अपेक्षा ढाई गुने वेतनमें स्थान मिला।'

बादमें प्रतापनारायणजीने अपना स्वयंका प्रकाशन खोल लिया और जीवनभर गायत्री-साधना करते रहे। इनके जीवनकी एक और घटनामें भी माता गायत्रीकी स्पष्ट कृपा देखनेको मिली। वह एक बार घरके बहुत-से बच्चोंको लेकर गंगानदीमें नावसे जा रहे थे। इसी दौरान नाव भँवरमें फँस गयी। हालत यहाँतक पहुँच गयी कि मल्लाहतकने हिम्मत खो दी। नावमें जितने बच्चे थे, शायद ही किसीको तैरना आता हो। बताते हैं कि प्रतापनारायणजीने उसी समय माता गायत्रीका ध्यान करना शुरू कर दिया। मेरे परिजन बताते हैं कि उनके आँख बन्द करके ध्यान करनेके कुछ ही पलों बाद देखते-देखते नाव उस भँवरसे ऐसे निकल गयी, मानो कुछ हुआ ही न हो।

मेरे पिता पण्डित गंगानाथजी चतुर्वेदी बताते हैं कि उन्हें युवावस्थामें प्रयागमें गंगामें खड़े होकर गायत्री-जप करनेमें असीम आनन्द और उत्साह मिलता था। वह प्रायः उस स्थानपर खड़े होकर गायत्री-जप करते थे, जहाँ लोगोंकी भीड़भाड़ न हो। एक बार वह जब जप कर रहे थे, उसी समय सहसा गंगाजीमें रेतकी एक बहुत बड़ी कगार टूटकर पानीमें गिरी। लेकिन सारी रेत उनपर न गिरकर उनके आस-पास गिरी। वह बताते हैं कि उनके आसपास इतनी रेत गिरी कि यदि उसे ट्रकमें भरा जाता तो वह कम-से-कम तीन-चार ट्रक होती, लेकिन उनका बाल भी बाँका नहीं हुआ। इस घटनाको वे गायत्री माँकी विशेष कृपा मानते हैं, जिसके कारण उनके प्राण सुरक्षित रहे।

पिताजी बताते हैं कि प्रयागमें पाताली हनुमान्‌जी या लेटे हनुमान्‌जीके नामसे प्रसिद्ध मन्दिरके पास एक बाबा कुटियामें रहकर गायत्री-साधना करते थे। पिताजीपर

उनका काफी स्नेह था। एक बार पिताजीने कहा—'बाबा! आप पता नहीं इतना गायत्री-जप कैसे कर लेते हैं, मुझे तो तनिकसे गायत्री-जपके बाद ही बहुत गुस्सा आने लगता है?' बाबाने इस सवालका कोई जवाब न देकर स्वयं ही एक सवाल कर दिया, 'जब तुम्हें गुस्सा आता है तो तुम क्या करते हो?' पिताजीने बताया कि वे गायत्री-जप कम कर देते हैं। इसपर बाबाने उन्हें समझाया—'बेटा! जब कमरेमें झाड़ू लगाते हो तो कितनी धूल उड़ती है? क्या धूल उड़नेकी वजहसे झाड़ू लगाना छोड़ा जा सकता है? गायत्री-जप भी शुरूमें इसी तरह भीतर के क्रोध आदि दबे हुए भावों और संस्कारोंको बाहर निकालता है, इनसे घबराना नहीं चाहिये, बल्कि प्रसन्न होना चाहिये कि हमारा जप ठीक दिशामें जा रहा है। बस, जप करते रहो, सब अपने-आप ठीक होता चला जायगा।'

मेरे पिताजीका इस बातपर विशेष बल रहता है कि सूर्य एवं चन्द्रग्रहणके कालमें गंगातटपर गायत्री-जप करनेसे व्यक्तिको बहुत लाभ मिलता है। यह एक अनुपम अवसर होता है और व्यक्तिको इस अवसरका पूरा लाभ उठाते हुए गायत्रीजप अवश्य करना चाहिये।

—श्रीमाधवजी चतुर्वेदी

गंगामैयाकी सौगन्धका प्रभाव

हम तो मानव हैं, लेकिन जंगली जीव-जन्तु भी गंगामैयाकी मर्यादाको मानते हैं। मेरे जीवनका यह प्रत्यक्ष उदाहरण है। मुझे एक काला नाग कई बार यहाँ-वहाँ दिखायी देता था। वह बड़ा विशाल, लम्बा एवं मोटा था। कई बार अँधेरेमें मेरे पैरकी ठोकर भी लग गयी, पर वह फुफकारकर चला जाता था, काटता नहीं था। कई बार मेरी पत्नीके पैरकी भी ठोकर लगी, पर उसने कभी नहीं काटा और चला गया। उसके फनपर सफेद रंगका गायका खुर-जैसा निशान बना हुआ था। एक दिन रात्रिके समय मेरी नींद खुली और जैसे ही मैं मकानके चौकमें बल्ब जलाकर आया तो मुझे वह सर्प बैठा हुआ दिखायी दिया। मैंने पत्नीको जगाया। उसने मुझे डण्डा लानेके लिये कहा। मैं जैसे ही डण्डेकी तलाशमें दूसरे कमरेमें जाने लगा तो उसने रास्ता रोक लिया। मैंने उन सर्पदेवताको गंगा मैयाकी कसम दी कि हमें दिखायी देंगे तो आपको गंगा मैयाकी सौगन्ध है। हमें आपसे डर लगता है। उस दिनके पश्चात् वे सर्पदेवता आजतक नहीं दिखायी दिये। इस घटनाको करीब ३० वर्षका समय हो गया है। जबकि हमने तीर्थाटनमें हरिद्वार आदि कई तीर्थोंमें गंगामें खड़े होकर गंगाजल लेकर उस सौगन्धको उतारा। तात्पर्य यह कि सर्प-जैसे प्राणी भी गंगामैयाकी मर्यादाको मानते हैं, जबकि हम तो मानव हैं।

'मानो तो मैं गंगा माँ हूँ, ना मानो तो बहता पानी।'

—रामजीलाल गौतम पटवारी

श्रीगंगाजीकी दैवी शक्ति

सन् १९३७ से १९३९ ई० तक वर्षके कई-कई महीने मैं गंगातटपर निवास करता था। मैंने भी प्रभुदत्त ब्रह्मचारीजी महाराजके संकीर्तन-भवन झूँसी (इलाहाबाद)-से सटी तीन कोनेकी कच्ची खपरैलोंसे छायी कुटिया बना ली थी। द्वितीय यूरोपीय महायुद्धके समय वहाँसे बम्बई (फिर नागपुर) चला गया। वह कुटिया पीछे गिर गयी। उन दिनों मैं मेरठसे निकलनेवाले संकीर्तनका सम्पादन करता था। वर्षके कुछ महीने मेरठमें सूर्यकुण्डके पासके मनोहरनाथके घेरेमें एक कोठरीमें रहता था।

उन दिनों झूँसीसे दारागंज प्रयागतक रेलवेकी छोटी लाइनका पुल तो था, किंतु केवल रेलवेके लिये था। उसपरसे पैदल मनुष्य भी नहीं जा पाते थे। ग्रैण्डट्रंक रोडपर झूँसीमें गंगाजीपर पीपोंका पुल वर्षाके बाद बनता था और वह जूनमें हटा लिया जाता था। सवारियाँ, ट्रक-बस तथा पैदल लोग इस पुलसे आते-जाते थे। सार्वजनिक निर्माण-विभाग इस पुलको बनाने एवं रक्षित रखनेका प्रति वर्ष ठेका देता था।

एक वर्ष एक आर्यसमाजी सज्जनने पुल बनानेका

ठेका लिया। पुल-निर्माणके पूर्व गंगाजीकी दूधकी धारा चढ़ाकर पूजा की जाती है। उन्हें स्थानीय मल्लाहोंने बताया।

'नदीकी पूजामें मेरा विश्वास नहीं है।' उन सज्जनने कह दिया और कार्यारम्भ कराया, किंतु पुल एक दिन भी नहीं चला। वे वहाँ गंगाके एक मील रेतीले क्षेत्रमें बल्लियाँ गड़वाकर धारा मोड़नेका यत्न करते तो धारा दूसरे तटपर कटाव करने लगती। उन्होंने पीछे पूजा भी करायी, किंतु गंगाजीने सुना नहीं। कटाव जारी रहा, वे काम छोड़कर भाग गये। सुना कि उनकी जमानत जब्त हो गयी।

दूसरे वर्ष पुल बनानेका ठेका लेकर एक ब्राह्मण आ गये। आते ही उन्होंने गंगाजीको दण्डवत् किया। सवा मन दूध चढ़ाया, आरपारकी माला चढ़ाकर पूजा की। बोले—माँ! मैं तुम्हारी शरण आया हूँ। यह काम कभी नहीं किया, आगे न करूँगा। दो कन्याओंका विवाह करना है। आप ही दया करो।

चमत्कार हो गया, गंगाकी धारा झूँसीकी ओर सिमट गयी! सड़कके सामने अथाह जल! केवल दो जोड़ी पीपोंका पुल बना दो ही दिनमें। पूरे समयतक धारा वहीं बनी रही। वे ब्राह्मणदेवता अधिकांश समयतक गंगातटपर बैठे जप करते थे। जूनमें पुल हटाना हुआ तो दोपहरतकमें हट गया। गंगाजीने उन्हें ठेकेके प्रायः पूरे रुपये दिला दिये। मैं इन दोनों वर्षोंका साक्षी हूँ।—श्रीसुदर्शनसिंहजी 'चक्र'

[प्रेषक—श्रीजनार्दनजी पाण्डेय]

'औषधं जाह्नवीतोयम्'

उत्तरप्रदेशके मथुरा जनपदके पूर्वी भागमें एक नगर है, उसमें गुलाबचन्द्र नामके एक सम्भ्रान्त सेठ रहते थे, जिनकी ख्याति जनमानसमें एक भले जनके रूपमें थी। आयु लगभग साठ वर्ष पार कर चुकी थी, सभी प्रकारसे सम्पन्न थे कि शनिकी कुदृष्टि उनपर पड़ गयी और वे रुग्ण हो गये तो होते ही गये, किसी चिकित्सासे सुधार होनेका संकेत नहीं मिल रहा था।

कई चिकित्सक चिकित्साके नामपर हजारों रुपये डकार गये। सभीको अब निराशा ही दिखायी पड़ रही थी। सेठका खाना-पीना न के बराबर रह गया, अब तो सेठजीकी साथी मात्र शय्या ही रह गयी, दीर्घकालीन शयनके दुष्प्रभावसे उनके पृष्ठभाग (कमर)-में घाव हो गया। इस दशाको देखकर सभीके मनमें दृढ़ विश्वास हो चुका था कि सेठजीके प्राण इस शरीरको कुछ दिन ही रख पायेंगे।

यन्त्र, मन्त्र, तन्त्र, टोना-टोटका घर-द्वारपर स्पष्टतः दिखायी पड़ते थे, किंतु उसी समय सेठजीके स्वयंके पुण्योंने अपना आगमन एक दैवीशक्तिके रूपमें किया। उस दैवीशक्तिने परोक्षरूपसे कहा—'सेठजीके पुण्य अभी शेष हैं, जनता-जनार्दनकी शुभ कामनाएँ आ रही हैं, अतः सेठजी शीघ्र पूर्ववत् स्वस्थ हो जायँगे।' इस बातको सुनते ही उपस्थित सभी जन चौकन्ने हुए और प्रश्न-मुद्रामें देखने लगे। तभी पुनः एक स्पष्ट वाक्य आया, 'इसमें एक शर्त है, वह पूर्ण करनी होगी कि गंगाजलका यथासाध्य भण्डार रखना पड़ेगा, समाप्त होनेसे पूर्व ही पुनः आ जाना चाहिये, किंचित् अभाव न हो।'

पुनः दैवी स्वर कर्णगत हुआ। 'पासके ही देवमन्दिरमें एक बड़ा पात्र गंगाजलसे पूर्ण रहे, जिससे भगवान्‌को भोग, स्नान आदिका कार्य गंगाजलसे सम्पन्न हो। कई पात्र सेठजीके उपयोगहेतु हों।

प्रतिदिन प्रातः-सायं मन्दिरसे चरणामृत उसी गंगाजलका आये, उसमें एक पत्र तुलसी टुकड़ाकर डालें और सेठजी औषधि अनुपानरूपमें लें, उस जलको कम-से-कम अट्ठाइस बार 'श्रीहरये नमः' मन्त्रसे अभिमन्त्रित कर लें। घरके अन्य सदस्य भी ५-५ बूँद 'ॐ नमः शिवाय' कहकर उदरस्थ करें तथा घरके सभी स्थानों और सदस्योंका प्रोक्षण भी गंगावारिसे होना आवश्यक है। भगवान् भला करेंगे'—यह कहकर आकाशवाणी लुप्त हो गयी।

उसी दिन परिवारीजनोंने श्रद्धा-विश्वाससे गंगाजलका भण्डारण किया और प्रयोग चालू कर दिया। पाँचवें दिनसे सभीको अनुमान हो गया कि सेठजीका स्वास्थ्य सुधर रहा है। मात्र चालीस दिनके प्रयोगसे सेठजी पूर्णरूपेण स्वस्थ हो गये।

सेठजीका दैनिक व्यवहार पूर्ववत् हो गया, तब सेठजी सपत्नीक गंगास्नान करने गये, वहाँ जाकर भण्डारा एवं हरिकीर्तन कराया। अपने स्थानपर आकर प्रसाद-वितरण किया तथा मन्दिरका पूर्ण व्यय पुजारीकी गृहस्थीसहित स्वयं वहन करनेका संकल्प किया।

सेठजीने स्वयंको पुनर्जीवन प्राप्त माना तथा हरिकृपा एवं गंगावारिका महत्त्व समझकर वे अपने आपको धन्य समझने लगे। [अखण्ड आनन्द]

—विद्याविनोदिनी शान्ति त्रिवेदी

माँ गंगाकी कृपा

माँ गंगाका स्मरण, दर्शन, स्तवन, मार्जन, स्नान सभी लाभकारी होते हैं, यह बात मेरे मनमें बालपनसे ही बैठ चुकी थी और उन सबके लिये मैं लालायित भी रहता हूँ। दृश्य-देवोंमें माँ गंगा भी हैं, उनके लाभ प्रायः प्रारम्भिक शिक्षामें आचार्योंद्वारा समझा दिये जाते हैं, परंतु तबतक मस्तिष्क उतना विकसित नहीं होता कि उन लाभोंको व्यावहारिक रूपसे भी जोड़ सके। माँ गंगाद्वारा एक विशेष लाभ मुझे मिला, जिसका वर्णनकर मैं स्वयंको पुनः धन्य समझता हूँ—

वर्ष १९७३-७४ ई० में मैंने बी०एड० की पढ़ाई चाकघाट (रींवा)-से पूरी की, वहाँ आने-जानेमें तीर्थनगरी प्रयागकी यात्रा भी हो जाती थी। बीच-बीचमें माँ गंगाके दर्शन एवं स्नानका भी सौभाग्य मिलता रहता था। एक दिन शामको मेरे तीन सहपाठी अचानक गंगास्नानका कार्यक्रम बना लाये कि अभी चलना है और प्रातः स्नानकर वापस आ जायँगे। मैंने भी प्रसन्नतापूर्वक सहमति दे दी और हम चारों रात ९ बजे इलाहाबाद पहुँच गये। सुबहतकका समय व्यतीत करनेकी बात आयी, तो मेरे साथी सिनेमा देखकर समय व्यतीत करना चाहते थे, इसके लिये मैंने सहमति नहीं दी। मैं बचपनसे ही सिनेमा नहीं देखता, उसके बदले उन तीनोंका खर्चा मैं वहन करूँ, ये मैंने स्वीकार कर लिया। वे तीनों एक सिनेमा हॉलमें सिनेमा देखने चले गये और मुझे सौभाग्यवश एक लाउडस्पीकरपर भजनोंकी ध्वनि सुनायी पड़ी। मैं उसी दिशामें थोड़ा आगे गया तो एक मैदानमें श्रीरामकथा चल रही थी। मुझे तो बड़ा अच्छा लगा। वहाँ नासिकसे पधारी एक बाल किशोरी (८-९ वर्षीया) बहुत ही रोचक ढंगसे श्रीरामकथाका रसास्वादन करा रही थीं। उनके दर्शनसे कौतूहल हुआ और उनकी ओजमयी वाणी हृदयको छूती-सी लगी। न जाने कब रात्रिके साढ़े बारह बज गये, कथा समाप्त हो गयी, आरतीके उपरान्त मैं अपने साथियोंको ढूँढ़ने वहीं सिनेमा हॉलपर गया तो वे तीनों मेरी प्रतीक्षा कर रहे थे। मैंने बताया कि संयोगसे मुझे तो श्रीरामकथा सुननेको मिली। उन्होंने भी श्रीरामकथाकी प्रशंसा की। यहाँसे हम चारों पैदल चलकर संगमतक पहुँचे। कार्तिकमासके शुक्लपक्षकी चतुर्दशी तिथि, आसमान पूरी तरह स्वच्छ था और चन्द्रमा अपनी पूरी चाँदनी फैलानेको आतुर लग रहा था। दूर-दूरतक साफ दिखायी दे रहा था। संगमपर पहुँचे तो रात्रिका डेढ़ बज चुका था। गंगाका विस्तार दूरतक फैली धवल चाँदनीमें बहुत ही आकर्षक लग रहा था। हलकी-हलकी सर्दी थी। मेरे साथियोंने वहीं नर्म बालूपर एक चादर बिछा ली और सोनेकी तैयारी में लग गये, परंतु मैं सोना नहीं चाहता था। मेरी बहुत इच्छा थी कि प्रातः चार बजे स्नान करूँ, यदि सो गया तो सम्भव है कि चार बजे आँख न खुले। अतः मैंने साथियोंसे कह दिया कि आप लोग सो जायँ, परंतु मैं स्वयं जगता रहा। कुछ देर बाद मुझे आलस्यका अनुभव हुआ तो मैंने किनारे-किनारे टहलना शुरू कर दिया। वहाँ बहुत सारी नावें साथ-साथ खड़ी थीं। प्रायः सभी लोग सोये हुए थे, परंतु एक नावपर मुझे माचिसकी

तीली जलनेका आभास हुआ तो मैं उसी नावके पास चला गया। वह नाविक बीड़ी सुलगाकर बैठा था। मुझे पासमें खड़े देखकर वह उठ आया और बोला, 'बाबू! घुमा देई?' मैंने मना कर दिया कि एक तो अनजान व्यक्ति, फिर रातका समय। मैंने सुना था कि कुछ नाविक लोग व्यक्तिको गंगाके बीचमें ले जाकर मनमाने पैसे वसूलते हैं या लूट भी लेते हैं। मैंने बता दिया कि मैं तो ऐसे ही बात करने आ गया हूँ, परिचयमें मैंने बताया कि हम गाजियाबादके रहनेवाले हैं और यहाँ चाकघाटमें पढ़ाई कर रहे हैं। वह न जाने क्यों इतना प्रभावित हुआ कि उसने अपनी नाव खोल दी और बोला, 'बाबू! बैठिये'''।' मैंने फिर मना कर दिया वह बोला 'आप आइये''' घर चलते हैं'''।' मैं उसके आग्रहको न टाल सका और रातमें ही नावमें सवार हो गया। नाव चलते ही जो आनन्दानुभूति हुई, उसे शब्दोंमें उतारना कठिन है। लगभग आधा घण्टे बाद हम गंगाका विशाल घाट पार करके नाविक-बस्तीमें पहुँच गये। वहाँ भी लोग सोये हुए थे, हमें देखकर कुछ कुत्ते अवश्य भौंके। उसने बाड़ेनुमा एक परिसरमें प्रवेश किया, मैं भी साथ-साथ रहा, झुग्गीमें उसकी वृद्धा माँ रजाई ओढ़कर बैठी थी, एक ओर कुछ बच्चे रजाईमें दुबके सो रहे थे। मैं माँको अभिवादनकर एक चारपाईपर बैठ गया। वृद्धा मुझे आश्चर्यसे देख रही थी। नाविकने अपनी माँसे कुछ खानेके बारेमें पूछा, मैंने अनुमानसे ही मना कर दिया। फिर भी वह अपने हिस्सेका दूध और छोटे बताशे लेकर आया। मेरे बहुत मना करनेपर भी वह नहीं माना। मैंने थोड़ा-सा दूध और बताशा ले लिया। मैं मन-ही-मन डर रहा था कि न जाने वहाँ जाकर कितने पैसे बतलायेगा? मन बड़ा पापी है कि बुरेकी ही कल्पना करता है। घरसे उन माँको प्रणाम करके हम वापस आ गये। जब बीच गंगामें जहाँ अथाह जलराशि थी तो नाव ऊपर-नीचे होती थी, वे हिचकोले हृदयको भी आनन्दित/प्रभावित करते थे। इस बार हमें लगभग एक घण्टा लगा। संगमतटपर आकर मैंने संकोचवश पूछ ही लिया, 'भइया! कितने पैसे दें''' ?' उसने हाथ जोड़ दिये और कहा कि 'हमने भाड़ेके लिये थौरउ ये सब किया।' मेरे आग्रहके बाद भी उसने कुछ नहीं लिया, मैं तो आभारसे दब-सा गया। मैंने उस भले इंसानसे विदा ली और अपने साथियोंके पास पहुँच गया, वे सोये हुए पड़े थे।

प्रातः के लगभग चार बज रहे थे, कुछ लोगोंने स्नान शुरू कर दिया था। मैं भी कपड़े उतारकर जगह तलाश रहा था कि कहाँ स्नान करना ठीक रहेगा। मेरा मन था कि ठीक संगमपर ही स्नान करूँ। तभी सामने एक लम्बी जटाओंवाले, कृशकाय वृद्ध स्नान करते दिखायी पड़े। मेरा भी साहस बढ़ा और मैं उनकी ओर बढ़ा। तभी वे बोल उठे, 'स्नान करना चाहते हो?' मैंने उत्सुकतावश कहा, 'हाँ''' बाबा!' वे तबतक गंगासे बाहर आ गये थे। उन्होंने मुझे एक टेढ़ा-मेढ़ा डण्डा पकड़ा दिया और बोले—'इसे पकड़े रहना, यहाँ गड्ढे बहुत हैं।' डण्डेका एक सिरा वे स्वयं पकड़े रहे और दूसरा सिरा पकड़कर मैं 'हर-हर गंगे' कहता हुआ निर्भय होकर ठीक संगममें गोते लगाने लगा। स्नानके बाद मैं बाहर आया और सोचा कि कपड़े बदलकर बाबाका धन्यवाद भी करूँगा, परंतु बाबा... वहाँ थे ही नहीं; आसपास भी मैंने दृष्टि दौड़ायी, परंतु कहींतक भी मुझे उन महानुभावके दर्शन नहीं हुए। मैं तो आश्चर्यचकित था कि बाबा कौन थे? कहाँ चले गये?

संगमपर भीड़ बढ़ने लगी थी, मेरे साथी भी जाग चुके थे। मैंने उन्हें अपनी दोनों बातें बतायीं। वहीं अन्य लोगोंको भी बताया तो एक पण्डाजीने बताया कि 'ब्रह्म मुहूर्तमें बहुत-से संत एवं अदृश्य आत्मा स्नान करने आते हैं, सम्भव है किसी पुण्य प्रतापसे कोई ऋषिसत्ता आपको स्नान करा गयी हो।' मैं तो इसे माँ गंगाका ही पुण्य प्रताप मानता हूँ कि उनकी गोदमें ही मैं अथाह जलपर विचरण कर आया। एकदम अनजान जगहका प्रसाद भी ले पाया और अन्तमें किसी ऋषिका सहारा

भी प्राप्त कर पाया। तबसे लेकर आजतक भी मैं उस घटनाक्रमको न भूला हूँ और न भुलाना चाहता हूँ, न जाने नाविकके वेषमें मुझे कौन मिले थे, जिन्होंने मुझे विकट स्थितियोंमें भी दो बार गंगा पार करायी, कोई पारिश्रमिक भी नहीं लिया और जिन ऋषिसत्ताने मुझे सुरक्षित स्नान कराया, वे कौन थे? मैं तो उनका धन्यवाद या अभिवादनतक भी न कर पाया। मेरे विचारसे तो ये सब गंगामैयाकी कृपा ही है। जय माँ गंगे!!—श्रीनरेन्द्रकुमारजी शर्मा, एम० ए०, बी० एड०

माँ गंगासे जुड़ी दिव्य अनुभूतियाँ

पतितपावनी, पुण्यसलिला, जगतारणी, भवभयनाशिनी कल-कल, छल-छल करती गंग-तरंग मेरे मनको इस प्रकार आह्लादित करती है, जैसे माँ भगवती गंगाजीसे इस तन-मनका और आत्माका जन्म-जन्मान्तरोंसे सम्बन्ध है। माँ गंगाका दर्शन ही सब तापोंका हरण करनेवाला है, स्पर्श और दर्शन अलौकिक भाव जाग्रत् करानेवाला है। मैं बचपनसे ही दर्शन तथा स्नान करने शुकताल मुजफ्फरनगर जाया करती थी। इण्टरकी पढ़ाई करनेके पश्चात् मुझे हरिद्वार जानेका सौभाग्य प्राप्त हुआ, वहाँ पन्द्रह दिन रही। उस सुख तथा अनुभूतिका शब्दोंमें वर्णन करना असम्भव है। बस, गंगा माँसे कहती थी। माँ! मेरी पढ़ाई पूर्ण करा देना और कुछ नहीं चाहिये।

गंगा माँकी कृपासे मेरी उच्चतर माध्यमिक विद्यालय दिल्लीमें प्रिन्सिपल पदपर सन् १९७५ ई०में नियुक्ति हुई। राजनैतिक उठा-पटकसे सन् १९७८ ई०में विद्यालय बन्द करा दिया गया। बचपनमें भाईकी मृत्युका आघात, युवावस्थामें विद्यालय-बन्दका झटका सहन नहीं हो पाया, लोकजीवनसे मुझे वैराग्य-सा हो आया, मैं साध्वी बन गयी। सन् १९८२ ई० में मुझे सत्संग-मण्डलीके साथ चारों धामकी यात्रा करनेका सुअवसर प्राप्त हुआ। सर्वप्रथम श्रीगंगोत्रीजीकी यात्रा की। वर्तमानमें वह विस्तार दिखायी नहीं देता। ढाई किलोमीटरकी चढ़ाई चढ़ते समय जो मनोरम दृश्य द्रष्टव्य हुए, वे अब स्वप्न बन गये हैं। दुग्धके फेन-जैसे बहते गंगाजलके मार्गमें बड़े-बड़े विशालकाय रंग-बिरंगे प्रस्तरखण्ड मार्ग अवरुद्ध किये हुए थे, गंगाजी गाँवकी अल्हड़ बाला-जैसी कुलाँचे भरती इधरसे उधर खिलखिलाती निकल जाती थीं। इस यात्रामें जैसे माँसे अपनत्व-सा हो गया।

सन् १९८५ ई०में कुछ सत्संगी बच्चे तथा बड़े मिलकर बृजघाट गंगाजी नहाने गये। रात्रिमें सब लोग हापुड़में मेरी बड़ी बहनके घरपर रुके। प्रातःकाल उठकर उन्होंने पूड़ी-सब्जी बनाकर हम सबके लिये दे दी और कहा जब स्नान कर लो तो चार पूड़ी-सब्जी रखकर गंगाजीको चढ़ा देना। मैंने कहा—'ठीक है' और हम चले गये। गंगाजीमें स्नान किया, वस्त्र पहने और सबने कहा—चलो, सामने आश्रम है, वहाँ बैठकर छायामें भोजन करेंगे। पूड़ी-सब्जीका भोग गंगाजीको पहले चढ़ाना है, यह मैं भूल गयी। सब चलने लगे, पर मैं अपना पाँव न उठा सकी। लगा जैसे रस्सीसे बाँध दिया हो। मैंने कहा—मेरे पाँव तो हिल नहीं रहे हैं। सब असमंजसमें पड़ गये, क्या करें? किसीने कहा—हिम्मत करो, किसीने कहा 'ठण्ड लग गयी होगी। बाबासे औषधि लेकर लगायें।' मैंने कहा—'दर्द नहीं हो रहा है, ऐसा लगता है, जैसे मेरे पैर पृथ्वीमें चिपक गये हैं, ऊपर उठते ही नहीं हैं।' मैंने आँखें बन्द कीं, हाथ जोड़े, प्रार्थना की—माँ! मुझे क्यों परेशान कर रही हो, बताओ न क्या गलती हुई है? कानमें माँ फुसफुसायी—'मेरी चार पूड़ी-सब्जी क्या स्वयं खायेगी?' मैंने शीघ्रतासे कहा—'सुनो, देखो, उस डलियामें पूड़ी-सब्जी है। चार पूड़ी-सब्जी निकालकर मुझे दो'। सब्जी-पूड़ी हाथमें आते ही मेरे पाँव स्वतः गंगाजीकी ओर मुड़ गये। माँको अर्पणकर प्रार्थना की, माँ! आपने हमें पाप करनेसे बचा लिया, आपके भोजनसे पूर्व हमलोग भोजन कर लेते। आप केवल बहता पानी नहीं वरन् आप श्रीहरिका द्रवस्वरूप हैं। हमारे कृत्योंको आप सर्वत्र देखती हैं। हम आपको प्रणाम करते हैं। प्रमुदित मनसे वहीं हमने भोजन

किया और एक गुदगुदाहट-सी महसूस करते हुए दिल्ली आ गये।

सन् १९८६ ई० की बात है। कार्तिक पूर्णिमापर गंगास्नान करनेके लिये मैं मोहन पार्क, नवीन शाहादरासे पं० पातीरामजीके नेतृत्वमें हरिद्वारके लिये बससे सत्संग-मण्डलमें भक्तोंके साथ गयी। प्रातः ४ बजे बस हरिद्वार पहुँच गयी। पन्तदीप पार्किंगमें बस लग गयी, सबलोग प्रातःक्रियाके लिये चले गये। मैं सीधे गंगाजी पहुँच गयी, गंगाजीको प्रणामकर 'हर हर गंगे' कहकर जल सिरपर छिड़क लिया। उस समय मैं सब कुछ भूल गयी। कहाँ घूमी, यह भी याद नहीं। धूप निकल आयी, बसवालोंसे पूछा, 'भइया! दिल्ली-शाहादराकी बस कहाँ है? मैं नम्बर भूल गयी। उन्होंने कहा—'ड्राइवरका नाम बताओ?' मुझे पता नहीं, किसी व्यक्तिका नाम बताओ? हम एनाउन्समेण्ट करा देते हैं। मुझे पता नहीं। अपने गुरुजीका? नहीं पता। तुम्हारा क्या नाम है? नहीं पता। एकने कहा—कोई पागल लगती है। अब जैसे मुझे थोड़ा होश आया, मैंने गंगाजीकी ओरको मुँह किया और हाथ जोड़कर प्रार्थना की—'माँ! मैं किनके साथ आयी हूँ, आप जानती हो, मुझे मिला दो, मैं आपको प्रणाम करती हूँ।'

उसी समय पं० पातीरामजी मेरे पीछे खड़े आवाज लगा रहे थे। 'अरे बेटा कमलेश! कहाँ चली गयी थी? सब स्नान करके घूमने चले गये। तुम्हारा कुछ पता ही नहीं। सारे घाटोंपर देख लिया था।' मैं अवाक् रह गयी। बहुत जोरसे रोना आ गया और दौड़कर बसमें चढ़ गयी। 'माँ! ये कैसा खेल किया? पहाड़ोंमें पत्थरसे अटखेली करती हो, यहाँ अब मैं किसीको क्या बताऊँ?'

२४ जनवरी सन् २००१ ई०में तीर्थराज प्रयागमें महाकुम्भके शाही स्नानका शुभ मुहूर्त उपस्थित हुआ। निरंजनी अखाड़ा परिसरमें परमपूज्य महामण्डलेश्वर सन्तोषी माताजीका पण्डाल ही हमारा आश्रय-स्थल था। शाही स्नानके लिये अखाड़ेके सन्त-महन्त अपने-अपने वाहनोंपर सवार होकर चलने लगे। मुझे भी माताजीने अपने रथपर चढ़ा लिया। पीछे बैठी थी। स्नानके लिये उतरते समय माताजीके भक्त बाँयीं ओरसे ले गये। दाँयीं ओरसे उतरनेपर मुझे अपना कोई दिखायी नहीं दिया। चारों ओर सन्तोंकी भीड़ थी, मैं एक कदम भी आगे न बढ़ा पायी, लगा कि मैं गिर जाऊँगी और अब बचूँगी नहीं। मैंने मन-ही-मन कहा—'गंगा माँ! मैं स्नान नहीं कर सकती।' इसके बाद जैसे ही रथकी ओर वापस जानेको मुड़ने लगी, एक पीले रंगकी साड़ी पहने साँवली-सी महिलाने मेरा हाथ आकर पकड़ लिया और बोली—अरे दीदी! आप अकेले कैसे चलोगी, मैं लेकर चलती हूँ। मैंने हाथ छुड़ानेका प्रयास करते हुए कहा—नहीं-नहीं मुझे इस भीड़से डर लगता है, मैं नहीं नहा पाऊँगी, कहीं गिरकर कुचल जाऊँगी।

महिलाने कहा—मैं हूँ ना, देखो-देखो, कहाँ भीड़ है? सब गये, सब नहाने गये। अरे भई! वापस आयेंगे तब धक्केमें गिर जाऊँगी। महिलाने कहा—नहीं, मैं ऐसे रास्तेसे लाऊँगी कि कोई नहीं मिलेगा। तुम आरामसे स्नान करना। कोई नहीं था, सामने गंगाजी थीं। वहाँ कमलके फूल सैकड़ों लगे देखे। देखो, यहाँ कोई नहीं आयेगा, मैं भी हूँ। तुम आरामसे स्नान करना, डरो नहीं। जल घुटनोंसे नीचा ही था, मैं आगे-आगे बढ़ती गयी, कमल खिले हुए मिलते रहे, वह भी मेरे पीछे आती रही। २० मिनटतक मैं नहाती रही, पीछे मुड़कर देखती तब वह मुसकुराते हुए दिखायी देती और कहती—डरो मत, अकेला छोड़कर नहीं जाऊँगी। खूब मन भरकर नहा लो। अब मैंने सोचा कपड़े भी ले आती तब यहीं बदल लेती, एकदम एकान्त शान्त स्थान है, चलो, जैसी ईश्वरकी इच्छा। स्नानके समय साधु, महात्मा, बूढ़ा-बच्चा दिखायी नहीं दिया। किनारेपर निकलते ही उस महिलाने पुनः हाथ पकड़ लिया। दो कदम ही चले होंगे कि मेरा दायाँ हाथ रथके ऊपर रखकर

कहा, 'देखो, माताजी बैठी हैं। यही आपका रथ है, अब मैं जाती हूँ।' हाथ रखते ही मैंने ऊपर देखा पूज्य माताजी बैठी मेरी प्रतीक्षा कर रही थीं। उनके भक्तोंने ऊपर पकड़कर खींच लिया। चढ़कर महिलाको देखने लगी, सोचा भीड़से बचाया, धन्यवाद दे दूँ। वह आँखोंसे ओझल हो चुकी थी; क्योंकि भीड़की पूर्ववाली ही स्थिति थी। योगवासिष्ठमें पढ़ा था कि संसार हमारे मनमें ही रचा है। क्या वह दृश्य! लाखों लोगोंका अदृश्य हो जाना! गंगाजीमें कमल! इतने लम्बे समयतक केवल मैं और वह महिला! क्या गंगा माँ स्वयं आकर उस सुखद स्नानकी अनुभूति, उस दिव्य धामका दर्शन कराने ही उस दयालु, कृपालु महिलाके रूपमें नहीं आयीं? मुझे तो ऐसा ही लगता है। चार करोड़ लोगोंका जमघट उस दिन प्रयागमें स्नानके लिये पहुँचा था। प्रयागमें कई बार जाना हुआ। उस दृश्यको कभी कहीं नहीं देखा। कैसे मान लूँ कि गंगाजी केवल वर्तमान सामाजिक उपेक्षाओंके कारण गन्दे नालोंके मिश्रण जलका ही प्रवाह है। हृदयकी पुकार सुनकर वह दौड़ी चली आती है, अपने आँचलको फैलाकर उसमें छुपा लेती है। तभी तो माँ कहकर पुकारते हैं गंगाजीको।

सन् २००४ ई० का नवम्बर माह। दिनांक याद नहीं, शायद १० नवम्बर था। प्रातःकाल हरिद्वारमें विद्यापीठके अपने कमरेमें जप कर रही थी, ध्यानमें देखा एक सुन्दर-सी कुम्हलायी मुखाकृतिवाली श्वेतवसना महिला थर-थर काँप रही है, दौड़ती हुई आकर मुझसे लिपट गयी और कहने लगी—देखो-देखो, मुझे मार डालेंगे, जीजी! मुझे बचाओ। वह अँगुलीसे सामने इशारा कर रही थी। इशारेकी ओर मैंने देखा तो बहुत बड़े-बड़े गोल-गोल बिल-जैसे छेद दिखे, उसमेंसे एक बड़ा चूहा निकल भागा। मैंने कहा—देखो, माँ! वह चूहा है। आपको कोई नहीं मारेगा, डरो नहीं, परंतु वह मेरे हाथोंमें बेहोश हो गयी। धीरे-धीरे मैंने भी नीचे बैठकर अपने घुटनोंपर उस महिलाका सिर रखकर कहा—'तुम कौन हो?' धीरेसे कराहनेकी आवाज आयी 'गंगा', 'मुझे इन गड्ढोंमें जाना पड़ेगा, मैं मर जाऊँगी।' मैं चीखी—'नहीं, गंगा माँ! आप मर नहीं सकतीं, सँभालो स्वयंको।'

माला हाथसे छूट गयी, ध्यान टूट गया। मनमें हाहाकर मचा। लगता है टिहरी डैममें गंगाजीको डाल दिया गया। प्रातः समाचार-पत्र पढ़ा, वास्तवमें समाजको बिजली देनेके लिये सरकारने टिहरी डैममें गंगाजीको प्रवाहितकर गंगाजीकी हत्या कर दी। इस हत्याका जिम्मेदार कौन है? उसे दण्ड मिलना चाहिये। टिहरी डैमसे गंगाजीको मुक्त करानेकी जिम्मेदारी हम सबकी है।—साध्वी सुश्री कमलेश भारतीजी

गंगाजलसे व्याधिनाश

यह उस समयकी बात है जब मेरे पूज्य पिताजीकी आयु लगभग ६० वर्षकी रही होगी, उनको आधा शीशी अर्थात् प्रातः से सिरके एक तरफ दर्द होता था, जो दिनके साथ ही बढ़ता रहता था। दोपहरमें बहुत तेज हो जाता था, फिर धीरे-धीरे कुछ कम होता, पर पूरी तरह ठीक नहीं होता था। प्रतिदिनके सिरदर्दसे वे परेशान रहते थे। जड़ी-बूटीकी चिकित्सा भी की गयी, वैद्य लोगोंने जो दवा दी, उसका प्रयोग भी किया, झाड़-फूँक भी किया गया, परंतु कुछ फर्क नहीं होता था। जिस तरफ सिरमें दर्द था, उस तरफकी आँखमें भी बादल पड़ गया। हम सभी लोग अत्यन्त चिन्तित हो गये। संयोगसे उन्हीं दिनों उन्हें हरिद्वार जानेका मौका मिला। वहाँ उन्होंने हरिद्वारमें हरिकी पैड़ीमें स्नान किया, फिर लौटकर जब वे घर आये तो उन्होंने बताया कि 'जब मैंने गंगाजीमें डुबकी लगायी थी और स्नान करके बाहर निकला, तो मेरा सिरदर्द लगभग दूर-सा हो गया। मुझे सिर भी हलका लगने लगा। उस समय मुझे कोई दर्द नहीं था। धीरे-धीरे अपने-आप दर्द गायब हो गया।'

तबसे पिताजीको कभी आधाशीशी—एक तरफवाला सिरदर्द नहीं हुआ। इस घटनाके बाद २३ वर्षतक वे जीवित रहे, हमेशा गंगामैयाकी कृपाकी बात करते थे। बोलो व्याधिनाशिनी गंगामैया की जय!

—आचार्य श्रीगौरीदत्तजी गहतोड़ी

गंगा-महिमा

बहुत पहलेकी बात है कि मेरे नगरमें मेरा एक मुसलमान मित्र रहता था। अचानक एक दिन मेरी निगाह उसके गलेमें पड़े हुए ताबीजपर पड़ी। जिसमें एक पतलेसे डोरेमें जलसे भरी हुई एक छोटी-सी शीशी लटकी हुई थी। मैं अपने इस मुसलमान मित्रसे पूछ बैठा—'अरे भाई! इस छोटी-सी शीशीमें जल भरकर गलेमें क्यों लटका रखा है? क्या शहरमें पानीकी इतनी कमी हो गयी है कि तुम्हें पानी हर समय अपने साथ रखना पड़ता है?'

मेरे मित्रने उत्तर दिया—'अमाँ यार! यह कोई साधारण पानी नहीं है, यह गंगाजल है।'

मुझे अपने मित्रकी बात सुनकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि एक मुसलमान होते हुए भी वह गंगाजलको इतने सम्मानपूर्वक ढंगसे अपने साथ रखता है। मैंने उससे पूछा—'तुम गंगाजलको अपने साथ हर पल क्यों रखते हो?'

मित्रने बताया—'मुझे एक रातमें, मेरा पड़ोसी रामदीन जो कि एक महीने पहले मर चुका था, स्वप्नमें आकर कहने लगा—मैं यमराजकी सेनामें भर्ती हो गया हूँ, मैं कल अपने शहरके सेठ करोड़ीमलके प्राण लेने सुबह आठ बजे आऊँगा।' मैंने स्वप्नमें ही उससे कहा—अरे! वह सेठ तो भला-चंगा है, उसे तो कोई तकलीफ भी नहीं है, फिर तुम भला कैसे उसके प्राण हर सकते हो?

सुबह हुई! सेठ करोड़ीमल जो कभी गंगा-स्नान नहीं करता था, उसे उस दिन गंगा-तटकी ओर जाते देख मैं भी उसके पीछे-पीछे चल दिया। गंगा-तटपर एक साँड़ गंगाजलकी धारामें सींग मार-मारकर खेल रहा था। जैसे ही सेठ कपड़े उतारकर गंगा-स्नानके लिये उतरा, उस साँड़ने अपनी सींगोंसे सेठका पेट फाड़ दिया और सेठ वहींपर मर गया।

अगली रातमें रामदीन मुझे स्वप्नमें पिछले दिनकी बात सिद्ध करनेके लिये पुनः दिखायी दिया और कहने लगा—'मैंने जो कल तुमसे कहा था, वह बात सही निकली?' उसकी यह बात सुनकर मैंने उसे उत्तर दिया कि सेठको तो साँड़ने मारा है, तुमने तो उसे नहीं मारा! इसपर रामदीन ठहाका मारकर हँसा और बोला—अरे मूर्ख! उस साँड़के सींगपर मैं ही तो अपना छोटा-सा रूप बनाकर बैठ गया था। सींगपर बैठते ही मैंने साँड़की बुद्धि फेर दी। हाँ, मैंने प्राण तो उसके ले लिये, लेकिन उसे यमपुरी नहीं ले जा पाया! क्योंकि जब साँड़ने अपने सींगें सेठके पेटमें मारीं तो उसकी सींगोंके साथ कुछ बूँदें गंगाजलकी और कुछ कण गंगा-रेतीके सेठके पेटमें चले गये, जिससे वह स्वर्गका अधिकारी हो गया! सेठको अब स्वर्गके दूत रथमें लेकर स्वर्गलोक ले जायँगे।

जिस दिनसे मैंने यह स्वप्न सार्थक देखा, उसी दिनसे मैं इस छोटी शीशीमें गंगाजल भरकर हमेशा अपने साथ रखता हूँ और प्रत्येक दिन इसमेंसे एक बूँद पी लेता हूँ। कुछ पता नहीं, मौत कब आ जाय? गंगाजल मेरे पास है, मुझे जन्नत (स्वर्ग)-में जानेसे कोई नहीं रोक सकता।

अपने इस मित्रका पवित्र पावन गंगाजलमें अटूट-श्रद्धा, भक्ति एवं दृढ़ विश्वासको देखकर मुझे गंगाजलकी महत्ताका आभास हुआ।

भागीरथि सुखदायिनि मात-
स्तव जलमहिमा निगमे ख्यातः।
नाहं जाने तव महिमानं
पाहि कृपामयि मामज्ञानम्॥

—पं० श्रीशंकरलालजी त्रिवेदी [चिन्तामणि]

[ख] गंगाभक्तोंके आख्यान

सीताजीकी गंगा-साधना

(प्रो० श्रीबालकृष्णजी कुमावत, एम० कॉम, साहित्यरत्न)

परब्रह्म परमात्माने अपनी आदिशक्तिसहित भारतके धरा-धामपर त्रेतायुगमें अवतार लेकर जो लीलाएँ की हैं, उन्हें पाँच भागोंमें वर्गीकृत किया जा सकता है—बाललीला, विवाहलीला, वनलीला, रणलीला और राजलीला। इन लीलाओंमें जो चरित परमात्माने किये, वे मानवके लिये अनुकरणीय हैं। आदिकवि महर्षि वाल्मीकिद्वारा रचित रामायण एवं गोस्वामी श्रीतुलसीदासद्वारा रचित श्रीरामचरितमानसमें इन ललित लीलाओंका विशद वर्णन किया गया है। यहाँ भगवती सीताजीके गंगाप्रेमको संक्षेपमें दिया जा रहा है—

वनलीलाका एक अनुपम प्रसंग है—अपना मनोरथ पूरा करनेहेतु श्रीसीताजीद्वारा देवनदी गंगाकी पूजा-अर्चना एवं प्रार्थनाका। परम भक्त केवटने श्रीरामजीके चरणोंको धोकर एवं चरणोदक पीकर प्रसन्नतापूर्वक
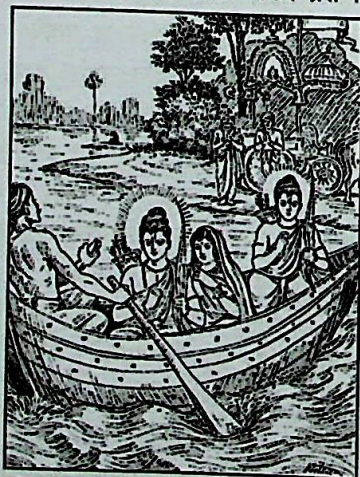
श्रीसीताजी, श्रीरामजी एवं श्रीलक्ष्मणजीको नावमें बैठाकर गंगा नदी पार करायी। बहुत आग्रह करनेपर भी उतराई नहीं ली। श्रीरामजीने निर्मल भक्तिका वरदान देकर उसे विदा किया। श्रीरामजीने स्नान करके पार्थिव पूजन करके प्रणाम किया। श्रीसीताजीने गंगाजीसे हाथ जोड़कर विनती की। इसका मार्मिक वर्णन अयोध्याकाण्डमें इस प्रकार किया गया है—

सियँ सुरसरिहि कहेउ कर जोरी । मातु मनोरथ पुरउबि मोरी॥
पति देवर सँग कुसल बहोरी । आइ करौं जेहिं पूजा तोरी॥
सुनि सिय बिनय प्रेम रस सानी । भइ तब बिमल बारि बर बानी॥
सुनु रघुबीर प्रिया बैदेही । तव प्रभाउ जग बिदित न केही॥
लोकप होहिं बिलोकत तोरें । तोहि सेवहिं सब सिधि कर जोरें॥
तुम्ह जो हमहि बड़ि बिनय सुनाई । कृपा कीन्हि मोहि दीन्हि बड़ाई॥
तदपि देबि मैं देबि असीसा । सफल होन हित निज बागीसा॥

प्राननाथ देवर सहित कुसल कोसला आइ।
पूजिहि सब मनकामना सुजसु रहिहि जग छाइ॥

गंग बचन सुनि मंगल मूला। मुदित सीय सुरसरि अनुकूला॥

(रा०च०मा १०३। २—८, १०३, १०४।१)

श्रीसीताजीने गंगाजीसे हाथ जोड़कर कहा—हे माता! मेरा मनोरथ पूरा कीजिये, जिससे स्वामी और देवरके साथ कुशलपूर्वक लौट आनेपर मैं आपकी पूजा करूँ। श्रीसीताजीकी प्रेमरसमें सनी हुई प्रार्थना सुनकर उस निर्मल श्रेष्ठ जलसे यह श्रेष्ठ वाणी हुई—हे रघुबीर श्रीरामजीकी प्रिया! हे विदेहनन्दिनी! सुनो। आपका प्रभाव जगत्‌में किसे मालूम नहीं है? आपकी कृपादृष्टिसे लोग लोकपाल बन जाते हैं। सब सिद्धियाँ हाथ जोड़े आपकी सेवा करती हैं। आपने जो हमें बड़ी विनती सुनायी, यह कृपा की, मुझको बड़ाई दी। तो भी, हे देवि! मैं अपनी वाणी (वाग्देवी)-के सफल होनेके लिये आपको आशीर्वाद दूँगी। प्राणपति और देवरसहित कुशलपूर्वक अवध लौटोगी, आपके सब मनोरथ पूरे होंगे, जगत्‌में सुन्दर यश बना रहेगा। ऐसे मंगलकारी वचन सुनकर तथा देवनदी गंगाजीके अनुकूल होनेसे सीताजी आनन्दित हुईं।

'भइ तब बिमल बारि बर बानी' जलमेंसे होनेवाली आवाज है, आकाशवाणी नहीं, यह वारिवाणी है। गंगाजी भी आकाशवाणीकी तरह जलवाणीसे आशीर्वाद आदि दे सकती हैं।[१] शंकरजीकी दो शक्तियाँ हैं—एक उमा और एक गंगा। जैसे भवानीकी पूजा पहले की थी सीताजीने जनकपुरमें। उस पूजासे वे प्रसन्न हुई थीं और माला खिसका दी थी। उन्होंने बोलकर कह दिया था—*'मनु जाहिं राचेउ मिलिहि सो बरु सहज सुंदर साँवरो'*—भवानीने सीताजीको वर देकर कृतार्थ कर दिया था, वैसे ही दूसरी शक्ति गंगाजी थीं। इनको अभी सुख-सौभाग्य नहीं मिला था तो उन्होंने कहा कि आज स्वयं जानकीजी हमारी पूजा कर रही हैं तो अपनेको सफल कर लेना चाहा।

तुलसीकृत श्रीरामचरितमानसके अनुसार श्रीसीताजी द्वारा गंगा-पूजनकी प्रार्थना सुरसरि पार करनेके बाद की गयी है, जबकि वाल्मीकीय रामायणके अनुसार गंगाकी बीच धारामें आकर श्रीसीताजी यह प्रार्थना करने लगीं और तटपर नावके पहुँचनेतक करती रहीं। अयोध्याकाण्डके ५२वें सर्गके श्लोक ८१ से ९१ तक इसका उल्लेख निम्न प्रकार आया है—

ततस्तैश्चालिता नौका कर्णधारसमाहिता।
शुभस्फ्यवेगाभिहता शीघ्रं सलिलमत्यगात्॥
मध्यं तु समनुप्राप्य भागीरथ्यास्त्वनिन्दिता।
वैदेही प्राञ्जलिर्भूत्वा तां नदीमिदमब्रवीत्॥
पुत्रो दशरथस्यायं महाराजस्य धीमतः।
निदेशं पालयत्वेनं गङ्गे त्वदभिरक्षितः॥
चतुर्दश हि वर्षाणि समग्राण्युष्य कानने।
भ्रात्रा सह मया चैव पुनः प्रत्यागमिष्यति॥
ततस्त्वां देवि सुभगे क्षेमेण पुनरागता।
यक्ष्ये प्रमुदिता गङ्गे सर्वकामसमृद्धिनी॥
त्वं हि त्रिपथगे देवि ब्रह्मलोकं समक्षसे।
भार्या चोदधिराजस्य लोकेऽस्मिन् सम्प्रदृश्यसे॥
सा त्वां देवि नमस्यामि प्रशंसामि च शोभने।
प्राप्तराज्ये नरव्याघ्रे शिवेन पुनरागते॥
गवां शतसहस्रं च वस्त्राण्यन्नं च पेशलम्।
ब्राह्मणेभ्यः प्रदास्यामि तव प्रियचिकीर्षया॥
सुराघटसहस्रेण मांसभूतौदनेन च।
यक्ष्ये त्वां प्रीयतां देवि पुरीं पुनरुपागता॥
यानि त्वत्तीरवासीनि दैवतानि च सन्ति हि।
तानि सर्वाणि यक्ष्यामि तीर्थान्यायतनानि च॥
पुनरेव महाबाहुर्मया भ्रात्रा च सङ्गतः।
अयोध्यां वनवासात् तु प्रविशत्वनघोऽनघे॥

संक्षिप्तार्थ यह है कि तदनन्तर मल्लाहोंने नाव चलायी। कर्णधार सावधान होकर उसका संचालन करता था। वेगसे सुन्दर डाँड़ चलानेके कारण वह नाव बड़ी तेजीसे पानीपर बढ़ने लगी। भागीरथीकी बीच धारामें पहुँचकर सती साध्वी विदेहनन्दिनी सीताने हाथ जोड़कर गंगाजीसे यह प्रार्थना की—

'देवि गंगे! ये परम बुद्धिमान् महाराज दशरथके पुत्र हैं और पिताकी आज्ञाका पालन करनेके लिये वनमें जा रहे हैं। ये आपसे सुरक्षित होकर पिताकी इस आज्ञाका पालन कर सकें, ऐसी कृपा कीजिये।'

'वनमें पूरे चौदह वर्षोंतक निवास करके ये मेरे तथा अपने भाईके साथ पुनः अयोध्यापुरीको लौटेंगे।'

'सौभाग्यशालिनी देवि गंगे! उस समय वनसे पुनः कुशलपूर्वक लौटनेपर सम्पूर्ण मनोरथोंसे सम्पन्न हुई मैं बड़ी प्रसन्नताके साथ आपकी पूजा करूँगी।'

'स्वर्ग, भूतल और पाताल—तीनों मार्गोंपर विचरनेवाली देवि! तुम यहाँसे ब्रह्मलोकतक फैली हुई हो और इस लोकमें समुद्रराजकी पत्नीके रूपमें दिखायी देती हो।'

'शोभाशालिनी देवि! पुरुषसिंह श्रीराम जब पुनः वनसे सकुशल लौटकर अपना राज्य प्राप्त कर लेंगे, तब

१-मानसगूढार्थचन्द्रिका, प्रस्तावनाखण्ड, दण्डीस्वामी प्रज्ञानानन्दजी सरस्वती, पृ० १२६।

मैं सीता पुनः आपको मस्तक झुकाऊँगी और आपकी स्तुति करूँगी।'

'इतना ही नहीं, मैं आपका प्रिय करनेकी इच्छासे ब्राह्मणोंको एक लाख गौएँ, बहुत-से वस्त्र तथा उत्तमोत्तम अन्न प्रदान करूँगी।'

'देवि! पुनः अयोध्यापुरीमें लौटनेपर मैं सहस्रों देवदुर्लभ पदार्थोंसे तथा राजकीय भागसे रहित पृथ्वी, वस्त्र और अन्नके द्वारा भी आपकी पूजा करूँगी। आप मुझपर प्रसन्न हों।'

'आपके किनारे जो-जो देवता, तीर्थ और मन्दिर हैं, उन सबका मैं पूजन करूँगी।'

'निष्पाप गंगे! ये महाबाहु पापरहित मेरे पतिदेव मेरे तथा अपने भाईके साथ वनवाससे लौटकर पुनः अयोध्या नगरीमें प्रवेश करें।' (वाल्मीकीय रामायण २।८१—९१)

पतिके अनुकूल रहनेवाली सती-साध्वी सीता इस प्रकार गंगाजीसे प्रार्थना करती हुई शीघ्र ही दक्षिणतटपर जा पहुँचीं।

लंका-विजयके बाद लौटते समय सीताजीद्वारा गंगा-पूजन—पुष्पक विमान गंगाको लाँघकर इस पार आ गया और प्रभुकी आज्ञा पाकर तटपर उतरा। तब सीताजीने गंगाजीकी बहुत तरहसे पूजा की और उनके चरणोंमें गिर पड़ीं। गंगाजीने प्रसन्न होकर आशीर्वाद दिया कि हे सुन्दरी! तुम्हारा सुहाग अचल हो।

सुरसरि नाघि जान तब आयो। उतरेउ तट प्रभु आयसु पायो॥
तब सीताँ पूजी सुरसरी। बहु प्रकार पुनि चरनन्हि परी॥
दीन्हि असीस हरषि मन गंगा। सुंदरि तव अहिवात अभंगा॥
(रा०च०मा० ६।१२१।७—९)

श्रृंगवेरपुरसे प्रयागको चलते समय श्रीजानकीजीने मनौती मानी थी कि पति और देवरसहित मैं सकुशल लौटूँ तो तुम्हारी पूजा करूँगी। उस मनौतीका ही पूजन श्रीजानकीजीने यहाँ किया। वाल्मीकीय आदि रामायणोंमें इस समयके पूजनका उल्लेख नहीं है। यहाँ *'आयसु पायो'* वाक्यांश 'सीता' के साथ है; क्योंकि पतिव्रता बिना आज्ञा किसी देवकी पूजा नहीं कर सकती। पूजनके सम्बन्धमें *'सुरसरी'* पद दिया। अर्थात् ये देवनदी हैं, देवरूप ही हैं। *'बहु प्रकार'* पदमें मन-वचन-कर्मसे पूजन, चरणोंमें पड़ना, वन्दनाकी सीमा आदि निहित हैं। *'पुनि'* शब्दसे यह अर्थ झलकता है कि एक बार पूर्व पूजन कर चुकी थीं, अब दूसरी बार पूजन करती हैं। *'पुनि'* का भाव यह भी है कि पूजा करनेपर अन्तमें चरणोंमें पड़ी। *'पुनि चरनन्हि परी'* का आशय यह है कि श्रीजानकीजीने मूर्तिकी पूजा की। *'तब सीताँ पूजी सुरसरी। बहु प्रकार पुनि चरनन्हि परी॥'* इस चौपाईमें पन्द्रह-पन्द्रह मात्राओंके चरण हैं। मात्राकी न्यूनताद्वारा जनाया कि पूजा करते समय श्रीसीताजीका हृदय अनेक भावोंसे भर गया, वे मनमें ही विचार कर-करके स्तुति कर रही हैं कि हे देवि! आपके आशीषसे ही मैं पति और देवरसहित सकुशल लौटकर आपका दर्शन कर रही हूँ। आपके ही आशीर्वादके कारण श्रीलक्ष्मणजी जीवित हो गये और आर्यपुत्रको जय प्राप्त हुई। आपके उपकारोंसे मैं उऋण नहीं हो सकती, अतः निरन्तर ऐसी ही कृपादृष्टि रखना, ऐसी बार-बार प्रार्थना करती हूँ। मन-ही-मन इस तरह विविध प्रकारसे स्तुतिकर कृतज्ञतापूर्वक बार-बार चरणोंमें पड़ रही हैं। इसीसे स्तुति करना नहीं लिखा। कण्ठ गद्गद है, नेत्र आनन्दाश्रु देवीके चरणोंपर बहा रहे हैं, शरीर रोमांचित हो रहा है, कभी-कभी बीच-बीचमें स्तम्भित हो जाती हैं, अंचल पसार-पसारकर प्रणाम करती हैं। इस प्रकारकी दशा अवर्णनीय है, यह जनानेके लिये चौपाईके चरणोंकी मात्रामें कमी की गयी।[१]

'दीन्हि असीस हरषि मन गंगा' में गंगाजीका आशीर्वाद देना उसी प्रकार है, जैसे पहले अयोध्याकाण्डमें गंगाजीमेंसे शब्द सुनायी दिये। *'हरषि मन'* से जनाया कि तुमको आशीर्वाद देनेमें मेरी वाणीकी सफलता है। आप नित्य हैं, अतः अचल अहिवातका आशीर्वाद सत्य

१-मानसपीयूष, षष्ठ सोपान—सम्पादक तथा लेखक अंजनीनन्दनशरण, छठा संस्करण, पृ० ६०९।

होगा। दूसरे सर्वेश्वरी होकर हमको बड़ाई दी है, यह समझकर हृदयमें हर्ष है। तीसरे आशीर्वाद प्रसन्न मनसे हो, तभी सफल होता है, अतः *'हरषि मन'* कहा।

हमारी संस्कृतिमें गंगाकी अमित महिमा है।

'धन्य देस सो जहँ सुरसरी'

सुरसरी पुनीत हैं, इनके चरित मनोहर हैं, ये विविध पापनाशिनी हैं। अतः जहाँ गंगाजी हैं, वह देश भाग्यवान् है; क्योंकि वहाँके वासी प्रभुके नखसे निकली हुई गंगाके *'दरस-परस-मज्जन'* से कृतार्थ और पावन होते हैं।

गोस्वामी तुलसीदासजीने कवितावलीके उत्तरकाण्डके पद-क्रमांक १४५ तथा १४६ में देवनदी गंगाजीके माहात्म्यका अद्वितीय वर्णन किया है—

देवनदी कहँ जो जन जान किए मनसा, कुल कोटि उधारे।
देखि चले झगरैं सुरनारि, सुरेस बनाइ बिमान सँवारे॥
पूजाको साजु बिरंचि रचैं तुलसी, जे महातम जाननिहारे।
ओककी नीव परी हरिलोक बिलोकत गंग! तरंग तिहारे॥

अर्थात् जिस मनुष्यने गंगास्नानके लिये मनमें जानेका विचारमात्र कर लिया, उसकी करोड़ों पीढ़ियोंका उद्धार हो गया। उसे चलता देखकर [उसे वरण करनेके लिये] देवांगनाएँ आपसमें झगड़ने लगती हैं, देवराज इन्द्र उनके लिये विमान बनाकर सजाने लगते हैं, ब्रह्माजी जो कि उनके माहात्म्यको जाननेवाले हैं, उनके पूजनकी सामग्री जुटाने लगते हैं और हे गंगाजी! तुम्हारी तरंगोंके दर्शन होते ही विष्णुलोकमें [उसके लिये] घरकी नींव पड़ जाती है अर्थात् उसका विष्णुलोकमें जाना सुनिश्चित हो जाता है।

ब्रह्मु जो ब्यापकु बेद कहैं, गम नाहिं गिरा गुन-ग्यान-गुनीको।
जो करता, भरता, हरता, सुर-साहेबु, साहेबु दीन-दुनीको॥
सोइ भयो द्रवरूप सही, जो है नाथु बिरंचि महेस मुनीको।
मानि प्रतीति सदा तुलसी जलु काहे न सेवत देवधुनीको॥

अर्थात् जिस परब्रह्म परमात्माको वेद सर्वव्यापी कहते हैं, जिसके गुण और ज्ञानकी थाह गुणीजन और शारदा भी नहीं पा सकते; जो संसारकी उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय करनेवाला, देवताओंका स्वामी तथा लोक-परलोकका प्रभु है, जो ब्रह्मा, शिव और मुनिजनोंका भी स्वामी है, निश्चय वही जलरूप हो गया है। तुलसीदासजी कहते हैं—अरे, विश्वास करके सर्वदा श्रीगंगाजलका ही सेवन क्यों नहीं करता?

महाकवि पद्माकरने भगवान् शंकरकी महिमा बढ़ानेवाले तत्त्वोंमें श्रीगंगाजीको सर्वोपरि निरूपित किया है। उन्होंने यहाँतक कहा है कि त्रिनेत्रधारी, चिताकी भस्म रमानेवाले, जटाजूट बाँधे कैलासपर्वतपर रहनेवाले, भंग पीनेवाले, प्रेतोंके साथ नंगे रहनेवाले शंकरजी यदि अपने शीशपर गंगाको धारण न करते तो तीनों लोकोंके स्वामी कैसे कहलाते, वेद-पुराण उनका गुणगान कैसे करते? हलाहल विष उनके गलेमें कैसे ठहरता? और कौन उनको पूछता?

लोचन असम अंग भसम चिता को लाइ,
तीनों लोक नायक सो कैसे कै ठहरतो।
कहै पद्माकर बिलोकि इमि ढंग जाके
बेदहूँ पुरान गान कैसे अनुसरतो॥
बाँधे जटाजूट बैठि परबत-कूट माहिं
महाकालकूट कहौ कैसे कै ठहरतो।
पीवै नित भंगै, रहै प्रेतन के संगै,
ऐसे पूछतो को नंगै जो न गंगै सीस धरतो॥

गौतम बुद्धने प्राणान्तके समय कुशीनारामें अपने शिष्य आनन्दको कहा—'गंगाजलकी कुछ बूँद मेरे गलेके अन्दर डाल दो""तुम्हें शायद विदित न हो कि माँ गंगाकी उपधारा पवित्र हिरण्यवती है""तुम उस महिमामय जलको गंगाजलकी तरह मुझे अपने गलेके नीचे उतार लेने दो।'

पूनाके पेशवाओंको गंगाजलपर इतनी श्रद्धा थी कि उसके लिये काफी रुपये खर्चकर एक बहँगी गंगाजल काशीसे पूना पहुँचाया जाता था। बाजीराव पेशवा अपने निजी विश्वासके अनुसार अपनेको कर्जमुक्त करनेके लिये गंगाजलका सेवन करते थे। विजयनगरके राजा कृष्णदेवरायको मृतप्राय होनेपर जब गंगोदक दिया जाने लगा तो वे धीरे-धीरे बिलकुल ही स्वस्थ हो गये थे। [प्रेषक—श्रीविमलकुमारजी लाभ]

राजा पुण्यकीर्तिकी गंगाभक्ति

काशी-रहस्यमें एक बड़ी सुन्दर कथा आती है। पाण्ड्य देशके धर्मात्मा नरेशका नाम पुण्यकीर्ति था। वे अत्यन्त शास्त्रानुरागी, सदाचारी और संयमी तो थे ही, त्रैलोक्यपावनी गंगाजीके चरणोंमें उनकी अनन्य श्रद्धा एवं भक्ति थी। वे अपने लोक-परलोकका एकमात्र आधार ही नहीं, अपना सर्वस्व करुणामूर्ति गंगाजीको ही समझते थे। वे पवित्रतम गंगाजलके अतिरिक्त अन्य किसी जलका उपयोग नहीं करते थे।

पुण्यात्मा नरेश पुण्यकीर्तिकी अद्भुत भक्तिसे प्रसन्न होकर भक्तानुग्रहमूर्ति परमपावनी गंगाने प्रकट होकर उन्हें वर माँगनेके लिये कहा।

'करुणामयि! यदि आप मुझे वर प्रदान करना चाहती हैं', गद्गद कण्ठसे विनीत वाणीमें पुण्यकीर्तिने माता गंगासे निवेदन किया—'तो मुझपर ऐसा अनुग्रह कीजिये, जिससे मैं प्रतिदिन अमृतरूपिणी आपका दर्शन कर सकूँ।'

'यदि तुम्हें प्रतिदिन मेरे दर्शनकी इच्छा है तो मेरे घर आओ।' गंगाजीने स्नेहपूर्ण उत्तर दिया।

'ब्रह्माण्डस्वरूपिणी जननि! आपका घर कहाँ है?' चकित होकर नरेशने मातासे निवेदन किया। 'जगदात्मस्वरूपा माता! मैं तो आपको सम्पूर्ण विश्वमें देखता हूँ। आपका गृह-विशेष मैंने अबतक न तो देखा और न सुना ही है। कृपापूर्वक आप ही बता दें।'

'नृपसत्तम! मैं निश्चय ही ब्रह्माण्डव्यापिनी हूँ।' भवबन्धविमोचिनी गंगामाताने उत्तर दिया। 'तथापि लोकोद्धारार्थ जलप्रवाहके रूपमें काशी मेरा गृह है, जहाँ मैं शिवके साथ निवास करती हूँ। काशीमें सर्वात्मा विष्णु, शिव, पार्वती, सूर्य, ब्रह्मा, सभी देवगण, ऋषि और योगी—सभी परब्रह्मसुखकी इच्छासे निवास करते हैं। अतएव मनुष्य विषय-पराङ्मुख होकर, इन्द्रियोंको वशमें करके शान्तिपूर्वक वहाँ रहे तो निश्चय ही उसे अमृतत्वकी प्राप्ति होती है।'*

त्रैलोक्यतारिणी गंगाके अन्तर्धान होनेपर पुण्यकीर्ति नरेशने अपने पुत्रको राज्यपदपर अभिषिक्त किया और वे श्रीगणेशका स्मरणकर सपत्नीक काशीके लिये प्रस्थित हुए।

× × ×

काशीवास करते हुए गंगा-स्नानकी अमित महिमा है। वह धर्म-प्रेरक एवं मोक्षकी देहली है। काशी और गंगामें अभेद सम्बन्ध है, यह मोक्षार्थियोंको स्मरण रखना चाहिये। और—

काश्यां गङ्गा सेवनीया प्रयत्नैः सर्वैर्लोकैः सिद्धसंघैर्दुरापा।
दृष्टा स्पृष्टा स्नानपानादिभिश्च मोक्षद्वारं सम्प्रयच्छेद् वृषाढ्या॥

(काशी-रहस्य २१। ३३)

'काशीतटपर बहनेवाली गंगाजीका सब लोगोंको प्रयत्नपूर्वक सेवन करना चाहिये। वैसे सिद्धगणोंको भी उनकी प्राप्ति दुर्लभ है। दर्शन एवं स्पर्श किये जानेपर भी, फिर डुबकी लगानेपर तथा पान किये जानेपर तो कहना ही क्या, वे जीवोंके लिये मोक्षका द्वार ही खोल देती हैं; कारण, वे धर्मसे सदा सम्पृक्त रहती हैं।'

यह दुर्लभ अविमुक्त वाराणसी और भुवनपावनी गंगा महान् पुण्य एवं चराचरात्मा श्रीविश्वनाथजीके अनुग्रहसे मिलती हैं—'**काश्यां गङ्गा प्राप्यते पुण्यभारैर्विश्वेशस्यानुग्रहः साधु चेत्स्यात्।**' (काशी-रहस्य २१। ४५)

---

* ब्रह्माण्डव्यापिका चाहमवश्यं राजसत्तम। तथापि काश्यां मद्गेहं रमे भर्त्रा सुसङ्गता॥
काश्यां सर्वात्मना विष्णुः शिवौ सूर्यो विधिस्तथा। अन्येऽपि देवप्रवरा ऋषयो योगिनस्तथा॥
वसन्ति काश्यां सततं परब्रह्मसुखार्थिनः। जितेन्द्रियाणां शान्तानां विषयग्रस्तचेतसाम्॥
जायते परमानन्दो ह्यकल्मषधियां सदा। (काशी-रहस्य २१। ६३—६६)

जब गंगाजी स्वयं पधारीं

[भक्त जयदेवजीपर गंगाकृपा]

(श्रीअनिलजी पोरवाल)
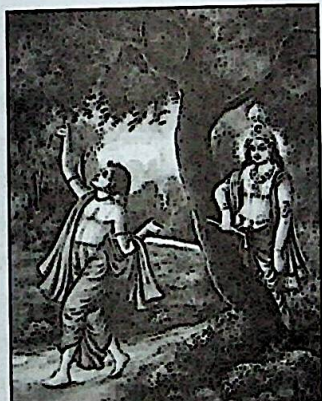
'यो मद्भक्तः स मे प्रियः' श्रीभगवान् कहते हैं कि 'मेरा भक्त सदा ही मुझे प्रिय होता है।' भक्तको किंचित् भी कष्ट पहुँचे, यह भक्तके आराध्यको तनिक भी सहन नहीं होता है। ऐसे अनेकों उदाहरण देखनेमें आते हैं कि भक्तोंका थोड़ा-सा कष्ट भी उनके आराध्यदेवसे देखा नहीं गया और वे भक्तोंकी चाकरी करने लगे, करुणानिधान जो हैं।

'गीतगोविन्द' के रचयिता महाकवि भक्तप्रवर जयदेवजीपर भी पतितपावनी गंगाजीकी ऐसी ही कृपा हुई थी। बात उस समयकी है, जब भक्तशिरोमणि जयदेवजी बहुत वृद्ध हो गये थे, परंतु नित्य स्नानहेतु गंगाजीकी धारापर जाते थे। जयदेवजीके आश्रमसे गंगाजीकी धारा अठारह कोस दूर थी। उनके लिये सुदूर गंगा-स्नानके लिये जाना कष्टप्रद था, परंतु श्रद्धाके आगे शारीरिक कष्टोंकी चिन्ता भक्तोंको नहीं रहती है।

इतने प्रगाढ़ प्रेम, समर्पण और श्रद्धाको देखकर गिरिराजकिशोरी गंगाजीने जयदेवके भारी कष्टनिवारणार्थ और उन्हें सुख प्रदान करनेके लिये स्वप्न देकर कहा—'जयदेव! स्नानके लिये इतनी दूर आनेका कष्ट मत पाओ, केवल ध्यानमें ही स्नान कर लिया करो।'

कहते हैं, जयदेवजीने उनका आग्रह स्वीकार नहीं किया। प्रगाढ़ श्रद्धा और पूर्ण समर्पण ही तो भक्तिका प्रथम सोपान है। अपने आराध्यके प्रति अचल निष्ठा भक्तको अपने पथसे डिगने नहीं देती। भक्त कवि जयदेवजी कहाँ माननेवाले थे। कुछ ही समय पश्चात् सर्वपापनाशिनी त्रिपथगा गंगाजीने फिर स्वप्नमें आकर कहा कि 'ध्यानमें स्नान तुम्हें स्वीकार नहीं है तो मैं तुम्हारे आश्रमके निकट सरोवरमें आ जाती हूँ। तुम्हारे आश्रमके निकट सरोवरमें आनेसे तुम्हें इतनी दूर आनेके कष्टसे मुक्ति तो मिलेगी ही गंगा-स्नानका लाभ भी मिलेगा।' इसपर भक्त जयदेवजीने जिज्ञासा की कि आपके सरोवरमें विराजित हो जानेका प्रमाण क्या होगा? तब भागीरथी गंगाजीने उत्तर दिया कि 'सरोवरमें कमल खिले हुए देख लो तब निश्चय मान लेना कि मेरा आगमन हो गया है।' इस प्रकार सर्वलोकमहेश्वर भगवान् महादेवके शोभायमान जटामुकुटमें विराजित, समस्त ब्रह्माण्डोंकी अधिष्ठात्री एवं मंगलमयी गंगाजीकी असीम अनुकम्पा महाकवि जयदेवजीपर हुई, वे नित्यप्रति अपने आश्रमके निकट सरोवरमें ही स्नान करने लगे।* भक्त स्वयंका उद्धार तो करता ही है, साथ ही अपने परिवार, समाज और राष्ट्रका भी कल्याण करता है। धन्य हैं जयदेवजी और धन्य है उनकी गंगाभक्ति!

---

* भक्तमालके प्रसिद्ध टीकाकार श्रीप्रियादासजी महाराजने इस घटनाका वर्णन निम्न कवित्तमें इस प्रकार किया है—

देवधुनी सोत हो अठारै कोस आश्रम तैं सदाई स्नान करैं धरैं जोग्यताई कौं।
भयो तन वृद्ध तऊँ छोड़ें नहीं नित्य नेम प्रेम देखि भारी निशि कही सुखदाई कौं॥
आवौ जिनि ध्यान करौ, करौ मत हठ ऐसो मानी नहीं आऊँ मैं ही जानौं कैसे आई कौं।
फूले देखौ कंज तब कीजियो प्रतीति मेरी भई वही भांति सेवैं अबलौं सुहाई कौं॥

विद्यापतिकी गंगाभक्ति

(डॉ० श्रीउदयनाथजी झा 'अशोक')

मैथिल-कोकिल महाकवि विद्यापति किसी परिचयकी अपेक्षा नहीं रखते। वे जितने बड़े संस्कृत-प्राकृत और अवहट्टके कवि-लेखक थे, उतने ही मातृभाषा मैथिलीके मर्मज्ञ कवि भी; पर इससे भी अधिक वे भक्त थे। यह तो विवादका विषय है कि विद्यापति शैव थे कि वैष्णव, परंतु उनके भक्त होनेमें कोई सन्देह नहीं। उनकी रचनाओंमें शिवभक्तिके साथ-साथ राधा-कृष्ण, भगवती दुर्गा और गंगाजीकी भक्तिसे सम्बन्धित पद प्राप्त होते हैं। गंगाजीकी वन्दना करते हुए वे कहते हैं—

ब्राह्मकमंडलु बास सुबासिनि, सागर नागर गृहबाले।
पातक महिष बिदारण कारण, धृतकरबाल बीचि-माले।
जय गंगे जय गंगे। शरणागत भय भंगे॥
सुर मुनि मनुज रचित पूजोचित, कुसुम बिचित्रित तीरे।
त्रिनयन मौलि जटाचय चुम्बित, भूमि भूषित सित नीरे।

अपनी दूसरी रचनामें विद्यापति गंगाकी स्तुति करते हुए कहते हैं कि हे देवनदीकी धारा! तुम्हीं प्रभु हो, तुम्हीं पतितोंका उद्धार करती हो। दूरसे ही हमने आपकी धारा देख ली है, जिससे अब हमारे शरीरमें पापका नाम भी शेष नहीं रहा—

तोहें प्रभु सुरसरि धार रे, पतित क करय उधार रे।
दुरसों देखल गांग रे, पाप न रहले आंग रे॥
सुरसरि सेवल जानि रे, एहन परसमनि पानि रे।
भनहिं विद्यापति भान रे, सुपुरुष गुनक निधान रे॥

इन्होंने मिथिलेश पद्मसिंहकी रानी विश्वासदेवीके शासनकालमें धर्मशास्त्रीय कृति 'गंगावाक्यावली' की रचना की थी। यह रचना एक अज्ञात मैथिलकर्तृक 'गंगादानवाक्यावली' से भिन्न और प्राचीन है।

विद्यापति गंगाजीके परम भक्त थे। प्रतिवर्ष अपने परिवारके साथ वे गंगाके तटपर कल्पवास किया करते थे। एक बार वहाँसे आते समय महाकविने बड़े करुण-मनसे कहा कि—हे माँ! हमने बहुत-सारा सुख आपकी सन्निधिमें पाया है, पर आज आपको छोड़कर जाते हुए बड़ा ही कष्ट हो रहा है, आँखोंसे आँसू बह रहे हैं। हे विमलतरंगे! पुण्यसलिले गंगे! आपसे करबद्ध प्रार्थना है कि फिर दर्शन देनेकी अनुकम्पा प्रदान करें। कवि लिखते हैं—

बड़ सुख सार पाओल तुअ तीरे। छोड़इत निकट नयन बह नीरे॥
करजोरि बिनमओं बिमल तरंगे। पुन दरसन होए पुनमति गंगे॥
एक अपराध छेमब मोर जानी। परसल माय पाए तुअ पानी॥
कि करब जप-तप जोग धेआने। जनम कृतारथ एकहि सनाने॥
भनइ बिद्यापति समदओं तोही। अन्तकाल जनु बिसरह मोही॥

विद्यापतिने यहाँ 'समदओं' शब्दका कितना सटीक प्रयोग किया है। वे कहते हैं कि आपसे मेरा निवेदन है कि मेरे अन्तिम समयमें आप मुझे न भूलें। यहाँ महाकवि गंगा-तटसे विदा हो रहे हैं और विदाईके समयमें 'समदाउन' की प्रथा है। अतः 'समदओं' पद उसी अवसरके 'निवेदन' का है।

महाकवि अपनी दूसरी 'गंगा-स्तुति' में कहते हैं कि माँ गंगाकी सेवा करके मुझे क्या मिला? उस

पुण्यसलिला माँ गंगाको तो महाराज भगीरथ लेकर चले गये। देवाधिदेव शंकरके द्वारा गंगाजीके दानसे जहाँ उनकी जटा सूनी हो गयी, वहीं मस्तकपर विराजमान चन्द्रमा भी मलिन पड़ गये। गंगावतरणके कारण महाकवि रास्ता बनानेमें लग गये। वे दुकानदारोंसे कहते हैं कि तुम लोग अपनी-अपनी दुकान, हाट-बाजार उठा लो; क्योंकि इसी मार्गसे स्वर्गंगाकी धारा आनेवाली है। यहाँ भी विद्यापति गंगाजीसे वही पुरानी प्रार्थना करते हैं कि मेरे अन्तकालमें आप मुझे अपनी शरणमें ले लें—

सुरसरि सेवि मोरा किछुओं न भेला। पुनमति गंगा भगीरथ लए गेला॥
जखन सदाशिव गंगा कयल दाने। सुन भेल जटा मलिन भेल चाने॥
उठबह बनियाँ तों हाट-बजारे। एहि पथ आओत सुरसरि धारे॥
छोट मोर भगीरथ छितनी कपारे। से कोना लओताह सुरसरि धारे॥
विद्यापति भन विमल तरंगे। अन्त सरन देब पुनमति गंगे॥

वायुपुराणमें कहा गया है कि '**मरणं जाह्नवीतीरे अथवा पुत्रसन्निधौ**' इसलिये कवि-कोकिलको जब अपनी मृत्युका आभास हुआ तो वे अपने पारिवारिक सदस्योंके साथ गंगा-लाभकी कामनासे निकल पड़े, पतितपावनी माँ गंगाकी शरणमें। '*अन्त सरन देब पुनमति गंगे*' तो उनकी अभिलाषा ही थी। घरसे यात्रा प्रारम्भ करते समय महाकवि विद्यापति कहते हैं—

मोर माथे धरि दिय हाथे॥
चललहुँ सुरसरि। धन-धाम परिहरि॥
तोहर अभय वर साथे॥

अर्थात् अब मैं घर-द्वार और समाजको छोड़ गंगाजीकी शरणमें जा रहा हूँ। हे माँ! मैं कुशलपूर्वक आपके पास पहुँच सकूँ, इसलिये आपका अभय वरदान मेरे साथ हो, हमारे माथेपर आप अपना हाथ रखें। अपने परिजनोंको अन्तकालकी इस विषम परिस्थितिमें भी सान्त्वना देना नहीं भूलते। वे कहते हैं—'*जे मोर बान्धव लोक, मन ने करथु से शोक। कालगति अछि परमाने।...*'

जब वे मऊ-वाजितपुर (आजका विद्यापतिनगर) पहुँचे तो उन्होंने अपनी पालकी रुकवा दी। इससे आगे नहीं बढ़ेंगे, देखते हैं हमारी माँको हमारे ऊपर कितनी ममता है? '*सुनिअ डमरु धुनि, शिवशंकर पुनि, आब एतहिं करु विसराम।" भन कवि विद्यापति, दिय देवि दिव्य गति, पशुपतिपुर पहुँचाय।"*' विद्यापति महान् शिवभक्त थे, जिनकी सेवामें स्वयं शंकर 'उगना' के रूपमें पधारे थे। इसीलिये वे 'पशुपतिपुर' की कामना करते हैं। वे गंगाजीसे न केवल दिव्य गतिकी प्रार्थना करते हैं, बल्कि कहीं-न-कहीं उनके मनमें अपनी आराध्याके प्रति अटूट विश्वास भी है कि वे हमें कभी निराश नहीं करेंगी। तभी तो वे कहते हैं कि अपनी श्रद्धा और भक्तिसे मैं तो इतनी दूर आ गया हूँ, क्या मेरे लिये माँ गंगा इतनी दूर भी नहीं आयेंगी?

एतेक दूर हम चलि अयलहुँ माँ नहि अओतिह किछुओ दूर।

हाय री! माँकी ममता, गंगाका स्नेह! कोसों दूर होनेपर भी वह रातमें ही विद्यापतिके पड़ावतक कल-कल करती आ पहुँची। सुबह होते ही किसीको अपनी आँखोंपर विश्वास नहीं हो पा रहा था—'क्या एक भक्तके लिये गंगा अपनी धारा बदल लेंगी?' कुछ दिनोंतक विद्यापति वहीं अपनी माँके शरणमें रहे, पर एक दिन जब कार्तिक शुक्ला त्रयोदशीकी तिथि आयी, तो उन्होंने अपनी पुत्री 'दुल्लहि' से कहा—

दुल्लहि तोहरि कतय छथि माय। कहुन ओ आवथि एखन नहाय॥
विद्यापतिक आयु अवसान। कार्तिक धवल त्रयोदशि जान॥

अपनी जिस आराध्यासे विद्यापति सदैव एक ही प्रार्थना किया करते थे कि 'अन्त समयमें दर्शन देना, मुझे कभी भूल न जाना', सो इस बातका माँ गंगाने भी मान रखा और विद्यापतिने भी वायुपुराणकी दोनों बातें सिद्ध कर दीं—'**मरणं जाह्नवीतीरे अथवा पुत्रसन्निधौ।**'

बिट्टू मिश्रकी गंगाभक्ति

(श्रीनागानन्दजी)

एक समय मिथिलामें बिट्टू मिश्र और मिट्टू मिश्र नामक दो भाई रहा करते थे, ज्येष्ठ तपस्वी और ऋषिकल्प थे, जबकि कनिष्ठ परम कर्मकाण्डी और मीमांसक। कहते हैं बिट्टू मिश्र गंगाके भक्त और अत्यन्त सिद्ध योगी थे। सद्य:प्राप्त गंगाजलसे वे प्रत्यह तर्पण-पूजा-स्नपन आदि किया करते थे। गंगातटसे कोसों दूर रहकर भी प्रतिदिन वे गंगास्नान करते ही थे। एक बार इसकी सूचना मिथिलेशको लग गयी, जो नास्तिक तो नहीं, पर गंगाजीके घोर विरोधी थे।

इसका कारण यह था कि एक बार जब राजा सपरिवार गंगास्नानको गये तो उनकी पत्नी, विधवा माता और सभी सन्तानें गंगामें नहाते समय डूब गयीं। तभीसे राजाकी आस्था गंगाजीके ऊपरसे उठ गयी और वे हर उस व्यक्तिको प्रताड़ित करते, जो गंगास्नानको जाते थे। यह जानकर कि बिट्टू मिश्र नित्य गंगास्नान करने जाते हैं, पहले तो उन्हें विश्वास ही नहीं हुआ; क्योंकि बिट्टूकी कुटियासे गंगाजी कोसों दूर थीं, पर गुप्तचरोंसे भी समाचार प्राप्तकर राजाने बिट्टूको गंगास्नान करनेसे मना कर दिया। जब बिट्टू नहीं माने, तो उन्हें एक कालकोठरीमें बन्द करवा दिया।

एक दिन गंगा-दशहराके अवसरपर बिट्टू चारों ओरसे बन्द कमरेकी सुरक्षामें लगे प्रहरियोंके रहनेपर भी ब्राह्ममुहूर्तमें ही अपने योगबलसे तीर्थराज प्रयाग पहुँच गये। स्नान-ध्यानकर पुनः अपने प्रकोष्ठमें लौट आये। जब राजाको किसीने इसकी सूचना दी तो उन्होंने इन्हें बुलाकर पूछा तो बिट्टूने कहा कि 'आपको पता तो आजके बारेमें चला है, पर मैं प्रतिदिन विभिन्न स्थानोंपर जाकर गंगास्नान करता रहा हूँ।' राजाने इनसे परीक्षा-बुद्धिसे कहा कि 'यदि ऐसा है तो मुझे भी प्रयाग ले जाकर यहाँ ले आइये।' बिट्टूने कहा—'मैं ऐसा कर तो दूँगा, पर बादमें मैं ब्रह्मलीन हो जाऊँगा।' वही हुआ, राजा गंगाजीके प्रति आस्थावान् तो हो गया, किंतु लौटनेके बाद बिट्टू मिश्रकी मृत्यु हो गयी। राजाने बिट्टूकी कुटियावाले परिसरका नाम उन्हींके नामपर 'बिट्टू' कर दिया, जो आज मधुबनी जिलाके अन्तर्गत 'बिट्ठो' कहलाता है। इन्हीं बिट्टूके प्रसंगमें कहा जाता है कि वे त्रिदेहधारी थे, एक समयमें तीन स्थानोंपर रहा करते थे—

जे नर त्रिदेह कहबैत छला, एहि मिथिलामे जनश्रुति महान्।
ओहि बिट्टू मिश्रक डीह देखू, सम्प्रति बिट्ठोमे अछि विद्यमान॥

संत रैदासकी गंगानिष्ठा

(श्रीजगदीशचन्द्रजी मेहता, एम० ए० (इतिहास, हिन्दी), बी० एड०)

मेरे माता-पिता 'हर हर गंगे' कहते हुए स्नान किया करते थे। बचपनसे ही कानोंमें उक्त शब्द पड़ते रहते थे। मैंने भी 'हर हर गंगे' बोलकर स्नान प्रारम्भ किया; क्योंकि माता-पिता, संत, गुरु जिस मार्गपर चलते हैं, उस मार्गपर चलनेमें जीवनमें सुख, आनन्द और सफलता प्राप्त होती ही है। शास्त्रोंका कथन है कि 'महाजनो येन गतः स पन्थाः' एक दिन पिताजीसे पूछ लिया कि आप 'हर हर गंगे' कहकर स्नान क्यों करते हो?

पिताजीने कहा—गंगा एक पवित्र नदी है, जिसे भागीरथी भी कहते हैं। सामान्य जलमें इसके आवाहनसे उस जलमें गंगाका प्रवेश हो जाता है। गंगाका नाम

लेनेसे, दर्शन करनेसे, आचमन करनेसे, स्नान करनेसे शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक निरोगता आती है, उन्नति होती है एवं लौकिक और पारलौकिक सफलता मिलती है।

गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धुकावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु॥

उक्त श्लोक बोलनेसे सभी नदियोंका आवाहन हो जाता है।

गंगाजीमें जाकर अपवित्र जल भी पवित्र हो जाता है। बेटा! 'हर हर गंगे' सम्बन्धी एक प्रसिद्धि* तुमको सुनाता हूँ, ध्यानसे सुनो।

प्राचीनकालमें रैदास नामके एक संत थे। जूते बनाना और उनकी मरम्मत करना उनका परम्परागत व्यवसाय था। एक दिन रैदास अपने घरके बाहर बैठे जूते गाँठ रहे थे। उसी रास्तेसे एक पण्डितजी गंगा-स्नानको जा रहे थे। चलते-चलते उनकी चप्पल टूट गयी। रास्तेमें रैदासजीको पाकर वे चप्पल ठीक करवाने खड़े हो गये। पण्डितजी बोले—'भगतजी! मेरी चप्पल ठीक कर दो। मुझे गंगाजी जाना है। रैदासने चप्पल ली और पण्डितजीको आसन देकर बैठाया। रैदास पण्डितजीकी चप्पल ठीक करने लगे।

पण्डितजी बोले, 'भगत! आज गंगास्नानका इतना बड़ा पर्वका दिन है। हम लोग दस-दस कोससे चलकर आये हैं। तुम्हारे यहाँसे तो गंगा करीब एक कोसकी ही दूरीपर हैं। क्या तुम स्नान करने नहीं जाओगे?

रैदास चप्पल ठीक करते हुए बोले—महाराज! मैं गरीब आदमी गंगा-स्नान करता रहूँ तो बाल-बच्चोंका पालन-पोषण कैसे हो सकता है? पण्डितजी बोले—तुम मूर्ख हो। गंगामें स्नान करनेके महत्त्वको नहीं जानते हो! तुम्हारा न जाना ही ठीक है। तुम्हारे गंगामें स्नान करनेसे गंगा मैली हो जायँगी और तुम्हारे छींटे लगनेसे दूसरे भी अपवित्र हो जायँगे। तुमने ठीक ही सोचा है।

तत्त्वज्ञानी भगत रैदासने पण्डितजीकी बातोंपर ध्यान नहीं दिया। पण्डितजीका कार्य पूर्ण करके चप्पल पण्डितजीके सामने रख दी। पण्डितजी दो पैसा निकालकर रैदासको देने लगे। रैदास बोले—'मैं आपसे मजूरी नहीं लेना चाहता। मेरा एक काम कर दीजिये।' पण्डितजीने पूछा—क्या काम है?

रैदास बोले—ये दो सुपारी मेरी ओरसे गंगाजीको भेंट चढ़ा देना। पण्डितजीने सुपारी लेकर झोलेमें डाल लीं और गंगाकी ओर चल दिये।

पण्डितजीने गंगाघाटपर पहुँचकर स्नान किया, तिलक लगाकर पाठ-पूजा की। उसके बाद जैसे ही चलने लगे तो उन्हें रैदासकी बात याद आ गयी। पण्डितजी गंगाको सुनाकर बोले—रैदासने आपके लिये दो सुपारियाँ भेजी हैं। गंगा माँने ज्यों ही सुना, जलमेंसे उसी समय एक हाथ बाहर निकाला। पण्डितजीने 'हर हर गंगे' बोलकर दो सुपारी हाथपर रख दीं। सुपारियाँ लेकर गंगा माँ अपनी जलराशिमें प्रवेश कर गयीं।

पण्डितजी आश्चर्यसे देखते रहे। थोड़ी देरमें ही गंगाजीका दूसरा हाथ बाहर निकला और एक सुन्दर सोनेके कंगनको प्रसादरूपमें देकर गंगाजीने कहा कि रैदासको दे देना। रैदासका कार्य करनेसे पण्डितजीने भी गंगाके दर्शन पा लिये।

बिनु सतसंग बिबेक न होई। राम कृपा बिनु सुलभ न सोई॥

पण्डितजीके मनमें लोभ जागा। मनमें सोचा रैदासको क्या मालूम पड़ेगा कि गंगाजीने प्रसाद दिया है? वे सोनेका कंगन अपने घर ले गये। घर पहुँचते ही पण्डितजीने ब्राह्मणी (पत्नी)-को कंगन दिखाया। देखकर वह खुश हो गयी।

ब्राह्मणीने अपनी गरीबी और भिखमंगीका जीवन छुड़ानेके लिये सत्य राहको छोड़कर कुमार्गकी राहपर चलकर कंगन बेचनेके बारेमें सोचा। पण्डित और ब्राह्मणी दोनोंने बाजारमें जाकर जौहरीको दो लाख रुपयोंमें कंगन

* संत रैदासजीसे सम्बद्ध यह प्रसिद्धि अनेक रूपोंमें प्राप्त होती है। कहीं जूतेकी बात आयी है, कहीं चप्पलकी और कहीं सुपारीकी बात आयी है तो कहीं सिक्केकी।

बेच दिया। जौहरीने दरबारमें जाकर राजाको पाँच लाखमें कंगन बेचा। राजाने रानीको कंगन दिया। रानी हीरे-मोती, जवाहिरातजड़ा कंगन देखकर बोली कि इसका एक और जोड़ हो जाय तो दोनों हाथोंकी सुन्दर शोभा हो जाय। राजाने फौरन जौहरीको बुलवाया। कंगनका जोड़ लानेको कहा। जौहरी घबराया। अब क्या करे ? जौहरीने ब्राह्मणी और पण्डितको दरबारमें बुलवाया। उन्होंने राजाको कंगन पानेकी सारी सच्ची घटना कह सुनायी, फिर भी राजाका मन शान्त नहीं हुआ। राजा बोले—जो कुछ भी कहना हो, रैदासके पास जाकर कहो। ब्राह्मण सोचने लगा कि मुझे तो रानीके लिये कंगनका एक जोड़ लाकर देना ही पड़ेगा अन्यथा जेलकी हवा और अनेक कष्ट उठाने पड़ेंगे। दोनों ही बड़े घबराये। पण्डित और ब्राह्मणी रैदासके पास पहुँचे। पोटली रैदासके सामने रख दी और अपनी आपबीती कह सुनायी। साथ ही गिड़गिड़ाते बोले—भगतजी! हमने आपको अपशब्द कहे हैं, आपसे धोखा किया है। परमात्मासे कोई बात छिपती नहीं है। गंगाका प्रसाद आपका ही था, आपको हमने नहीं दिया। हम आपके अपराधी हैं। आप हमें क्षमा करें। आप तत्त्वज्ञानी हैं, सच्चे भगत हैं और भगवान्‌का वास आपके पास है। भगतने कहा—पण्डितजी! यह रुपयोंकी पोटली मुझे नहीं चाहिये, इसे तो आप ले जाइये। गंगा माई मेरी मजूरी (मेहनत)-से खानेभरको देती है। गंगाजीतक जानेका मेरे पास अभी वक्त (समय) नहीं है। मैं चाहता हूँ कि राजाकी नाराजगी और आपकी परेशानी मिट जाय तो आप भी आनन्दसे सच्चाईके साथ अपना जीवनयापन कर सकते हैं। भगत रैदासने चाम भिगोनेवाली कठौतीमें सुपारी रखकर कपड़ा डालकर गंगाका स्मरणकर कहा—'हर हर गंगे' ***'मन चंगा तो कठौती में गंगा।'*** कपड़ा उठाते ही गंगा माँकी कृपासे उसमें ठीक वैसा ही कंगन दिखायी दिया।

यह रैदासका सम्पूर्ण अनुराग ही निष्काम भक्ति, अचल भक्ति एवं अनासक्ति भक्तिका प्रतीकरूप रहा।

रैदास भगतने पण्डितजीको कंगन देकर कहा—यह लीजिये, जाकर राजाको दे आइये और रुपयोंकी पोटली अपने घर ले जाइये।

'मैं गंगा हूँ'

(श्रीगनेशीलालजी शर्मा)

किया आचमन, प्रक्षालन, कितनी ही बार नहाये तुम।
कलिमल और कलुषता, धोने मेरे तट पर आये तुम॥
मैं गंगा हूँ....

आ-आकर मेरे आँचल को, कूड़े-करकट से भरते हो।
गंदे नालों के पानी से, क्यों! मुझको दूषित करते हो?॥
मैं गंगा हूँ....

मेरे मन में पर किंचित भी, द्वेष, ईर्ष्या, क्रोध नहीं।
फिर भी विषपान कराते हो, मेरा कोई प्रतिरोध नहीं॥
मैं गंगा हूँ....

लगता है गंदे जीवन से, वह ऊब गया और आकुल है।
गिरकर मुझमें वह बन जाय, गंगाजल फिर से व्याकुल है॥
मैं गंगा हूँ....

मुझको सागर से मिलना है, बहती जाती हूँ मैं अविरल।
कातर हो गिरता जाता है, बनता जाता है गंगाजल॥
मैं गंगा हूँ....

रामकृष्ण-विवेकानन्द-भावधारामें गंगा-प्रेम

(डॉ० श्रीसुरेशचन्द्रजी शर्मा)

श्रीरामकृष्णमठकी आरतीके अन्तमें जय बोली जाती है। पहले श्रीरामकृष्णदेवकी और बादमें माँ शारदादेवी और स्वामी विवेकानन्दकी। अन्तमें कहा जाता है—'जय गंगा माईकी जय।' यह जयकारा रामकृष्णदेव और स्वामी विवेकानन्दके गंगाप्रेमको प्रदर्शित करता है।

श्रीरामकृष्ण गंगाकी बहुत श्रद्धा और भक्ति करते थे। उनके रहनेका कमरा दक्षिणेश्वरमें गंगाजीके घाटसे सटा हुआ है। वे नित्य प्रति गंगास्नान करते थे तथा प्रातः-सायं गंगाजीको हाथ जोड़कर प्रणाम करते थे। उनके कमरेके एक कोनेमें मिट्टीका एक बड़ा घड़ा गंगाजलसे भरा रखा रहता, जिसका वे पान करते थे। उनकी जीवनीमें हम पढ़ते हैं कि यदि धातुका सिक्का उनके हाथसे छू जाता तो वे हाथमें जलन महसूस करते थे। गंगाजलसे धोनेपर ही वह जलन शान्त होती थी।

श्रीरामकृष्णके शरीर छूट जानेपर उनके दिव्य देहांशोंके एक घटको स्थापित करनेका विचार उनके भक्तोंके मनमें आया। विचार-विमर्श चलता रहा। भक्तगण कुछ भी निर्णय नहीं ले पा रहे थे। श्रीरामकृष्णदेवने स्वप्नमें एक भक्तको आदेश दिया कि मेरा प्रिय नरेन्द्र दत्त (स्वामी विवेकानन्द) मुझे जहाँ कहींपर बैठा देगा, मैं वहींपर रह जाऊँगा। नरेन्द्रदत्त (स्वामी विवेकानन्द)-ने श्रीरामकृष्णके मनमें गंगामैयाके प्रति प्रेमको सोचकर अपने विदेशी शिष्योंकी सहायतासे गंगाके घाटपर स्थित बेलूड़ गाँवमें मठ स्थापित किया। इसे ही 'बेलूड़ मठ' कहा जाता है। बेलूड़ मठमें श्रीठाकुरके विग्रहको स्नान नित्य प्रति गंगाजलसे ही कराया जाता है। श्रीरामकृष्ण कहते थे—'ब्रह्मवारि गङ्गावारि' (गंगाजल साक्षात् ब्रह्मजल ही है)। इसी प्रकार वे कहते थे—'बृज रजे ब्रह्म रजा' अर्थात् 'बृज रज' को वे साक्षात् ब्रह्मरूप ही मानते थे। गंगातटपर ही माँ शारदा, स्वामी विवेकानन्द तथा मठके प्रथम अध्यक्ष स्वामी ब्रह्मानन्दजीके समाधि-स्थल भी बने हुए हैं।

स्वामी विवेकानन्दके जीवन-चरित्रमें हम पढ़ते हैं कि विदेशोंमें स्वामीजी अपने साथ गंगाजलसे भरी एक काँचकी शीशी रखते थे। जब उनका मन बहुत अधिक अशान्त हो जाता तो वे कुछ गंगाजलका पान कर लिया करते थे। इससे उनका मन तत्काल शान्तिका अनुभव करता था। श्रीपादशंकराचार्यने भी लिखा— *'गंगाजल-लवकणिका पीता।'*

स्वामी विवेकानन्द और उनके गुरुभाई स्वामी ब्रह्मानन्दजी माँ शारदादेवीके दर्शनके पूर्व गंगाजलसे स्नान करते और गंगाजलका पान किया करते थे। स्वामी विवेकानन्द कहते थे—श्रीशारदादेवी भौतिक कल्मषसे सर्वथा रहित हैं और भौतिक कल्मषसे रहित 'कल्मष-हारिणी माँ गंगाके स्नान तथा पानसे हुआ जा सकता है।'

श्रीरामकृष्णके गंगाप्रेमकी एक अमिट छाप उनके अनुयायियोंपर पड़ी है। श्रीरामकृष्ण गंगाजलका उपयोग कभी भी शौचके लिये नहीं करते थे। धन्य है श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द-भावधाराका गंगा-प्रेम। यदि ऐसा गंगा-प्रेम प्रत्येक भारतवासीके मनमें जाग उठे तो गंगा नदीके प्रदूषणसे रहित होनेमें क्या सन्देह है?

गंगाके परम भक्त—स्वामी रामतीर्थ

(डॉ० श्रीविद्यानन्दजी 'ब्रह्मचारी', एम०ए० (द्वय), बी०एड०, पी-एच०डी०, डी०लिट०)
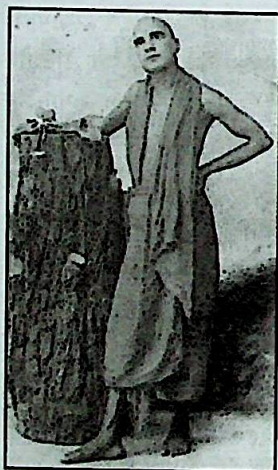
देवनदी गंगा विश्वविख्यात पवित्र नदी है। गंगा भारतको अमरता प्रदान करनेवाला अमृतस्रोत है। यह श्रीहरिकी चरणोदक बन बह रही है, भगवान् शिवकी जटाओंमें नाच रही है। सुमेरु और शिवलिंगतक फैले गंगोत्री ग्लेशियर्समें अन्तःसलिला बनी दूसरी धारा गोमुख गुफासे प्रकट होती है, इसे भागीरथी कहते हैं। गोमुखसे निकली भागीरथी अपना उपमान स्वयं है। धनुषाकार पर्वतराज हिमालय इन अमृत-धाराओंका उत्स है, कहीं उसकी सरसता सरोवरोंमें लहरा रही है तो कहीं सरिताओंके रूपमें तरंगित है।

'शब्दकल्पद्रुम' में 'गंगा' शब्दकी व्युत्पत्ति इस प्रकार की गयी है—

'गमयति प्रापयति ज्ञापयति वा भगवत्पदं या शक्तिः सा गङ्गा।'

जो शक्ति भगवान्के पादपद्मोंतक पहुँचा देती है, परम तत्त्वका स्वरूपबोध कराती है, वह गंगा है। इस व्युत्पत्तिके आधारपर गंगा अपने आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक रूपोंमें उपस्थित होती है।

माँ गंगाकी गौरवगाथाका क्या कहना है?

तो हाँ, आधुनिक भारतके युगप्रवर्तक संत कवि और गणितज्ञ स्वामी रामतीर्थ परमहंस (जन्म २२-१०-१८७३, जलसमाधि १७-१०-१९०६)-का पुण्य अवतरण पंचनद (पंजाब)-के मुरालीवाला नामके ग्राममें हुआ था, जो अब गुजराँवाला जिला (पाकिस्तान)-में है। वे कृष्णानुरागी, प्राकृतिक सौन्दर्यप्रेमी और गणितशास्त्रके विद्वान् थे। पूर्वाश्रममें स्वामीजी प्रोफेसर तीर्थराम गोस्वामी थे। आप अत्यन्त प्रतिभाशाली और प्रत्युत्पन्नमति थे। आपने एक प्रतिभाशाली छात्रके रूपमें ससम्मान पंजाब विश्वविद्यालय लाहौरसे एम०ए० (आनर्स) गणितशास्त्रमें प्रथम श्रेणीमें सर्वप्रथम हो—स्वर्णपदकके साथ प्राप्तकर पंचनदको गौरवान्वित किया। कुछ दिनोंतक फोरमेन क्रिश्चियन कॉलेज और ओरियण्टल कॉलेजको अपनी सेवा अर्पित की। एक सफल प्राध्यापकके रूपमें प्रचारके बहाने लोकसेवाके महान् कार्यके साथ-ही-साथ तनसे काममें और मनसे राममें संलग्न रहे। अपने जन्मजन्मान्तरीय शुभ संस्कारके अनुसार भरी जवानीमें सांसारिक विषयोंपरसे आपका निर्मल चित्त हटकर दिन-दिन वैराग्यकी ओर अधिक झुकने लगा और आप अहर्निश ईश्वर-चिन्तनमें मस्त रहने लगे।

अन्ततः सन् १८९८ ई०-की गर्मीकी छुट्टीमें तीर्थराम गोस्वामी (बादमें स्वामी रामतीर्थ) अपनी आध्यात्मिक मस्तीमें आन-बान-शानसे रामकी खोजमें आत्मानुभव प्राप्त करनेका दृढ़ संकल्प लेकर लाहौरसे उत्तराखण्डकी पावन धरित्री हरिद्वार पधारे। यहाँसे ऋषिकेशकी ओर चल पड़े। ऋषियोंकी पावन वसुमती ऋषिकेश टिहरी (मध्य हिमालय) जिलाके अन्तर्गत है। इसी पावन स्थलीसे करीब छः मीलकी दूरीपर स्थित रमणीय 'ब्रह्मपुरी जंगल' है। वे इसी शान्त एकान्त ब्रह्मपुरी जंगलमें आ पहुँचे। वस्तुतः यह

नितान्त निर्जन, शान्त और मनोरम स्थली है। यहाँका प्राकृतिक सौन्दर्य देखते ही बनता है। यहाँ तीव्र वेगसे प्रवाहित गंगाकी निर्मल, शीतल जलधारा जो पहाड़ोंसे टकराती, चट्टानोंपर कूदती, पगली-सी अट्टहास करती हुई बहती रहती है। जगह-जगह निर्मल, उज्ज्वल मोतीके समान बालूके कण चमकते रहते हैं।

इसी देवनदी गंगाके पावन तटपर ब्रह्मजिज्ञासु तीर्थराम आसन जमाकर यह दृढ़ प्रतिज्ञा करके बैठ गये कि हे ब्रह्मानन्द! राम अब तेरे द्वारपर धरना देकर बैठा है। राम अब कफनी ओढ़कर तेरे द्वारपर बैठ गया है। तेरे सिवा और किसकी सामर्थ्य है कि जो उसे यहाँसे हटाये? विना तेरे उठाये अब वह यहाँसे हटनेवाला नहीं। जब राम तुझे अपने अधीन कर लेगा तभी यहाँसे हटेगा। रामको अब अपने शरीरकी बिलकुल परवाह नहीं।

यदि रामके चरणोंके नीचे गंगा नहीं बहती है, तो रामका ही शरीर गंगापर बहेगा। आँखें जलवर्षा कर रही हैं। ठण्डी और गहरी आहें हवा बनकर अश्रुवर्षाका साथ दे रही हैं। बाहर और भीतर दोनों तरफ घनघोर वारिश हो रही है। राम दुखी होकर प्रलाप कर रहा है। गंगाको सम्बोधन करते हुए आपके कुछ हृदयोद्गार हम यहाँ उद्धृत करते हैं—

गंगा! तो सों सब बलिहारे जाऊँ।
हाड़ चाम सब वार के फैंकूँ।
यही फूल बताशे लाऊँ॥ गंगा०
मन तैरे बन्दरन को दे दूँ।
बुद्धि धारा में बहाऊँ॥ गंगा०
चित्त तेरी मछली चब जावे।
अहम् गुहा में दबाऊँ॥ गंगा०
पाप पुण्य सारे सुलगाकर।
तेरी जोत जगाऊँ॥ गंगा०
तुझमें पड़ूँ तो तू बन जाऊँ।
ऐसी डुबकी लगाऊँ॥ गंगा०
पिण्डे जल थल पवन दशोंदिक्।
अपने रूप बनाऊँ॥ गंगा०
रमन करूँ सत् धारा माँही।
तब ही 'राम' कहाऊँ॥ गंगा०

रामके हृदयोद्गार—

आगे चलकर स्वामीजी अपनी आन्तरिक अवस्थाको इस प्रकार प्रकट करते हैं—

'शाम होनेको है, एक छोटी-सी पहाड़ीपर राम* बैठा है। अजब हालत है। न तो इसे उदासी कह सकते हैं, न रंज तथा गम ही है। दुनियादारोंकी खुशी भी यह नहीं। इसे जागता नहीं कह सकते, सोया हुआ भी नहीं। क्या मालूम मखमूर हो, यह नशा भी दुनियाका मालूम नहीं पड़ता। कैसी रसभीनी अवस्था है?'

प्रखर वैराग्यभावना—

इसी मौकेपर तीर्थरामजीको एक पत्र मिला। यह पत्र उनके घरसे आया था। इसमें उनके घर लौट आनेके विषयमें बड़ा आग्रह किया गया था। तीर्थरामजीने पत्र पढ़कर तुरन्त गंगा-प्रवाहमें छोड़ दिया और उसके उत्तरमें इस प्रकार लिखा—

ऋषिकेश, २२ अगस्त, १८९८

एक कृपापत्र प्राप्त हुआ, जिसमें घर आनेकी प्रेरणा थी। इस पत्रको लेकर मैंने फौरन परमधामको भेज दिया अर्थात् श्रीगंगाजीमें प्रवाहित कर दिया। यदि किसी खानगी (गृहस्थी वा कुटुम्बसम्बन्धी) मुआमले (काम-धन्धों)-के शौककी बाबत पूछो तो आपकी अत्यन्त कृपा है।

रहे लोगोंके गिले उलाहने, उनके विषयमें यह निवेदन है—

कफन बाँधे हुए सिर पर तेरे कूचे में आ बैठे।
हजारों ताने अब हम पर लगा ले जिसका जी चाहे॥

* स्वामी रामतीर्थ अपनेको 'मैं' न कहकर 'राम' कहते थे।

हे भगवन्, आपकी आज्ञाका पालन कर रहा हूँ। अपने घर (निजधाम)-को जा रहा हूँ। आपके असल (वास्तविक) स्वरूपसे मिल रहा हूँ। पंजाब जो पाँच नदियों (रक्त, वीर्य, मूत्र, स्वेद, राल)-से मिलकर बना हुआ हमारा शरीर है, इसके अध्यासको त्यागकर ही अपने असल (वास्तविक) धाम (हरिद्वार)-की प्राप्ति होती है।

एक अन्य पत्र उन्हें इसी बीच प्राप्त हुआ था। उस पत्रमें रामसे अनेक प्रश्न पूछे गये थे, जिनका उत्तर उन्होंने वेदान्तिक दृष्टिकोणसे दिया था। प्रश्नोत्तर इस प्रकार है—(क) क्या राम अकेला है?

ब्रह्मपुरी, तपोवन, लक्ष्मणझूलाके समीप

३० अगस्त, १८९८ ई०

पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥

अर्थात् पूर्ण वह (लोक) है, पूर्ण यह (लोक) है, पूर्णसे पूर्ण निकाल लिया जाय, तो पूर्ण ही शेष रह जाता है।

पर हाँ, हम अकेले हैं। यहाँ खादम-वादम (नौकर-चाकर) कोई नहीं। हम ही हैं, यह वृक्ष नहीं, हम ही हैं, पवन नहीं, हम ही हैं। गंगा कहाँ? हम हैं। यह चाँद नहीं, हम हैं। खुदा नहीं हम हैं। प्रियवर कौन? हम हैं। मिलाप क्या? हम हैं। अरे 'अकेले' का शब्द भी हमसे दौड़ गया।

(ख) आत्मसाक्षात्कारकी अवस्था तथा स्थान— मनका मानसरोवर अमृतसे लबालब हो रहा है और आनन्दकी नदी हृदयमें-से बह रही है। प्रत्येक रोम कृतकृत्य है। विष्णुके भीतर सत्त्वगुण इतना भरपूर हुआ कि समा न सका। उस सत्त्वगुणके सरोवरसे चरणोंद्वारा गंगाजल बनकर सत्त्वगुण बह निकला। ठीक उसी प्रकारसे इस समय—

नार (जल या सत्त्वगुण)-में शयन करनेवाला नारायण।

तीर्थ (जलरूपी सत्त्वगुण)-में रमण करनेवाला तीर्थराम।

तीर्थको रमणीय (शोभायुक्त) बनानेवाला नारायण राम सत्त्वगुण या आनन्दसे भरपूर हो रहा है। उसका ब्रह्मानन्द समेटेसे सिमटता नहीं। परमात्मानन्दकी सरिता या स्रोत बनकर यह तीर्थराम साक्षात् विष्णु, पूर्णानन्दकी धारा (नदी) जगत्‌को कृतार्थ करनेके लिये भेज रहा है। खुशहाली (प्रसन्नता) कारगुलबाली (विश्रामता)-की वायु संसारको भेज रहा है। कौन कहता है कि वह बेकार (अकर्मण्य) बैठा है? मैं सच कहता हूँ, इस तीर्थरामके दर्शनोंसे कल्याण होता है, वह गंगा है, वह तुर्याराम है, वह राम है—

धन्य भूमि धन्य काल देश वह।
धन्य माता, धन्य कुल, धन्य समधी॥
धन्य धन्य लोचन करिहैं दास जो।
राम तिहारो सर्वज्ञ समधी॥

ऋषिकेश संतनगरी निवासी संन्यासी स्वामी भीमानन्दजीने अपने आलेख 'रामकी गंगा' में अपने उद्‌गार व्यक्त करते हुए लिखा है—'जिस सुरसरिताके रम्य तटपर बैठकर भारतके ऋषि-महर्षियोंने अद्भुत काव्य, साहित्य, दर्शन, वेद-वेदान्त, योग एवं उपनिषदादिका सृजनकर सम्पूर्ण संसारको आश्चर्यचकित कर दिया, वही पावन गंगा अपने तटपर स्वामी रामकी सतत साधनाका सौभाग्य प्राप्तकर धन्य हो गयी और कह उठी···· क्या?'

पतितपावनी सुरनदी गंगाके पुण्यप्रद कलुषविनाशक नामसे लगभग सभी महानुभाव परिचित हैं एवं जो इस महानदीके नामसे परिचित होंगे, वे स्वामी रामतीर्थके नामसे भी अवश्य परिचित होंगे। अतः गंगाकी प्रसिद्धि उसकी मानव-कल्याणकर्त्री भावना है और रामकी प्रसिद्धिका मूल गंगाकी असीम अनुकम्पा है।

रामने ब्रह्मप्राप्तिके लिये 'ब्रह्मपुरी' में गंगाके शीतल जलका पान करते हुए कठोर साधना की। इस

सतत साधनाको करते-करते रामका भौतिक शरीर कृशप्राय हो गया, परंतु साधना नहीं त्यागी।

रामकी दृढ़ साधनाको देखकर द्रवणशीला जाह्नवी द्रवित हो गयी तथा अपने भक्तको वरदान देनेके लिये सम्मुख आकर सस्नेह बोलीं—

'राम! तुम्हारी साधना पूर्ण हो चुकी। वत्स! अब अधिक कठोर साधना करनेकी आवश्यकता नहीं। अब जिस सन्देशको प्राचीन ऋषियोंने प्रचारित और प्रसारित किया, आज तुम वह मेरा सन्देश संसारको पहुँचा आओ। तदनन्तर मेरेमें ही लीन हो जाओगे।' इस मधुर और आनन्ददायक वाणीको सुनकर राम आनन्दविह्वल होकर बोल उठे—

'Oh Mother! Of! mighty rivers,
Adorened by saint and sages.
The much beloved peerless Ganga,
Famous from age to ages.'

अर्थात् हे विशाल सरिताओंकी मातेश्वरी गंगा! तू ऋषि-महर्षियोंसे सुशोभित, प्यारी, पवित्र एवं युग-युगसे लोकप्रिय है।*

उन्हें तपोवनमें ब्रह्मपुरी नामक स्थानमें भाद्रपद शुक्लपक्ष पूर्णिमाके दिन तदनुसार ९ सितम्बर, सन् १८९८ ई० में 'आत्मसाक्षात्कार' प्राप्त हुआ। उस समयसे वे आत्मामें स्थित होकर आत्माद्वारा ही आत्माकी उपासना करते थे।

इस आत्मानुभवके पश्चात् जब स्वामी रामतीर्थ एक बार पुनः लाहौर आये, तब उनकी आँखोंमें वह ज्योति और चेहरेपर वह कान्ति देदीप्यमान थी कि जिसका दर्शकोंपर बड़ा प्रभाव पड़ता था। इनके पवित्र हृदयोद्गारों तथा ईश्वर-प्रेममें सने हुए उपदेशोंको सुनकर सभी श्रोता ऐसे मुग्ध और प्रभावित होते थे कि वे खाना-पीना और आवश्यक कार्योंको भी भूल जाते थे। विद्याकी नगरी लाहौरके निवासियोंको थोड़े ही दिन इनके सत्संगका सौभाग्य प्राप्त रहा। फिर तो १४ जुलाई सन् १९०० ई० को अपने रीडर पदसे त्याग-पत्र देकर वे उत्तराखण्डकी यात्राके लिये प्रस्थित हुए।

टिहरी (मध्य हिमालय)-के समीप पडियार गाँव-स्थित गंगाके तटपर सेठ मुरलीधरके रमणीक उद्यानमें रहनेके उपरान्त दिनांक १ जनवरी, सन् १९०१ ई० को संन्यास धारणकर 'तीर्थराम' से स्वामी रामतीर्थ हो गये। संन्यासी होनेके बाद पुनः उत्तरकाशी मार्गपर सिराई गाँव स्थित 'प्रकृतिप्रदत्त बमरौगी गुफा' में निवास करते हुए उन्होंने काव्य और लेख लिखे।

१६ अगस्त, सन् १९०१ ई०-को अपने विद्वान् पट्ट शिष्य नारायणदास (बादमें नारायण स्वामी)-को साथ लेकर आपने यमुनोत्री, गंगोत्री, त्रियुगीनारायण, केदारनाथ और बदरीनारायणकी यात्रा की। पुनः टिहरी-गढ़वालके विद्वान् नृपति कीर्तिशाहके विशेष आग्रह करनेपर वे २८ अगस्त, सन् १९०२ ई० को भारतकी तत्कालीन राजधानी कोलकातासे समुद्री जहाजपर सवार होकर अपने शिष्य नारायण स्वामी (१८७४-१९३७)-के साथ जापान गये। जापानकी राजधानी टोकियोमें अपनी पीयूषवाणीद्वारा व्यावहारिक वेदान्तकी शिक्षा देकर अमेरिका प्रस्थान कर गये। फिर अमेरिकासे मिस्रकी राजधानी काहिराकी मस्जिदमें फारसी भाषामें धाराप्रवाह व्याख्यान देकर पुनः ८ दिसम्बर, सन् १९०४ ई० को बम्बई बन्दरगाहपर उतरकर उत्तरी भारतके प्रान्तमें गंगा-सन्देश वेदान्तके प्रचारार्थ भ्रमण करने लगे।

अन्तमें, दीपमालिकाके पुनीत अवसरपर माता भागीरथीने अपने प्रिय भक्त स्वामी रामको समाधि लेनेको आह्वान किया। टिहरीमें १७ अक्टूबर, सन् १९०६ ई० को उन्होंने नाटकीय ढंगसे भिलंगना नदीमें स्नान करते-करते जलसमाधि ले ली।

धन्य है! भागीरथीके परम पवित्र और विचित्र भक्त युवा संन्यासी स्वामी रामतीर्थ परमहंसका दिव्य चरित्र।

---

* रामसन्देश (मासिक पत्रिका) वर्ष-३, अंक-११-१२, सन् १९५४ ई०, पृ० ५, ६।

गंगाभक्त महाकवि पद्माकर

(श्रीकैलाश पंकजजी श्रीवास्तव)

ऐसा कौन हिन्दी कविताका प्रेमी होगा, जिसने सुप्रसिद्ध हिन्दी 'गंगालहरी' के रचयिता कविवर पद्माकरका नाम न सुना हो। इनका जन्म सम्वत् १८१० में बाँदामें हुआ था। इनके पूर्वपुरुषोंका निवास बाँदामें भी था, इसलिये ये लोग बाँदावाले भी कहलाते थे। इनकी मृत्यु सम्वत् १८९० में हुई थी। पद्माकर तैलंग ब्राह्मण थे।

अपनी अनुपम काव्यप्रतिभाके बलपर इन्हें अनेक राजदरबारोंमें प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त होते रहे। इनकी रचनाओंसे प्रसन्न होकर अनेक राजा-महाराजाओंने इन्हें प्रचुर धन-सम्पदा, हाथी तथा अनेक गाँव प्रदानकर सम्मानित किया था।

जीवनके उत्तरकालमें दुर्भाग्यवश पद्माकर गम्भीर कुष्ठरोगसे ग्रसित हो गये थे। ग्वालियर-नरेश दौलतराव सिन्धियाने अत्यन्त सम्मानपूर्वक इन्हें अपने नगरमें रखा था। इनके रोग-निवारणहेतु अनेक उपचार किये गये, किंतु कोई लाभ नहीं हुआ। अन्ततः गंगाके भक्त इस महाकविने अपना शेष जीवन गंगातटपर ही व्यतीत करनेका निश्चय किया। इसके लिये इन्होंने कानपुरका चयन किया। कहा जाता है कि जब ये कानपुरके समीप गंगाकी शरणमें जा रहे थे तो मार्गमें अपने पाप-पुंजको सम्बोधित करके इस कवित्तका पाठ कर रहे थे—

जैसे तैं न मोकों कहूँ नेकहू डरात हुतो
ऐसो अव तोकों हौंहूँ नेकहूँ न डरिहौं।
कहै पद्माकर प्रचंड जौ परैगो तो
उमंडि करि तोसौं भुजदंड ठोंकि लरिहौं॥
चलो चल चलो चल बिचल न बीच ही तें
कीचबीच नीच तो कुटुंब को कचरिहौं।
एरे दगादार मेरे पातक अपार तोहि
गंगा की कछार में पछार छार करिहौं॥

ऐसा बताया जाता है कि उसी समयसे इनकी दशा सुधरने लगी। इतना ही नहीं, कुछ समयके गंगा-सेवनके उपरान्त ये पूर्णतः नीरोग हो गये। इस घटनासे गंगाके प्रति इनकी आस्था और भी दृढ़ हो गयी। इन्होंने वहीं कानपुरमें ही स्थायी रूपसे निवासहेतु एक भवन बनवा लिया। लगभग छः मासका शेष जीवन इन्होंने वहीं व्यतीत किया। ८० वर्षकी अवस्थामें हिन्दी भाषाकी 'गंगालहरी' के इस अमर रचनाकारने गंगातटपर ही अन्तिम श्वास ली।

गंगाके वरद पुत्र—'नन्हें' (श्रीलालबहादुर शास्त्री)

(श्रीशोभानाथजी त्रिपाठी)
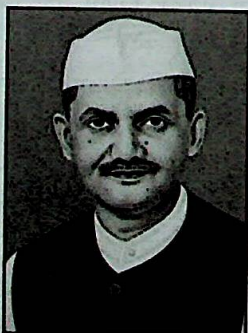
श्रीलालबहादुर शास्त्रीका बचपनसे ही गंगासे बेहद निकटका रिश्ता रहा है। गंगाके वरद पुत्र नन्हेंकी शैशवावस्थाकी कई सत्य कथाएँ जनसामान्यमें प्रचलित हैं। एक कहानी है कि नन्हेंकी माता रामदुलारी देवी प्रयागके मेलेमें पुण्य स्नानके लिये गयीं। नन्हें उस समय केवल तीन मासका था। गंगा पार करते समय बच्चा अचानक उनकी गोदसे फिसल गया। माँने तो सोच लिया कि नन्हें गंगामैयाकी गोदमें समा गया, लेकिन वह दूसरी नौकामें बैठे हुए एक किसानकी टोकरीमें जा गिरा। इधर माँ अपने शिशुके वियोगमें बेहाल हो रही थी, उधर किसान खुश था कि गंगामैयासे उसे इतना मूल्यवान् प्रसाद प्राप्त हुआ। इस कहानीके अनुसार बच्चा चार दिन बाद माँको वापस मिला था।

आश्चर्य होता है कि नन्हें अगर वापस न मिलता तो क्या होता? यह आश्चर्य ठीक उसी प्रकारका है कि अगर भगवान् कृष्ण माता देवकीके यहाँसे यशोदाकी गोदमें न गये होते और यमुना पार करते समय उनका चरण-स्पर्श करने आये जलको देखकर घबराये वसुदेव बच्चे-समेत डूब जाते तो क्या होता? गंगाके रजमें खेलते हुए नन्हेंके जीवनपर पुण्यसलिला माँ गंगाका प्रभाव बहुत अंशोंमें था। गंगाने उन्हें कुशल तैराक बनाया। बाढ़युक्त गंगाको तैरकर पार करनेकी सामर्थ्य जिस बालकने अल्पायुमें ही प्राप्त कर लिया हो, उसके बारेमें दो ही भविष्यवाणियाँ की जा सकती थीं, या तो वह मल्लाह या मछुआरा बनेगा अथवा एक ऐसा महापुरुष जो जीवनकी कठिन-से-कठिन बाढ़मेंसे सबको सुरक्षित पार निकाल ले जायगा।

लालबहादुरके प्रारम्भिक जीवनकी विपन्नावस्थाके बारेमें एक कहानी यह भी प्रचलित है कि वे प्राइमरी स्कूलमें शिक्षा ग्रहण करने जाते समय गंगा तैरकर पार करते थे; क्योंकि उनके पास नावका किराया अदा करनेके लिये पैसे नहीं हुआ करते थे। 'नन्हें' के गौरवको प्रकाशित करती गुरुनानकदेवकी पंक्तियाँ स्मरणीय हैं—

नानक नन्हें है रहो, जैसे नन्हीं दूब।
ओरे रूख सूख जायेंगे, दूब खूब की खूब॥

गुमानीकी गंगा

(डॉ० श्रीवसन्तवल्लभजी भट्ट, एम०ए०, पी-एच०डी०)

अठारहवीं शतीकी बात है, हिमालयकी उपत्यका*-में भाषासंगमके एक महान् भक्त कविका आविर्भाव हुआ, नाम था गुमानी। नाम भी विलक्षण, कवित्व भी विलक्षण और व्यक्तित्व भी विलक्षण। नामके इतिहासकी विचित्र रोचक घटना है। टिहरीनरेश सुदर्शनशाहकी राजसभामें पण्डितोंद्वारा जब नाम पूछा गया तो झट निम्न श्लोक बनाकर सुना दिया—

कोर्मध्यमो ह्रस्वतृतीयकेन स्वरेण दीर्घप्रथमेन युक्तः।
पोरन्तिमस्तोश्चरमस्तु वर्णौ दीर्घद्वितीयेन ममाभिधानम्॥

अर्थात् कवर्गका मध्यम वर्ण 'ग्' और तृतीय ह्रस्व स्वर 'उ'=गु, पवर्गका अन्तिम वर्ण 'म्' और प्रथम दीर्घ स्वर 'आ'=मा तथा तवर्गका अन्तिम वर्ण 'न्' और द्वितीय दीर्घ स्वर 'ई' नी।

मूलतः होड़ाचक्रके अनुसार नाम तो था लोकरत्न पन्त, किंतु इन्होंने 'गुमानी' नामसे ही रचनाएँ की हैं। प्रकृतिसे ये यायावर स्वभावके थे। जैसी प्रकृति थी, वैसा ही रचनासंसार (कृतित्व) भी था। इन्होंने संस्कृत, हिन्दी, कुमाऊँनी, नेपाली, व्रज, अरबी, उर्दू, फारसी आदि भाषाओंमें अनेक श्लोक, पद आदि बनाये। कोई बड़ा ग्रन्थ रचा नहीं। यश एवं लोकैषणाकी प्रवृत्ति थी नहीं, अतः रचनाओंका संग्रह भी नहीं हो सका, तथापि जो भी स्फुट साहित्य प्राप्त होता है, उससे इनके अद्भुत पाण्डित्य एवं प्रत्युत्पन्नमतिका यत्किंचित् परिचय प्राप्त होता है। इनकी कुल-परम्परामें वैद्यकशास्त्रकी प्रतिष्ठा थी, अतः यह ज्ञान इन्हें जन्मतः प्राप्त था।

जीवनमें सनातन आचार-विचार, सदाचार, पवित्रता तथा धार्मिक नियमोंके पालनकी कट्टरता थी। ऐसी प्रसिद्धि है कि एक बार भोजन बनाते समय इनका यज्ञोपवीत सहसा अग्निमें दग्ध हो गया। बस, उसी समय ब्रह्मचर्यव्रत धारणकर प्रायश्चित्तस्वरूप यह प्रतिज्ञा ले ली कि आजसे बारह वर्षतक अग्निपाक ग्रहण नहीं करूँगा। उसी प्रतिज्ञाकी पूर्तिके लिये गृहस्थाश्रमका परित्यागकर तीर्थोंमें भ्रमण करते रहे और फल, मूल, शाक तथा दूर्वारसपर शरीर धारण करते हुए गायत्री-साधना करते रहे। व्रतोद्यापनके अनन्तर अपनी माताके आग्रहपर पुनः गृहस्थाश्रममें प्रवेश किया। गंगाजीपर आपकी विशेष

* कूर्मांचल-पिथौरागढ़ ग्राम उपराड़ा।

आस्था थी, अतः अधिकांश समय भागीरथी तथा अलकनन्दाके तटपर स्थित देवप्रयागमें, गंगा, यमुना, सरस्वती—त्रिवेणीतटपर प्रयागमें तथा सूकरक्षेत्र (सोरों) गंगातटपर बिताया। बताते हैं कि इन्हें सरस्वती सिद्ध थी। कवित्व इन्हें सहज सिद्ध था। गुमानी श्रीरामके अनन्य भक्त थे। उनकी संस्कृतसे इतर भाषाओंकी रचनाओंका वर्ण्यविषय—कुमाऊँनीकी लोकसंस्कृति, लोकव्यवहार आदि रहा है, किंतु संस्कृत भाषामें प्रणीत रचनाओंमें सर्वत्र रामभक्तिका अनन्य भाव समाया हुआ है। उन्होंने दास्य भाव एवं आत्मनिवेदन तथा शरणागतिको ही भक्तिका मुख्य पक्ष बताया है। रामनामविज्ञप्तिसार, रामाष्टपदी, भक्तिविज्ञप्तिसार, रामनामपंचाशिका आदि रचनाओंमें इसी भावकी पुष्टि हुई है। इतना ही नहीं, उन्होंने जो गंगार्याशतक लिखा है, उसमें भी माता गंगाजीसे यह प्रार्थना की है कि हे मातः! मैं श्रीरामजीको अपना जनक तथा जानकीको जननी समझता हूँ, पर मैं आपको माता-पिताके अभिन्न रूपमें देखता हूँ—

रघुराजमात्मनोऽहं जनकं जानामि जानकीं जननीम्।
तदभिन्नैकतनुं त्वां मातापितरौ समं जाने॥

(गंगार्याशतक ५६)

'गंगार्याशतक' गुमानीजीकी बड़ी ही सुन्दर रचना है, इसमें उन्होंने सौ आर्या छन्दोंमें गंगाकी महिमाका तथा अपनी दैन्यताका गान किया है। इसका नाम उन्होंने 'गांगप्रबन्ध' भी रखा है।

'गांगप्रबन्ध'की पहली आर्यामें उन्होंने अनेक विशेषण देकर गंगाजीका जयगान किया है, वे कहते हैं—देवलोकमें विहार करनेवाली, भगीरथके द्वारा लायी गयी, समुद्रकी जायारूपा, जह्नुकन्या, विष्णुपत्नी, जगज्जननी हे गंगे! आपकी जय हो—

जय सुरसदनतरङ्गिणि जय भागीरथि जयाम्बुनिधिजाये।
जय जाह्नवि जय वैष्णवि जय गङ्गे जय जगन्मातः॥

वे गंगाजीसे कहते हैं—हे माँ! आपकी ऐसी अतुलनीय महिमा है कि आपको धारण करनेवाले भगवान् शंकर धन्य हो गये, आपको प्रकट करनेवाले राजर्षि भगीरथ धन्य हो गये, आपको वहन करनेवाली धरा धन्य हो गयी और आपका आलिंगन करनेवाला सिन्धुपति समुद्र धन्य हो गया—

धन्यो हरो दधत्त्वां प्रादुष्कुर्वन् भगीरथो धन्यः।
धन्या धरा वहन्ती धन्यः परिरम्भमाणोऽब्धिः॥

(गंगार्याशतक १३)

गंगाको सम्बोधित करते हुए वे पुनः कहते हैं कि हे माँ! यह सत्य है कि केवल आपके एक बार नाम लेनेमात्रसे गोलोक धामका आनन्द प्राप्त हो जाता है तो फिर आपके जलमें स्नान करने तथा आपके जलका पान करनेसे कौन-सा अधिक फल प्राप्त होता है, इसे आप बतानेकी कृपा करें—

स्मरणादपि तव नाम्नः श्रीपतिधाम्नः सुखाप्तिरिति सत्यम्।
त्वज्जलमज्जनपानैः किम्फलमधिकं तदाख्याहि॥

(गंगार्याशतक २९)

गुमानी कहते हैं हे माँ गंगे! आपकी गोदीमें पड़े हुए मुझको जब भयंकर यमके दूत बाल पकड़कर बड़े वेगसे खींचते हुए यमलोकको ले जाने लगेंगे, उस समय संसारके लोग आपको न जाने क्या-क्या कहेंगे—

उत्सङ्गात्तव याम्यैर्भटैर्गृहीत्वा कचेषु सप्रसभम्।
नीते मयि यमसदनं किं त्वां वक्ष्यत्ययं लोकः॥

(गंगार्याशतक ७२)

अतः हे जननी! आप अपने विरुदका ध्यान रखते हुए स्वयं ही अपने यशकी रक्षा करना—'त्वमेव सम्यक् स्वयशोरक्षां प्रकुर्वीथाः।'

इसी प्रकारके अनेक हृदयोद्गार एवं सुन्दर भाव इस शतकमें भरे पड़े हैं। अन्तमें गुमानी कहते हैं—

इति देवदीर्घिकायाः सुदीर्घसन्तापशमनशीलायाः।
स्तवमार्याशतघटितं व्यधाद् गुमानी मुदे विदुषाम्॥

गंगाकी स्तुतिमें गुमानीजीने कुछ अन्य पदोंकी रचना भी की है, जिनकी रचना-शैली बहुत ही ललित एवं गेय है, दो-एक पद यहाँ प्रस्तुत हैं। एक पदमें वे कहते हैं—

जय हरमुकुटतुहिनकरसहचरि जय हरिपदनखजनितजले।
जय जलनिधिसति विमलवसनवति जय भगवति करधृतकमले॥

जय शतमखपुरविहरणकृतमुखि जय शतमुखि शशधरधवले।
जय जनजननि वृजिनभरविजयिनि जय सुरधुनि कृतसुकृतफले॥

अर्थात् हे देवि गंगे! आप भगवान् शिवके शिरोमुकुटमें स्थित शीतल किरणोंवाले चन्द्रमाके साथ विराजमान रहनेवाली हैं, आपकी जय हो। आप भगवान् विष्णुके चरणनखसे द्रवरूपमें आविर्भूत हैं, आपकी जय हो। हे देवि गंगे! आप विमल श्वेतवस्त्र धारण करती हैं तथा समुद्रकी प्रियतमा हैं, आपकी जय हो। आप हाथमें कमल धारण करनेवाली हैं, आप भगवतीकी जय हो। शतक्रतु इन्द्रके नगर स्वर्गमें विहार करनेके लिये उद्यत हे स्वर्गंगे! आपकी जय हो। हे देवि गंगे! आप शत-शत धाराओंके रूपमें प्रवाहित हो रही हैं तथा आपकी कान्ति चन्द्रमाके समान धवल है, आपकी जय हो। आप समस्त पापराशिको पराभूत करनेवाली हैं तथा सभी लोकोंकी माता हैं, आपकी जय हो। हे गंगे! समस्त पुण्यकर्मोंका एकमात्र फल आपकी प्राप्ति ही है। आपकी जय हो।

दूसरे पदमें वे कहते हैं—हे देवनदी गंगे! यदि आप कृपाकर शीघ्र ही मुझे इस जगत्की श्रेष्ठतम उपलब्धि—अपनी शरण प्रदान करें तो रूप तथा सौन्दर्यसे सम्पन्न एवं कुशल देवांगनाओंके विलाससे परिपूर्ण और पर्वतोंके शत्रु देवराज इन्द्रका लोक भी मुझे तुच्छ प्रतीत होगा और इसी प्रकार बड़ी-बड़ी दाढ़ोंवाले भयंकर यमदूतोंके पास आनेपर भी मुझे किंचित् भय नहीं लगेगा। हे गंगे! इसी प्रकार देववन्दित भगवान् महेश्वरके सुदुर्लभ लोककी प्राप्ति भी मेरे लिये दुर्लभ नहीं रह जायगी, अपितु वह लोक भी सहज ही प्राप्य हो जायगा।

उनके इन भावोंकी पदरचना इस प्रकार है—

रुचिरचतुरसुरयुवतिविहितरति नहि बहुमहिधररिपुनगरम्।
प्रकटदशनमुखविकटशमनभटनिकटघटनमपि न तदनवरम्॥
न मम दुरधिगमममरमहितपुरमथनसदनमपि तदनवरम्।
सपदि विबुधनदि सकरुणमथ यदि भवसि शरणमिह जगति परम्॥

तीसरे पदमें वे कहते हैं—हे देवनदी गंगे! आपका पवित्र श्रीविग्रह तीन नेत्रोंसे विभूषित, ब्रह्मा, विष्णु तथा शिवस्वरूप, भक्तोंके लिये ध्येय, सज्जनोंसे प्रशंसित, करुणासे परिपूर्ण, हाथोंमें वरमुद्रा, अभयमुद्रा, कमल तथा कलश धारण करनेवाला, श्वेतवर्णवाले मकररूपी वाहनपर आरूढ़, अत्यन्त शुभ्रवस्त्रोंसे अलंकृत, अर्धचन्द्रसे समन्वित शोभासम्पन्न मुकुटसे विभूषित, पापोंको विनष्ट करनेके लिये सदा उद्यत तथा प्रतिक्षण नवीन शोभासे सम्पन्न रहनेवाला है, ऐसा वह आपका कृपामय विग्रह मेरे मनमें सर्वदा विराजमान रहे—

त्रिनयनधरमजहरिहरतनुमयमनुगतकृतमतिसदनुमतम्।
सदयमभयवरजलजकलशकरमनुचरसिततरमकरगतम्॥
मुकुटकलितशशिशकलललितमतिधवलवसनमघदलनरतम्।
त्रिदिवतटिनि तव वपुरुपचितरुचि शुचि मम मनसि वसतु सततम्॥

भगवद्भक्तोंपर गंगाका वात्सल्य

(डॉ० श्रीसत्येन्दुजी शर्मा, एम०ए०, पी-एच० डी०)

गंगा नाम है भगवान्के चरणोंतक पहुँचानेवाली शक्तिका—'गमयति प्रापयति ज्ञापयति वा भगवत्पदं या शक्तिः।' (शब्दकल्पद्रुम कोश)

गंगा इस संसारमें सर्वसुलभ वह प्रत्यक्ष हरि-चरणोदक है, जिसका श्रद्धापूर्वक सेवनकर कोई भी जीव भगवान्के चरणोंका आश्रय प्राप्त कर सकता है।

भगवान् विष्णुके चरणोंको प्रक्षालित करनेके कारण माता गंगा त्रिभुवनमें पवित्रतम हैं। यह भगवत्पदी ऐसी सौभाग्यवती पुण्यसलिला है, जिसे मस्तकपर धारणकर भगवान् शिव महादेव और देवाधिदेवके पदपर विभूषित हैं, जिसे उत्संग प्रदानकर हिमालयने पर्वतराज और देवभूमिकी उपाधि पायी है और प्रवाह-क्षेत्रका हिस्सा बननेके कारण भारतको इस सम्पूर्ण पृथ्वीपर सर्वश्रेष्ठ पुण्यदेश घोषित होनेका गौरव प्राप्त है।

ये देवी भागीरथी सगरके पुत्रोंका उद्धार करनेके लिये इस धराधामपर अवतीर्ण हुई थीं, किंतु तबसे ये जीवमात्रके हितके लिये निरन्तर प्रवहणशील हैं। गंगामाता धरतीपर उपलब्ध श्रीहरिका चरणामृत हैं, जिनका दर्शन, स्पर्श, स्मरण, स्तवन, पूजन, अवगाहन मनुष्यको भगवान्के चरणोंतक पहुँचा देता है। संक्षेपमें देवी गंगा प्राणिमात्रके लिये भगवत्प्राप्तिका प्रत्यक्ष सुलभ साधन हैं।

भगवती गंगा हरिस्वरूपा भी हैं, हरिभक्त भी हैं और हरिभक्तप्रिया भी हैं। गंगाका सर्वस्व सन्तोंके समान ही समुज्ज्वल है। जिस प्रकार सन्त स्वयं कष्ट उठाकर भी सदा लोगोंके हित-साधनमें निरत होते हैं, उसी प्रकार गंगामाता भी अपने आश्रितोंके सारे पाप-कालुष्य लेकर उन्हें निर्मलता प्रदान करती हैं। गंगाका एकमात्र व्रत है—जीव-कल्याण। पापियोंका शुद्धिकरण और भगवद्भक्तोंका सर्वविध सहयोग ही मानो उनके भूतलवासका उद्देश्य है।

गंगा लाखों-करोड़ों वर्षोंसे निरन्तर बहती अपनी धाराकी कल-कल ध्वनिसे जीवोंको अपने पास आनेका निमन्त्रण देती रही हैं और जो भी श्रद्धावान् भक्त उनकी शरणमें गया, उसने माता गंगाका अचिन्त्य वात्सल्य प्राप्त किया। यहाँ कुछ भगवद्भक्तोंपर गंगामाताद्वारा किये गये अनोखे अनुग्रहके प्रसंग प्रस्तुत हैं—

१. विद्यापतिपर गंगा-कृपा

मिथिलाके प्रसिद्ध कवि विद्यापति भगवान् शिव और गंगाके अनन्य भक्त थे। ऐसी मान्यता है कि उनकी परा भक्तिसे प्रसन्न होकर भगवान् शिवने अनेक वर्षोंतक सेवक उगनाके रूपमें उनकी सेवा की थी।

विद्यापतिने माता गंगाकी गोदमें ही अपनी जीवन-लीला समेटनेका संकल्प कर रखा था। इसलिये मृत्युका समय निकट आता देखकर उन्होंने अपने परिवारके लोगोंसे गंगातटपर पहुँचानेका अनुरोध किया। घरके लोगोंने उनके इच्छानुसार चार कहारोंकी व्यवस्था की और वे विद्यापतिको पालकीमें बिठाकर सिमरिया घाटकी ओर चल पड़े। रातभर चलनेके बाद सुबह विद्यापतिने कहारोंसे पूछा कि गंगामाता अब और कितनी दूर हैं? कहारोंने बताया कि करीब पौने दो कोस और आगे जाना पड़ेगा। रुग्ण विद्यापति बहुत दुर्बल हो चुके थे। उन्होंने कहारोंसे कहा—

'मुझे पालकीसे यहीं नीचे उतार दो। मैं अब और आगेतक नहीं जा सकता। घरसे चलकर इतनी दूरतक माता गंगाके लिए मैं आया हूँ, तो अपने पुत्रके लिये क्या माँ यहाँतक नहीं आयेगी? वह अवश्य आयेगी।'

विद्यापति पालकीसे उतरकर वहीं बैठ गये और माँ गंगाका स्मरण-स्तवन करते हुए ध्यानमग्न हो गये और परम आश्चर्य कि माँ गंगा वहाँ अपनी एक विशेष धारा-प्रवाहके साथ पहुँच गयीं। विद्यापति आनन्दसे गद्गद होकर माँकी स्तुति करने लगे और माँने उन्हें सदाके लिये अपनी गोदमें समेटकर संसारमें वात्सल्यका एक अभूतपूर्व उदाहरण प्रस्तुत किया। विद्यापतिपर माता गंगाकी कृपाका यह स्थान आज विद्यापतिनगरके नामसे जाना जाता है।

२. तुलसीदासपर गंगा-कृपा

गोस्वामी तुलसीदासके प्राणाधार श्रीराम-जानकी थे, किंतु काशीमें वे जितने समय भी रहे, उन्होंने माता गंगाके तटपर ही निवास किया और इसलिये रघुनाथ तथा महावीरकी तरह गंगाकी कृपा भी उन्हें सहजतया प्राप्त थी।

एक बार तुलसीबाबा गंगाजीकी धारामें खड़े होकर मन्त्र जप रहे थे, तभी एक दरिद्र ब्राह्मण उनसे मिलने आ पहुँचा। उसने सुन रखा था कि गोस्वामीजी अलौकिक योगविभूति-सम्पन्न सन्त हैं और वे इच्छानुसार कुछ भी चमत्कार कर सकते हैं। ब्राह्मणदेवता उनके समीप जाकर अपनी दीनता दूर करनेकी याचना करने लगे। गोस्वामीजीका चित्त द्रवित हो गया और उन्होंने तत्काल गंगामातासे उसके लिये भूमि देनेकी प्रार्थना की। गंगाकी धारा एक तरफ सरक गयी और धाराद्वारा छोड़ी गयी जमीन तुलसीबाबाने उस ब्राह्मणको दे दी।

३. रैदासपर गंगा-कृपा

एक ब्राह्मण राजाकी ओरसे प्रतिदिन गंगा-

स्नान करने जाता था। एक दिन जूते फट जानेसे वह रैदासजीके पास पहुँचा। उन्होंने ब्राह्मणदेवताको जूतेका एक नवीन जोड़ा भेंट किया और श्रद्धापूर्वक एक सिक्का देते हुए उनसे कहा कि गंगामाताको मेरी ओरसे यह अर्पित कर देना।

अपनी पूजा समाप्तकर ब्राह्मणदेवता जैसे ही रैदासजीका सिक्का फेंकनेवाले थे कि गंगाकी धारासे बाहर एक हाथ प्रकट हो गया। हथेली फैलाकर गंगामाताने वह सिक्का ग्रहण किया और ब्राह्मणदेवताको एक स्वर्णकंकण देकर कहा कि मेरा यह उपहार रैदासको दे देना।

मार्गमें ब्राह्मणदेवतापर पाप सवार हुआ और पुरस्कारके लोभमें कंकण ले जाकर राजाको भेंट कर दिया। जब राजाने वह कंकण रानीको दिया तो उस दैवी कंकणके सौन्दर्यसे चमत्कृत होकर उसने वैसा ही एक और कंकण बनवानेकी इच्छा व्यक्त की, किंतु राजाके आदेशानुसार अथक प्रयत्न करके भी कोई कारीगर सफल नहीं हो सका। इधर कंकणकी अभिलाषा पूर्ण न होते देख रानी अस्वस्थ होती जा रही थी। अन्य कोई उपाय न पाकर राजाने ब्राह्मणदेवताको आदेश दिया कि जहाँसे वह पहला कंकण लाया है, वहींसे दूसरा कंकण लाकर दे, अन्यथा उसे मृत्युदण्ड दिया जायगा। अब प्राणोंपर संकट आया देखकर भयभीत ब्राह्मणने राजाको सम्पूर्ण सत्यता बतायी।

राजा रैदासजीके निकट पहुँचे और सारा वृत्तान्त बताकर नम्रतापूर्वक दूसरे कंकणकी याचना की। करुणहृदय रैदासजीने अपने पास रखी कठौतीके जलमें हाथ डालकर भगवती गंगाको नमन किया और जब हाथ बाहर निकाला तब उनके हाथमें अनेक स्वर्णकंकण थे। एक कंकण राजाको सौंपकर अन्य कंकण रैदासजीने पुनः माता गंगाको समर्पित कर दिये। इस प्रकार भगवती गंगाने अपनी चमत्कारी लीलाओंसे प्रियपुत्र रैदासके लिये प्रमाणित कर दिखाया कि—*'मन चंगा तो कठौती में गंगा।'*

४. तैलंग स्वामीपर गंगा-कृपा

तैलंग स्वामी वाराणसीमें करीब डेढ़ सौ वर्षोंतक
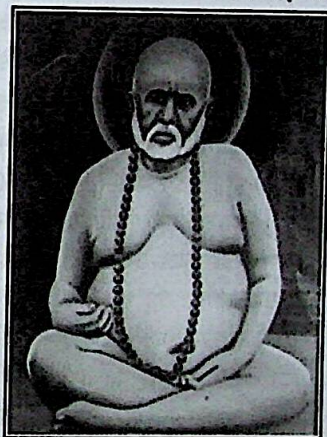
लीला-विहार करते रहे। कभी वे गंगाके तटपर बैठे दिखलायी पड़ते तो कभी घण्टों गंगा माईकी धारामें पड़े रहते थे। एक बार वे गंगामें उतर रहे थे, तभी एक स्त्रीको अपने मृत पतिके शरीरसे लिपटकर रोते-बिलखते देखा। गत रात्रिमें सर्प-दंशसे उसके पतिकी मृत्यु हो गयी थी। स्त्रीका करुण क्रन्दन सुनकर स्वामीजीका हृदय द्रवित हो गया। उन्होंने तत्काल गंगाकी थोड़ी-सी रेती उठाकर मृत शरीरके क्षत-स्थलपर लेपन कर दिया और गंगाकी धारामें अदृश्य हो गये। इधर कुछ ही देरमें मृतकके शरीरमें चेतना लौटने लगी और वह पूर्ण स्वस्थ होकर उठ बैठा।

एक बार उज्जैनके राजा नौकासे गंगा-भ्रमण कर रहे थे। तभी तैरते हुए स्वामीजी वहाँ प्रकट हो गये। नौकापर सवार अन्य जाननेवाले लोगोंने राजाको स्वामीजीका परिचय बतलाया और सबने मिलकर उन्हें ससम्मान जलधारासे निकालकर नौकामें बिठा लिया। स्वामीजी उस समय शिशुवत् आचरण कर रहे थे। उनकी दृष्टि राजाकी कमरसे लटकती तलवारपर पड़ी और माँगकर उन्होंने तलवार अपने हाथमें ले ली। कुछ

देर उलट-पलटकर देखते रहे और अचानक तलवार गंगाजीमें फेंक दी। अब राजाका क्रोध सातवें आसमानपर था। किनारे पहुँचनेतक वह स्वामीजीको दण्डित करनेकी लगातार धमकी दिये जा रहा था। तटपर आनेतक स्वामीजीमें भावान्तरण हुआ। हँसते हुए उन्होंने जल-धाराके भीतर हाथ डालकर जब बाहर निकाला, तब उनके हाथमें एक-जैसी दो तलवारें थीं। योगिराज तैलंगने राजासे कहा कि इन दोनोंमें पहचानकर अपनी तलवार ले लो। राजा दोनों तलवारोंको उलट-पलटकर देखता रहा, परंतु बिलकुल एक-जैसी होनेसे अपनी तलवार नहीं पहचान पा रहा था।

स्वामीजीने उसे फटकारते हुए कहा—'जिसे अपनी वस्तु माननेका दम्भ था, उसे पहचानतक नहीं सके। मृत्युके बाद यह तलवार निश्चय ही तुम्हारे साथ नहीं जायगी, फिर यह तुम्हारी कैसे? और जो तुम्हारी नहीं, उसके लिये इतना क्रोध-क्षोभ क्यों?'

इतना बोलकर उसे उसकी तलवार देकर दूसरी तलवार गंगाधाराको समर्पित कर दी।

५. सन्तदासजी पर गंगा-कृपा

ताराकिशोर चौधरी कलकत्ता उच्च न्यायालयके प्रसिद्ध वकील थे। प्रतिदिन गंगा-स्नान और तत्पश्चात् तटपर बैठकर ध्यान, जप और पूजन करना उनका नियम था, किंतु आध्यात्मिक जिज्ञासावश गुरु-प्राप्तिके लिये उनका हृदय सदा उत्कण्ठित रहता था। एक दिन गंगा-पूजनके बाद प्रबल वेदनामें अश्रुपूरित कण्ठसे वे कहने लगे, 'हे माँ गंगे! आप त्रितापनाशिनी हो। क्या मेरा पाप इतना दुर्भर है कि तुम्हारी त्रैलोक्यपावनी धारा भी उसे शुद्ध नहीं कर सकती?'

ताराकिशोरके इस उद्‌गारके साथ ही उनके सामने एक अलौकिक दृश्य भासित हो उठा। उन्होंने देखा कि सामने हिमालयका वह गंगोत्री स्थान है, जहाँसे गोमुखी धारा फूटती है। वहाँपर उमा-महेश्वर दिव्य रूपमें विराजमान थे। देवाधिदेवको देखनेमें वे इतने विभोर हुए कि नमस्कारतक करना भूल गये। फिर भगवान् महेश्वरने एक एकाक्षरी मन्त्रका उपदेश देकर समझाया कि इस मन्त्र-जपके द्वारा यथार्थ सद्‌गुरु उपलब्ध हो जायँगे। गंगामाताकी कृपासे ताराकिशोरको उमा-महेश्वरके दर्शन तो उसी क्षण प्राप्त हो गये और आगे चलकर गुरुदेव काठिया बाबासे दीक्षा मिली और वे स्वयं सन्तदास बाबाके नामसे प्रसिद्ध हुए।

६. एक संन्यासीपर कृपा

अस्सीवर्षीय महन्त उदासीन बाबा विहारके हाजीपुरमें महन्त थे। गंगाके निकटस्थ होनेके कारण गंगाके दर्शन-पूजनका सौभाग्य उन्हें इच्छानुसार सुलभ था, लेकिन गंगाके उद्‌गम-स्थल गोमुखीके दर्शनकी उनकी तीव्र लालसा थी। अचानक एक दिन सुयोग बना और वे गोमुखीजीके लिये चल पड़े। वृद्ध शरीर महन्तजीके लिये यह यात्रा आसान नहीं थी, किंतु गंगा-दर्शनके उत्साहमें दुर्गम मार्गसे चलते हुए अन्ततः वे गन्तव्यतक पहुँच गये। सामने गोमुखीके स्वरूपको देखकर महन्तजीकी सारी थकान मिट गयी। कुछ क्षण भगवतीके उस अद्‌भुत रूपको निहारते रहे और आँखें बन्दकर, हाथ जोड़कर भावुकताके अतिरेकमें प्रार्थना करते हुए बोले—'हे माँ गंगे! आज आपके अनोखे स्वरूपके दर्शन हुए। कदाचित् दुबारा जीवनमें यह अवसर प्राप्त नहीं होगा। इसलिये माँ, अपना आशीर्वाद प्रदान करो।' आँखें खुलनेपर उदासीन बाबाने विविध आभूषणोंसे भरा हुआ आशीर्वादात्मक मुद्रामें एक हाथ देखा, जो कुछ पल बाद लुप्त हो गया, लेकिन बाबाजीके आनन्दकी सीमा नहीं थी; क्योंकि माँका दुर्लभ आशीर्वाद उन्हें प्राप्त हो चुका था।

जिस तरह पवनपुत्र हनुमान् अहर्निश श्रीरामभक्तोंके हित-साधनमें लगे रहते हैं, उसी तरह भगवती गंगा भी भगवद्भक्तोंका योग-क्षेम वहन करती हुई निरन्तर प्रवाहशील हैं।

[ग] गंगा-सपर्या

गंगादशहरा

[ज्येष्ठ शुक्ल दशमी]

नमामि गङ्गे तव पादपङ्कजं सुरासुरैर्वन्दितदिव्यरूपम्।
भुक्तिं च मुक्तिं च ददासि नित्यं भावानुसारेण सदा नराणाम्॥

हे मातु गंगे! आप मनुष्योंको नित्य ही उनके भावानुसार भुक्ति और मुक्ति प्रदान करती हैं। मैं देवताओं और राक्षसोंसे वन्दित आपके दिव्य चरणकमलोंको नमस्कार करता हूँ।

गंगाजी देवनदी हैं, वे मनुष्यमात्रके कल्याणके लिये धरतीपर आयीं, धरतीपर इनका अवतरण ज्येष्ठ शुक्लपक्षकी दशमीको हुआ। अतः यह तिथि उनके नामपर गंगादशहराके नामसे प्रसिद्ध हुई—

दशमी शुक्लपक्षे तु ज्येष्ठमासे बुधेऽहनि।
अवतीर्णा यतः स्वर्गाद्धस्तर्क्षे च सरिद्वरा॥

इस तिथिको यदि बुधवार और हस्तनक्षत्र हो तो यह तिथि सब पापोंका हरण करनेवाली होती है—

ज्येष्ठशुक्लदशम्यां तु भवेत्सौम्यदिनं यदि।
ज्ञेया हस्तर्क्षसंयुक्ता सर्वपापहरा तिथिः॥

ज्येष्ठ शुक्ल दशमी सम्वत्सरका मुख कही जाती है। इस दिन स्नान और दानका विशेष महत्त्व है—

ज्येष्ठस्य शुक्लादशमी सम्वत्सरमुखा स्मृता।
तस्यां स्नानं प्रकुर्वीत दानं चैव विशेषतः॥

इस तिथिको गंगास्नान एवं श्रीगंगाजीके पूजनसे दस प्रकारके पापों* (तीन कायिक, चार वाचिक तथा तीन मानसिक)-का नाश होता है। इसलिये इसे दशहरा कहा गया है। ब्रह्मपुराणका वचन है—

ज्येष्ठे मासि सिते पक्षे दशमी हस्तसंयुता।
हरते दश पापानि तस्माद् दशहरा स्मृता॥

इस दिन गंगाजीमें अथवा सामर्थ्य न हो तो समीपकी किसी पवित्र नदी या सरोवरके जलमें स्नानकर अभयमुद्रायुक्त मकरवाहिनी गंगाजीका ध्यान करे और नाममन्त्र—'गङ्गायै नमः'से अथवा निम्न मन्त्रसे आवाहनादि षोडशोपचार पूजन करे—

'ॐ नमः शिवायै नारायण्यै दशहरायै गङ्गायै नमः।'

उक्त मन्त्रमें 'नमः' के स्थानपर 'स्वाहा' शब्दका प्रयोग करके हवन भी करना चाहिये। तत्पश्चात् 'ॐ नमो भगवति ऐं ह्रीं श्रीं (वाक्-काम-मायामयि) हिलि हिलि मिलि मिलि गङ्गे मां पावय पावय स्वाहा'—इस मन्त्रसे पाँच पुष्पांजलि अर्पित करके गंगाके उत्पत्तिस्थान हिमालय एवं उन्हें पृथ्वीपर लानेवाले राजा भगीरथका नाममन्त्रसे पूजन करना चाहिये।

पूजामें यथाशक्ति दस प्रकारके पुष्प, दशांग धूप, दस दीपक, दस प्रकारके नैवेद्य, दस ताम्बूल एवं दस फल होने चाहिये। दक्षिणा भी दस ब्राह्मणोंको देनी चाहिये, किंतु उन्हें दानमें दिये जानेवाले यव (जौ) और तिल सोलह-सोलह मुट्ठी होने चाहिये।

भगवती गंगाजी सर्वपापहारिणी हैं। अतः दस प्रकारके पापोंकी निवृत्तिके लिये सभी वस्तुएँ दसकी संख्यामें निवेदित की जाती हैं। इस दिन सत्तूका दान और गंगादशहरास्तोत्रका पाठ किया जाता है साथ ही गंगावतरणकी कथा भी सुनी जाती है।

---

* अदत्तानामुपादानं हिंसा चैवाविधानतः। परदारोपसेवा च शारीरं त्रिविधं स्मृतम्॥
पारुष्यमनृतं चैव पैशून्यं चापि सर्वशः। असम्बद्धप्रलापश्च वाङ्मयं स्याच्चतुर्विधम्॥
परद्रव्येष्वभिध्यानं मनसानिष्टचिन्तनम्। वितथाभिनिवेशश्च त्रिविधं कर्म मानसम्॥ (मनु० १२।७, ६, ५)

अर्थात् बिना दिये हुए दूसरेकी वस्तु लेना, शास्त्रवर्जित हिंसा करना तथा परस्त्रीगमन करना—तीन प्रकारके शारीरिक (कायिक) पाप हैं। कटु बोलना, झूठ बोलना, परोक्षमें किसीका दोष कहना तथा निष्प्रयोजन बातें करना वाचिक पाप हैं और दूसरेके द्रव्यको अन्यायसे लेनेका विचार करना, मनसे दूसरेका अनिष्ट चिंतन करना तथा नास्तिक बुद्धि रखना मानसिक पाप हैं।

गङ्गादशहरास्तोत्रम्

ॐ नमः शिवायै गङ्गायै शिवदायै नमो नमः । नमस्ते विष्णुरूपिण्यै ब्रह्ममूर्त्यै नमोऽस्तु ते॥ १ ॥
नमस्ते रुद्ररूपिण्यै शाङ्कर्यै ते नमो नमः । सर्वदेवस्वरूपिण्यै नमो भेषजमूर्तये॥ २ ॥
सर्वस्य सर्वव्याधीनां भिषक्छ्रेष्ठ्यै नमोऽस्तु ते। स्थास्नुजङ्गमसम्भूतविषहन्त्र्यै नमोऽस्तु ते॥ ३ ॥
संसारविषनाशिन्यै जीवनायै नमोऽस्तु ते । तापत्रितयसंहन्त्र्यै प्राणेश्यै ते नमो नमः॥ ४ ॥
शान्तिसन्तानकारिण्यै नमस्ते शुद्धमूर्तये । सर्वसंशुद्धिकारिण्यै नमः पापारिमूर्तये॥ ५ ॥
भुक्तिमुक्तिप्रदायिन्यै भद्रदायै नमो नमः । भोगोपभोगदायिन्यै भोगवत्यै नमोऽस्तु ते॥ ६ ॥
मन्दाकिन्यै नमस्तेऽस्तु स्वर्गदायै नमो नमः । नमस्त्रैलोक्यभूषायै त्रिपथायै नमो नमः॥ ७ ॥
नमस्त्रिशुक्लसंस्थायै क्षमावत्यै नमो नमः । त्रिहुताशनसंस्थायै तेजोवत्यै नमो नमः॥ ८ ॥
नन्दायै लिङ्गधारिण्यै सुधाधारात्मने नमः । नमस्ते विश्वमुख्यायै रेवत्यै ते नमो नमः॥ ९ ॥
बृहत्यै ते नमस्तेऽस्तु लोकधात्र्यै नमोऽस्तु ते । नमस्ते विश्वमित्रायै नन्दिन्यै ते नमो नमः॥ १० ॥
पृथ्व्यै शिवामृतायै च सुवृषायै नमो नमः । परापरशताढ्यायै तारायै ते नमो नमः॥ ११ ॥
पाशजालनिकृन्तिन्यै अभिन्नायै नमोऽस्तु ते। शान्तायै च वरिष्ठायै वरदायै नमो नमः॥ १२ ॥

ॐ शिवस्वरूपा श्रीगंगाजीको नमस्कार है। कल्याणदायिनी गंगाजीको नमस्कार है। हे देवि गंगे! आप विष्णुरूपिणी हैं, आपको नमस्कार है। ब्रह्मस्वरूपा! आपको नमस्कार है, रुद्ररूपिणी! आपको नमस्कार है। शंकरप्रिया! आपको नमस्कार है, नमस्कार है। देवस्वरूपिणी! आपको नमस्कार है। ओषधिरूपा! आपको नमस्कार है॥ १-२॥ आप सबके संपूर्ण रोगोंकी श्रेष्ठ वैद्या हैं, आपको नमस्कार है। स्थावर और जंगम प्राणियोंसे प्रकट होनेवाले विषका आप नाश करनेवाली हैं, आपको नमस्कार है। संसाररूपी विषका नाश करनेवाली जीवनरूपा आपको नमस्कार है। आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक—तीनों प्रकारके क्लेशोंका संहार करनेवाली आपको नमस्कार है। प्राणोंकी स्वामिनी आपको नमस्कार है, नमस्कार है॥ ३-४॥ शांतिका विस्तार करनेवाली शुद्धस्वरूपा आपको नमस्कार है। सबको शुद्ध करनेवाली तथा पापोंकी शत्रुस्वरूपा आपको नमस्कार है। भोग, मोक्ष तथा कल्याण प्रदान करनेवाली आपको बार-बार नमस्कार है। भोग और उपभोग देनेवाली भोगवती नामसे प्रसिद्ध आप पातालगंगाको नमस्कार है॥ ५-६॥ मंदाकिनी नामसे प्रसिद्ध तथा स्वर्ग प्रदान करनेवाली आप आकाशगंगाको बार-बार नमस्कार है। आप भूतल, आकाश और पाताल—तीन मार्गोंसे जानेवाली और तीनों लोकोंकी आभूषणस्वरूपा हैं, आपको बार-बार नमस्कार है। गंगाद्वार, प्रयाग और गंगासागर-संगम—इन तीन विशुद्ध तीर्थस्थानोंमें विराजमान आपको नमस्कार है। क्षमावती आपको नमस्कार है। गार्हपत्य, आहवनीय और दक्षिणाग्नि-रूप त्रिविध अग्नियोंमें स्थित रहनेवाली तेजोमयी आपको बार-बार नमस्कार है॥ ७-८॥ आप ही अलकनंदा हैं, आपको नमस्कार है। शिवलिंग धारण करनेवाली आपको नमस्कार है। सुधाधारामयी आपको नमस्कार है। जगत्‌में मुख्य सरितारूप आपको नमस्कार है। रेवतीनक्षत्ररूपा आपको नमस्कार है। बृहती नामसे प्रसिद्ध आपको नमस्कार है। लोकोंको धारण करनेवाली आपको नमस्कार है। संपूर्ण विश्वके लिये मित्ररूपा आपको नमस्कार है। सबको समृद्धि देकर आनंदित करनेवाली आपको बारंबार नमस्कार है॥ ९-१०॥ आप पृथ्वीरूपा हैं, आपको नमस्कार है। आपका जल कल्याणमय है और आप उत्तम धर्मस्वरूपा हैं, आपको नमस्कार है, नमस्कार है। बड़े-छोटे सैकड़ों प्राणियोंसे सेवित आपको नमस्कार है। सबको तारनेवाली आपको नमस्कार है, नमस्कार है। संसार-बंधनका उच्छेद करनेवाली अद्वैतरूपा आपको नमस्कार है। आप परम शांत, सर्वश्रेष्ठ तथा मनोवांछित वर देनेवाली हैं, आपको बारंबार नमस्कार है॥ ११-१२॥

उग्रायै सुखजग्ध्यै च सञ्जीवन्यै नमोऽस्तु ते। ब्रह्मिष्ठायै ब्रह्मदायै दुरितघ्न्यै नमो नमः॥ १३॥
प्रणतार्तिप्रभञ्जिन्यै जगन्मात्रे नमोऽस्तु ते। सर्वापत्प्रतिपक्षायै मङ्गलायै नमो नमः॥ १४॥
शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे । सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते॥ १५॥
निर्लेपायै दुर्गहन्त्र्यै दक्षायै ते नमो नमः। परापरपरायै च गङ्गे निर्वाणदायिनि॥ १६॥
गङ्गे ममाग्रतो भूया गङ्गे मे तिष्ठ पृष्ठतः। गङ्गे मे पार्श्वयोरेधि गङ्गे त्वय्यस्तु मे स्थितिः॥ १७॥
आदौ त्वमन्ते मध्ये च सर्वं त्वं गाङ्गते शिवे। त्वमेव मूलप्रकृतिस्त्वं पुमान् पर एव हि।
गङ्गे त्वं परमात्मा च शिवस्तुभ्यं नमः शिवे॥ १८॥
य इदं पठते स्तोत्रं शृणुयाच्छ्रद्धयापि यः। दशधा मुच्यते पापैः कायवाक्चित्तसम्भवैः॥ १९॥
रोगस्थो रोगतो मुच्येद्विपद्भ्यश्च विपद्युतः। मुच्यते बन्धनाद् बद्धो भीतो भीतेः प्रमुच्यते॥ २०॥
सर्वान्कामानवाप्नोति प्रेत्य च त्रिदिवं व्रजेत्। दिव्यं विमानमारुह्य दिव्यस्त्रीपरिवीजितः॥ २१॥
गृहेऽपि लिखितं यस्य सदा तिष्ठति धारितम्। नाग्निचौरभयं तस्य न सर्पादिभयं क्वचित्॥ २२॥
ज्येष्ठे मासि सिते पक्षे दशमी हस्तसंयुता। संहरेत् त्रिविधं पापं बुधवारेण संयुता॥ २३॥
तस्यां दशम्यामेतच्च स्तोत्रं गङ्गाजले स्थितः। यः पठेद्दशकृत्वस्तु दरिद्रो वापि चाक्षमः॥ २४॥
सोऽपि तत्फलमाप्नोति गङ्गां सम्पूज्य यत्नतः॥ २५॥

॥ इति श्रीस्कन्दमहापुराणे काशीखण्डे ईश्वरकथितं गङ्गादशहरास्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

आप प्रलयकालमें उग्ररूपा हैं, अन्य समयमें सदा सुखका भोग करानेवाली हैं तथा उत्तम जीवन प्रदान करनेवाली हैं, आपको नमस्कार है। आप ब्रह्मनिष्ठ, ब्रह्मज्ञान देनेवाली तथा पापोंका नाश करनेवाली हैं। आपको बार-बार नमस्कार है। प्रणतजनोंकी पीड़ाका नाश करनेवाली जगन्माता आपको नमस्कार है। आप समस्त विपत्तियोंकी शत्रुभूता तथा सबके लिये मंगलस्वरूपा हैं, आपके लिये बार-बार नमस्कार है॥ १३-१४॥ शरणागतों, दीनों तथा पीड़ितोंकी रक्षामें संलग्न रहनेवाली और सबकी पीड़ा दूर करनेवाली देवि नारायणि! आपको नमस्कार है। आप पाप-ताप अथवा अविद्यारूपी मलसे निर्लिप्त, दुर्गम दुःखका नाश करनेवाली तथा दक्ष हैं, आपको बारंबार नमस्कार है। आप पर और अपर सबसे परे हैं। मोक्षदायिनी गंगे! आपको नमस्कार है॥ १५-१६॥ गंगे! आप मेरे आगे हों, गंगे! आप मेरे पीछे रहें, गंगे! आप मेरे उभयपार्श्वमें स्थित हों तथा गंगे! मेरी आपमें ही स्थिति हो। आकाशगामिनी कल्याणमयी गंगे! आदि, मध्य और अंतमें सर्वत्र आप हैं। गंगे! आप ही मूलप्रकृति हैं, आप ही परम पुरुष हैं तथा आप ही परमात्मा शिव हैं; शिवे! आपको नमस्कार है॥ १७-१८॥ जो श्रद्धापूर्वक इस स्तोत्रको पढ़ता; और सुनता है; वह मन, वाणी और शरीरद्वारा होनेवाले दस प्रकारके पापोंसे मुक्त हो जाता है।* रोगी रोगसे तथा विपत्तिग्रस्त विपत्तियोंसे मुक्त हो जाता है, बंधनमें पड़ा हुआ बंधनमुक्त हो जाता है और भयभीत व्यक्ति भयसे विमुक्त हो जाता है। वह इहलोकमें सभी कामनाओंकी प्राप्ति कर लेता है और मृत्युके अनंतर दिव्यांगनाओंसे सेवित होता हुआ दिव्य विमानमें आरूढ़ होकर स्वर्गलोकको जाता है॥ १९—२१॥ यह स्तोत्र जिसके घरमें लिखकर रखा हुआ हो, उसे कभी अग्नि, चोर और सर्प आदिका भय नहीं होता॥ २२॥ ज्येष्ठमासके शुक्लपक्षमें हस्त नक्षत्रसहित दशमी तिथिका यदि बुधवारसे योग हो, तो उस दिन गंगाजीके जलमें खड़े होकर जो दस बार इस स्तोत्रका पाठ करता है, वह दरिद्र हो या असमर्थ, वह भी उसी फलको प्राप्त होता है, जो यथोक्त विधिसे यत्नपूर्वक गंगाजीकी पूजा करनेपर उपलब्ध होनेवाला बताया गया है॥ २३—२५॥

॥ इस प्रकार श्रीस्कंदमहापुराणके अंतर्गत काशीखंडमें ईश्वरकथित गंगादशहरास्तोत्र संपूर्ण हुआ॥

---

* दशविध पापोंका विवरण पृ०सं० ४७९ पर देखना चाहिये।

मन्त्रमहोदधिमें प्राप्त गंगोपासनाका स्वरूप

देवोपासनाके प्रयोगात्मक साहित्यके अन्तर्गत मन्त्रमहोदधिका विशिष्ट स्थान है। इस ग्रन्थरत्नके प्रणेता आचार्य महीधर हैं, जो अहिच्छत्र (रामनगर-बरेली)-के निवासी वत्सगोत्रीय ब्राह्मण थे। इनका स्थितिकाल सोलहवीं शताब्दी है। इन्होंने काशी आकर अस्सीघाटके निकटवर्ती जगन्नाथ मन्दिरमें भगवान् नृसिंहदेवकी आराधना की, जिससे इनमें लोकोत्तर प्रतिभाका उन्मेष हुआ और इन्होंने नृसिंहपटल, यजुर्भाष्य, मन्त्रमहोदधि आदि अनेक ग्रन्थोंका प्रणयन किया। इन ग्रन्थोंमें सर्वाधिक समादृत तथा प्रथित ग्रन्थ मन्त्रमहोदधि है। मन्त्रमहोदधि मन्त्र-साधनापद्धतिका एक प्रामाणिक ग्रन्थ है। यह पच्चीस तरंगोंमें विभक्त है। प्रथम तरंगमें अनुष्ठानोपयोगी विविध विषयोंका समावेश किया गया है तथा अन्य तरंगोंमें गणपति, दशमहाविद्या, उपविद्या, विष्णु, शिव, भैरवादि देवताओंकी उपासना-पद्धतियोंका विवरण प्राप्त होता है। इन उपासनापद्धतियोंके अन्तर्गत उपास्य देवताओंके यन्त्र-मन्त्र तथा तन्त्रानुष्ठानोंका तलस्पर्शी विवेचन किया गया है।

मन्त्रमहोदधिके सोलहवें तरंगमें भगवती गंगाकी महिमा एवं उपासनापर उत्कृष्टतम विवरण प्राप्त होता है, तदनुसार साधकको सभी अभीष्टोंकी सिद्धिहेतु भगवती गंगाकी उपासना तथा उनके मन्त्रका जपानुष्ठान करना चाहिये। भगवती गंगाका बीस अक्षरोंवाला मन्त्र वहाँ इस प्रकार निरूपित है—

'ॐ शिवायै नारायण्यै दशपापहरायै गङ्गायै स्वाहा।'

इस मन्त्रके श्रीवेदव्यास ऋषि हैं, कृति छन्द है तथा भगवती गंगा देवता हैं। समस्त अभीष्टोंकी सिद्धिके लिये इस मन्त्रका जप करना चाहिये। मन्त्रमहोदधिकारने भगवती गंगाका निम्नोक्त ध्यान बतलाया है—

उत्फुल्लामलपुण्डरीकरुचिरा कृष्णेशविध्यात्मिका
कुम्भेष्टाभयतोयजानि दधती श्वेताम्बरालङ्कृता।
हृष्टास्या शशिशेखराऽखिलनदीशोणादिभिः संस्तुता
ध्येया पापविनाशिनी मकरगा भागीरथी साधकैः॥

(मन्त्रमहोदधि १६। ११६)

अर्थात् जिनकी देहकान्ति खिले हुए स्वच्छ कमलके समान मनोहारिणी है, जो ब्रह्म-विष्णु-रुद्रस्वरूपिणी हैं, जिन्होंने दाहिने भुजयुगलमें वरमुद्रा तथा कमल और वामभुजयुगलमें सुधाकलश तथा अभयमुद्राको धारण किया है, जो श्वेत वस्त्रोंसे अलंकृत हैं, जिनके मस्तकपर चन्द्रमा शोभायमान है तथा समस्त नदियाँ और शोण आदि महानद जिनकी सेवा कर रहे हैं, ऐसी प्रसन्न मुखवाली, मकरपर आरूढ़ पापविनाशिनी भगवती भागीरथीका साधकोंको ध्यान करना चाहिये।

साधकको इस प्रकार भगवती गंगाका ध्यानकर श्रद्धापूर्वक गंगामन्त्रका एक लाख जप पूर्णकर घृताक्त तिलोंके द्वारा दशांश होम करना चाहिये। जपसे पूर्व अष्टदल कमलयुक्त यन्त्रात्मक पीठपर भगवती गंगाका जया आदि अंगशक्तियोंके साथ पूजन करना चाहिये।

गंगापूजन-यन्त्र
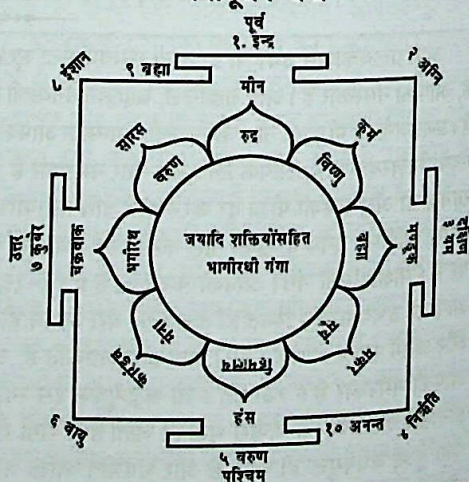
साधक पीठस्थ कमलके केसरोंमें पूर्वादि क्रमसे रुद्र, विष्णु, ब्रह्मा, सूर्य, हिमालय, मेना, भगीरथ तथा वरुणदेवका पूजन करे। यन्त्रस्थ कमलके दलाग्रभागमें पूर्वादि क्रमसे मीन, कूर्म, मण्डूक, मकर, हंस, कारण्डव, चक्रवाक, सारस आदि जलीय देवोंका पूजन करे। यन्त्रात्मक पीठके चतुरस्रमें आयुधों एवं शक्तियोंके सहित इन्द्रादि दश दिक्पालोंका पूजन करना चाहिये। पूजनोपरान्त जप-होम आदिका सविधि अनुपालन करनेपर मन्त्रसाधकको

अभीष्टार्थकी प्राप्ति होती है।

ज्येष्ठ शुक्ल दशमी अर्थात् गंगादशहराके दिन उपवासपूर्वक भगवती गंगाका विशेष यजन करनेके पश्चात् उपर्युक्त मन्त्रका एक सहस्र जप तथा दशांश होम करके प्रत्येक ब्राह्मणको दशप्रस्थ* परिमित (एक सौ साठ मुट्ठी) तिलका दान करे। इस प्रकार अनुष्ठान करनेपर मन्त्र-साधक भगवती गंगाका अनुग्रहभाजन हो जाता है।

इस ग्रन्थमें उपर्युक्त मन्त्रके अतिरिक्त अन्य तीन गंगामन्त्र और प्राप्त होते हैं, वे निम्नलिखित हैं—

१. **'ॐ नमो भगवति ऐं हिलि हिलि मिलि मिलि गङ्गे मां पावय पावय स्वाहा।'** (सप्तविंशत्यक्षरात्मक)

२. **'ॐ हिलि हिलि मिलि मिलि गङ्गे देवि नमः।'** (पञ्चदशाक्षरात्मक)

३. **'ॐ ह्रीं श्रीं नमो भगवति गं गं दयिते नमो हुँ फट्।'** (अष्टादशाक्षरात्मक)

उपर्युक्त सभी मन्त्रोंकी उपासनाका विधान पूर्वके समान ही बतलाया गया है—**'एषाञ्चतुर्णां मन्त्राणामुपास्तिः पूर्ववन्मता।'** भगवती गंगाका अनुग्रह प्राप्त करनेकी इच्छासे साधकको उपर्युक्त रीतिसे भगवती गंगाका ध्यान तथा उनके मन्त्रका जप करना चाहिये।

गंगासप्तमी

(डॉ० श्रीकृष्णपालजी त्रिपाठी)

पुराणोंमें गंगाके आविर्भावकी विभिन्न रूपोंमें जैसे विभिन्न कथाएँ आयी हैं, वैसे ही उनके आविर्भावकी तिथि भी अनेक रूपोंमें मान्य है। मुख्य रूपसे ज्येष्ठमासकी शुक्ल पक्षकी दशमी तिथि गंगादशमी या गंगादशहरा कहलाती है। इस दिन विशेष रूपसे गंगापूजन तथा गंगादशहरास्तोत्रके पाठ करनेकी विधि है। ज्येष्ठमासके समान ही वैशाख शुक्ल तृतीया (अक्षय तृतीया—इस दिनसे सत्ययुगका प्रारम्भ हुआ था)-को मध्याह्नकालमें भगवती गंगाका आविर्भाव हिमालयके गृहमें पुत्री रूपमें हुआ था। इस आशयके बृहद्धर्मपुराणमें निम्न श्लोक प्राप्त होते हैं—

तृतीया नाम वैशाखे शुक्ला नाम्नाक्षया तिथिः।
हिमालयगृहे यत्र गङ्गा जाता चतुर्भुजा॥
वैशाखे मासि शुक्लायां तृतीयायां दिनार्धके।
बभूव देवी सा गङ्गा शुक्ला सत्ययुगाकृतिः॥

(बृहद्धर्मपुराण १५। २२, ४२। ४)

वैशाख शुक्ल सप्तमी पुराणोंमें जह्नुसप्तमी कहलाती है, महर्षि जह्नुके द्वारा पहले क्रोधपूर्वक पी ली गयीं गंगा भगीरथके द्वारा प्रार्थना करनेपर पुनः उनके दक्षिण कर्णसे प्रकट हुईं, इसलिये वे जह्नुपुत्री या जाह्नवीके नामसे भी विख्यात हैं। निर्णयसिन्धु तथा धर्मसिन्धुमें ब्रह्मपुराणके वचनके अनुसार बताया गया है कि इस दिन गंगास्नान एवं गगनमेखलाके रूपमें गंगाका पूजन करना चाहिये। किन्हीं पुराणोंमें बताया गया है कि वे महर्षि जह्नुके जानुदेशका भेदन करके निकलीं, इसलिये जाह्नवी कहलायीं। देवीपुराणका वचन है कि राजर्षि भगीरथद्वारा प्रार्थना करनेपर देवी गंगा तरंगोंके साथ अत्यन्त वेगसे मुनिकी जंघासे प्रकट हुईं और महर्षिको पिता नामसे सम्बोधित करती हुईं बोलीं—

अहं तव सुता तात यतस्त्वद्देहनिर्गता।
अद्य प्रभृति मे नाम जाह्नवीत्यभवत्पितः।

(देवीपुराण ७०। ४०-४१)

तात! मैं आपकी पुत्री हूँ; क्योंकि मैं आपके शरीर (जंघा)-से निकली हूँ। हे तात! आजसे मेरा एक नाम जाह्नवी होगा। जो लोग मेरा 'जाह्नवी' यह नाम एक बार भी स्मरण करेंगे, वे सभी पापों तथा कष्टोंसे मुक्त हो जायँगे—**'न तेषां प्रभविष्यन्ति पापानि दुःखमेव वा॥'**

---

* पलं च कुडवः प्रस्थ आढको द्रोण एव च। धान्यमानेन बोद्धव्याः क्रमशोऽमी चतुर्गुणाः॥ (स्कन्द० काशी० ३७। १४८)
पल = एक मुट्ठी धान, कुडव = चार मुट्ठी, प्रस्थ = सोलह मुट्ठी, आढक = चौंसठ मुट्ठी, द्रोण = दो सौ छप्पन मुट्ठी। एक पूर्णपात्रका मान दो सौ छप्पन मुट्ठीका होता है।

श्रीगङ्गाष्टकम्

भगवति तव तीरे नीरमात्राशनोऽहं विगतविषयतृष्णः कृष्णमाराधयामि।
सकलकलुषभङ्गे स्वर्गसोपानसङ्गे तरलतरतरङ्गे देवि गङ्गे प्रसीद॥ १ ॥
भगवति भवलीलामौलिमाले तवाम्भः कणमणुपरिमाणं प्राणिनो ये स्पृशन्ति।
अमरनगरनारीचामरग्राहिणीनां विगतकलिकलङ्कातङ्कमङ्के लुठन्ति॥ २ ॥
ब्रह्माण्डं खण्डयन्ती हरशिरसि जटावल्लिमुल्लासयन्ती स्वर्लोकादापतन्ती कनकगिरिगुहागण्डशैलात्स्खलन्ती।
क्षोणीपृष्ठे लुठन्ती दुरितचयचमूर्निर्भरं भर्त्सयन्ती पाथोधिं पूरयन्ती सुरनगरसरित्पावनी नः पुनातु॥ ३ ॥
मज्जन्मातङ्गकुम्भच्युतमदमदिरामोदमत्तालिजालं स्नानैः सिद्धाङ्गनानां कुचयुगविगलत्कुङ्कुमासङ्गपिङ्गम्।
सायंप्रातर्मुनीनां कुशकुसुमचयैश्छन्नतीरस्थनीरं पायान्नो गाङ्गमम्भः करिकलभकराक्रान्तरंहस्तरङ्गम्॥ ४ ॥
आदावादिपितामहस्य नियमव्यापारपात्रे जलं पश्चात्पन्नगशायिनो भगवतः पादोदकं पावनम्।
भूयः शम्भुजटाविभूषणमणिर्जह्नोर्महर्षेरियं कन्या कल्मषनाशिनी भगवती भागीरथी दृश्यते॥ ५ ॥
शैलेन्द्रादवतारिणी निजजले मज्जज्जनोत्तारिणी पारावारविहारिणी भवभयश्रेणीसमुत्सारिणी।
शेषाहेरनुकारिणी हरशिरोवल्लीदलाकारिणी काशीप्रान्तविहारिणी विजयते गङ्गा मनोहारिणी॥ ६ ॥
कुतो वीचिर्वीचिस्तव यदि गता लोचनपथं त्वमापीता पीताम्बरपुरनिवासं वितरसि।
त्वदुत्सङ्गे गङ्गे पतति यदि कायस्तनुभृतां तदा मातः शातक्रतवपदलाभोऽप्यतिलघुः॥ ७ ॥

हे देवि! तुम्हारे तीरपर केवल तुम्हारे जलका पान करता हुआ, विषय-तृष्णासे रहित हो, मैं श्रीकृष्णचन्द्रकी आराधना करता हूँ। हे सकल पापविनाशिनि! स्वर्गसोपानरूपिणि! तरलतरतरंगिणि! देवि गंगे! मुझपर प्रसन्न हों॥ १ ॥ हे भगवति! तुम महादेवजीके मस्तककी लीलामयी माला हो, जो प्राणी तुम्हारे जलकणके अणुमात्रको भी स्पर्श करते हैं, वे कलिकलंकके भयको त्यागकर, देवपुरीकी चँवरधारिणी अप्सराओंकी गोदमें शयन करते हैं॥ २ ॥ ब्रह्माण्डको फोड़कर निकलनेवाली, महादेवजीकी जटा-लताको उल्लसित करती हुई, स्वर्गलोकसे गिरती हुई, सुमेरुकी गुफा और पर्वतमालासे झड़ती हुई, पृथ्वीपर लोटती हुई, पापसमूहकी सेनाको कड़ी फटकार देती हुई, समुद्रको भरती हुई, देवपुरीकी पवित्र नदी गंगा हमें पवित्र करे॥ ३ ॥ स्नान करते हुए हाथियोंके कुम्भस्थलसे झरते हुए मदरूपी मदिराकी गन्धके कारण मधुपवृन्द जिससे मतवाले हो रहे हैं, सिद्धोंकी स्त्रियोंके स्तनोंसे बहे हुए कुंकुमके मिलनेसे जो पिंगलवर्ण हो रहा है तथा सायं-प्रातः मुनियोंद्वारा अर्पित कुश और पुष्पोंके समूहसे जो किनारेपर ढका हुआ है, हाथियोंके बच्चोंकी सूँड़ोंसे जिनकी तरंगोंका वेग आक्रान्त हो रहा है, वह गंगाजल हमारा कल्याण करे॥ ४ ॥ जह्नु महर्षिकी कन्या, पापनाशिनी भगवती भागीरथी पहले ब्रह्माके कमण्डलुमें जलरूपसे, फिर शेषशायी भगवान्‌के पवित्र चरणोदकरूपसे और तदनन्तर महादेवजीकी जटाको सुशोभित करनेवाली मणिरूपसे दीख रही है॥ ५ ॥ हिमालयसे उतरनेवाली, अपने जलमें गोता लगानेवालोंका उद्धार करनेवाली, समुद्रविहारिणी, संसार-संकटोंका नाश करनेवाली, [विस्तारमें] शेषनागका अनुकरण करनेवाली, शिवजीके मस्तकपर लताके समान सुशोभित, काशीक्षेत्रमें बहनेवाली, मनोहारिणी गंगाजी विजयिनी हो रही हैं॥ ६ ॥ यदि तुम्हारी तरंग नेत्रोंके सामने आ जाय, तो फिर संसारकी तरंग कहाँ रह सकती है? तुम्हारे थोड़े-से जलका पान करनेपर तुम वैकुण्ठलोकमें निवास देती हो, हे गंगे! यदि जीवोंका शरीर तुम्हारी गोदमें छूट

गङ्गे त्रैलोक्यसारे सकलसुरवधूधौतविस्तीर्णतोये पूर्णब्रह्मस्वरूपे हरिचरणरजोहारिणी स्वर्गमार्गे।
प्रायश्चित्तं यदि स्यात्तव जलकणिका ब्रह्महत्यादिपापे कस्त्वां स्तोतुं समर्थस्त्रिजगदघहरे देवि गङ्गे प्रसीद॥ ८ ॥
मातर्जाह्नवि शम्भुसङ्गवलिते मौलौ निधायाञ्जलिं त्वत्तीरे वपुषोऽवसानसमये नारायणाङ्घ्रिद्वयम्।
सानन्दं स्मरतो भविष्यति मम प्राणप्रयाणोत्सवे भूयाद्भक्तिरविच्युता हरिहराद्वैतात्मिका शाश्वती॥ ९ ॥
गङ्गाष्टकमिदं पुण्यं यः पठेत्प्रयतो नरः। सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णुलोकं स गच्छति॥ १०॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं श्रीगङ्गाष्टकं सम्पूर्णम् ॥

जाता है, तो हे मात:! उस समय इन्द्रपदकी प्राप्ति भी अत्यन्त तुच्छ मालूम होती है॥ ७॥ तीनों लोकोंकी सार, सभी देवांगनाएँ जिसमें स्नान करती हैं, ऐसे विस्तृत जलवाली, पूर्ण ब्रह्मस्वरूपिणी, स्वर्ग-मार्गमें भगवान्के चरणोंकी धूलि धोनेवाली हे गंगे! जब तुम्हारे जलका एक कणमात्र ही ब्रह्महत्यादि पापोंका प्रायश्चित्त है तो हे त्रैलोक्यपापनाशिनि! तुम्हारी स्तुति करनेमें कौन समर्थ है? हे देवि गंगे! प्रसन्न हो॥ ८॥ हे शिवकी संगिनी मातः गंगे! शरीर शान्त होनेके समय प्राण-यात्राके उत्सवमें, तुम्हारे तीरपर, सिर नवाकर हाथ जोड़े हुए, आनन्दसे भगवान्के चरणयुगलका स्मरण करते हुए मेरी अविचल-भावसे हरि-हरमें अभेदात्मिका नित्य भक्ति बनी रहे॥ ९॥ जो पुरुष शुद्ध होकर इस पवित्र श्रीगंगाष्टकका पाठ करता है; वह सब पापोंसे मुक्त होकर वैकुण्ठलोकमें जाता है॥ १०॥

॥ इस प्रकार श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचित श्रीगङ्गाष्टक सम्पूर्ण हुआ ॥

गङ्गादि तीर्थस्थानोंमें करणीय कल्याणकारी तीर्थश्राद्ध

(पं० श्रीबालकृष्णजी कौशिक)

वर्तमान समयमें प्राचीनकालकी तुलनामें तीर्थस्थानोंमें आवागमन एवं प्रवासावधिमें वृद्धि हुई है। प्राचीनकालमें आवागमन एवं आवासकी असुविधाके कारण तीर्थ-यात्राएँ कठिन थीं, फिर भी श्रद्धा-भक्ति विश्वास-निष्ठास्तिक्य-भावके कारण सद्यः फलकारिणी थीं। पदयात्रा एवं खच्चरादि पशुओंके साथ यात्रा तथा तम्बुओंमें आवासादि करके श्रद्धालु तीर्थयात्री पुण्यार्जन करते थे। तीर्थयात्रा तीर्थमहिमा कथाश्रवणसे शुभारम्भ होकर यथाशक्ति तीर्थस्नान, दान, तर्पण, श्राद्ध एवं व्रतादिसे परिपूर्ण होती थी, परंतु वर्तमान तीर्थयात्रामें तीर्थविधि शनैः-शनैः गौण होकर पर्यटन, भ्रमण आदि अधिक प्रभावी होते जा रहे हैं एवं तीर्थसंयमका स्थान आमोद-प्रमोद लेते जा रहे हैं। तीर्थयात्रामें तीर्थश्राद्ध एक महत्त्वपूर्ण पुण्यक्रिया थी, जो शनैः-शनैः गौण होती जा रही है। गंगादि पवित्र नदियोंमें स्नान, दानके साथ पितृतृप्त्यर्थ, तर्पण, श्राद्ध आदि भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। तीर्थश्राद्धसे एक सौ एक कुलोंका भी स्वयंके कल्याणसहित उद्धार होता है। पिताके गोत्रके चौबीस, माताके गोत्रके बीस, पत्नीके गोत्रके सोलह, बहनके गोत्रके बारह, पुत्रीके गोत्रके ग्यारह, बुआके गोत्रमें दस तथा मौसीके गोत्रमें आठ कुल—इस प्रकार एक सौ एक कुलोंका तीर्थश्राद्धसे उद्धार होता है।*

आजकल बार-बार ज्योतिषविज्ञोंद्वारा परिवार-कलह, अशान्ति, पति-पत्नी, पिता-पुत्रोंके मध्य बढ़ते वैमनस्यका कारण पितृदोष बताया जाता है, जिसके निवारणका तीर्थश्राद्ध सर्वसुगम, अल्पव्ययी एवं सद्यः कल्याणकारी उपाय है।

तीर्थश्राद्ध करनेसे इन एक सौ एक कुलोंके

* पिता माता च भार्या च भगिनी दुहिता तथा पितृष्वसा मातृष्वसा सप्तगोत्राणि वै विदुः।
तत्त्वानि विंशतिनृपा द्वादशैकादशा दश अष्टाविति च गोत्राणां कुलमेकोत्तरं शतम्॥ (कर्मकाण्डप्रदीप)

पूर्वजोंका शुभाशीर्वाद सहज रूपमें प्राप्त होता है। यहाँतक कि अन्य श्राद्धादि कार्योंमें पितरोंका आवाहन करना होता है, परंतु तीर्थमें तो पुत्रादिके आगमनपर पितर स्वयं ही श्राद्धादिग्रहणार्थ स्वतः उपस्थित होते हैं।

अन्यत्रावाहिताः काले पितरो यान्त्यमुं प्रति।
अत्रागतं सुतं दृष्ट्वा स्वयमायान्ति सर्वथा॥

(वायुपुराण)

गंगादि पवित्र नदियोंके तीरपर तीर्थश्राद्ध करनेसे अक्षय फलकी प्राप्ति होती है—

गङ्गायमुनयोस्तीरे अयोध्यामरकण्टके।
नर्मदायां गयातीर्थे सर्वमानन्त्यमश्नुते॥
वाराणस्यां कुरुक्षेत्रे भृगुतुङ्गे हिमालये।
सप्तवेण्यृषिकूपे च तदप्यक्षयमुच्यते॥

(शङ्खस्मृति १४। २८-२९)

तीर्थश्राद्ध करनेयोग्य प्रायः सभी तीर्थ होते हैं, फिर भी मत्स्यपुराणके २२वें अध्याय, ब्रह्मपुराणके ९३वें अध्याय, पद्मपुराणके उत्तरखण्डके १७५वें अध्याय एवं १८१वें अध्याय तथा कल्याण तीर्थांकमें विस्तारसे निरूपित हैं।

तीर्थश्राद्धविधि—यह पार्वण एवं एकोद्दिष्ट श्राद्धसे कुछ भिन्न है।

(१) तीर्थश्राद्धमें श्राद्ध करनेसे पूर्व तर्पण अवश्य करना चाहिये।

(२) जिसका पिता जीवित हो (जीवत्पितृक) वह भी कर सकता है।

उद्वाहे पुत्रजनने पित्रेष्ट्यां सौमिके मखे।
तीर्थे ब्राह्मण आयाते षडेते जीवितः पितुः॥

(मैत्रायणीयगृह्यपरिशिष्ट)

(३) तीर्थश्राद्धमें काल (कुतपादि काल)-का भी विचार नहीं किया जाता। रात्रिमें भी तीर्थश्राद्ध कर सकते हैं।

काले वाप्यथवाकाले तीर्थश्राद्धं सदा नरैः।
प्राप्तैरेव सदा कार्यं पितृतर्पणपूर्वकम्॥
तीर्थमेव समासाद्य सद्यो रात्रावपि क्षणम्।
स्नानञ्च तर्पणं श्राद्धं कुर्याच्चैव विधानतः॥
पिण्डदानं ततः शस्तं पितृणाञ्चैव दुर्लभम्।
विलम्बं नैव कुर्वीत न च विघ्नं समाचरेत्॥

(देवीपुराण)

(४) तीर्थश्राद्धमें स्थानीय तीर्थब्राह्मणोंको एवं उनके परम्परागत वचनोंको महत्त्व देना चाहिये, तीर्थमें ब्राह्मण-परीक्षा भी नहीं करनी चाहिये। (तीर्थे विप्रवचो ग्राह्यं स्नानश्राद्धार्चनादिषु)

येषु तीर्थेषु ये विप्रा ये देवा याश्च मातृकाः।
तेषु तान्नावमन्येत यदीच्छेज्जीवितञ्चिरम्॥
तीर्थेषु ब्राह्मणं नैव परीक्षेत कथञ्चन।
अन्नार्थिनमनुप्राप्तं भोजयेन्मनुशासनात्॥

(हेमाद्रि, पद्मपुराण)

तीर्थे द्रव्योपपत्तौ च न कालमवधारयेत्।
पात्रं च ब्राह्मणं प्राप्य सद्यः श्राद्धं विधीयते॥

(हारीत)

(५) तीर्थश्राद्धमें अर्घ्य, आवाहन, अंगुष्ठनिवेशन, विकिरदान तथा तृप्तिविषयक प्रश्न भी नहीं किये जाते हैं।

अर्घ्यमावाहनं चैव द्विजाङ्गुष्ठनिवेशनम्।
तृप्तिप्रश्नञ्च विकिरं तीर्थश्राद्धे विवर्जयेत्॥

(श्राद्धचिन्तामणिमें पद्मपुराणका वचन)

(६) तीर्थश्राद्धमें गीध, चाण्डाल, कुत्तों आदिके देखनेसे भी श्राद्धकर्म दूषित नहीं होता है, अतः इन्हें देखनेसे रोकना भी नहीं चाहिये।

श्राद्धं तत्र तु कर्त्तव्यमर्घ्यावाहनवर्जितम्।
श्वध्वांक्षगृध्रकाकाद्या घ्नन्ति दृष्ट्वा न तत्क्रियाः॥

(हेमाद्रिमें पद्मपुराणका वचन)

(७) अग्नौकरण भी तीर्थश्राद्धमें वर्जित है।

'अग्नौकरणं तीर्थश्राद्धे न कार्यम्।'

(स्मृतिरत्नावली)

(८) तीर्थश्राद्धमें विश्वेदेवोंका आवाहन भी नहीं किया जाता है, जैसा कि पार्वणादि श्राद्धमें किया जाता है।

नावाहनं न दिग्बन्धो न दोषो दृष्टिसम्भवः।
सकारुण्येन कर्तव्यं तीर्थश्राद्धं विचक्षणैः॥

(वायुपुराण १०५। ३८)

यात्रागतैर्नरैर्देवि तत्र क्षेत्रनिवासिनः।
ब्राह्मणाः प्रथमं पूज्याः दैवे पित्र्ये च कर्मणि॥

(हेमाद्रिमें स्कन्दपुराण प्रभासखण्डका वचन)

(९) तीर्थश्राद्धमें षड् दैवत्य, नवदैवत्य एवं द्वादश दैवत्यके शास्त्रीय वचन मिलते हैं (दैवत्यका अर्थ चटसे

यानी पितरोंके आसनसे है) षड्दैवत्यमें सपत्नीक पिता, पितामह तथा प्रपितामह एवं सपत्नीक मातामह, प्रमातामह, वृद्धप्रमातामह का विधान है। नवदैवत्यमें पिता, पितामह, प्रपितामह एवं माता, पितामही, प्रपितामही, सपत्नीक मातामह, प्रमातामह एवं वृद्धप्रमातामहका विधान है। द्वादशदैवत्यमें माता, पितामही, प्रपितामही, पिता, पितामह, प्रपितामह, मातामही, प्रमातामही, वृद्धप्रमातामही, मातामह, प्रमातामह एवं वृद्धप्रमातामहके आसनका विधान है। अन्य स्वजनोंहेतु भी एक अलग आसन लगाया जा सकता है।

महालये गयाश्राद्धे वृद्धौ चान्वष्टकासु च।
नवदैवत्यमत्रेष्टं शेषं षाट्पौरुषं विदुः॥
(विष्णुधर्मोत्तरपुराण)

अन्वष्टकायां वृद्धौ च गयायां च मृताहनि।
पितामह्यादिभिः सार्द्धं मातुः श्राद्धं समाचरेत्॥
(शातातप)

तीर्थे श्राद्धं पित्रादि नवदैवत्यं कार्यम्॥
(गौड़ीय श्राद्धप्रकाश)

महालये गयाश्राद्धे वृद्धौ चान्वष्टकासु च।
ज्ञेयं द्वादशदैवत्यं तीर्थे प्रौष्ठे मघासु च॥
(द्वैतनिर्णय)

'निगमे तु द्वादशदैवत्यमुक्तम्।'
'पित्रादि नवदैवं वा तथा द्वादशदैवतमिति।'
(अग्निपुराण)

गौड़ीय श्राद्धप्रकाशमें नवदैवत्य एवं द्वादश दैवत्यका विधान ही दिया गया है। अन्त्यकर्म-श्राद्धप्रकाशमें षड्दैवत्य विधान दिया गया है।

श्राद्धविधि—

आसनं पिण्डदानं च पुनः प्रत्यवनेजनम्।
अर्चनं दक्षिणां चान्नं दद्यात्तीर्थेष्वयं विधिः॥
(पितृभक्तौ)

पिण्डासनं पिण्डदानं पुनः प्रत्यवनेजनम्।
दक्षिणा चान्नसङ्कल्पस्तीर्थश्राद्धेष्वयं विधिः॥
(वायुपुराण)

पिण्डद्रव्य—

सक्तुभिः पिण्डदानं स्यात् सयवैः पायसेन वा।
कर्तव्यमृषिभिर्दिष्टं पिण्याकेनेङ्गुदेन वा।
पिण्याकेन तिलानां वा भक्तिमद्भिर्नरैः सदा॥
(देवीपुराण)

पायसेनाज्ययुक्तेन सक्तुना चरुणा तथा।
पिण्डदानं तण्डुलैश्च गोधूमैस्तिलमिश्रितैः॥
(अग्निपुराण)

तीर्थश्राद्धे सदा पिण्डान् क्षिपेत्तीर्थे समाहितः।
दक्षिणाभिमुखो भूत्वा पित्र्यादिग्या प्रकीर्तिता॥
(विष्णुधर्मोत्तर)

सामान्यतः आसनदान, पितृपूजन, अर्चनदान, मण्डलकरण, अन्नपरिवेषण, शास्त्रवचन, पिण्डवेदी निर्माणोपरान्तावनेजनादि पिण्डदान, प्रत्यवनेजन, सूत्रदान, पिण्डपूजन, अक्षय्योदकदान, दक्षिणा, भोजनदानादि करना चाहिये।

कपित्थ फलाकारके गोल पिण्ड गाढ़ी खीर, जौ या गेहूँके आटे, सत्तू या खोएसे भी बनाये जा सकते हैं। दो वस्त्र—धुली हुई धोती एवं उत्तरीय वस्त्र धारणकर श्राद्धकार्य करें।

स्कन्दपुराणके काशीखण्डमें गंगामहिमामें कहा गया है कि जो पितरोंके उद्देश्यसे भक्तिपूर्वक गुड़, घी, तिल और मधुयुक्त खीर गंगामें डालते हैं, उनके पितर सौ वर्षतक तृप्त होकर अपनी सन्तानोंको मनोवांछित वस्तुएँ प्रदान करते हैं। ज्येष्ठ शुक्ल हस्तयुक्त गंगा दशहरा पर्वपर गुड़ एवं सत्तूके दस पिण्ड 'ॐ नमः शिवायै नारायण्यै दशहरायै गङ्गायै स्वाहा' मन्त्रसे दान करनेसे एवं दस-दस फल, पुष्प, नैवेद्य, दीप, दशांग धूप, दस ब्राह्मणोंको दस सेर तिल दानादिद्वारा मनुष्य दस जन्मके दस प्रकारके पापोंसे निस्सन्देह छूट जाता है। दस पाप ये बताये गये है—(१) बिना दी हुई वस्तु लेना, (२) निषिद्ध हिंसा, (३) परस्त्रीसंगम (दैहिक पापत्रय), (४) कठोर वचन, (५) झूठ बोलना, (६) चुगली करना, (७) व्यर्थ वार्तालाप, (८) दूसरेका धन लेनेका विचार, (९) मनसे दूसरोंका बुरा चिन्तन, (१०) असत् वस्तुओंमें आग्रह।

अन्य पुण्यकालोंकी अपेक्षा गंगा दशहराके अवसरपर शास्त्रोक्त रीतिसे विहित तीर्थश्राद्ध अमोघ फलप्रद है।

गंगाजीका अष्टोत्तरशतनामस्तोत्र तथा उसका माहात्म्य

श्रीनारद उवाच

गङ्गा नाम परं पुण्यं कथितं परमेश्वर। नामानि कति शस्तानि गङ्गायाः प्रणिशंस मे॥ १॥

श्रीमहादेव उवाच

नाम्नां सहस्रमध्ये तु नामाष्टशतमुत्तमम्। जाह्नव्या मुनिशार्दूल तानि मे शृणु तत्त्वतः॥ २॥
ॐ गङ्गा त्रिपथगा देवी शम्भुमौलिविहारिणी। जाह्नवी पापहन्त्री च महापातकनाशिनी॥ ३॥
पतितोद्धारिणी स्रोतस्वती परमवेगिनी। विष्णुपादाब्जसम्भूता विष्णुदेहकृतालया॥ ४॥
स्वर्गाब्धिनिलया साध्वी स्वर्णदी सुरनिम्नगा। मन्दाकिनी महावेगा स्वर्णशृङ्गप्रभेदिनी॥ ५॥
देवपूज्यतमा दिव्या दिव्यस्थाननिवासिनी। सुचारुनीररुचिरा महापर्वतभेदिनी॥ ६॥
भागीरथी भगवती महामोक्षप्रदायिनी। सिन्धुसङ्गगता शुद्धा रसातलनिवासिनी॥ ७॥
महाभोगा भोगवती सुभगानन्ददायिनी। महापापहरा पुण्या परमाह्लाददायिनी॥ ८॥
पार्वती शिवपत्नी च शिवशीर्षगतालया। शम्भोर्जटामध्यगता निर्मला निर्मलानना॥ ९॥
महाकलुषहन्त्री च जह्नुपुत्री जगत्प्रिया। त्रैलोक्यपावनी पूर्णा पूर्णब्रह्मस्वरूपिणी॥ १०॥
जगत्पूज्यतमा चारुरूपिणी जगदम्बिका। लोकानुग्रहकर्त्री च सर्वलोकदयापरा॥ ११॥
याम्यभीतिहरा तारा पारा संसारतारिणी। ब्रह्माण्डभेदिनी ब्रह्मकमण्डलुकृतालया॥ १२॥
सौभाग्यदायिनी पुंसां निर्वाणपददायिनी। अचिन्त्यचरिता चारुरुचिरातिमनोहरा॥ १३॥
मर्त्यस्था मृत्युभयहा स्वर्गमोक्षप्रदायिनी। पापापहारिणी दूरचारिणी वीचिधारिणी॥ १४॥

श्रीनारदजी बोले—परमेश्वर! आपने बताया कि 'गंगा' नाम परम पुण्यदायी है। गंगाके और भी कितने श्रेष्ठ नाम हैं, उन्हें मुझे बताइये॥ १॥

श्रीमहादेवजी बोले—मुनिश्रेष्ठ! गंगाके एक हजार नामोंमें एक सौ आठ नाम अत्युत्तम हैं। आप मुझसे उन नामोंको तत्त्वतः सुन लीजिये—॥ २॥

१. [ओंकारस्वरूपिणी] गंगा, २. त्रिपथगा देवी, ३. शंभुमौलिविहारिणी, ४. जाह्नवी, ५. पापहन्त्री, ६. महापातकनाशिनी, ७. पतितोद्धारिणी, ८. स्रोतस्वती, ९. परमवेगिनी, १०. विष्णुपादाब्जसम्भूता, ११. विष्णुदेहकृतालया, १२. स्वर्गाब्धिनिलया, १३. साध्वी, १४. स्वर्णदी, १५. सुरनिम्नगा, १६. मन्दाकिनी, १७. महावेगा, १८. स्वर्णशृंगप्रभेदिनी, १९. देवपूज्यतमा, २०. दिव्या, २१. दिव्यस्थाननिवासिनी, २२. सुचारुनीररुचिरा, २३. महापर्वतभेदिनी, २४. भागीरथी, २५. भगवती, २६. महामोक्षप्रदायिनी, २७. सिंधुसंगगता, २८. शुद्धा, २९. रसातलनिवासिनी॥ ३—७॥

३०. महाभोगा, ३१. भोगवती, ३२. सुभगानन्ददायिनी, ३३. महापापहरा, ३४. पुण्या, ३५. परमाह्लाददायिनी, ३६. पार्वती, ३७. शिवपत्नी, ३८. शिवशीर्षगतालया, ३९. शम्भोर्जटामध्यगता, ४०. निर्मला, ४१. निर्मलानना, ४२. महाकलुषहन्त्री, ४३. जह्नुपुत्री, ४४. जगत्प्रिया, ४५. त्रैलोक्यपावनी, ४६. पूर्णा, ४७. पूर्णब्रह्मस्वरूपिणी, ४८. जगत्पूज्यतमा, ४९. चारु-रूपिणी, ५०. जगदम्बिका, ५१. लोकानुग्रहकर्त्री, ५२. सर्वलोकदयापरा, ५३. याम्यभीतिहरा, ५४. तारा, ५५. पारा, ५६. संसारतारिणी, ५७. ब्रह्माण्डभेदिनी, ५८. ब्रह्मकमण्डलुकृतालया, ५९. सौभाग्यदायिनी, ६०. पुंसां निर्वाणपददायिनी, ६१. अचिन्त्यचरिता, ६२. चारुरुचिरातिमनोहरा, ६३. मर्त्यस्था, ६४. मृत्युभयहा, ६५. स्वर्गमोक्षप्रदायिनी, ६६. पापापहारिणी, ६७. दूरचारिणी, ६८. वीचिधारिणी॥ ८—१४॥

कारुण्यपूर्णा करुणामयी दुरितनाशिनी । गिरिराजसुता गौरीभगिनी गिरिशप्रिया ॥ १५ ॥
मेनकागर्भसम्भूता मैनाकभगिनीप्रिया । आद्या त्रिलोकजननी त्रैलोक्यपरिपालिनी ॥ १६ ॥
तीर्थश्रेष्ठतमा श्रेष्ठा सर्वतीर्थमयी शुभा । चतुर्वेदमयी सर्वा पितृसंतृप्तिदायिनी ॥ १७ ॥
शिवदा शिवसायुज्यदायिनी शिववल्लभा । तेजस्विनी त्रिनयना त्रिलोचनमनोरमा ॥ १८ ॥
सप्तधारा शतमुखी सगरान्वयतारिणी । मुनिसेव्या मुनिसुता जह्नुजानुप्रभेदिनी ॥ १९ ॥
मकरस्था सर्वगता सर्वाशुभनिवारिणी । सुदृश्या चाक्षुषीतृप्तिदायिनी मकरालया ॥ २० ॥
सदानन्दमयी नित्यानन्ददा नगपूजिता । सर्वदेवाधिदेवैश्च परिपूज्यपदाम्बुजा ॥ २१ ॥
एतानि मुनिशार्दूल नामानि कथितानि ते । शस्तानि जाह्नवीदेव्याः सर्वपापहराणि च ॥ २२ ॥
य इदं पठते भक्त्या प्रातरुत्थाय नारद । गङ्गायाः परमं पुण्यं नामाष्टशतमेव हि ॥ २३ ॥
तस्य पापानि नश्यन्ति ब्रह्महत्यादिकान्यपि । आरोग्यमतुलं सौख्यं लभते नात्र संशयः ॥ २४ ॥
यत्र कुत्रापि संस्नायात्पठेत्स्तोत्रमनुत्तमम् । तत्रैव गङ्गास्नानस्य फलं प्राप्नोति निश्चितम् ॥ २५ ॥
प्रत्यहं प्रपठेदेतद् गङ्गानामशताष्टकम् । सोऽन्ते गङ्गामनुप्राप्य प्रयाति परमं पदम् ॥ २६ ॥
गङ्गायां स्नानसमये यः पठेद्भक्तिसंयुतः । सोऽश्वमेधसहस्राणां फलमाप्नोति मानवः ॥ २७ ॥
गवामयुतदानस्य यत्फलं समुदीरितम् । तत्फलं समवाप्नोति पञ्चम्यां प्रपठन्नरः ॥ २८ ॥
कार्तिक्यां पौर्णमास्यां तु स्नात्वा सागरसङ्गमे । यः पठेत्स महेशत्वं याति सत्यं न संशयः ॥ २९ ॥

॥ इति श्रीमहाभागवते महापुराणे श्रीगङ्गादेव्या अष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

---

६९. कारुण्यपूर्णा, ७०. करुणामयी, ७१. दुरितनाशिनी, ७२. गिरिराजसुता, ७३. गौरीभगिनी, ७४. गिरिशप्रिया, ७५. मेनकागर्भसम्भूता, ७६. मैनाकभगिनीप्रिया, ७७. आद्या, ७८. त्रिलोकजननी, ७९. त्रैलोक्यपरिपालिनी, ८०. तीर्थश्रेष्ठतमा, ८१. श्रेष्ठा, ८२. सर्वतीर्थमयी, ८३. शुभा, ८४. चतुर्वेदमयी, ८५. सर्वा, ८६. पितृसंतृप्तिदायिनी, ८७. शिवदा, ८८. शिवसायुज्यदायिनी, ८९. शिववल्लभा, ९०. तेजस्विनी, ९१. त्रिनयना, ९२. त्रिलोचनमनोरमा, ९३. सप्तधारा, ९४. शतमुखी, ९५. सगरान्वयतारिणी, ९६. मुनिसेव्या, ९७. मुनिसुता, ९८. जह्नुजानुप्रभेदिनी, ९९. मकरस्था, १००. सर्वगता, १०१. सर्वाशुभनिवारिणी, १०२. सुदृश्या, १०३. चाक्षुषीतृप्तिदायिनी, १०४. मकरालया, १०५. सदानन्दमयी, १०६. नित्यानन्ददा, १०७. नगपूजिता, १०८. सर्वदेवाधिदेवैः परिपूज्यपदाम्बुजा ॥ १५—२१ ॥

हे मुनिश्रेष्ठ! मैंने आपसे भगवती गंगाके ये श्रेष्ठ नाम बता दिये। ये नाम समस्त पापोंका विनाश करनेवाले हैं ॥ २२ ॥ नारद! जो व्यक्ति प्रातःकाल उठकर गंगाके इन परम पुण्य देनेवाले एक सौ आठ नामोंको भक्तिपूर्वक पढ़ता है, उसके ब्रह्महत्या आदि पाप भी नष्ट हो जाते हैं तथा वह अतुलनीय आरोग्य एवं सुख प्राप्त करता है, इसमें कोई संदेह नहीं है ॥ २३-२४ ॥ जहाँ-कहीं भी स्नान करके मनुष्य यदि इस उत्तम स्तोत्रका पाठ करे, तो उसे वहींपर गंगास्नानका फल निश्चितरूपसे प्राप्त हो जाता है ॥ २५ ॥ जो मनुष्य गंगाके एक सौ आठ नामोंवाले इस स्तोत्रका प्रतिदिन पाठ करता है, वह अंतमें गंगाको प्राप्त होकर परमपद प्राप्त कर लेता है ॥ २६ ॥ जो मनुष्य गंगामें स्नानके समय भक्तिपरायण होकर इसका पाठ करता है, वह हजारों अश्वमेधयज्ञोंका फल प्राप्त करता है ॥ २७ ॥ पंचमी तिथिको इसका पाठ करनेवाला मनुष्य वह फल प्राप्त करता है, जो फल दस हजार गायोंके दानका कहा गया है ॥ २८ ॥ कार्तिकपूर्णिमाको गंगासागरसंगममें स्नान करके जो मनुष्य इसका पाठ करता है, वह शिवत्वको प्राप्त हो जाता है, यह सत्य है, इसमें कोई संशय नहीं है ॥ २९ ॥

॥ इस प्रकार श्रीमहाभागवतमहापुराणमें श्रीगंगादेवीका अष्टोत्तरशतनामस्तोत्र संपूर्ण हुआ ॥

काशीका गंगामहोत्सव

(श्रीचन्द्रदेवजी मिश्र, एम०ए०, बी०एड)

काशीका गंगा-महोत्सव कार्तिकी पूर्णिमाके स्नानपर्वपर आयोजित किया जानेवाला एक सांस्कृतिक आयोजन है। इसका मुख्य उद्देश्य है—भगवती भागीरथीकी महती महिमाका प्रकाशन। जैसा कि हमारे आर्षग्रन्थोंमें गंगा एक देवीके रूपमें सम्मानित और पूजित हैं, हमारा भी यह पुनीत कर्तव्य तथा धर्म है कि उनका अर्चन-पूजन और आरती-वन्दन करें। उनकी प्रसन्नता और अनुकूलतासे हमें मनोवांछित फलकी प्राप्ति तो होती ही है, आमुष्मिक फल भी सुलभ होता है। इसीलिये भारतीय जनमानसने सदासे गंगाके साथ अपनेको जोड़ रखा है।

गंगा माताके नाम-स्मरणका बहुत बड़ा फल है। यदि कोई सैकड़ों योजन दूरसे भी 'गंगा' इस प्रकारसे उच्चारण करता है तो वह समस्त पापोंसे मुक्त होकर विष्णुलोक (शिवलोक)-को प्राप्त कर लेता है, ऐसा पद्मपुराणका वचन है—

गङ्गा गङ्गेति यो ब्रूयाद् योजनानां शतैरपि।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति॥

भगवती गंगा हिमालयसे निकली हैं, जो देवताओंकी भूमि है। इसी कारण इन्हें देवसरि या देवनदी भी कहते हैं। मूलतः ये भगवान् विष्णुके पद-नखसे निःसृत हैं। गंगाजीका नाम 'ब्रह्मद्रव' भी है अर्थात् ब्रह्मका द्रव। इन्हें ब्रह्मरस या ब्रह्मरसायन भी कह सकते हैं। भगवान् विष्णु (ब्रह्म)-में ये पहले निराकार थीं। पद-नखसे निर्गत होनेपर 'नीराकार' हो गयीं। इस प्रकार 'ब्रह्म' ही द्रवित होकर 'गंगा' बने हैं।

गंगाजीका दर्शन गोविन्दका दर्शन है, स्पर्श भी उन्हींका स्पर्श है, मज्जन भी उन्हींमें है, पूजन-वन्दन-आरती और आचमन भी गोविन्दका ही है। काशी परम मनोहर अतीव सुन्दर जो सर्वविद्याकी राजधानी है, इसके मूलमें गंगा और गंगाधर—शंकर दोनोंका सुभग संयोग है। एक ओर यदि शङ्कर यहाँ प्राणत्याग करनेवालोंको तारकमन्त्र देकर जन्मबन्धविनिर्मुक्त कर देते हैं, तो दूसरी ओर ममतामयी माता गंगा उनके पार्थिव शरीरके भस्म-कणोंको अपनी अमृतमयी धारामें विलीन कर लेती हैं।

ऐसी पावन-पुनीत गंगा जो शिवजीके शीशपर मालती मालाके समान विराजमान हैं, उनकी महिमाका वर्णन किसीके लिये भी शक्य नहीं है। फिर भी श्रद्धालु भक्तोंने अपने भाव-पुष्प उनके चरणोंमें सादर समर्पित किये हैं। यथा आद्य शङ्कराचार्यकृत गंगास्तुति—

देवि सुरेश्वरि भगवति गङ्गे त्रिभुवनतारिणि तरलतरङ्गे।
शङ्करमौलिविहारिणि विमले मम मतिरास्तां तव पदकमले॥
भागीरथि सुखदायिनि मातस्तव जलमहिमा निगमे ख्यातः।
नाहं जाने तव महिमानं पाहि कृपामयि मामज्ञानम्॥

हे देवि गंगे! तुम देवगणकी ईश्वरी हो, हे भगवति! तुम त्रिभुवनको तारनेवाली विमल और तरल-तरंगमयी तथा शङ्करके मस्तकपर विहार करनेवाली हो। हे मातः! तुम्हारे चरणोंमें मेरी मति लगी रहे। हे भागीरथि! तुम सब प्राणियोंको सुख देती हो। हे मातः! वेद-शास्त्रमें तुम्हारे जलका माहात्म्य वर्णित है, मैं तुम्हारी महिमा कुछ नहीं जानता। हे दयामयि! मुझ अज्ञानीकी रक्षा करो।

मैथिलकोकिल विद्यापतिने तो यहाँतक कहा है कि योग, जप, तप और ध्यान आदि करनेकी क्या आवश्यकता है, मात्र गंगाजीमें स्नान कर लेनेसे मानव-जन्म कृतार्थ हो जाता है—

कि करब जप-तप जोग धेआने।
जनम कृतारथ एकहि सनाने॥

काशीके दशाश्वमेधघाटपर प्रतिवर्ष कार्तिक पूर्णिमाको गंगामहोत्सवका आयोजन होता है, जो अत्यन्त लोकप्रिय है। भारतवर्षके कोने-कोनेसे गंगाभक्त, सन्त-महात्मा, विद्वान् एवं कलाकार तो यहाँ पहुँचते ही हैं, विदेशी पर्यटक भी इस समारोहमें सम्मिलित होकर स्वयंको धन्य समझते हैं।

इस गंगा-महोत्सवको सुचारु एवं सुव्यवस्थित रूप

देनेके लिये यहाँके समस्त घाटोंकी सफाईकर उन्हें सजाया जाता है। लगभग हजारकी संख्यामें नावें और अग्निबोटोंकी व्यवस्था होती है। प्रत्येक घाटपर दीपोंकी व्यवस्था की जाती है। सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत करनेके लिये दशाश्वमेधघाट अत्यन्त प्रशस्त और विशाल है ही। तटसे लगभग २५-३० फीटकी दूरीपर गंगाकी धारामें विशाल और अत्यन्त भव्य मंच बनाया जाता है। इस मंचपर पहुँचनेके लिये एक ओरसे एक सुन्दर एवं लघु सेतु भी निर्मित होता है। इस घाटके निचले सोपानोंपर सबसे आगे महलदार आरतीथाल लिये हुए पचासों महिलाएँ तपस्विनीके वेशमें पंक्तिबद्ध होकर बैठी रहती हैं। उनके पीछे घड़ी-घण्ट तथा शंखवादक क्रमशः दूसरी-तीसरी सीढ़ियोंपर आसीन होते हैं। वे भी वल्कल वेशमें ही होते हैं। दर्शक और श्रोताओंकी उपस्थिति ४ बजे अपराह्नसे ही होने लगती है। मुख्य कार्यक्रमका समय लगभग ५-३० बजेसे सायं ७-३०बजेतक निर्धारित रहता है। धीरे-धीरे श्रद्धालुजन नावों और स्टीमरोंपर सवार होकर अस्सीघाटसे राजघाटकी छबिका अवलोकन करने लगते हैं। घाटोंपर स्थित बहुरंगे विद्युत् बल्बोंसे प्रकाशित गगनचुम्बी अट्टालिकाएँ अद्भुत छटा बिखेरती हैं। इस अवसरपर हजारोंकी संख्यामें दीप प्रज्वलितकर गंगाजीकी

दीपदान

धवल धारामें प्रवाहित किये जाते हैं। यह प्रक्रिया चलती ही रहती है, तबतक महोत्सवके कार्यक्रमोंकी प्रस्तुतियाँ प्रारम्भ हो जाती हैं। नावें एवं स्टीमर मंचको तीन तरफसे घेरकर सचल आरक्षीदलोंकी नियन्त्रण-रेखाके बाहर स्थित हो जाते हैं। धारा और घाटकी अपार भीड़ जनसमुद्रके समान लगती है।

मंचपर आसीन विद्वज्जन, सम्भ्रान्त, सज्जन, राजनेता एवं काशीके गायक-वादक, कलाकार काशीकी सभ्यता और शालीनताकी प्रतिमूर्ति-से जान पड़ते हैं। सधे एवं मधुर स्वरोंमें गंगा-स्तुतिकी प्रस्तुतिसे श्रोता मन्त्रमुग्ध हो जाते हैं। पुनः गंगासाहित्य-विवेचन, गंगाजीका दिव्य चरित्रकथन, कार्तिकी पूर्णिमा, स्नान-पर्व-माहात्म्य, काशी-माहात्म्य तथा काशीश्वरके विलक्षण चरित्रके संदर्भोंमें वरेण्य विद्वानोंकी वक्तृताएँ श्रोताओंको आत्मविभोर कर देती हैं। गायक-वादक कलाकारोंके सम्मानमें पुरस्कार-वितरण और तब अन्तिम प्रस्तुति गंगाजीकी आरती होती है।

आरतीकी घोषणा होते ही जो जहाँ होते हैं, वहीं शान्तचित्त खड़े हो जाते हैं। श्रद्धा-भक्तिसमन्वित स्वरोंमें *'जय गंगे-गंगे माँ जय गंगे-गंगे'* का गायन प्रारम्भ करते ही आरती, घड़ीघण्ट तथा शंखवादन भी होने लगता है। कलाकारोंकी स्वर-संप्रेपणीयताकी कुशलता अनुपम होती है, जिससे सभी दर्शक एवं श्रोता एक ही भावमें विभोर हो झूमने लगते हैं। ऐसा लगता है कि सभीने निःसंज्ञ होकर साधारणीकरण अथवा मधुमती भूमिकाको प्राप्त कर लिया है। एक साथ श्रद्धा, विश्वास, धर्म, संस्कृति, साधनोपासनाकी उपलब्धि—विराट् स्वरूपका दर्शन हो जाता है। उन क्षणोंमें आकाशकी ओर देखें तो प्रतीत होता है, नक्षत्रलोकमें एक भी तारा नहीं है और इधर गंगाकी धारामें दृष्टि डालिये तो लगता है कि दीपमालिकाओंकी अवलियोंने एक अपर चन्द्रलोकका दृश्य उपस्थित कर दिया है। ऐसा लगता है कि पूरा चन्द्रलोक ही आज कार्तिकी पूर्णिमाके पर्वपर गंगास्नानार्थ नीचे उतर आया है। उत्सवोंकी नगरी काशीका यह गंगा-महोत्सव, विशिष्ट उल्लास, आह्लाद एवं माँ गंगाके प्रति श्रद्धा-भक्तिका प्रतीकरूप है।

गंगापूजनकी विधि

गंगाजीका साक्षात् पूजन करना हो तो गंगा नदीके जलमें किया जा सकता है अथवा अन्यत्र किसी जलमें अथवा जलपूर्ण कलशमें गंगाजीका आवाहन करके पूजन करना चाहिये। यदि प्रतिमा बनाकर पूजन करना हो तो किसी काष्ठपीठपर श्वेतवस्त्र बिछाकर उसके ऊपर श्वेत अक्षतोंसे अष्टदल कमल बना ले और उसके ऊपर गंगाजलसे पूर्ण एक ताम्रमय अथवा मिट्टीके कलशको स्थापित करे और उस कलशके ऊपर तण्डुलपूर्ण पात्र रखकर उसपर यथाशक्ति सुवर्ण आदिकी बनी मकरवाहिनी गंगाजीकी प्रतिमाको प्राण-प्रतिष्ठाकर स्थापित करे और निम्न मन्त्रोंसे पूजन करे। 'गङ्गायै नमः' इस नाममन्त्रसे भी पूजन किया जा सकता है। गंगादशहरा आदि विशेष अवसरोंपर पूजनके साथ ही गंगादशहरास्तोत्रका पाठ आदि भी किया जाता है। मन्त्रमहोदधिमें गंगायन्त्र बनाकर उसमें गंगापूजनका विधान दिया गया है।

ध्यान

हाथमें पुष्प लेकर भगवती गंगाका ध्यान करे[१]—

सितमकरनिषण्णां शुभ्रवर्णां त्रिनेत्रां
करधृतकलशोद्यत्सोत्पलामत्यभीष्टाम्।
विधिहरिहररूपां सेन्दुकोटीरजुष्टां
कलितसितदुकूलां जाह्नवीं तां नमामि॥

नमामि गङ्गे तव पादपङ्कजं
सुरासुरैर्वन्दितदिव्यरूपम्।
भुक्तिं च मुक्तिं च ददासि नित्यं
भावानुसारेण सदा नराणाम्॥

त्रिपथगामिन्यै गंगायै नमः ध्यानार्थे पुष्पाणि समर्पयामि। (पुष्प अर्पित करे।)

आवाहन[२]

एह्येहि गङ्गे दुरितौघनाशिनि
झषाधिरूढे उदकुम्भहस्ते।
श्रीविष्णुपादाम्बुजसम्भवे त्वं
पूजां गृहीतुं शुभदे नमस्ते॥

त्रिपथगामिन्यै गंगायै नमः आवाहनार्थे पुष्पाणि समर्पयामि। (पुष्प अर्पित करे।)

आसन

सिंहाङ्कितं स्वर्णपीठं नानारत्नोपशोभितम्।
अनेकशक्तिसंयुक्तमासनं प्रतिगृह्यताम्॥

त्रिपथगामिन्यै गंगायै नमः आसनार्थे पुष्पाणि समर्पयामि।

प्रतिष्ठा

यदि प्रतिमाका पूजन करना हो तो निम्न मन्त्रोंसे अक्षत छिड़कते हुए प्रतिमाकी प्रतिष्ठा कर ले—

१-वे श्वेत मकरपर विराजमान हैं, उनका वर्ण श्वेत है, उनके तीन नेत्र हैं, वे अपने दो हाथोंमें पूर्ण कलश तथा अन्य दो हाथोंमें सुन्दर कमल लिये हुए हैं, वे भक्तोंको अभीष्ट फल देनेवाली हैं तथा ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्र—इन त्रिदेवोंका कार्य अर्थात् सृष्टि, पालन तथा संहार करनेवाली हैं, उन्होंने मस्तकपर चन्द्रमाका मुकुट धारण किया है और वे श्वेत वस्त्रोंसे सुशोभित हैं।

२-गंगाजल तथा शालग्रामशिलामें देवत्वकी नित्य प्रतिष्ठा रहती है, अतः आवाहन-विसर्जन नहीं होता—

गङ्गाप्रवाहे शालग्रामशिलायाञ्च सुरार्चने॥ द्विजपुङ्गव नापेक्ष्ये आवाहनविसर्जने। (बृहद्धर्मपुराण ५७। ४-५)

गंगाजलमें सभी तीर्थजल तथा शालग्राममें सभी देव सन्निहित रहते हैं, अतः गंगामें अन्य तीर्थोंका जल तथा शालग्राममें अन्य देवोंका आवाहन भी नहीं होता, इसीलिये गंगाजलमें किसी भी तीर्थजल तथा शालग्राममें किसी भी देवताकी पूजा विहित है। आवाहनके स्थानपर पुष्प समर्पित करना चाहिये।

ॐ मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं यज्ञ ँ समिमं दधातु। विश्वे देवास इह मादयन्तामो३ म्प्रतिष्ठ॥

पाद्य

पाटलोशीरकर्पूरसुरभिस्वादुशीतलम्।
तोयमेतत् सुखस्पर्शं पाद्यार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

त्रिपथगामिन्यै गंगायै नमः पादयोः पाद्यं समर्पयामि। (जल चढ़ाये।)

अर्घ्य

अर्घ्यं गृहाण देवेशि गन्धपुष्पाक्षतैः सह।
पुण्यदं शङ्खतोयाक्तं मया तुभ्यं निवेदितम्॥

त्रिपथगामिन्यै गंगायै नमः अर्घ्यं समर्पयामि। (अर्घ्यजल चढ़ाये।)

आचमन

गङ्गादिसर्वतीर्थेभ्यो मया प्रार्थनया हृतम्।
तोयमाचमनीयार्थं देवेशि प्रतिगृह्यताम्॥

त्रिपथगामिन्यै गंगायै नमः आचमनं समर्पयामि। (आचमनके लिये जल चढ़ाये।)

स्नान

गङ्गा च गोदा सरयूश्च सिन्धुः
सरस्वती सूर्यसुता च रेवा।
कालिन्दिका स्नानविधौ समस्ता
आयान्तु पुण्याः सरितां प्रवाहाः॥

त्रिपथगामिन्यै गंगायै नमः स्नानं समर्पयामि। (जल चढ़ाये।)

पञ्चामृत

पयो दधि घृतं चैव मधुशर्करयान्वितम्।
पञ्चामृतेन देवेशि स्वीकुरु स्नानमुत्तमम्॥

त्रिपथगामिन्यै गंगायै नमः पञ्चामृतं समर्पयामि। (पंचामृत चढ़ाये।)

अभ्यंग

अभ्यङ्गार्थं च हे गङ्गे तैलं पुष्पादिसम्भवम्।
सुगन्धद्रव्यसम्मिश्रं संगृहाण महेश्वरि॥

त्रिपथगामिन्यै गंगायै नमः अभ्यंगं समर्पयामि। (सुगन्धित द्रव्य, इत्र आदि चढ़ाये।)

अङ्गोद्वर्तन

अङ्गोद्वर्तनकं देवी कस्तूर्यादिविमिश्रितम्।
लेपनार्थं गृहाणेदं हरिद्राकुङ्कुमैर्युतम्॥

त्रिपथगामिन्यै गंगायै नमः अङ्गोद्वर्तनं समर्पयामि। (हरिद्रा-कुमकुम आदिका लेपन करे।)

शुद्धोदकस्नान

सर्वतीर्थात्समुद्धृत्य गन्धतोयं कुशोदकम्।
स्नानार्थं ते मया दत्तं गृहाण परमेश्वरि॥

त्रिपथगामिन्यै गंगायै नमः शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि। (शुद्ध जल चढ़ाये।)

वस्त्र

सूक्ष्मतन्तुमयं वस्त्रं कार्पासेन विनिर्मितम्।
मयोपपादितं तुभ्यं वासोयुग्मं प्रगृह्यताम्॥

त्रिपथगामिन्यै गंगायै नमः वस्त्रं समर्पयामि। (वस्त्र तथा उपवस्त्र अर्पित करे। आचमनके लिये जल दे।)

आभरण

अनेकरत्नखचितं सर्वाभरणभूषितम्।
गृहाण भूषणं देवि इष्टसिद्धिं च देहि मे॥

त्रिपथगामिन्यै गंगायै नमः आभरणं समर्पयामि। (आभूषण अर्पित करे।)

कण्ठसूत्र

सत्सूत्रगुम्फितं दिव्यं पवित्रं परमं शुभम्।
गृहाण कण्ठभूषार्थं गङ्गे ब्रह्माण्डनिर्मिते॥

त्रिपथगामिन्यै गंगायै नमः कण्ठसूत्रं समर्पयामि। (कण्ठसूत्र-गलेका हार चढ़ाये।)

गन्ध

गोरोचनं चन्दनदेवदारु-
कर्पूरकृष्णागरुनागराणि।
कस्तूरिकाकेसरमिश्रितानि
यथोचितं देवि मयार्पितानि॥

त्रिपथगामिन्यै गंगायै नमः गन्धं समर्पयामि।

(गन्ध अर्पित करे।)

पुष्प

करवीरैर्जातीकुसुमैश्चम्पकैर्वकुलैः शुभैः।
शतपत्रैश्च कह्लारैरर्चयेत्परमेश्वरीम्॥
त्रिपथगामिन्यै गंगायै नमः पुष्पं समर्पयामि।
(पुष्प चढ़ाये।)

अङ्गपूजा

देवी गंगाके अंगोंकी भावना करते हुए हाथमें पुष्प लेकर प्रत्येक मन्त्र बोलते हुए उन-उन अंगोंमें पुष्प चढ़ाये—

चन्द्रिकायै नमः पादौ पूजयामि।
चन्द्रकान्तायै नमः जंघे पूजयामि।
चञ्चलायै नमः कटी पूजयामि।
चलद्द्युत्यै नमः नाभिं पूजयामि।
चिन्मयायै नमः हृदयं पूजयामि।
चितिरूपिण्यै नमः स्तनौ पूजयामि।
चन्द्रायुतशताननायै नमः भुजौ पूजयामि।
कमलपाण्यै नमः हस्तौ पूजयामि।
कम्बुग्रीवायै नमः कण्ठं पूजयामि।
भवान्यै नमः मुखं पूजयामि।
चांपेयलोचनायै नमः नेत्रे पूजयामि।
चार्वङ्गिन्यै नमः कर्णौ पूजयामि।
चारुगामिन्यै नमः नासिकां पूजयामि।
आर्यायिन्यै नमः ललाटं पूजयामि।
चरित्रनिलयायै नमः शिरः पूजयामि।
गङ्गायै नमः सर्वाङ्गं पूजयामि।

आवरणपूजा

पूर्व दिशासे प्रारम्भकर निम्न मन्त्रोंसे अक्षतोंद्वारा देवी गंगाकी आवरणपूजा करे—

नन्दिन्यै नमः, नन्दिनीं पूजयामि (पूर्व)
नलिन्यै नमः, नलिनीं पूजयामि (अग्निकोण)
जाह्नव्यै नमः, जाह्नवीं पूजयामि (दक्षिण)
मालत्यै नमः, मालतीं पूजयामि (नैर्ऋत्य)
मलापहन्त्र्यै नमः, मलापहन्त्रीं पूजयामि (पश्चिम)
विष्णुपादाब्जसम्भूत्यै नमः, विष्णुपादाब्जसम्भूतिं पूजयामि (वायव्य)
त्रिपथगामिन्यै नमः, त्रिपथगामिनीं पूजयामि (उत्तर)
भागीरथ्यै नमः, भागीरथीं पूजयामि (ईशान)

धूप

सुगन्धतरुसम्पन्नं गन्धद्रव्यविवर्धनम्।
गृहाण धूपकं गङ्गे संसारार्णवतारिणि॥
त्रिपथगामिन्यै गंगायै नमः धूपम् आघ्रापयामि।
(धूप आघ्रापित करे।)

दीप

अनन्तज्वलितं दीपमज्ञानान्धविनाशनम्।
आर्तिक्यं च मया दत्तं गृहाण परमेश्वरि॥
त्रिपथगामिन्यै गंगायै नमः दीपं दर्शयामि।
(दीपक दिखलाये और हाथ धो ले।)

नैवेद्य

नानाभक्ष्यैः समाकीर्णं पक्वान्नैर्विविधैरपि।
नैवेद्यं ते मया दत्तं गृहाण सुरपूजिते॥
त्रिपथगामिन्यै गंगायै नमः नैवेद्यं निवेदयामि।
(नैवेद्य निवेदित करे। आचमनके लिये जल दे।)

फल

महाफलं समानीतं गृहाण सरितां वरे।
मनोरमं फलं देहि देवदेवस्य वल्लभे॥
त्रिपथगामिन्यै गंगायै नमः फलं समर्पयामि।
(ऋतुफल चढ़ाये।)

ताम्बूल

कर्पूरैलालवङ्गादिताम्बूलदलखादिरैः।
जातिपूगफलैर्युक्तं त्रयोदशगुणान्वितम्।
मया निवेदितं देवि ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम्॥
त्रिपथगामिन्यै गंगायै नमः ताम्बूलं समर्पयामि।
(एला-लवंग-पूगीफलयुक्त ताम्बूल अर्पित करे।)

दक्षिणा

न्यूनातिरिक्तपूजायाः सम्पूर्णफलहेतवे।
दक्षिणां काञ्चनीं देवि स्थापयामि तवाग्रतः॥

त्रिपथगामिन्यै गंगायै नमः दक्षिणां समर्पयामि। (द्रव्य दक्षिणा चढ़ाये।)

नीराजन

निम्न मन्त्रोंको पढ़ते हुए कपूर आदिसे आरती करे—

प्रवरातीरनिवासिनि निगमप्रतिपाद्ये
पारावारविहारिणि नारायणि हृद्ये।
प्रपञ्चसारे जगदाधारे श्रीविद्ये
प्रपन्नपालननिरते मुनिवृन्दाराध्ये॥
जय देवि जय देवि जय मोहनरूपे।
मामिह जननि समुद्धर पतितं भवकूपे॥
दिव्यसुधाकरवदने कुन्दोज्ज्वलरदने
पदनखनिर्जितमदने मधुकैटभकदने।
विकसितपङ्कजनयने पन्नगपतिशयने
खगपतिवहने गहने सङ्कटवनदहने॥
जय देवि०
मञ्जीराङ्कितचरणे मणिमुक्ताभरणे
कञ्चुकिवस्त्रावरणे वक्त्राम्बुजधरणे।
शक्रामयभयहरणे भूसुरसुखकरणे
करुणां कुरु मे शरणे गजनक्रोद्धरणे॥
जय देवि०
छित्त्वा राहुग्रीवां पासि त्वं विबुधान्
ददासि मृत्युमनिष्टं पीयूषं विबुधान्।
विहरसि दानवऋद्धान् समरे संसिद्धान्
मध्वमुनीश्वरवरदे पालय संसिद्धान्॥
जय देवि०

त्रिपथगामिन्यै गंगायै नमः नीराजनं समर्पयामि। (आरतीके बाद जल गिरा दे।)

पुष्पांजलि

पुष्पाञ्जलिमिमं देवि नानापुष्पमनोहरम्।
प्रसीदानेन देवेशि तुष्टा भव महेश्वरि॥

त्रिपथगामिन्यै गंगायै नमः पुष्पांजलिं समर्पयामि। (हाथके पुष्प चढ़ा दे।)

नमस्कार

नमः श्रेयस्करी देवि नमः पापप्रणाशिनि।
नमः शान्तिकरी गङ्गे नमो दारिद्र्यनाशिनि॥

त्रिपथगामिन्यै गंगायै नमः नमस्कारं समर्पयामि। (नमस्कार निवेदित करे।)

प्रार्थना

हाथमें पुष्प लेकर प्रार्थना करे—

मन्दाकिनि नमस्तुभ्यं नमस्ते सुरपूजिते।
भोगावति नमस्तुभ्यं नागैस्त्वं तत्र वन्दिते॥
भागीरथि नमस्तुभ्यं सागराणां च पावनि।
प्रयागे च त्रिरूपा त्वं नैमिषे च सरस्वती॥
विन्ध्ये त्वं नर्मदा देवि कुशतुल्या तु गौतमी।
तस्मात्त्वं सर्वदा सेव्या श्रद्धया च कलौ युगे॥
हरिद्वारे नमस्तुभ्यं सरिदीशे नमो नमः।
जय गङ्गे नमो गङ्गे गोदावरि नमोऽस्तु ते॥
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वरि।
यत्कृतं तु मया देवि परिपूर्णं तदस्तु मे॥
अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम।
तस्मात्कारुण्यभावेन रक्ष मां परमेश्वरि॥

त्रिपथगामिन्यै गंगायै नमः प्रार्थनां समर्पयामि। (हाथके पुष्प चढ़ा दे और प्रणाम करे।)

पूजनके अनन्तर 'अनेन पूजनेन श्रीगङ्गादेवी प्रीयतां न मम' कहकर समस्त पूजनकर्म निवेदित कर दे और कलश आदिपर अक्षत छोड़कर विसर्जन करे। तदनन्तर गंगाकी प्रतिमा तथा कलश आदि द्रव्योंको दक्षिणासहित ब्राह्मणको दे दे और पुष्पादि सामग्रीको जलमें अथवा किसी वृक्ष आदिके मूलमें विसर्जित कर दे।

जह्नुमुनिद्वारा की गयी गंगा-प्रार्थना

राजर्षि भगीरथ अपने पूर्वजोंके उद्धारके लिये जब गंगाजीको पृथ्वीपर ला रहे थे तो मार्गमें महामुनि जह्नुजीका आश्रम पड़ा, जो गंगाजलके वेगसे प्रवाहित होने लगा, कुपित हुए जह्नुऋषिने अपने तपोबलसे हाथकी अंजलिमें उस जलको भरकर पी लिया। यह देखकर भगीरथ अत्यन्त दुखी हो गये। राजाको दुखी देखकर भक्तवत्सला गंगाने कहा—राजन्! आप अपने महाशंखको बजायें। तब राजा भगीरथकी शंखध्वनिको सुनकर भगवती गंगा जह्नुऋषिकी जंघाका भेदनकर तीव्रधाराके साथ निकल पड़ीं और वे 'जाह्नवी' नामसे विख्यात हुईं। उस समय जह्नुमुनिने भगवती गंगाकी इस प्रकार स्तुति की—

मुनिरुवाच

मातस्त्वं परमासि शक्तिरतुला सर्वाश्रया पावनी
लोकानां सुखमोक्षदाखिलजगत्संवन्द्यपादाम्बुजा।
न त्वां वेद विधिर्न वा स्मररिपुर्नो वा हरिर्नापरे
सञ्जानन्ति शिवे महेशशिरसा मान्ये कथं वेद्म्यहम्॥ १॥
किं तेऽहं प्रवदामि रूपचरितं यच्चेतसो दुर्गमं
पारावारविवर्जितं सुरधुनी ब्रह्मादिभिः पूजिता।
स्वेच्छाचारिणि संवितत्य करुणां स्वीयैर्गुणैर्मां शिवे
पुण्यं त्वं तु कृतागसं शरणगं गङ्गे क्षमस्वाम्बिके॥ २॥
धन्यं मे भुवि जन्म कर्म च तथा धन्यं तपो दुष्करं
धन्यं मे नयनं यतस्त्रिनयनाराध्यां दृशालोकये।
धन्यं मत्करयुग्मकं तव जलं स्पृष्टं यतस्तेन वै
धन्यं मत्तनुरप्यहो तव जलं तस्मिन्यतः सङ्गतम्॥ ३॥
नमस्ते पापसंहर्त्रि हरमौलिविराजिते। नमस्ते सर्वलोकानां हिताय धरणीगते॥ ४॥
स्वर्गापवर्गदे देवि गङ्गे पतितपावनि। त्वामहं शरणं यातः प्रसन्ना मां समुद्धर॥ ५॥

॥ इति श्रीमहाभागवते महापुराणे जह्नुमुनिकृता गङ्गास्तुतिः सम्पूर्णा॥

जह्नुमुनि बोले—माता! आप सर्वश्रेष्ठ, अतुलनीया पराशक्ति, सर्वाश्रयदात्री, लोकोंको पवित्र करनेवाली, आनन्द और मोक्षको प्रदान करनेवाली तथा सम्पूर्ण जगत्‌द्वारा वन्दित चरणकमलवाली हैं। आपको ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश (तत्त्वतः) नहीं जानते तथा अन्य लोग भी नहीं जानते। भगवान् शिवके मस्तकसे सम्मानित शिवे! फिर मैं आपको कैसे जान सकता हूँ!॥ १॥ मैं आपके अचिन्त्य और अपार रूप तथा चरित्रका क्या वर्णन करूँ? ब्रह्मादि देवताओंके द्वारा पूजित आप सुरनदीके रूपमें प्रतिष्ठित हैं। स्वतन्त्ररूपसे विचरण करनेवाली शिवे! माता! आप अपने शुभ गुणोंसे पुण्य तथा करुणाका विस्तार करके मुझ कृतापराध और शरणागतको क्षमा कीजिये॥ २॥ मेरा इस पृथ्वीपर जन्म और कर्म दोनों धन्य हुए, मेरी कठिन तपस्या धन्य हुई तथा मेरे ये दोनों नेत्र भी धन्य हुए; जो त्रिलोचन भगवान् शंकरकी आराध्या आपका मैं अपने नेत्रोंसे दर्शन कर रहा हूँ। आपके जलके स्पर्शसे ये मेरे दोनों हाथ धन्य हो गये और यह मेरा शरीर भी धन्य हुआ, जिसमें आपका पवित्र गंगाजल प्रविष्ट हुआ॥ ३॥ पापोंका संहार करनेवाली, भगवान् शंकरके मस्तकपर विराजमान तथा सभी प्राणियोंके हितके लिये पृथ्वीपर अवतीर्ण आपको नमस्कार है, नमस्कार है। देवि गंगे! आप स्वर्ग और मोक्ष देनेवाली हैं, पतितोंको पवित्र करनेवाली हैं, मैं आपकी शरणमें हूँ, आप मुझपर प्रसन्न होकर मेरा उद्धार कीजिये॥ ४-५॥

॥ इस प्रकार श्रीमहाभागवतमहापुराणके अन्तर्गत जह्नुमुनिद्वारा की गयी गंगास्तुति सम्पूर्ण हुई॥

नम्र निवेदन एवं क्षमा-प्रार्थना

भगवत्कृपासे इस वर्ष कल्याणका विशेषाङ्क 'गंगा-अङ्क' पाठकोंकी सेवामें प्रस्तुत किया जा रहा है। भारतीय संस्कृतिमें गंगा, गीता, गायत्री और गऊ—ये चार स्तम्भ हैं। इन चारोंको अपने शास्त्रोंमें 'माँ' शब्दसे सम्बोधित किया गया है। 'माँ' अपनी सर्वोपरि श्रद्धाकी अभिव्यक्ति है।

भगवती गंगा वास्तवमें देवमाता हैं, वेदमाता हैं, लोकमाता हैं। गंगाके स्मरणमात्रसे समस्त कर्मबन्धन, छिन्न-भिन्न हो जाते हैं, अन्तःकरण पवित्र, निर्मल, सात्त्विक तथा प्रकाशपुंजसे उद्दीप्त हो उठता है तथा मलिन वासनाओंके तन्तु सहज ही क्षीण हो जाते हैं। भगवती गंगाका अवतरण पापनाश तथा परोपकारके लिये हुआ है। गंगाकी सन्निधिमें जो भी जप-तप, पूजा-अनुष्ठान आदि कर्म किये जाते हैं, वे अक्षय हो जाते हैं।

ब्रह्मद्रवस्वरूपा गंगा हमारी अस्मिताकी पहचान हैं, न केवल हिन्दू, अपितु सभी धर्मावलम्बी गंगाका आदर करते हैं। गंगा स्वयं श्रद्धारूपा हैं। गंगाकी सच्ची सेवा—सच्ची पूजा उनके प्रति श्रद्धा एवं आस्थाको आत्मसात् करना है। गंगा चिन्मय आलोक प्रदान करती हैं और भवसागरसे सहज ही तार देती हैं।

विडम्बना है कि ऐसी लोकोत्तर महिमा तथा सर्वविध उपयोगिता होते हुए भी वर्तमानमें गंगा एवं यमुनाका स्वरूप मलिनतर होता जा रहा है। इसमें हेतु चाहे जो भी हो—मलप्रक्षेप हो अथवा जलके स्वाभाविक प्रवाहमें अवरोध हो जाना हो अथवा आर्थिक विकास हो—यह बड़ी ही दुःखद, चिन्ताजनक एवं शोचनीय स्थिति है। ऐसा न हो, इसके लिये सभीको विशेष रूपसे सचेष्ट रहनेकी आवश्यकता है तभी हम अपनी थातीको भविष्यके लिये सँजोकर रख सकेंगे और गंगाके औषधीय गुणों एवं लाभोंको प्राप्त कर सकेंगे। हमारा यह पावन कर्तव्य है कि हम तीर्थजलोंको दूषित न करें। जीवनदायिनी गंगाके प्रति होती जा रही अनास्था, वर्तमानके आर्थिक विकासवाद, विज्ञानवाद तथा भौतिक प्रगतिवादने गंगाके यथार्थ स्वरूपको ही मलिन एवं अस्तित्वविहीन बना दिया है। ऐसेमें गंगा-निर्मलीकरणकी प्रक्रियाएँ एवं चेष्टाएँ तो स्वयं पंक लगाकर उसे धोनेके समान प्रतीत होती हैं। न केवल गंगा, अपितु यमुना, नर्मदा आदि पुण्यतोया नदियाँ, तीर्थ, वन, पर्वत—यहाँतक कि समूचा पर्यावरण, समस्त प्रकृति ही प्रदूषणसे व्याप्त होती जा रही है। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश—ये पाँचों तत्त्व अतिमानवी चेष्टाओंके कारण विकृत होते जा रहे हैं। धर्म एवं अध्यात्मके इन स्रोतोंकी उपेक्षा तथा इनके अत्यधिक दोहनके परिणामस्वरूप आज समूचे विश्वकी, मानवीयताकी एवं प्राणिजगत्‌की जो स्थिति हो रही है, वह किसीसे छिपी नहीं है। इसी कारण मानव आज अपनेको सब प्रकारसे साधनसम्पन्न समझते हुए भी सर्वथा असहाय एवं अशक्त-सा हो गया है। आध्यात्मिक बल क्षीण हो जानेसे उसका आत्मबल भी लुप्त होता-सा दिखता है।

इन्हीं सब बातोंको दृष्टिगत रखते हुए इस वर्ष सन् २०१६ ई० के विशेषाङ्कके रूपमें 'गंगा-अङ्क' प्रकाशित किया जा रहा है। इसमें मुख्य रूपसे वर्तमानमें हो रही पर्यावरणकी दुर्दशा, उपभोक्तावादके दुष्परिणाम, तीर्थोंकी विकृति, नदियोंका प्रदूषण, देवनदी गंगाका तीर्थत्व, उसका धार्मिक तथा आध्यात्मिक महत्त्व, आरोग्य-प्राप्तिमें गंगाजलकी उपयोगिता, गंगावतरणके रोचक आख्यान, गंगोपासनाका स्वरूप, गंगाका इतिहास, गंगाका भूगोल, गंगा एवं अर्थशास्त्र, गंगाजलका वैशिष्ट्य, गोमुखसे गंगासागरतक गंगाकी यात्रा, गंगाजल और विज्ञान, गंगाके यशोगायक, गंगाके तटवर्ती तीर्थों एवं नगरोंका इतिहास, गंगाका यमुना एवं अन्य सरिताओंके साथ संगम और उसका माहात्म्य, वर्तमानमें गंगाकी दशा और उसके निवारणकी समीक्षा एवं इस सम्बन्धमें महत्त्वपूर्ण सुझाव भी प्रस्तुत करनेका प्रयास किया गया है।

पिछले वर्ष कल्याणका विशेषाङ्क 'सेवा-अङ्क' प्रकाशित हुआ था, जिसे पाठक महानुभावोंने बहुत सराहा था और उसकी प्रशस्ति भी हमें निरन्तर प्राप्त हो

रही है। 'गंगा-अङ्क' के प्रकाशनके लिये भी पाठकोंका आग्रह और उनके सुझाव आते रहे हैं, अतः इस वर्ष इसे प्रकाशित किया जा रहा है। आशा है, यह विशेषाङ्क सभीके लिये कल्याणकारी और संग्रहणीय होगा।

इस वर्ष 'गंगा-अङ्क' के लिये लेखक महानुभावोंने उत्साहपूर्वक जो सहयोग प्रदान किया, वह अत्यन्त सराहनीय तथा अनुपम रहा। भगवत्कृपासे इतने लेख और अन्य सामग्रियाँ प्राप्त हुईं कि उन सबको एक अंकमें समाहित करना सम्भव नहीं था, फिर भी विषयकी सर्वांगीणताको ध्यानमें रखते हुए अधिकतर सामग्रियोंका संयोजन करनेका विशेष प्रयत्न अवश्य किया गया है।

लेखक महानुभावोंके हम कृतज्ञ हैं कि उन्होंने कृपापूर्वक अपना अमूल्य समय लगाकर गंगासम्बन्धी महत्त्वपूर्ण सामग्री यहाँ प्रेषित की। हम अपने उन सभी पूज्य आचार्यों, परम सम्मान्य पवित्रहृदय सन्त-महात्माओंके श्रीचरणोंमें प्रणाम करते हैं, जिन्होंने विशेषाङ्ककी पूर्णतामें किंचित् भी योगदान किया। आध्यात्मिक विचारोंके प्रचार-प्रसारमें वे ही निमित्त हैं; क्योंकि उन्हींके भावपूर्ण तथा उच्च विचारपूर्ण लेखोंसे जनसामान्यको गंगामाताके वास्तविक स्वरूपका दिग्दर्शन होगा।

हम अपने विभाग और प्रेसके उन सभी सम्मान्य साथी-सहयोगियोंको भी प्रणाम करते हैं, जिनके स्नेहपूर्ण सहयोगसे यह पवित्र कार्य सम्पन्न हो सका है। त्रुटियों और व्यवहारदोषके लिये हम सबसे क्षमा-प्रार्थी हैं। इस विशेषाङ्कके सम्पादनकार्यमें कल्याणके सह-सम्पादक श्रीप्रेमप्रकाश लक्कड़का सहयोग सहज रूपसे प्राप्त होता रहा। इसके सम्पादन, प्रूफशुद्धि, चित्र-निर्माण तथा मुद्रण आदिमें जिन-जिन लोगोंसे हमें सहायता मिली, वे सभी हमारे अपने हैं। उन्होंने कार्यकी सम्पन्नतामें महत्त्वपूर्ण सहयोग प्रदान किया।

विशेषाङ्कके प्रकाशनके समय कभी-कभी कुछ कठिनाइयाँ और समस्याएँ भी आती हैं, पर उन्हें सहन कर पानेकी शक्ति भी भगवान् विश्वेश्वर ही प्रदान करते हैं। इस वर्ष भी विभिन्न कठिनाइयाँ आयीं, परंतु भगवती गंगामाताकी कृपासे सबका शमन हुआ।

जनसंख्या-वृद्धिके अनुपातसे कल्याणकी ग्राहक-संख्याकी वृद्धि नहीं हुई है। हमारी यह भावना है कि कल्याणका प्रकाशन-वितरण अधिक संख्यामें किया जाय, जिससे अधिकाधिक लोग लाभान्वित हो सकें तथा सर्वसाधारणकी आध्यात्मिक रुचिमें वृद्धि हो, पर इस कार्यमें आपके भी सहयोगकी अत्यधिक आवश्यकता है। हम यह चाहते हैं कि प्रत्येक पाठक कल्याणके अधिक-से-अधिक ग्राहक बनाये, न हो सके तो कम-से-कम एक ग्राहक तो अवश्य ही बनाये। इससे आप इस आध्यात्मिक पत्रिकाके प्रचार-प्रसारमें सहभागी हो सकेंगे।

इस बार 'गंगा-अङ्क' के सम्पादन-कार्यके अन्तर्गत प्रकाशनके निमित्त जो सामग्री प्राप्त हुई, उसके अध्ययन-मनन और चिन्तनसे यह अनुभव हुआ कि गंगामाता हमारी सर्वोपरि श्रद्धाका केन्द्र हैं और भारतीय संस्कृतिकी आधारशिला हैं। वस्तुतः गंगामाता सर्वदेवमयी हैं तथा सम्पूर्ण जीवोंकी कल्याणकारिणी हैं। गोस्वामीजीने कहा भी है—*'सुरसरि सम सब कहँ हित होई॥'*

गंगामाताके दर्शन, स्पर्श तथा उनके जलमें स्नान, जलके पान एवं सेवनसे प्रेय और श्रेय अथवा समृद्धि और कल्याण दोनोंकी प्राप्ति सम्भव है तथा इससे बढ़कर दूसरा कोई परम साधन नहीं। आशा है, कल्याणके पाठकगण भी इससे पूर्ण लाभान्वित होंगे। अन्तमें हम अपने प्रमाद और त्रुटियोंके लिये क्षमा-प्रार्थना करते हुए आध्यात्मिक रूपसे परम पवित्र, पतितपावनी, कलिमलहारिणी, जगदुद्धारिणी, करुणामयी गंगामाताके चरणकमलोंमें प्रणाम करते हैं और यह प्रार्थना करते हैं कि वे हमारे पापोंका विनाशकर हमें शक्ति और प्रेरणा प्रदान करें—

नमामि गङ्गे तव पादपङ्कजं सुरासुरैर्वन्दितदिव्यरूपम्।
भुक्तिं च मुक्तिं च ददासि नित्यं भावानुसारेण सदा नराणाम्॥

—राधेश्याम खेमका
(सम्पादक)

॥ श्रीहरिः ॥

गीताप्रेस, गोरखपुर–प्रकाशन

कोड — मूल्य रु०

श्रीमद्भगवद्गीता

गीता-तत्त्व-विवेचनी—

■ 1 बृहदाकार २५०
■ 2 " ग्रन्थाकार विशिष्ट संस्करण १४० [बँगला, तमिल, ओड़िआ, कन्नड, अंग्रेजी, तेलुगु, गुजराती, मराठीमें भी]
■ 3 " साधारण संस्करण ११०

गीता-साधक-संजीवनी—

■ 5 बृहदाकार, परिशिष्टसहित ४५०
■ 6 " ग्रन्थाकार, परिशिष्टसहित २३० [मराठी, तमिल (दो खण्डोंमें), गुजराती, अंग्रेजी (दो खण्डोंमें), कन्नड (दो खण्डोंमें), बँगला, ओड़िआमें भी]
■ 8 गीता-दर्पण—(स्वामी श्रीरामसुखदासजीद्वारा) गीताके तत्त्वोंपर प्रकाश [मराठी, बँगला, गुजराती, ओड़िआमें भी] ७०
■1562 गीता-प्रबोधनी—पुस्तकाकार (बँगला, ओड़िआमें भी) ५०
■1590 " पॉकेट, वि०सं० ४०
■1796 श्रीज्ञानेश्वरी-हिन्दी भावानुवाद १००
■1958 गीता-संग्रह ८०
■ 784 ज्ञानेश्वरी गूढार्थ-दीपिका (मराठी) १७५
■ 748 " मूल, गुटका (मराठी) ६५
■ 859 " मूल, मझला (मराठी) ६०
■ 10 गीता-शांकर-भाष्य १२५
■ 581 गीता-रामानुज-भाष्य ८०
■ 11 गीता-चिन्तन— (श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दारके गीता-विषयक लेखों, विचारों, पत्रों आदिका संग्रह) ६०
■ 17 गीता—मूल, पदच्छेद, अन्वय, भाषा-टीका [गुजराती, बँगला, मराठी, कन्नड, तेलुगु, तमिलमें भी] ५०
■1973 गीता-पदच्छेद-अन्वय—पॉकेट,वि०सं० ४०
■ 16 गीता—प्रत्येक अध्यायके माहात्म्यसहित, सजिल्द, मोटे अक्षरोंमें (मराठीमें भी) ४५
■1555 गीता-माहात्म्य (वि०सं०) ६०
■ 19 गीता—केवल भाषा (तेलुगु, उर्दू, तमिलमें भी) १५
■ 18 गीता-भाषा-टीका, टिप्पणी-प्रधान विषय, मोटा टाइप [ओड़िआ, गुजराती, मराठीमें भी] २५
■ 502 गीता- " " (सजि०) ४० [तेलुगु, ओड़िआ, गुजराती, कन्नड, तमिलमें भी]
■ 20 गीता-भाषा-टीका, पॉकेट साइज १२ [अंग्रेजी, मराठी, बँगला, असमिया, ओड़िआ, गुजराती, कन्नड, तेलुगु, तमिल, मलयालम भी]
■1566 गीता—भाषा-टीका, पॉकेट साइज, सजिल्द २५ [गुजराती, बँगला, अंग्रेजी भी]
■2025 गीता— हिन्दी, संस्कृत अजिल्द पाकेट १५
■ 21 श्रीपञ्चरत्नगीता—गीता, विष्णुसहस्रनाम, भीष्मस्तवराज, अनुस्मृति, गजेन्द्रमोक्ष (मोटे अक्षरोंमें) [ओड़िआमें भी] ३०
■1628 " (नित्यस्तुति एवं गजल-गीतासहित) पॉकेट साइज १५
■ 22 गीता—मूल, मोटे अक्षरोंवाली [तेलुगु, गुजरातीमें भी] १२
■ 23 गीता—मूल, विष्णुसहस्रनामसहित ६ [कन्नड, तेलुगु, तमिल, मलयालम, ओड़िआमें भी]
■1602 गीता—सजिल्द (वि०सं०)—लघु आकार १५
■ 700 गीता—मूल, लघु आकार (ओड़िआ, बँगला, तेलुगुमें भी) ३
■1392 गीता ताबीजी—(सजिल्द) (गुजराती, बँगला, तेलुगु, ओड़िआमें भी) ८
■ 566 गीता—ताबीजी एक पन्नेमें सम्पूर्ण गीता (१०० प्रति एक साथ) ५०
▲ 388 गीता-माधुर्य-सरल प्रश्नोत्तर-शैलीमें (हिन्दी) १५ [तमिल, मराठी, गुजराती, तेलुगु, बँगला, असमिया, कन्नड, ओड़िआ, अंग्रेजी, संस्कृतमें भी]
■1242 पाण्डवगीता एवं हंसगीता ४
■1431 गीता-दैनन्दिनी पुस्तकाकार, विशिष्ट संस्करण (बँगला, तेलुगु, ओड़िआमें भी) ७०
■ 503 गीता-दैनन्दिनी—रोमन, पुस्तकाकार, प्लास्टिक जिल्द ५५
■ 506 गीता-दैनन्दिनी-पॉकेट (वि० सं०) ३०
▲ 464 गीता-ज्ञान-प्रवेशिका २५

रामायण

■1389 श्रीरामचरितमानस—बृहदाकार (विशिष्ट संस्करण) ६००
■ 80 " बृहदाकार ५००
■1095 " ग्रन्थाकार (वि०सं०) (गुजरातीमें भी) ३००
■ 81 श्रीरामचरितमानस—ग्रन्थाकार सचित्र, सटीक, मोटा टाइप, २४० [ओड़िआ, बँगला, तेलुगु, मराठी, गुजराती, कन्नड, अंग्रेजी, नेपालीमें भी]
■1402 " सटीक, ग्रंथाकार (सामान्य) १९०
■1563 " मझला, सटीक, वि० सं० १४०
■ 82 " मझला साइज, सटीक १२० सजिल्द [गुजराती, अंग्रेजी भी]
■1318 " रोमन, ग्रन्थाकार ३००
■1617 " " मझला १३०
■ 456 " अंग्रेजी अनुवादसहित १८०
■1436 " मूलपाठ बृहदाकार २५०
■ 83 " मूलपाठ, ग्रंथाकार १२० [गुजराती, ओड़िआ भी]
■ 84 " मूल, मझला साइज [गुजराती भी] ७०
■ 85 " मूल, गुटका ["] ४५
■1544 " मूल गुटका (वि०सं०) ५०

[श्रीरामचरितमानस—अलग-अलग काण्ड (सटीक)]

■ 94 श्रीरामचरितमानस-बालकाण्ड ४०
■ 95 " अयोध्याकाण्ड ३५
■ 98 " सुन्दरकाण्ड [कन्नड, तेलुगु, बँगला भी] १०
■1349 " सुन्दरकाण्ड सटीक मोटा टाइप (लाल अक्षरोंमें) (श्रीहनुमानचालीसासहित) [गुजरातीमें भी] २५
■ 101 " लंकाकाण्ड १८
■ 102 " उत्तरकाण्ड २०
■ 141 " अरण्य, किष्किन्धा एवं सुन्दरकाण्ड २५
■1583 " सुन्दरकाण्ड, (मूल) मोटा (आड़ा) रंगीन १०
■1919 " रंगीन (वि० सं०) १५
■ 99 " सुन्दरकाण्ड—मूल, गुटका [गुजराती भी] ५
■ 100 " सुन्दरकाण्ड मूल, मोटा टाइप १० [गुजराती, ओड़िआ भी]
■ 858 " सुन्दरकाण्ड—मूल, लघु आकार [गुजराती भी] ४
■1710 " किष्किन्धाकाण्ड ३
■ 86 मानसपीयूष-(श्रीरामचरितमानसपर सुप्रसिद्ध तिलक, टीकाकार—श्रीअञ्जनीनन्दनशरण (सातों खण्ड) २१००

(अलग-अलग खण्ड भी उपलब्ध)

■1935 मानस-पीयूष—परिशिष्ट ७५
■1907 श्रीमद्वाल्मीकीयरामायण—बृहदाकार, भाषा ४५०
■ 75} 76} श्रीमद्वाल्मीकीय-रामायण—सटीक, दो खण्डोंमें सेट [तेलुगु भी] ४५०
■ 77 रामायण—केवल भाषा २८०
■ 583 " (मूलमात्रम्) २००
■1953 " सुन्दरकाण्ड—पुस्तकाकार मूलमात्रम् [तमिल भी] ४०
■ 78 वा.रा.सुन्दरकाण्ड-मूल, गुटका २५
■1549 श्रीमद्वाल्मीकीयरामायण सुन्दरकाण्ड-सटीक [तमिल भी] ८०
■ 452} 453} श्रीमद्वाल्मीकीयरामायण (अंग्रेजी अनुवादसहित दो खण्डोंमें सेट) ४००
■ 74 अध्यात्मरामायण—सटीक [तमिल, तेलुगु, कन्नड, मराठी भी] १००
■ 223 मूल रामायण [गुजराती, मराठी भी] ३
▲1654 लवकुश-चरित्र २५
▲ 401 मानसमें नाम-वन्दना १२
■ 103 मानस-रहस्य ६०
■ 104 मानस-शंका-समाधान २०

अन्य तुलसीकृत साहित्य

■ 105 विनयपत्रिका—सरल भावार्थसहित ४०
■1701 विनयपत्रिका, सजिल्द ६०
■ 106 गीतावली— " ४५
■ 107 दोहावली—भावार्थसहित २०
■ 108 कवितावली— " २०
■ 109 रामाज्ञाप्रश्न—भावार्थसहित १२
■ 110 श्रीकृष्णगीतावली " १०
■ 111 जानकीमंगल— " ७
■ 112 हनुमानबाहुक— " ५
■ 113 पार्वतीमंगल— " ५
■ 114 वैराग्य-संदीपनी एवं बरवै रामायण ४

सूर-साहित्य

■ 555 श्रीकृष्णमाधुरी ३०
■ 61 सूर-विनय-पत्रिका ३५
■ 62 श्रीकृष्ण-बाल-माधुरी २८
■ 735 सूर-रामचरितावली ३०
■ 547 विरह-पदावली ३०
■ 864 अनुराग-पदावली ३५

☞ भारतमें डाक खर्च, पैकिंग तथा फारवर्डिंगकी देय राशिः—२ रुपया-प्रत्येक १० रु० या उसके अंशके मूल्यकी पुस्तकोंपर। [पैकेटका अधिकतम वजन ५ किलो (अनुमानित पुस्तक मूल्य रु० ५००)] —रजिस्ट्री / वी०पी०पी० के लिये २० रु० प्रति पैकेट अतिरिक्त।

☞ रंगीन चित्रोंपर ३० रु० प्रति पैकेट स्पेशल पैकिंग चार्ज अतिरिक्त।

☞ रु० ५००/-से अधिककी पुस्तकोंपर ५% पैकिंग, हैण्डलिंग तथा वास्तविक डाकव्यय देय होगा।

☞ पुस्तकोंके मूल्य एवं डाकदरमें परिवर्तन होनेपर परिवर्तित मूल्य / डाकदर देय होगा।

☞ पुस्तक-विक्रेताओंके नियमोंकी पुस्तिका अलग है। विदेशोंमें निर्यातके अलग नियम हैं।

☞ रु० २००० से अधिककी पुस्तकें एक साथ लेनेपर १८% छूट (▲चिह्नवाली पुस्तकोंपर ३०%) छूट देय। (पैकिंग, रेल-भाड़ा आदि अतिरिक्त)।

नोट—अन्य भारतीय भाषाओंकी पुस्तकोंका मूल्य एवं कोड पृष्ठ-५०३ से ५०६ पर देखें।

सम्पर्क करें—व्यवस्थापक—गीताप्रेस, गोरखपुर

पुराण, उपनिषद् आदि

कोड		मूल्य रु०
■1930	श्रीमद्भागवत-सुधासागर [मोटा टाइप]	३००
■1945	" (विशिष्ट संस्करण)	३५०
■ 25	श्रीशुकसुधासागर—बृहदाकार, बड़े टाइपमें	५००
■1951 ■1952	श्रीमद्भागवतमहापुराण-सटीक बेंड़िआ-दो खण्डोंमें सेट	८००
■ 26, 27	श्रीमद्भागवतमहापुराण—सटीक, दो खण्डोंमें सेट (गुजराती, मराठी, बंगला भी)	५००
■ 564, 565	श्रीमद्भागवतमहापुराण—अंग्रेजी सेट	४४०
■ 29	"मूल मोटा टाइप (तेलुगु भी)	१६०
■ 124	" मूल मझला	१००
■1855	" मूल गुटका-वि०सं०	१००
■2009	भागवत नवनीत (संत श्रीडोंगरेजी महाराज)	१६०
■ 571	श्रीकृष्णलीलाचिन्तन	१५०
■ 30	श्रीप्रेम-सुधासागर	१००
■ 31	भागवत एकादश स्कन्ध	४५
■1927	जीवन-संजीवनी	४०
■ 728	महाभारत—हिन्दी टीकासहित, सजिल्द, सचित्र [छः खण्डोंमें] सेट (अलग-अलग खण्ड भी उपलब्ध)	१९५०
■ 38	महाभारत-खिलभाग हरिवंशपुराण—सटीक	३५०
■1589	" केवल हिन्दी	३००
■ 39, 511	संक्षिप्त महाभारत—केवल भाषा, सचित्र, सजिल्द सेट (दो खण्डोंमें) [बँगला भी]	४४०
■ 44	संक्षिप्त पद्मपुराण—सचित्र, सजिल्द	२५०
■2020	शिवमहापुराण मूलमात्रम्	२५०
■1468	सं० शिवपुराण (वि० सं०)	२५०
■ 789	सं० शिवपुराण—मोटा टाइप [गुजराती भी]	२००
■1133	सं० देवीभागवत ["]	२४०
■1770	श्रीमद्देवीभागवत-मूल	१६५
■ 48	श्रीविष्णुपुराण—सटीक	१४०
■1364	श्रीविष्णुपुराण (केवल हिन्दी)	१००
■1183	सं० नारदपुराण	२००
■ 279	सं० स्कन्दपुराणाङ्क	३२५
■ 539	सं० मार्कण्डेयपुराण	९०
■1111	सं० ब्रह्मपुराण	१२०
■1113	नरसिंहपुराणम्—सटीक	१००
■1189	सं० गरुडपुराण (गुजराती)	१६०
■1362	अग्निपुराण (मूल संस्कृतका हिन्दी-अनुवाद)	२००
■1432	वामनपुराण—सटीक	१२५
■1985	लिङ्गमहापुराण—सटीक	२००
■1897	देवीभागवतमहापुराण—सटीक, प्रथम खण्ड	२००
■1898	देवीभागवतमहापुराण—सटीक, द्वितीय खण्ड	२००
■ 557	मत्स्यमहापुराण "	२७०
■1610	महाभागवत देवीपुराण	१२०
■ 47	पातञ्जलयोग-प्रदीप	१३०
■ 135	पातञ्जलयोगदर्शन [बँगला भी]	२०
■ 517	गर्गसंहिता	१५०
■ 582	छान्दोग्योपनिषद् सानुवाद शांकरभाष्य	१२०
■ 577	बृहदारण्यकोपनिषद्—(")	१८०
■ 1421	ईशादि नौ उपनिषद्- (") एक ही जिल्दमें	१८०
■1361	सं० श्रीवराहपुराण	१००
■ 584	सं० भविष्यपुराण	१५०
■1131	कूर्मपुराण—सटीक	१४०
■ 631	सं० ब्रह्मवैवर्तपुराण	२००
■ 66	ईशादि नौ उपनिषद्—अन्वय-हिन्दी व्याख्या [बँगला भी]	७५
■ 67	ईशावास्योपनिषद्-सानुवाद, शांकरभाष्य [तेलुगु, कन्नड भी]	७
■ 68	केनोपनिषद्-सानुवाद, शांकरभाष्य	२०
■ 578	कठोपनिषद्— "	२०
■ 69	माण्डूक्योपनिषद्— "	३५
■ 513	मुण्डकोपनिषद्— "	१५
■ 70	प्रश्नोपनिषद्— "	१५
■ 71	तैत्तिरीयोपनिषद्— "	३०
■ 72	ऐतरेयोपनिषद्— "	१२
■ 73	श्वेताश्वतरोपनिषद्- "	३०
■ 65	वेदान्त-दर्शन—हिन्दी व्याख्या-सहित, सजिल्द	७०

भक्त-चरित्र

कोड		मूल्य रु०
■1947	भक्तमाल-अङ्क	१३०
■ 40	भक्त चरिताङ्क-सचित्र, सजिल्द	२३०
■1771	जैमिनीकृतमहाभारतमें भक्तोंकी गाथा-सजिल्द	९०
■ 51	श्रीतुकाराम-चरित	६०
■ 121	एकनाथ-चरित्र	२५
■ 53	भागवतरत्न प्रह्लाद	३०
■ 123	चैतन्य-चरितावली	१७०
■ 751	देवर्षि नारद	२०
■ 168	भक्त नरसिंह मेहता [मराठी, गुजराती भी]	२०
■ 169	भक्त बालक-गोविन्द, मोहन आदिकी गाथा [तेलुगु, कन्नड, मराठी भी]	८
■ 170	भक्त नारी—मीरा, शबरी आदिकी गाथा	१०
■ 171	भक्त पञ्चरत्न—रघुनाथ, दामोदर आदिकी (तेलुगु भी)	१०
■ 172	आदर्श भक्त—शिवि, रन्तिदेव आदिकी गाथा [तेलुगु, कन्नड, गुजराती भी]	१२
■ 175	भक्त-कुसुम—जगन्नाथ आदि छः भक्तगाथा	१०
■ 173	भक्त सप्तरत्न-दामा, रघु आदिकी भक्तगाथा [गुजराती, कन्नड भी]	८
■ 174	भक्त चन्द्रिका—सखू, विट्ठल आदि छः भक्तगाथा [गुजराती, कन्नड, तेलुगु, मराठी, ओड़िआ भी]	८
■ 176	प्रेमी भक्त-बिल्वमंगल, जयदेव आदि [गुजराती भी]	१०
■ 177	प्राचीन भक्त—मार्कण्डेय, उत्तंक आदि	२०
■ 178	भक्त सरोज—गंगाधरदास, श्रीधर आदि (गुजराती भी)	१२
■ 179	भक्त सुमन—नामदेव, राँका-बाँका आदिकी भक्तगाथा [गुजराती भी]	१२
■ 180	भक्त सौरभ—व्यासदास, प्रयागदास आदि	१२
■ 181	भक्त सुधाकर—रामचन्द्र, लाखा आदिकी भक्तगाथा [गुजराती भी]	१०
■ 182	भक्त महिलारत्न—रानी रत्नावती, हरदेवी आदि [गुजराती भी]	१०
■ 186	सत्यप्रेमी हरिश्चन्द्र [ओड़िआ भी]	७
■ 183	भक्त दिवाकर—सुव्रत, वैश्वानरआदिकी भक्तगाथा	१०
■ 184	भक्त रत्नाकर—माधवदास, विमलतीर्थ आदि चौदह भक्तगाथा	१०
■ 185	भक्तराज हनुमान्—हनुमान्‌जीका जीवनचरित्र [मराठी, ओड़िआ, तमिल, तेलुगु, कन्नड, गुजराती भी]	१०
■ 187	प्रेमी भक्त उद्धव [तमिल, तेलुगु, गुजराती, ओड़िआ भी]	६
■ 188	महात्मा विदुर [गुजराती, तमिल, ओड़िआ भी]	६
■ 136	विदुरनीति [अंग्रेजी, कन्नड, तमिल, तेलुगु भी]	२०
■ 138	भीष्मपितामह [तेलुगु भी]	२०
■ 189	भक्तराज ध्रुव [तेलुगु भी]	६

परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दकाके शीघ्र कल्याणकारी प्रकाशन

कोड		मूल्य रु०
■683	तत्त्वचिन्तामणि [गुजराती भी] (सभी खण्ड एक साथ)	१६०
■814	साधन-कल्पतरु (१३ महत्त्वपूर्ण पुस्तकोंका संग्रह)	१३०
▲2027	भगवत्प्राप्तिकी अमूल्य बातें	१२
▲1944	परम सेवा	१५
▲1597	चिन्ता-शोक कैसे मिटें?	१५
▲1631	भगवान् कैसे मिलें?	१२
▲1653	मनुष्य-जीवनका उद्देश्य	१२
▲1681	भगवत्प्राप्ति कठिन नहीं	१०
▲1747	भगवत्प्राप्ति कैसे हो?	१२
▲1666	कल्याण कैसे हो?	१५
▲ 527	प्रेमयोगका तत्त्व [अंग्रेजी भी]	३०
▲ 242	महत्त्वपूर्ण शिक्षा—[तेलुगु भी]	३०
▲ 528	ज्ञानयोगका तत्त्व [अंग्रेजी भी]	२५
▲ 266	कर्मयोगका तत्त्व—(भाग-१) (गुजराती भी)	१५
▲ 267	कर्मयोगका तत्त्व—(भाग-२)	१८
▲ 303	प्रत्यक्ष भगवद्दर्शनके उपाय [तमिल, गुजराती भी]	२०
▲ 298	भगवान्‌के स्वभावका रहस्य [तमिल, गुजराती, मराठी भी]	१८
▲ 243	परम साधन—भाग-१	१५
▲ 244	" " —भाग-२	१२
▲ 245	आत्मोद्धारके साधन (भाग-१)	१८
▲ 335	अनन्यभक्तिसे भगवत्प्राप्ति—(आत्मोद्धारके साधन भाग-२) [गुजराती भी]	२०
▲ 579	अमूल्य समयका सदुपयोग [तेलुगु, गुजराती, मराठी, कन्नड, ओड़िआ भी]	१२
▲ 246	मनुष्यका परम कर्तव्य (भाग-१)	१५
▲ 247	" " (भाग-२)	१५
▲ 611	इसी जन्ममें परमात्मप्राप्ति	१२
▲ 588	अपात्रको भी भगवत्प्राप्ति ["]	१५
▲1015	भगवत्प्राप्तिमें भावकी प्रधानता ["]	१२
▲1923	भगवत्प्राप्तिके सुगम साधन	१०
▲1974	व्यवहार सुधार और परमार्थ	१२
▲1296	कर्णवासका सत्संग [तमिल भी]	१०
▲ 248	कल्याणप्राप्तिके उपाय-(त०चि०म०भा०१)[बँगला भी]	२०
▲ 249	शीघ्र कल्याणके सोपान-भाग-२, खण्ड-१ [गुजराती भी]	१७
▲ 250	ईश्वर और संसार—भाग-२, (खण्ड-२)	२५
▲1900	निष्कामभावसे भगवत्प्राप्ति	८
▲ 519	अमूल्य शिक्षा—भाग-३, (खण्ड-१)	१५
▲ 253	धर्मसे लाभ अधर्मसे हानि—भाग-३, (खण्ड-२)	१५
▲ 251	अमूल्य वचन तत्त्वचिन्तामणि-भाग-४, (खण्ड-१)	१७
▲ 252	भगवद्दर्शनकी उत्कण्ठा-भाग-४ (खण्ड-२)	१८
▲ 254	व्यवहारमें परमार्थकी कला—त० चि० भाग-५, (खण्ड-१) [गुजराती भी]	१५
▲ 255	श्रद्धा-विश्वास और प्रेम-गुजराती, भाग-५, (खण्ड-२) [गुजराती भी]	१५
▲ 258	तत्त्वचिन्तामणि—भाग-६, (खण्ड-१)	१५
▲ 257	परमानन्दकी खेती—भाग-६, (खण्ड-२)	१२
▲ 260	समता अमृत और विषमता विष-भाग-७, (खण्ड-१)	२०
▲ 259	भक्ति-भक्त-भगवान्-भाग-७, (खण्ड-२)	१७
▲ 256	आत्मोद्धारके सरल उपाय	१८
▲261	भगवान्‌के रहनेके पाँच स्थान [मराठी, कन्नड, तेलुगु, तमिल, गुजराती, ओड़िआ, अंग्रेजी भी]	६
▲ 262	रामायणके कुछ आदर्श पात्र [तेलुगु, अंग्रेजी, कन्नड, गुजराती, ओड़िआ, तमिल, मराठी भी]	१५
▲ 263	महाभारतके कुछ आदर्श पात्र [तेलुगु, अंग्रेजी, कन्नड, गुजराती, तमिल, मराठी भी]	१०
▲ 264	मनुष्य-जीवनकी सफलता—भाग—१	१५
▲ 265	मनुष्य-जीवनकी सफलता—भाग—२	१२
▲ 268	परमशान्तिका मार्ग—भाग-१(गुजराती भी)	१५
▲ 269	परमशान्तिका मार्ग-(भाग-२)	१५
▲1792	शान्तिका उपाय	१५
▲ 543	परमार्थ-सूत्र-संग्रह [ओड़िआ भी]	१५
▲1530	आनन्द कैसे मिले?	१२
▲1837	अनन्यभक्ति कैसे प्राप्त हो?	१०
▲ 769	साधन नवनीत [गुजराती, ओड़िआ, कन्नड भी]	१५
▲ 599	हमारा आश्चर्य	१२
▲ 681	रहस्यमय प्रवचन	१५
▲1021	आध्यात्मिक प्रवचन [गुजराती भी]	१५
▲1324	अमृत वचन [बँगला भी]	१५
▲1409	भगवत्प्रेम-प्राप्तिके उपाय	१२
▲1433	साधना पथ	१०
▲1483	भगवत्पथ-दर्शन	१२
▲1493	नेत्रोंमें भगवान्‌को बसा लें	१०
▲1435	आत्मकल्याणके विविध उपाय	१०
▲1529	सम्पूर्ण दुःखोंका अभाव कैसे हो?	१२
▲1561	दुःखोंका नाश कैसे हो?	१५
▲1587	जीवन-सुधारकी बातें	१५
▲1022	निष्काम श्रद्धा और प्रेम [ओड़िआ भी]	१५
▲ 292	नवधा भक्ति [तेलुगु, मराठी, कन्नड भी]	१०
▲ 274	महत्त्वपूर्ण चेतावनी	१०
▲1871	आवागमनसे मुक्ति	५
▲ 273	नल-दमयन्ती [मराठी, तमिल, कन्नड, गुजराती, ओड़िआ, तेलुगु भी]	

कोड		मूल्य रु०
▲ 277	उद्धार कैसे हो ?— ५१ पत्रोंका संग्रह [गुजराती, ओड़िआ, मराठी भी]	१०
▲1856	महात्माओंकी अहैतुकी दया	१०
▲1860	भगवत्प्राप्तिकी युक्तियाँ	१०
▲1874	महत्त्वपूर्ण कल्याणकारी बातें	१०
▲1790	जन्म-मरणसे छुटकारा	१२
▲ 278	सच्ची सलाह-८० पत्रोंका संग्रह	१२
▲ 280	साधनोपयोगी पत्र	१०
▲ 281	शिक्षाप्रद पत्र	१५
▲ 282	पारमार्थिक पत्र	१५
▲ 284	अध्यात्मविषयक पत्र	१२
▲ 283	शिक्षाप्रद ग्यारह कहानियाँ [अंग्रेजी, कन्नड, गुजराती, मराठी, तेलुगु, ओड़िआ भी]	१०
▲1120	सिद्धान्त एवं रहस्यकी बातें	१२
▲ 680	उपदेशप्रद कहानियाँ [अंग्रेजी, गुजराती, कन्नड, तेलुगु भी]	१५
▲ 891	प्रेममें विलक्षण एकता [मराठी, गुजराती भी]	१२
▲ 958	मेरा अनुभव [गुजराती, मराठी भी]	१५
▲1283	सत्संगकी मार्मिक बातें [गुजराती भी]	१५
▲1150	साधनकी आवश्यकता [मराठी भी]	१२
▲1908	प्रतिकूलतामें प्रसन्नता	१२
▲ 320	वास्तविक त्याग	१०
▲1791	त्यागकी महिमा	१०
▲ 285	आदर्श भ्रातृप्रेम [ओड़िआ भी]	८
▲ 286	बालशिक्षा [तेलुगु, कन्नड, ओड़िआ, गुजराती भी]	६
▲ 287	बालकोंके कर्तव्य [ओड़िआ भी]	७
▲ 272	स्त्रियोंके लिये कर्तव्य-शिक्षा [कन्नड, गुजराती भी]	१५
▲ 290	आदर्श नारी सुशीला [बँगला, तेलुगु, तमिल, ओड़िआ, गुजराती, मराठी भी]	५
▲ 291	आदर्श देवियाँ [ओड़िआ भी]	६
▲ 300	नारीधर्म	५
▲ 293	सच्चा सुख और....... [गुजराती भी]	३
▲ 294	संत-महिमा [गुजराती, ओड़िआ भी]	३
▲ 295	सत्संगकी कुछ सार बातें [बँगला, तमिल, तेलुगु, गुजराती, ओड़िआ, मराठी, अंग्रेजी भी]	४
▲ 301	भारतीय संस्कृति तथा शास्त्रोंमें नारीधर्म	४
▲ 310	सावित्री और सत्यवान् [गुजराती, तमिल, तेलुगु, ओड़िआ, कन्नड, मराठी भी]	४
▲ 623	धर्मके नामपर पाप (गुजराती भी)	४
▲ 299	श्रीप्रेमभक्ति-प्रकाश—ध्यानावस्थामें प्रभुसे वार्तालाप [तेलुगु व अंग्रेजी भी]	५
▲ 304	गीता पढ़नेके लाभ और त्यागसे भगवत्प्राप्ति— गजल-गीतासहित [गुजराती, असमिया, तमिल, मराठी भी]	४
▲ 297	गीतोक्त संन्यास तथा निष्काम कर्मयोगका स्वरूप	४
▲ 309	भगवत्प्राप्तिके विविध उपाय [ओड़िआ भी]	५
▲ 311	परलोक और पुनर्जन्म एवं वैराग्य [ओड़िआ भी]	४
▲ 271	भगवत्प्रेमकी प्राप्ति कैसे हो ?	३
▲ 306	धर्म क्या है ? भगवान् क्या हैं ? [गुजराती, ओड़िआ व अंग्रेजी भी]	३
▲ 307	भगवान्‌की दया (भगवत्कृपा एवं कुछ अमृत-कण) [ओड़िआ, कन्नड, गुजराती भी]	४
▲ 316	ईश्वर-साक्षात्कारके लिये और सत्यकी शरणसे मुक्ति	३
▲ 314	व्यापार-सुधारकी आवश्यकता और हमारा कर्तव्य [गुजराती, मराठी भी]	३
▲ 315	चेतावनी और सामयिक चेतावनी [गुजराती भी]	३
▲ 318	ईश्वर दयालु और न्यायकारी हैं और अवतारका सिद्धान्त [गुजराती, तेलुगु भी]	३
▲ 270	भगवान्‌का हेतुरहित सौहार्द एवं महात्मा किसे कहते हैं ? (तेलुगु भी)	३
▲ 302	ध्यान और मानसिक पूजा [गुजराती भी]	४
▲ 326	प्रेमका सच्चा स्वरूप और शोकनाशके उपाय [ओड़िआ, गुजराती, अंग्रेजी भी]	३

परम श्रद्धेय श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार (भाईजी)-के अनमोल प्रकाशन

कोड		मूल्य रु०
■820	भगवच्चर्चा (ग्रन्थाकार) सभी खण्ड एक साथ	१३०
■ 050	पदरत्नाकर	९०
■ 049	श्रीराधा-माधव-चिन्तन	९०
▲ 058	अमृत-कण	३०
▲ 332	ईश्वरकी सत्ता और महत्ता	४०
▲ 333	सुख-शान्तिका मार्ग	२५
▲ 343	मधुर	२५
▲ 056	मानव-जीवनका लक्ष्य	२५
▲ 331	सुखी बननेके उपाय	२०
▲ 334	व्यवहार और परमार्थ	२५
▲ 514	दुःखमें भगवत्कृपा	१७
▲ 386	सत्संग-सुधा	२०
▲ 342	संतवाणी—ढाई हजार अनमोल बोल [तमिल भी, तीन भागमें]	२५
▲ 347	तुलसीदल	२०
▲ 339	सत्संगके बिखरे मोती	२०
▲ 349	भगवत्प्राप्ति एवं हिन्दू-संस्कृति	३५
▲ 350	साधकोंका सहारा	३५
▲ 351	भगवच्चर्चा—(भाग-५)	१६
▲ 352	पूर्ण समर्पण	३०
▲ 353	लोक-परलोक-सुधार-I	२०
▲ 354	आनन्दका स्वरूप	२०
▲ 355	महत्त्वपूर्ण प्रश्नोत्तर	३०
▲ 356	शान्ति कैसे मिले ?	२५
▲ 357	दुःख क्यों होते हैं ?	२५
▲ 348	नैवेद्य	२०
▲ 337	दाम्पत्य-जीवनका आदर्श [गुजराती, तेलुगु भी]	१२
▲ 336	नारीशिक्षा [गुजराती, कन्नड भी]	१५
▲ 340	श्रीरामचिन्तन	१५
▲ 338	श्रीभगवन्नाम-चिन्तन	२०
▲ 345	भवरोगकी रामबाण दवा [ओड़िआ भी]	१२
▲ 341	प्रेमदर्शन [तेलुगु, मराठी भी]	१५
▲ 358	कल्याण-कुंज— (क० कुं० भाग-१)	१०
▲ 366	मानव-धर्म	१०
▲ 359	भगवान्‌की पूजाके पुष्प— (क० कुं० भाग-२)	१०
▲ 360	भगवान् सदा तुम्हारे साथ हैं (क० कुं० भाग-३)	१२
▲ 361	मानव-कल्याणके साधन (क० कुं० भाग-४)	२५
▲ 346	सुखी बनो	१२
▲ 362	दिव्य सुखकी सरिता— (क० कुं० भाग-५) [गुजराती भी]	१०
▲ 363	सफलताके शिखरकी सीढ़ियाँ- (क० कुं० भाग-६)	१०
▲ 364	परमार्थकी मन्दाकिनी— (क० कुं० भाग-७)	१०
▲ 526	महाभाव-कल्लोलिनी	८
▲ 367	दैनिक कल्याण-सूत्र	८
▲ 369	गोपीप्रेम [अंग्रेजी भी]	५
▲ 370	श्रीभगवन्नाम [ओड़िआ भी]	५
▲ 368	प्रार्थना—प्रार्थना-पीयूष [ओड़िआ भी]	७
▲ 373	कल्याणकारी आचरण	२
▲ 374	साधन-पथ—सचित्र [गुजराती, तमिल भी]	६
▲ 375	वर्तमान शिक्षा	५
▲ 376	स्त्री-धर्म-प्रश्नोत्तरी	५
▲ 377	मनको वश करनेके कुछ उपाय [गुजराती भी]	२
▲ 378	आनन्दकी लहरें [बँगला, ओड़िआ, गुजराती, अंग्रेजी भी]	४
▲ 379	गोवध भारतका कलंक एवं गायका माहात्म्य	५
▲ 381	दीन-दुःखियोंके प्रति कर्तव्य	२
▲ 382	सिनेमा मनोरंजन या विनाशका साधन	४
▲ 344	उपनिषदोंके चौदह रत्न	७
▲ 371	राधा-माधव-रससुधा- (षोडशगीत) सटीक	६
▲ 384	विवाहमें दहेज	२
▲ 809	दिव्य संदेश एवं मनुष्य सर्वप्रिय और जीवन कैसे बनें ?	२

परम श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजीके कल्याणकारी साहित्य

कोड		मूल्य रु०
■ 465	साधन-सुधा-सिन्धु [ओड़िआ, गुजराती भी]	१७०
▲1675	सागरके मोती	१५
▲1598	सत्संगके फूल	१८
▲1733	संत-समागम	१०
▲1633	एक संतकी वसीयत [बँगला भी]	३
▲ 400	कल्याण-पथ	१५
▲ 401	मानसमें नाम-वन्दना	१५
▲ 605	जित देखूँ तित-तू [गुजराती, मराठी भी]	१५
▲ 406	भगवत्प्राप्ति सहज है [अंग्रेजी भी]	१५
▲ 535	सुन्दर समाजका निर्माण	१५
▲1485	ज्ञानके दीप जले	२२
▲1447	मानवमात्रके कल्याणके लिये (मराठी, ओड़िआ, बँगला, गुजराती, अंग्रेजी, नेपाली भी)	२०
▲1175	प्रश्नोत्तर मणिमाला [बँगला, ओड़िआ, गुजराती भी]	१५
▲1247	मेरे तो गिरधर गोपाल	१२
▲ 403	जीवनका कर्तव्य [गुजराती भी]	१५
▲ 436	कल्याणकारी प्रवचन [गुजराती, अंग्रेजी, बँगला, ओड़िआ भी]	१२
▲ 821	किसान और गाय [तेलुगु भी]	४
▲1093	आदर्श कहानियाँ [ओड़िआ, बँगला भी]	१५
▲ 407	भगवत्प्राप्तिकी सुगमता [कन्नड, मराठी भी]	१०
▲ 408	भगवान्‌से अपनापन [गुजराती, ओड़िआ भी]	१०
▲ 861	सत्संग-मुक्ताहार ["]	८
▲ 405	नित्ययोगकी प्राप्ति [ओड़िआ भी]	१०
▲ 409	वास्तविक सुख [तमिल, ओड़िआ भी]	१०
▲1308	प्रेरक कहानियाँ [बँगला, ओड़िआ भी]	१०
▲1408	सब साधनोंका सार [बँगला भी]	८
▲ 411	साधन और साध्य [मराठी, बँगला, गुजराती भी]	८
▲ 412	तात्त्विक प्रवचन [मराठी, ओड़िआ, बँगला, गुजराती भी]	१०
▲ 410	जीवनोपयोगी प्रवचन [अंग्रेजी भी]	१२
▲ 414	तत्त्वज्ञान कैसे हो ? एवं मुक्तिमें सबका समान अधिकार [बँगला, गुजराती भी]	१०
▲ 822	अमृत-बिन्दु [बँगला, तमिल, ओड़िआ, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी, कन्नड भी]	१२
▲ 417	भगवन्नाम [मराठी, अंग्रेजी भी]	६
▲ 416	जीवनका सत्य [गुजराती, अंग्रेजी भी]	१०
▲ 418	साधकोंके प्रति [बँगला, मराठी भी]	८
▲ 419	सत्संगकी विलक्षणता [गुजराती भी]	६
▲ 545	जीवनोपयोगी कल्याण-मार्ग [गुजराती भी]	६
▲ 420	मातृशक्तिका घोर अपमान [तमिल, बँगला, मराठी, गुजराती, ओड़िआ भी]	५
▲ 421	जिन खोजा तिन पाइयाँ [बँगला भी]	८
▲ 422	कर्मरहस्य [बँगला, तमिल, कन्नड, ओड़िआ भी]	८
▲ 424	वासुदेवः सर्वम् [मराठी, अंग्रेजी भी]	६
▲ 425	अच्छे बनो [अंग्रेजी भी]	८
▲ 426	सत्संगका प्रसाद [गुजराती भी]	८
▲1019	सत्यकी खोज [गुजराती, अंग्रेजी भी]	१०
▲1479	साधनके दो प्रधान सूत्र [ओड़िआ, बँगला भी]	५
▲1035	सत्यकी स्वीकृतिसे कल्याण	९
▲1360	तू-ही-तू	४
▲1434	एक नयी बात	३
▲1440	परम पितासे प्रार्थना	२
▲1441	संसारका असर कैसे छूटे ?	४
▲1176	शिखा (चोटी) धारणकी आवश्यकता और..[बँगला भी]	४
▲ 431	स्वाधीन कैसे बनें ? [अंग्रेजी भी]	४
▲ 702	यह विकास है या....	४
▲ 589	भगवान् और उनकी भक्ति [गुजराती, ओड़िआ भी]	१०
▲ 617	देशकी वर्तमान दशा तथा उसका परिणाम [तमिल, बँगला, तेलुगु, ओड़िआ, कन्नड, गुजराती, मराठी भी]	८
▲ 770	अमरताकी ओर [गुजराती भी]	१०
▲ 445	हम ईश्वरको क्यों मानें ? [बँगला भी]	३
▲ 745	भगवत्तत्त्व [गुजराती भी]	४

कोड — मूल्य रु०

▲ 432 एकै साधे सब सधै [गुजराती, तमिल, तेलुगु भी] ७
▲ 434 शरणागति [तमिल, ओड़िआ, तेलुगु, कन्नड भी] ६
▲ 427 गृहस्थमें कैसे रहें? [बँगला, मराठी, कन्नड, ओड़िआ, अंग्रेजी, तमिल, तेलुगु, गुजराती, असमिया, पंजाबी भी] १२
▲ 433 सहज साधना [गुजराती, बँगला, ओड़िआ, मराठी, अंग्रेजी भी] ६
▲ 435 आवश्यक शिक्षा (सन्तानका कर्तव्य एवं आहारशुद्धि) [गुजराती, ओड़िआ, अंग्रेजी, मराठी भी] १०
■1037 हे मेरे नाथ! मैं आपको भूलूँ नहीं (१०० पन्नोंका पैकेटमें) स्टीकर २
■1012 पञ्चामृत " " २
■1611 मैं भगवान्का अंश हूँ " " २
■1612 सच्ची और पक्की बात " " २
▲1072 क्या गुरु बिना मुक्ति नहीं? [गुजराती, ओड़िआ भी] ६
▲ 515 सर्वोच्चपदकी प्राप्तिका साधन [गुजराती, अंग्रेजी, तमिल, तेलुगु भी] २
▲ 438 दुर्गतिसे बचो [गुजराती, बँगला (गुरुतत्त्वसहित), मराठी भी] ४
▲ 439 महापापसे बचो [बँगला, तेलुगु, कन्नड, गुजराती, तमिल भी] ४
▲ 440 सच्चा गुरु कौन? [ओड़िआ भी] ४
▲ 444 नित्य-स्तुति और प्रार्थना [कन्नड, तेलुगु भी] ४
▲ 729 सार-संग्रह एवं सत्संगके अमृत-कण [गुजराती भी] ४
▲ 447 मूर्तिपूजा-नाम-जपकी महिमा [ओड़िआ, बँगला, तमिल, तेलुगु, मराठी, गुजराती भी] ४
▲ 632 सब जग ईश्वररूप है [ओड़िआ, गुजराती भी] १०

नित्य पाठ-साधन-भजन एवं कर्मकाण्ड-हेतु

■1593 अन्त्यकर्म-श्राद्धप्रकाश १३०
■1928 त्रिपिण्डी श्राद्ध पद्धति १५
■1809 गया श्राद्ध पद्धति ३५
■1895 जीवच्छ्राद्धपद्धति ६०
■ 592 नित्यकर्म-पूजाप्रकाश [गुजराती, तेलुगु भी] ६०
■1416 गरुडपुराण-सारोद्धार (सानुवाद) ३५
■1627 रुद्राष्टाध्यायी-सानुवाद ३०
■1417 शिवस्तोत्ररत्नाकर ३०
■2024 गणेशस्तोत्ररत्नाकर ३५
■1954 शिवस्मरण १०
■1774 देवीस्तोत्ररत्नाकर ३५
■1623 ललितासहस्रनामस्तोत्रम् [तमिल, तेलुगु भी] १०
■ 610 व्रतपरिचय ५०
■1162 एकादशी-व्रतका माहात्म्य—मोटा टाइप [गुजराती भी] २०
■1136 वैशाख-कार्तिक-माघमास-माहात्म्य ३५
■1588 माघमासका माहात्म्य १०
■1899 श्रावणमास-माहात्म्य (सानुवाद) ३२
■1367 श्रीसत्यनारायण-व्रतकथा १२
■ 052 स्तोत्ररत्नावली—सानुवाद [तेलुगु, बँगला भी] ३५
■1629 " " सजिल्द ६५
■2003 शक्तिपीठ दर्शन २०
■1567 दुर्गासप्तशती—मूल, मोटा, बेड़िया ६५
■ 876 " मूल गुटका १५
■1346 " सानुवाद मोटा टाइप ३५
■ 118 दुर्गासप्तशती-सानुवाद [गुजराती, बँगला, ओड़िआ भी] ३०
■ 489 " सानुवाद, सजिल्द [गुजराती भी] ४५
■1281 " " (विशिष्ट सं०) ५०
■ 866 " केवल हिन्दी २०
■1161 " केवल हिन्दी मोटा टाइप, सजिल्द ५०
■ 819 श्रीविष्णुसहस्रनाम—शांकरभाष्य ३०
■ 206 श्रीविष्णुसहस्रनाम—सटीक ६
■1801 श्रीविष्णुसहस्रनामस्तोत्रम् (हिन्दी-अनुवादसहित) १०
■ 226 श्रीविष्णुसहस्रनाम—मूल, [मलयालम, तेलुगु, कन्नड, तमिल, गुजराती भी] ३
■1872 श्रीविष्णुसहस्रनामस्तोत्रम्-लघु २
■ 509 सूक्ति-सुधाकर २५
■ 207 रामस्तवराज—(सटीक) ५
■ 211 आदित्यहृदयस्तोत्रम् (ओड़िआ भी) ३
■ 224 श्रीगोविन्ददामोदरस्तोत्र [तेलुगु, ओड़िआ भी] ५
■ 231 रामरक्षास्तोत्रम्— [तेलुगु, ओड़िआ, अंग्रेजी भी] ३

नामावलिसहितम्

■1594 सहस्रनामस्तोत्रसंग्रह ११०
■2021 श्रीपुरुषोत्तमसहस्रनामस्तोत्रम् १०
■1599 श्रीशिवसहस्रनामस्तोत्रम् ८
■1600 श्रीगणेशसहस्रनामस्तोत्रम् ८
■1601 श्रीहनुमत्सहस्रनामस्तोत्रम् ८
■1663 श्रीगायत्रीसहस्रनामस्तोत्रम् ८
■1664 श्रीगोपालसहस्रनामस्तोत्रम् ८
■1665 श्रीसूर्यसहस्रनामस्तोत्रम् ८
■1706 श्रीविष्णुसहस्रनामस्तोत्रम् ८
■1704 श्रीसीतासहस्रनामस्तोत्रम् ८
■1705 श्रीरामसहस्रनामस्तोत्रम् ८
■1707 श्रीलक्ष्मीसहस्रनामस्तोत्रम् ८
■1708 श्रीराधिकासहस्रनामस्तोत्रम् ६
■1709 श्रीगंगासहस्रनामस्तोत्रम् ८

■1862 श्रीगोपालसहस्रनामस्तोत्रम्-सटीक १५
■ 495 दत्तात्रेय-वज्रकवच—सानुवाद [तेलुगु, मराठी भी] ५
■ 563 शिवमहिम्नस्तोत्र [तेलुगु भी] ५
■1748 संतानगोपालस्तोत्र ७
■1850 शतनामस्तोत्रसंग्रह २५
■1885 वैदिक सूक्त-संग्रह ३०
■ 054 भजन-संग्रह ५०
■1849 भजन-सुधा १५
■1783 भजन-सुधा—पुस्तकाकार ६०
■ 229 श्रीनारायणकवच [ओड़िआ, तेलुगु भी] ३
■ 230 अमोघ शिवकवच ३
■ 140 श्रीरामकृष्णलीला-भजनावली ३०
■ 142 चेतावनी-पद-संग्रह (दोनों भाग) ३०
■ 144 भजनामृत—६७ भजनोंका संग्रह १२
■1355 सचित्र-स्तुति-संग्रह १०
■1800 पंचदेव-अथर्वशीर्ष-संग्रह १०
■1092 भागवत-स्तुति-संग्रह ८०
■1214 मानस-स्तुति-संग्रह १५
■1344 सचित्र-आरती-संग्रह १५
■1591 आरती-संग्रह—मोटा टाइप १५
■ 153 आरती-संग्रह १०
■1845 प्रमुख-आरतियाँ—पॉकेट ५
■ 208 सीतारामभजन ५
■ 221 हरेरामभजन-दो माला (गुटका) ५
▲ 385 नारद-भक्ति-सूत्र एवं शाण्डिल्य भक्ति-सूत्र, सानुवाद [बँगला, तमिल भी] ४
■ 222 हरेरामभजन—१४ माला १५
■1990 भगवन्नाम माहात्म्य १०
■ 225 गजेन्द्रमोक्ष [तेलुगु, कन्नड, ओड़िआ भी] ३
■1505 भीष्मस्तवराज ५
■ 699 गङ्गालहरी ३
■1094 हनुमानचालीसा—हिन्दी भावार्थसहित ६
■1979 हनुमानचालीसा—सचित्र, वि.सं. १०
■1997 " —खड़िआ, लघु, वि.सं. ५
■1917 " —रंगीन, विशिष्ट सं० ५
■ 227 " —(पॉकेट साइज) [गुजराती, असमिया, तमिल, बँगला, तेलुगु, कन्नड, ओड़िआ भी] ३
■ 695 हनुमानचालीसा—(लघु आकार) [गुजराती, अंग्रेजी, ओड़िआ भी] २
■1525 हनुमानचालीसा—अति लघु आकार [गुजराती भी] २
■ 228 शिवचालीसा—(असमिया भी) ३
■1185 शिवचालीसा—लघु आकार २
■ 232 श्रीरामगीता ५
■ 383 भगवान् कृष्णकी कृपा तथा दिव्य प्रेमकी.... ३
■ 851 दुर्गाचालीसा, विन्ध्येश्वरीचालीसा ३
■1033 " —लघु आकार २
■1991 " —लाल-रंगमें (वि०सं०) ५
■1993 " —सचित्र (वि०सं०) १०
■ 203 अपरोक्षानुभूति ५
■ 139 नित्यकर्म-प्रयोग १५
■1471 संध्या, संध्या-गायत्रीका महत्त्व और ब्रह्मचर्य ८
■ 210 सन्ध्योपासनविधि एवं तर्पण-मन्त्रानुवादसहित [तेलुगु भी] ६
■ 236 साधकदैनन्दिनी ५
■ 614 सन्ध्या ३

बालोपयोगी पाठ्य पुस्तकें

■1992 हिन्दी-अंग्रेजी वर्णमाला रंगीन ३०
■ 125 हिन्दी-बालपोथी, रंगीन-१ ६
■ 212 " " भाग-२ ५
■ 684 " " भाग-३ ५
■ 764 " " भाग-४ १२
■ 765 " " भाग-५ १२
■1692 बालककी दिनचर्या रंगीन, ग्रन्थाकार २५
■1693 बालकोंकी सीख " २५
■1694 बालकके आचरण " २५
■1690 बालकके गुण " ३५
■1689 आओ बच्चों तुम्हें बतायें " २५
■ 218 बाल-अमृत-वचन ५
■ 696 बाल-प्रश्नोत्तरी [गुजराती भी] ५
■ 213 बालकोंकी बोल-चाल ५
■1691 बालकोंकी बातें—रंगीन १५
■ 146 बड़ोंके जीवनसे शिक्षा [ओड़िआ भी] १२
■ 150 पिताकी सीख [गुजराती भी] १५
■1986 आदर्श-ऋषि-मुनि-ग्रन्थाकार, रंगीन २५
■2004 आदर्श चरितावली—रंगीन, ग्र. २५
■2026 आदर्श संत—रंगीन, ग्र. २५
■2028 आदर्श सुधारक—रंगीन, ग्र. २५
■2019 आदर्श-देशभक्त-ग्रन्थाकार, रंगीन २५
■2022 आदर्श-सम्राट्-ग्रन्थाकार, रंगीन २५
■ 116 लघुसिद्धान्तकौमुदी, सजिल्द ४०
■1437 वीर बालक (रंगीन) २०
■1451 गुरु और माता-पिताके भक्त बालक (रंगीन) १५
■1450 सच्चे-ईमानदार बालक-रंगीन १५
■1449 दयालु और परोपकारी बालक-बालिकाएँ (रंगीन) १५
■1448 वीर बालिकाएँ (रंगीन) १५
■ 727 स्वास्थ्य, सम्मान और सुख ५

सर्वोपयोगी प्रकाशन

■1673 सत्य एवं प्रेरक घटनाएँ २५
■1982 भक्तिसुधा २००
■1595 साधकमें साधुता ३०
■ 747 सप्तमहाव्रत ५
■ 698 मार्क्सवाद और रामराज्य १५०
■1955 जीवनचर्या विज्ञान ३५
■1657 भलेका फल भला ५
■1300 महाकुम्भपर्व ५
■ 542 ईश्वर ५
■ 57 मानसिक दक्षता ३०
■ 59 जीवनमें नया प्रकाश ३०
■ 60 आशाकी नयी किरणें ३०
■ 119 अमृतके घूँट २५
■ 132 स्वर्णपथ २०
■ 55 महकते जीवनफूल ४०
■1461 हम कैसे रहें? १०
■ 774 कल्याणकारी दोहा-संग्रह १२
■ 387 प्रेम-सत्संग-सुधामाला २०
■ 668 प्रश्नोत्तरी ३
■ 501 उद्धव-सन्देश २५
■ 195 भगवान्पर विश्वास १०
■ 120 आनन्दमय जीवन २५
■ 133 विवेक-चूडामणि [तेलुगु, बँगला भी] २०
■ 862 मुझे बचाओ, मेरा क्या कसूर? २५
■ 131 सुखी जीवन २५
■ 122 एक लोटा पानी २०
▲ 701 गर्भपात उचित या..... [बँगला, मराठी, अंग्रेजी] ५
■ 888 परलोक और पुनर्जन्मकी सत्य घटनाएँ [बँगला भी] २०
■ 134 सती द्रौपदी १५
■1624 पौराणिक कथाएँ १५
■2002 आध्यात्मिक कहानियाँ २०
■1938 गीता-माहात्म्यकी कहानियाँ—पुस्तकाकार १०
■1782 प्रेरणाप्रद कथाएँ २०
■1669 पौराणिक कहानियाँ १५
■ 137 उपयोगी कहानियाँ [तेलुगु, तमिल, कन्नड, गुजराती, बँगला भी] १५
■ 159 आदर्श उपकार—(पढ़ो, समझो और करो) २०
■ 160 कलेजेके अक्षर " १३
■ 161 हृदयकी आदर्श विशालता " २०
■ 162 उपकारका बदला " २०
■ 163 आदर्श मानव-हृदय " २०
■ 164 भगवान्के सामने सच्चा सो सच्चा (पढ़ो, समझो और करो) १७
■ 165 मानवताका पुजारी "
■ 166 परोपकार और सच्चाईका फल " १३
■ 510 असीम नीचता और असीम साधुता २०
■ 157 सती सुकला ६
■ 147 चोखी कहानियाँ [तेलुगु, तमिल, गुजराती, मराठी भी] १०
■ 129 एक महात्माका प्रसाद [गुजराती भी] ३०
■1688 तीस रोचक कथाएँ १५
■ 151 सत्संगमाला एवं ज्ञानमणिमाला १५
■1922 गोरक्षा एवं गोसंवर्धन १०

चित्रकथा

■1647 देवीभागवतकी प्रमुख कथाएँ २५
■1646 महाभारतके प्रमुख पात्र २५
■ 190 बाल-चित्रमय श्रीकृष्णलीला २०
■ 868 भगवान् सूर्य (ग्रंथाकार) २५

कोड		मूल्य रु०
■1156	एकादश रुद्र (शिव)	५०
■1032	बालचित्र-रामायण-पुस्तकाकार	६
■ 869	कन्हैया [बँगला, तमिल, गुजराती, ओड़िआ, तेलुगु भी]	१५
■ 870	गोपाल [बँगला, तेलुगु, तमिल भी]	१५
■ 871	मोहन [बँगला, तेलुगु, तमिल, गुजराती, ओड़िआ, अंग्रेजी भी]	१५
■ 872	श्रीकृष्ण [बँगला, तमिल, तेलुगु भी]	१५
■1018	नवग्रह—चित्र एवं परिचय [बँगला भी]	१५
■1016	रामलला [तेलुगु, अंग्रेजी भी]	२५
■1116	राजा राम [तेलुगु भी]	२५
■1017	श्रीराम	२५
■1394	भगवान् श्रीराम (पुस्तकाकार)	१५
■1418	श्रीकृष्णलीला-दर्शन "	१५
■1278	दशमहाविद्या [बँगला भी]	१५
■1343	हर-हर महादेव	२५

कोड		मूल्य रु०
■ 829	अष्टविनायक [ओड़िआ, मराठी, गुजराती भी]	१५
■1794	सत्यप्रेमी हरिश्चन्द्र	२५
■ 204	ॐ नमः शिवाय [बँगला, ओड़िआ, कन्नड भी]	२५
■ 787	जय हनुमान् [तेलुगु, ओड़िआ भी]	२५
■ 779	दशावतार [बँगला भी]	१५
■1215	प्रमुख देवता	१५
■1216	प्रमुख देवियाँ	१५
■1442	प्रमुख ऋषि-मुनि	२५
■1443	रामायणके प्रमुख पात्र [तेलुगु भी]	२५
■1488	श्रीमद्भागवतके प्रमुख पात्र [तेलुगु भी]	२५
■1537	श्रीमद्भागवतकी प्रमुख कथाएँ	२५
■1538	महाभारतकी प्रमुख कथाएँ	२५
■1420	पौराणिक देवियाँ	१५

कोड		मूल्य रु०
■1307	नवदुर्गा—पॉकेट साइज	५
■ 205	नवदुर्गा [तेलुगु, गुजराती, असमिया, कन्नड, अंग्रेजी, ओड़िआ, बँगला भी]	१५
■ 537	बाल-चित्रमय युद्धलीला	१२
■ 194	बाल-चित्रमय चैतन्यलीला [ओड़िआ, बँगला भी]	१५
■ 651	गोसेवाके चमत्कार [तमिल भी]	१५

रंगीन चित्र-प्रकाशन

कोड		मूल्य रु०
▲1695	चित्र—भगवती सरस्वती	१०
▲1582	चित्र भगवान् श्रीकृष्ण	१०
▲ 237	जय श्रीराम—भगवान् रामकी सम्पूर्ण लीलाओंका चित्रण	२०
▲ 546	जय श्रीकृष्ण—भगवान् श्रीकृष्णकी सम्पूर्ण लीलाओंका चित्रण	२०

कोड		मूल्य रु०
▲1957	श्रीलक्ष्मीनारायण	१०
▲1970	" एवं श्रीगणेशजी	१०
▲1001	जगज्जननी श्रीराधा	१०
▲1020	श्रीराधा-कृष्ण—युगल छवि	१०
▲ 491	हनुमान्‌जी—(भक्तराज हनुमान्)	१०
▲ 492	भगवान् विष्णु	१०
▲1568	भगवान् श्रीराम-बालरूपमें	१०
▲1351	सुमधुर गोपाल	८
▲ 560	लड्डू गोपाल	१०
▲1674	" (प्लास्टिक कोटेड)	१५
▲ 776	सीताराम—युगल छवि	८
▲ 548	मुरलीमनोहर-भगवान् मुरलीमनोहर	१०
▲ 782	श्रीरामदरबारकी झाँकी	१०
▲1290	नटराज शिव	१०
▲ 630	सर्वदेवमयी गौ	१०
▲ 531	श्रीबाँकेबिहारी	१०
▲ 812	नवदुर्गा	१०

'कल्याण' के पुनर्मुद्रित विशेषाङ्क

कोड		मूल्य रु०
■1184	श्रीकृष्णाङ्क	
■ 41	शक्ति-अङ्क	१५०
■ 616	योगाङ्क	२००
■ 604	साधनाङ्क	२५०
■1773	गो-अङ्क	१७०
■ 44	संक्षिप्त पद्मपुराण	२५०
■ 539	संक्षिप्त मार्कण्डेयपुराण	९०
■1111	संक्षिप्त ब्रह्मपुराण	१२०
■ 43	नारी-अङ्क	२४०
■ 659	उपनिषद्-अङ्क	२००
■ 279	सं० स्कन्दपुराण	३२५
■ 40	भक्त-चरिताङ्क	२३०
■1183	सं० नारदपुराण	२००
■1132	धर्मशास्त्राङ्क	१५०
■ 667	संतवाणी-अङ्क	१५०

कोड		मूल्य रु०
■ 587	सत्कथा-अङ्क	२००
■ 636	तीर्थाङ्क	२००
■ 574	संक्षिप्त योगवासिष्ठ	१६०
■1133	सं० देवीभागवत-मोटा टाइप	२४०
■ 789	सं० शिवपुराण-(बड़ा टाइप)	२००
■ 631	सं० ब्रह्मवैवर्तपुराण	२००
■ 572	परलोक-पुनर्जन्माङ्क	२००
■1135	भगवन्नाम-महिमा और प्रार्थना-अङ्क	१२०
■ 517	गर्ग-संहिता	१५०
■1113	नरसिंहपुराणम्—सानुवाद	१००
■1362	अग्निपुराण (मूल संस्कृतका हिन्दी-अनुवाद)	२००
■1432	वामनपुराण	१२५

कोड		मूल्य रु०
■ 557	मत्स्यमहापुराण (सानुवाद)	२३०
■ 657	श्रीगणेश-अङ्क	१७०
■ 42	हनुमान-अङ्क	१५०
■1361	सं० श्रीवाराहपुराण	१००
■ 791	सूर्याङ्क	१३०
■ 584	सं० भविष्यपुराण	१५०
■ 586	शिवोपासनाङ्क	
■ 653	गोसेवा-अङ्क	१३०
■1131	कूर्मपुराण	१४०
■1044	वेद-कथाङ्क	१७५
▲1542	भगवत्प्रेम-अङ्क-अजि०	६५
■1592	आरोग्य-अङ्क	२००
■1189	सं० गरुडपुराण	१६०
■1610	महाभागवत देवीपुराण	१२०

कोड		मूल्य रु०
■1793	श्रीमद्देवीभागवताङ्क (पूर्वार्द्ध)	१००
■1842	श्रीमद्देवीभागवताङ्क (उत्तरार्द्ध)	१००
■1980	ज्योतिषतत्त्वाङ्क	१३०
■1947	भक्तमाल-अङ्क	१३०
■1985	लिङ्गमहापुराण—सटीक	२००
■2100	कल्याण मासिक पत्रिका	५

Annual Issues of Kalyan-Kalpataru

Code		Price
▲ 1841	Jaiminiya Mahābhārata (Aśwamedhika Parva) (Part I)	40
▲ 1847	" " " (Part II)	40
▲ 2109	Morality Number	40
▲ 1971	Sādhanā Number	50
▲ 1972	Shiksha Number	50

अन्य भारतीय भाषाओंके प्रकाशन

बँगला

कोड		मूल्य रु०
■1937	सं० शिवपुराण	१६०
■1883	श्रीरामचरितमानस-मझला, सटीक	१६०
■1577	श्रीमद्भागवतपुराण-सटीक-I	२४०
■1744	श्रीमद्भागवतपुराण-सटीक-II	२४०
■1785	भागवतेरमणिमुक्तोर	२५
■1662	श्रीचैतन्यचरितामृत	१३०
■1603	ईशादि नौ उपनिषद्	७५
■1786	मूल वाल्मीकीयरामायण	१०
■1839	कृत्तिवासीरामायण	१६०
■1996	स्तुति	१२५
■1901	साधन समर	११०
■1574	संक्षिप्त महाभारत-भाग-I	२२०
■1660	" " भाग-II	२२०
■763	गीता-साधक-संजीवनी-	२५०
■1118	गीता-तत्त्व-विवेचनी	११०
■1851	गीता रसामृत	८५
■556	गीता-दर्पण	७०
■1736	गीता-प्रबोधनी	५०
■1489	गीता-दैनन्दिनी (२०१५)	३०
■ 013	गीता-पदच्छेद	५०
■1444	गीता-ताबीजी—सजिल्द	८
■1455	गीता-लघु आकार	३
■1322	दुर्गासप्तशती—सटीक	३०
■1604	पातञ्जलयोगदर्शन	२०
■1460	विवेकचूडामणि	२०
■1075	ॐ नमः शिवाय (चित्रकथा)	२५
■1787	महावीर हनुमान् (")	२५
■1043	नवदुर्गा (")	१५

कोड		मूल्य रु०
■1977	भगवान् सूर्य (चित्रकथा)	२५
■1439	दश महाविद्या (")	१५
■1292	दशावतार (")	१५
■1096	कन्हैया (")	१५
■1097	गोपाल (")	२५
■1892	सीतापतिराम (")	२५
■1893	राजाराम (")	२५
■1891	रामलला (")	१५
■1098	मोहन (")	१५
■1123	श्रीकृष्ण (")	२५
■1888	जय शिवशंकर (")	२५
■1889	प्रमुख ऋषिमुनि (")	२५
■1495	बालचित्रमय चैतन्यलीला	१२
■1393	गीता भाषा-टीका-सजि., पॉकेट	२५
■1454	स्तोत्ररत्नावली	३०
■1854	भागवतरत्नावली	२०
■1659	श्रीश्रीकृष्णेर अष्टोत्तरशतनाम	२
■1852	रामरक्षास्तोत्र—लघु आकार	२
■1853	आमेदेरलक्ष्य और कर्तव्य	१५
■ 496	गीता-भाषा-टीका (पॉकेट)	१५
■1834	श्रीमद्भगवद्गीता (मूल) एवं विष्णुसहस्रनाम	१०
▲1581	गीतार-सारात्सार	१०
■1496	परलोक और पुनर्जन्मकी...	२०
▲1795	मनको वश करनेके कुछ...	६
■1920	शाकाहार या मांसाहार-फैसला...	१०
▲1925	ईश्वरकी सत्ता एवं महत्ता	१०
▲ 275	कल्याण-प्राप्तिके उपाय	२५

कोड		मूल्य रु०
▲1305	प्रश्नोत्तर मणिमाला	१५
▲ 395	गीतामाधुर्य	१०
▲1102	अमृत-बिन्दु	१२
■1356	सुन्दरकाण्ड—सटीक	१२
▲ 816	कल्याणकारी प्रवचन	१०
▲1838	जीवनोपयोगी प्रवचन	१२
▲ 276	परमार्थ-पत्रावली (भाग-१)	१०
▲1306	कर्तव्य साधनासे भगवत्प्राप्ति	८
▲1119	ईश्वर और धर्म क्यों?	१८
▲1456	भगवत्प्राप्तिका पथ व पाथेय	१५
▲1580	अध्यात्मसाधनाय कर्महीनतानय	१०
▲1452	आदर्श कहानियाँ	१०
▲1453	प्रेरक कहानियाँ	६
■1513	मूल्यवान् कहानियाँ	१५
▲1469	सब साधनोंका सार	८
▲1478	मानवमात्रके कल्याणके लिये	२०
▲1359	जिन खोजा तिन पाइयाँ	१०
▲1115	तत्त्वज्ञान कैसे हो?	१०
▲1303	साधकोंके प्रति	८
▲1358	कर्म-रहस्य	८
▲1122	क्या गुरु बिना मुक्ति नहीं?	६
▲1742	शरणागति	६
▲1784	प्रेमभक्ति प्रकाश तथा....	५
▲ 625	देशकी वर्तमान दशा....	६
▲ 428	गृहस्थमें कैसे रहें?	८
▲ 903	सहज साधना	६
▲1415	अमृतवाणी	१५
▲ 312	आदर्श नारी सुशीला	५

कोड		मूल्य रु०
▲1541	साधनके दो प्रधान सूत्र	५
▲ 955	तात्त्विक प्रवचन	७
■1652	नवग्रह (चित्रकथा)	१५
▲ 449	दुर्गतिसे बचो सच्चा गुरु कौन?	५
▲ 956	साधन और साध्य	१०
▲1579	साधनार मनोभूमि	१०
▲ 330	नारद एवं शांडिल्य-भक्ति-सूत्र	४
▲ 762	गर्भपात उचित या अनुचित	४
■1881	हनुमानचालीसा—सटीक	३
■1880	हनुमानचालीसा—लघु	२
■1743	शिवचालीसा, लघु आकार	२
■1797	स्तवमाला	३
▲1319	कल्याणके तीन सुगम मार्ग	४
▲1651	हे महाजीवन! हे महामरण!	३
▲1293	शिखा धारणकी ------	३
▲ 450	हम ईश्वरको क्यों मानें?	५
▲1884	ईश्वर-लाभके विविध उपाय	३
▲ 849	मातृशक्तिका घोर अपमान	५
▲ 451	महापापसे बचो	३
▲ 469	मूर्तिपूजा	२
▲ 296	सत्संगकी सार बातें	२
▲1936	ईश्वरेरप्रति विश्वास	६
▲ 443	संतानका कर्तव्य	२
■1835	सत्यनिष्ठ साहसी बालक बालिकादेर कथा	२०
▲1946	रामायण-महाभारतके कुछ...	१५
▲1948	यह विकास या विनाश	४
▲1978	भगवान्‌के रहनेके पाँच स्थान	५

कोड	मूल्य रु०

मराठी

■1314 श्रीरामचरितमानस सटीक, मोटा टाइप २४०
■1687 सुन्दरकाण्ड—सटीक १०
■1508 अध्यात्मरामायण १२०
■ 784 ज्ञानेश्वरी गूढ़ार्थ-दीपिका २२०
■2010 ज्ञानेश्वरी परायण प्रत १५०
■1808 श्रीतुकाराममहाराजांची गाथा १२०
■1942 जगद्‌गुरु तुकाराम २०
■1934 संतश्रेष्ठ एकनाथ २२
■1931 श्रीमुक्ताबाई चरित्र व गाथा ७०
■1915 संतनामदेवांची अभंग गाथा १२०
■1817 पाण्डव-प्रताप ११०
■1950 हरिविजय ८०
■1983 श्रीरामविजय १००
■2000 श्रीभक्तविजय १२०
■1836 श्रीगुरुचरित्र १४०
■1780 श्रीदासबोध, मझला साइज १००
■1781 दासबोध (गद्यरूपान्तरासह) १७०
■ 853 एकनाथी भागवत—मूल २००
■1678 श्रीमद्भागवतमहापुराण-I २१०
■1735 श्रीमद्भागवतमहापुराण-सटीक-I २१०
■1776 श्रीमद्भागवतमहापुराण (केवल मराठी अनुवाद) २५०
■ 7 गीता-साधक-संजीवनी टीका २२०
■1304 गीता-तत्त्व-विवेचनी १६०
■ 859 ज्ञानेश्वरी—मूल मझला ७०
■ 15 गीता-माहात्म्यसहित ४५
■ 504 गीता-दर्पण ६०
■ 748 ज्ञानेश्वरी—मूल गुटका ४५
■1896 ज्ञानेश्वरी—माउली २०
■ 14 गीता—पदच्छेद ५५
■1388 गीता-श्लोकार्थसहित (मोटा टाइप) २०
■1257 गीता—श्लोकार्थसहित १५
■1168 भक्त नरसिंह मेहता १५
■1913 संत श्रेष्ठ नामदेव २०
■1671 महाराष्ट्रातील निवडक.... १२
▲ 429 गृहस्थमें कैसे रहें? १५
▲1703 क्या गुरु बिना मुक्ति नहीं? ६
▲1387 प्रेममें विलक्षण एकता १२
■ 857 अष्ट विनायक (चित्रकथा) १५
▲ 391 गीतामाधुर्य १५
▲1099 अमूल्य समयका सदुपयोग १२
▲1335 रामायणके कुछ आदर्श पात्र १५
▲1155 उद्धार कैसे हो? ७
▲1716 भगवान् कैसे मिले? १२
▲1719 चिन्ता,शोक कैसे मिटे? १२
▲1717 मनुष्य-जीवनका उद्देश्य १२
▲1074 आध्यात्मिक पत्रावली १०
▲1275 नवधा भक्ति १०
▲1386 महाभारतके कुछ आदर्श पात्र १०
▲1340 अमृत-बिन्दु १०
▲1382 शिक्षाप्रद ग्यारह कहानियाँ १२
■1818 उपयोगी कहानियाँ १५
▲1210 जित देखूँ तित-तू १२
▲1330 मेरा अनुभव १२
■1277 भक्त बालक ८
■1073 भक्त चन्द्रिका ८
■1383 भक्तराज हनुमान् ८
■1778 जीवनादर्श श्रीराम २०
▲ 886 साधकोंके प्रति ८
▲ 885 तात्त्विक प्रवचन १०
■1607 रुक्मिणी स्वयंवर २०
■1640 सार्थ मनाचे श्लोक ७
■1333 भगवान् श्रीकृष्ण १०
■1331 कृष्ण भक्त उद्धव ६
■1682 सार्थ सं० देवीपाठ १०
■1332 दत्तात्रेय-वज्रकवच ५
■1732 शिवलीलामृत ५०
■1768 श्रीशिवलीलामृतांतील - अकरावा अध्याय ५
■1730 श्रीशिवमहिम्नःस्तोत्रम् ५
■1731 श्रीविष्णुसहस्रनामावलिः ५
■1729 श्रीविष्णुसहस्रनामस्तोत्रम् १०
■1670 मूल रामायण, पॉकेट साइज ४
■1679 मनाचे श्लोक, पॉकेट साइज ५
■1680 सार्थश्रीगणपत्यथर्वशीर्ष ३
■1683 सार्थ ज्ञानदेवी गीता १५
■1810 कन्हैया (चित्रकथा) १५
■1811 गोपाल (") १५
■1812 मोहन (") १५
■1813 श्रीकृष्ण (") १५
■1828 रामलला (") २५
■1829 श्रीराम (") २५
■1830 राजाराम (") २५
■1645 हरीपाठ (सार्थ सविवरण) १२
■ 855 हरीपाठ ५
■1169 चोखी कहानियाँ ७
▲1385 नल-दमयंती ५
▲1384 सती सावित्री-कथा ४
■1814 सामाजिक संस्कार कथा २०
■1815 घराघरातील संस्कार कथा २०
▲ 880 साधन और साध्य १०
▲1006 वासुदेवः सर्वम् ६
▲1276 आदर्श नारी सुशीला ५
▲1334 भगवान्‌के रहनेके पाँच स्थान ६
▲1749 श्रीप्रेमभक्तिप्रकाश व ध्यानावस्थामें प्रभुसे वार्तालाप ४
▲ 899 देशकी वर्तमान दशा⋯ ७
▲1339 कल्याणके तीन सुगम मार्ग और सत्यकी शरणसे मुक्ति ६
▲1428 आवश्यक शिक्षा ८
▲1341 सहज साधना ६
▲1711 शिखा (चोटी) धारण... ३
▲ 802 गर्भपात उचित या अनुचित फैसला आपका २
▲ 882 मातृशक्तिका घोर अपमान ५
▲ 883 मूर्तिपूजा ४
■1746 मनोबोधभक्तिसूत्र १२
▲ 884 सन्तानका कर्तव्य ४
▲1279 सत्संगकी कुछ सार बातें ४
▲1613 भगवान्‌के स्वभावका रहस्य १२
▲1642 प्रेमदर्शन १५
▲1641 साधनकी आवश्यकता १२
▲ 901 नाम-जपकी महिमा २
▲ 900 दुर्गतिसे बचो २
▲1171 गीता पढ़नेके लाभ ३
▲ 902 आहार-शुद्धि
▲1170 हमारा कर्तव्य ३
▲ 881 भगवत्प्राप्तिकी सुगमता १२
▲ 898 भगवन्नाम ७
▲1578 मानवमात्रके कल्याणके लिये २५
■1779 भलेका फल भला ५

गुजराती

■ 799 श्रीरामचरितमानस-ग्रन्थाकार २४०
■1533 " " (वि० सं०) ३००
■1981 सं० गरुडपुराण (वि० सं०) १६०
■2006 श्रीविष्णुपुराण १५०
■1939 वाल्मीकीयरामायण—सटीक-I २००
■1940 वाल्मीकीयरामायण—सटीक-II २००
■1943 गीता-माहात्म्य ८५
■1552 भागवत—सटीक (खण्ड-१) २२०
■1553 भागवत—सटीक (खण्ड-२) २२०
■1608 श्रीमद्भागवत-सुधासागर ३००
■1326 सं० देवीभागवत २३०
■1798 सं० महाभारत (खण्ड-१) २५०
■1799 सं० महाभारत (खण्ड-२) २५०
■1286 संक्षिप्त शिवपुराण २००
■1650 तत्त्वचिन्तामणि, ग्रन्थाकार १३०
■1630 साधन-सुधा-सिन्धु १२५
■ 467 गीता-साधक-संजीवनी २४०
■1313 गीता-तत्त्व-विवेचनी १६०
■ 785 श्रीरामचरितमानस-मझला, सटीक १२०
■ 878 श्रीरामचरितमानस—मूल मझला ७०
■ 879 " —मूल गुटका ५५
■1430 " —मूल, मोटा टाइप १२०
■1960 सं० योगवाशिष्ठ १५०
■1637 सुन्दरकाण्ड-सटीक, मोटा टाइप २५
■1365 नित्यकर्म-पूजाप्रकाश ६०
■1565 गीता-मोटे अक्षरवाली सजिल्द ८५
■2023 जीवनचर्या-विज्ञान ४०
▲1987 अच्छे बनो ८
▲1988 कल्याण कैसे हो? १५
■1668 एकादशीव्रतका माहात्म्य २०
■ 12 गीता-पदच्छेद ५०
■1315 गीता—सटीक, मोटा टाइप २५
■1366 दुर्गासप्तशती—सटीक ३०
■1634 दुर्गासप्तशती—सजिल्द ८५
■1227 सचित्र आरतियाँ १२
■ 936 गीता छोटी—सटीक १५
■1034 गीता छोटी—सजिल्द २५
■1636 श्रीमद्भगवद्गीता— मूल, मोटा टाइप १२
■1225 मोहन— (चित्रकथा) १२
■1224 कन्हैया—(") १५
■1228 नवदुर्गा—(") १२
■1656 गीता-तावीजी, मूल, सजिल्द ८
■ 948 सुन्दरकाण्ड—मूल मोटा १०
■1085 भगवान् राम ८
■ 950 सुन्दरकाण्ड—मूल गुटका ५
■1199 सुन्दरकाण्ड—मूल लघु आकार ४
■1823 विनय-पत्रिका ८५
■1226 अष्ट विनायक (चित्रकथा) १५
■ 613 भक्त नरसिंह मेहता १५
▲1518 भगवान्‌के स्वभावका रहस्य १५
▲1486 मानवमात्रके कल्याणके लिये २०
▲1164 शीघ्र कल्याणके सोपान २०
▲1146 श्रद्धा, विश्वास और प्रेम १५
▲1144 व्यवहारमें परमार्थकी कला १२
▲1062 नारीशिक्षा १५
▲1129 अपात्रको भी भगवत्प्राप्ति १२
■1400 पिताकी सीख १५
■1425 वीर बालिकाएँ ८
■1423 गुरु, माता-पिताके भक्त बालक १०
■1422 वीर बालक १०
■1424 दयालु और परोपकारी बालक-बालिकाएँ १०
■1258 आदर्श सम्राट् ६
▲1128 दाम्पत्य-जीवनका आदर्श १२
▲1061 साधन नवनीत ९
▲1520 कर्मयोगका तत्त्व (भाग—१) २०
▲1264 मेरा अनुभव १२
▲1046 स्त्रियोंके लिये कर्तव्य-शिक्षा १५
▲1211 जीवनका कर्तव्य १५
▲ 404 कल्याणकारी प्रवचन ७
▲ 877 अनन्य भक्तिसे भगवत्प्राप्ति १५
▲ 818 उपदेशप्रद कहानियाँ १२
▲1265 आध्यात्मिक प्रवचन ८
▲1516 परमशान्तिका मार्ग (भाग-१) १५
▲1504 प्रत्यक्ष भगवद्दर्शनके उपाय २०
■1212 एक महात्माका प्रसाद ३०
▲1539 सत्संगकी मार्मिक बातें १०
▲1457 प्रेममें विलक्षण एकता १०
▲1655 प्रश्नोत्तर-मणिमाला १२
▲1503 भगवत्प्रेमकी प्राप्तिमें... १५
▲1325 सब जग ईश्वररूप है ६
▲1052 इसी जन्ममें भगवत्प्राप्ति १५
▲1878 जन्ममरणसे छुटकारा १२
■ 934 उपयोगी कहानियाँ १५
▲1067 दिव्य सुखकी सरिता १०
▲ 933 रामायणके कुछ आदर्श पात्र १५
▲1295 जित देखूँ तित-तू १०
▲ 943 गृहस्थमें कैसे रहें? १२
▲1260 तत्त्वज्ञान कैसे हो? ७
▲1263 साधन और साध्य ८
▲1294 भगवान् और उनकी भक्ति १०
▲ 932 अमूल्य समयका सदुपयोग १०
▲ 392 गीतामाधुर्य १५
▲1077 शिक्षाप्रद ग्यारह कहानियाँ ७
▲ 940 अमृत-बिन्दु १०
▲ 931 उद्धार कैसे हो? १०
▲ 894 महाभारतके कुछ आदर्श पात्र ८
▲ 413 तात्त्विक प्रवचन ७
■ 895 भगवान् श्रीकृष्ण १०
▲1126 साधन -पथ ६
▲ 946 सत्संगका प्रसाद ७
▲ 942 जीवनका सत्य १०
▲1145 अमरताकी ओर ७
▲1066 भगवान्‌से अपनापन १०
■ 806 रामभक्त हनुमान् ६
▲1086 कल्याणकारी प्रवचन (भाग-२) ८
▲1287 सत्यकी खोज १०
▲1088 एकै साधे सब सधै ८
■1399 चोखी कहानियाँ १०
▲ 889 भगवान्‌के रहनेके पाँच स्थान ५
▲1141 क्या गुरु बिना मुक्ति नहीं? ६
▲1047 आदर्श नारी सुशीला ५
▲1059 नल-दमयन्ती ५
▲1045 बालशिक्षा ६
▲1063 सत्संगकी विलक्षणता ६
▲1064 जीवनोपयोगी कल्याण-मार्ग ६
▲1165 सहज साधना ५
▲1151 सत्संगमुक्ताहार ८
■1401 बालप्रश्नोत्तरी ५
▲ 893 सती सावित्री ४
▲1177 आवश्यक शिक्षा ६
■1867 स्वास्थ्य, सम्मान और सुख ५
▲1049 आनन्दकी लहरें ४
■ 937 विष्णुसहस्रनाम नामावली ८
■1941 श्रीशिवसहस्रनामस्तोत्र नामावली.. ८
■1910 गजेन्द्रमोक्ष ३
■1909 आदित्यहृदयस्तोत्र ३
■1911 गोपालसहस्रनामस्तोत्र ५
▲1058 मनको वश करनेके उपाय.. ४
▲1050 सच्चा सुख ३
▲1060 त्यागसे भगवत्प्राप्ति और गीता पढ़नेके लाभ २
▲1840 एक संतकी वसीयत २
■ 828 हनुमानचालीसा ३
▲ 844 सत्संगकी कुछ सार बातें ४
▲1055 हमारा कर्तव्य एवं व्यापार.. ३
▲1048 संत-महिमा ३
▲1310 धर्मके नामपर पाप ३
▲1179 दुर्गतिसे बचो ३
▲1178 सार-संग्रह, सत्संगके अमृत कण ४
▲1206 धर्म क्या है? भगवान् क्या है? ३
▲1500 सन्ध्या-गायत्रीका महत्त्व ४
▲1051 भगवान्‌की दया ४
■1198 हनुमानचालीसा—लघु आकार २
■1649 हनुमानचालीसा-अति लघु आकार
▲1054 प्रेमका सच्चा स्वरूप और ३
सत्यकी शरणसे मुक्ति १
▲ 938 सर्वोच्चपदप्राप्तिके साधन ३
▲1056 चेतावनी एवं सामयिक... ३
▲1053 अवतारका सिद्धान्त और ईश्वर.. ४
▲1127 ध्यान और मानसिक पूजा ३
▲1148 महापापसे बचो
▲1152 मुक्तिमें सबका अधिकार १.५०

तमिल

■1426 साधक-संजीवनी (भाग-१) १४०
■1427 साधक-संजीवनी (भाग-२) १२०
■ 800 गीता-तत्त्व-विवेचनी १६५
■1902 वा०रा०-सटीक (खण्ड-१) २५०
■1903 वा०रा०-सटीक (खण्ड-२) १५०
■1904 वा०रा०-सटीक (खण्ड-३) १२०
■1905 वा०रा०-सटीक (खण्ड-४) १६०
■1906 वा०रा०-सटीक (खण्ड-५) १२०
■1256 अध्यात्मरामायण ८५
■1961 श्रीमद्वा०रा० वचनमु-I १९०
■1962 श्रीमद्वा०रा० वचनमु-II १९०
■1966 श्रीमद्भा०महा०-सटीक-I २२५
■1967 श्रीमद्भा०महा०-सटीक-II २२५
■1968 श्रीमद्भा०महा०-सटीक-III २५०
■ 823 गीता—पदच्छेद ८०
■1918 श्रीमद्भगवद्गीता—पाकेट १५
■ 743 गीता—मूलम् ३०

कोड		मूल्य रु०
■2029	शिवसहस्रनामस्तोत्रम्	७
■2015	देवस्तुति मालै	२०
■2013	दैवस्तुति मंजरी	२५
■ 794	विष्णुसहस्रनामस्तोत्रम्	५
■ 793	गीता मूल-विष्णुसहस्रनाम	१२
■ 795	गीता—भाषा	१२
■1918	गीता—छोटी	१५
■1606	श्रीमन्नारायणीयम्, सटीक	१००
■1618	वाल्मीकीयरामायण सुन्दर..	५०
■1619	,, ,, मूलम्	३०
■1890	कंबरामायण सुन्दरकाण्डम्	३०
■1912	व्रत-कल्पत्रयम्	१५
▲ 389	गीतामाधुर्य	२०
■1788	श्रीमुरुगन्तुदिमालै	१५
■1998	ललितासहस्रनामस्तोत्र	१२
■1999	विदुरनीति	१२
■1789	तिरुप्पावैविलक्कम्	२०
■ 365	गोसेवाके चमत्कार	१५
■1134	गीता-माहात्म्यकी कहानियाँ	१५
▲1007	अपात्रको भी भगवत्प्राप्ति	८
▲ 553	गृहस्थमें कैसे रहें ?	१५
▲ 850	संतवाणी—(भाग १)	१२
▲ 952	,, (,, २)	१२
▲ 953	,, (,, ३)	१२
▲1353	रामायणके कुछ आदर्श पात्र	१५
▲1354	महाभारतके कुछ आदर्श पात्र	१५
■ 646	चोखी कहानियाँ	१२
■ 608	भक्तराज हनुमान्	१०
■1246	भक्तचरित्रम्	१२
▲ 643	भगवान्के रहनेके पाँच स्थान	८
▲ 550	नाम-जपकी महिमा	२
▲1289	साधन-पथ	८
▲1480	भगवान्के स्वभावका रहस्य	१५
▲1481	प्रत्यक्ष भगवद्दर्शनके उपाय	१५
▲1482	भक्तियोगका तत्त्व	१५
▲1117	देशकी वर्तमान दशा...	१०
▲1110	अमृत-बिन्दु	१२
▲ 655	एकै साधे सब सधै	१०
▲1243	वास्तविक सुख	१२
■ 741	महात्मा विदुर	१०
▲ 536	गीता पढ़नेके लाभ, सत्यकी..	६
▲ 591	महापापसे बचो.....	७
▲ 609	सावित्री और सत्यवान्	४
▲ 644	आदर्श नारी सुशीला	६
▲ 568	शरणागति	६
▲ 805	मातृशक्तिका घोर अपमान	५
▲ 607	सबका कल्याण कैसे हो ?	४
■ 127	उपयोगी कहानियाँ	१५
■ 600	हनुमानचालीसा	५
▲ 466	सत्संगकी सार बातें	४
▲ 499	नारद-भक्ति-सूत्र	३
■ 601	भगवान् श्रीकृष्ण	१०
■ 642	प्रेमी भक्त उद्धव	१२
▲ 742	गर्भपात उचित या....	
▲ 423	कर्मरहस्य	१०
▲ 569	मूर्तिपूजा	३
▲ 551	आहारशुद्धि	४
▲ 645	नल-दमयन्ती	८
▲ 606	सर्वोच्चपदकी प्राप्तिके साधन	४
▲ 792	आवश्यक चेतावनी	५

कन्नड़

कोड		मूल्य रु०
■1112	गीता-तत्त्व-विवेचनी	१५०
■1369 1370	गीता-साधक-संजीवनी (दो खण्डोंमें सेट)	३००
■1728	सार्थ ज्ञानेश्वरी	२००
■1739	श्रीमद्भागवतमहापुराण (सटीक) खण्ड-१	२२५
■1740	,, ,, (सटीक) खण्ड-२	२२५
■1558	अध्यात्मरामायण	१२५
■1926	सं० शिवपुराण	१७५
■1949	भागवत सुधासागर	२५०
■1964	श्रीमद्०वा०रा० सटीक—I	२००
■1965	,, ,, II	२००
■1969	,, ,, III	२५०

कोड		मूल्य रु०
■1989	श्रीमद्देवीभागवतमहापुराण	२००
■1560	रामचरितमानस-सटीक	१६०
■2011	वा० रा० भाषा—(भाग-१)	१७०
■2012	वा० रा० भाषा—(भाग-२)	१७०
■1559	श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण-सुन्दरकाण्ड	१००
■ 726	गीता-पदच्छेद	५५
■ 718	गीता-तात्पर्यके साथ	२५
■1372	गीता-माहात्म्य	१५
■1723	श्रीभीष्मपितामह	१५
■1724	भक्त नरसिंह मेहता	१५
■1737	विदुरनीति	२०
■1726	प्रेमी भक्त	१०
■1720	कृष्ण-भक्त उद्धव	५
▲1721	क्या गुरु बिना मुक्ति नहीं ?	६
■1725	महात्मा विदुर	५
▲1722	बालकोंके कर्तव्य	६
■1816	गुरु और माता-पिताके....	१०
■1375	ॐ नमः शिवाय	२५
■1357	नवदुर्गा	१५
▲1109	उपदेशप्रद कहानियाँ	२०
▲ 945	साधन नवनीत	१५
■ 724	उपयोगी कहानियाँ	१२
▲1499	नवधा भक्ति	१०
▲1498	भगवत्कृपा	६
▲ 833	रामायणके कुछ आदर्श पात्र	१५
■1827	भागवतके प्रमुख पात्र	२५
▲ 834	स्त्रियोंके लिये कर्तव्य-शिक्षा	१५
■1107	भगवान् श्रीकृष्ण	१०
■1288	गीता—श्लोकार्थ	१५
▲ 716	शिक्षाप्रद ग्यारह कहानियाँ	१०
■ 832	सुन्दरकाण्ड (सटीक)	१२
■1819	कन्हैया (चित्रकथा)	१५
■1820	गोपाल (,, ,,)	१५
■1821	मोहन (,, ,,)	१५
■1822	श्रीकृष्ण (,, ,,)	१५
■1825	श्रीराम (,, ,,)	२०
■1824	रामलला (,, ,,)	२५
■1826	राजाराम (,, ,,)	२५
■1863	दशावतार (,, ,,)	१५
■1864	प्रमुख ऋषि मुनि (,, ,,)	२०
■1865	प्रमुख देवता (,, ,,)	१५
■ 840	आदर्श भक्त	१२
■ 841	भक्त सप्तरत्न	१२
■ 843	दुर्गासप्तशती—मूल	१५
▲ 390	गीतामाधुर्य	१२
▲1625	नारीशिक्षा	१०
▲1626	अमृत-बिन्दु	१२
▲ 720	महाभारतके कुछ आदर्श पात्र	१५
▲1374	अमूल्य समयका सदुपयोग	१०
▲ 128	गृहस्थमें कैसे रहें ?	१०
■ 661	गीता-मूल (विष्णु)	१०
■ 721	भक्त बालक	१०
■ 951	भक्त चन्द्रिका	१२
■ 835	श्रीरामभक्त हनुमान्	१०
■ 837	विष्णुसहस्रनाम—सटीक	१०
■ 842	ललितासहस्रनामस्तोत्र	१०
■1373	गजेन्द्रमोक्ष	३
■1106	ईशावास्योपनिषद्	५
▲ 717	सावित्री-सत्यवान् और आदर्श..	८
▲ 723	नाम-जपकी महिमा और....	५
▲ 725	भगवान्की दया एवं···	५
▲ 722	सत्यकी शरणसे मुक्ति, गीता..	५
▲ 325	कर्मरहस्य	६
▲ 597	महापापसे बचो	३
▲ 719	बालशिक्षा	६
▲ 839	भगवान्के रहनेके पाँच स्थान	६
▲1882	भगवत्प्राप्ति कठिन नहीं	१२
▲1371	शरणागति	६
▲ 836	नल-दमयन्ती	५
■1105	श्रीवाल्मीकि रामायणम्-संक्षिप्त	३
■ 737	विष्णुसहस्रनाम एवं सहस्र...	५
■1994	शिवमहिम्नस्तोत्र	५
■ 736	नित्यस्तुतिः, आदित्य...	३

कोड		मूल्य रु०
■ 738	हनुमत्-स्तोत्रावली	३
▲ 593	भगवत्प्राप्तिकी सुगमता	१०
▲ 598	वास्तविक सुख	१०
▲ 831	देशकी वर्तमान दशा तथा···	५

असमिया

कोड		मूल्य रु०
■ 714	गीता—भाषा-टीका-पॉकेट	१५
■1564	महापुरुष श्रीमन्त शंकरदेव	१०
■1222	श्रीमद्भागवतमाहात्म्य	१२
■1963	सुन्दरकाण्ड—सटीक	१०
▲624	गीतामाधुर्य	१२
▲1487	गृहस्थमें कैसे रहें ?	१५
▲1715	आदर्श नारी सुशीला	४
■1323	श्रीहनुमानचालीसा	३
■1515	शिवचालीसा	३
▲ 703	गीता पढ़नेके लाभ	२
▲1924	सत्संगकी कुछ सार बातें	२
■1984	भजगोविन्दम्	३
■2008	मानवमात्र कल्याणके..	२०

ओड़िआ

कोड		मूल्य रु०
■1551	संत जगन्नाथदासकृत भागवत	२८०
■1750	,, ,, एकादश स्कन्ध	३०
■1777	,, ,, दशम स्कन्ध	८०
■1121	गीता-साधक-संजीवनी	२५०
■1100	गीता-तत्त्व-विवेचनी	१६०
■1473	साधन-सुधा-सिन्धु	१८०
■1463	रामचरितमानस-सटीक, मोटा टाइप	२५०
■1218	,, मूल, मोटा टाइप	१००
■1831	श्रीमद्भागवतमहापुराण-I	२५०
■1832	श्रीमद्भागवतमहापुराण-II	२५०
■1298	गीता-दर्पण	८०
■1672	गीता-प्रबोधनी	४०
■1956	गीता-पदच्छेद-अन्वय	६५
■ 815	गीता-श्लोकार्थसहित (सजिल्द)	४०
■1219	गीता-पञ्चरत्न	३०
■1702	गीता-ताबीजी	८
■1009	जय हनुमान् (चित्रकथा)	२५
■1250	ॐ नमः शिवाय (,,)	
■1010	अष्ट विनायक (,,)	१२
■1248	मोहन (,,)	१५
■1249	कन्हैया (,,)	१५
■ 863	नवदुर्गा (,,)	१५
■1494	बालचित्रमय चैतन्यलीला	१०
■1157	गीता-सटीक, मोटे अक्षर	२५
■1465	गीता-अन्वयअर्थसहित-पॉकेट	३०
▲1511	मानवमात्रके कल्याणके लिये	१८
■1476	दुर्गासप्तशती-सटीक	३०
▲1251	भवरोगकी रामबाण दवा	१५
▲1270	नित्ययोगकी प्राप्ति	१०
▲1268	वास्तविक सुख	१०
▲1209	प्रश्नोत्तर-मणिमाला	१५
▲1464	अमृत-बिन्दु	१२
▲1274	परमार्थ सूत्र-संग्रह	१५
▲1254	साधन नवनीत	१८
■1008	गीता—पॉकेट साइज	१५
▲ 754	गीतामाधुर्य	१२
▲1208	आदर्श कहानियाँ	१२
▲1139	कल्याणकारी प्रवचन	१२
■1342	बड़ोंके जीवनसे शिक्षा	१२
▲1205	रामायणके कुछ आदर्श पात्र	१५
▲1506	अमूल्य समयका सदुपयोग	१५
▲1272	निष्काम श्रद्धा और प्रेम	१५
■1204	सुन्दरकाण्ड—मूल मोटा	१०
▲1299	भगवान् और उनकी भक्ति	१०
■ 854	भक्तराज हनुमान्	८
▲1004	तात्त्विक प्रवचन	१०
▲1138	भगवान्में अपनापन	१०
▲1187	आदर्श भ्रातृप्रेम	
▲ 430	गृहस्थमें कैसे रहें ?	८
▲1321	सब जग ईश्वररूप है	१०
▲1269	आवश्यक शिक्षा	१०
▲ 865	प्रार्थना	५
▲ 796	देशकी वर्तमान दशा...	३

कोड		मूल्य रु०
▲1130	क्या गुरु बिना मुक्ति नहीं ?	७
■1154	गोविन्ददामोदरस्तोत्र	३
■1200	सत्यप्रेमी हरिश्चन्द्र	६
▲1174	आदर्श नारी सुशीला	५
▲1507	उद्धार कैसे हो	१०
■ 541	गीता-मूल,विष्णुसहस्रनामसहित	६
▲1614	शिक्षाप्रद ग्यारह कहानियाँ	१०
■1644	गीता-दैनन्दिनी—वि० सं०	७०
▲1635	प्रेरक कहानियाँ	८
▲1003	सत्संगमुक्ताहार	८
▲1512	साधनके दो प्रधान सूत्र	५
▲ 817	कर्मरहस्य	८
▲1078	भगवत्प्राप्तिके विविध उपाय	६
▲1079	बालशिक्षा	६
▲1163	बालकोंके कर्तव्य	८
▲1252	भगवान्के रहनेके पाँच स्थान	५
▲ 757	शरणागति	६
▲1186	श्रीभगवन्नाम	
▲1267	सहज साधना	६
▲1005	मातृशक्तिका घोर अपमान	५
▲1203	नल-दमयन्ती	५
▲1253	परलोक और पुनर्जन्म एवं वैराग्य	
▲1220	सावित्री और सत्यवान्	४
▲ 826	गर्भपात उचित या अनुचित..	२
▲ 798	गुरुतत्त्व	३
■ 856	हनुमानचालीसा	३
■1661	,, ,, (लघु आकार)	२
▲ 797	सन्तानका कर्तव्य	३
■1036	गीता—मूल, लघु आकार	३
■1509	रामरक्षास्तोत्र	३
■1070	आदित्यहृदयस्तोत्र	३
■1068	गजेन्द्रमोक्ष	३
■1069	नारायणकवच	३
■1775	अमोघ शिवकवच	३
▲1089	धर्म क्या है ? भगवान् क्या हैं ?	४
▲1039	भगवान्की दया एवं भगवत्कृपा	३
▲1090	प्रेमका सच्चा स्वरूप	४
▲1091	हमारा कर्तव्य	४
▲1040	सत्संगकी कुछ सार बातें	३
▲1011	आनन्दकी लहरें	४
▲ 852	मूर्तिपूजा-नामजपकी महिमा	४
▲1038	संत-महिमा	४
▲1041	ब्रह्मचर्य एवं मनको वश करनेके कुछ उपाय	४
▲1221	आदर्श देवियाँ	६
■1201	महात्मा विदुर	६
■1202	प्रेमी भक्त उद्धव	
■1173	भक्त चन्द्रिका	१०

उर्दू

कोड		मूल्य रु०
■1446	गीता—उर्दू	१०

तेलुगु

कोड		मूल्य रु०
■1573	श्रीमद्भागवत-मूल मोटा टाइप	१८०
■1858	श्रीमद्आन्ध्रमहाभागवतमु-दशम स्कन्धमु—सटीक	१४०
■1738	श्रीमद्भागवत संग्रहमु	१२०
■1698	श्रीमन्नारायणीयम्-श्लोकार्थ..	६०
■1699	श्रीमहाभागवत मकरंदालु	२२
■1767	श्रीपोतनभागवतमधुरिमलु	७०
■1632	महाभारत विराटपर्व	७०
■1352	रामचरितमानस-सटीक,ग्रन्थाकार	२४०
■1419	रामचरितमानस—केवल भाषा	१२०
■ 982	श्रीमद्देवीभागवत वचनमु	२००
■ 992	देवीभागवत महापुराण मूल मात्रम्	२००
■1975	श्रीमद्भागवत-सटीक-I	२८०
■1976	श्रीमद्भागवत-सटीक-II	२८०
■2007	भागवतपुराण वचनमु	२८०
■ 975	संक्षिप्त शिवपुराण	२००
■ 981	श्रीमद्वाल्मीकीय रा०वचमु	२८०
■ 979	सं०महाभारतमु प्रथम खण्डमु	२००
■ 980	,, ,, द्वितीय खण्डमु	२००
■1557	वाल्मीकिरामायण-(भाग १)	१३५

कोड	मूल्य रु०
■1622 वाल्मीकिरामायण-(भाग २)	२००
■1745 श्रीमद्वा० रा० (भाग-३)	२२५
■1429 वा०रा०सुन्दरकांड (तात्पर्य..)	७५
■1477 ,, ,, (सामान्य)	१००
■1714 गीता-दैनन्दिनी—वि० सं०	७०
■1172 गीता-तत्त्व-विवेचनी	१६५
■ 845 अध्यात्मरामायण	१३०
■ 772 गीता-पदच्छेद-अन्वयसहित	५०
■1921 नित्यकर्म-पूजाप्रकाश	१२०
■ 914 स्तोत्ररत्नावली	३०
■1699 श्रीमहाभागवत मकरंदालु	२५
■1684 श्रीगणेशस्तोत्रावली	५
■1685 श्रीदेवीस्तोत्रावली	५
■1804 श्रीरामस्तोत्रावलि	५
■1806 श्रीवेंकटेश्वरस्तोत्रावलि	५
■1639 बालरामायण-लघु आकार	२
■1466 वा०रा० सुन्दरकाण्ड, मूल	५०
■ 924 ,, ,, मूल गुटका	३५
■1532 ,, ,, वचनमु	६०
■1026 पंच सूक्तमुलु-रुद्रमु	१०
■1758 शिवपंचायतनपूजा	१०
■1763 श्रीललितासहस्रनाम, त्रिशती.	१५
■ 771 गीता—तात्पर्यसहित	३०
■ 910 विवेकचूडामणि	२५
▲ 904 नारद-भक्तिसूत्र मुलु-प्रेमदर्शन	१५
■ 969 गोसेवाके चमत्कार	२०
■1755 बड़ोंके जीवनसे शिक्षा	१२
■ 983 बालुर कर्त्तव्यम्	१०
■1959 हरे राम हरे कृष्ण (स्टीकर)	२
■ 959 कन्हैया (चित्रकथा)	१५
■ 960 गोपाल (,,)	१५
■ 961 मोहन (,,)	१५
■ 962 श्रीकृष्ण (,,)	१५
■ 963 रामलला (,,)	२५
■ 964 राजा राम (,,)	२५
■ 966 भगवान् सूर्य (,,)	२५
■ 965 दशावतार (,,)	१५
■1686 अष्टविनायक (,,)	१५
■ 967 रामायणके प्रमुख पात्र (,,)	२५
■ 887 जय हनुमान् (,,)	२५
■ 968 श्रीमद्भागवतके प्रमुख..(,,)	२५
■1301 नवदुर्गा (,,)	१५

कोड	मूल्य रु०
■1859 सत्यप्रेमी हरिश्चन्द्र (चित्रकथा)	२५
■ 970 प्रमुख देवियाँ (,,)	१५
■ 971 बालचित्रमय श्रीचैतन्यलीला (,,)	१२
■1753 भागवतकी प्रमुख कथाएँ (,,)	२५
■ 909 दुर्गासप्तशती—मूलम्	२०
■ 987 दुर्गासप्तशती—सटीक	४०
■1029 भजन-संकीर्तनावली	२५
■1309 गीता-माहात्म्यकी कहानियाँ	२०
■1390 गीता तात्पर्य-पॉकेट, मोटा टाइप	२०
■ 691 श्रीभीष्मपितामह	१८
▲1028 गीतामाधुर्य	१६
▲ 915 उपदेशप्रद कहानियाँ	१५
▲1572 शिक्षाप्रद ग्यारह कहानियाँ	१०
▲ 905 आदर्श दाम्पत्य-जीवनमु	१५
▲1757 आदर्श भ्रातृप्रेम	८
■1526 गीता-मूल मोटे अक्षर, पॉकेट	१२
■1570 गीता-ताबीजी	८
■1031 गीता—छोटी, पॉकेट साइज	१५
■1571 गीता-लघु आकार	३
■ 929 महाभक्तुलु	१२
■ 919 मंचि कथलु (उपयोगी कहानियाँ)	१२
■1502 श्रीनामरामायणम् एवं हनुमान-चालीसा (लघु आकार)	२
■ 985 एक लोटा पानी	२०
■1995 अष्टादशशक्ति पीठाल महिमा	१५
■1569 हनुमतस्तोत्रावली	४
▲ 766 महाभारतके कुछ आदर्श पात्र	१२
▲ 768 रामायणके कुछ आदर्श पात्र	१५
▲ 733 गृहस्थमें कैसे रहें ?	१२
■1879 परलोक और पुनर्जन्म...	२५
■ 908 नारायणीयम्—मूलम्	१५
■ 682 भक्त पञ्चरत्न	१०
■ 687 आदर्श भक्त	१०
■ 767 भक्तराज हनुमान्	१०
■ 917 भक्त चन्द्रिका	१२
■ 918 भक्त सप्तरत्न	१२
■ 641 भगवान् श्रीकृष्ण	१०
■ 663 गीता भाषा	१२
■ 662 गीता-मूल (विष्णुसहस्रनामसहित)	८
■ 986 विदुरनीति	१५
■ 753 सुन्दरकाण्ड—सटीक	१०
■ 685 भक्त बालक	८

कोड	मूल्य रु०
■ 977 दयालु परोपकारी बालक-बालिकाएँ	१५
■ 976 गुरु माता-पिताके भक्त बालक-रंगीन	१५
■ 978 सच्चे ईमानदार बालक-रंगीन	१५
■ 692 चोखी कहानियाँ	१०
▲1752 आदर्श कहानियाँ	८
▲1802 प्रेरक कहानियाँ	१०
■1803 श्रीमद्भागवत पंचरत्नमुलु	३०
■1751 महात्मा विदुर	६
▲ 920 परमार्थ-पत्रावली	८
■ 930 दत्तात्रेय-वज्रकवच	५
■ 846 ईशावास्योपनिषद्	८
■ 910 कठोपनिषद्	३०
■ 686 प्रेमी भक्त उद्धव	६
■1023 श्रीशिवमहिम्नःस्तोत्रम्-सटीक	४
■1760 द्वादश ज्योतिर्लिंग महिमा	१२
■1761 श्रीशिवसहस्रनामस्तोत्रम्	१२
■1754 लक्ष्मीसहस्रनाम	६
■ 973 शिवस्तोत्रावली	५
■ 972 शतकत्रयम्	१०
■1025 स्तोत्रकदम्बम्	६
■ 674 गोविन्ददामोदरस्तोत्र	३
■ 675 सं०रामायणमु, रामरक्षास्तोत्रम्	५
▲ 906 भगन्तुडे आलेयुणु	५
■ 676 हनुमानचालीसा	५
■ 801 ललितासहस्रनाम	६
■ 974 ,, ,, (लघु आकार)	४
■1024 श्रीनारायणकवचमु, तात्पर्यसहितमु	३
■1030 सन्ध्योपासनविधि	२०
▲ 927 भक्तियोगतत्त्वमु	१५
■ 688 भक्तराज ध्रुव	५
■ 988 तिरुप्पावै-सटीक और...	१०
■ 670 विष्णुसहस्रनाम—मूल	३
■ 911 ,, -मूल (लघु आकार)	२
■1527 विष्णुसहस्रनामस्तोत्रम् नामा..	७
■ 912 रामरक्षास्तोत्र, सटीक	३
■ 677 गजेन्द्रमोक्षम्	५
■1531 गीता-विष्णुसहस्रनाम-मोटा	१२
■ 732 नित्यस्तुतिः, आदित्यहृदयस्तोत्रम्	३
▲ 923 भगवन्तु दयालु न्यायमूर्ति	४
■1762 भजगोविंदम् मोहमुद्गर	६
▲1756 भगवत्प्राप्तिकी सुगमता	१२

कोड	मूल्य रु०
■1764 गोविन्दनामावलि और भजगोविन्दम्-लघु आकार	२
■1857 प्रश्नोत्तरी मणिरत्नमाला	६
▲ 760 महत्त्वपूर्ण शिक्षा	८
▲ 913 भगवत्प्राप्ति सर्वोत्कृष्ट साधनमु-नाम स्मरणमे	
▲ 761 एकै साधे सब सधै	१०
▲ 922 सर्वोत्तम साधन	१०
▲ 759 शरणागति एवं मुकुन्दमाला	६
▲ 752 गर्भपात उचित या...	२
▲ 734 आहारशुद्धि , मूर्तिपूजा	५
▲ 664 सावित्री-सत्यवान्	४
▲ 665 आदर्श नारी सुशीला	६
▲ 921 नवधा भक्ति	६
▲1759 वासुदेव सर्वम्	६
▲ 666 अमूल्य समयका सदुपयोग	१५
▲ 672 सत्यकी शरणसे मुक्ति	२
▲ 671 नामजपकी महिमा	३
▲ 678 सत्संगकी कुछ सार बातें	४
▲ 731 महापापसे बचो	२
▲ 925 सर्वोच्चपदकी प्राप्तिके साधन	२
▲1547 किसान और गाय	४
▲ 758 देशकी वर्तमान दशा तथा...	४
▲ 916 नल-दमयन्ती	६
▲ 689 भगवान्के रहनेके पाँच स्थान	६
▲ 928 भगवान्के स्वभावका रहस्य	२०
▲ 690 बालशिक्षा	६
▲ 907 प्रेमभक्ति-प्रकाशिका	३
▲ 673 भगवान्का हेतुरहित सौहार्द	
▲ 926 सन्तानका कर्त्तव्य	३
■1765 भलेका फल भला	५

मलयालम

■1916 गीता—पॉकेट साइज, अजिल्द	१५
■ 739 गीता-विष्णुसहस्रनाम, मूल	६
■ 740 विष्णुसहस्रनाम—मूल	२

पंजाबी

▲1616 गृहस्थमें कैसे रहें ?	७
▲1894 शिक्षाप्रद ग्यारह कहानियाँ	७

नेपाली

■1609 श्रीरामचरितमानस—सटीक	२००

Our English Publications

Code	Price
■1318 Śrī Rāmacaritamānasa (With Hindi Text, Transliteration & English Translation)	300
■1617 Śrī Rāmacaritamānasa A Romanized Edition with English Translation	130
■ 456 Śrī Rāmacaritamānasa (With Hindi Text and English Translation)	180
■1550 Sunder Kand (Roman)	20
■452/453 Śrīmad Vālmīki Rāmāyaṇa (With Sanskrit Text and English Translation) Set of 2 volumes	500
■564/565 Śrīmad Bhāgavata (With Sanskrit Text and English Translation) Set	440
■1080/1081 Śrīmad Bhagavadgītā Sādhaka-Sañjīvanī (By Swami Ramsukhdas) (English Commentary) Set of 2 Volumes	200
■ 457 Śrīmad Bhagavadgītā Tattva-Vivecanī (By Jayadayal Goyandka) Detailed Commentary	150
■ 455 Bhagavadgītā (With Sanskrit Text and English Translation) Pocket size	10
■ 534 ,, (Bound)	20
■ 1658 Śrīmad Bhagavadgītā (Sanskrit text with hindi and English Translation)	25
■ 824 Songs from Bhartṛhari	5
▲ 783 Abortion Right or Wrong You Decide	2
■ 1491 Mohana (Picture Story)	15
■ 1643 Ramaraksastotram Sanskrit Text, English Translation)	3
■ 494 The Immanence of God (By Madan Mohan Malaviya)	5
■ 1528 Hanumāna Cālīsā (Roman) (Pocket Size)	5
■ 1638 ,, Small size	3
■ 1492 Rāma Lalā (Picture Story)	25
■ 1445 Virtuous Children	30
■ 1545 Brave and Honest Children	30
■ 2001 Vidue Niti	20

By Jayadayal Goyandka

▲ 477 Gems of Truth [Vol. I]	15
▲ 478 ,, ,, [Vol. II]	15
▲ 479 Sure Steps to God-Realization	30
▲ 481 Way to Divine Bliss	10
▲ 482 What is Dharma? What is God?	4
▲ 480 Instructive Eleven Stories	10
▲ 1285 Moral Stories	20
▲ 1284 Some Ideal Characters of Rāmāyaṇa	15
▲ 1245 Some Exemplary Characters of the Mahābhārata	15
▲ 694 Dialogue with the Lord During Meditation	3
▲ 1125 Five Divine Abodes	5
▲ 520 Secret of Jñānayoga	30
▲ 521 ,, ,, Premayoga	15
▲ 522 ,, ,, Karmayoga	25
▲ 523 ,, ,, Bhaktiyoga	25
▲ 658 ,, ,, Gītā	15
▲ 1013 Gems of Satsaṅga	2
▲ 1501 Real Love	10

By Hanuman Prasad Poddar

▲ 484 Look Beyond the Veil	12
▲ 622 How to Attain Eternal Happiness ?	20
▲ 483 Turn to God	12
▲ 485 Path to Divinity	15
▲ 847 Gopis' Love for Śrī Kṛṣṇa	6
▲ 620 The Divine Name and Its Practice	3
▲ 486 Wavelets of Bliss & the Divine Message	

By Swami Ramsukhdas

▲ 1470 For Salvation of Mankind	20
▲ 619 Ease in God-Realization	10
▲ 471 Benedictory Discourses	12
▲ 473 Art of Living	10
▲ 487 Gītā Mādhurya	15
▲ 1101 The Drops of Nectar (Amṛta Bindu)	10
▲1523 Is Salvation Not Possible without a Guru?	7
▲ 472 How to Lead A Household Life	10
▲ 570 Let Us Know the Truth	6
▲ 638 Sahaja Sādhanā	10
▲ 621 Invaluable Advice	3
▲ 474 Be Good	15
▲ 497 Truthfulness of Life	2
▲ 669 The Divine Name	3
▲ 476 How to be Self-Reliant	
▲ 552 Way to Attain the Supreme Bliss	

Special Editions

■ 1411 Gītā Roman (Sanskrit text, Transliteration & English Translation) Book Size	30
■ 1584 ,, (Pocket Size)	20
■ 1407 The Drops of Nectar (By Swami Ramsukhdas)	15
■ 1406 Gītā Mādhurya (,,)	18
■ 1438 Discovery of Truth and Immortality (By Swami Ramsukhdas)	30
■ 1413 All is God (,,)	15
■ 1414 The Story of Mīrā Bāī (Bankey Behari)	20

॥ श्रीहरिः ॥

'कल्याण' का उद्देश्य और इसके नियम

भक्ति, ज्ञान, वैराग्य, धर्म और सदाचारसमन्वित लेखोंद्वारा जन-जनको कल्याण-पथ (आत्मोद्धारके सुमार्ग)-पर अग्रसरित करनेकी प्रेरणा देना इसका एकमात्र उद्देश्य है।

नियम—भगवद्भक्ति, ज्ञान, वैराग्यादि प्रेरणाप्रद एवं कल्याण-मार्गमें सहायक अध्यात्मविषयक, व्यक्तिगत आक्षेपरहित लेखोंके अतिरिक्त अन्य विषयोंके लेख 'कल्याण' में प्रकाशित नहीं किये जाते। लेखोंको घटाने-बढ़ाने और छापने-न-छापनेका अधिकार सम्पादकको है। अमुद्रित लेख बिना माँगे लौटाये नहीं जाते। लेखोंमें प्रकाशित मतके लिये सम्पादक उत्तरदायी नहीं है।

१-'कल्याण' का नया वर्ष जनवरीसे आरम्भ होकर दिसम्बरतक रहता है, अतः ग्राहक जनवरीसे ही बनाये जाते हैं। वर्षके मध्यमें बननेवाले ग्राहकोंको जनवरीका विशेषाङ्क एवं अन्य उपलब्ध मासिक अङ्क दिये जाते हैं।

२-**वार्षिक सदस्यता-शुल्क**—भारतमें ₹२०० (सजिल्द ₹२२०), विदेशमें हवाई डाकसे भेजनेके लिये US$ 45 (₹ २७००) (चेक कलेक्शनके लिये US$ 6 अतिरिक्त)।

पंचवर्षीय शुल्क—भारतमें ₹१००० (सजिल्द ₹११००), विदेशमें हवाई डाकसे भेजनेके लिये US$ 225 (₹१३५००) (चेक कलेक्शनके लिये US$ 6 अतिरिक्त)।

डाकखर्च आदिमें अप्रत्याशित वृद्धि होनेपर पंचवर्षीय ग्राहकोंद्वारा अतिरिक्त राशि भी देय हो सकती है।

३-समयसे सदस्यता-शुल्क प्राप्त न होनेपर आगामी वर्षका विशेषाङ्क वी०पी०पी०से भेजा जाता है। इसपर डाकशुल्कका ₹१० अतिरिक्त देय होता है।

४-जनवरीका विशेषाङ्क (वर्षका प्रथम अङ्क) रजिस्ट्री/वी०पी०पी०से तथा फरवरीसे दिसम्बरतकके अङ्क प्रतिमासके प्रथम सप्ताहतक साधारण डाकसे भेजे जाते हैं।

५-पत्र-व्यवहारमें 'ग्राहक-संख्या' अवश्य लिखी जानी चाहिये और पता बदलनेकी सूचनामें ग्राहक-संख्या, पिनकोडसहित पुराना और नया पता लिखना चाहिये।

६-'कल्याण' में व्यवसायियोंके विज्ञापन किसी भी स्थितिमें प्रकाशित नहीं किये जाते।

व्यवस्थापक—'कल्याण', पत्रालय—गीताप्रेस—२७३००५ (गोरखपुर)

प्र० ति० २१-१२-२०१५
रजि० समाचारपत्र—रजि०नं०.२३०८/५७ पंजीकृत संख्या—NP/GR-13/2014-2016
LICENSED TO POST WITHOUT PRE-PAYMENT | LICENCE NO. WPP/GR-03/2014-2016

गंगाजीमें वर्ज्य शास्त्रोक्त कर्म

गङ्गां पुण्यजलां प्राप्य चतुर्दश विवर्जयेत्। शौचमाचमनं केशं निर्माल्यं मलघर्षणम्॥
गात्रसंवाहनं क्रीडां प्रतिग्रहमथो रतिम्। अन्यतीर्थरतिं चैव अन्यतीर्थप्रशंसनम्॥
वस्त्रत्यागमथाघातं संतारं च विशेषतः। ×××परिधेयाम्बराम्बूनि गङ्गास्त्रोतसि न त्यजेत्॥
न दन्तधावनं कुर्याद्गङ्गागर्भे विचक्षणः। कुर्याच्चेन्मोहतः पुण्यं न गङ्गास्नानजं लभेत्॥
प्रभातेऽन्यत्र तां कृत्वा दन्तकाष्ठादिकक्रियाम्। रात्रिवासं परित्यज्य गङ्गायां स्नानमाचरेत्॥
बाह्यभूमिमगत्वा यो गङ्गायां स्नानमाचरेत्। गङ्गास्नानफलं सोऽपि सम्पूर्णं च लभेन्न हि॥
मूत्रं वाऽथ पुरीषं वा गङ्गातीरे करोति यः। न दृष्टा निष्कृतिस्तस्य कल्पकोटिशतैरपि॥
श्लेष्माणं वाऽपि निष्ठीवं दूषिकाम्वाऽश्रु वा मलम्। गङ्गातीरे त्यजेद्यस्तु स नूनं नारकी भवेत्॥
उच्छिष्टं कफकञ्चैव गङ्गागर्भे च यस्त्यजेत्। स याति नरकं घोरं ब्रह्महत्यां च विन्दति॥
गङ्गारोधसि यः पापं कुरुते मूढधीर्नरः। तदक्षयं भवेन्नूनं नान्यतीर्थेषु शाम्यति॥
अन्यतीर्थे कृतं पापं गङ्गायां च विनश्यति। गङ्गायां यत्कृतं पापं तत्कुत्राऽपि न शाम्यति॥
तस्मात्पापं न कर्तव्यं गङ्गायां शास्त्रकोविदैः। कर्मणा मनसा वाचा कर्तव्यो धर्मसङ्ग्रहः॥

पुण्यतोया भगवती गंगाके निकट जाकर विशेषरूपसे निम्नलिखित चौदह कार्य कभी न करने चाहिये—समीपमें शौच, गंगाजीमें आचमन (कुल्ला), बाल झाड़ना, निर्माल्य (भगवान्‌को चढ़ी हुई पूजा-सामग्री) डालना, मैल छुड़ाना, शरीर मलना, क्रीडा करना, दान लेना, रतिक्रिया, दूसरे तीर्थके प्रति अनुराग, दूसरे तीर्थकी महिमा गाना, कपड़ा धोना या छोड़ना, जल पीटना तथा तैरना। ××× [ब्रह्माण्डपुराण] भगवती गंगाके पावन जलमें स्नान करनेके पश्चात् धारण किये हुए वस्त्रोंको जलमें निचोड़ना नहीं चाहिये। विद्वान् व्यक्तिको चाहिये कि वह गंगाजलमें दन्तधावन न करे, यदि अज्ञानवश करता है तो उसे गंगास्नानका पुण्य प्राप्त नहीं होता। प्रातःकाल गंगास्नानसे पूर्व अन्य स्थानपर शौच-दन्तधावनादि नित्यकर्मोंसे निवृत्त होकर तथा रात्रिमें पहने हुए वस्त्रोंको परिवर्तितकर, पवित्र वस्त्र धारणकर ही गंगाजीमें स्नान करना चाहिये। जो मनुष्य दन्तधावनादि क्रियाओंको गंगाक्षेत्रसे दूर न करके गंगाक्षेत्रमें ही करता है, उसे गंगास्नानका सम्पूर्ण फल प्राप्त नहीं होता। गंगातटपर जो मनुष्य मल-मूत्र आदिका परित्याग करता है, उसका नरकोंसे करोड़ों कल्पोंमें भी उद्धार नहीं हो सकता। जो मनुष्य गंगाजीमें कफ अथवा थूक अथवा आँखका मल (कीचड़) अथवा किसी शारीरिक मल या अन्य किसी भी प्रकारके मलको छोड़ता है, वह निश्चय ही नरक प्राप्त करता है। जो मनुष्य गंगाजीमें उच्छिष्ट (जूठा, बचा हुआ या बासी) पदार्थों अथवा कफ आदि दैहिक मलोंका प्रक्षेप करता है, उसे ब्रह्महत्याका पाप लगता है और दीर्घकालपर्यन्त भयानक नरक-यातना भोगनी पड़ती है। जो मूर्ख मनुष्य अज्ञानवश गंगातटपर पापाचरण करता है, उसका वह पाप अक्षय हो जाता है तथा उस पापका क्षय किसी भी तीर्थमें नहीं हो सकता। दूसरे तीर्थोंमें किये गये पाप गंगाजीके प्रभावसे विनष्ट हो जाते हैं, किंतु गंगातटपर किये गये पापोंका परिशमन किसी भी तीर्थमें नहीं हो पाता, अतएव शास्त्रज्ञ मनुष्यको गंगाकी सन्निधिमें किये गये पापोंकी गुरुताको समझकर मन, वाणी अथवा कर्मसे कभी भी पापाचरण नहीं करना चाहिये, अपितु सर्वदा धर्माचरण ही करना चाहिये। [पद्मपुराण क्रियायोगसारखण्ड]